तीसरा खण्ड

संपादक
ब्रजरत्नदास बी० ए०, एल-एल० बी०

काशी नागरीप्रचारिणी सभा

सूर्यकुमारी पुस्तकमाला २१

तीसरा खण्ड

गोलोकवासी भारत-भूषण भारतेन्दु बा० हरिश्चंद्र जी
की समग्र प्राप्त गद्य रचनाओं का संग्रह

संकलनकर्ता तथा संपादक
ब्रजरत्नदास बी० ए०, एल-एल० बी०

काशी नागरी प्रचारिणी सभा

प्रकाशक—नागरीप्रचारिणी सभा—काशी
मुद्रक—महताबराय, नागरीमुद्रण—काशी
प्रथम संस्करण सं० २०१० वि०, २००० प्रतियाँ
मूल्य
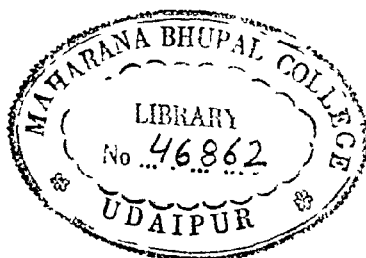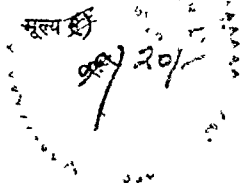
परिचय

जयपुर राज्य के शेखावाटी प्रांत में खेतड़ी राज्य है। वहाँ के राजा श्री अजीतसिंह जी बहादुर बड़े यशस्वी और विद्याप्रेमी हुए। गणित-शास्त्र में उनकी अद्भुत गति थी। विज्ञान उन्हें बहुत प्रिय था। राजनीति में वह दक्ष और गुणग्राहिता में अद्वितीय थे। दर्शन और अध्यात्म की रुचि उन्हें इतनी थी कि विलायत जाने के पहले और पीछे स्वामी विवेकानंद उनके यहाँ महीनों रहे। स्वामी जी से घंटों शास्त्र-चर्चा हुआ करती। राजपूताने में प्रसिद्ध है कि जयपुर के पुण्यश्लोक महाराज श्रीरामसिंह जी को छोड़कर ऐसी सर्वतोमुखी प्रतिभा राजा श्रीअजीतसिंह जी ही में दिखाई दी।

राजा श्रीअजीतसिंह जी की रानी आउआ (मारवाड़) चाँपावत जी के गर्भ से तीन संतति हुईं—दो कन्या, एक पुत्र। ज्येष्ठ कन्या श्रीमती सूर्यकुमारी थीं जिनका विवाह शाहपुरा के राजाधिराज सर श्रीनाहरसिंह जी के ज्येष्ठ चिरंजीव और युवराज राजकुमार श्रीउमेदसिंह जी से हुआ। छोटी कन्या श्रीमती चाँद-कुँवर का विवाह प्रतापगढ़ के महारावल साहब के युवराज महाराजकुमार श्रीमान-सिंह जी से हुआ। तीसरी संतान जयसिंह जी थे जो राजा श्रीअजीतसिंह जी और रानी चाँपावतजी के स्वर्गवास के पीछे खेतड़ी के राजा हुए।

इन तीनों के शुभचिंतकों के लिये तीनों की स्मृति, संचित कर्मों के परिणाम से, दुःखमय हुई। जयसिंह जी का स्वर्गवास सत्रह वर्ष की अवस्था में हुआ। सारी प्रजा, सब शुभचिंतक, संबंधी, मित्र और गुरुजनों का हृदय आज भी उस आँच से जल ही रहा है। अश्वत्थामा के व्रण की तरह यह घाव कभी भरने का नहीं। ऐसे आशामय जीवन का ऐसा निराशात्मक परिणाम कदाचित् ही हुआ हो। श्रीसूर्यकुमारी जी को एकमात्र भाई के वियोग की ऐसी ठेस लगी कि दो ही तीन वर्ष में उनका शरीरांत हुआ। श्रीचाँदकुँवर बाई जी को वैधव्य की विषम यातना भोगनी पड़ी और भ्रातृ-वियोग और पति-वियोग दोनों का असह्य दुःख वे झेल रही हैं। उनके एकमात्र चिरंजीव प्रतापगढ़ के कुँवर श्रीरामसिंह जी से मातामह राजा श्रीअजीतसिंह जी का कुल प्रजावान् है।

श्रीमती सूर्यकुमारी जी के कोई संतति जीवित न रही। उनके बहुत आग्रह करने पर भी राजकुमार श्रीउमेदसिंह जी ने उनके जीवन-काल में दूसरा विवाह नहीं किया। किंतु उनके वियोग के पीछे, उनके आज्ञानुसार, कृष्णगढ़ में विवाह किया जिससे उनके चिरंजीव वंशांकुर विद्यमान हैं।

श्रीमती सूर्य्यकुमारी जी बहुत शिक्षित थीं। उनका अध्ययन बहुत विस्तृत था। उनका हिंदी का पुस्तकालय परिपूर्ण था। हिंदी इतनी अच्छी लिखती थीं और अक्षर इतने सुंदर होते थे कि देखनेवाले चमत्कृत रह जाते। स्वर्गवास के कुछ समय पूर्व श्रीमती ने कहा था कि स्वामी विवेकानंद जी के सब ग्रंथों, व्याख्यानों और लेखों का प्रामाणिक हिंदी अनुवाद मैं छपवाऊँगी। बाल्य-काल से ही स्वामी जी के लेखों और अध्यात्म विशेषतः अद्वैत वेदांत की ओर श्रीमती की रुचि थी। श्रीमती के निर्देशानुसार इसका कार्य्यक्रम बाँधा गया। साथ ही श्रीमती ने यह इच्छा प्रकट की कि इस संबंध में हिंदी में उत्तमोत्तम ग्रंथों के प्रकाशन के लिए एक अक्षय निधि की व्यवस्था का भी सूत्रपात हो जाय। इसका व्यवस्थापत्र बनते बनते श्रीमती का स्वर्गवास हो गया।

राजकुमार श्रीउमेदसिंह जी ने श्रीमती के अंतिम कामना के अनुसार बीस हजार रुपए देकर काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के द्वारा ग्रंथमाला के प्रकाशन की व्यवस्था की। तीस हजार रुपए के सूद से गुरुकुल विश्वविद्यालय, काँगड़ी में 'सूर्यकुमारी आर्यभाषा गद्दी (चेयर)' की स्थापना की।

पाँच हजार रुपए से उपर्युक्त गुरुकुल में चेयर के साथ ही सूर्यकुमारी निधि की स्थापना कर सूर्यकुमारी-ग्रंथावली के प्रकाशन की व्यवस्था की।

पाँच हजार रुपए दरबार हाई स्कूल शाहपुरा में सूर्यकुमारी-विज्ञान भवन के लिए प्रदान किए।

स्वामी विवेकानंद जी के यावत् निबंधों के अतिरिक्त और भी उत्तमोत्तम ग्रंथ इस ग्रंथमाला में छापे जायँगे और अल्प मूल्य पर सर्वसाधारण के लिये सुलभ होंगे। ग्रंथमाला की बिक्री की आय इसी में लगाई जायगी। यों श्रीमती सूर्यकुमारी तथा श्रीमान् उमेदसिंह जी के पुण्य तथा यश की निरंतर वृद्धि होगी और हिंदी भाषा का अभ्युदय तथा उसके पाठकों को ज्ञान लाभ होगा।

निवेदन

भारतेंदु श्री हरिश्चंद्र जी का जन्म भाद्रपद शुक्ला ५ (ऋषि-पंचमी) सं० १९०७ (ता० ९ सितंबर सन् १८५० ई०) को काशी में हुआ था और माघ कृष्ण ६ सं० १९४१ (ता० २५ जनवरी सन् १८८५ ई०) को उनका देहावसान हुआ था। सं० १९९१ में काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने भारतेंदुजी की मृत्यु-अर्द्धशती मनाने का आयोजन किया और इसके साथ भारतेंदुजी की समग्र रचनाओं की चार भागों में एक सुसंपादित ग्रंथावली भी प्रकाशित करने का निश्चय किया। इस के अनुसार यह योजना बनाई गई कि द्वितीय खंड में काव्य ग्रंथ, तृतीय में नाटक तथा चतुर्थ में गद्य रचनाएँ रहें और प्रथम खंड में बची हुई रचनाएँ, भारतेंदुजी की जीवनी, आलोचना आदि संगृहीत की जायँ। इसके अनुसार अर्द्ध शताब्दि के अवसर पर केवल द्वितीय खंड ही प्रकाशित हो सका, जिसमें यथाशक्ति तथा प्राप्त सभी काव्यग्रंथ, स्फुट कविताएँ तथा पद संकलित हो गए हैं। अन्य खंडों का प्रकाशन इसके अनंतर बहुत दिनों तक रुका रहा। इसके पंद्रह वर्ष के अनंतर जब दूसरा अवसर भाद्रपद शुक्ला ५ सं० २००७ को भारतेंदु जन्मशती जयंती मनाने का आया तब नाटक खंड प्रकाशित हुआ। इस कारण कि अन्य खंडों को सभा न जाने कब प्रकाशित करने में समर्थ हो सकेगी, इसी खंड को प्रथम योजना के विपरीत प्रथम मानकर प्रकाशित किया गया। परंतु बड़े सौभाग्य की बात है कि शीघ्र ही इस तीसरे खंड के प्रकाशन में सभा ने हाथ लगा दिया और यह खंड इस रूप में प्रकाशित हो सका। द्वितीय खंड भी इसी समय समाप्त हो गया और उसके द्वितीय संस्करण के मुद्रण का आरंभ हो गया है।

इस खंड में पहिले ऐतिहासिक तथा पुरावृत्त संबंधी तेरह रचनाएँ तथा इसके अनंतर धर्म एवं संप्रदाय संबंधी बत्तीस रचनाएँ और लेख दिये गये हैं। इसके उपरांत एक पूरा उपाख्यान तथा एक उपन्यास का एकमात्र प्राप्त प्रथम परिच्छेद देकर उनकी परिहासात्मक रचनाएँ संकलित कर यह खंड पूरा करने का विचार था परंतु योजनानुसार स्थान बचने पर भारतेंदुजी के निबंध देकर यह खंड पूरा किया गया है। बचे हुए निबंध, पत्र तथा अन्य रचनाएँ तथा विवाद आदि जो लगभग दो सौ पृष्ठों से कम न होंगे और जिनके [illegible]

आदि करने पर बढ़ने ही की संभावना अधिक है वे सब चौथे खंड में उनकी जीवनी, आलोचना आदि के साथ दिए जायँगे। आशा है कि वह खंड भी शीघ्र प्रकाशित हो जायगा।

हिंदी साहित्य सेवा करने का कुछ अनुभव प्राप्त करलेने पर बहुत दिनों से इच्छा थी कि हम अपने मातामह भारतेंदुजी की एक विस्तृत जीवनी लिखें और उनकी समस्त रचनाओं को ग्रंथावली के रूप में प्रकाशित करावें। इस उद्देश्य से यह कार्य आरंभ कर दिया तथा साधन एकत्र होने लगे। उसी समय यह ज्ञात हुआ कि यदि दस पंद्रह वर्ष और पहिले इस कार्य में हाथ लगा देते तो उनकी जीवनी के संबंध में बहुत कुछ अन्य बातें भी ज्ञात हो जातीं तथा उन लोगों से जो भारतेंदु जी के समकालीन, मित्र, सहपाठी आदि रहे थे उनसे मिलकर हमें बहुत कुछ मौलिक बातें ज्ञात हो जातीं, परंतु गतं न शोचामि। ऐसे ही समय में अर्द्ध शती मनाए जाने का अवसर आया और भारतेंदुजी की जीवनी प्रयाग हिंदुस्तान एकैडेमी से तथा भारतेंदुग्रंथावली द्वितीय खंड सभा से प्रकाशित हुआ। बाद में सभा ने दो खंड और प्रकाशित किए और यदि चौथा खड भी शीघ्र प्रकाशित हो जाय तो हमारी यह इच्छा पूरी हो जाय।

इस ग्रंथावली के संपादन तथा संकलन में सबसे बडी कठिनाई यह थी कि भारतेंदुजी की सभी रचनाओं की प्रतियाँ तथा उनके अनेक संस्करण कहीं भी एकत्र संग्रहीत न मिल सके और जो कुछ प्राप्त भी हैं वे यत्र तत्र बिखरे हुए हैं। कितने ही सज्जनों तथा संस्थाओं से उन्हें प्राप्त करना, केवल मिलान कर लौटा देने मात्र के लिए भी, सुलभ नहीं प्रत्युत् दुर्लभ ही है। लिखने पर तो वे प्रायः मौन ही रहना उचित समझते हैं। भारतेंदुजी की रचनाएँ जिन्हें लिखे तथा प्रकाशित हुए अभी एक शताब्दि भी नहीं व्यतीत हो सका है, उन्हें अब प्राप्त करना इस प्रकार कठिन हो गया तब उनके समकालीन कवियों तथा सुलेखकों की रचनाओं के संबंध में क्या कहा जा सकता है? स्पष्टतः तो यही जान पड़ता है कि भारतीयों को अपने साहित्य ग्रंथों से कुछ भी प्रेम नहीं था और स्यात् अब भी नहीं है और उन्हें सुरक्षित रखना तो दूर स्यात् वे एकाद पारायण कर उन्हें नष्ट कर देते थे, नहीं तो भारतेंदु जी की रचनाओं, पत्र-पत्रिकाओं आदि के अनेक संग्रह सुविधा से मिल जाते! संतोष इतना ही है कि तत्कालीन कवि-लेखकों की कुछ ग्रंथावलियाँ इधर प्रकाशित होने लगी हैं, तब भी हिंदी प्रेमियों की अपने कवियों तथा लेखकों के प्रति उदासीनता क

ऊपर किया आक्षेप बना ही रहता है। कारण यही है कि इन ग्रंथावलियों के प्रकाशन कराने का प्रयास उन्हीं कवियों तथा लेखकों के वंशजों ही द्वारा कुछ कुछ चल रहा है, जो कभी भी अनेक कारणों से बंद हो सकता है।

यह भी ध्यान रखना चाहिए कि हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा तथा राजभाषा के उच्चासन पर प्रतिष्ठित हो चुकी है इसलिए प्रत्येक हिंदी प्रेमी, साहित्यसेवी, संस्था तथा प्रकाशक का यह कर्तव्य हो गया है कि वह उसके साहित्य-भांडार को इतना भरा पूरा कर दें कि उसे विश्व की किसी भी भाषा का मुखापेक्षी न होना पड़े और इसके लिए यह भी आवश्यक है कि हम अपनी निजी निधि की पूर्णरूपेण रक्षा भी करें। ऐसा न हो कि एक ओर हम नया साहित्य निर्माण करते चलें और दूसरी ओर पहिले का साहित्य लुप्त होता चले।

इस ग्रंथावली के पाठकों से एक यह भी साग्रह निवेदन है कि यदि वे इसमें कोई त्रुटि, अभाव या भूल देखें और उन्हें दूर करने के साधन भी ज्ञात हों तो वे अवश्य थोड़ा कष्ट उठाकर मुझे सूचित कर दें जिससे उनके परिमार्जन करने का अवसर मिल सके।

भारतेंदुजी के साहित्य पर अब कुछ विशेष अनुशीलन भी होने लगा है और इसके लिए यथाशक्ति उनकी समग्र प्राप्त रचनाओं का प्रकाशन आवश्यक हो गया था। इन तीन खंडों के प्रकाशन से यह अभाव बहुत अंश में दूर हो गया है और आशा है कि इनसे अनुशीलनकर्ताओं को बहुत कुछ सहायता स्वाध्याय करने में मिलेगी।

अधिक वैशाख शु० १५ सं० २०१० }

विनम्र
व्रजरत्नदास

विषयानुक्रम

विषय | पृष्ठ संख्या

———

भारतेंदु हरिश्चंद्र

तीसरा खण्ड

अगरवालों की उत्पत्ति

[प्रथमवार सन् १८७१ ई० में द मेडिकल हॉल प्रेस से डबल-
क्राउन ३२ पेजी के पृ० सं० २० में छपा। उसी वर्ष
कविवचन सुधा में विज्ञापन निकला।]

भूमिका

—•—

यह वंशावली परंपरा की जनश्रुति और प्राचीन लेखों से संगृहीत हुई है परंतु इसका विशेष भाग भविष्य पुराण के उत्तर भाग में के श्रीमहालक्ष्मी व्रत की कथा से लिया गया है। इसमें वैश्यों में मुख्य अगरवालों की उत्पत्ति लिखी है। इस बात का महाराज जय सिंह के समय में निर्णय हुआ था कि वैश्यों में मुख्य अगरवाले ही हैं। इन अगरवालों का संक्षेप वृत्तांत इस स्थान पर लिखा जाता है। इनका मुख्य देश पश्चिमोत्तर प्रांत है और बोली स्त्री और पुरुष सब की खड़ी बोली अर्थात् उर्दू है। इन के पुरोहित गौड़ ब्राह्मण हैं और इनका व्यवहार सीधा और प्रायः सच्चा होता है और इस जाति में एक विशेषता यह है कि इन में कोई ऊँचे नीचे नहीं होते और न किसी की कोई अल्ल (उपाधि) होती है। बनारस और मिरजापुर में तो पुरबियों का नाम भी सुनाता है पर जो देश में पूछो कि तुम पुरबिए हो कि पछाँहो तो वे लोग बड़ा आश्चर्य करते हैं और कहते हैं कि पुरबिए शब्द का क्या अर्थ है। बनारस के पछाँही लोगों में भी ठीक अगरवाले की रीतें नहीं मिलतीं और उनकी बोली भी वैसी नहीं है। केवल जो घर दिल्ली वाले लोगों के हैं उनमें ये बातें हैं। इन लोगों में जैसा विवाहादिक में उत्साह होता है वैसा ही मरने में बरसों दुःख भी करते हैं परंतु जो बूढ़ा मरता है तब तो विवाह से भी धूमधाम विशेष कर देते हैं!!!

देश में तो जामा पगड़ी पहन के सब माल भात खाते हैं पर इधर यह व्यवहार नहीं करते और केवल पूरी खाने में जाति का साथ देते हैं। एक बात यह भी इस जाति में उत्तम है कि अगरवालों में मांस और मदिरा की चाल कहीं नहीं है पर हुक्का इनके पुरोहित और ये दोनों पीते हैं यों जो लोग नेमी हों वे न पियें पर जाति की चाल है। विवाह के समय इन का बहुत व्यय करना सब में प्रसिद्ध है और इसी विपत से कई घर बिगड़ गए पर यह रीति छोड़ते नहीं। इन में

कुछ लोग जैनी भी होते हैं। और देस में सब जनेऊ पहिरते हैं पर इधर पूरब में कोई कोई नहीं भी पहिरते। इन के पुरुषों का पहिरावा पगड़ी पायजामा या धोती और अंगा है और स्त्रियों का पहिरावा ओढ़ना घँघरा या छोटेपन में सुथना है। और दशो संस्कार होने की चाल इन में अब तक मिलती है। पुरबियों के अतिरिक्त मारवाड़ी अगरवाले भी होते हैं पर इनका ठीक पता नहीं मिलता कि कब से और कहाँ से हैं। जैसे पछाँही अगरवालों की चाल खत्रियों से मिलती है वैसे ही इन मारवाड़ियों की महेशरियों से मिलती है पर पुरबियों की चाल तो इन दोनों से विलक्षण है।

अगरवालों की उत्पत्ति की भूमिका में यह बात लिखनी भी आनंद देने वाली होगी कि श्रीनंदरायजी, जिन के घर साक्षात् श्रीकृष्णचंद्र प्रगट हुए, वैश्यही थे और यह बात श्रीमद्भागवतादि ग्रंथों से भी निश्चय की गई है। जो हो, इस कुल में सर्वदा से लोग बड़े धनवान और उदार होते आए पर इन दिनों वे बातें जाती रही थीं। मुगलों के समय से इनकी वृद्धि फिर हुई और अब तक होती जाती है।

मैंने इस छोटे से ग्रंथ में संक्षेप से इनकी उत्पत्ति लिखी है। निश्चय है कि इसे पढ़ के वे लोग अपनी कुछ परंपरा जानेंगे और मुझे भी अपने दीन और छोटे भाइयों में स्मरण रक्खेंगे।

वैशाख शुद्ध ५ सं १९२८
काशी } श्री हरिश्चंद्र

वैश्यवंशावतंसाय भगवते श्रीकृष्णचन्द्राय नमः

अगरवालों की उत्पत्ति

दोहा

विमल वैश्य वंशावली, कुमुदवनी हित चंद।
जयजय गोकुल, गोप, गो, गोपी-पति नंद-नंद ॥ १ ॥

भगवान ने अपने मुख से ब्राह्मण और भुजा से क्षत्री और जाँघ से वैश्य और चरण से शूद्रों को बनाया। उसमें वैश्य को चार कर्म का अधिकार दिया—पहिला खेती, दूसरा गऊ की रक्षा, तीसरा व्यापार और चौथा ब्याज। जैसे वेद और यज्ञादिक का स्वामी ब्राह्मण और राज्य और युद्ध का स्वामी क्षत्री वैसे ही धन का स्वामी वैश्य है और ब्राह्मण-क्षत्री-वैश्य इन तीनों की द्विज संज्ञा है और तीनों वर्ण वेद-कर्म के अधिकारी हैं। पहिला मनुष्य जो वैश्यों में हुआ उसका नाम धनपाल था, जिसे ब्राह्मणों ने प्रतापनगर में राज पर बिठाकर धन का अधिकारी बनाया। उसके यहाँ आठ पुत्र और एक कन्या हुई। उस कन्या का नाम मुकुटा था और वह याज्ञवल्क्य ऋषि से ब्याही गई। उन आठ पुत्रों के ये नाम थे—शिव, नल, अनिल, नंद, कुंद, मुकुंद, वल्लभ और शेखर। इन पुत्रों को अश्वविद्या शालिहोत्र के आचार्य विशाल राजा ने अपनी आठ बेटियाँ ब्याह दी थीं। उन कन्या लोगों के ये नाम थे और यही वैश्य लोगों की मातृका हैं—पद्मावती, मालती, कांती, शुभा, भव्या, मया, रज्जा और सुंदरी। इनका ब्याह नाम के क्रम से हुआ। इन आठ पुत्रों में नल नामा पुत्र योगी दिगंबर होकर वन में चला गया और सात पुत्रों ने सात द्वीप का अधिकार पाया। और पृथ्वी में इनका वंश फैल गया। जंबू द्वीप में विन्द नामा राजा हुआ जो आठ पुत्रों में शिव के कुल में था और उस विन्द को वैश्य हुआ। उस के वंश में

एक सुदर्शन राजा हुआ, जिस के दो स्त्रियाँ थीं जिन के नाम सेवती और नलिनी थे। उस का पुत्र धुरंधर हुआ। इसी धुरंधर का पड़पोता समाधि नामा वैश्य हुआ था। इसी समाधि के वंश में मोहन दास वड़ा प्रसिद्ध हुआ, जिस ने कावेरी के तट पर श्रीरंगनाथ जी के बहुत से मंदिर बनाए। इस का पड़पोता नेमिनाथ हुआ, जिसने नैपाल बसाया और उस का पुत्र वृंद हुआ, जिसने श्री वृन्दावन में यज्ञ करके वृंदा देवी की मूर्ति स्थापन किया। इस वंश में गुर्जर बहुत प्रसिद्ध हुआ, जिस के नाम से गुजरात का देश बसा है। इसके वंश में हीर नामा एक राजा हुआ, जिस के रंग इत्यादिक सौ पुत्र थे, जिन में रंग ने तो राज पाया और सब बुरे कर्मों से शूद्र हो गए और तप के बल से फिर इन लोगों ने वंश चलाये, जिन के वंश के लोग वैश्य हुए पर उनके कर्म शूद्रों के से थे। रंग का पुत्र विशोक हुआ, उस के पुत्र का नाम मधु और उसका पुत्र महीधर हुआ। महीधर ने श्री महादेव जी को प्रसन्न करके बहुत से बर पाये। इसके वंश में सब लोग व्यौहार में चतुर और सब धन और पुत्र से सुखी थे।

इसी वंश में वल्लभ नामा एक राजा हुए और उस के घर में बड़े प्रतापी अग्र राजा उत्पन्न हुए। इसको अग्रनाथ और अग्रसेन भी कहते थे। यह बड़ा प्रतापी था। इसने दक्षिण देश में प्रतापनगर को अपनी राजधानी बनाया। यह नगर धन और रत्न और गऊ से पूर्ण था। यह ऐसा प्रतापी था कि इंद्र ने भी उससे मित्रता की थी। एक समय नाग लोक से नागों का कुमुद नाम राजा अपनी माधवी कन्या को लेकर भूलोक में आया और उस कन्या को देखकर इंद्र मोहित हो गया और नागराज से वह कन्या माँगी। पर नागराज ने इंद्र को वह कन्या नहीं दी और उसका विवाह राजा अग्र से कर दिया। यही माधवी कन्या सब अगरवालों की जननी है और इसी नाते से हम लोग सर्पों को अब तक मामा कहते हैं।

इंद्र ने इस बात से बड़ा क्रोध किया और राजा अग्र से वैर मान कर कई बरस उनकी राजधानी पर जल नहीं बरसाया और अग्रराजा से बड़ा युद्ध किया, तब भगवान ब्रह्मदेव ने दोनों को युद्ध से रोका। इससे

राजा अपनी राजधानी में फिर आया और राज अपनी स्त्री को सौंप के आप तीर्थों में घूमने चला गया और सब तीर्थों में फिर कर महालक्ष्मी की उपासना किया और काशी में आकर कपिलधारा तीर्थ पर महादेव जी का बड़ा यज्ञ करके बहुत सा दान किया, तब श्री महादेवजी प्रसन्न होकर प्रगट हुए और कहा कि वर माँगो तब राजा ने कहा कि मैं केवल यही वर माँगता हूँ कि इंद्र मेरे वश में होय। उसपर प्रसन्न होकर अनेक वर दिये और कहा कि तुम महालक्ष्मी की उपासना करो तुम्हारी सब इच्छा पूरी होगी। यह सुन कर राजा फिर तीर्थ में चला और एक प्रेत की सहायता से हरिद्वार पहुँचा और वहाँ से गर्गमुनि के संग सब तीर्थों में फिरा और जब फिर हरिद्वार में आया तब वहाँ महालक्ष्मी की बड़ी उपासना किया और देवी ने प्रसन्न होकर वर दिया कि इंद्र तेरे वश में होगा और तेरे वंश में दुःखी कोई न होगा और अंत में तुम दोनों स्त्री पुरुष ध्रुवतारा के आसपास रहोगे और इस समय तुम कोलापुर में जाओ, वहाँ नागराज के अवतार राजा महीधर की कन्याओं का स्वयंवर है वहाँ उन कन्याओं से व्याह करके अपना वंश चलाओ। देवी से ये वर पाकर राजा कोलापुर में गया और वहाँ उन कन्याओं से धूमधाम से व्याह किया और फिर कर दिल्ली के पास के देशों में आया और पंजाब के सिरे से आगरे तक अपना राज स्थापन किया और इन्हीं देशों में अपना वंश फैलाया। जब इंद्र ने राजा के वर का समाचार सुना तब तो घबराया और उससे मित्रता करनी चाही। और इस बात के हेतु नारद जी को भेजा और एक अप्सरा जिसका नाम मधुशालिनी था देकर मेल कर लिया। इसके पीछे राजा अग्रसेन ने जमुना जी के तट पर श्री महालक्ष्मी का बड़ा तप किया और श्रीलक्ष्मीजी ने प्रसन्न होकर ये वर दिये कि आज से यह वंश तेरे नाम से होगा और तेरे कुल की मैं रक्षा करने वाली और कुलदेवी हूँगी और इस कुल में मेरा दीवाली का उत्सव सब लोग मानेंगे। यह वर देकर श्री महालक्ष्मी चली गईं। तब राजा ने आकर अपना राज बसाया। उस राज की उत्तर सीमा हिमालय पर्वत और पंजाब की नदियाँ थीं और पूर्व और दक्षिण की सीमा गंगाजी और पश्चिम की सीमा जमुनाजी से लेकर मारवाड़ देश के पास के

देश थे। इनके वंश के लोग सर्वदा इन्हीं देशों में बसे। इससे मुख्य अगरवाले लोग वेही हैं जो पंजाब प्रांत से इधर मेरठ-आगरे तक के बसने वाले हैं। अगरवालों के मुख्य बसने के नगर ये हैं १—आगरा, जिस का शुद्ध नाम अग्रपुर है। यह नगर राजा अग्र के पूर्व-दक्षिण प्रदेश की राजधानी था। २—दिल्ली, जिसका शुद्ध नाम इंद्रप्रस्थ है। ३—गुड़गाँवाँ, जिस का शुद्ध नाम गौड़ ग्राम है। यह नगर अगरवालों के पुरोहित गौड़ ब्राह्मणों को मिला था, इसी से प्रायः अगरवाले लोग यहीं की माता को पूजते हैं। ४—मेरठ, जिस का शुद्ध नाम महाराष्ट्र है।* ५—रोहतक, जिसका शुद्ध नाम रोहिताश्व है। ६—हाँसीहिसार, जिसका शुद्ध नाम हिंसारि देश है। ७—पानीपत, इसका शुद्ध नाम पुन्यपत्तन जाना जाता है। ८—करनाल। ९—कोट काँगड़ा, जिस का शुद्ध नाम नगर कोट है। अगरवालों की कुलदेवी महामाया का मंदिर यहीं है और ज्वाला जी का मंदिर भी इसी नगर की सीमा में है। १०—लाहौर, इस नगर का शुद्ध नाम लवकोट है। ११—मंडी इसी नगर की सीमा में रैवालसर तीर्थ है। १२—बिलासपुर, इसी नगर की सीमा में नयना देवी का मंदिर बसा है। १३—गढ़वाल। १४—जींदसपीदम। १५—नाभा। १६—नारनौल, इस का शुद्ध नाम नारिनवल है। ये सब नगर उस राज में थे और राजधानी का नाम अग्र नगर था, जिसे अब अगरोहा कहते हैं। आगरा और अगरोहा † ये दोनों नगर राजा अग्रसेन के नाम से आज तक प्रसिद्ध हैं। राजा अग्रसेन ने अपनी राजधानी में महालक्ष्मी का एक बड़ा मंदिर किया था।

राजा अग्रसेन ने साढ़े सत्रह यज्ञ किये। इसका कारण यह है कि जब राजा ने अट्ठारवाँ यज्ञ आरंभ किया और आधा हो भी चुका तब राजा को यज्ञ की हिंसा से बड़ी ग्लानि हुई और कहा कि हमारे कुल में यद्यपि कहीं भी कोई मांस नहीं खाता परंतु दैवी हिंसा होती है, सो आज से जो मेरे वंश मे हो उसको यह मेरी आन है कि दैवी हिंसा भी न करै अर्थात् पशु-यज्ञ और बलिदान भी हमारे वंश में न होवै

* इसको कोई मयराष्ट्र भी कहते हैं।

† अब यह एक गाँव सा बच गया है।

और इससे राजा ने उस यज्ञ को भी पूरा नहीं किया। राजा को सत्रह रानी और एक उपरानी थीं। उनसे एक एक को तीन तीन पुत्र और एक एक कन्या हुई और उसी साढ़े सत्रह यज्ञ से साढ़े सत्रह गोत्र हुए। कोई लोग ऐसा भी कहते हैं कि किसी मनुष्य का ब्याह जब गोत्र में हो गया तो बड़े लोगों ने एकही गोत्र के दो भाग कर दिये, इससे साढ़े सत्रह गोत्र हुए पर यह बात प्रमाण के योग्य नहीं है। राजा अग्र के इन बहत्तर पुत्र और कन्याओं के बेटा अग्रवाल कहाए। अग्रवाल का अर्थ अग्र के बालक हैं। अग्रवालों के साढ़े सत्रह गोत्रों के ये नाम हैं—१ गर्ग २ गोइल ३ गावाल ४ वात्सिल ५ कासिल ६ सिंहल ७ मंगल ८ भद्दल ९ तिंगल १० ऐरण ११ टैरण १२ ठिंगल १३ तित्तल १४ मित्तल १५ तुंदल १६ तायल १७ गोभिल, और गवन अर्थात् गोइन आधा गोत्र है, पर अब नामों में के कुछ अक्षर उलट पुलट भी हो गए हैं। राजा अग्र ने अपने सहायक गर्ग ऋषि के नाम से अपना प्रथम गोत्र किया और दूसरे गोत्रों के नाम भी यज्ञों के अनुसार रक्खे। राजा अग्र ने अपने कुल पुरोहित गौड़ ब्राह्मण बनाए और उस काल में सब अगर-वाले वेद पढ़नेवाले और त्रिकाल साधनेवाले थे। राजा अग्र बूढ़ा होकर तप करने चला गया और उसका पुत्र विभु राज पर बैठा और उसके कई वंश तक राजा लोग अपने धर्म में निष्ठ होकर राज करते रहे। इस वंश में दिवाकर एक राजा हुआ, जो वेदधर्म छोड़कर जैनी हो गया और उस ने बहुत से लोगों को जैनी किया और उसी काल में अगरवालों में वेदधर्म छूटने लगा परंतु अगरोहा और दिल्ली के अगर-वालों ने अपना धर्म नहीं छोड़ा। इस वंश में राजा उग्रचंद्र के समय में राज घटने लगा और जब शहाबुद्दीन ने चढ़ाई किया तब तो अगरोहा सब भाँति नाश कर दिया। शहाबुद्दीन की लड़ाई में बहुत से लोग मारे गए और उनकी बहुतसी स्त्री सती हुईं, जो इन लोगों के घर में अब तक मानी और पूजी जाती हैं। यह अगरवालों के नाश का ठीक समय था। इसी समय से इन में से बहुतों ने धर्म छोड़ दिये और यज्ञोपवीत तोड़ डाले। उस समय जो अगरवाले भागे वे मारवाड़ और पूर्व में जा बसे और उनके वंश में पुरबिये और मारवाड़ी अगरवाले हुए, और उत्तराधी और दखिनाधी लोग भी इसी भाँति हुए, पर मुख्य

अगरवाले पछाँही वेही कहलाए जो दिल्ली प्रांत में बच गए थे। जब मुगलों का राज हुआ तब अगरवालों की फिर बढ़ती हुई और अकबर ने तो अगरवालों को अपना वज़ीर बनाया। उसी काल से अगरवालों की विशेष वृद्धि हुई। अकबर के दो मुख्य और प्रसिद्ध अगरवाले वज़ीर थे, जिन का नाम महाराज टोडरमल* और मद्‌धूशाह था। मद्‌धूसाही पैसा इन्हीं के नाम से चला है।

* राजा टोडरमल खत्री थे। (सं०)

चरितावली

सं० १९२८ से सं० १९३७ वि० तक लिखी
गई तथा विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित
जीवनियों का संग्रह
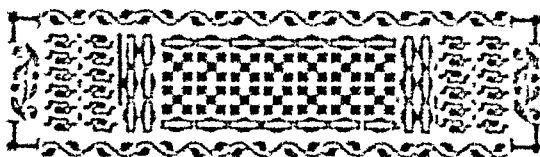
चरितावली

१—विक्रम

इस के पूर्व कि हम विक्रमादित्य का कुछ चरित्र लिखें हम को श्रीमद् बुहलर साहब का धन्यवाद करना चाहिए, जिन्हों ने विक्रमांकचरित्र नाम ग्रंथ खोज कर प्रकाश किया। यह श्रीहर्षचरित्र के चाल का एक दूसरा ग्रंथ है, जो अब प्रकाश हुआ। यह ग्रंथ विल्हण कवि का है और अनेक छंदों में अठारह सर्ग में लिखा हुआ है। इस के सत्रह सर्गों में विक्रमादित्य का चरित्र और अठारहवें सर्ग में कवि ने अपना वर्णन किया है। प्रसिद्ध है कि चौरपंचाशिका इसी विल्हण की बनाई हुई है। कहते हैं कि गुजरात के राजा वैरसिंह की बेटी चन्द्रलेखा वा शशिकला को विल्हण पढ़ाता था और उस ने उससे गांधर्व विवाह भी किया था। जब राजा ने इस बात से क्रुद्ध होकर विल्हण को फाँसी की आज्ञा दिया, रास्ते में इस ने चौरपचाशिका बनाई, जिससे प्रसन्न होकर राजा ने फाँसी के बदले अपनी कन्या की बाँह उसके गले में डाली। इन कथाओं पर हमारा कुछ ऐसा विश्वास नहीं, क्योंकि इस ग्रंथ में विल्हण ने इन बातों की कहीं चर्चा नहीं की है। विल्हण अपना हाल यों लिखता है:—कश्मीर के देश में झेलम और सिंध के मुहाने पर प्रवरपुर नाम का बड़ा सुंदर नगर था। अनंत देव वहाँ का बड़ा प्रतापी और धार्मिक राजा था, जिस की रानी का नाम सुभटा था। उस रानी का भाई क्षितिपति भोज के समान कवियों का गुणग्राहक और बड़ा विष्णुभक्त था। अनंत का बेटा कलश हुआ और कलश के पुत्र हर्षदेव और विजयमल्ल थे। प्रवरपुर के पास ही विजयवन में खोनमुख नाम का एक गाँव था, जहाँ कुशिक गोत्र के ब्राह्मण बसते थे, जिन को गोपादित्य मध्य देश से बड़े आदर से लाया था। उन ब्राह्मणों में मुक्तिकलश सब से मुख्य था और उस के राजकलश और

राज्य कलश को ज्येष्ठ कलश पुत्र हुआ। ज्येष्ठ कलश को इष्टराम, विल्हण, आनंद तीन पुत्र थे। विल्हण व्याकरण और काव्य अच्छी तरह पढ़ा था और श्री वृन्दावन में बहुत दिन तक उस ने काल बिताया और फिर कन्नौज, प्रयाग, बनारस और अयोध्या में फिरता रहा और फिर कुछ दिन दाहाल के राज्य में, कुछ दिन धार में और कुछ दिन गुजरात में रहकर अपनी कविता से लोगों को प्रसन्न करता रहा। जब यह दक्षिण में चोल देश में गया, तो वहाँ के राजा से इसको विद्यापति की पदवी मिली। उस की माता का नाम नागादेवी था। कर्ण के दरबार में गंगाधर कवि के मुकाबिले में राम जी के चरित्र में काव्य बनाया। यह अपने ग्रंथ में लिखता है कि किसी कारण से वह राजा भोज से न मिल सका। विक्रमांक चरित्र उस ने अपने बुढ़ापे में बनाया। विदित रहे कि विल्हण ईसवी ग्यारहवें शतक के मध्य और अंत भाग में हुआ है, क्योंकि विक्रमादित्य ने (जिस के दरबार का यह पंडित था) सन् १०७६ से ११२७ तक राज्य किया था। विल्हण की कविता में कई बातें विशेष जानने के योग्य हैं, जैसा उस ने कादम्बरी का अपने ग्रंथ में वर्णन किया है, जिससे स्पष्ट जाना जाता है कि बाण कवि विल्हण के पहिले हुआ है और उस के समय में भी बाण की कविता का माधुर्य भारतवर्ष में फैला हुआ था। फारसी (शिकस्त) के चाल के कोई अक्षर विल्हण के समय में कश्मीर में लिखे जाते थे, क्योंकि उस ने कश्मीर के वर्णन में लिखा है कि वहाँ कायस्थ लोग अपने लिखावट की जाल से किसी को ठग नहीं सकते थे। विल्हण गुजरातियों से बहुत नाराज़ था, क्योंकि वह लिखता है कि गुजराती राक्षसी बोली बोलते हैं और लाँव नहीं बाँधते और मैले होते हैं। विल्हण के बाप ने महाभाष्य पर कोई तिलक किया था, परंतु अब वह नहीं मिलता। विल्हण की कविता वैदर्भी और ओज और प्रसाद गुण से पूर्ण है। कविता से जहाँ कवि के और गुण प्रकट होते हैं वहाँ साथ ही उस का अभिमान, उद्दण्डता और परिहास का स्वभाव भी पाया जाता है।*

* विल्हण का यह स्फुट श्लोक मिला है, जिस से उसका अभिमान स्पष्ट प्रगट होता है।

इसी कवि ने विक्रमादित्य का चरित्र अठारह सर्गों में कहा है। इस समय हम इस बात का झगड़ा नहीं ले बैठते कि विक्रम कितने भए और किस किस समय में भए। यहाँ पर हम केवल उन विक्रम का चरित्र वर्णन करते हैं जो दक्षिण देश में राज्य करता था, कल्याण जिस की राजधानी था और विक्रमादित्य जिस का नाम था। हमारे पाठक लोगों को यह जान कर बड़ा आश्चर्य होगा कि यह वह विक्रम नहीं है जिस का संवत् चलता है और न इस विक्रमादित्य के हुए १६४१ वर्ष हुए।

इस विक्रमादित्य का जन्म चालुक्य * नामक क्षत्रीवंश में हुआ था। बिल्हण लिखता है कि ब्रह्मा एक बेर अंजुली में जल लेकर अर्घ देना चाहते थे कि इंद्र अपनी विपत्ति कहने लगा, जिस से ब्रह्मा ने अपनी अंजुली का जल गिरा दिया और उसी से चालुक्य नामक क्षत्रियों का कुल उत्पन्न हुआ। हारीत और मानव्य इस वंश के पूर्व पुरुष थे और पहले से ये लोग अयोध्या के राजाओं के अधिकार में अयोध्या जी में बसते थे। श्री रामचंद्र के समय में भी ये लोग उन की सेवा में उपस्थित थे। फिर इन लोगों ने दक्षिण में अधिकार आरंभ किया और धीरे-धीरे वहाँ के राजा हो गये। काल पाकर श्री तैलप नामक इस वंश में एक राजा हुआ। इसने सन् ९७३ से ९९७ तक राज्य किया। इस ने हिंदुस्तान के बहुत से राजाओं को मार कर अपना अधिकार बढ़ाया। श्रीयुत बूलर साहब लिखते हैं मुंज को इसी ने मारा था और मालवा पर इस ने बड़े धूमधाम से चढ़ाव किया था। इस के पीछे सत्याश्रय राजा हुआ, जिस ने ग्यारह वर्ष अर्थात् सन् १००८ तक राज्य किया। इसी का नामांतर सत्यश्री था। इस के पीछे जय सिंह राजा हुआ, जिस ने सन् १०४० तक राज्य किया। इस के पीछे आहव

ब्राह्मः [illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥

* "सूर्य राजवंश वर्णन" में देखिये ।

मल्लदेव राजा हुआ। इसी का नामांतर त्रिभुवनमल्ल और त्रैलोक्यमल्ल था। इस ने पवांरों* के देश मालव की राजधानी धारानगरी पर चढ़ाई किया। करनाटक, कुंतल और डाहल देश में इस का निज राज्य था, पर चोल, केरल और द्रविड़ देश इस ने जीत के अपने राज्य में मिला लिया था। विल्हण लिखता है कि अद्भुत कथा और दश रूप काव्य में इस राजा का वहुत सा वर्णन है। इस को पुत्र नहीं होता था इससे इसने महादेव जी की घर ही में बड़ी आराधना की और काल पाकर सोमदेव, विक्रमादित्य और जय सिंह तीन पुत्र हुए। विक्रम के शरीर में छोटेपन ही से शूरता इत्यादिक उत्तम गुण झलकते थे। जब यह जवान हुआ, तो पहिले इस ने वंगाले पर चढ़ाव किया और कामरूप जीता। समुद्रपार हो कर सिंहल पर† इस ने चढ़ाव किया और द्राविड़ और चोलों की राजधानी कांची तीन वेर लूटा। जब वह सिंहल जीत-कर लौटा, तो गोदावरी के पास सुना कि तुंगभद्रा के किनारे पिता ने देह त्याग किया। यह उसी समय घर गया और इस का बड़ा भाई सोमदेव राजा हुआ। विल्हण लिखता है कि सोमदेव वड़ा मदोन्मत्त

---

*"वून्दी राजवंश वर्णन" और वाबू रामचरित्र सिंह संग्रहीत "नृपवंशावली" और "राजस्थान" में देखिये।

†सिंहल के इतिहास में वंगाल का पहला हाल इतना लिखा है कि सिंह-बाहु नाम एक वंगाले का राजा था। उस का बड़ा वेटा विजयसिंह प्रजाओं को पीड़ा देने के कारण जब देश से निकाला गया, तो सात सौ आदमियों के साथ जहाज में चढ़कर निकला। अनेक प्रकार के कष्ट सहने के उपरान्त सिंहल में जा पहुँचा और वहाँ के लोगों को जीत कर उन का राजा वन गया। विजय-सिंह के मरने के वाद उस का भतीजा पांडुवास जो बङ्गाल में रहता था सिंहल-द्वीप के सिंहासन पर वैठा। यह सिंहलद्वीप के राजाओं में पहला राजा था। सिंहवंश के राजा होने के कारण इस टापू का नाम सिंहलद्वीप हुआ। जिस साल बुद्धदेव का परलोक हुआ था उसी साल विजयसिंह सिंहल में पहुँचा। यह साफ जान पड़ता है कि ५०० वरस ईस्वी सन् के पहले वंगाले में आर्यवंश के लोगों का अधिकार बहुत बढ़ा था, क्योंकि उन लोगों ने भी समुद्र की राह से जहाज पर चढ़ कर दूर दूर के देशों को जीता था।

हो गया था और इन्दुमित्र नामक एक बुरा राजा उस को सहायता को मिल गया, इस से विक्रम ने इसका संग छोड़ा। इसी को चालुक्य कहते हैं। दिया और कोंकण का राजा जयकेश इस से मिलकर दक्षिण में बहुत से देश जीते और अपना अपना अलग राज स्थापन किया। उस समय इस का छोटा भाई जयसिंह भी इस के साथ था। द्रविड़ देश के राजा ने अपनी कन्या देकर इस से मैत्री की और जब वह राजा मर गया तो विक्रम ने उस के बेटे अर्थात् अपने साले को बड़े धूमधाम से गद्दी पर बैठाया। और फिर गांगकुंडपुर होता हुआ तुंगभद्रा के किनारे आकर रहा। जब चेंगी के राजा राजिक ने इस के साले को जीत लिया था तब यह बड़ी धूमधाम से उस से लड़ने को गया था। कहते हैं कि राजिक इस के बड़े भाई सोमदेव का मित्र था, इस से राजिक की ओर से सोमदेव भी लड़ने को आया था। यह लड़ाई बड़ी तैयारी से हुई और सोमदेव अंत में पकड़ा गया। राजिक भागा और विक्रमादित्य अपने बाप की गद्दी पर बैठा। करहाट के राजा की कन्या ने स्वयंवर किया था, जिस में विक्रमादित्य भी गया था। बिल्हण ने यहां पर राजाओं के स्वाभाविक अभिमान और काम की चेष्टा के वर्णन में बहुत ही अच्छी स्वभावोक्ति दिखाई है और 'पारलौकिक गैल' के नाम से आतशबाजी के भांति की किसी वस्तु का वर्णन किया है। स्वयंवर में बिल्हण ने नीचे लिखे हुए राजाओं का वर्णन किया है, जिस से प्रगट होता है कि इतने राजा उस समय अलग अलग वर्तमान और अच्छी दशा में थे, यथा अयोध्या, चेदि, कान्यकुब्ज (अर्जुन के कुल का राजा), चंबल के तट का देश, कालिंजर, गोपाचल, मालव, गुजरात, मंदराचल के समीप का पान्ड्यदेश और चोल। कन्या ने जयमाल विक्रमादित्य के गले में डाली और धूमधाम से इस का विवाह हुआ।

इस राजा के बहुत से ऐश्वर्य और विहार वर्णन के पीछे बिल्हण लिखता है कि एक दिन विक्रम ने दूत के मुख से सुना कि उस का छोटा भाई पापी हो गया है और चेंगी जीतने के पीछे विक्रम ने जो इसे देश और सेना दी थी उस पर सन्तोष न करके बहुत से सिपाही नौकर रख के सारे दक्षिण में लूट मार करता फिरता है और द्रविड़ के

राजा [शायद विक्रम का साला] ने उसे बहुत ही बहकाया है और छोटे छोटे बहुत से उपद्रवी राजा उससे मिल गए हैं। यह सुन कर बहुत पछताया और सेना लेकर बाहर निकला। जब भाई की सेना के पास इस का डेरा पहुँचा, तो इसने दूतों के और पत्रों के द्वारा उस को बहुत समझाया, पर वह न माना और अंत में विक्रम से हारकर कहीं दूर जा रहा। विक्रम फिर सुख से राज्य करने लगा। एक बेर कांची पर फिर चढ़ा था, क्योंकि वहाँ का राजा इससे फिर गया था। कवि ने विक्रम के स्वाभाविक बहुत से गुण लिखे हैं, जिन में उदारता का बहुत ही सविशेष वर्णन है। इस ने इक्यावन वर्ष राज्य किया था।

ऊपर के लिखे अनुसार लोगों को विक्रम का जीवनवृत्त विदित होगा। कवि ने उस में जो जो सद्गुण लिखे हैं वह उस में रहे हों, पर अपने दो भाइयों को उस ने जीता और बड़े भाई को कैद करके आप गद्दी पर बैठा, इस से उस के चरित्र में हम को थोड़ा संदेह होता है। क्योंकि जब उस के बड़े भाई के जीतने का कवि वर्णन करेगा, तो उस दोष के छिपाने के वास्ते उस के उस भाई को बुरा लिखें, इस में क्या संदेह है। जो कुछ हो, विक्रम एक बड़ा राजा और गुणग्राही मनुष्य हो गया है और यह पंडितों के आदर ही का फल है कि उस का संपूर्ण वर्णन आज हम पाठकों को सुनाते हैं।

—❀—

कालिदास का जीवनचरित्र

यह सब वार्ता केवल वंगदेशियों की है। पश्चिम प्रदेशीय पंडित लोग भारतवर्षीय कवियों में कालिदास को सर्वोच्चासन देते हैं। वंबई के प्रसिद्ध पंडित भाऊदाजी ने केवल कालिदास की कविता ही नहीं पढ़ी वरन बहुत परिश्रम करके प्राचीन संस्कृत ग्रंथ और ताम्रपत्रों से उन का जीवनवृत्तांत संग्रह की। हम ने भी उन के ग्रंथ से कई एक बातें ग्रहण किया है।

कालिदास विख्यात महाराजा विक्रम के नवरत्नों में थे। इसके* अतिरिक्त उन के जीवन की और कोई प्रामाणिक बात लोग नहीं जानते। बंगदेश के कई अभिमानी पंडितों ने कालिदास को लंपट ठहरा कर उन के नाम से हास्यरस की कविताओं का प्रचार किया। पाठशाला के युवा ब्राह्मण थोड़ा सा मुग्धबोध व्याकरण पढ़ के इन श्लोकों का अभ्यास करके धनिक लोगों का मनोरंजन करते हैं और इसी प्रकार धनी लोगों से प्रति वर्ष कुछ पाते हैं। यथार्थ में तो यह सब कविता कालिदास की नहीं हैं, परंतु नवीन कवियों की बनाई हुई हैं। "प्रफुल्लित ज्ञान नेत्र" नामक पद्यमय पुस्तक बंगभाषा में मुद्रित हुई है। इस ग्रंथ में लोगों ने मिथ्या कल्पना करके कालिदास में ऊपर लिखा हुआ दोष ठहराया है। इसी प्रकार से इन दिनों अंगरेजी भूमिका सहित एक रघुवंश की सटीक पोथी मुद्रित हुई है। इस में भी लोगों ने मिथ्या कल्पना किया है। कालिदास ने कोई भी ग्रंथ में अपना वृत्तांत कुछ भी नहीं लिखा है, केवल इतनाही प्रकट किया है।

धन्वन्तरिः क्षपणकोमरसिंहशंकुः वेतालभट्टघटखर्परकालिदासाः।
ख्यातोवराहमिहिरोनृपतेःसभायांरत्नानिवैवररुचिर्नवविक्रमस्य॥

केवल इतनाही परिचय नवरत्नों का लिखा है। अभिज्ञानशाकुंतल-ग्रंथकर्ता के इतनेही परिचय से संतुष्ट न रह के और-और संस्कृत ग्रंथों से इस विषय का अनुसंधान करना उचित है। प्रायः ५०० वर्ष हुए कि कोलाचल मल्लिनाथ सूरि ने कालिदास कृत काव्यों की टीका की है। इन्हीं ने यह टीका दक्षिणावर्त्तनाथ की टीका देख कर बनाई। परंतु वह अब दुष्प्राप्य है। भारततत्त्ववित् लासेन साहब ने यह लिखा है कि

* राजा लक्ष्मण सिंह रघुवंश के उल्था में यों लिखते हैं:—"कालिदास नाम के कई कवि हुए हैं। उनमें दो मुख्य गिने जाते हैं—एक तो जो राजा वीर विक्रमादित्य की सभा के नौरत्नों में था, दूसरा जो राजा भोज के समय में हुआ। इनमें से पंडित लोग पहले को दूसरे से श्रेष्ठ मानते हैं और उसी के बनाये हुए रघुवंश, कुमारसम्भव, मेघदूत, ऋतुसंहार इत्यादि काव्य और शाकुन्तल नाटक, विक्रमोर्वशी नाटक और और ग्रन्थ, कहते हैं, बनाये हुए हैं।"

कालिदास ईस्वी दो संवत् में समुद्र गुप्त की सभा में वर्त्तमान थे। लासेन ने एक पत्थर देखा था, जिस पर यह लिखा था कि "समुद्र गुप्त कवि बंधु काव्य प्रिय" और इसी से वह अनुमान करते हैं कि कविश्रेष्ठ कालिदास उन के सभासद थे। बेन्टली ने एशियाटिक नामक पत्रिका में भोज प्रबंध का फरासीसी अनुवाद और "आईने अकबरी" को देख कर लिखा है कि भोज राजा के राज्य के ८०० वर्ष पश्चात् विक्रमादित्य के सभा में कालिदास वर्त्तमान थे, परंतु यह बात कदापि नहीं हो सकती। बेंटली ने स्वीय ग्रंथों में कई एक ऐसी अशुद्ध बातें लिखी हैं जिन के पढ़ने से बोध होता है कि वह हिंदुओं का इतिहास कुछ भी नहीं जानते।

कर्नेल विलफोर्ड, प्रिंसेप और एलफिनस्टन ने लिखा है कि कालिदास प्रायः १४०० वर्ष पूर्व वर्त्तमान थे।

भोज प्रबंध के प्रमाणानुसार गुजरात, मालव और दक्षिण के पंडित कहते हैं कि कालिदास सन् ११०० ईस्वी में भोजराजा के सभासद थे। उज्जैन के राजसिंहासन पर कई विक्रमादित्य और भोजराज नामक राजा बैठे, परंतु सब से अंत के भोज राजा तो संवत् ११०० ईस्वी में राज्य करते थे। और इससे बोध होता है कि अंत के विक्रम ही को भोजराज कहते हैं और उन्हीं की नवरत्न की सभा थी। हमने स्वयं "भोजप्रबंध" पाठ कर के देखा है कि उसमें यह लिखा है कि मालव देशांतर्गत धारानगराधिप भोज सिन्धुल के पुत्र और मुंज के भ्रातृपुत्र थे। भोज के बाल्यावस्था में उन के पिता का परलोक हुआ तो उन के पितृव्य मुंज राजपद पर अभिषिक्त हुए और भोज ने उन के मंत्री बनकर बहुत विद्या उपार्जन किया और इसी प्रकार भोज दिन प्रतिदिन विख्यात होने लगे। तो मुंज के मन में यह शंका हुई कि अब लोग हमको पदच्युत करेंगे और यह विचार करने लगे कि किसी प्रकार से भोज का प्राणनाश करूँ। इसी हेतु मुंज ने वत्सराज राजा को बुला कर अपना दुष्ट विचार प्रकाशित किया और कहा कि भोज को शीघ्र ही अरण्य में ले जाकर इसका प्राणनाश करो। परंतु इस राजा ने भोज को तो छिपा रक्खा और पशु के रक्त से भरे हुए खड्ग

को राजा मुंज के पास भेज दिया। इस को देखकर उन्होंने सानन्द चित्त से पूछा कि भोज ने मानव लीला समाप्त किया? यह सुन वत्स राजा ने एक पत्र पर लिख दिया कि—"मान्धाता, जो भोज क्या, एक समय नृप कुल का शिरोमणि था अब परलोक में है। रावणारि रामचंद्र जिन्होंने समुद्र में सेतु बांधा था वह कहां हैं? और बहुत से महोदय गण और राजा युधिष्ठिर ने स्वर्गारोहण किया है, परंतु पृथ्वी उन के साथ नहीं गई। पर आप के साथ पृथ्वी अवश्य रसातल को जायगी।" इस पत्र के पढ़ते ही मुंज का शरीर रोमांचित हुआ और भोज के लिये अत्यंत व्याकुल हुए। परंतु जब उन्होंने सुना कि भोज जीता है, तो उन को वत्सराज से शीघ्र बुलवा कर धारानगर के राज-सिंहासन पर बैठाया और आप ईश्वराराधन के निमित्त अरण्य में प्रवेश किया। भोज ने पितृसिंहासन पा के बहुत से पंडितों को अपनी सभा में बुलाया। हम को भोज प्रबंध में कालिदास के सहित नीचे लिखे हुए पंडितों के नाम मिले हैं:—

कर्पूर, कलिंग, कामदेव, कोकिल, श्रीदचन्द्र, गोपालदेव, जयदेव, तारेचंद्र, दामोदर, सामनाथ, धनपाल, बाण, भवभूति, भास्कर, मयूर, मल्लिनाथ, महेश्वर, माघ, मुचकुंद, रामचंद्र, रामेश्वर, भक्त, हरिवंश, विद्याविनोद, विश्ववसु, विष्णुकवि, शंकर, सामदेव, शुक, सीता, सोम, सुबन्धु इत्यादि।

सीता अवश्य किसी स्त्री का नाम है और इसी से बोध होता है कि स्त्रीशिक्षा उस समय प्रचलित थी। तो हम नहीं समझते कि हम-लोगों के स्वदेशीय अब इस को क्यों बुरा समझ के अपने देश की उन्नति नहीं होने देते। देखिये, अमेरिका में स्त्रीशिक्षा कैसी प्रचलित है और जो लोग एक समय अत्यंत मूर्ख अवस्था में थे अब यूरप के लोगों को भी दबा लिया चाहते हैं, तो यह देखकर हे हिंदुस्तानियो! क्या तुम को थोड़ी भी लज्जा नहीं आती?

पण्डित शेषगिरि शास्त्री ने लिखा है कि बल्लालसेन ने १६८८ ईस्वी में भोजप्रबंध बनाया। इस से बोध होता है कि वे भोजराज के विद्योत्साही और उन के सम्मान के वृद्धि के हेतु कालिदास, भवभूति

इत्यादि कवियों को केवल अनुमान ही से भोजराज का सभासद ठहराया है। भोजचरित में इन सब कवियों के नाम मिलते हैं इस लिये भोजप्रबंध को कैसे प्रामाणिक ग्रंथ कहें? इसी भोजराज ने चंपू रामायण, सरस्वती कंठाभरण, अमरटीका, राजवार्तिक, पातंजलिटीका और चारुचार्य इत्यादि बहुत से ग्रंथ मिलते हैं, परंतु कालिदास, भवभूति आदि कवियों के नाम इन में से एक भी ग्रंथ में नहीं लिखे हैं। विश्वगुणादर्शक ग्रंथकार वेदांताचार्य कालिदास श्रीहर्ष और भवभूति एक समय भोजराज के सभा में वर्त्तमान थे, जैसा लिखा भी है।

माघश्चोरो मयूरो मुररिपुरेपरो भारविः सारविद्यः।
श्री हर्षःकालिदासः कविरथ भवभूत्यादयो भोजराजः॥

इस में वे भी भोजप्रबंधप्रणेता बल्लाल के न्याय महाभ्रम में पतित हुए हैं, क्योंकि श्रीहर्ष, कालिदास और भवभूति एक काल में वर्तमान नहीं थे। इस विषय में बहुत से प्रमाण भी हैं।

भारतवर्ष के बहुत से राजाओं का नाम विक्रमादित्य था। उज्जयिनी के अधीश्वर विक्रमादित्य जो ५७ ख्री० पू० में राज्य करते थे और जिन्हों ने 'संवत्' स्थापन किया है तो अब हम लोगों को देखना चाहिये कि कालिदास इस विक्रम की सभा में उपस्थित थे वा नहीं। हम्बोल्ट लिखते हैं कि कविवर होरेस और वर्जिल कालिदास के समकालि थे। इस बात को बहुत से यूरोपीय पंडितों ने स्वीकार किया है। कर्नेल टॉड ने अपने राजस्थान के इतिहास में लिखा है कि "जब तक हिंदू साहित्य वर्तमान रहेगा तब तक लोग भोज प्रमार और उनके नवरत्नों को न भूलेंगे"। परंतु यह ठहराना बहुत कठिन है कि वह गुण-पंडित तीन भोजराजों में से किस भोजराज की नवरत्न की सभा थी। कर्नेल टाड ने यह निरूपण किया है—प्रथम भोजराज संवत् ६३१ में, द्वितीय ७२१ और तृतीय भोजराज संवत् ११०० में वर्तमान थे। "सिंहासनबत्तीसी" "वेतालपच्चीसी" और "विक्रमचरित्र" आदि ग्रंथों में महाराज विक्रमादित्य की बहुत सी अलौकिक कथा भरी हुई हैं, इसी कारण इन में

कोई सत्य इतिहास नहीं मिल सकता। मेरुतुंग कृत "प्रबंध चिंतामणि" और राजशेखरकृत "चतुर्विंशति प्रबंध" में लिखा है कि महाराजा विक्रमादित्य अति शूर वीर और महाबल पराक्रांत नृपति थे। परंतु उन में नवरत्न और कालिदास आदि कवियों का कुछ भी वृत्तांत नहीं लिखा है।

जैन ग्रंथों में लिखा है कि सिद्धसेन नामक जैन पुरोहित विक्रमादित्य के उपदेष्टा थे। परंतु हम नहीं कह सकते कि यह बात कहां तक शुद्ध है। और एक जैन लेखक कहते हैं कि ७२३ संवत् में भोजराज के राज्य में बहुत से लोग उज्जयिनी नगर में जा बसे थे। यह और वृद्ध भोज दोनों जैनमतावलंबी थे। ये सब वृत्तांत जैन ग्रंथों से ज्ञात होते हैं। और और संस्कृत ग्रंथों में ये सब प्रमाण नहीं मिलते। वृद्धभोज मनांतुग सूरि के शिष्य थे। मनांतुग और बाण, मयूर भट्ट के समकालिक जैनाचार्य्य थे। बाणकृत हर्षचरित पढ़ने से ज्ञात होता है कि उन्हों ने सन् ६०० ईस्वी में श्रीकंठाधिपति हर्षवर्द्धन के साथ भेंट किया था। यही कान्यकुब्जाधिपति हर्षवर्द्धन शिलादित्य थे और इन्हीं की सभा में हियांग सियांग नामक चैनिक परिव्राजक बुलाए गए थे। बाण कवि ने हियांगसियांग के ग्रंथ को पाठ करके अपना ग्रंथ बनाया। हर्षवर्द्धन के साथ चैनिकाचार्य्य के भेंट का वृत्तांत हर्षचरित्र में "यवन प्रोक्त पुराण" नामक ग्रंथ से लिया गया है।

महर्षि कण्व ने अपने "कथा सरित्सागर" के १८ वें अध्याय में नरवाहन दत्त को विक्रमादित्य का उपनाम कहा है। उसमें लिखा है कि विक्रमादित्य सन् ५०० ईस्वी में राज्य करते थे। नरवाहन दत्त जैन ग्रंथ, कथा सरित्सागर और मत्स्य-पुराण के मतानुसार शतानिक के पौत्र थे। नासिक में एक पत्थर की चट्टान मिली है जिस पर विक्रमादित्य का नाम लिखा है और उन को नाभाग, नहुष, जन्मेजय, ययाति और बलराम के सदृश योद्धा वर्णन किया है। पाठक जनों को देखना उचित है कि एक विक्रमादित्य के इतिहास में कितनी गड़बड़ है। लोगों में तो केवल एक ही विक्रमादित्य प्रसिद्ध हैं, इस समय के भारतवर्षीय इतिहासों में कई एक विक्रमादित्यों के नाम मिले हैं।

परंतु हम को उस विक्रमादित्य का इतिहास ज्ञात होना आवश्यक है जिस से हम लोगों का संदेह दूर हो और यह जान पड़े कि नवरत्नों के अमूल्यरत्न कवि-चक्रचूड़ामणि कालिदास का विक्रमादित्य से कुछ संबंध है वा नहीं।

श्री देवकृत विक्रमचरित में लिखा है कि विक्रमादित्य तीर्थंकर वर्द्धमान के नाश होने के ४७० वर्ष परे उज्जयनी में राज्य करते थे और इन्होंने ही संवत् स्थापन किया है, परंतु इस ग्रंथ में कालिदास का नाम भी नहीं लिखा है।

पंडित तारानाथ तर्कवाचस्पति कहते हैं कि महाकवि कालिदास ने 'रघुवंश', 'कुमारसम्भव' और 'मेघदूत' बनाने के अनंतर ३०६८ कलिगताब्द में "ज्योतिर्विदाभरण" नामक कालज्ञान शास्त्र बनाया। मेघदूत-प्रकाशक बाबू प्राणनाथ पंडित महाशय ने भी इस बात को अपनी भूमिका में लिखा है, परतु यह किसी का ग्रंथ नहीं दृष्टि पड़ता कि 'ज्योतिर्विदाभरण' रघुकार कालिदास रचित है। तर्कवाचस्पति महाशय के मत को सहायता देने के निमित्त "ज्योतिर्विदाभरण" के कतिपय श्लोकों का अनुवाद करके नीचे लिखते हैं, जैसा कालिदास ने लिखा।

मैंने इस प्रफुल्लकर ग्रंथ को भारतवर्षांतरगत मालव देश में (जिस में १८० नगर हैं) राजा विक्रमादित्य के राज्य के समय रचा है॥ ७॥

शंकु, वररुचि, मणि, अंशुदत्त, जिष्णु, त्रिलोचन हरि, घटकर्पर, अमर सिंह और और बहुत से कवियों ने उनके सभा को सुशोभित किया था॥ ८॥

सत्य, वराहमिहिर, श्रुतिसेन, श्रीवादरायणी, भनित्थ, कुमार सिंह और कई एक महाशय ज्योतिषशास्त्र के अध्यापक थे॥ ९॥

धन्वंतरि, क्षपणक, अमर सिंह, शंकु, वैतालभट्ट, घटकर्पर, कालिदास और वराहमिहिर और वररुचि, ये सब महाशय विक्रम के नवरत्न थे॥ १०॥

विक्रम की सभा में ८०० छोटे छोटे राजा और उनके महासभा में १६ वाग्मी, १० ज्योतिषी, ६ वैद्य और १६ वेद-पारग पंडित उपस्थित रहते थे॥ ११॥

कोई कहते हैं कि यह कवि, मालवा के हर्ष विक्रमादित्य के समय, हजरत ईसा की छठवीं सदी में था। उस राजा की राजधानी उज्जैन नगरी थी। इसी कारण कालिदास भी वहाँ रहा था। राजा विक्रम की सभा में नौ रत्न थे, उनमें से एक कालिदास था। कहते हैं कि लड़कपन में इस ने कुछ भी नहीं पढ़ा लिखा, केवल एक स्त्री के कारण इसे यह अनमोल विद्या का धन हाथ लगा। इस की कथा यों प्रसिद्ध है कि राजा शारदानंद की लड़की विद्योत्तमा बड़ी पंडिता थी। उसने यह प्रतिज्ञा की कि जो मुझे शास्त्रार्थ में जीतेगा, उसी को ब्याहूँगी। उस राजकुमारी के रूप, यौवन, विद्या की प्रशंसा सुनकर दूर दूर से पंडित आते थे पर शास्त्रार्थ के समय उस से सब हार जाते थे। जब पंडितों ने देखा कि यह लड़की किसी तरह वश में नहीं आती और सब को हरा देती है, तो मन में अत्यंत लज्जित होकर सबने पक्का किया कि किसी ढब विद्योत्तमा का विवाह किसी ऐसे मूर्ख के साथ करावें, जिस में वह जन्म भर अपने घमंड पर पछताती रहे। निदान वे लोग मूर्ख के खोज में निकले। जाते जाते देखा कि एक आदमी पेड़ के ऊपर जिस टहनी के ऊपर बैठा है, उसी को जड़ से काट रहा है। पंडितों ने उसे महा मूर्ख समझ कर बड़ी आवभगत से नीचे बुलाया और कहा कि चलो हम तुम्हारा ब्याह राजा की लड़की से करा देवें। पर खबरदार राजा की सभा में मुँह से कुछ भी बात न कहो, जो बात करनी हो इशारों में कहियो। निदान जब वह राजा की सभा में पहुँचा, जितने पंडित वहाँ बैठे थे, सब ने उठकर उस की पूजा की, ऊँची जगह बैठने को दी और विद्योत्तमा से यों निवेदन किया कि ये बृहस्पति के समान विद्वान हमारे गुरु आपके ब्याहने को आये हैं। परंतु इन्होंने तप के लिये मौन साधन किया है। जो कुछ आप को शास्त्रार्थ करना हो, इशारों से कीजिए। निदान उस राजकुमारी ने इस आशय से, कि ईश्वर एक है, एक उँगली उठाई। मूर्ख ने यह समझकर कि धमकाने के लिये उँगली दिखाकर आँख फोड़ देने का इशारा करती है, अपनी दो उँगलियाँ दिखलाईं। पंडितों ने उन दो उँगलियों के ऐसे अर्थ निकाले कि उस राजकुमारी को हार मानना पड़ा और विवाह भी उसी दम हो गया। रात के समय जब

दोनों का एकांत हुआ, किसी तरफ से एक ऊंट चिल्ला उठा। राजकन्या ने पूछा कि यह क्या शोर है, मूर्ख तो कोई भी शब्द शुद्ध नहीं बोल सकता था, कह उठा उट्र चिल्लाता है। और जब राजकुमारी ने दुहरा-कर पूछा तो, उट्र की जगह उष्ट्र कहने लगा, पर शुद्ध उष्ट्र का उच्चारण न कर सका। तब तो विद्योत्तमा को पंडितों की दगाबाजी मालूम हुई और अपने धोखा खाने पर पछताकर फूट २ कर रोने लगी। वह मूर्ख भी अपने मन में बड़ा लज्जित हुआ। पहिले तो चाहा कि जान ही दे डालूं पर सोच समझ कर घर से निकल विद्या उपार्जन में परिश्रम करने लगा। और थोड़े ही दिनों में ऐसा पंडित हो गया, जिस का नाम आज तक चला जाता है। जब वह मूर्ख पंडित होकर घर में आया, तो जैसा आनंद विद्योत्तमा के मन को हुआ, लिखने से बाहर है। सच है, परि-श्रम से सब कुछ हो सकता है।

कालिदास के समय घटखर्पर, वररुचि आदि और भी कवि थे। कालिदास ने काव्य, नाटकादि अनेक ग्रंथ संस्कृत-भाषा में लिखे हैं। इन की काव्य-रचना बहुत सादी, मधुर और विषयानुसारिणी है। अंगरेज लोग कालिदास को अपने शेक्सपियर के सदृश उपमा देते हैं। इसके समय में भवभूति नामक एक कवि था। कहते हैं कि उसकी विद्या कालिदास से अधिक थी। परंतु कवित्वशक्ति कालिदास की सी न थी। भवभूति कालिदास के श्रेष्ठत्व को मानता था।

कालिदास सारस्वत ब्राह्मण था। उस को आखेट आदि खेलों की बड़ी चाह थी और उस ने अपने ग्रंथ में इस का वर्णन किया है कि मनुष्य के शरीर पर ऐसे खेलों से क्या क्या उपकारी परिणाम होते हैं।

विक्रमादित्य ने उस को कश्मीर का राजा बनाया और यह राज्य उस ने चार बरस नौ महीने किया।

कालिदास उज्जैन में रहता था, परंतु उसकी जन्मभूमि कश्मीर थी। देशांतर होने पर स्त्री के वियोग से जो जो दुःख उस ने पाये, उन का बखान मेघदूत-काव्य में लिखा है। कालिदास बड़ा चतुर पुरुष था। उसकी चतुराई की बहुत सी कहानियाँ हैं और वे सब मनोरंजन हैं, यथा उनमें से कई एक ये हैं।

(१) भोजराजा को कवित्व पर बड़ी प्रीति थी। जो कोई नया कवि उसके पास आता और कविताचातुर्य बताता, तो उसको वह अच्छा पारितोषिक देता, और चाहता तो अपनी सभा में भी रखता। इस प्रकार से यह कविमंडल बहुत बढ़ गया। उसमें कई कवि तो ऐसे थे कि वे एक बार कोई नया श्लोक सुन लेते, तो उसे कंठ कर सकते थे। जब कोई मनुष्य राजा के पास आ कर नया श्लोक सुनाता था, तो कहने लगते थे, कि यह तो हमारा पहिले ही से जाना हुआ है और तुरंत पढ़ कर सुना देते थे।

एक दिन कालिदास के पास एक कवि ने आकर कहा कि महाराज, आप यदि राजा के पास ले चलें और कुछ धन दिला देवें, तो मुझ पर आप का बड़ा उपकार होगा। जो मैं कोई नया श्लोक बनाकर राजसभा में सुनाऊँ, तो उस का नूतनत्व मान्य होना कठिन है इस लिए कोई युक्ति बताइए।

कालिदास ने कहा कि तुम श्लोक में ऐसा कहो कि राजा ने मुझ से रत्नों का हार लेना है, और जो कुछ मैं कहता हूँ, सो यहाँ के कई पंडितों को भी मालूम होगा। इस पर यदि पंडित लोग कहें कि यह श्लोक पुराना है, तो तुम को रत्नों का हार मिल जायगा, नहीं नए श्लोक का अच्छा पारितोषक मिलेगा।

उस कवि ने कालिदास की बताई हुई युक्ति को मानकर वैसा ही श्लोक बनाया और जब उस को राजसभा में पढ़ा, तो कविमंडल चुपचाप हो रहा और उस कवि को बहुत सा धन मिला।

(२) एक समय कालिदास के पास एक वृद्ध ब्राह्मण आया और कहने लगा कि कविराज मैं अति दरिद्री हूँ और मुझ में कुछ गुण भी नहीं है, मुझ पर आप कुछ उपकार करें तो भला होगा।

कालिदास ने कहा, अच्छा हम एक दिन तुम को राजा के पास ले चलेंगे, आगे तुम्हारा प्रारब्ध। परन्तु रीति है कि जब राजा के दर्शन निमित्त जाते हैं, तो कुछ भेंट ले जाया करते हैं* इसलिए

* राजा कन्या ज्योतिषी, वैद गुरू गुरु मित्र।
भेंट हाथ इन पै गये, होत भाव सब मित्र॥

में जो ये साँटे के चार टुकड़े देता हूँ सो ले चलो। ब्राह्मण घर लौटा और उन साँटे के टुकड़ों को उस ने धोती में लपेट रक्खा। यह देख किसी ठग ने उस के बिन जाने उन टुकड़ों को निकाल लिया और उन के बदले लकड़ी के उतने ही टुकड़े बाँध दिए।

राजा के दर्शनों को चलने के समय ब्राह्मण ने साँटे के टुकड़ों को नहीं देखा। जब सभा में पहुँचा तब यह काष्ठ की भेंट राजा को अर्पण की। राजा उस को देखते ही बहुत क्रोधित हुआ। उस समय कालिदास पास ही था। उस ने कहा, महाराज, इस ब्राह्मण ने अपनी दरिद्ररूपी लकड़ी आप के पास ला कर रक्खी है इस लिये कि उस को जला कर इस ब्राह्मण को आप सुखी करें! यह बात कवि के मुख से सुनते ही राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उस ब्राह्मण को बहुत धन दिया।

(३) एक समय राजा भोज कालिदास को साथ ले वनक्रीड़ा के हेतु अरण्य को गए, और घूमते घूमते थके माँदे हो, एक नदी के किनारे जा बैठे। इस नदी में पत्थर बहुत थे, उन पर पानी गिरने से बड़ा शब्द होता था। उस समय राजा ने कालिदास से विनोद करके पूछा कि कविराज यह नदी क्यों रोती है? कालिदास ने उत्तर दिया कि महाराज यह छोटे ही पन में अपने मैके से ससुराल को जाती है।

कालिदास के प्रसिद्ध ग्रंथ शकुंतला, विक्रमोर्वशी, मालविकाग्निमित्र और मेघदूत हैं। शकुंतला बहुत वर्णनीय ग्रंथ है। उस का उल्था यूरप में सब देशों की भाषाओं में हो गया है।

एक समय कविवर कालिदास अपने मकान में बैठ कर अपने प्रिय पुत्र को अध्ययन कराता था, उसी समय क्षत्रिय-कुल-भूषण शकारि विक्रमादित्य संयोग से आ गए। कविवर कालिदास ने महाराज को देख प्रिय पुत्र का पढ़ाना छोड़ कर शिष्टाचार की रीति से महाराज का आदर मान किया। जब क्षत्रिय-कुल-भूषण राजा विक्रमादित्य ने पढ़ाने की प्रार्थना की तब फिर अध्ययन कराना प्रारंभ किया। उस समय कविवर कालिदास अपने प्रिय पुत्र को यही पढ़ाता था कि राजा अपने देश ही में मान पाता है और विद्वान् का मान सब स्थानों में होता है। महाराज इस प्रकार की शिक्षा को सुन कर अपने मन में

कुतर्क करने लगे कि कविराज कालिदास ऐसा अभिमानी पंडित है कि मेरे ही सामने पंडितों की बड़ाई करता है और राजाओं को वा धनवानों को वा मुझे नीचा देखता है। मैं पंडितों का विशेष आदर मान करता हूँ और जो मेरे वा राजाओं के वा धनवानों के यहाँ पंडितों का आदर नहीं, तो कहाँ हो सकता है। ऐसा कुतर्क करते हुए अपने घर पर गए। महाराज विक्रमादित्य ने कविवर कालिदास को जो धन संपत्ति दी थी उस को हर लेने के लिए मंत्री को आज्ञा दी। मंत्री ने वैसा ही किया जैसा महाराज ने कहा था। कविवर कालिदास की जीविका जब दूर की गई तब दुःखी होकर अपने बाल बच्चों के साथ अनेक देशों में भटकता अन्त में करनाटक देश में पहुँचा। करनाटक देशाधिपति बड़ा पंडित और गुणग्राहक था। उसके पास जाकर कविवर कालिदास ने अपनी कवितारशक्ति दिखाई, तो उस पर करनाटक देशाधिपति ने अति प्रसन्न होकर बहुत सा धन और भूमि दे कर उस को अपने राज्य में रक्खा। कविवर कालिदास राजा से सन्मान पाकर उस देश में रह कर प्रति दिन राजसभा में जाने लगा। यहाँ राजा के सिंहासन के पास ऊँचे आसन पर बैठ सब राजकाजों में उत्तम सलाह देने लगा और अनेक प्रकार की कविताओं से सभासदों के मन की कली खिलाता हुआ सुख से रहने लगा। जब से कविवर कालिदास को विक्रमादित्य ने छोड़ा तब से वे बड़े शोक-सागर में डूबे थे। नवरत्नों में कविवर कालिदास ही अनमोल रत्न था। इसके सिवाय जब राजा को राजकाज के कामों से फुरसत मिलती थी तब केवल कविराज कालिदास ही की अद्भुत कविताओं को सुन कर राजा का मन प्रफुल्लित होता था। इस लिए ऐसे गुणी मनुष्य के बिना राजा का सब वस्तुओं से मन उदास होने लगा। फिर राजा ने कविराज कालिदास का पता लगाने के लिये सब देशों में दूतों को भेजा। जब कहीं पता न लगा तब राजा आप ही भेष बदल कर खोजने के लिये निकले। कई देशों में घूमते फिरते जब करनाटक देश में गए उस समय उन्हें पथव्यय के लिए एक हीरा जड़ी हुई अंगूठी को छोड़ और कुछ नहीं था। उस अंगूठी को बेचने के लिये वे किसी जौहरी की दुकान पर गये। रत्न-पारखी ने ऐसे दरिद्र के हाथ में ऐसी अनमोल रत्न-जड़ित-अंगूठी को देख कर मन में चोर

समझा और कोतवाल के पास भेजा। कोतवाल राज-सभा में ले गया। वे चारो ओर देखते भालते जो आगे बढ़े तो कविवर कालिदास को देखा और कहा, महाराज मैंने जैसा किया वैसा ही फल पाया। कविवर कालिदास उठ कर राजा को अंक में लगा कर करनाटक देशाधिपति से परिचय करा और सब व्यौरा कह कर राजा वीर विक्रमादित्य के साथ चला आया।

पर इन कथाओं से भी वही झंझट पाई जाती है और कविवर कालिदास का समय ठीक निश्चय होना कठिन है।

कोई कोई कहते हैं कि कविवर कालिदास की सहायता से एक ब्राह्मण ने राजा भोज से एक श्लोक पर अनेक रुपया इस चतुराई से लिया था।

उज्जैन नगरी में राजा भोज ऐसा विद्यारसिक और गुणज्ञ और दानशील था कि विद्या की वृद्धि के प्रयोजन से उसने यह नियम प्रचलित किया था कि जो कोई नवीन आशय का श्लोक बना के लावे, तो उसको लाख रुपये देवें। इस बात को सुन के देश देशांतर के पंडित लोग नये आशयके श्लोक बना के लाते थे, परंतु उसकी सभा में चार ऐसे पंडित थे कि एक को एक बार, दूसरे को दो बार, तीसरे को तीन बार और चौथे को चार बार सुनने से नया श्लोक कंठस्थ हो जाता था। सो जब कोई परदेशी पंडित राजा की सभा में नवीन आशय का श्लोक बना के लाता तो वह राजाके सम्मुख पढ़के सुनाता था। उस समय राजा अपने पंडितों से पूछता था कि वह श्लोक नया है वा पुराना। तब वह मनुष्य जिसको कि एक बार के सुनने से कंठस्थ होने का अभ्यास था कहता कि यह पुराने आशय का श्लोक है और आप भी पढ़ के सुना देता था। इसके अनन्तर वह मनुष्य जिसको दो बार सुनने से कंठ हो जाता था पढ़ के सुनाता और इसी प्रकार वह मनुष्य जिसको तीन बार और वह भी जिसको चार बार के सुनने से कंठस्थ होने का अभ्यास था, क्रम से सब राजा को कंठाग्र सुना देते। इस कारण परदेशी विद्वान अपने प्रयोजन से रहित हो जाते थे और इस बात की चर्चा देश देशांतर में फैली। सो एक विद्वान ऐसा देश काल में चतुर और बुद्धिमान

था कि उसके बनाये हुए आशय को इन चार मनुष्यों को भी अंगीकार करना पड़ा कि यह नवीन आशय है और वह श्लोक यही है।

श्लोक

राजन् श्रीभोजराज त्रिभुवनविजयी धार्मिकस्ते पिताऽभूत।
पित्रा तेन गृहीता नवनवतिमिता रत्नकोटिर्मदीया ॥
तां त्वं देहि त्वदीयैस्सकल बुधवरैर्ज्ञायते वृत्तमेत-
न्नोचेज्जानंतितेऽनवकृतमथवा देहि लक्षं ततो मे ॥ १ ॥

हे राजा भोज, तीनों लोक के जीतनेवाले, तुम्हारे पिता बड़े धर्मिष्ट हुए हैं। उन्होंने मुझसे निन्नानवे करोड़ रत्न लिया है सो मुझे आप दीजिये और इस वृत्तांत को तुम्हारे सभासद विद्वान् जानते होंगे, उनसे पूछ लीजिये। जो वह कहें कि यह आशय केवल नवीन कविता मात्र है, तो अपने प्रण के अनुसार एक लाख रुपया मुझे दीजिए। इस आशय को सुन कर चारों विद्वानों ने विचारांश किया कि जो इसको पुराना आशय ठहरावें, तो महाराज को निन्नानवे करोड़ द्रव्य देना पड़ता है और नवीन कहने में केवल एक लाख। सो उन चारों ने क्रम से यही कहा कि पृथ्वीनाथ, यह नवीन आशय का श्लोक है। इस पर राजा ने उस विद्वान को लाख रुपया दिया।

—:०:—

३. श्री रामानुज स्वामी का जीवनचरित्र

दक्षिण में पूर्व सागर के पश्चिम तट से बारह कोस दूर तोंडीर देश में भूतपुरी नामक नगरी है। वहीं हारीत गोत्र के केशव नामक एक ब्राह्मण रहते थे। वह संतान-हीन होने के कारण बहुत दुःखी रहा करते। एक बार चंद्रग्रहण में पुत्रप्राप्ति के हेतु इन्होंने यज्ञ भी किया था। इनको ही स्वप्न में श्रीपतिजी ने दर्शन देकर इनसे आज्ञा किया कि हम तुम्हारे घर में अवतार लेंगे। तदनुसार श्री रामानुजाचार्य का केशव के घर जन्म

सुदी ५ को जन्म हुआ। लक्ष्मण आर्य्य और रामानुज यह दो नाम इनका रक्खा गया। सोलहवें बरस रक्षकांबा नामक एक स्त्री के साथ इनका विवाह हुआ। विवाह के पीछे केशवजी मर गए। तब रामानुज स्वामी विद्या पढ़ने को कांचीपुर गए और वहाँ यादव नामक प्रसिद्ध पंडितके पास विद्या पढ़ने लगे। जिन दिनों स्वामी वहाँ विद्या पढ़ते थे उन्हीं दिनों में कांचीपर के राजा की कन्या को ब्रह्मपिशाच की बाधा हुई। रामानुज स्वामी ने अपना पैर छुला कर उसकी पिशाचबाधा दूर कर दी। इससे प्रसन्न होकर राजा ने उनको बहुत सा द्रव्य दिया। उसी काल में स्वामी के मौसा गोविंद नामक एक बड़े पंडित यादव पंडित से शास्त्रार्थ करने आये और रामानुज स्वामी का और इनका मत-विषयक एक विश्वास होने से दोनों में अत्यंत प्रीति हुई। यादव पंडित जो वास्तव में मायावादी थे गोविंद पंडित और स्वामी से वाद में वारंवार पराभूत होने से इस कुविचार में फसे कि किसी भाँति स्वामी के प्राण हरण किए चाहिए। इसी वास्ते प्रगट में बहुत स्नेह दिखला कर स्वामी को साथ लेकर यात्रा के बहाने से प्रयाग की ओर चले। मार्ग में गोंड़ा के जंगल में गोविंद पंडित ने स्वामी से यादव की सब कुप्रवृत्ति कह दिया। स्वामी भयभीत होकर जंगल में छिपे। वहाँ उस जंगल के देवता नारायण हस्तिगिरिनाथ ने लक्ष्मी समेत व्याधमिथुन बनकर दर्शन दिया और अपनी रक्षा में उनको कांचीपुर ले आए।

इसी समय रंगपुर में यामुनार्य्य नामक एक त्रिदंडी संन्यासी थे। उनको सर्वलक्षणसंपन्न एक शिष्य करने की इच्छा हुई। उन्होंने अपने चेलों को चारो ओर भेजा कि एक सर्वगुणसंयुक्त लड़का खोज लाओ। उन शिष्यों ने आचार्य्य से जाकर रामानुज स्वामी का कुल गुण विद्या आदि का वर्णन किया।

गोविंद पंडित इस समय कालहस्ति नगर में आ बसे और वहाँ एक शिव स्थापन करके अध्यापन कराने लगे। यादव भी प्रयाग से कांची फिर आए और स्वामी का दैवी प्रभाव देख कर शिष्यों के द्वारा उनसे मैत्री करके रहने लगे।

यामुनाचार्य्य रामानुज स्वामी को देखने के हेतु कांचीपुर चले और मार्ग में हस्तिगिरि नारायण के दर्शन के हेतु और अपने शिष्य कांची-

पूर्ण से मिलने को हस्तिपुर में ठहरे। संयोग से रामानुज स्वामी आदि शिष्यों के साथ यादव पंडित भी हस्तिगिरि नाथ के दर्शन को आये थे। वहाँ कांचीपूर्ण ने आचार्य्य से स्वामी का परिचय कराया और आचार्य्य इनको देख कर बहुत प्रसन्न हुए और कुछ दिन के पीछे सब लोग अपने अपने नगर गए। एक दिन रामानुज स्वामी अपने गुरु यादव पंडित को तेल लगाते थे। उसी समय 'कप्यास्य' इस श्रुति का अर्थ यादव ने कुछ अशुद्ध किया, इससे स्वामी को बड़ा कष्ट हुआ और शास्त्रार्थ में स्वामी ने यादव को परास्त किया। इससे यादव ने क्रोधित होकर स्वामी को निकाल दिया। स्वामी वहाँ से हस्तिगिरि चले आए और कांचीपूर्ण के उपदेश से हस्तिगिरिनाथ वरदराज नारायण की सेवा करने लगे।

यह वृत्तांत सुन कर यामुनाचार्य ने अपने शिष्य पूर्णाचार्य को अपने बनाए स्तोत्र देकर हस्तिगिरि भेजा। एक दिन वरदराज स्वामी के सामने पूर्णाचार्य वह सब स्तोत्र पढ़ रहे थे कि रामानुज स्वामी ने सुन कर और उनकी भक्तिपूर्ण रचना से प्रसन्न होकर पूर्णाचार्य्य से पूछा कि यह स्तोत्र किसके बनाए हैं। पूर्णाचार्य ने कहा कि यह सब स्तोत्र यामुनाचार्य के बनाए हैं और वे आप के दर्शन की बड़ी इच्छा रखते हैं। पूर्णाचार्य के उपदेश से रामानुज स्वामी यामुनाचार्य्य से मिलने रंगपुर चले और मार्ग में महापूर्णाचार्य से मिलाप हुआ। स्वामी का आना सुन कर यामुनाचार्य भी आगे से उन को लेने चले, किंतु कावेरी के किनारे पहुँच कर शरीर छोड़ दिया। स्वामी भी शीघ्रता से वहाँ पहुँचे, तो देखा कि आचार्य्य ने शरीर छोड़ दिया है, परंतु तीन अंगुली उठाये हुए हैं। स्वामी ने आचार्य्य का आशय समझ कर [अर्थात् १ बोधा-यन मतानुसार ब्रह्मसूत्रादि का भाष्य बनाना, २ दिल्ली के मुसलमान बादशाह से श्रीरामसूर्ति का उद्धार करना और ३ दिग्विजय पूर्वक विशिष्टाद्वैत मत का प्रचार] प्रतिज्ञा किया कि हम आपकी इच्छा पूरी करेंगे, जो सुन कर सुखपूर्वक आचार्य्य वैकुण्ठ धाम गए और स्वामी भी कांची फिर आए। एक बेर कांचीपूर्ण के घर स्वामी भोजन करने गए थे, तब कांचीपूर्ण ने स्वमत विषयक उन को अनेक उपदेश दिया और कहा कि आप रंगपुर जाकर पूर्णाचार्य्य से सब भेद पूछिए।

स्वामी उन के उपदेशानुसार रंगपत्तन आए और विधिपूर्वक पंच संस्कार * दीक्षित होकर संस्कृत और द्राविड़ भाषा के ग्रंथ सरहस्य पूर्णाचार्य्य से पढ़े। कुछ काल पीछे एक कुंए में से जल निकालते समय पूर्णाचार्य्य की स्त्री से और स्वामी की स्त्री से कुछ कलह हो गई, इससे स्वामी रक्षकाम्बा से उदास हो गए। एक यही नहीं, अनेक समय में रक्षकाम्बा के खरतर स्वभाव का परिचय मिलने से स्वामी का जी उस की ओर से खिच गया था, इस से स्वामी ने उनको नैहर भेज दिया और आप भी सब धन गृह आदि का त्याग करके त्रिदण्ड संन्यास ग्रहण किया। कांचीपूर्ण ने इस पर अति प्रसन्न होकर 'यतिराज' की स्वामी को पदवी दिया।

कुछ दिन पीछे स्वामी के भांजे दाशरथि और अनंतभट्ट के पुत्र कूरनाथ यह दोनों आकर कांची रहने लगे और स्वामी से विद्या पढ़ने लगे। एक समय यादव पंडित कांची आए और शंख चक्र से स्वामी का कलेवर चिन्हित देख कर बड़ा आक्षेप किया। इस पर स्वामी की इच्छा से कूरनाथ ने शास्त्रार्थ पूर्वक स्वमत स्थापन कर के यादव को निरुत्तर किया। यादव पंडित ने भी ज्ञान पाकर त्रिदंड ग्रहणपूर्वक गृहस्थाश्रम का परित्याग किया और दीक्षित होकर गोविंददास यह नाम पाया। इन्हीं गोविंददास ने 'यतिधर्म्म समुच्चय' नामक ग्रंथ बनाया है।

कुछ काल के पीछे यमुनाचार्य्य के पुत्र वररंग स्वामी रामानुज को लेने को हस्तिगिरि आए। यहाँ उन्हों ने नाटकों का अभिनय दिखला कर श्रीवरदराज को माँगा और वहाँ से रामानुज स्वामी को लाकर रंग-नाथ जी को समर्पण किया, जिस से स्वामी अब रंगनाथ जी की सेवा का अधिकार और उस संप्रदाय का आचार्य्यत्व दोनों के अधिकारी हुए।

उसी समय में स्वामी के ममेरे भाई वेंकट गोविंद पंडित से, जो कि बड़े शैव थे, वेंकटगिरि के निवासी श्री शैलपूर्ण नामक वैष्णव यति

---

* दो०—ऊर्ध पुंड, मुद्रा बहुरि, माला, मंत्र, विचार।
संसकार ए वैष्णवी, धर्म कर्म को सार ॥ १ ॥

से बड़ा भारी शास्त्रार्थ हुआ, जिस में गोविंद पंडित ने पराजय पाकर श्री शैलपूर्ण का शिष्यत्व अंगीकार किया।

कुछ दिन पीछे पूर्णाचार्य्य के उपदेश से स्वामी रामानुज अठारह बेर गोष्ठीपुर में गोष्ठीपूर्णाचार्य्य से तत्व पढ़ने की इच्छा से गए और यद्यपि पहिले उन्हों ने बहुत आनाकानी की पर अंत में सब रहस्य स्वामी को उपदेश किया किंतु यह कह दिया था कि यह किसी को बतलाना मत।

स्वामी रामानुज मंत्रों का रहस्य पाकर ऐसे परितुष्ट हुए कि अनेक लोगों से उन्होंने दयापूर्वक वह रहस्य कहा। जब गोष्ठीपूर्णाचार्य्य को यह बात मालूम हुई, तब उन्हों ने स्वामी को बुला कर पूछा कि "जो गुरु की आज्ञा उल्लंघन करे उस की क्या गति होती है?" स्वामी ने उत्तर दिया 'नर्क'। तब गुरु ने पूछा कि फिर तुम ने हमारी आज्ञा उल्लंघन कर के रहस्य क्यों लोगों से कहा। इस पर स्वामी ने अपने दयापरवश उदार स्वभाव से निर्भय हो कर उत्तर दिया—

"पतिष्ये एक एवाहं नरके गुरुपातकात्।
सर्वे गच्छन्तु भवतां कृपया परमं पदम्॥"

अर्थात् आप की आज्ञा टालने से मैं एक नरक में पड़ूँ किंतु और लोग जिन से हम ने रहस्य का उपदेश किया है वे आप की दया से परम पद पावैं।

गुरु उन के इस उदार वाक्य से ऐसे प्रसन्न हुए कि "मन्नाथ," अर्थात् हमारे भी स्वामी, उन का नाम रक्खा और वरदान दिया कि आज से यह वैष्णव सिद्धांत रामानुज सिद्धांत से प्रचलित होगा और संसार में तुम आचार्य रूप से प्रसिद्ध होगे।

कुछ काल पीछे स्वामी के भांजे दाशरथि स्वामी की आज्ञा से पूर्णाचार्य्य की बेटी के ससुराल में उस का काम काज सम्हालने को रहने लगे। वहीं एक वैष्णव द्रविणों का कुछ विरुद्ध अर्थ करता था। उस से शास्त्रार्थ कर के उस को उन्हों ने स्वामी के पास दीक्षित होने को भेज दिया और वह वैष्णव दास नाम पाकर इस मत का एक मुख्य पंडित हुआ।

मंडलादिक अनेक गांव स्वामी को भेंट किए। वहाँ से कृष्णानलादि स्थानों में अपना माहात्म्य प्रकाश करते हुए रंगनगर स्वामी लौट आए।

स्वामी के मामा के पुत्र गोविंदपंडित को विराग में ऐसी रुचि हुई कि स्वामी ने बहुत कहा परंतु उन्हों ने गृहस्थाश्रम स्वीकार नहीं किया। तब स्वामी ने उनको संन्यास दिया।

एक बार केवल कूरेश को साथ लेकर स्वामी शारदापीठ गए क्योंकि वहां विशिष्टाद्वैत मत का मूल ग्रंथ, बौधायन कृत ब्रह्मसूत्र वृत्ति की पुस्तक थी। जिस को देखकर स्वामी को तदनुसार भाष्य बनाना बहुत आवश्यक था। शारदापीठ के सब पंडितों को स्वामी ने शास्त्रार्थ में पराजित किया। जब वहाँ से लौटे तो बौधायन वृत्ति की पुस्तक स्वामी के साथ थी। किंतु शारदापीठ के पंडितों ने द्वेष करके राह को रोक डाला और वह पुस्तक लूट ले गए। स्वामी को इससे बड़ा दुःख हुआ। तब कूरेश ने कहा कि आप इतना दुःख क्यों करते हैं। एक बार मैंने आद्योपांत उस पुस्तक को देखा है, इससे उसके प्रति अक्षर मुझको कंठाग्र हैं। मैं सब आप को लिख दूंगा। तदनुसार एकाग्रचित्त कूरेश ने बौधायन सूत्र वृत्ति सब स्वामी को लिख दी। इसी वृत्ति के अनुसार स्वामी ने वेदांत सूत्र पर श्रीभाष्य, वेदांतदीप, वेदांतसार, वेदार्थसंग्रह और गीताभाष्यादि ग्रंथ बनाए।

इन ग्रंथों के बनाने के पीछे बहुत से शिष्यों को साथ लेकर स्वामी दिग्विजय करने निकले। क्रम से चोलमंडल, पांड्यमंडल, कुरुक इत्यादि देशों में जाकर वहां के पंडितों को शास्त्रार्थ में जीत कर उनको वैष्णव धर्म में दीक्षित किया और दुर्बल देश के राजा को दीक्षित करके केरल देश के पंडितों को जीता। वहां से क्रम से द्वारिका, मथुरा, शालिग्राम, काशी, अयोध्या, बदरिकाश्रम, नैमिषारण्य और वृंदावन आदि तीर्थों

* दो०— [illegible]
[illegible] ॥ १ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ २ ॥

में होते हुए फिर से शारदापीठ गए। वहाँ सरस्वती ने प्रत्यक्ष होकर "कप्यास्य" इस श्रुति का तात्पर्य पूछा। स्वामी ने जो अर्थ कहा इस से प्रसन्न होकर सरस्वती ने श्री भाष्य अपने सिर पर चढ़ा कर स्वामी को दिया और उन का दोनों हाथ पकड़ कर "भाष्यकार" नाम से पुकारा। इस के अनंतर स्वामी ने वहाँ के पंडितों को शास्त्रार्थ में पराजित करके पुरुषोत्तम क्षेत्र गमन किया। वहाँ जाकर देखा कि बौद्ध और कापालिक लोग पुरुषोत्तम की सेवा में नियुक्त हैं। स्वामी ने उन को जीतकर वैष्णवगण को सेवा में नियुक्त किया और वहाँ रामानुज मठ बना कर रहने लगे। स्वामी की इच्छा थी कि पंचरात्र के विधि से जगन्नाथ जी की सेवा हो परंतु पंडे लोग अपने मत से सब काम करते थे और श्री जगन्नाथ जी भी इसी से प्रसन्न थे। क्योंकि जब स्वामी जी ने इस बात मे आग्रह किया, तो एक रात देवगण ने स्वामी को सोते हुए उठा कर कूर्मक्षेत्र में रख दिया। जाग कर स्वामी ने यह चरित्र देखा और भगवदिच्छा मुख्य समझ कर फिर इस विषय में आग्रह न किया।

कुछ दिन कूर्माचल रहकर स्वामी सिंहाचल, अहोबलक्षेत्र, गरुड़ाचलादि तीर्थों में गए और वहाँ से फिर वेंकटगिरि जाकर वहाँ के शैवों को शास्त्रार्थ में परास्त किया।

कुछ काल पीछे कूरेश को व्यास-पराशर के अंश के दो पुत्र एक साथ उत्पन्न हुए। स्वामी ने एक का नाम पराशर और दूसरे का व्यास वा श्री रामदेशिक रक्खा। इन्हीं पराशर को रंगेश ने अपुत्र होने के कारण गोद लेकर बड़े धूमधाम से विवाह किया था। गोविंद को भी कालांतर में पुत्र हुआ, तो स्वामी ने परांकुश उसका नाम रक्खा।

मथुरा के एक धनिक धनुर्दास को उस की भार्या हेमांगना समेत स्वामी ने वैष्णव दीक्षा दी। यह धनुर्दास ऐसा उत्तम वैष्णव हुआ है कि रंगनाथ जी के उत्सव में स्वामी एक बार उस को मित्र की भाँति पकड़े हुए थे और इस पर जब लोगों ने पूछा तो स्वामी ने उसकी वैष्णवता की बड़ी स्तुति की।

उसी समय में चोलदेश का एक बड़ा भारी शैव राजा कृमिकंठ हुआ था, जिस ने चित्रकूट तक विजय किया था। इस ने एक बार

शास्त्रार्थ के हेतु प्रार्थनापूर्वक स्वामी को बुलाया। स्वामी उस के यहाँ जाते थे कि मार्ग में वेलाचलाम्बा और उसके पति को दीक्षित किया। और बहुत से बौद्धों को शास्त्रार्थ में जय किया। इसी प्रकार कुछ दिन भक्तनगर में रहे। वहाँ स्वप्न देखने से इन्होंने यादवाचल जाकर वहाँ छिपी हुई भगवन्मूर्त्ति को निकाला और शाके १०१२ में उस मूर्त्ति को यादवाचल में प्रतिष्ठित किया।

एक बार स्वामी को खबर मिली कि दिल्ली के राजा के घर में रामप्रिय नामक एक नारायण की मूर्त्ति है। स्वामी यह सुन कर दिल्ली गए और वहाँ कुछ दिन रह कर राजा से वह मूर्त्ति ले आए। कहते हैं कि दिल्ली के राजा की बेटी उस भगवद्विग्रह पर ऐसी आसक्त थी कि भक्ति प्रभाव से आज तक नारायण की मूर्त्ति उस के पास तथा यादवाचल में वर्त्तमान है।

इसके पीछे विष्णुचित्त की बेटी गोदा को स्वामी ने उपदेश दिया। इन के ७४ शिष्य बड़े प्रसिद्ध हुए हैं। इन में भी आंध्रपूर्ण की बड़ी महिमा है।

इस प्रकार स्वामी रामानुज आचार्य्य एक सौ बीस वर्ष पृथ्वी पर रहे और चारो ओर वैष्णव संप्रदाय का प्रचार करके सब शिष्यों को भगवद्भक्ति का उपदेश करके माघ सुदी १० को परम-धाम पधारे। इनके पीछे रंगनाथ जी के मंदिर का अधिकार पराशर को मिला और दाशरथि, पूर्णाचार्य, गोविंद और कुरुक ये चार मत-शास्त्र-प्रवर्तक हुए।

इस संप्रदाय के मुख्य बड़े बड़े लोग शठकोपाचार्य, रंगेश, वेंकटेश, वरद, वकुलाभरण, सुंदर, यामुनाचार्य, वररंग, पूर्णाचार्य, गोष्ठीपूर्ण, रामभद्र, माधवदास, कासार, भक्तिसार, कलिकृष्ण, कुलशेखर, भट्टनाथ, पद्मराज और अनंताचार्य आदिक हैं।

दानपत्रादिकों से और दक्षिण राजाओं के घर के लेखों से निश्चय होता है कि ईस्वी सन् १०१० या इसके आस पास किसी संवत् में स्वामी का जन्म हुआ था और द्वादश शताब्दी के पूरे पूरे अंश में ये वर्त्तमान थे।

इनका मत विशिष्टाद्वैत है और उपास्यदेव साकार लक्ष्मीनारायण हैं। ये भुजा पर तप्त शंख चक्र की छाप देते हैं। हिंदुस्तान के सब प्रांत में इस मत के लोग मिलते हैं। और बहुत बड़े बड़े पंडित इस मत में हुए हैं। बड़गल और तिंगल ये दो शाखा इस मत की बहुत प्रसिद्ध हैं। पीछे तो रामानंद आदि अनेक शाखा इस की हुई हैं। इनके संप्रदाय के वैष्णव श्री वैष्णव कहलाते हैं।

—:⁕:—

४—श्रीशंकराचार्य्य

इन्दीवरदलश्याममिन्दिरानन्दकन्दलम्।
वन्दारुजनमन्दारं वन्देऽहं यदुनन्दनम्॥

धन्य वह ईश्वर है जो अपनी सृष्टि में अनेक अद्भुत शक्ति के मनुष्यों को उत्पन्न करता है और उनके द्वारा लोगों की पहिली चाल चलन को बदल देता है। फिर कुछ काल के अनंतर दूसरे को उत्पन्न करता हुआ उससे भी वैसा ही कराता है, इसी प्रकार से अपने सृष्टि क्रम को निरंतर चलाता है।

देखो कुछ न्यूनाधिक ११०० वर्ष हुए इस सारे भारतवर्ष में बौद्ध-मत फैल गया था और लोग उसी मत पर चलते थे और जो उस मत को स्वीकार करने में अप्रसन्न थे उन को अनेक प्रकार के क्लेश सहने पड़ते थे। प्रायः कन्याकुमारी अंतरीप से चीन देश तक और ब्रह्मा के देश से ईरान तक जहाँ देखो बौद्धमत के मनुष्य देख पड़ते थे। फाहि-यान और ह्वानसांग जो चीन देश से यात्रा के लिये यहाँ आए थे और जिनके स० ३९९ और ६४० ईस्वी निश्चित किए गए हैं, अपने ग्रंथ में उस समय का भारतवर्ष का वृत्तांत लिखते हैं कि बौद्धधर्म की बड़ी उन्नति है, राजाओं ने बौद्ध भिक्षुकों को गाँव, बाग, घर, विहार बनाने के लिये दे दिये हैं और उनमें श्रमण लोग सुख से वास करते हैं। मांस खाने का बड़ा निषेध किया गया है, कोई यज्ञ याग करने नहीं पाते, न देवी के सामने बलिदान कर सकते हैं, और पटने में जिसे

इस से यह न समझना चाहिए कि भारतवर्ष में वैदिक मत लुप्त हो गया था। बहुत से ऐसे ऐसे देश दक्षिण में और काशी, कुरुक्षेत्र, काश्मीर इत्यादि उत्तर में थे जहाँ वैदिक मत के लोग रहते थे और यज्ञ योगादिक सब अपने कर्म करते थे।

जब इस प्रकार से बौद्धमत भारतवर्ष में फैल गया, ईश्वर ने सोचा कि अब वैदिक मत डूबने पर है, जो इस को सहायता न करेंगे तो इस का चलना कठिन है। द्रविड़ देश में जो अब मंदराज हाते में है चिदंबरपुर में द्राविड़ ब्राह्मण के कुल में सर्वज्ञ नामक तपस्वी का जन्म हुआ। उस की स्त्री का नाम कामाक्षी था और वे दोनों चिदंबरेश्वर की, जो आकाशलिंग कर के दक्षिण देश में प्रसिद्ध है, सेवा करने लगे। और एक कन्या उन को हुई उस का नाम विशिष्टा रक्खा। आठवें वर्ष उस कन्या का विवाह विश्वजित् ब्राह्मण से कर दिया और वह विशिष्टा भी सर्व काल अपने मा बाप के सदृश उसी महादेव की सेवा करती थी। उस का पति विश्वजित् उस को छोड़ कर जंगल में तप करने को गया, परंतु विशिष्टा ने महादेव की सेवा नहीं त्यागी। ईश्वर उस से

उल्था—राजा स्कन्दगुप्त जिस के प्रस्थान के समय अर्थात् जब वह अपने मन्दिर से बाहर निकलता था सैकड़ों राजाओं के सिर के मुकुट उस के चरणों पर झुकते थे। बड़ा यशस्वी और प्रचुर रत्न से युक्त था। उस के स्वर्ग वास करने से ३२१ वर्ष के अनन्तर ज्येष्ठ महीने में राजा सोमिल का बेटा भट्टिसोम, उस का बेटा रुद्रसोम, जिस का व्याघ्र भी नाम है, उस का बेटा मद्रसोम, जिस की भक्ति ब्राह्मण गुरु और सन्यासियों में अधिक थी, जगत् का संसकरण अर्थात् दिन दिन नाश अवलोकन करके बहुत भययुक्त हुआ। और उस से अपनी और अपनी प्रजा की रक्षा के लिये ककुभ ग्राम में जिस को अब कहांव कहते हैं और जिस में साधु जन अधिक बसते थे, जिन के रहने से वह पवित्र गिना जाता था, एक यज्ञ किया। उस यज्ञ में पाँच इंद्र पहाड़ों के बराबर अर्थात् पाँच स्तंभ पर इंद्र की मूर्त्ति बना कर स्थापित की। वह (१) कहांव में (२) भागलपुर में (३) सारण में (४) बेतिया के राज्य में (५) तराई में अब भी कई फुट के लंबे गड़े हुये खड़े मौजूद हैं और उन के सिवाय एक और स्तंभ स्थापन किया, जो उस की कीर्त्ति को प्रकाश करता है।

प्रसन्न हुआ और उस को एक लड़का उत्पन्न हुआ, जिस का नाम शङ्कराचार्य्य रक्खा। पुराण और तंत्रों में शङ्कराचार्य्य को शिव का अवतार लिखा है और इन के प्रतिवादी वैष्णव लोग भी इन को शिव का अवतार होने में कुछ विवाद नहीं करते। इन की उत्पत्ति का समय अभी तक ठीक ठीक नहीं ज्ञात हुआ परंतु शिष्य परंपरा से जो आचार्य के अनंतर अभी तक चली आती है, जान पड़ता है कि कुछ न्यूनाधिक एक हजार वर्ष हुए। डाक्टर टाकवेल साहब अपने ग्रंथों में ६०० वर्ष लिखते हैं, और पण्डित जयनारायण तर्क-पञ्चानन १२०० वर्ष के निकट अनुमान करते हैं।

उस नगर के निवासी ब्राह्मणों ने इनके जात कर्मादिक संस्कार किये और तीसरे वर्ष में चौल और पाँचवें में यज्ञोपवीत किया। तब से श्रीशंकराचार्य जी ने आठवें वर्ष तक सकल विद्या का पूर्ण अभ्यास किया और सब विद्या में पारंगत हुए और शिष्यों को भी विद्या सिखलाई। आठवें वर्ष में श्रीगोविंद योगींद्र के उपदेश से सन्यासाश्रम स्वीकार किया और इनके मुख्य शिष्य बारह थे, जिनके नाम पद्मपाद, हस्तामलक, समित्पाणि, चिद्विलास, ज्ञानकन्द, विष्णुगुप्त, शुद्धकीर्ति, भानुमरीचि, कृष्णदर्शन, बुद्धिवृद्धि, विरंचपाद, अनन्तानन्दगिरि थे। इनके समय में पचास से अधिक मत प्रचलित थे, उनमें जो जो मुख्य मुख्य मत थे उनके नाम ये हैं। शैव, वैष्णव, सौर, गाणपत्य, शाक्त, कापालिक, कौल, पांचरात्र, भागवत, बौद्ध, जैन, चार्वाक इत्यादि। इन सब मतवालों के आचार्यों को उन्होंने शास्त्रार्थ में जीत लिया और उन सब को अपना शिष्य किया।

तब आचार्य जी काशी में गये और मध्याह्न के समय मणिकर्णिका पर स्नान करते थे, इतने में श्रीव्यास जी बूढ़े ब्राह्मण का भेष लेकर वहाँ आये और शंकराचार्य से पूछा कि मैंने सुना है कि आपने ब्रह्मसूत्र में बहुत परिश्रम किया है। आचार्य ने उत्तर दिया, हाँ, जहाँ तुम्हारी इच्छा हो वहाँ पूछो। व्यास जी ने एक स्थल में पूछा, आचार्य जी ने उसका यथार्थ उत्तर दिया। इस पर व्यास जी फिर कुछ विवाद करने लगे। आचार्य जी को क्रोध आया और अपने पद्मपाद नामक शिष्य

से कहा कि इस बूढ़े ब्राह्मण को बाहर निकाल दो, तब शिष्य ने यह श्लोक पढ़ा।

शङ्करः शङ्करः साक्षात् व्यासो नारायणः स्वयम्।
तयोर्विवादे सम्प्राप्ते किङ्करः किङ्करिष्यति ॥

आचार्य जी ने यह सुनकर कहा जो सचमुच यह बूढ़ा ब्राह्मण व्यास होगा, तो अवश्य हमारे उत्तर पर संतुष्ट हो के प्रत्यक्ष दर्शन देगा। व्यास जी यह सुन कर आप प्रत्यक्ष हुए और आचार्य जी से कहा कि मैं तुम्हारी परीक्षा लेने के वास्ते आया था। तुम तो शिव के अवतार हो तुम को कौन जीतने वाला है। फिर व्यास ने आचार्य को वर दिया और ब्रह्मा को बुला कर इनकी आयु बढ़ा दी। तब से आचार्य का प्रताप द्विगुणित बढ़ गया। कुछ समय के अनंतर आचार्य जी रुद्रपुर में गए। वहाँ भट्टपाद, जिसे कुमारिल कहते हैं और जिस ने मीमांसा-तन्त्र वार्तिक नामक एक बड़ा भारी ग्रंथ बनाया है, तुषाग्नि में बैठा था। आचार्य जी ने उससे भेंट करके वाद-भिक्षा माँगी, परंतु भट्टपाद ने कहा कि मैं अब शरीर दग्ध होने के कारण तुम्हारे साथ शास्त्रार्थ करने में असमर्थ हूँ। मेरा बहनोई मंडनमिश्र, जो हस्तिनापुर से आग्नेय दिशा में विजिलबिंदु नाम नगर में रहता है, तुम से शास्त्रार्थ करेगा और उससे तुम्हारा गर्व शान्त हो जायगा।

आचार्य जी यह वचन सुन कर वहाँ गये और लोगों से मंडनमिश्र के घर का ठिकाना पूछा। लोगों ने उत्तर दिया कि जहाँ तोते और मैने शास्त्रार्थ करते हैं वहीं मंडनमिश्र का घर है। शंकराचार्य जी ने सोचा कि जो मैं दरवाजे से जाता हूँ तो मुझे बहुत काल लगेगा, इस लिये मंत्र के बल से आकाशमार्ग से उसके घर में उतरे। कोई कहते हैं कि उस के घर के पीछे एक लंबा ताड़ का पेड़ था उस पर चढ़ कर घर में गये। उस समय मंडनमिश्र श्राद्ध करता था। इनको देखते ही बहुत क्रुद्ध हो गया क्योंकि ये संन्यासी थे और उस ने सन्यास का खंडन किया था और कहा, "कुतो मुण्डी"। आचार्य जी ने उत्तर दिया, "आगलान्मुण्डी"। मंडन ने कहा—"सुरापीता"। शंकर जी ने कहा—"साहिश्वेता" इत्यादि दोनों के संवाद हुए। मिश्र जी श्राद्ध समाप्त करने के

अनंतर आचार्य से शास्त्रार्थ करने में प्रवृत्त हुए और उसकी स्त्री सरस-वाणी, जिसे सरस्वती का साक्षात् अवतार कहते थे, मध्यस्थ हुई। दोनों से सौ दिन तक शास्त्रार्थ हुआ। अंत में मंडनमिश्र का पराजय हुआ और सन्यासाश्रम को स्वीकार किया। पुराण में मंडनमिश्र को ब्रह्मा का अवतार लिखा है।

जब मंडनमिश्र सन्यास लेने लगे उस के पहिले ही सरसवाणी अपना पूर्व शरीर छोड़ कर ब्रह्मलोक को जाने लगी। शंकराचार्य ने वनदुर्गा मंत्र में आकर्षण किया और कहा कि मुझसे शास्त्रार्थ करके चली जाओ। उसने कहा मैंने वैधव्य के भय से अपने पति के संन्यास के पहले ही पृथ्वी को त्याग किया। अब पृथ्वी पर नहीं आ सकती, क्योंकर तुम से शास्त्रार्थ करूँ। आचार्य ने उत्तर दिया कि आकाश में भूमि से छः हाथ दूरी पर खड़ी होके मुझसे शास्त्रार्थ कर। उस ने आचार्य के कहने के अनुसार शास्त्रार्थ किया, अंत में हार गई, तब उस ने सोचा कि यह सन्यासी है इस को काम-शास्त्र नहीं आता होगा इसमें जो पूछूँगी तो उत्तर नहीं दे सकेगा। फिर सरसवाणी ने कहा कि काम-शास्त्र में विवाद करो। शंकराचार्य्य इस वचन को सुनकर चुप हो गये और कहा कि छः महीने के अनंतर तुमसे इसी शास्त्र में विवाद करूंगा।

तब शंकराचार्य्य अमृतपुर में गए। वहां का राजा मर गया था। इसका नाम अमरु करके प्रसिद्ध था। उसका शरीर जलाने के लिये चिता पर रक्खा था इतने में शंकराचार्य ने अपने शरीर से प्राण निकाल कर परकायप्रवेश विद्या के बल से उस राजा के मृत शरीर में प्रवेश किया और शिष्यों ने आचार्य का शरीर एक पहाड़ की गुफा में रक्खा। कहीं लिखा है उस राजा की जो रानी थी उन में जो बड़ी थी उस ने देखा कि पति की चेष्टा पहले ऐसी नहीं है केवल पहला शरीर मात्र वही है और इस की आत्मा किसी योगी की जान पड़ती है नहीं तो इतना चातुर्य इस में कहां से होता। रानी ने आज्ञा दी कि जहां कहीं मृत शरीर मिले वहीं उस उस को जला दो। राजदूतों ने आचार्य का शरीर गुफा में पाया और उसको जलाने के लिये चिता पर रक्खा और आग लगा दी। आचार्य

के शिष्यों ने देख कर राजा की स्तुति की। उस का अभिप्राय यही था कि राजा, तू शंकराचार्य्य है दूसरा कोई नहीं। उसी क्षण राजा के शरीर से प्राण ने निकल कर उस चिता पर रक्खे हुए शरीर में प्रवेश किया और अग्नि शांत होने के लिये नृसिंह की स्तुति की। नृसिंह ने प्रसन्न हो के वर दिया। वहाँ से सरस्वती के पास आये और उसको जीत लिया और उस को साथ लेकर शृंगपुर में आये, जिस को अब शृंगेरी कहते हैं और जो तुंगभद्रा के तीर पर है। उसी स्थल पर सरस्वती की स्थापना की और भारती संप्रदाय की शिष्य परंपरा करने की रीति स्थापन की।

शंकराचार्य की गुरुपरंपरा इस प्रकार से लिखी है। पहिले नारायण, फिर ब्रह्मा, वशिष्ट, शक्ति, पराशर, व्यास, सुक, गौड़पाद, गोविंद योगीन्द्र, श्री शंकराचार्य्य। इन के १२ मुख्य शिष्य हुए उन के नाम पहिले लिख आये हैं।

शृंगेरी में १२ वरस रह कर कांचीपुर में गये। वहाँ कामाक्षा देवी की स्थापना की और कांची का नगर वसाया और विष्णुकांची में वरदराज विष्णु का और शिवकांची में शिव का मंदिर वनवाया और अवताम्रपर्णी नदी के तीर पर रहने वाले लोगों को शिष्य किया। प्रायः सब भारतवर्ष में इनकी शिष्यशाखा फैली।

श्री शंकराचार्य्य जी ने व्यास सूत्र पर अद्वैत भाष्य और दस महोपनिषदों और गीता पर भी भाष्य वनाये। और कई एक ग्रंथ वनाये हैं वे सब अब तक मिलते हैं। इनका मत यह था कि इस प्रपंच में ब्रह्म को छोड़ कर जो कुछ दिखाई देता है सब मिथ्या है, सब ब्रह्म रूप है, और ईश्वर और जीव एक ही है इत्यादि, उनके ग्रंथों को देखने से जान पड़ता है। इसी लिये किसी मत को जिस में ईश्वर की सत्ता मानी जाती है सर्वथा खंडन नहीं किया। नास्तिक मत को छोड़ कर सब मतों को स्थापन किया और ३२ वरस के वय में परलोक को चले गये। शक्ति संगम तंत्रादिक ग्रंथों में तो १६ ही वर्ष लिखे हैं परंतु शंकर विजयादि ग्रंथों से ज्ञात हुआ कि जो ऊपर संख्या लिखी है ठीक है क्योंकि इतना कृत्य इतने थोड़े समय में नहीं हो सकता। इनकी

कीर्ति अब तक इस भारतवर्ष में चली जाती है और प्रायः यहाँ के लोग भी इसी मत पर चलते हैं।

मैं ने शंकराचार्य्य का जीवनवृत्तांत बहुत संक्षेप से लिखा है। यदि इसमें कहीं शीघ्रता के हेतु भूल हो तो पढ़ने वाले उस पर क्षमा करें क्योंकि शास्त्र में लिखा है कि भ्रांति पुरुष का धर्म है।

—:०:—

५. महाकवि श्री जयदेव जी*

जयदेव जी की कविता का अमृत पान करके तृप्त, चकित, मोहित और घूर्णित कौन नहीं होता और किस देश में कौन सा ऐसा विद्वान है जो कुछ भी संस्कृत जानता हो और जयदेव जी की काव्य-माधुरी का प्रेमी न हो। जयदेव जी का यह अभिमान कि अंगूर और ऊख की मिठास उनकी कविता के आगे फीकी है बहुत सत्य है। इस मिठाई को न पुरानी होने का भय है न चींटी का डर है, मिठाई है, पर नमकीन है यह नई बात है। सुनने पढ़ने की बात है पर गूंगे का गुड़ है। निर्जन में जंगल पहाड़ में जहाँ बैठने को बिछौना भी न हो वहाँ गीतगोविंद सब आनंद सामग्री देता है, और जहाँ कोई मित्र-रसिक भक्त-प्रेमी न हो वहाँ यह सब कुछ बन कर साथ रहता है। जहाँ गीतगोविंद है वहीं वैष्णव गोष्ठी है, वहीं रसिक-समाज है, वहीं वृंदावन है, वहीं प्रेमसरोवर है, वहीं भाव-समुद्र है, वहीं गोलोक है और वहीं प्रत्यक्ष ब्रह्मानंद है। पर यह भी कोई जानता है कि इस पर-मक्रन्द-रस प्रेम-सर्वस्व शृङ्गार-समुद्र के जनक जयदेव जी कहाँ हुए? कोई नहीं जानता और न इसकी खोज करता। प्रोफेसर लैसेन ने लैटिन भाषा में और पूना के प्रिन्सिपल आरनल्ड साहब ने अंगरेजी में गीत-गोविन्द का अनुवाद किया, परंतु कवि का जीवनचरित्र कुछ न लिखा।

---

* चंद्रिका अभिनव विद्यावली खंड ६, संख्या १० अप्रैल सन् १८७९ में पूर्वार्ध छपा।

केवल इतना ही लिख दिया कि सन् ११५० के लगभग जयदेव उत्पन्न हुए थे। किंतु धन्य हैं बाबू रजनीकांत गुप्त कि जिन्होंने पहिले पहल इस विषय में हाथ डाला और "जयदेवचरित्र" नामक एक छोटा सा ग्रंथ इस विषय पर लिखा। यद्यपि समयनिर्णय में और जीवनचरित्र में हमारे उनके मत में अनेक अनैक्य है तथापि उनके ग्रंथ से हम को अनेक सहायता मिली है, यह मुक्त कंठ से स्वीकार करना होगा। और इसमें कोई संशय नहीं कि उन्हीं के ग्रंथ ने हमारी रुचि को इस विषय के लिखने पर प्रबल किया है।

वीरभूमि से प्रायः दस कोस दक्षिण * अजयनद के उत्तर किन्दुबिल्व † गाँव में श्रीजयदेव जी ने जन्म ग्रहण किया था।

संभव है कि कन्नौज से आए हुए ब्राह्मणों में से जयदेव जी का वंश भी हो। इन के पिता का नाम भोजदेव और माता का नाम रामादेवी था ‡। इन्होंने किस समय अपने आविर्भाव से धरातल को भूषित किया था यह अब तक नहीं ज्ञात हुआ। श्रीयुक्त सनातन गोस्वामि ने लिखा है कि बंगाधिपति महाराज लक्ष्मणसेन की सभा में जयदेव जी विद्यमान थे। अनेक लोगों का यही मत है और इस मत को पोषण करने को लोग कहते हैं कि लक्ष्मणसेन के द्वार पर एक पत्थर

---

* अजयनद भागीरथी का करद है। यह भागलपुर ज़िला के दक्षिण से निकल कर सौंताल परगने के दक्षिण भाग दक्षिण की ओर और फिर वर्द्धमान और वीरभूमि के ज़िले के बीच में से पश्चिम की ओर बह कर कटवा के पास भागीरथी से मिला है। (ज० च० बंगदेश विवरण)।

† किन्दुबिल्व वीरभूमि के मुख्य नगर सूरी से नौ कोस है। यहाँ श्रीराधा दामोदर जी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। वैष्णवों का यह भी एक पवित्र क्षेत्र है।

‡ बंबई की छपी हुई पुस्तक में राधा देवी जो इन की माता का नाम लिखा है वह असंगत है। हाँ, वामादेवी और रामादेवी यह दोनों पाठ अनेक हस्त-लिखित पुस्तकों में मिलते हैं। बंगला में र और व में केवल एक बिन्दु के भेद होने के कारण यह भ्रम उपस्थित हुआ है।

खुदा हुआ लगा था, जिस पर यह श्लोक लिखा हुआ था "गोवर्द्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः। कविराजश्च रत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च॥"

श्रीसनातन गोस्वामी के इस लेख पर अब तीन बातों का निर्णय करना आवश्यक हुआ। प्रथम यह कि लक्ष्मणसेन का काल क्या है। दूसरे यह कि यह लक्ष्मणसेन वही है जो बंगाले का प्रसिद्ध लक्ष्मणसेन है कि दूसरा है। तीसरे यह कि यह बात श्रद्धेय है कि नहीं कि जयदेव जी लक्ष्मणसेन की सभा में थे।

प्रसिद्ध इतिहास लेखक मिनहाजिउद्दीन ने तबकाते नासिरी में लिखा है कि जब बख्तियार खिलजी ने बंगाला फतह किया तब लछमनिया नाम का राजा बंगाले में राज करता था। इन के मत से लछमनिया बंगदेश का अंतिम राजा था। किंतु बंगदेश के इतिहास से स्पष्ट है कि लछमनिया नाम का कोई भी राजा बंगाले में नहीं हुआ। लोग अनुमान करते हैं कि बल्लालसेन के पुत्र लक्ष्मणसेन के माधवसेन और केशवसेन "लाक्ष्मणेय" इस शब्द के अपभ्रंश से लछमनिया लिखा है।

राजशाही के जिले से मेटकाफ साहब को एक पत्थर पर खोदी हुई प्रशस्ति मिली है। यह प्रशस्ति विजयसेन राजा के समय में प्रद्युम्नेश्वर महादेव के मंदिर-निर्माण के वर्णन में उमापतिधर की बनाई हुई है। डाक्टर राजेन्द्र लाल मित्र के मत से इस की संग्रहन की रचना प्रणाली नवम वा दशम वा एकादश शताब्दी की है। शोच की बात है कि इस प्रशस्ति में संवत् नहीं दिया है, नहीं तो जयदेव जी के समय-निरूपण में इतनी कठिनाई न पड़ती। इसमें हेमंतसेन, सुमंतसेन और वीरसेन यही तीन नाम विजयसेन के पूर्वपुरुषों के दिये हैं, जिस से प्रगट होता है कि वीरसेन ही वंशस्थापनकर्त्ता है। विजयसेन के विषय में यह लिखा है कि इस ने कामरूप और कुरुमंडल [मद्रास और पुरी के बीच का देश] जय किया था और पश्चिम जय करने को नौका पर गंगा के तट से सेना भेजी थी। तवारीखों में इन राजाओं का नाम कहीं नहीं है। कहते हैं आइनेअकबरी का सुखसेन (बल्लालसेन का पिता) विजयसेन का नामांतर है, क्योंकि बाकरगंज की ताम्रलिपि में जो चार नाम हैं वे

विजयसेन, वल्लालसेन, लक्ष्मणसेन और केशवसेन इस क्रम से हैं। वल्लालसेन बड़ा पंडित था और दानसागर और वेदार्थ स्मृति संग्रह इत्यादि ग्रंथ उसके कारण बने। कुलीनों की प्रथा भी वल्लालसेन की स्थापित है। उसके पुत्र लक्ष्मणसेन के काल में भी संस्कृतविद्या की बड़ी उन्नति थी। भट्ट नारायण (वेणी संहार के कवि) के वंश में धनंजय के पुत्र हलायुध पंडित उसके दानाध्यक्ष थे, जिन्होंने ब्राह्मण सर्वस्व बनाया और इनके दूसरे भाई पशुपति भी बड़े स्मार्त आन्हिककार थे। कहते हैं कि गौड़ का नगर वल्लालसेन ने बसाया था, परंतु लक्ष्मणसेन के काल से उस का नाम लक्ष्मणावती (लखनौती) हुआ। लक्ष्मणसेन के पुत्र माधवसेन और केशवसेन थे। राजावली में इन के पीछे सुसेन वा शूरसेन और लिखा है और मुसलमान लेखकों ने नौजीव (नवद्वीप ?), नारायण, लखमन और लखमनिया ये चार नाम और लिखे हैं वरंच एक अशोकसेन भी लिखा है किंतु इन सबों का ठीक पता नहीं। मुसलमानों के मत से लखमनिया अंतिम राजा है, जिस ने ८० वर्ष राज्य किया और बख़्तियार के काल में जिसने राज्य छोड़ा। यह गर्भ ही से राजा था। तो नाम का क्रम वीरसेन से लछमनिया तक एक प्रकार ठीक हो गया, किंतु इन का समय निर्णय अब भी न हुआ, क्योंकि किसी दानपत्र में संवत् नहीं है। दानसागर के बनने का समय समय-प्रकाश के अनुसार १०१६ शके (१०६७ ई०) है। इस से वल्लालसेन का राजत्व ग्यारहवीं शताब्दी के अंत तक अनुमान होता है और यह आईनेअकबरी के समय से भी मेल खाता है। वल्लालसेन ने १०६६ में राज्य आरंभ किया था। तो अब सेनवंश का क्रम यों लिखा जा सकता है।

वीरसेन	...
सामंतसेन	...
हेमंतसेन	...
विजयसेन वा सुखसेन	...
वल्लालसेन	...
लक्ष्मणसेन	१०६६
माधवसेन	११०१
	११२१

केशवसेन	...	...	...	...	११२२
लक्ष्मणिया	...	...	...	...	११२३

बल्लालसेन का समय १०६६ ई० समय-प्रकाश के अनुसार है। यदि इस को प्रमाण न मानैं और फारसी लेखकों के अनुसार लक्ष्मणिया के पहले नारायण इत्यादि और राजाओं को भी मानें तो बल्लालसेन और भी पीछे जा पड़ैंगे। तो अब जयदेव जी लक्ष्मणसेन की सभा में थे कि नहीं यह विचारना चाहिए। हमारी बुद्धि से नहीं थे। इस के कई दृढ़ प्रमाण हैं। प्रथम तो यह कि उमापतिधर जिसने विजयसेन की प्रशस्ति बनाई है वह जयदेव जी का समसामयिक था। तो यदि यह मान लें कि जयदेव उमापति गोवर्द्धनादिक सब सौ बरस से विशेष जिए हैं तब यह हो सकता है कि ये विजयसेन और लक्ष्मण दोनों की सभा में थे। दूसरे चंद कवि ने जिसका जन्म ११५० सन के पास है अपने रायसा में प्राचीन कवियों की गणना में जयदेव को लिखा है।* तो सौ डेढ़ सौ बरस पूर्व हुए बिना जयदेव जी की कविता का चंद के समय तक जगत् में आदरणीय होना असंभव है। गोवर्द्धन ने अपनी सप्तशती में "सेन-कुल-तिलक भूपति" इतना ही लिखा, नाम

---

* भुजंगप्रयात—प्रथमं भुजंगी सुधारी ग्रहनं। जिनैं नाम एकं अनेकं कहन्नं॥
दुती लंभयं देवतं जीवतेसं। जिनें विश्व राख्यौ बली मंत्र सेसं॥
त्रयं बेद ब्रह्मं हरी कित्ति भाषी। जिनैं धम्म साधम्म संसार साषी॥
तुरी भारती व्यास भारत्थ भाष्यौ। जिनैं उत्त पारत्थ सारत्थ साष्यौ॥
पंचं सुकदेवं परीछत्त पायं। जिनैं उद्धरी सब्ब कुरुवंस रायं॥
नरं रूप पंचम्म श्रीहर्ष सारं। नलैराय कंठं दिनै पद्ध हारं॥
छठं कालिदासं सुभाषा सुबद्धं। जिनैं बागबानी सुबानी सुबद्धं॥
कियौ कालिका मुक्ख बासं सुसुद्धं। जिनैं सेत बंध्यौ ति भोज प्रबंधं॥
सतं डंडमाली उलाली कवित्तं। जिनैं बुद्धि तारंग गंगा सरित्तं॥
जयदेव अट्ठं कवी कब्बिरायं। जिनैं केवलं कित्ति गोविंद गायं॥
गुरं सब्ब कब्बी लहू चंद कब्बी। जिनैं दर्सियं देवि सा अंग हब्बी॥
कवी कित्ति कित्ती उकत्ती सुदिक्खी। तिनैं की उचिष्टी कवी चंद भक्खी॥

कुछ न दिया, किंतु उस की टीका में "प्रवरसेन नामा इति" लिखा है। अब यदि प्रवरसेन, हेमंतसेन या विजयसेन का नामांतर मान लिया जाय और यह भी मान लिया जाय कि जयदेव जी की कविता बहुत जल्दी संसार में फैल गई थी और समय-प्रकाश का बल्लाल का समय भी प्रमाण किया जाय तो यह अनुमान हो सकता है कि विजयसेन के समय में वा उस से कुछ ही पूर्व सन् १०२५ से १०५० तक में किसी वर्ष में जयदेव जी का प्राकट्य है और ऐसा ही मानने से अनेक विद्वानों की एकवाक्यता भी होती है। यहाँ पर समय विषयक जटिल और नीरस निर्णय जो बंगला और अंगरेजी ग्रंथों में है वह न लिख कर सार लिख दिया है। इससे "जयदेव चरित" इत्यादि बंगला ग्रंथों में जो जयदेव जी का समय तेरहवीं वा चौदहवीं शताब्दी लिखा है वह अप्रमाण होकर यह निश्चय हुआ कि जयदेव जी ग्यारहवीं शताब्दी के आदि में उत्पन्न हुए हैं।

जयदेव जी की बाल्यावस्था का सविशेष वर्णन कुछ नहीं मिलता। अत्यंत छोटी अवस्था में यह मातृपितृविहीन हो गए थे, यह अनुमान होता है। क्योंकि विष्णुस्वामि चरितामृत के अनुसार श्री पुरुषोत्तम-क्षेत्र में इन्होंने उसी संप्रदाय के किसी पंडित से पढ़ी थी। इनके विवाह का वर्णन और भी अद्भुत है। एक ब्राह्मण ने अनपत्य होने के कारण जगन्नाथ देव की बड़ी आराधना कर के एक कन्या-रत्न लाभ किया था। इस कन्या का नाम पद्मावती था। जब यह कन्या विवाह योग्य हुई तो जगन्नाथ जी ने स्वप्न में उसके पिता को आज्ञा किया कि हमारा भक्त जयदेव नामक एक ब्राह्मण अमुक वृक्ष के नीचे निवास करता है, उसको तुम अपनी कन्या दो। ब्राह्मण कन्या को लेकर जयदेव जी के पास गया। यद्यपि जयदेव जी ने अपनी अनिच्छा प्रकाश किया तथापि देवादेशानुसार ब्राह्मण उस कन्या को उनके पास छोड़ कर चला आया। जयदेव जी ने जब उस कन्या से पूछा कि तुम्हारी क्या इच्छा है तो पद्मावती ने उत्तर दिया कि आज तक हम पिता की आज्ञा में थे, अब आप की दासी हैं। ग्रहण कीजिए वा परित्याग कीजिए मैं आप का दासत्व न छोड़ूँगी। जयदेव जी ने उस कन्या के मुख से यह सुन कर प्रसन्न होकर उस का पाणिग्रहण किया। अनेक लोगों का

मत है कि जयदेव जी ने पूर्व में एक विवाह किया था। उस स्त्री की मृत्यु के पीछे उदास होकर पुरुषोत्तमक्षेत्र में रहते थे। पद्मावती उनकी दूसरी स्त्री थी। इन्हीं पद्मावती के समय, संसार में आदरणीय कविता रत्न का निकष गीतगोविंद काव्य जयदेव जी ने बनाया।

गीतगोविंद के सिवा जयदेव जी की और कोई कविता नहीं मिलती। प्रसन्नराघव, पक्षधरी, चन्द्रालोक और सीताविहार काव्य विदर्भ नगर वासी कौडिन्य गोत्रोद्भव महादेव पंडित के पुत्र दूसरे जयदेव जी के बनाए हैं, जिनका काव्य में पीयूषवर्ष और न्याय में पक्षधर उपनाम था। वरंच अनेक विद्वानों का मत है कि तीन जयदेव हुए हैं, यथा गीतगोविंदकार, प्रसन्नराघवकार और चन्द्रालोककार, जिनका नामांतर पीयूषवर्ष है।

पद्मावती के पाणिग्रहण के पीछे जयदेव जी अपने स्थापित इष्टदेव की सेवा निर्वाहार्थ द्रव्य एकत्र करने की इच्छा से वा तीर्थाटन और धर्मोपदेश की इच्छा से निज देश छोड़ कर बाहर निकले। श्रीवृन्दावन की यात्रा करके जयपुर वा जयनगर होते हुए जयदेव जी मार्ग में चले जाते थे कि डाकुओं ने धन के लोभ से उन पर आक्रमण किया और केवल धन ही नहीं लिया, वरंच उनके हाथ पैर भी काट लिए। कहते हैं कि किसी धार्मिक राजा के कुछ भृत्य लोग उसी मार्ग से जाते थे। उन लोगों ने जयदेव जी की यह दशा देखी और अपने राज्य में उन को उठा ले गए। वहाँ औषध इत्यादि से कुछ इनका शरीर स्वस्थ हुआ। इसी अवसर में चोर भी उस नगर में आए और साधु वेश में उस नगर के राजा के यहाँ उतरे। उस राजा के घर में जयदेव जी का बड़ा मान था और दान धर्म इन्हीं के द्वारा होता था। जयदेव जी ने इन साधु वेशधारी चोरों को अच्छी तरह पहचान लिया और यदि वे चाहते तो भली भाँति अपना बदला चुका लेते, परंतु उनके सहज उदार और दयालु चित्त में इस बात का ध्यान तक न आया, वरंच धनादिक देकर उनका बड़ा आदर किया। विदा के समय भी उन को बड़े सत्कार से अच्छी विदाई देकर बिदा किया और राजा के दो नौकर साथ कर दिये कि उनको सरहद तक उन को पहुँचा

आवें। मार्ग में राजा के अनुचर ने उन चोरों से पूछा कि इन साधू जी ने और लोगों से विशेष आपका आदर क्यों किया। इस पर उन चांडाल चोरों ने यह उत्तर दिया कि जयदेव जी पहिले एक राजा के यहाँ रहते थे, इन्होंने कुछ ऐसा दुष्कर्म किया कि राजा ने हम लोगों को इन के प्राण हरने की आज्ञा दिया, किंतु दया परवश हो कर हम लोगों ने इन के प्राण नहीं लिए, केवल हाथ पैर काट के छोड़ दिया। इसी बात के छिपाने के हेतु जयदेव ने हमलोगों का इतना आदर किया। कहते हैं कि मनुष्यों की आधारभूता पृथ्वी इस अनर्थ मिथ्याप्रवाद को न सह सकी और द्विधा विदीर्ण हो गई। वे चोर सब उसी पृथ्वीगर्त में डूब गए और परमेश्वर के अनुग्रह से जयदेव जी के भी हाथ पैर फिर से यथावत् हो गए। अनुचरों के द्वारा यह वृत्तांत सुन कर और जयदेव जी से पूर्ववृत्ति जान कर राजा अत्यंत ही चमत्कृत हुआ। आश्चर्य घटना-अविश्वासी विद्वानों का मत है कि जयदेव जी ऐसे सहृदय थे कि उनके सहज स्वभाव पर रीझ कर लोगों ने यह गल्प कल्पित कर ली है।

तदनंतर जयदेव जी ने अपनी पत्नी पद्मावती को भी वहीं बुला लिया। कहते हैं कि एक वेर उस राजा की रानी ने ईर्षा-वश पद्मावती की परीक्षा करने को उस से कह दिया कि जयदेव जी मर गए। उस समय जयदेव जी राजा के साथ कहीं बाहर गए थे। पतिप्राणा पद्मावती ने यह सुनते ही प्राण परित्याग कर दिया। जब जयदेव जी आए और उन्होंने यह चरित देखा तो श्रीकृष्ण नाम सुना कर उस को पुनर्जीवन दिया, किंतु उस ने उठ कर कहा कि अब आप हमको आज्ञा दीजिए, हमारा इसी में कल्याण है कि हम आपके सामने परमधाम जायँ, और तदनुसार उस ने फिर शरीर नहीं रक्खा। जयदेव जी इससे उदास होकर अपनी जन्मभूमि केंदुली ग्राम में चले आए और फिर यावत् जीवन वहीं रहे।

श्री जयदेव जी के गीतगोविंद के जोड़ पर गीतगिरीश नामक एक काव्य बना है, किंतु जो बात इस में है वह उस में सपने में भी नहीं है।

गीतगोविंद के अनेक टीकाकार भी हुए हैं, यथा उदय, जो स्वाम गोवर्द्धनाचार्य का शिष्य था और जयदेव जी से भी कुछ पढ़ा था। एक टीका उस की बनाई है और पीछे से अनेक टीका बनी हैं। उदयन की टीका जयदेव जी के समय में बन चुकी थी और इस में भी कोई संदेह नहीं कि गीतगोविंद जयदेव जी के जीवन काल ही में सारे संसार में प्रचलित हो गया था। गीतगोविंद दक्षिण में बहुत गाया जाता है और बालाजी में सीढ़ियों पर द्राविड़ लिपि में खुदा हुआ है। श्री वल्लभाचार्य संप्रदाय में इस का विशेष भाव है, वरंच आचार्य के पुत्र गोसाईं विट्ठलनाथ जी की इस के प्रथम अष्टपदी पर एक रसमय टीका भी बड़ी सुंदर है, जिस में दशावतार का वर्णन शृंगार पक्ष लगाया है। वैष्णवों में परिपाटी है कि अयोग्य स्थान पर गीतगोविंद नहीं गाते, क्योंकि उनका विश्वास है कि जहां गीतगोविंद गाया जाता है वहाँ अवश्य भगवान का प्रादुर्भाव होता है। इस पर वैष्णवों में एक आख्यायिका प्रचलित है। एक बुढ़िया को गीतगोविंद की "धीर समीरे यमुना तीरे" यह अष्टपदी याद थी। यह बुढ़िया गोवर्द्धन के नीचे किसी गाँव में रहती थी। एक दिन वह बुढ़िया अपने बैंगन के खेत में पेड़ों को सींचती थी और अष्टपदी गाती थी, इस से ठाकुर जी उस के पीछे पीछे फिरे। श्रीनाथ जी के मंदिर में तीसरे पहर को जब उत्थापन हुए तो श्री गोसाईं जी ने देखा कि श्रीनाथ जी का बागा फटा हुआ है और बैंगन के काँटे और मिट्टी लगी हुई है। इस पर जब पूछा गया तो उत्तर मिला कि अमुक बुढ़िया ने गीतगोविंद गाकर हमको बुलाया इस से काँटे लगे, क्योंकि वह गाती गाती जहाँ जाती थी मैं उस के पीछे फिरता था। तब से यह आज्ञा गोसाईं जी ने वैष्णवों में प्रचार किया कि कुस्थान पर कोई गीतगोविंद न गावे।

किंवदंती है कि जयदेव जी प्रति दिवस श्रीगंगा स्नान करने जाते थे। उन का यह श्रम देख कर गंगा जी ने कहा कि तुम इतनी दूर क्यों परिश्रम करते हो, हम तुम्हारे यहीं आप आवेंगी। इसी से कदंबखंडी नामक एक घाट में गंगा अब तक केंदुली के नीचे बहती हैं।

जयदेव जी विष्णुस्वामी संप्रदाय में एक ऐसे उत्तम पुरुष हुए हैं

कि संप्रदाय की मयावस्था में मुख्यत्व कर के इन का नाम लिया गया है। यथा—

विष्णुस्वामीसमारम्भां जयदेवादिमध्यगां। श्रीमद्वल्लभपर्य्यन्तांस्तुमोगुरुपरम्पराम् ॥१॥

जयदेव जी का पवित्र शरीर केंदुली ग्राम में समाधिस्थ है। यह समाधि मंदिर सुंदर लताओं से वेष्ठित हो कर अपनी मनोहरता से अद्यापि जयदेव जी के सुंदर चित्त का परिचय देता है।

"जयदेव जी नितांत करुण हृदय और परम धार्मिक थे। भक्ति विलसित महत्व छटा और अनुपम प्रीति व्यंजक उदार भाव यह दोनों उनके अंतःकरण में निरंतर प्रतिभासित होते थे। उन्हों ने अपने जीवन का अर्द्धकाल केवल उपासना और धर्मघोषणा में व्यतीत किया। वैष्णव संप्रदाय में इन के ऐसे धार्मिक और सहृदय पुरुष विरले ही हुए हैं"।

जयदेव जी एक सत्कवि थे, इस में कोई संदेह नहीं। यद्यपि कालिदास, भवभूति, भारवि इत्यादि से बढ़कर वह कवि थे यह नहीं कह सकते, पर उनकी अपेक्षा इनको सामान्य भी नहीं कह सकते। वंगभूमि में तो कोई ऐसा सत्कवि आज तक हुआ नहीं। "ललितपद विन्यास और श्रवण मनोहर अनुप्रास छटा निबंधन से जयदेव की रचना अत्यंत ही चमत्कारिणी है। मधुर पद विन्यास में तो बड़े बड़े कवि भी इस से निस्सदेह हारे हैं"।

जयदेव जी का प्रसिद्ध ग्रंथ गीतगोविंद बारह सर्गों में विभक्त है। जिस में पूर्व में श्लोक और फिर गीत क्रम से रक्खे हैं। इस ग्रंथ में परस्पर विरह, दूती, मान, गुण-कथन और नायक का अनुनय और तत्पश्चात् मिलन यह सब वर्णित है। जयदेव जी परम वैष्णव थे। इस स उन्हों ने जो कुछ वर्णन किया अत्यंत प्रगाढ़ भक्ति पूर्ण हो कर वर्णन किया है। इन्हों ने इस काव्य में अपनी रसशालिनी रचना शक्ति और चित्तरंजक सद्भाव-शालित्व का एक शेष प्रदर्शन दिया है। पंडितवर ईश्वरचंद्र विद्यासागर स्वप्रणीत संस्कृत विषयक प्रस्ताव में लिखते हैं "इस महाकाव्य गीतगोविंद की रचना जैसी मधुर कोमल और मनोहर

है, इस तरह की दूसरी कविता संस्कृत-भाषा में बहुत अल्प है। वरंच ऐसे ललित पद विन्यास, श्रवण मनोहर, अनुप्रास छटा और प्रसाद गुण और कहीं नहीं है।" वास्तव में रचना विषय में गीतगोविंद एक अपूर्व पदार्थ है। और तालमानों के चातुर्य से और अनेक रागों के नाम के अनुकूल गीतों में अक्षर से स्पष्ट बोध होता है कि जयदेव जी गाना बहुत अच्छा जानते थे। कहते हैं कि गीतगोविंद को अष्टपदी और अष्टताली नाम से भी लोग पुकारते हैं।

अनेक विद्वानों ने लिखा है, गीतगोविंद विक्रमादित्य की सभा में गाया जाता था। किंतु यह कथा सर्वथा अश्रद्धेय है। यह कोई और विक्रम होंगे जिनकी सभा में गीतगोविंद गाया जाता था, क्योंकि शकारि विक्रम के अनेक सौ वर्ष पश्चात् जयदेव जी का जन्म है। हाँ, कलिंग, कर्णाट प्रभृति देश के राजाओं की सभा में पूर्व से गीत-गोविंद निस्संदेह गाया जाता था। वरंच जोनराज ने अपनी राज-तरंगिणी में लिखा है कि श्रीहर्ष जब क्रम सरोवर के निकट भ्रमण करते थे उन दिनों गीतगोविंद उन की सभा में गाया जाता था।

कहते हैं कि "प्रिये चारुशीले" इस अष्टपदी में "स्मरगरल खंडनं मम शिरसि मंडनं" इस पद के आगे जयदेव जी की इच्छा हुई कि "देहि पदपल्लवमुदारं" ऐसा पद दें, किंतु प्रभु के विषय में ऐसा पद देने को उन का साहस नहीं पड़ा, इस से पुस्तक छोड़ कर आप स्नान करने चले गए। भक्तवत्सल, भक्तमनोरथपूरक भगवान इस समय स्नान से फिरते हुए जयदेव जी के वेश में घर में आए। प्रथम पद्मावती ने जो रसोई बनाई थी उस को भोजन किया, तदनंतर पुस्तक खोल कर "देहि पदपल्लवमुदारं" लिख कर शयन करने लगे। इतने में जयदेव जी आए तो देखा कि पतिप्राणा पद्मावती, जो बिना जयदेव जी का भोजन कराये जल भी नहीं पीती थी वह, भोजन कर रही है। जयदेव जी ने भोजन का कारण पूछा तो पद्मावती ने आश्चर्य पूर्वक सब कुछ कहा। इस पर जयदेव जी ने जाकर पुस्तक देखा तो "देहि पदपल्लव मुदारं" यह पद लिखा है। यह जान गए कि यह सब चरित्र हमारे भक्तशिरोमणि भक्तवत्सल का है। इस से आनंद पुलकित हो कर पद्मावती का थाली का अन्न ला कर खाने को कृतार्थ माना।

कहते हैं कि पुरी के राजा सात्विकराय ने ईर्षापरवश होकर एक जयदेव जी की कविता की भाँति अपना भी गीतगोविंद बनाया था। इस झगड़े को निबटाने को कि कौन गीतगोविंद अच्छा है दोनों गीतगोविंदों को पंडितों ने जगन्नाथ जी के मंदिर में रख कर बंद कर दिया। जब यथा समय द्वार खुला तो लोगों ने देखा कि जयदेव जी का गीतगोविंद श्री जगन्नाथ जी के हृदय में लगा हुआ है और राजा का दूर पड़ा है। यह देखकर राजा आत्महत्या करने को तैयार हुआ। तब श्रीजगन्नाथ जी ने उसके संबोधन के वास्ते आज्ञा किया कि हम ने तेरा भी अंगीकार किया, शोच मत कर।

गीतगोविंद अंगरेज़ी गद्य में सर विलियम जोन्स कृत, पद्य में आरनल्ड साहब कृत, लैटिन में लासिन कृत, जर्मन में रुकार्ट कृत, ऐसे ही अनेक भाषाओं में अनेक जन कृत अनुवादित हुआ है। हिंदी में इसके छंदोबद्ध तीन अनुवाद हैं। प्रथम राजा डालचन्द की आज्ञा से रायचन्द नागर कृत, द्वितीय अमृतसर के प्रसिद्ध भक्त स्वामी रत्न-हरीदास कृत और तृतीय इस प्रबंध के लेखक हरिश्चंद्र कृत। इन अनुवादों के अतिरिक्त द्राविड़ और कार्णाटादि भाषाओं मे इसके अपरापर अन्य अनेक अनुवाद हैं।

लोग कहते हैं कि जयदेव जी ने गीतगोविंद के अतिरिक्त एक ग्रंथ रतिमंजरी भी बनाया था, किंतु यह अमूलक है। गीतगोविंदकार की लेखनी से रतिमंजरी सा जघन्य काव्य निकले यह कभी संभव नहीं। एक गंगा की स्तुति में सुंदर पद जयदेव जी का बनाया हुआ और मिलता है, वह उनका बनाया हुआ हो तो हो।

इस भाँति अनेक सौ बरस हुए कि श्रीजयदेव जी इस पृथ्वी को छोड़ गए। किंतु अपनी कविता-बल से हमारे समाज में वह सादर आज भी विराजमान हैं। इनके स्मरण के हेतु केन्दुली गाँव में अब तक मकर की संक्रांति को एक बड़ा भारी मेला होता है, जिसमें साठ सत्तर हज़ार वैष्णव एकत्र हो कर इनकी समाधि के चारों ओर संकीर्तन करते हैं।

—:❀:—

६. पुष्पदंताचार्य और महिम्न

यह स्तोत्र अब ऐसा प्रसिद्ध है कि आर्ष की भाँति माना जाता है, वरंच पुराणों में भी कहीं-कहीं इसका माहात्म्य मिलता है। एक प्रसंग है कि जब पुष्पदंत ने महिम्न बना के शिवजी को सुनाया तब शिवजी बड़े प्रसन्न हुए, इससे पुष्पदंत को गर्व हुआ कि मैंने ऐसी अच्छी कविता किया कि शिवजी प्रसन्न हो गए। यह बात शिवजी ने जाना और अपने भृंगी-गण से कहा कि मुँह तो खोलो। जब भृंगी ने मुँह खोला, तो पुष्पदंत ने देखा कि महिम्न के बत्तीसो श्लोक भृंगी के बत्तीसो दाँत में लिखे हैं। इससे यह बात शिवजी ने प्रगट किया कि ये श्लोक तुमने नहीं बनाए हैं। वरंच यह तो हमारी अनादि स्तुति-श्लोक है। यह बात प्रसिद्ध है कि पुष्पदंत जब शाप से ब्राह्मण हुआ था तब यह स्तोत्र बनाया है और ऐसी ही अनेक आख्यायिका हैं। अब वह पुष्पदंत कौन है और कब वह ब्राह्मण हुआ इसका विचार करते हैं। कथासरित्सागर में एक पहिला ही प्रसंग है, जिससे यह प्रसंग बहुत स्पष्ट होता है। उस में लिखते हैं कि पार्वती जी का मान छुड़ाने को शिवजी ने अनेक विचित्र इतिहास कहे और उस समय नंदी को आज्ञा दी थी कि कोई भीतर न आवें, परंतु पुष्पदंत गण ने योगबल से नंदी से छिप कर भीतर जा कर वह नव कथा सुनी और अपनी स्त्री जया से कही और जया ने फिर पार्वती से कहा। यह सुन कर पार्वती ने बड़ा क्रोध किया और पुष्पदंत और उस के मित्र माल्यवान् को शाप दिया कि दोनों मृत्युलोक में जन्म लो। फिर जब उन सबों ने पार्वती को बहुत मनाया तब पार्वती ने कहा कि अच्छा विन्ध्याचल में सुप्रतीक नाम यक्ष काणभूति पिशाच हुआ है उसको देख कर पुष्पदंत जब वह सब कथा कहेगा तब शाप दूर होगा और काणभूति से जब माल्यवान् सुनेगा तब शाप से छूटेगा। वहीं पुष्पदंत वररुचि नामक कवि कौशांबी में हुआ और सुप्रतिष्ठ नगर में माल्यवान् गुणाढ्य कवि हुआ। यथा—

अथ स्वच्छन्दमौलिः कौशाम्बीति पितामहनगरी।
तस्यां सपुष्पदन्तो वररुचि नामा द्विजे [illegible] ॥ १ ॥

अन्यश्च माल्यवानपि नगरे सुप्रतिष्ठाख्ये ।
जातो गुणाढ्य नामा देवितयोरेपवृत्तान्तः ॥ २ ॥"

कौशांबी नगरी में सोमदत्त वा अग्निशिख नामा ब्राह्मण की स्त्री वसुदत्ता से वररुचि का जन्म हुआ और पिता छोटे ही पन में मर गया, इस से माता ने बड़े कष्ट से इस का पालन किया। यह छोटे ही पन में ऐसा श्रुतिधर था कि एक वेर जो सुनता वा जो कला देखता कंठ कर लेता और जान जाता। एक समय वेतसपुर के देवस्वामी और कदंवक नामा ब्राह्मण के पुत्र इंद्रदत्त और व्याड़ि इसके घर में आए। वहाँ इन दोनों ने वररुचि को एकश्रुतिधर सुन के प्राति शाख्य पढ़ा और वररुचि ने उन दोनों को वह ज्यों का त्यों सुना दिया और वररुचि के पिता का मित्र भवानंद नामक नट उस रात्रि को कहीं अभिनय करता था। वह देख कर वररुचि ने अपने माता के सामने ज्यों का त्यों फिर कर दिखाया। उन दोनों ब्राह्मणों को इसकी एकश्रुतिधरता से बड़ी प्रसन्नता हुई, क्योंकि जब इन दोनों ने विद्या के हेतु तप किया था तब इन को वर मिला था कि पाटलिपुत्र में वर्ष नामक उपाध्याय से सब विद्या पाओगे। वर्ष, उपवर्ष यह दो भाई शंकर स्वामि ब्राह्मण के पुत्र थे। उनमें उपवर्ष पंडित और धनी था और वर्ष मूर्ख और दरिद्री था। उपवर्ष की स्त्री से अनादर पा कर वर्ष ने विद्या के हेतु तप किया और स्कंद से सब विद्या पाई, परंतु स्कंद ने कहा था कि जो एकश्रुतिधर हो उसके सामने तुम अपनी विद्या प्रकाश करना। सो जब वर्ष के पास ये दोनों ब्राह्मण गए तब उसकी स्त्री ने कहा कि एकश्रुतिधर कोई हो तो ये अपनी विद्या प्रकाश करैं, अन्यथा न प्रकाश करैंगे। इसी से वे दोनों ब्राह्मण वररुचि को एकश्रुतिधर पा कर बड़े प्रसन्न हुए। वररुचि की माता से उन दोनों ने सब वृत्तांत कह कर वररुचि को साथ लिया और फिर पाटलिपुत्र में आए, क्योंकि उसकी माता से भी आकाशवाणी ने कहा था कि तेरा पुत्र एकश्रुतिधर होगा और वर्ष से सब विद्या पढ़ेगा और व्याकरण का आचार्य होगा। वर्ष ने तब उन तीनों को विद्या पढ़ाया और बहुत प्रसन्न हुआ, क्योंकि वररुचि एकश्रुतिधर, व्याड़ि द्विश्रुतिधर और इंद्रदत्त त्रिश्रुतिधर था। वर्ष को नगर के लोग मूर्ख जानते थे,

पर जब एकाएकी उस के विद्या का प्रकाश हुआ तो सब ब्राह्मणवर्ग बड़े प्रसन्न हुए और नंद राजा ने भी बहुत सा धन वर्ष को दिया। फिर इन तीनों ने बड़ी विद्या पढ़ी और वररुचि ने उपवर्ष की कन्या उपकोषा से विवाह किया और उपकोषा अपने पतिव्रत और चरित्र से नंद की भगिनी हुई। वर्ष के एक पाणिनि * नामा मूर्ख शिष्य ने शिव

*राजा शिवप्रसाद यों लिखते हैं :—"समय के उलट फेर में हमारे पंडित लोग जो कुछ अपनी पंडिताई दिखलाते हैं, लिखने योग्य नहीं है। इसी एक बात से सोच लो कि जिस पंडित से पाणिनि वैय्याकरण का ज़माना पूछोगे झट से कहेगा कि सत्ययुग में हुआ था। लाखों बरस बीते परन्तु इस से इन्कार न करेगा कि कात्यायन की पतंजलि ने टीका लिखी और पतंजलि की व्यास ने। अब हेमचन्द्र अपने कोश में कात्यायन का नाम वररुचि बतलाता है और कश्मीर का सोमदेव भट्ट अपने कथासरित्सागर में लिखता है कि कात्यायन वररुचि कौशांबी में, जो अब प्रयाग के पास जमुना के किनारे कोसम गाँव कहलाता है, पैदा हुआ, पाणिनि से व्याकरण में शास्त्रार्थ किया और राजा नंद का मंत्री हुआ। मुद्राराक्षस इत्यादि बहुत ग्रंथों से साबित है कि नंद के बाद ही चंद्रगुप्त राज्यसिंहासन पर बैठा और चंद्रगुप्त का जमाना ऐसा निश्चय ठहर गया है कि जैसे पलासी की लड़ाई अथवा नादिरशाही अथवा पृथ्वीराज और विक्रम का कहो कि हम पाणिनि का जमाना अब अढ़ाई हजार बरस से इधर मानें या लाखों बरस से उधर? पतंजलि चंद्रगुप्त के पीछे हुआ इसमें किसी तरह का संदेह नहीं, क्योंकि उसने अपने भाष्य में "सभाराजा मनुष्य पूर्वा" इस सूत्र पर "चंद्रगुप्तसभम्" ऐसा उदाहरण दिया है।"

Dr. Rajendra Lal Mitra LL. D. in his Indo-Aryans No. 1. P. 19 says, "Accordng to Dr. Goldstucker, the Grammar of Panini was composed between the 9th and 11th centuries before Christ. Professor Max Muller brings down the age of Grammar to the 6th cetury B. C,"

पाणिनीय व्याकरण के समय में निम्नलिखित बातें होती थीं।

१ उस समय के लोगों में हँसी करने की चाल थी। पाणिन्ये ....

जी से वर पाकर व्याकरण बनाया और जब वररुचि ने उससे वाद किया तो शिवजी ने हुँकर के वररुचि का इंद्रमत का व्याकरण भुला दिया, इस से वररुचि ने फिर तपस्या कर के शिवजी से पाणिनि व्याकरण सीखा। यह वररुचि बहुत दिन तक योगानंद का मंत्री रहा और इस का नामांतर कात्यायन था, परंतु यह नंद का मंत्री कैसे हुआ और कब

भोक्ष्यते इति भुक्तः सोऽतिथिभिः—मानो भात खाने आया है तब खा पी गया।

२ श्राद्धों में नाती को अवश्य बुलाने की चाल थी। निमन्त्रणं, आवश्यके श्राद्धभोजनादौ दौहित्रादेः प्रवर्तनं—निमंत्रण, अर्थात् जैसे नाती वगैरह को श्राद्ध भोजन में बुलाना।

३ नृत्य और नृत में भेद। गात्र विक्षेपमात्रं नृतं-भौंहों का तमासा, बदन तोड़ना इत्यादि। पदार्थाभिनयोनृत्यं—भावादिकों का दिखलाना।

४ बहुत सी कहावतें उस समय के लोग जानते थे। जैसा—नविश्वसेद्‌-विश्वस्तं–जिस का विश्वास एक बेर गया फिर उसका विश्वास न करना।

५ आलिंगन करने की रीति थी। अश्लिक्षत् कन्यां देवदत्तः–देवदत्त ने कन्या को आलिंगन दिया।

६ लड़कियों को गहना पहिनाने की चाल। उपस्कृता कन्या–अलंकार पहि-नाई गई कन्या।

७ मुहावरेदार बोलने की चाल। हस्तयते–हाथी पर चढ़के जाता है। पादयते–लात मारता है।

८ लोग बहुत भावुक थे। सिद्धशब्दो ग्रंथान्ते मङ्गलार्थ—ग्रंथ के अंत में सिद्ध—ऐसा लिखो, क्योंकि यह मंगल है।

९ वृषस्यतिगौः—गाय उठी है।

१० महल बना करते थे। कुटीयति प्रासादे। महल में बैठ कर झोपड़ी समझता है।

११ भिक्षुक लोग राजा के पास जाया करते थे। भिक्षुकः प्रभुमुपतिष्ठते।

१२ मल्लयुद्ध हुआ करता था। आह्वयते–मैदान में खड़े होकर पुकारना। नहीं तो आह्वयति।

१३ खिराज दिया जाता था। करं विनयते–कर देने को निकालता है।

१४ शास्त्र की चर्चा रहा करती थी। शास्त्रेवदते–शास्त्र में बोल सकता है।

तक रहा यह यहाँ नहीं लिखते, क्योंकि प्रसंग के बाहर है। यह बन बन फिरने लगा। जब शकटार ने चाणक्य द्वारा नंदवंश का नाश किया तब उदास हो कर और विंध्याचल में कालभूति पिशाच को देख कर अपना पूर्व जन्म स्मरण करके उस से सब कथा कह कर बदरिकाश्रम में जा कर योग से अपनी गति को गया और शाप से छूटा। गंधर्व से भी पहिले जन्म में यह गंगातीर के बहार नामक ग्राम में गोविंददेव ब्राह्मण अग्निदत्ता ब्राह्मणी का पुत्र देवदत्त था और प्रतिष्ठानपुर के राजा की कन्या से विवाह किया था। उस कन्या ने पहले दाँत में फूल दबा कर उस को संकेत बताया था। इससे जब वह ब्राह्मण वरदान पाकर शिव-गण हुआ तब उस की स्त्री भी जया प्रतिहारी हुई।

इस कथा के व्याख्यान से यह स्पष्ट होता है कि वर्णन नंद के राज्य के समय का है और उस समय के देवता शिव और स्कंध थे और व्याकरण का बड़ा प्रचार था। कातंत्र, कालाप, एन्द्र, पाणिनी इत्यादि मत में परस्पर बड़ा विरोध था। संस्कृत, प्राकृत, पैशाची और देश भाषा बहुत प्रसिद्ध थी, परंतु पाँच और भाषा भी प्रचलित थीं। पाट-लिपुत्र नया बसा था, प्रतिष्ठानपुर और अयोध्या भी बहुत बसती थी, धूर्तता फैल गई थी और हिंदुस्तान में पश्चिम देश बहुत मिला हुआ था इत्यादि।

इस बृहत्कथा में ऐसे ही गुणाढ्य कवि के भी तीनों जन्म लिखे हैं और उस का बृहत्कथा का पैशाची भाषा में निर्माण करना, उस में छः लाख ग्रंथ जला देना और एक लाख ग्रंथ नरवाहन दत्त के चरित्र का राजा शातवाहन को देना इत्यादि सविस्तर वर्णित है।

अब यह बृहत्कथा कब बनी है और किस ने बनाया है इस के विचार में चित्त बहुत दोलायित होता है, क्योंकि इस का काल ठीक निर्णीत नहीं होता। नंद के समय की भी नहीं मान सकते, क्योंकि इसी बृहत्कथा में विक्रमादित्य, उदयन ऐसे प्राचीन नवीन अनेक राजाओं का वर्णन है, परंतु इतना कह सकते हैं कि इस का मूल प्राचीन काल से पड़ा है और उस को अनेक काल में अनेक कवि बढ़ाते गए हैं, क्योंकि "कात्यायनाद्यैःकविः, नरवाहनदत्तादिभिः"

इत्यादि पदों में आदि शब्द मिलता है। वा अनेक प्राचीन सुनी हुई कथाओं को किसी ने एकत्र कर के आदर के हेतु उस में पुष्पदंत का नाम रख दिया हो तो भी आश्चर्य नहीं, क्योंकि कात्यायन वररुचि का होना खीस्ताब्दीय के १२० वर्ष पूर्व लोग अनुमान करते हैं और विक्रम का काल पंडितों ने ५०० खीस्ताब्द के लगभग निश्चय किया है और ऐसा मानने से प्रोफेसर गोल्डस्टूकर इत्यादि इतिहासवेत्ताओं का दो वररुचि मानने वाला मत भी स्पष्ट खंडित होता है, क्योंकि बृहत्कथा में जब विक्रम का चरित्र है तब उसी विक्रमादित्य वाले वररुचि का नाम कात्यायन संभव है।

परंतु हमारा कथन यह है कि संस्कृत बृहत् कथा गुणाढ्य की बनाई ही नहीं है, क्योंकि उस में स्पष्ट लिखा है कि गुणाढ्य ने संस्कृत बोलना छोड़ दिया था, इस से पिशाच भाषा में बृहत्कथा बनाया। तो इस दशा में संभव है कि किसी ने यह बृहत्कथा बना कर वररुचि, गुणाढ्य, पुष्पदंत इत्यादि का नाम आदर और प्रमाण पाने के हेतु रख दिया हो।

अब जो बृहत्कथा मिलती है वह तीस हजार श्लोक में रामदेव भट्ट के पुत्र सोमदेव भट्ट की बनाई है, जो उसने कश्मीर के राजा संग्रामदेव के पुत्र अनंत देव की रानी सूर्यवती के चित्तविनोद के हेतु बनाई है और इसी अनंतदेव के पुत्र कमलदेव हुए और कमलदेव के पुत्र श्री हर्षदेव हुए। कश्मीर के इन राजाओं के नाम चित्त को और भी संशय में डालते हैं, क्योंकि रत्नावली वाला श्रीहर्ष कालिदास के पहिले का है, क्योंकि कालिदास ने मालविकाग्निमित्र में धावक कवि का नाम प्राचीन कवियों में लिखा है। अब इस दशा में विरोध का परिहार यों हो सकता है कि जिस विक्रम का चरित्र बृहत्कथा में है वह नवरत्न वाला विक्रम नहीं, किंतु कोई प्राचीन विक्रम है। और यह बृहत्कथा धावक के थोड़े ही काल पहिले कश्मीर में सोमदेव ने बनाई है, क्योंकि इस में नंद और विक्रम के नाम की भाँति भोज, कालिदास इत्यादि का नाम नहीं है और नवरत्न वाला वररुचि दूसरा था, क्योंकि उस काल में राजा और कवियों के वही नाम बारंबार होते थे, इस से बृहत्कथा संवत् और खिस्तसन के पूर्व बनी है और गुणाढ्य और वररुचि कुछ इस से भी पहिले के हैं।

परंतु बृहत्कथा के किसी लेख का हम प्रमाण नहीं करते, क्योंकि यह बड़ा ही असंगत ग्रंथ है। जैसा अनंत पंडित की बनाई मुद्राराक्षस की पूर्व पीठिका में नंद का नाम सुधन्वा लिखा है और इस में योगनंद है। इस में जो वररुचि के मंत्री होने का प्रसंग है वह इस पीठिका में कहीं मिलता ही नहीं और पाणिनी, वर्ष, कात्यायन, व्याडि, इंद्रदत्त और अनेक व्याकरण के आचार्य बृहत्कथा के मत से एक काल के थे, पर बुद्धिमानों ने इन सबके काव्य में बड़ा भेद ठहराया है। इससे इतिहास विषय में बृहत्कथा अप्रमाणिक है।

बृहत्कथा का वर्णन और गुणाढ्य इत्यादि कवियों का वर्णन आर्या सप्तशती बनानेवाले गोवर्द्धन कवि ने किया है और गोवर्द्धन कवि का काव्य जयदेव जी के काल से निश्चित होगा। बंगाली लेखकों ने जयदेव जी का समय पन्द्रहवाँ शतक ठहराया है, पर इस निर्णय में परम भ्रांत हुए हैं, क्योंकि जयदेव जी का काल एक सहस्र वर्ष के पूर्व है और इसमें प्रमाण के हेतु पृथ्वीराज रायसा में चंद कवि का जयदेव जी का और गीतगोविंद वर्णन ही प्रमाण है। जयदेव जी ने गोवर्द्धन कवि का वर्णन वर्त्तमान क्रिया से किया है। इससे अनुमान होता है कि उस काल में गोवर्द्धन कवि था। बंगाली लोगों में कोई बारहवें शतक में लक्ष्मण सेन के काल में जयदेव को मानते हैं और उसके समकालीन गोवर्द्धन इत्यादि कवियों को लक्ष्मण सेन की सभा के पंचरत्न मानते हैं। यह बात भी असंभव है, क्योंकि पृथ्वीराज ग्यारहवें शतक में था और चंद भी तभी था। तो जयदेव चंद के सैकड़ों वर्ष पहिले निस्संदेह हुए हैं, क्योंकि चंद ने प्राचीन कवियों की गणना में बड़ी भक्ति से जयदेव जी का वर्णन किया है। हाँ, यदि लक्ष्मण सेन को पृथ्वीराज के पहिले मानो तो जयदेव उसकी सभा के पंडित हो सकते हैं, नहीं तो समझ लो कि आदर के हेतु इन कवियों का नाम लक्ष्मण सेन ने अपनी सभा में रक्खा है। इससे बाल मति कुल की भाषा और अँगरेजी इतिहासवेत्ताओं का मत लेकर बंगालियों ने जयदेव जी का जो काल निर्णय किया है वह अप्रमाण है यह सिद्ध हुआ और बृहत्कथा उस काल के भी पहिले बनी है यह भी सिद्धांत हुआ।

—:o:—

७. श्री वल्लभाचार्य्य

दोहा

तम पाखंड हि हरत कर, जन मन जलज विकास।
जयति अलौकिक रवि कोऊ, श्रुति पथ करन प्रकाश॥

जो लोग बहुत प्रसिद्ध हैं और जिन को लाखों मनुष्य सिर झुकाते हैं उनके जीवनचरित्र पढ़ने या सुनने की किसकी इच्छा न होगी। इस हेतु यहाँ पर श्री वल्लभाचार्य्य का जीवनचरित्र संक्षेप से लिखा जाता है।

मंद्राज हाते में, तैलंगदेश के आकवीडु जिले में काँकरवल्लि गाँव में भारद्वाज गोत्र, तैलंग ब्राह्मण जाति, पंचप्रवर, यजुर्वेद, तैत्तिरीयशाखा, दीक्षित सोमयागी उपनाम, यज्ञनारायण भट्ट के प्रसिद्ध वंश से लक्ष्मण भट्ट जी की धर्मपत्नी इल्लमगारु के गर्भ से चम्पारण्य में इनका जन्म हुआ।

लक्ष्मण भट्ट जी के तीन पुत्र थे। बड़े रामकृष्ण भट्ट जी युवावस्था ही में संन्यस्त हो गये और केशव पुरी नाम से प्रसिद्ध हुए। मँझले पूर्वोक्ताचार्य और छोटे रामचंद्र भट्ट जी, जिन के कृष्णकुतूहल, गोपाल लीला इत्यादि ग्रंथ हैं। इन्होंने अपने नाना की वृत्ति पाई थी, परंतु विवाह न करके अपना सब जीवन अयोध्या में बिताया।

लक्ष्मण भट्ट जी अपने घर के खान पान से बहुत सुखी थे। वे जब काशी में अपने जाति के ब्राह्मणों का सत्कार करने आये तो मार्ग में बिबिया के इलाके में चौरा गाँव के पास चम्पारण्य में संवत् १५३५ वैशाख वदी ११, * आदित्यवार को मध्याह्न समय आचार्य का जन्म

* वल्लभदिग्विजय में लिखा है :—संवत् १५३५ शाके १४४० वैशाख मास कृष्णपक्ष ११ रविवार मध्याह्न। एक पद श्रीद्वारकेशजी कृत ॥रागसारंग॥

५ ३ ५ १
तत्व गुन बान भुवि माधवासित तरणि प्रथम सौभग दिवस प्रकट लक्ष्मण-सुवन।
धन्य चंपारन्य मन्य त्रैलोक्य जन अन्य अवतार भुवि है न ऐसो भुवन॥१॥
लग्न वृश्चिक कुंभ केतु कवि इंदु सुख मीन बुध उच्च रवि वैरि नाशे।
मंद वृष कर्क गुरु भौम युत सिंह में तमस के योग भुव यश प्रकाशे॥२॥

हुआ। जब ये पाँच वर्ष के हुए तब चैत सुदी ६ के दिन अपने पिता से गायत्री उपदेश लिया और कृष्णदास मेघन को उसी दिन अष्टाक्षर मंत्र का उपदेश करके प्रथम वैष्णव किया।

उसी साल असाढ़ सुदी ८ को काशी के प्रसिद्ध पंडित माधवानंद तीर्थ त्रिदण्डी से विद्याध्ययन किया और छोटेपन ही में पत्रावलम्बन ग्रंथ कर के विश्वनाथ के दरवाजे पर लगा दिया और ड्यौढ़ी पीट कर काशी के पंडितों से पहला शास्त्रार्थ किया। जब इन के पिता काशी से चले तो लक्ष्मणबाला जी में उनका देहांत हुआ। उनकी क्रियादिक के पीछे आचार्य पृथ्वी परिक्रमा को चले और विद्यानगर में जाकर कृष्ण-देव राजा की सभा में सब पंडितों को जीत कर आचार्य पद पाया। संवत् १५४८ के वैशाख वदी २ को ब्रह्मचर्य धर्म से पहिली पृथ्वी परि-क्रमा करने चले और पंढरपुर, त्र्यंबक, उज्जैन होते हुए ब्रज आए और चार महीने श्रीवृंदावन में रह कर श्रीमद्भागवत का पारायण किया और फिर सोरों, अयोध्या वो नैमिषारण्य होते हुए काशी आए।

रिद्ध घनिष्ठा प्रतिष्ठा अधिष्ठान स्थिर बिरह बदनानलाकार हरि को।
यहै निश्चय 'द्वारकेश' इन के शरण और को श्री वल्लभाधीश सरि को ॥३॥

श्री महाप्रभुन की जन्मकुण्डली ऊपर के कीर्तन अनुसार।
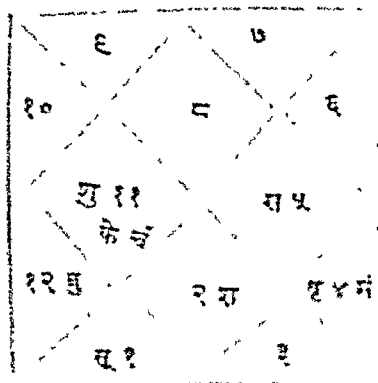
राह में जो पंडित मिलते उन से शास्त्रार्थ करते और वैष्णव धर्म फैलाते थे।

काशी जी से गया और जगन्नाथ जी होते हुए फिर दक्खिन चले गए और संवत् १५५४ में अपना पहिला दिग्विजय समाप्त किया। दूसरे दिग्विजय में बृज में गोवर्द्धन पर्वत पर श्रीनाथ जी का स्वरूप प्रगट कर के उन की सेवा स्थापन किया और तीन पृथ्वी परिक्रमा कर के सारे भारतखंड में वैष्णव मत फैला कर बावन वर्ष की अवस्था में संवत् १५८७ आषाढ़ सुदी २ को काशी जी में लीला में प्राप्त भए। इनके दो पुत्र—बड़े श्री गोपीनाथ जी, छोटे श्री विट्ठलनाथ जी। गोपीनाथ जी के पुत्र श्री पुरुषोत्तम जी, पर उनके आगे वंश नहीं। श्री विट्ठलनाथ जी के सात पुत्र, जिनमें बड़े गिरधर जी और छोटे पुत्र यदुनाथ जी का वंश अब तक वर्त्तमान है। इनका मत शुद्धाद्वैत अर्थात् जगत्‌ब्रह्म के सच्चित्‌रूप से अभिन्न और सत्य, परंतु भक्ति बिना ब्रह्मस्वरूप का ज्ञान फलदायक नहीं। परमोपास्य श्रीकृष्ण और विष्णुस्वामी परमाचार्य, साधन सेवा मुख्य, प्रमाण ग्रंथ, वेदव्याससूत्र, गीता और भागवत। तिलक दो रेखा का लाल ऊर्द्ध्वपुंड्र, शंख, चक्र, शीतल।

आचार्य ने अणुभाष्य, तत्वदीप, निबंध, रसमंडन, श्री मद्भागवत पर सुबोधिनी टीका, सिद्धांत मुक्तावली, पुष्टिप्रवाह मर्यादा, पुरुषोत्तम सहस्र नाम, सिद्धांत रहस्य, अंतःकरण प्रबोध, भक्ति प्रकरण, नवरतन, विवेक धैर्य्याश्रय, पत्रावलंबन, कृष्णाश्रय, भक्तिवर्द्धिनी, जलभेद संन्यासनिर्णय, जैमिनी सूत्रभाष्य, चित्तप्रबोध, निरोधलक्षण, व्यास-विरोध लक्षण, परिवृढ़ाष्टक और वैद्यवल्लभ ये चौबीस ग्रंथ बनाये हैं, जिनमें दोनों सूत्रों का भाष्य और भागवत की टीका बहुत बड़े ग्रंथ हैं।

—❀—

८. सूरदास जी*

दो०—हरि पद पंकज मत्त अलि, कविता रस भरपूर।
दिव्य चक्षु कवि-कुल-कमल, सूर नौमि श्री सूर॥

सब कवियों के वृत्तांत में सूरदास जी का वृत्तांत पहिले लिखने के योग्य है, क्योंकि यह सब कवियों के शिरोमणि हैं और कविता इनकी सब भाँति की मिलती है। कठिन से कठिन और सहज से सहज इनके पद बने हैं और किसी कवि में यह बात नहीं पाई जाती। और कवियों की कविता में एक बात अच्छी है और कविता एक ढंग पर बनती है परंतु इन की कविता में सब बात अच्छी है और इनकी कविता सब तरह की होती है, जैसे किसी ने शाहनशाह अकबर के दरबार में कहा था—

दो०—उत्तम पद कवि गंग को, कविता को बल बीर।
केशव अर्थ गँभीर को, सूर तीन गुन धीर॥

और इस के सिवाय इन की कविता में एक असर ऐसा होता है कि जी में जगह करे। जैसे एक वार्ता है कि किसी समय में एक कवि चला जाता था और एक मनुष्य बहुत व्याकुल पड़ा था। उस मनुष्य को अति व्याकुल देख कर उस कवि ने एक दोहा पढ़ा।

दो०—किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर।
किधौं सूर को पद सुन्यो, जो अस विकल शरीर॥

इस वार्ता के लिखने का यह अभिप्राय है कि निस्संदेह इन के पदों में ऐसा एक असर होता कि जो लोग कविता समझते हैं उनके जी पर इस की चोट लगे।

ये जाति के ब्राह्मण थे और इनके पिता का नाम बाबा रामदास जी था, जो गाना बहुत अच्छा जानते थे और कुछ ध्रुपद इत्यादि भी बनाते थे और देहली या आगरे या मथुरा इन्हीं शहरों में रहा

---

* कवि वचन सुधा जिल्द २ प्राचीन पुस्तकों में और श्री हरिश्चंद्र-चंद्रिका खंड ६ संख्या ५ नवंबर सन् १८७८ ई० में छपा।

करते थे और उस समय के नामी गुनियों में गिने जाते थे। उन के घर यह सूरदास जी पैदा हुए। यह इस असार संसार के प्रपंच को न देखने के वास्ते आँख वंद किए हुए थे। इन के पिता ने इन को गाना सिखाने में बड़ा परिश्रम किया था और इन की बुद्धि पहिले ही से बड़ी विलक्षण और तीव्र थी। संवत् १५४० के कुछ न्यूनाधिक में इनका जन्म हुआ था और आगरे में इन्होंने कुछ फारसी विद्या भी सीखी थी। इनकी जवानी ही में इनके पिता का परलोक हुआ और यह अपने मन के हो गए और भजन तभी से बनाने लगे। उस समय में इनके शिष्य भी बहुत से हो गए थे और तब अपना नाम पदों में सूर स्वामी रखते थे। उन्हीं दिनों में इनने महाराज नल और दमयंती के प्रेम की कथा में एक पुस्तक बनाई थी, जो अब नहीं मिलती।* उस समय इनकी पूर्ण युवा अवस्था थी। और उन दिनों में ये आगरे से नौ कोस मथुरा के रास्ते के बीच में एक स्थान जिस का नाम गऊघाट है, वहीं रहते थे और बहुत से इनके शिष्य इनके साथ थे। फिर ये आचार्य-कुल-शिरोरत्न श्री श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य हुए। तब से यह अपना नाम पदों में सूरदास रखने लगे। ये भजनों में नाम अपना चार तरह से रखते थे—सूर, सूरदास, सूरजदास, और सूरश्याम। जब यह सेवक हुए थे तब इन्होंने यह भजन बनाया था।

भजन—चकई री चलि चरन-सरोवर, जहँ नहिं प्रेम-वियोग।
जहँ भ्रम-निसा होत नहिं कबहूँ सो सागर सुख जोग ॥१॥
सनक से हंस मीन शिव-मुनि-जन नख-रवि-प्रभा-प्रकास।
प्रफुलित कमल निमेषन ससि डर गुंजत निगम सुवास ॥२॥
जेहि सर सुभग मुक्ति-मुक्ताफल सुकृत विमल जल पीजै।
सो सर छाँड़ि कुबुद्धि विहंगम इहाँ कहा रहि कीजै ॥३॥
जहँ श्री सहस सहित नित क्रीड़त सोभित 'सूरज दास'।
अब न सुहाइ विषै रस छीलर वा समुद्र की आस ॥४॥

---

* यह पुस्तक मिल गई है पर इसके रचयिता कोई अन्य सूरदास हैं।(सं०)

फिर तो इन की सामर्थ बढ़ती ही गई और इन्हों ने श्री भागवत को भी पदों में बनाया, और भी सब तरह के भजन इन्हों ने बनाए। इन के श्रीगुरु इनको सागर कह कर पुकारते थे, इसी से इन ने अपने पदों को इकट्ठा करके उस ग्रंथ का नाम सूरसागर रक्खा। जब यह वृद्ध हो गए थे और श्री गोकुल में रहा करते थे, धीरे धीरे इन के गुण शाहनशाह अकबर के कानों तक पहुँचे। उस समय ये अत्यंत वृद्ध थे और बादशाह ने इनको बुलावा भेजा और गाने की आज्ञा किया। तब इनने यह भजन बनाकर गाया।

मन रे करि माधो सों प्रीति।

फिर इन से कहा गया कि कुछ शाहनशाह का गुणानुवाद गाइए। उस पर इन्होंने यह पद गाया।

केदारा—नाहिन रह्यो मन में ठौर।

नंद-नंदन अछत कैसे आनिये उर और ॥ १ ॥
चलत चितवत दिवस जागत सुपन सोवत राति।
हृदय तें वह मदन मूरति छिनु न इत उत जाति ॥ २ ॥
कहत कथा अनेक ऊधो लोग लोभ दिखाइ।
कहा करौं चित प्रेम पूरन घट न सिंधु समाइ ॥ ३ ॥
स्यामगात सरोज आनन ललित गति मृदु हास।
'सूर' ऐसे दरस कारन मरत लोचन प्यास ॥ ४ ॥

फिर संवत् १६२० के लगभग श्रीगोकुल में इन्होंने इस शरीर को त्याग किया। सूरदास जी ने अंत समय यह पद किया था।

बिहाग—खंजन-नैन रूप-रस माते।

अतिसय चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते ॥
चलि चलि जात निकट श्रवनन के उलटि फिरत ताटंक फँदाते।
'सूरदास' अंजन गुन अटके नातरु अब उड़ि जाते ॥

दो०—मन समुद्र भयो सूर को, सीप भये चख लाल।
हरि मुक्ताहल परतहीं, मूँदि गए तत्काल ॥

संसार में जो लोग भाषा काव्य समझते होंगे वे सूरदास जी को अवश्य जानते होंगे और इसी तरह जो लोग थोड़े बहुत भी वैष्णव

होंगे वे इनका थोड़ा बहुत जीवन-चरित्र अवश्य जानते होंगे। चौरासी वार्ता, उस की टीका, भक्तमाल और उस की टीकाओं में इन का जीवन विवृत किया है। इन्हीं ग्रंथों के अनुसार संसार को और हम को भी विश्वास था कि ये सारस्वत ब्राह्मण हैं, इनके पिता का नाम रामदास, इन के माता पिता दरिद्री थे, ये गऊघाट पर रहते थे, इत्यादि। अब सुनिए, एक पुस्तक सूरदास जी के दृष्टिकूट पर टीका [टीका भी संभव होता है उन्हीं की, क्योंकि टीका में जहाँ अलंकारों के लक्षण दिए हैं वह दोहे और चौपाई भी सूर नाम से अंकित हैं] मिली है। इस पुस्तक में ११६ दृष्टिकूट के पद अलंकार और नायिका के क्रम से हैं और उन का स्पष्ट अर्थ और उनके अलंकार इत्यादि सब लिखे हैं। इस पुस्तक के अंत में एक पद में कवि ने अपना जीवनचरित्र दिया है, जो नीचे प्रकाश किया जाता है। अब इस को देख कर सूरदास जी के जीवनचरित्र और वंश को हम दूसरी ही दृष्टि से देखने लगे। वह लिखते हैं कि 'प्रथजगात * प्रार्थज गोत्र वंश में इन के मूल पुरुष ब्रह्मराव † हुए जो बड़े सिद्ध और देवप्रसाद-लब्ध थे। इन के वंश में भौचंद ‡ हुआ। पृथ्वीराज § ने जिस को ज्वाला देश दिया; उस के चार पुत्र, जिन में पहिला राजा हुआ। दूसरा गुणचंद्र। उस का पुत्र सीलचंद्र उसका वीरचंद्र। यह वीरचंद्र रत्नभ्रमर [रणथम्भौर] के

---

*'प्रथ जगात' इस जाति वा गोत्र के सारस्वत ब्राह्मण सुनने में नहीं आए। पंडित राधाकृष्ण संगृहीत सारस्वत ब्राह्मणों की जाति माला में 'प्रथ जगात', 'प्रथ' वा 'जगात' नाम के कोई सारस्वत ब्राह्मण नहीं होते। जगा वा जगातिआ तो भाट को कहते हैं।

† ब्रह्मराव नाम से भी संदेह होता है कि यह पुरुष या तो राजा रहा हो या भाट।

‡ 'भौ' का शब्द हुआ अर्थ में लीजिए तो केवल चंद्र नाम था। चंद्र नाम का एक कवि पृथ्वीराज की सभा में था ! आश्चर्य !!!

§ पृथ्वीराज का काल सन् ११७६।

राजा प्रसिद्ध हम्मीर ※ के साथ खेलता था। इसके वंश में हरिचंद्र † हुआ। उसके पुत्र को सात पुत्र हुए, जिन में सब से छोटा [कवि लिखता है] मैं सूरजचंद था। मेरे छः भाई मुसलमानों के युद्ध ‡ में मारे गए। मैं अंधा कुबुद्धि था। एक दिन कुएँ में गिर पड़ा, तो सात दिन तक उस [अंधे] कूँए में पड़ा रहा, किसी ने न निकाला। सातएँ दिन भगवान ने निकाला और अपने स्वरूप का (नेत्र दे कर) दर्शन कराया और मुझ से बोले कि वर माँग। मैं ने वर माँगा कि आप का रूप देख कर अब और रूप न देखें और मुझ को दृढ़ भक्ति मिले और शत्रुओं § का नाश हो। भगवान ने कहा ऐसा ही होगा। तू सब विद्या में निपुण होगा। प्रबल दक्षिण के ब्राह्मण-कुल ¶ से शत्रु का नाश होगा। और मेरा नाम सूरजदास, सूर, सूरश्याम इत्यादि रखकर भग-

---

※ हम्मीर चौहान, भीमदेव का पुत्र था। रणथंभौर के किले में इसी की रानी इस के अलाउद्दीन (दुष्ट) के हाथ से मारे जाने पर सहस्रावधि स्त्री के साथ सती हुई थी। इसी का वीरत्व यश सर्वसाधारण में 'हमीर हठ' के नाम से प्रसिद्ध है (तिरिया तेल हमीर हठ, चढ़ै न दूजी बार)। इसी की स्तुति में अनेक कवियों ने वीर रस के सुंदर श्लोक बनाए हैं—"मुञ्चति मुञ्चति कोपं भजति च भजति प्रकम्पमरिवर्गः। हम्मीर वीर खड्ग त्यजति च त्यजति क्षमामाशु"। इस का समय सन् १२९० (एक हमीर सन् ११९२ में भी हुआ है)।

† संभव है कि हरिचंद के पुत्र का नाम रामचंद्र रहा हो, जिसे वैष्णवों ने अपनी रीति के अनुसार रामदास कर लिया हो।

‡ उस समय तुगलकों और मुगलों का युद्ध होता था।

§ शत्रुओं से लौकिक अर्थ लीजिए तो मुगलों का कुल [इससे संभव होता है इन के पूर्वपुरुष सदा से राजाओं का आश्रय कर के मुसलमानों को शत्रु समझते थे या तुगलकों के आश्रित थे, इससे मुगलों को शत्रु समझते थे], यदि अलौकिक अर्थ लीजिए तो काम-क्रोधादि।

¶ सेवा जी के सहायक पेशवा का कुल, जिस ने पीछे मुसलमानों का नाश किया। अलौकिक अर्थ लीजिए तो सूरदास जी के गुरु श्री वल्लभाचार्य दक्षिण-ब्राह्मण-कुल के थे।

वान अंतर्ध्यान हो गए। मैं व्रज में बसने लगा। फिर गोसाईं * ने मेरी अष्टछाप † में थापना की इत्यादि। इस लेख से और लेख अशुद्ध मालूम होते हैं, क्योंकि जैसा चौरासी वार्त्ता की टीका में लिखा है कि दिल्ली के पास सीही गाँव में इन के दरिद्र माता पिता के घर इनका जन्म हुआ, यह बात नहीं आई। वह एक बड़े कुल में उत्पन्न थे और आगरे वा गोपाचल में इन का जन्म हुआ। हाँ, यह मान लिया जाय कि मुसलमानों के युद्ध में इतने भाइयों के मारे जाने के पीछे भी इन के पिता जीते रहे और एक दरिद्र अवस्था में पहुँच गए थे और उसी समय में सीही गाँव में चले गए हों तो लड़ मिल सकती है। जो हो, हमारी भाषा कविता के राजाधिराज सूरदास जी एक इतने बड़े वंश के हैं, यह जान कर हम को बड़ा आनंद हुआ। इस विषय में कोई और विद्वान जो कुछ और विशेष पता लगा सके तो उत्तम हो।

भजन—प्रथमही प्रथ जगत में प्रगट अद्भुत रूप।
ब्रह्मराव विचारि ब्रह्मा राखु नाम अनूप॥
पान पय देवी दियो सिव आदि सुर सुर पाय।
कह्यो दुर्गा पुत्र तेरो भयो अति अधिकाय॥
पारि पायन सुरन के सुर सहित अस्तुति कीन।
तासु वंश प्रसिद्ध में भौचंद चारु नवीन॥
भूप पृथ्वीराज दीन्हों तिन्हें ज्वाला देस।
तनय ताके चार कीन्हों प्रथम आप नरेस॥

---

* 'गोसाईं' श्री विट्ठलनाथ जी, श्री वल्लभाचार्य के पुत्र।

† अष्टछाप यथा सूरदास, कुंभनदास, परमानंद दास और कृष्णदास ये चार महात्मा आचार्य जी के सेवक और छीत स्वामि, गोविन्द स्वामि, चतुर्भुज दास और नंददास ये गोसाईं जी के सेवक। ये आठो महाकवि थे।

दोहा—श्री वल्लभआचार्य के, चारि शिष्य सुखरास।
परमानंदऽरु सूर पुनि, कृष्णऽरु कुंभनदास॥१॥
विट्ठलनाथ गोसाईं के, प्रथम चतुर्भुज दास।
छीतस्वामि, गोविंद पुनि, नंददास सुख वास॥२॥

दूसरे गुनचंद ता सुत सीलचंद सरूप ।
वीरचंद प्रताप पूरन भयो अद्भुत रूप ॥
रत्नभौंर हमीर भूपति संग खेलत आय ।
तासु वंश अनूप भा हरिचंद अति विख्याय ॥
आगरे रहि गोपचल में रहो ता सुत वीर ।
पुत्र जनमें सात ताके महा भट गंभीर ॥
कृष्णचंद, उदारचंद जु, रूपचंद सुभाइ ।
बुद्धिचंद प्रकाश चौथो चंद भे सुखदाइ ॥
देवचंद प्रबोध संसृत चंद ताको नाम ।
भयो सप्तो नाम सूरज चंद मंद निकाम ॥
सो समर करि स्याहि सेवक गए विधि के लोक ।
रहो सूरज चंद दृग ते हीन भरि वर सोक ॥
परो कूप पुकार काहू सुनी ना संसार ।
सातएँ दिन आइ जदुपति कीन आपु उधार ॥
दियो चख दै कही सिसु सुनु माँगु वर जो चाइ ।
हौं कही प्रभु भगति चाहत, शत्रु नाश सुभाइ ॥
दूसरो ना रूप देखौं देखि राधास्याम ।
सुनत करुनासिंधु भाख्यो एवमस्तु सुधाम ॥
प्रबल दच्छिन विप्रकुल तें सत्रु ह्वै है नास ।
अपित बुद्धि विचारि विद्यामान माने मास ॥
नाम राख्यो मोर सूरजदास, सूर सुस्याम ।
भए अंतरधान बीते पाछली निसि जाम ॥
मोहि पन सोइ है ब्रजकी बसै सुख चित थाप ।
थापि गोसाईं करी मेरी आठ मद्धे छाप ॥
विप्र प्रथ जगात को है भाव भूरि निकाम ।
सूर है नंदनंद जू को लयो मोल गुलाम ॥

६. सुकरात

इतिहासों से प्रगट है कि यूनान देश प्राचीन काल में हर तरह की विद्या, शिल्प, विज्ञान आदि के लिए अति प्रसिद्ध था, वरन हर एक विद्याओं की खान या उत्पत्ति भूमि कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा। वहीं के बड़े बड़े विद्वान और विज्ञानियों में एक सुकरात भी था। यह ईसाई सन् ४७१ वर्ष पहिले आसीनिया * नगर में पैदा हुआ था और "होनहार बिरवान के होत चीकने पात वाली कहावत के अनुसार छोटी ही उमर में अपने बाप के सौदागरी पेशे का काम झटपट सीख सिखाय भलीभाँति प्रखर हो गया। तब यह हर तरह की विद्याओं के सीखने में प्रवृत्त हुआ और अपना समय यूनान देश के विद्वानों में काटने लगा, जिन के सतसंग से कुछ दिनों के उपरांत अपनी विमल बुद्धि के कारण यह संपूर्ण विद्या, विज्ञान और शिल्प-शास्त्र में भली भाँति कुशल हो यूनान के बड़े बड़े विद्वान् और दार्शनिकों से भी वाद विवाद में भिड़ जाता था। उन का पक्ष खंडन कर अपनी बात अनेक युक्तियों से सिद्ध करता था। यहाँ तक कि कुछ दिनों में संपूर्ण यूनान भर में इस की लोकोत्तर चमत्कार बुद्धि की धूम मच गई। एक बार सुकरात का बाप कहीं बाहर सफर को जाते समय इसे चार हजार लूर, जो उस समय का यूनानी सिक्का था, इस के निज के खर्च के लिए दे गया था। पर इस ने उन सब रुपयों को बतौर ऋण के अपने एक मित्र को दे दिया। उसने रुपये इसे फिर लौटा कर न दिए, पर सुकरात ने इस बात का कुछ भी ख्याल न किया और न रुपए उससे कभी माँगे। मेसिडोनिया का राजा अर्किलीस ने बहुत कुछ चाहा कि सुकरात एक बार उससे किसी बात के लिए कुछ कहे, पर इस ने कभी इस बात की ओर ध्यान भी न किया। इस बुद्धिमान हकीम में धीरज इतना था कि किसी तरह की तकलीफ या रंज जो इस पर आ पड़ते थे तो यह किसी प्रकार और लोगों को उस मानसी व्यथा को नहीं प्रगट होने देता था। उस के मन की सब से बड़ी अभिलाषा जिस के लिए वह अत्यंत लौलीन रहा किया यह थी कि जिस तरह हो सके

* यह ४६६ ई० पूर्व में एथन्स नगर में पैदा हुआ था। [सं०]

हम अपनी जन्मभूमि को कुछ फाइदा पहुँचा सकें और सब लोग कुमार्ग से बच सकें और सीधे राह पर चलें, एक दूसरे की बुराई कभी न चेतें। यद्यपि इस सज्जन पुरुष ने कोई स्कूल या वाज करने को कोई जगह नहीं बनवाया पर अक्सर जहाँ लोगों की बहुत भीड़ भाड़ रहती उन के बीच यह खड़ा हो घंटों तक सदुपदेश किया करता था और दिन रात मनसा वाचा कर्मणा अपने देश के लोगों के हित में तत्पर रहा। हकीम अफलातून सुकरात का बहुत बड़ा शागिर्द था। मरती बार सुकरात ने तीन बात के लिये अपनी प्रसन्नता प्रगट की और हाथ जोड़ कर कहा, हे जगदीश्वर, मैं तुझे कोटि कोटि धन्यवाद देता हूँ कि तूने मुझे बातों के मर्म समझने की बुद्धि दी, यूनान ऐसे देश में जन्म दिया और अफलातून ऐसा शिष्य मुझे दिया। एक दिन अट्रिका का राजा अलसीबिडीस बड़े घमंड में भर यह दून हाँक रहा था कि मेरे पास बड़ा धन है और मैं बड़े भारी राज्य का स्वामी हूँ। जब सुकरात ने उस की यह घमंड की बात सुनी उससे कहा, अलसीबिडीस, तनिक इधर आ और भूगोल के नकशे की ओर ध्यान कर, और बता तेरा राज्य अट्रिका कहाँ पर है। जब उसने नकशे को देखा, घमंड के नशे में जो चूर चूर था सब उतर गया और उस की आँख खुल गई। सिर नीचा कर कहा कि मेरा मुल्क यूनान, जो संपूर्ण यूरोप का एक छोटा सा देश है, उस का भी एक अत्यंत छोटा प्रदेश है। उस की यह बात सुन सुकरात ने कहा, तो ए प्यारे, फिर क्यों इतनी दून की हाँक रहा है? घमंड बहुत बुरा होता है; सर्व शक्तिमान जगदीश्वर के करनय से इस भूमंडल पर एक से एक चढ़ बढ़ कर पड़े हैं, उन के सामने तू किस गिनती में है? थोड़े दिन बाद यूनान के बहुत से अत्याचारी निष्ठुर मनुष्यों ने ईर्ष्या में उनहत्तरवें वर्ष में सुकरात पर यह दोष लगाया कि यह बुड्ढा अथीना नगर के नव युवा लोगों को बुरे चाल-चलन की ओर रुजू करता है, उन के बाप दादाओं के पुराने मज़्हब और मत से हटा कर उन्हें नास्तिक बनाया चाहता है और उन के देवों देवताओं की निंदा करता है। इन दोषों के कारण यह अदालत के सुपुर्द हुआ। अदालत ने इसे विष पीकर मर जाने की सज़ा तज-वीज की। इस निर्दोषी पर प्राणांत दंड की सजा का हुक्म सुन जब

सव उस के वंधु भाई और मित्र विलाप कर और पछता रहे थे, सुकरात अत्यंत धैर्य के साथ विप का प्याला उठा कर घूँट गया और अपने मरने तक सवों को सदुपदेश देता रहा। जब विप इस के सर्वांग में व्याप्त हो गया, यहाँ तक कि बोल भी न सकता था, तव इस ने आँख वंद कर ली और सिधार गया।

—❀—

१०. महाराजाधिराज नेपोलियन

९ वीं जनवरी सन् १८७३ ई० को वारह वज के २५ मिनट पर महाराजाधिराज तृतीय नेपोलियन ने इस असार संसार को त्याग किया। जो मनुष्य मरने के अढ़ाई वर्ष पूर्व एक प्रधान देश का राजा और संसार के सब मनुष्यों में मुख्य वीर और बुद्धिमान था और पाँच लाख योद्धा जिस के साथ चलते थे और जिस ने एक सामान्य मेला किया था उस में सारे संसार के राजा और महाराज दौड़े आए थे, वही नेपोलियन इंगलैंड के एक गाँव में एक छोटे घर में मरा!!! इस से वढ़ के और क्या दुःख होगा कि जिस के एक खेल में रूम और रूस के महाराज पारिस की गलियों में दौड़ते थे, उस के शव के साथ वही ग्राम निवासी लोग!!! क्यों धन के अभिमानियो! तुम अव भी अपने धन का अभिमान करोगे और अपने से छोटों को दुःख देने में प्रवृत्त होगे? यह वही नेपोलियन है, जिस का दादा ऐसा प्रतापी था, जिस ने सारे यूरप को हिला दिया था और सब अंगरेजों को दाँतों चने चववा दिए थे। जर्मनी के युद्ध में नेपोलियन पराजित हुआ, इस का कुछ शोच नहीं, क्योंकि जिस काल में नेपोलियन के स्थान का वा उस की समाधि का वा उस युद्धस्थान का भी चिन्ह न मिलैगा, उस समय तक उन का नाम वर्त्तमान रहेगा।

महाराज नेपोलियन चिजिलहर्स्ट नामक स्थान में गाड़े गए। उस समय वोनापार्ट के वंश के सब लोग और पारिस के समस्त शिल्प-

विद्या के गुणियों का समाज विमान के आगे था। लार्ड साइदनी और लार्ड रफील्ड महारानी विक्टोरिया और युवराज की ओर से आए थे और पचास सहस्र मनुष्य केवल कौतुक देखने को एकत्र थे और राजकुमार और विधवा महारानी भी साथ थीं। शव को समाधि करने के पीछे बोनापार्ट के वंश के सब लोगों ने राजकुमार को पिता के स्थानापन्न भाव से वंदना किया। इंगलैंड, रूस इत्यादि सब राजकीय कार्यालय दस दिवस तक शोक भेष में रहे।

हम को लिखने में अत्यंत खेद होता है कि पृथ्वी पर का एक महा विख्यात पुरुष समाप्त हुआ। इस मनुष्य की सब आयुष्य प्रारंभ से अंत तक चमत्कारिता और फेरफार की एक विलक्षण शृंखला थी। कुछ काल तक राजा और कुछ काल तक रंक सांप्रत सब पराक्रमी राजा इस का आदर करते थे, तो क्या अब इस को तुच्छ मान कर उस की अप्रतिष्ठा करनी चाहिए?

यद्यपि वे राजसिंहासन पर न थे और इंगलैंड में केवल एक साधारण मनुष्य के समान रहते थे तथापि इन के मरण की दुःखवार्त्ता श्रवण कर के राजकीय और राजसभा के अधिकारियों के चित्त अवश्य चकित होंगे और फ्रांस के राज्य-प्रबंधों में इन के मृत्यु से कुछ विलक्षण फेरफार होगा। यह नेपोलियन फ्रेंच लोगों के मुख्य महाराज थे। और इनको तीसरे नेपोलियन कहते थे और बड़े नेपोलियन बोनापार्ट के भतीजे थे। इन का जन्म २० अप्रैल सन् १८०८ ई० में फ्रांस देश में हुआ था और इन के पिता का नाम लुई बोनापार्ट था, जो हालैंड के महाराज थे। जब यह सात वर्ष के हुए थे तब प्रथम नेपोलियन का अंत का पराभव हुआ था। अनंतर इन को और इन के माता को फ्रांस छोड़ कर के अन्य देश में जाना पड़ा। इन्हों ने स्विटज़र्लैंड में विद्याभ्यास आदि किया। पीछे इन को वहाँ की सेना में रहने की आज्ञा मिली। कुछ दिवस पर्यंत थन सरोवर के तट के तोपखाने में अभ्यास किया। तदनंतर सन् १८३० में फ्रांस देश में राज्य संबंधी हलचल देखकर के फिर अपने स्वदेश में आने का उद्योग किया परंतु वह सफल न हुआ; इनको सीमा के बाहर रहने की आज्ञा हुई। एक

वर्ष के अनंतर स्विटजरलैंड छोड़ कर के टरकनी में जाकर रहना पड़ा और रोम के युद्ध में मिल गए। इतने में उन के ज्येष्ठ भ्राता का देहांत हुआ। फिर वहाँ से निकल कर इंगलैंड में जाकर रहे। सन् १८३२ से सन् १८३५ पर्यंत काल ग्रंथ लिखने में व्यतीत किया। इसी काल में उनके चचेरे भाई, प्रथम नेपोलियन के पुत्र नेपोलियन की सहायता करके उसे दूसरा नेपोलियन कहला कर राजसिंहासन पर बैठावें, फ्रांस देश के कई एक मुख्य निवासियों के चित्त में यह बात आई थी और फ्रांस के सीमा तक आगमन की इच्छा करते थे तो इतने में उन का भी देहांत हुआ, इससे फ्रांस के राजसिंहासन पर बैठने का अधिकार उक्त नेपोलियन को प्राप्त हुआ और वह संपादन करने का विचार उन के चित्त में आया। सन् १८३६ पर्यंत प्रयत्न करके स्ट्रासबर्ग पर चढ़ाई किया, परंतु यह प्रयत्न सफल न होकर आपही पकड़े गए। अंत में पारिस में उन को ले गए। उन की माता और दूसरे महाशयों के उद्योग से इनका प्राण बचा और ये यूनाइटेड स्टेट्स भेजे गए। वहाँ एक दो वर्ष रहकर स्विटजरलैंड में लौट आए, तो वहाँ उनके माता का देहांत हुआ। सन् १८३८ में उन की अनुमति से एक महाशय ने स्ट्रासबर्ग के चढ़ाई का वर्णन लिखा, इस से फ्रेंच सरकार को बड़ा खेद हुआ और उक्त महाशय को दंड दिया और नेपोलियन को स्विट्-जरलैंड से निकाल देने के हेतु वहाँ के सरकार को लिख भेजा। परंतु नेपोलियन आपही स्विट्जरलैंड छोड़ कर पुनः इंगलैंड में गए। वहाँ दो वर्ष रहकर सन १८४० में फ्रांस का राज्य मिलने के हेतु प्रयत्न करते रहे और बोलोन पर चढ़ाई किया, परंतु वह भी प्रयत्न निष्फल हुआ और पकड़े गए और इन के सहकारी जितने मनुष्य थे सभों को जन्म भर के हेतु वहाँ के दुर्ग में कारागार हुआ। इस दुर्ग में छः वर्ष पर्यंत रहे। अनंतर सन् १८४६ के मई महीने के २५ वीं तारीख को अपूर्व वेश धारण कर के वेलजिअम में भाग कर फिर इंगलैंड में गए। सन् १८४८ ई० के फ्रांस के युद्ध तक वहाँ रहे। इस युद्ध के समय फ्रांस के निवासियों ने इनको नैशनल असेम्ब्ली का सभासद नियत किया। तदनंतर उन्हीं महाशयों ने इन को अध्यक्ष नियत किया। तारीख २ दिसम्बर सन् १८५१ को उन्हों ने कई महाशयों के विचार से और

पारिस के सर्व प्रसिद्ध राजकीय महाशयों को घेर कर कारागार में डाल दिया और नेशनल असेंब्ली को तोड़ कर के स्वतः मुख्याधिकारी डिक्टेटर नाम से आप प्रसिद्ध हुए। कुछ सेना मार्ग में रख कर प्रबंध करने के अनंतर 'सकल देश का हम को दस वर्ष अध्यक्ष का अधिकार मिला' यह प्रसिद्ध किया और उन्हीं के इच्छानुसार सब अधिकार उनको प्राप्त हुआ और उन्होंने फ्रेंच लोगों की सम्मति से तारीख २ दिसम्बर सन् १८५२ को अपने को महाराज तीसरा नेपोलियन कहवाया।

इंगलैंड के सरकार ने प्रथम उन को मान्य किया और पश्चात् यूरोपियन सब राजाओं ने धीरे धीरे उन को फ्रेंच का महाराज कहना स्वीकार किया। सन् १८५३ के जनवरी की १३ तारीख को उन्हों ने विवाह किया। तदनंतर १८५४ में रशिया के युद्ध का आरंभ हुआ और सन् १८५६ में समाप्त हुआ। इस युद्ध से उन को बड़ी प्रतिष्ठा हुई। सन् १८५९—६० इस वर्ष में उन्हों ने विक्टर इमानुअल की सहायता करके इटली को आस्ट्रिया के अधिकार से निकाल कर स्वतंत्र किया और आस्ट्रिया का पराभव करने से उन की और भी विशेष प्रतिष्ठा बढ़ी और उन को कुछ देश भी इस कारण मिला। इसी समय में महाराज नेपोलियन ने अत्युच्च पद को प्राप्त किया, यह समझना चाहिए। तदनंतर मेक्सिको में इन्होंने प्रयत्न और लड़ाई करके अपना राज्य स्थापन किया, परंतु इस का परिणाम अत्यंत दुःखकारक हुआ। अंत में सन् १८७० में प्रशिया और उनके युद्ध का आरम्भ होकर इन का भली भाँति पराभव ता० २ सेप्टेम्बर सन् १८७० में हुआ। तदनंतर कुछ दिवस जरमनी के दुर्ग में बद्ध रह कर छूट गए। पश्चात् इंगलैंड में आप और अपनी रानी और पुत्र ल्पिरेंज़ीय प्रिंस नेपोलियन यह सब ता० २० मार्च सन् १८७१ को एकत्र हुए। इस पुत्र का जन्म ता० १६ मार्च सन् १८५६ में हुआ था।* अंत का समय उन का साधारण मनुष्य के

---

* इसका नाम यूजीन लुई जीन जोसेफ नेपोलियन था और यह तेईस वर्ष की अवस्था में ज़ूलू युद्ध में १ जून सन् १८७९ ई० को मारा गया। [सं०]

समान परदेश में और परराष्ट्र में व्यतीत हुआ। उन को कई दिन से रोग हुआ, पर शास्त्रोपाय बहुत करते थे, परंतु उससे कुछ न्यून न हुआ और बहुत कृश हो गए। तारीख ६ को दिन के साढ़े बारह बजे उनका देहांत हुआ। जब ये राजसिंहासन पर थे इन्हों ने रोम के प्रथम प्रख्यात महाराज जुलियस-सीज़र का इतिहास लिखा। इन सब वृत्तांत से स्पष्ट विदित होगा कि इन को जन्म भर फेरफार उलट पुलट करते व्यतीत हुआ; उन को भली भाँति स्वस्थता कभी नहीं हुई थी। प्रशियन लोगों से इन का पराभव होने तक सर्व पृथ्वी में इधर दश वर्ष पर्यंत इन के समान बुद्धिमान और सर्व सामान्य गुणयुक्त दूसरा पुरुष नहीं हुआ। ऐसा लोग कहते हैं कि इन को शीघ्र इस दशा में पहुँचने का मुख्य कारण यही है कि इन से कोई परोपकार नहीं हुआ और इन के हाथ जेनरल वाशिंगटन के समान निष्काम और परोपकार से रहित थे और अपनी बुद्धि से कोई उत्तम कृत्य नहीं किया। इसी कारण इनकी कीर्त्ति का उदय और अस्त अंतकाल में हुआ तथापि यह मनुष्य अति उच्च पद को प्राप्त कर के पतन हुआ और परिणाम अत्यंत खेदजनक हुआ। इस से सकल मनुष्यों को खेद हुआ यह वार्ता प्रसिद्ध है।

—८—

११. महाराज जंगबहादुर

श्री मन्महाराज जंगबहादुर का वैकुंठवास होना सब पर विदित है और बहुत से समाचारपत्रों में यह समाचार प्रकाश हो चुका है, परन्तु हमारी लेखनी इस शोक से काले आँसुओं से न रुदन करे यह चित्त नहीं सहन कर सकता। बादशाह रंजीत सिंह को सब लोग भारतवर्ष का अंतिम मनुष्य कहते थे, परंतु महाराज जंगबहादुर ने अपने अप्रमेय बल से उन्हीं लोगों से यह कहलाया कि महाराज जंगबहादुर भी हिंदुस्तान में एक मनुष्य हैं। पूर्वोक्त महाराज ने १८७७ फरवरी की पचीसवीं तारीख को वीर प्रसू भारतभूमि को पुत्रशोक दिया। यों तो अनेक जननी-यौवन-कुठार नित्य जनमते और मरते हैं, पर यह एक ऐसा पुरुष मरा कि भारतवर्ष के सच्चे हितकारी लोगों का जी टूट गया। भादों की गहरी अँधेरी में एक दीप जो टिम टिम कर के झिलमिला रहा था, वह भी बुझ गया। क्या इस अभागिन भारतमाता को फिर ऐसे पुत्र होंगे? नीति के तो मानो ये मूर्तिमान अवतार थे। ऐसे प्रदेश में रह कर जो चारों ओर भिन्न भिन्न राज्यों से घिरा हो, स्वामी की उन्नति साधन करते हुए आस पास के कठिन महाराजों को प्रसन्न रखना नीति सूत्र के परम चतुर सूत्रधार का काम है। हम लोगों के भाग्य ही ऐसे हैं; यह रोना कहाँ तक रोएं।

पूर्वोक्त महाराज प्रतिवर्ष की भाँति दौरा करते हुए शिकार खेलते थे कि एकाएक सुगौली में जा पहुँचे तो रोगाक्रांत हो गए। कहते हैं कि वधांत और दस्त होने से एक साथ बहुत व्याकुल हो गए और उसी समय कहारों को आज्ञा दी कि वाग्मति गंगा पर पालकी ले चलो। वहाँ महारानी महाराज के साथ थीं और उन्होंने अत्यन्त स्वधर्मानी से अपने जगत् विख्यात प्राणपति की उभयलोकसाधिनी अंतिम सेवा की। कहारों के बदले पालकी क्षत्रियों ने उठाई थी। जब नदी पर सवारी पहुँची तब दानादिक कर के महाराज ने इस असार संसार का त्याग किया। उन के भाई जनरल रणोद्दीप सिंह बहादुर उसी समय काठमांडू गए और महाराज से एकांत में यह शोक समाचार कहा। महाराजाधिराज ने उसी समय उन को महाराजजी का पद और उन के भाई को जो जो अधिकार प्राप्त थे सब दिए। महाराज रणोद्दीप सिंह ने

वाहर आकर चालीस हज़ार सेना में से वीस हज़ार को वाहरी और सीमा के प्रांतों पर और बीस हज़ार को नगर के चारो ओर उपस्थित रहने की आज्ञा दिया, जिस से किसी प्रकार के उपद्रव को शंका न हो। इस सेना भेजने की आज्ञा केवल स्वकीय रक्षा के निमित्त थी। राजधानी में दो दिन तक यह समाचार छिपा रहा. दूसरी रात्रि को एक साथ यह वज्रपात सा समाचार नगर में फैल गया, जिस से सारी राजधानी में महा हाहाकार फैल गया। महाराज के संग एक बड़ी रानी और दो छोटी रानी अत्यंत प्रसन्नता पूर्वक सती हुईं। कहते हैं कि जिन रानियों से विशेप प्यार था और सदा महाराज के साथ सती होना प्रकाश करती थीं वे न सती हुईं और इन दोनों छोटी रानियों से प्रकाश में प्रेम विशेप नहीं था और ये सती हुईं। कहाँ हैं और देश की स्त्रियाँ, आवैं, और आँख खोल कर भारतभूमि का प्रेम और पातिव्रत देखैं और लाज से सिर झुका लें।

१२. जज्ज द्वारकानाथ मित्र

स्वर्गीय आनरेवुल द्वारकानाथ मित्र ने सन् १८३१ में हुगली जिला के अंतर्गत आपता से एक कोस दूर अगुनाशी गाँव में एक साधारण हुगली और हवड़ा की कचहरी के मुख्तार विश्वनाथ मित्र के घर जन्म लिया था। वंगालो पाठशाला और हुगली ब्रांच स्कूल में पढ़कर हुगली कालेज में इन्हों ने अंगरेजी विद्याध्ययन कर के अपनी वुद्धि के चमत्कार से सव शिक्षकादिकों को अचंभित किया। ये अंगरेजी भाषा की पारंगतता के अतिरिक्त हिसाव किताव भी वहुत अच्छी भाँति जानते थे। हुगली कालेज से ये हिंदू कालेज में आए, जव इन के शील, औदार्य, चातुर्य, स्वातंत्र्य इत्यादि गुण सव छोटे वड़े के चित्त पर भली भाँति खचित हो गए थे। हुगली कालेज में मुख्य छात्रवृत्ति पाना तथा अपने पहिले ही लेख पर पारितोपिक पाना, कौन्सिल आफ एजुकेशन के

अपनी वृद्धा माता, तीसरी स्त्री, दो बालक और दो विवाहिता बालिका को छोड़ कर ये भारतवर्ष को शून्य कर के अपनी ४३ वर्ष की अवस्था में ता० २५ फेब्रुवरी सन् १८७४ बुध के दिन परलोक को सिधारे।

—❀—

१३. श्री राजाराम शास्त्री

श्रीयुत् पंडितवर राजाराम शास्त्री वेद श्रौतादि विविध विद्यापारीण श्रीयुत् गोविंदभट कार्लेकर के तीन पुत्रों में कनिष्ठ थे। जब ये दस वर्ष के लगभग थे तब इन के पितृचरण परलोक को सिधारे। फिर त्रिलोचन घाट पर एक ऋषितुल्य महातपस्वी श्रीयुत् रानडोपनामक हरिशास्त्री विद्वान ब्राह्मण रहते थे, उन के पास इन्होंने अपनी तरुण अवस्था के प्रारंभ में काव्य और कौमुदी पढ़ कर आस्तिकनास्तिको भयविध द्वादश दर्शनाचार्यवर्य परम मान्य जगद्विदितकीर्ति श्रीयुत् दामोदर शास्त्री जी के पास तर्कशास्त्राध्ययन प्रारंभ किया। थोड़े ही दिनों में इन की अतिलौकिक प्रतिभा देख कर इन को उक्त शास्त्री जी महाशय ने अपनी वृद्ध अवस्था के कारण पढ़ाने का आयास अपने से न हो सकेगा, जान कर श्रीमान् कैलास निवास परमानंदनिमग्न दिगंगनाविख्यात-यशोराशि प्रसिद्ध महा पण्डितवर्य श्रीयुत् काशीनाथ शास्त्री जी के, जिन के नाम श्रवणमात्र से सहृदय पंडितवर समूह गद्गद होकर सिर डुलाते हैं, स्वाधीन कर दिया। और इन के प्रतिभा का अत्यंत वर्णन कर के कहा कि मैं एक रत्न आपको पारितोषिक देता हूँ जो आपके सुविस्तीर्ण शाखाकांडमंडित कुसुमचयाकीर्ण यशोवृक्ष को अपनी यशश्चन्द्रिका से सदा अम्लान और प्रकाशित रक्खेगा। फिर इन्हों ने उक्त महाशय के पास व्याकरणादि विविध शास्त्र पढ़कर चित्रकूट में जाकर उत्तम उत्तम पंडितों के साथ विप्रतिपत्तियों में अत्युत्तम प्रतिष्ठा पाई और श्रीमंत विनायक राव साहेब ने बहुत सन्मान किया। फिर जब संस्कृतादि विविध विद्या कलादि गुणगण मंडित श्रीमान् जान

पेशवाज अंग शोभिताननां
प्रगट लोक मत लोक में
प्रतिपद माघव की प्रथम
प्राणनाथ पद रज सुमिरि
प्राणपियारे प्रेमनिधि
प्रातहि अगहन न्हात
प्रिय दुरगापरसाद गृह
प्रेजुडीस लेश मात्र भंजिका
प्रेम वारि परजन्य जो

फ

फँसा है तू आकर के भौजाल के
फिर उन्हें हैज़ा हुआ फिर सब

व

वंदौं कातिक मास
वंस सखी परिचारिका
वड़ काका उपनंद जू
वड़ी मात श्री रोहिनी
वलीवर्द हैं अति भले
वूँदी राज प्रसिद्ध अति

भ

भरित नेह नव नीर नित
भाई श्री वल्देव जी
भावी श्रीमति रेवती

म

मंगल पिंगल रंगपिठ
मंगल माघव नाम
मंडल दंडी कुंडली
मकार पंच मध्यस्था
मदिरा मादकं मद्यं

की, यहाँ तक कि जब उन्होंने अपने पुस्तक की द्वितीयावृत्ति छपवाई तब उस की भूमिका में लिखा है कि इन के समान संस्कृत व्याकरण जानने वाला इस द्वीप में तो क्या संसार भर में दूसरा कोई नहीं है। वे उक्त पंडित वर राजाराम शास्त्री संप्रति पाँच चार वर्ष से विरक्त हो कर योगाभ्यास में लगे थे और अपने दीन बांधवों का पोषण और दीन विद्यार्थी प्रभृति के परिपालन ही के हेतु अर्जन करते थे और आप साधारण ही वृत्ति से जीवन करते हुए मठ में निवास करते थे। संवत् १६३२ श्रावण शुक्ल १२ के दिन संन्यास लेकर उसी दिन से अन्न परित्याग पूर्वक परमार्थ का अनुसंधान करते करते मरण काल से अव्यवहित पूर्व तक सावधानता पूर्वक परमेश्वर का ध्यान करते करते भाद्रपद कृष्ण ३ गुरुवार को प्रातःकाल ८ बजते बजते परमपद को प्राप्त हो कर यशोमात्रावशिष्ट रह गए।

—:o:—

१४. लार्ड म्योसाहिब *

हा ! यह कैसे दुःख की बात है कि आज दिन हम उस के मरण का वृत्तांत लिखते हैं जिस की भुजा की छाँह में सब प्रजा सुख से कालक्षेप करती थी और जो हम लोगों का पूरा हितकारी था। ऐसा कौन है जो इस को पढ़कर न कंपित होगा और परम शोक से

* कवि वचन सुधा जि० ३ सं० १३ शनिवार २४ फरवरी सन् १८७२ ई० से उद्धृत। (सं०)

रिचर्ड साउथवेल बोर्क, मायो के छठे अर्ल का जन्म २१ फरवरी सन् १८२२ ई० को हुआ था। डबलिन से एल-एल. डी. की डिगरी प्राप्त की। १२ जनवरी सन् १८६६ ई० में भारत के वाइसराय हुए। अजमेर में इन्हीं के नाम पर कालेज स्थापित हुआ। यह ८ फरवरी सन् १८७२ ई० को मारे गए। (सं०)

इसके ऊपर कोई वस्ती नहीं है, परंतु नीचे होप टॉन नामक एक छो
वस्ती है, जिस में कुछ कैदी काम करने वाले रहते हैं। यद्यपि स
ऐसा लोगों ने सोचा था कि समय मिलेगा तो इस पहाड़ी पर जायँ
पर ऐसा निश्चय नहीं था और न वहाँ कुछ तयारी थी। ऐलिस सा
इस पहाड़ी पर नहीं चढ़े और यहाँ पलटन के न होने से यथाम
पलटन बुलाई गई कि वह श्रीमान् की रक्षा करे और वहाँ से अ
कांस्टेबल रक्षा के हेतु संग हुए। श्रीमान् एक छोटे टट्टू पर चल
थे और सब लोग पैदल थे। ऊपर बहुत से ताड़ और सुपारी
पेड़ों से स्थान घना हो रहा था और चोटी पर पहुँच कर श्रीम
पाव घंटे तक सूर्यास्त की शोभा देखते रहे। यद्यपि सूर्य
हो चुका था, पर ऊपर प्रकाश इतना था कि नीचे की घा
दिखाती थी और अंधकार होता जान कर सब लोग नीचे उतर
लगे। मार्ग में केवल दो छुटे हुए कैदी मिले और उन लोगों ने कु
विनती करना चाहा। पर जेनरल स्टुअर्ट ने उन को टोका और क
कि जब श्रीमान् स्वस्थ रहैं तब आओ। इन के अतिरिक्त और को
मार्ग में नहीं मिला। कप्तान लकउड और कौंट वालगस्टन आगे बढ़ ग
थे और एक चट्टान पर बैठे उन लोगों का मार्ग देखते थे। इस सम
अंधेरा हो गया था, परंतु कुछ मार्ग दिखाई देता था और उन लोगों
केवल कुछ मनुष्यों को पानी ले जाते देखा और कोई नहीं मिला
श्रीमान् सवा सात बजे नीचे पहुँचे और उस समय संपूर्ण रीति
अंधेरा हो गया था और एक अफसर ने मशाल लाने की आज्ञा दिया
इस से कई मनुष्य भी संग के उन को बुलाने हेतु दौड़ गए। जब कैदि
के झोपड़े के आगे बढ़े, जेनरल स्टुअर्ट एक आवर्सियर को आज्ञा दे
के हेतु पीछे ठहर गए और श्रीमान् आगे बढ़ गए। उस समय श्रीमा
के आगे दो मशाल और कुछ सिपाही थे और उन के प्राइवेट सेक्रेट
मेबर्न और जमादार भी कुछ दूर हो गए थे और कल्नल जरवि
और मि० हाकिन और मि० एलिन भी पीछे छूट गए थे कि इतने
एक मनुष्य उन के बीच से उछला और श्रीमान् को दो छुरी मार
जिस में से पहिली दहिने कंधे पर और दूसरी बाएँ पर लगी। य
नहीं जाना गया कि वह किस मार्ग से वहाँ आया, क्योंकि चारो ओ

सारँग रसइ विलास ये
सुधाकंठ फलकंठ इन
सुमिरि राधिका प्रानपति
सोभन दीपक नाम के
स्नेह भरन तम हरन दोउ
स्वस्तिक स्यंदन संख सक्ति
स्वान व्याघ्र भ्रमरक दोऊ

हंसी वंसी पिंगला
हरि पद पंकज मत्त अलि
है तू इस शरीर से न्यारा
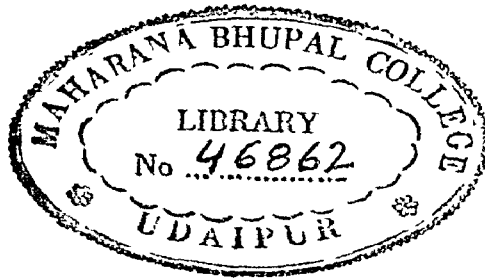
बम्बई जायगे, वहाँ से जहाज पर सवार होंगे, पर श्रीमान् का शरीर सीधा कलकत्ते से ग्लासगो पर जायगा।

नीचे लिखा हुआ आशय का पत्र कलकत्ते के छापे वालों को सर्कार की ओर से मिला है। 'आठवीं तारीख वृहस्पति के दिन श्रीमान् गवर्नर जेनरल बहादुर पोर्टब्लेअर नाम स्थान पर पहुँचे और रास नाम स्थान को भली-भाँति निरीक्षण कर वाइपर नामे टापू में पहुँचे, जहाँ महा दुष्ट गण रहते है। स्टीवर्ट साहेब सुपरिंटेन्डेन्ट ने श्रीमान् के शरीर रक्षा के हेतु बहुत अच्छा प्रबंध किया था कि कोई मनुष्य निकट न आने पावे। पुलिस के व्यतिरिक्त एक विभाग पदचारियों का साथ था, परंतु यह श्रीमान् को क्लेशकर जान पड़ता था और उन्हों ने कई बार निषेध किया। यहाँ से लोग चाथम में गए, जहाँ आरे चलते हैं और लकड़ी काटी जाती है। परंतु यह सब कर्म पाँच बजे के भीतर ही हो गया, तो श्रीमान् ने कहा कि होपटाउन प्रदेश में चल कर हरियट पर्वत पर आरोहण कर के प्रदोष काल की शोभा देखना चाहिए। यह स्थिर कर सब लोग उसी ओर चले और साढ़े पाँच बजे वहाँ पहुँचे। थोड़े से पुलिस के सिपाही साथ में थे, क्योंकि वहाँ यह आशा न थी कि कोई दुष्कर्मा मिले—वहाँ सब रोग ग्रसित और श्रमित लोग रहते हैं। श्रीमान् बहुत दूर पर्यंत एक टट्टू पर आरूढ़ थे और उनके सहचारी लोग भूमि पर चलते थे। हारियट पर्वत पर पहुँच कर लोगों ने किंचित् काल विश्राम किया और फिर तीर की ओर चले। मार्ग में दो श्रमिक व्यक्ति मिले और श्रीमान् से कुछ कहने की इच्छा प्रकट की, परंतु, स्टीवर्ट साहेब ने उनसे कहा कि तुम लोग लिख कर निवेदन करो। दो साहेब आगे थे और और लोग साथ में थे। उन लोगों के तीरपर पहुँचने के पूर्व ही अंधकार छा गया और श्रीमान् के पहुँचते पहुँचते "मशाल" जल गए। तीर पर पहुँच कर स्वीटर्ट साहेब पीछे हट कर किसी को कुछ आज्ञा देने लगे। शेष २० गज आगे नहीं बढ़े थे कि एक दुष्कर्मी हाथ में छुरी लिए द्रुतवेग से मंडल में आया और श्रीमान् को दो छुरी मारी, एक वाम स्कंध पर और दूसरी दक्षिण स्कंध के पुट्ठे के नीचे। अर्जुन नाम सिपाही और हाविन्स साहेब ने उसे पकड़ा और बड़ा कोलाहल मचा और "मशाल" बुत गए। उसी समय श्रीमान् भी या तो करारे

यात्रा के आगे हुआ। उस समय लोगों के चित्त पर कैसा शोच छा गया था उसका वर्णन नहीं हो सकता। ऐसा कौन पाहनचित्त होगा जिसका हृदय उस श्रीमान् के चंचल अश्व को देखकर उस समय विदीर्ण न हुआ होगा। उस के नेत्र से भी अश्रुधारा प्रवाहित होती थी। हा! अब उस घाड़े का चढ़नेवाला इस संसार में नहीं है। उस से भी शोकजनक श्रीमान् के प्रिय पुत्र की दशा थी जो कि विषन्नवदन, अधोमुख, सजलनयन, बाल खोले अपने दोनों चचा के साथ पिता के मृतक शरीर के साथ चलते थे। हा! ऐसी वयस में उन्हें ऐसी विपद् पड़ी। परमेश्वर बड़ा विषमदर्शी दीख पड़ता है। वैसे ही मेजर बर्न भी देखे जाते थे। शोक से आँखें लाल और डबडबाई हुई थीं और अनाथ की भाँति अपने स्वामी वरन् उस मित्र के शोक में आतुर थे, जिनने उन्हें अंत में पुकारा और मरण समय उन्हीं का नाम लिया। हा! यह यात्रा निम्नलिखित रीति पर गवर्नमेंट हाउस में पहुँची। कार्टर मास्टर जेनरल के विभाग का एक अश्वारोही अफसर, फ़र्स्ट बंगाल कैवलरी (अश्वरोही सेना) का एक भाग, कलकत्ते के वालंटीयर्स की रैफल पलटन अस्त्र उलटा लिए हुए और श्री महाराणी की १४ वीं रेजिमेंट का शोकसूचक बाजा बजता हुआ।

श्रीमान् का बाजा
बॉडी गार्ड (शरीररक्षक) पैदल
दुर्ग और कथीड्रल गिरजा के पाद्री श्रीमान् के चापलेन
डाक्टर जे. फेअरर सी. एस. आई., करनेल जी. डिलेन कमांडिंग बाडी गार्ड
क. एफ. एच. ग्रेगरी
एडीकाँग
डाक्टर ओ. बर्नेट
के. एच. वी. लॉकउड एडीकाँग
क. टी. एम जोन्स आर. एस.
एल. टी. डीन
क. आर. एच. ग्रांट एडिकांग

रिपोर्ट में इन की स्थिति का लिखा जाना, और कलकत्ता युनिवर्सिटी के फेलोशिप के हेतु इन का चुना जाना ही इन के गुणों और विद्या का प्रत्यक्ष देता है। एक कानूनी मनुष्य के पुत्र होने के कारण इन की चित्तवृत्ति एक साथ कानून की ओर फिरी और उस में योग्य क्षमता पाकर सन् १८५६ में ये वकीली की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए और उसी वर्ष के मार्च में अपना वर्त्तमान इंटरप्रिटर का पद छोड़ कर इन्हों ने सदर कचहरी में वकीली करना आरंभ किया। इन्हों ने केवल अपने व्यय से एक औषधालय नियत किया और द्रव्यहीन छात्रों को उत्तम परीक्षा होने तक सहायता करते थे और इन के सत्यप्रियता, निष्पक्षपातिता, दीनों पर दया, मुकद्दमों के सूक्ष्म भावार्थों की समझ और कार्य में चातुर्य इत्यादि गुण हाकिमों से लेकर चपरासियों तक विदित हो गए थे। और जज्ज लोग इन को विवाद की जड़ समझने और समझाने से बहुत ही प्यार करते थे। विशेष कर के आनरेबुल पंडित शंभूनाथ अपनी वकीली से लेकर के जज्ज होने की अवस्था तक इन्हें बहुत प्यार करते थे। ठकुरानी दासी के कर-संबंधी बड़े मुकद्दमे में १५ जज्जों के फुलबेंच के सामने मिस्टर डाइन ऐसे प्रसिद्ध वकील और अनेक अंगरेज वकीलों को सात दिन तक अनवरत वाग्धारा-वर्षण से और कानून संबंधी सूक्ष्म बातों की झर से परास्त कर के हिंदू वकीलों में इन्होंने चिरकीर्त्ति का ध्वज स्थापित किया * और गवर्नमेंट की इन पर विशेष दृष्टि से उस समय में जब कि इन की आमदनी एक लाख रुपये साल की थी, ये गवर्नमेंट के मुख्य वकील हुए। और पंडित शंभूनाथ के मृत्यु पर सन १८६७ में ये बिना इच्छा किये भी जस्टिस पीकाक की प्रार्थनानुसार गवर्नमेंट से प्रधान जज्ज नियत किये गये और विचारासन पर बैठ कर जैसी योग्यता और शुद्ध चित्त से सावधान होकर इन्होंने काम किया वह हिंदूसमाज में स्मरणीय है। जस्टिस पीकाक के अतिरिक्त कोई जज्ज इन की योग्यता के तुल्य नहीं गिने जाते थे और एक व्यभिचारिणी के दाय भाग के बड़े मुकद्दमे के समय बीमार होकर सात बरस जज्जी का काम करके अपने ग्राम में

* सन् १८६५ ई० में। (सं०)

यद्यपि अनुचित तो है, परंतु ऐसी शोभा कलकत्ते में कभी देखने में नहीं आई थी और ईश्वर करे न कभी देखने में आवे।

श्रीमान् का शरीर सर्वसाधारण लोगों के देखने के लिये तीन दिन पर्यंत मारव्लहाल रक्खा गया है और सब लोग श्रीमान् का अन्त का दरबार करने वहाँ जायँगे।

हे भारतवर्ष की प्रजा! अपने परम प्रेमरूपी अश्रुजल से अपने उस उपराज्याधीश का तर्पण करो जो आज तक तुम्हारा स्वामी था और जिस की बाँह की छाँह में तुम लोग निर्भय निवास करते थे और जो अनेक कोटि प्रजा लक्षावधि सैन्य के होते हुए भी अनाथ की भाँति एक क्षुद्र के हाथ से मारा गया और एक वेर सब लोग निस्संदेह शोक-समुद्र में मग्न हो कर उस अनाथ स्त्री लेडी म्यौ और उनके छोटे बालकों के दुःख के साथी बनो। हा! लेखनी दुःख से आगे लिखने को असमर्थ हो रही है, नहीं तो विशेष समाचार लिखती। निश्चय है कि पाठकजन इस असह्य दुःख रूपी वृत्त को पढ़ कर विशेष दुःखी होने की इच्छा भी न रक्खेंगे।

श्रीमान् स्वर्गवासी के मरण पर लोगों ने क्या किया।

जिस समय यह शोक रूपी वृत्त श्रीमती महाराणी को पहुँचा श्रीमती ने लेडी म्यौ और वर्क साहेब को तार भेजा कि हम तुम लोगों के उस अपार दुःख से अत्यंत दुःखी हुए और हम तुम लोगों के उस दुःख के साथी हैं जो श्रीमान् लार्ड म्यौ के मरने से तुम पर पड़ा है। सेक्रेटरी आफ स्टेट ने भी इसी भाँति स्थानापन्न गवर्नर जेनरल को तार दिया कि "हम इस समाचार से अत्यंत दुःखी हुए। निस्संदेह भरतखंड ने एक अपना बड़ा योग्य स्वामी नाश किया और यह ऐसा अकथनीय वृत्तांत है कि इस समय हम विशेष कुछ नहीं कह सकते"। महाराज साम ने भी स्थानापन्न गवर्नरजेनरल को तार दिया है कि हम इस दुःख में लेडी म्यौ और भारत की प्रजा के साथ हैं, जो उन लोगों पर अकस्मात् एक योग्य स्वामी के नाश होने से आ पड़ा है। महाराज जयपुर को जब यह समाचार गया एक संग शोकाक्रांत हो गए और राज के किले का झंडा आधा गिरवा दिया और पंचमी का बड़ा दर्बार

म्यूर साहब श्री काशी में आए और पाठशाला में विविध विद्या पारंगत पंडिततुल्य विद्यार्थियों की परीक्षा ली तब उक्त शास्त्री जी महाशय के विद्यार्थिगण में इन की अद्भुत प्रतिभा और अनेक शास्त्रोपस्थिति देख प्रसन्न होकर केवल इस अभिप्राय से कि ऐसे उत्तम पंडित-रत्न का अपने पास रहना यशस्कर है और आजमगढ़ के जिले में उक्त साहेब महाशय प्राड्विवाक थे इस लिए कहीं कहीं हिंदू धर्म शास्त्र के अनुसार निर्णय करने के विमर्श में और उन की बनाई हुई अनेक सुंदर सुंदर कविता के परिशोधन में सहायता के लिए इन को अपने साथ ले गए। उन के साथ चार पाँच वर्ष के लगभग रह कर ग्वालियर में गए। वहाँ बहुत से उत्तम उत्तम पंडितों के साथ शास्त्रार्थ में परम प्रतिष्ठा और राजा की ओर से अत्युत्तम सन्मान पूर्वक विदाई पाकर संवत् १६१२ के वर्ष में काशी आए। तब यद्यपि विधवोद्वाहशंकासमाधि अर्थात् पुनर्विवाह खंडन श्रीमान् परम गुरु श्री काशीनाथ शास्त्री जी तैयार कर चुके थे तथापि उस को इन्हों ने अपूर्व अपूर्व अनेक शंका और समाधानों से पुष्ट किया। इसी कारण उक्त शास्त्री जी महाराज ने अपने नाम के पहिले इन्हीं का नाम उस ग्रंथ पर लिख कर प्रसिद्ध किया। संवत् १६१३ के वर्ष के अंत में श्रीमान् यशोमात्रा विशेष बालंटैन साहेब महाशय ने सांख्यशास्त्राध्यापन के कार्य में इनको नियुक्त किया। उस कार्य पर अधिष्ठित होकर सपरिश्रम पाठन आदि में अनेक विद्यार्थियों को ऐसे व्युत्पन्न किया जिन की सभा में तत्काल अपूर्व कल्पनाओं को देख कर प्राचीन प्रतिष्ठित पंडित लोग प्रसन्न होकर श्लाघा करते थे। संवत् १६२० के वर्ष में राजकीय श्री संस्कृत पाठशालाध्यक्ष श्रीमान् ग्रिफिथ साहेब महाशय ने इन को धर्मशास्त्राध्यापक का पद दिया। तब से बराबर पढ़ा पढ़ा कर शतावधि विद्यार्थियों को इन्हों ने उत्तम पंडित किया, जो संप्रति देशदेशांतर में अपने अपने विद्यार्थिगण को पढ़ाकर इन की कीर्त्ति को आसमुद्रांत फैला रहे हैं। कुछ दिन हुए श्रीमान् लंदन नगर की पाठशाला के संस्कृताध्यापक मोक्षमूलर साहिब महाशय की बनाई हुई अंगरेजी और संस्कृत व्याकरण की पुस्तक का परिशोधन और कई स्थलों में परिवर्तन किया था, जिससे उक्त साहिब महाशय ने अति प्रसन्न होकर इनकी कीर्त्ति अनेक द्वीपांतर निवासियों में विख्यात

के विषय में जितनी निर्दयता की जाय सब थोड़ी है और ऐसे समय हमलोगों को कानून छप्पर पर रखना चाहिए और उस को भरपूर दुःख देना चाहिये।

श्रीमान् लार्ड म्यो स्वर्गवासी के मरने का शोक जैसा विद्वानों की मंडली में हुआ वैसा सर्वसाधारण में नहीं हुआ। इस में कोई संदेह नहीं कि एक बेर जिस ने यह समाचार सुना घबड़ा गया, पर तादृश लोग शोकाक्रांत न हो गए इस का मुख्य कारण यह है कि लोगों में राजभक्ति नहीं है। निस्संदेह किसी समय में हिंदुस्तान के लोग ऐसे राजभक्त थे कि राजा को साक्षात् ईश्वर की भाँति मानते और पूजते थे, परंतु मुसलमानों के अत्याचार से यह राजभक्ति हिंदुओं से निकल गई। राजभक्ति क्या इन दुष्टों के पीछे सभी कुछ निकल गया; विद्या ही का वैसा आदर न रहा। अब हिंदुस्तान में तीन बात का बड़ा घाटा है—वह यह है कि लोग विद्या, स्त्री, राजा का तादृश स्वरूप ज्ञान पूर्वक आदर नहीं करते। विद्या को केवल एक जीविका की वस्तु समझते हैं। वैसे ही स्त्री को केवल काम शांत्यर्थ वा घर की सेवा करने वाली मात्र जानते हैं। उसी भाँति राजा को भी केवल इतना जानते हैं कि वह मुझ से बलवान है और हम उस के वश में हैं। राजा का और अपना संबंध नहीं जानते और यह नहीं समझते कि भगवान की ओर से वह हम लोगों के सुख दुख का साथी नियत हुआ है, इस से हम भी उस के सुख दुःख के साथी हों।

हम आशा रखते हैं कि श्रीमान् गवर्नरजेनरल बहादुर के अकाल मृत्यु का समाचार अब सब को भली भाँति पहुँच गया। हम लोगों ने जिस समय यह संवाद सुना शरीर शिथिलेंद्रिय और वाक्य-शून्य हो गया। यदि कोई आकर कहे कि चंद्रमा में आग लगी है तो कभी विश्वास न होगा। उसी प्रकार भरतखंड के उपराज का एक कैदी के हाथ से मारा जाना किसी समय में एकाएकी ग्राह्य नहीं हो सकता। हाय! देश को कैसा दुःख हुआ! अभी वे ब्रह्म देश की यात्रा कर के अंडमन्स नाम द्वीपस्थित दुखियों के सहायार्थ उपाय करने को जाते थे और वहाँ ऐसी घटना उपस्थित हुई जो कि जस्टिस नारमन का मरण
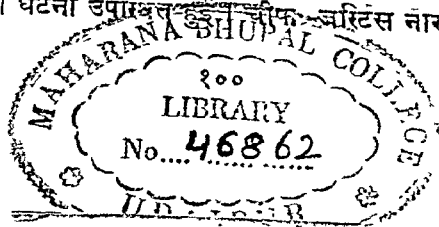
किस की आँखों से आँसू न बहेंगे ? मनुष्य की कोई इच्छा पूरी नहीं होने पाती और ईश्वर और ही कुछ कर देता है। कहाँ युवराज के निरोग होने के आनंद में हम लोग मग्न थे और कैसे कैसे शुभ मनोरथ करते थे, कहाँ यह कैसा विज्जुपात सा हाहाकार सुनने में आया। निस्संदेह भरतखंड के वृत्तांत में सर्वदा इस विषय को लोग बड़े आश्चर्य और शोक से पढ़ेंगे और निश्चय भूमि ने एक ऐसा अपूर्व स्वामी खो दिया है जैसा फिर आना कठिन है। तारीख १२ को यह भयानक समाचार कलकत्ते में आया और उसी समय सारा नगर शोकाक्रांत हो गया।

गुरुवार ८ वीं तारीख को श्रीमान् लार्ड म्यो साहिब पोर्ट ब्लेयर उपद्वीप में ग्लासगो नामक जहाज पर आए और ढाका और नेमिसिस नाम के दो जहाज और भी संग आए और साढ़े नौ बजे उन टापुओं में पहुँचे और ग्यारह बारह के भीतर श्रीमान् ने बर्मा के चीफ कमिश्नर इत्यादि लोगों के साथ कैदियों की बारक, गोरावारिक और दूसरे प्रसिद्ध स्थानों को देखा। उस समय श्रीमान् की शरीर-रक्षा के हेतु बहुत से सिपाही, कांस्टेब्ल और गार्ड बड़ी सावधानी से नियत किए गए और थोड़ी देर जेनरल स्टुअर्ट साहिब की कोठी पर ठहर कर सब लोग जहाजों को फिर गए। अढ़ाई बजे सब लोग फिर उतरे और इन टापुओं के लोगों का स्वभाव जानकर सब लोग बड़ी सावधानी से चले और बड़े यत्न से सब लोग श्रीमान् की रक्षा करते रहे। उस समय श्रीमती लेडी म्यो और सब स्त्रियाँ ग्लासगो जहाज पर ही थीं। ये लोग अबरदीन और ऐंडो होते हुए वाइपर टापू में पहुँचे। यह स्थान रास के टापू से ढाई कोस है और यहाँ १३०० कैदी रहते हैं, जो अपने बुरे कर्मों से काले पानी भेजे गए हैं। भय का स्थान समझ कर कांस्टेबल और सरकारी पलटन रक्षा के हेतु संग हुई और जेलखाना इत्यादि स्थानों को देख कर चथाम टापू में गए और वहाँ जंगलें हैं स्थान देख कर फिर जहाज पर फिर आने का विचार करने लगे। अब ४ बजने का समय आया और सब लोग जहाज पर जाने को प्रस्तुत हो गए थे कि श्रीमान् ने कहा कि हम लोग हैरियट की पहाड़ी पर चढ़ें और वहाँ से सूर्यास्त की शोभा देखें। यह पहाड़ी इसी टापू में है और

प्रतिनिधि मजिस्टर हो के गए। दो बरस के बाद गुड़गाँव के एजेण्ट मजिस्टर और डिपटी कलक्टर हुए। कई एक वर्षों के बाद दिल्ली के मजिस्टर हुए। उस समय यहाँ के गवर्नरजेनरल सर हेनरी हारडिङ्ग थे। उन्हों ने इन की चमत्कार राजनीति देख कर इन को शतद्रु तीरस्थ प्रदेशों का कमिश्नर कर के भेज दिया। १८४८ ई० में लारेन्स लाहौर के रेज़िडेण्ट के प्रतिनिधि हुए। सिक्खों की दूसरी लड़ाई के बाद डलहौसी ने पंजाब शासन करने के लिये एक एडमिनिस्ट्रेशन बोर्ड स्थापन किया। उस में यह और इन के बड़े भाई सर हेनरी लारेन्स, चार्ल्स और मानसेल सभ्य नियुक्त हुए। इन दोनों भाइयों ने राज्य शासन संबंध में अति उत्तम क्षमता और निपुणता दिखाई।✻ जॉन लारेन्स ने १८५७ ई० के गदर में अपनी अद्भुत शक्ति के प्रभाव से पंजाब को शांत रक्खा था, इसी लिये आज तक भारत साम्राज्य अव्याहत है। उस समय लारेन्स पंजाब के चीफ़ कमिश्नर थे। १८५६ ई० में लारेन्स को के. सी. बी. की उपाधि मिली और बाद ही इन को जी. सी. बी. की भी उपाधि मिली थी। १८५८ ई० में यह महाराज बारनट हो कर प्रीवी कौंसिल के सभ्य हुए। १८६३ ई० के डिसेम्बर महीने में भारतवर्ष के गवर्नर-जेनरल हो कर लार्ड एलगिन के उत्तराधिकारी हुए। १८६६ ई० के मार्च महीने में यह लार्ड उपाधि प्राप्त हो कर पार्लियामेण्ट में सभ्य हुए। लार्ड लारेन्स का धर्म विषय में विशेष अनुराग था। इन्हों ने भारतवर्ष के गवर्नमेंट स्कूल समूहों में बाइबल पढ़ाने का प्रस्ताव किया था। और और भी विशेष गुण इन में थे। आज कल यह पार्लियामेण्ट में भारतवर्ष संबंधी विषयों की चर्चा विशेष करने लगे थे। जिस में भारतवर्ष का मंगल हो, इन की यही इच्छा और चेष्टा रहती थी। ऐसे हितकारी मित्र को खोकर जो भारतवर्ष शोकाकुल न होगा, यह कहना बाहुल्य है। उन के सन्मानार्थ १ जुलाई को कलकत्ता के किले का निशान गिरा था और

✻ सन् १८५३ ई० में बोर्ड टूट गया और यह चीफ़ कमिश्नर नियत हुए। सन् १८५९ ई० में पंजाब के प्रथम लेफ़टिनेंट गवनर हुए। (सं०)

लोग घेरे थे। पर ऐसा अनुमान होता है कि पट्टानों के नीचे छिप रहा था। श्रीमान् चोट लगते ही उछले और पास ही पानी के गढ़हे में गिर पड़े। यद्यपि लोगों ने उन को उठाकर खड़ा किया, पर ठहर न सके और तुरंत फिर गिर पड़े। उन के अंत के शब्द यह हैं "They've hit me Burne" (बर्न उन लोगों ने मुझे मारा) और फिर दो एक शब्द कहे वह समझ न पड़े और उन के शरीर को लोग उठाकर जहाज पर लाने लगे, परंतु श्रीमान् तो पूर्व ही शरीर त्याग कर चुके थे और वीरों की उत्तम गति को पहुँच चुके थे। उस दुष्ट को अर्जुन सिंह नामक क्षत्रिय ने बड़े साहस से पकड़ा। कहते हैं कि उस ने पहिले तो उस हत्यारे के मुख पर अपना दुपट्टा डाल दिया और फिर आप उस पर एक साहिब की सहायता से चढ़ बैठा और फिर तो सब लोगों ने उस को हाथों हाथ पकड़ लिया और यदि उस समय विशेष रक्षा न की जाती तो लोग क्रोधावेश में उस को मार डालते। कहते हैं कि जिस समय उन का शरीर जहाज पर लाए हैं उस समय अनवरत रुधिर बहता था। जब श्रीमान् का शरीर ग्लासगो पर लाए उस समय लेडी म्यों के चित्त की दशा सोचनी चाहिये! हा! कहाँ तो यह प्रतीक्षा करती थीं कि प्यारा पति फिर के आता है, अब उस के साथ भोजन करेंगे और यात्रा का वृत्तांत पूछेंगे, कहाँ उस पति का मृतक शरीर सामने आया। हाय हाय! कैसा दारुण समय हुआ है!! परंतु वाह रे इन का धैर्य कि उसी समय शोच को चित्त में छिपा कर सब आज्ञा उसी भाँति किया जैसी श्रीमान् करते थे। जब यह समाचार कलकत्ते में १२ वीं तारीख को पहुँचा उसी समय आज्ञा हुई दुर्गध्वज अर्धोन्नत हो और २६ मिनिट पर सायंकाल तोप छुटें। कानून के अनुसार लार्ड नेपियर गवर्नर-जेनरल हुए और उसी टापू से एक जहाज उन के लाने को भेजा गया और श्रीमान् के भाई भी फिर बुला लिए गए। परंतु लार्ड नेपियर के आने तक आनरेब्ल स्ट्रेची स्थानापन्न गवर्नर-जेनरल हुए। कहते हैं कि लार्ड नेपियर १६ तारीख को चले। जिस दिन वे यहाँ से चले थे उस दिन सब लोग शोक वस्त्र पहरे हुए इनको बिदा करने को एकत्र हुए थे। श्रीमान् का शरीर कलकत्ते में आया और यहाँ से आयर्लैंड गया। लेडी म्यों और श्रीमान् के दोनों भाई और पुत्र गो

पर से गिर पड़े वा कूद पड़े। जब फिर से प्रकाश हुआ तो लोगों ने देखा कि गवर्नर जेनरल बहादुर पानी में खड़े थे और स्कंध देश से रुधिर का प्रवाह बड़े वेग से चल रहा था। वहाँ से लोग उन्हें एक गाड़ी पर रख कर ले गए और घाव बाँधा गया, परंतु वे तो हो चुके थे। जब उन की लाश ग्लासगो नाम नौका पर पहुँची तो डाक्टरों ने कहा कि इन दोनों घाओं में एक भी प्राण लेने के समर्थ था। परंतु उस समय लेडी म्यो का साहस प्रशंसनीय था। उन को अपने "राज" नाश की अपेक्षा भारतखंड के राज के नाश और प्रजा के दुःख का बड़ा शोच हुआ।' स्टुअर्ट साहेब ने इस विषय का गवर्नमेंट को एक रिपोर्ट किया है और एक सार्टिफिकेट डाक्टरों की ओर से भी गवर्नमेंट को भेजा गया है।

शव यात्रा

हा! शनिश्चर (१७ वीं) को कलकत्ते की कुछ और ही दशा थी। सब लोग अपना अपना उचित कर्म परित्याग कर के विपन्नवदन प्रिंसेप घाट की ओर दौड़े जाते थे। बालक अपनी अवस्था को विस्मृत कर और खेल कुतूहल छोड़ उस मानव-प्रवाह में बहे जाते थे, वृद्ध लोग भी अपने चिरासन को छोड़ लकुट हाथ में, शरीर काँपते हुए उन के अनुसरण चले।—स्त्री बेचारी कुलमर्याद-सीमा-परिबद्ध उद्विग्न चित्त होकर खिड़कियों पर बैठी युगल नेत्र प्रसारनपूर्वक अपने हितैषी, परमविद्याशाली और परम गुणवान उपराज के मृतक शरीर के आगमन की मार्ग प्रतीक्षा करती थी। मार्ग में गाड़ियों की श्रेणी बँध गई थी, नदी में संपूर्ण नौकाओं के पताका युक्त मस्तूल झुक रहे थे, मानों नय सिर पटक पटक कर रो रहे हैं। दुर्ग से सेना धीरे धीरे आई और गवर्नमेन्ट हाउस से उक्त घाट पर्यंत श्रेणीबद्ध होकर खड़ी हुई और प्रत्येक वर्ग के पुरुष समुचित स्थान पर खड़े थे। एक सन्नाटा बँध गया था कि पौने पाँच बजे घाट पर से एक शतघ्नी (तोप) का शब्द हुआ और उसका प्रतिउत्तर दुर्ग और कानों नाम नौका पर से हुआ। बाजावालों ने बड़ी सावधानी से अपने अपने वाद्य यंत्रों को उठाया और कलकत्ते के वालंटियर्स लोग आगे बढ़े। एक तोप की गाड़ी पर इंगलैंड के राजकीय पताका से आच्छादित श्रीमान् गवर्नर जेनरल का मृतक शरीर स्थाप-

गुलाम जो सरदार लोगों के पास थे उनमें से २३०००००० गुलामों को दासत्व भाव से मुक्त कराया। यही नहीं वरन् उन को पेट भरने का उद्योग भी बतला दिया। निस्संदेह यह काम जार का, जो सन् १८६१ में हुआ था, अत्यंत प्रशंसा के योग्य है। इन्हों ने सरकारी कालेज स्थापित किए। देश देश में सभा नियत कराई। फ़ेब्रुअरी सन् १८६८ में पोलैंड के लौंडी गुलामों को भी स्वाधीन किया। इस के करने का अभिप्राय यह था कि पोलैंड के सरदारों का ऐश्वर्य्य न्यून हो जाय, क्योंकि पूर्व में उस भूमि के स्वामी वेही लोग थे। ज़ार की विद्याविभाग की ओर दृष्टि इतनी अधिक बढ़ी थी कि उन्होंने यूरप के कालिजों के समान अपनी राजकीय पाठशाला में बड़े बड़े पद स्थापित किए थे और यह प्रबंध बड़ा ही उत्तम था कि प्रत्येक सूबे की ओर से मेंबर भरती होते थे। इन की सभा प्रथम सन् १८६४ में हुई थी, जिस से बहुत कुछ उपकार के पलटे अपकार की संभावना भी हुई। ज़ार ने अपनी प्रजा को युद्ध विद्या में बहुत निपुण किया और राज्य में पंचायती कोर्ट न्याय करने को स्थापित कर दिए। सन् १८६६ में इन्हों ने बुखारे के अमीर से लड़ाई प्रारंभ की, जो डेढ़ वर्ष तक होती रही। इस में रूसी लोग विजयी हुए और समरकंद पर अपना अधिकार जमा लिया। सन् १८६८ में ज़ार ने अपना अमेरिका प्रदेश यूनाइटेड स्टेट्स की गवर्नमेन्ट अमेरिका के हाथ १४००००००) रुपये को बेंच दिया। जब फ्रेंच और जर्मन में लड़ाई होने लगी और जर्मन लोगों ने पैरिस नामक स्थान को घेर लिया तब ज़ार ने सन् १८५६ के संधिपत्र को (जिस से बल्पकसी की सीमा बांधी गई थी) मानना अंगीकार किया। इस से बड़े बड़े राष्ट्रों को बड़ी कठिनता देख पड़ने लगी। सन् १८७१ में इस निमित्त एक कान्फरेन्स हुआ, जिस में ज़ार के इच्छानुरूप संधिपत्र स्थापित हुआ। सन् १८७२ में जब ज़ार बर्लिन नगर को गए तो जर्मन और ऑस्ट्रिया के सम्राट् से भेंट किया। ये दोनों महाराज सेन्टपीटर्सबर्ग में थे। शाहनशाह की भेंट के लिए निमंत्रित होकर आए थे। उस अवसर में बड़ा उत्सव हुआ था। सन् १८७३ में जेनरल कॉफमैन ने खीवा को अधिकार में लाकर इस का कुछ खंड रूसी महाराज्य में जोड़ा था। सन् १८७४ में इन्हों ने अपने

सुबादार मेजर और सरदार बहादुर शिवबख्श अवस्ती

एडिकांग

क. सी. एल. सी. डी रोवक

एडिकांग

ले. सी. हाकिन्स आर. एन.

मेजर ओ. टी. बर्न प्राईवेट सेक्रेटरी।

मुख शोक प्रकाशक।

आनरेब्ल आर. बोर्क, आनरएब्ल टी. बोर्क, मेजर बोर्क।

श्रीमान् का विश्वासपात्र क्लर्क वा लेखक।

श्रीमान् के सेवक।

श्रीमान् के पलटन के अफसर।

श्रीमान् के एतद्देशीय सेवक।

मांझी नौकास्थ लोग और ग्लासगो और डाफनी नाम नौका का तोपखाना।

उक्त नौकाओं के अफसर।

अस्मिन् कालिक गवर्नर-जेनरल।

बंगाल के लेफ्टिनेन्ट-गवर्नर और श्रीमान् कमांडर-इन-चीफ।

बंगाल के चीफ जस्टिस, कलकत्ते के लॉर्ड बिशप, आर्क बिशप और पश्चिम बंगाल के विकार अपॉस्टोलिक।

श्रीमान् गवर्नर-जेनरल के सभा के सभासद।

कलकत्ते के पुइन जज्ज।

सभा के अधिक सभासद।

एतद्देशीय राजे।

कन्सल्स जेनरल। बरमा के चीफ कमिश्नर।

अन्य देशों के कन्सल एजेन्ट।

गवर्नमेन्ट के सेक्रेटरी।

इन के पीछे, और बहुत से लोग पलटन के अफसर इत्यादि और लेफ्टिनेन्ट गवर्नर के साथ के लोग थे।

के साथ गाड़ी में बैठे थे। परंतु कुशल हुई, कि गोली किसी को न लगी केवल एक अर्दली सवार का घोड़ा जख्मी हुआ। दूसरी गोली वह दुष्ट छोड़ता ही था कि बंदूक की नली फट गई और उसी के हाथ में जा लगी। ज़ार का विवाह ता० २८ एप्रिल सन् १८४१ में हेंस की राजकन्या मेरिया एलेक्जांड्रोविना से हुआ, जिससे संतति बहुत हुई। ज्येष्ठ पुत्र स्वर्गवासी निकोलस का जन्म ता० २२ सेप्टेम्बर सन् १८४३ में हुआ था जो सन् १८६५ में मृत्यु के वश हुआ। द्वितीय पुत्र एलेग्जेंडर ता० १० मार्च सन् १८४५ में जन्मे और इन का विवाह ता० ६ नवम्बर सन् १८६६ में डेनमार्क की राजकन्या मेरिया फेडोरविना से हुआ। इन की राजकन्या डचेज़ मेरी का विवाह ता० २३ जनवरी सन् १८७४ में इंगलैंड के राजकुमार ड्यूक आफ एडिम्बरा से हुआ।

Francis I King of France.

इन का जन्म सन् १४६४ सेप्टेम्बर की १२ वीं तारीख को दो पहर बाद १० घंटा ३७ मिनट पर। जन्मदेश का अक्षांश याम्य ४८ अंश, उस समय दशम का विषुवांश ३३ अंश ४८ कला, दशम लग्न ११ राशि ६ अंश, जन्म लग्न ३ राशि ५ अंश ५६ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः।

र०	चं०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	ग्रहाः
५	१०	६	४	४	५	११	रा०
२८	२७	१६	१५	२३	२३	१०	अ०
३६	३०	१०	५०	१५	५४	२२	क०

दक्षिण चन्द्र क्रांतिः १० अंश २ कला। दक्षिण शनिक्रांतिः ६ अंश ४२ कला।

बंद कर दिया और बीस बीस मिनट पर किले से शोक सूचक तोप छूटी और नगर में एक दिन तक सब काम बंद रहा। सुना है कि महाराज कलकत्ते जायंगे। पटियाला के महाराज ने एक शोकसूचक इश्तिहार प्रकाशित किया और अपने दर्बारियों को आज्ञा दिया कि शोक का वस्त्र पहिरें। महाराज कपूरथला ने भी ऐसा ही किया और अवध अंजुमन के सेक्रेटरी को एक पत्र भेजा कि उन के स्मरणार्थ उद्योग करें। कलकत्ते की दशा तो लिखने के योग्य ही नहीं है, न ऐसा कभी पूर्व में हुआ था और न ईश्वर करै होय। बसंत पंचमी का नाच गान सब बंद हो गया और नगर में दूकानें सब कई दिन तक बंद रहीं, बरात नहीं निकलीं, कई लग्न टाल दिए गए। वहां के जस्टिस आफ दि पीस लोग मिल कर एक शोकपत्र श्री लेडी मेयो को देने वाले हैं और भी अनेक शोकसूचक कृत्य हो रहे हैं। बंबई में भी सब दूकानें बंद हो गईं और सब कारखाने बंद हो गए। बनारस में भी इस समाचार के आने से कई स्कूल बंद हो गए और कई शोकसूचक कमेटियां हुईं। बंबई में फरासीस, इटली और रुशिया इत्यादि देशों के राजदूतों ने अपनी कोठियों के राज के झंडे आधे गिरा दिये और सब मिल कर शोक का वस्त्र पहिन कर वहां के गवर्नर के पास गए थे और वहां सब लोगों ने शोक भरी वार्त्ता किया और उस के उत्तर में लाट साहिब ने भी एक सुरस भाषण किया। हा! ईश्वर फिर वह दिन न लावै!!

इस चांडाल दुष्ट हत्यारे शेरअली के विषय में फ्रैंड आफ इंडिया के संपादक से हम पूर्ण सम्मति करते हैं। निस्संदेह उस दुष्ट को केवल प्राण दंड देना तो उस को शुद्ध मोक्ष दान देना है, क्योंकि मरने से डरता तो ऐसा कर्म न करता। संपादक महाशय लिखते हैं कि वे दुष्ट प्राण से प्रतिष्ठा और धर्म को विशेष मानते हैं इस से ऐसा करना चाहिये जिस में इन दुष्टों का शुद्ध भंग हो और धर्म और प्रतिष्ठा दोनों को हानि पहुंचे। वह लिखते हैं (और बहुत ठीक लिखते हैं, फांसी देना ही वरन् इस से बढ़ कर होना चाहिये) कि उस के प्राण अभी न लिये जावें और उसे खाने को वह वस्तु मिले जो "हराम" है और वस्त्र के स्थान पर उस को सूअर के चर्म की टोपी और कुरता पहिनाया जाय। तात्पर्य्य यह कि उस को दुःख और अनादर दिया जाय। ऐसे नीच

जन्म कुंडली ।
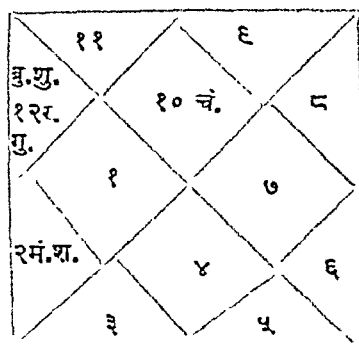
Napoleon III Emperor of France.

इन का जन्म सन् १८०८ एप्रिल की २० वीं तारीख की आधीरात के बाद १ घंटा पर। जन्मस्थान प्यारिस, दशम का विषुवांश २२२ अंश ५६ कला, दशम लग्न ७ राशि १५ अंश २४ कला, जन्म लग्न ६ राशि १ अंश २४ कला।

मुकने न पाया और एक उस से भी विशेष उपद्रव हुआ और फिर भी मुसल्मान के हाथ से। यद्यपि कई अंग्रेजी समाचार पत्र संपादकों ने लिखा है कि जो कारण नारमन साहिब के मारने का था सो श्रीमान् के घात का कारण नहीं हो सकता, परंतु इस में हमारी सम्मति नहीं है। क्योंकि यदि शेरअली के मन यह बात पहिले से ठनी न होती तो वह ऐसे निर्जन स्थान में छुरी ले कर छिपा क्यों बैठा रहता। फिर एक दूसरे कैदी के "इजहार" से स्पष्ट ज्ञात होता है। जिस समय शेरअली ने अब्दुल्ला के और नारमन साहिब के मरण का समाचार सुना कैसा प्रसन्न हुआ और लोगों का निमंत्रण किया। यदि वह उस वर्ग का न होता जो कि तन मन से चाहते हैं कि सरकार "काफिर" है इस लिये उस के बड़े बड़े अधिकारियों के मारने से बड़ा "सवाब" होता है। प्रसन्नता और निमंत्रण का क्या कारण था? फिर वह स्वतः कहता है कि अपने मरण के पूर्व मैं एक बात कहूँगा। वह कौन सी बात हो सकती है! इन सब विषयों को भली भांति दृढ़ कर के तब उस को फाँसी देना उचित है।

—:—

१५. लार्ड लारेन्स

सन् १८११ ई० ४ मार्च को उक्त महात्मा ने जन्म ग्रहण किया था। उन्हों ने पहिले कुछ दिन वहाँ लण्डन डेरी के फायेल कालिज* में शिक्षा लाभ की थी, बाद उस के हेलिबार कालिज† में पढ़ने लगे। १८२९ ई० में सिविलियन हो कर भारतवर्ष में आए। १८३१ ई० में दिल्ली के रेजिडेन्ट और चीफ कमिश्नर के सहकारी हुए। १८३२ ई० में प्रतिनिधि मजिस्ट्रेट और कलक्टर हुए। १८३४ ई० में पानीपत के

* लण्डनडेरी के अंतर्गत फिल्ड का फॉयल कालेज। (सं.)
† हैमेल हॉम्प स्टेडी। (सं.)

कला ४४ विकला, दशम लग्न १ राशि २ अंश ३३ कला, जन्म लग्न ४ राशि १८ अंश ५१ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः संक्रांतयः।

र०	चं०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	उर्नस	ग्रहाः
०	६	११	११	१	११	२	५	रा०
२	२५	७	१४	१५	२७	२१	६	अं०
२५	२४	२२	५२	२८	३६	४८	५६	क०
क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ३	
०	२३	१०	७	१७	१	२२	८	अं०
५८	३०	४६	१६	२	५६	१२	३५	क०

जन्म कुंडली।

२१ तोपें दागी गई थीं। लार्ड हेस्टिंग्स के बाद और किसी का ऐसा सम्मान नहीं किया गया था। वेस्टमिनिस्टर एबे में इन को समाधि दी गई है।*

—※—

१६. महाराजाधिराज ज़ार

ता० १३ मार्च (१८८१ ई०) रविवार के दिन रूस के शाहन-शाह ज़ार राजकीय गाड़ी में बैठकर भजन मंदिर से अपने भवन में जाते थे कि इस बीच में किसी दुष्ट ने फुलकीदार गोला उन की गाड़ी के नीचे फेंका, परंतु वार खाली गया। तब दूसरा फेंका। इस बेर गोला फूट गया और उस के भीतर की बारूद और गोलियों ने मारा और उड़ कर गाड़ी को विध्वंस किया। और ज़ार के पैरों का पता न लगा। केवल दो घण्टा प्राण रहा, पश्चात् शाहनशाह रूस पंचत्व को प्राप्त हुए। इस गोले ने कई मनुष्यों का प्राण लिया। इस दुष्ट घातक के पकड़ने का शोध हुआ और पकड़ा गया। इस की अवस्था केवल २१ वर्ष की है; नाम इस का रोसा काफ है। यह खनन विद्या में निपुण है। पहले तो इस दुष्ट ने अपने अपराध को अस्वीकार कर के बचाव किया था, पर यह गुप्तभाव कब छिपे। अंत में इस ने सब कुछ अपने मुख से प्रगट किया। इस घोर विपत्ति से रूस में हाहाकार मचा है। यूरोप के लोगों को भी बड़ा दुःख हुआ है। राजकुमार ज़ारविच् रूसी राज्य के उत्तराधिकारी अपने पिता के पद पर नियुक्त हुए और उन का राजकीय नाम "तृतीय एलेक्ज़ैंडर" रक्खा गया है। ड्यूक आफ़ एडिम्बरा सपत्नीक सेंटपीटर्सबर्ग में गये हैं। इंगलैंड में इस मास भर अधिकारी लोग शोकसूचक वस्त्र धारण करेंगे। हाउस आफ़ कामंस और लार्ड्स की तरफ से दुःख सूचक पत्र भेजे जायँगे। निहिलिस्ट लोग इस दुष्ट कर्म के करने में बहुत दिन से लगे हुए थे और कई बेर

* २७ जून सन् १८७९ ई० को इनकी मृत्यु हुई थी। (सं०)

सिकन्दर की जन्म कुण्डली ।
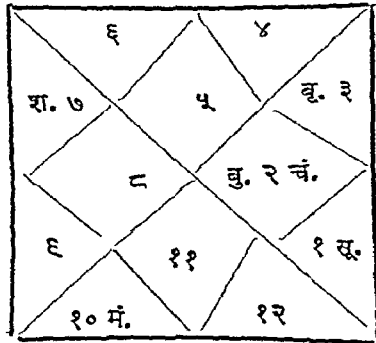
रावण की जन्म कुंडली ।

—❀—
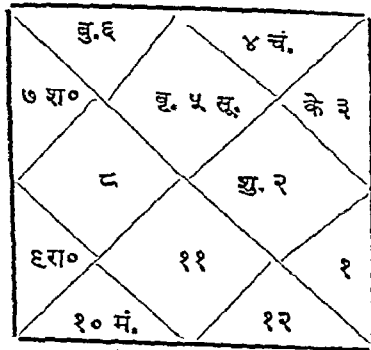
सब लेख सन् १८७२-७४ के तथा
एक सन् १८८२ का विभिन्न
पत्रिकाओं में प्रकाशित
होने पर संगृहीत
हुआ।

दस पंद्रह हज़ार की पुस्तक अंगरेज़ी भाषा की संग्रह की थीं और सब के ऊपर फारसी में उस का नाम, विषय, कवि, मूल्य आदि का वृत्तांत लिखा हुआ था। उनका सरस्वती भंडार और औषधालय तीन लाख रुपये का समझा जाता था। किंतु हाय! वह अमूल्य भंडार नष्ट हो गया। कीट, दीमक, छुईमुई, चूहे आदि उन अमूल्य ग्रंथों को खा गए। उनके स्वकार्य निपुण छ पौत्र और अनेक प्रपौत्रों के होते भी यह अमूल्य संग्रह भस्मावशेष हो गया। मैं ने दो बेर इस भंडार का दर्शन किया था। रुपये का चार आना तो पहली ही बेर देखा था, दूसरी बेर एक आना मात्र बचा पाया। सो भी खंडित छिन्न भिन्न। इस पुण्य-कीर्ति-उदार मनुष्य की उदारता और अध्यवसाय और उस के संगृहीत वस्तु की यह दुर्दशा देख कर मेरी छाती फट गई। इस्कन्दरिया का पुस्तकालय मानो अपनी आँखों से जला हुआ देख लिया। अस्तु! ईश्वर की यही गति है!! नाशान्ताः संचयः सर्वे!!!

उन के प्रपौत्र और अपने फुफेर भाई राय प्रह्लाद दास से कह कर उस संग्रह की भस्मावशिष्ट हड्डियों में से मैं टूटे फूटे दस पाँच ग्रंथ ले आया हूँ। इन में कुछ सर्कारी पुराने छपे हुए कागज़ और कुछ खंडित पुस्तकें हैं। इस प्रबंध में बहुत सी बात उन्हीं सबों में से चुन कर लिखी जायँगी, इस हेतु उस सुगृहीतनामा महापुरुष का भी थोड़ा वृत्तांत लिखे बिना जी न माना।

प्रकृति मनुसरामः

मैं ने बादशाहदर्पण नामक अपने छोटे इतिहास में अकबर और औरंगज़ेब की बुद्धि और स्वभाव का तारतम्य दिखलाया है। अब पूर्वोक्त राजा साहब की अँगरेज़ी किताबों में सन् १७८२ से लेकर १८०२ तक के जो पुराने एशियाटिक रिसर्चेज़ के नंबर मिले हैं, उन में जोधपुर के राजा जसवंत सिंह का वह पत्र भी मिला है जो उन्होंने औरंगज़ेब को लिखा था और श्रीयुक्त राजा शिवप्रसाद सी० एस०

करता है और गंगाजल छोड़ कर और पानी नहीं पीता उस जलालुद्दीन की जय ॥ ३ ॥

अंग वंग कलिंग सिलहट तिपुरा कामता (कामटी ?) कामरूप अंध कर्णाटक लाट द्रविड़ महाराष्ट्र द्वारका चोल पांड्य भोट मारवाड़ उड़ीसा मलय खुरासान कंदहार जम्बू काशी ढाका बलख बदखशाँ और काबुल को जो शासन करता है ॥ ४ ॥

कलियुग की महिमा से घटते हुए वेद गऊ द्विज और धर्म की रक्षा को सगुण शरीर जिस ने धारण किया है उस अप्रमेय पुरुष अकबरशाह को हम नमस्कार करते हैं ॥ ५ ॥

पाठक गण ! अकबर की महिमा सुनी । यह किसी भाट की बनाई नहीं है, एक कट्टर कछवाहे क्षत्रिय महाराज की बनाई है, इसी से इस पर कौन न विश्वास करैगा । उसने गो-वध बंद कर दिया था यह कवि परंपरा द्वारा तो श्रुत था, अब प्रमाण भी मिल गया । हिंदूशास्त्रों को वह सुना करता था । यह तो और इतिहासों में लिखा है कि वह आदित्यवार को पवित्र समझता था । देखिए उसके इस कार्य से, गायत्री के देवता सूर्य के आदर से, हिंदूमात्र उससे कैसे प्रसन्न हुए होंगे । मैं समझता हूँ कि उस समय सूर्यवंशी राजा बहुत थे और सूर्य को यह सम्मान दिखा कर अकबर ने सहज उन लोगों का चित्त वश कर लिया था । योग साधने से हिंदुओं की प्रसन्नता और शरीर की रक्षा दोनों काम हुए । विशेष यह बात जानी गई कि वह गंगाजल छोड़ कर और पानी नहीं पीता था । यह उस की सब क्रिया हिंदुओं को वश करने को एक महामोहनास्त्र थीं । इसी से उसको परमेश्वर का अवतार तक कहने में हिंदुओं ने संकोच न किया । उस को लोग जगद्गुरु पुकारते थे, यह आगे वाले महाराज जसवंत सिंह के पत्र से प्रकट होगा । इसके विरुद्ध औरंगजेब से हिंदुओं का जी कैसा दुःखी था और उस समय राज्य की भी कैसी अवनति थी यह भी इस पत्र ही से प्रकट हो जायगा, हम विशेष क्या लिखें ।

विदित हो कि इस पत्र के लेखक महाराज जसवंत सिंह जोधपुर के महाराज गजसिंह के द्वितीय पुत्र थे । सन् १६३८ में गजसिंह युद्ध में

किले में चली आई और देह ले गई और डेरे में जा कर सती हो गई। इस घटना के वर्णन में राजपुताने में कई ग्रंथ, ख्याल आदि बने हैं और अब तक इस लीला को नट, सुथरेसाही, जोगी, भवैये, गवैये गाया करते हैं।

अथ पत्र

"सब प्रकार की स्तुति सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर को उचित है और आप की महिमा भी स्तुति करने के योग्य है, जो चंद्र और सूर्य की भाँति चमकती है। यद्यपि मैंने आज कल अपने को आप के हाथ से अलग कर लिया है किंतु आपकी जो सेवा हो उस को मैं सदा चित्त से करने को उद्यत हूँ। मेरी सदा इच्छा रहती है कि हिंदुस्तान के बादशाह रईस मिर्जा राजे और राय लोग तथा ईरान तूरान रूम और शाम के सरदार लोग और सातों बादशाहत के निवासी और वे सब यात्री जो जल या थल के मार्ग से यात्रा करते हैं मेरी सेवा से उपकार लाभ करें।

यह इच्छा मेरी ऐसी उत्तम है कि जिस में आप कोई दोष नहीं देख सकते। मैंने पूर्वकाल में जो कुछ आप की सेवा की है, उस पर ध्यान कर के मुझ का अति उचित जान पड़ता है कि मैं नीचे लिखी हुई बातों पर आप का ध्यान दिलाऊँ, जिस में राजा और प्रजा दोनों की भलाई है। मुझ को यह समाचार मिला है कि आप ने मुझ शुभ-चिंतक के विरुद्ध एक सैना नियत की है और मैंने यह भी सुना है कि ऐसी सैनाओं के नियत होने से आप का खजाना जो खाली हो गया है उस को पूरा करने को आप ने नाना प्रकार के कर भी लगाए हैं।

आप के परदादा मुहम्मद जलालुद्दीन अकबर ने, जिनका सिंहासन अब स्वर्ग में है, इस बड़े राज्य को ५२ बरस तक ऐसी सावधानी और उत्तमता से चलाया कि सब जाति के लोगों ने उससे सुख और आनंद उठाया। क्या ईसाई, क्या मूसाई, क्या दाऊदी, क्या मुसल्मान, क्या ब्राह्मण, क्या नास्तिक सब ने उन के राज्य में समान भाग से राजा का

कि ईश्वर को मनुष्य मात्र का स्वामी लिखा है, केवल मुसलमानों का नहीं। उस के सामने गवर और मुसलमान दोनों समान हैं। नाना रंग के मनुष्य उसी ने इच्छा से उत्पन्न किये हैं। आप के मसजिदों में उस का नाम लेकर चिल्लाते हैं और हिंदुओं के यहाँ देवमंदिरों में घंटा बजाते हैं, किंतु सब उसी को स्मरण करते हैं। इस से किसी जात को दुःख देना परमेश्वर को अप्रसन्न करना है। हमलोग जब कोई चित्र देखते हैं, उसके चितेरे को स्मरण करते हैं और कवि की उक्ति के अनुसार जब कोई फूल सूँघते हैं उस के बनानेवाले को ध्यान करते हैं।

सिद्धांत यह है कि हिंदुओं पर जो आप ने कर लगाना चाहा है वह न्याय के परम विरुद्ध है। राज्य के प्रबंध को नाश करनेवाला है और बल को शिथिल करने वाला है तथा हिंदुस्तान के नीत रीत के विरुद्ध है। यदि आप को अपने मत का ऐसा आग्रह हो कि आप इस बात से बाज न आवैं, तो पहिले रामसिंह से, जो हिंदुओं में मुख्य है, यह कर लीजिए और फिर अपने इस शुभचिंतक को बुलाइए। किंतु यों प्रजापीड़न वा रण भङ्ग वीर धर्म उदारचित के विरुद्ध है। बड़े आश्चर्य की बात है कि आप के मंत्रियों ने आप को ऐसे हानिकर विषय में कोई उत्तम मंत्र नहीं दिया।"

महात्मा कर्नल टॉड साहब लिखते हैं कि यह पत्र महाराज जसवंतसिंह ने नहीं लिखा था, महाराणा राजसिंह ने लिखा था।

—❀—

२. कन्नौज के राजा का दानपत्र

यह प्रसिद्ध दानी कन्नौज के राजा गोविंदचंद के अन्यतर दानपत्र की प्रति है। यह राजा बड़ा ही दानी था।

ताम्रपत्र।

स्वस्ति। अकुण्ठोत्कुण्ठवैकुण्ठकण्ठपीठलुठत्करः।
संरम्भः सुरतारंभे सश्रियःश्रेयसेऽस्तुवः॥ १॥

परिलिखितग्रामः सजलस्थलः सलोहलवणाकरः समत्स्यकारः सगर्तीखरः समधूकाम्रवनवाटिका विटपतृणप्रतिगोचरपर्यन्तश्चतुराघाटशुद्धस्वसीमा-पर्यन्तः सोङ्काधः संवत् ११६५ माघ वदि ६ सोमदिने प्रयागे वेण्यां स्नात्वा विधिवन्मन्त्राद्देव मुनिमनुजभूत पितृणां स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुसहस्रमुष्णरोचिषमुपस्थायौषधिपतिसकलसम्भंस मभ्यर्च्च त्रिभुवनत्रातुर्वासुदेवस्य पूजां विधायप्रचुरपायसेनहविषा हविर्भुजंहुत्वा मातापित्रोरात्मनश्च पुण्यशोभिवृद्धये कौशिकगोत्राय कौशिकावदल्य विश्वामित्र देवरातत्रिप्रवराय पण्डित श्रीकैकप्रपौत्राय पण्डित श्रीमहादित्य पौत्राय पण्डित श्रीसाद्तपुत्रायपण्डित श्रीविद्याकचसंभाराय ब्राह्मणाय अस्सा भिर्गोकर्णकुशलतापूतकरतलोदकपूर्वमाचन्द्रार्कं यावदाशासनी कृत्यप्रदत्तोमत्वाराद्यदीयमानभाग भोग कर प्रवणिकर प्रभृति समस्ता-दायानांविधियाम्रयदास्यन्निति भवन्तिचात्र। श्लोकाः।

भूमिंयःप्रातगृह्णाति यश्चभूमिंप्रयच्छति। उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतंस्वर्गगामिनौ। शंखंभद्रासनंछत्रं वराश्वावरवारणाः। भूमि-दानस्यचिन्हानि फलमेतत्पुरंदर। सर्वानेतान्भाविनःपार्थिवेंद्रान्-भूयोभूयो याचतेरामभद्रः। सामान्योयंधर्मसेतुर्नृपाणां काले-कालेपालनीयोभवद्भिः। बहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभिःसगरादिभिः॥ यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यतस्यतदाफलं। स्थलमेकंग्राममेकं भूमे-रप्येकमंगुलं। हरन्नरकमाप्नोति यावदाभूतसुसंलवं। ठक्कुर श्रीवालिकेन लिखितमिदम्।

—:o:—

काशी क्वीन्स कालिज (Queen's College Benares) के फाटक पर यह लेख है—

तालुकदार दाउदपुर के राय पृथ्वीपाल सिंह ने
अपने कीर्त्ति के लिये दो द्वार रचवाये।

(१)

रामरास बाबू सुघर, वैश्यवंश औतार।
हर्षचन्द्र तिन के तनय, रचवाये दुइद्वार॥

१। कारितो यन्त्रवज्रासन वृहत्गभर्भकुटी प्रंमादमर्द्धत्रिकोट्यां भश्म-तैर्म्मधुलेपकस्यपुन लटिकः गिक रेदगतुट मादन्यार्क तारकं भगवते वुद्धाय ×× रदानेन घृतप्रदोपः × रारिध दिए प्रति समधने रदनी मायां च प्रदहं घृतप्रदीपैः गुणे शतदानेनापारेण कारितः विहारेपि भगवते रेत्यपद्ध।

२। हम्रटां पाच्चय नः धिकरो धमशत तं दं वं ग प्रदेष च च नं पं × × × × पं × मनीन् माधुरं लातीतं तदसं सर्व्वं चा प्रहतत × त्तनुमत्पादितं तदेतत् सर्व्वं यन्मथा वुद्धो प्रचेतमभारंतन ।

मेजर (Major Mead) ने बोधगया के बड़े मंदिर की एक कोठरी से एक मूर्त्ति निकाली थी उस के पांव के समीप निम्न लिखित लिपि थी—

इदमतितरचित्रं सर्व्वं सत्वानुकम्पिने।
भवनवरमदारजितमाराय पतये॥
सु (शु) द्धात्मा कारयामास बोधिमार्गरतोयतिः।
बोधि षे (से) णो (नो) तिविख्यातो दत्तगल्लनिवासकः॥
भववन्धविमुक्त्यार्थं पित्रोर्वन्धुजनस्य च।
तथोपाध्यायपूर्वाणामाहवाग्रनिवासिनां॥ ली॥

ए० ग्रोट साहिब (A. Grote Esqr.) प्रेसिडेन्ट वंगाल एशियाटिक सोसाइटी ने निम्नलिखित लिपि, जो एक सांढ़ (नंदी) की मूर्ति के पीठ पर लिखी हुई है, एशियाटिक सोसाइटी में भेज दी थी। यह लेख कुटिलाक्षर (Kutila Character) में लिखा हुआ है। भीमकउल्ला के पुत्र श्री सुफंदी भट्टारक ने यह मूर्ति संवत् ७८१ में सन्तति के लिए चढ़ाई थी।

ए सम्व ७८१ वैशाख वदि ६ परुध्य ग्रामव × × × × त्तम भिमक उल्लसुतेन श्री सुफन्दिनभट्टारक अ (?) ग्र (?) त्त मतया × × । त्मनापत्यहेतोः वृषभट्टारकप्रतिष्टितेति।

---

(१०) शैलेन्द्रस्य द्विमूर्त्तीननवरतगलद्दानमत्तद्विरेफश्रेणीसङ्कीर्णनाद-प्रतिगजविजयोद्गारिभेरीविरावान्। दृष्ट्वा यो दन्तिशास्त्रे पु गुरु रवि गुरुः प्रो गु × × × × लोलः कालज्ञः पुण्यपूतः कलयति मृगवद्ध-न्यकान्वारणेन्द्रान्॥

(११) येनागाधतया जितो जलनिधिः शान्त्या मुनिस्तेजसा भानुः कान्ततया शशी मृगपतिः शौर्य्येण नीत्या गुरुः।
कर्णस्त्यागितया विलासविधिना दैत्यद्विपामीश्वरः वाचालापितया यथार्थ-पदया नैवास्ति यस्योपमा॥

(१२) धत्ते यः श्रीनिधानं हृतकलिचलितं धर्ममामूलमुच्चैरुत्तुङ्गैः स्वर्गमार्गप्रणयिभिरतुलैः कीर्त्तनैः शुद्धकीर्त्तिः कुर्वतसेवामनिन्द्यामनुदिन-ममलैरन्नपानैर्यतीनां शिष्टैसत्कारयत्रैर्भव इव चलितं रावणेनाच-लेन्द्रम्॥

(१३) तेन प्रसन्नमनसा जितमारशत्रोरुत्तीर्णजन्मजलधेरस्तृ × × भवैकबन्धोः। श्रीमद्विशुद्धगुणरत्नस—चिप्रेन्द्रशेखरितपादसरोजरेणोः॥

(१४) मोहान्धकारनिधनोद्गतभास्करस्य संग्रामरेणुशमनैकधना-घनस्य। द्वेषोरगोद्धरणकर्म्मणि तार्द्यस्य गिरिदारणवज्रधाम्नः॥

(१५) स्फुर्जत्प्रवादिकरियूथमृगाधिपस्य नैरात्म्यसिंहनिनदप्रविभा-वितस्य। धर्म्माभिषेकपरिपूतजगत्त्रयस्य—गुणरत्नमहार्णवस्य॥

(१६) निर्म्मापिता गन्धकुटीयमुच्चैः सोपानमालेव दिवो दिदेश। गृहीतसारेण धनोदयानामनित्यताभावितमा—॥

(१७) तरामर्शविचक्षणेन शरत्प्रसन्नेन्दुमनोहरेण। मदानभिज्ञेन गुणाभिरामैरावर्जिताजय्यसमागमेन॥

(१८) मुनिरिह गुणरत्न—प्रजानामभयपथविदर्शी सन्निधत्तां सदैव। विदधदभिमतानां सिद्धिमभ्युन्नतीनामनयविमुखबुद्धेर्दायकस्यास्य भूयः॥ त देवराज सम्वत् १५ श्रावणदिनपञ्चम्यां। सिंहलद्वीपजन्मना पण्डितरत्न श्रीजनभिक्षुणा॥

निरखेल प्रशस्ति समलंकृतं सपादलक्ष शिखरिव समेण राजाधिराज श्रीमदशोकचन्द्रदेवकनिष्ठभ्रातृ श्रीदशरथनामधेयकुमारपादपद्मोपजीवि भारादागारिक सत्यव्रतपरायणाविनिवर्त्तनीयबोधिसत्व चरितस्कन्धिस्वकुलदीय श्री सहस्रपातु नामधेयस्य महात्मक श्रीचाट ब्रह्मसुतस्य महामहात्मक श्री ऋषि ब्रह्मपौत्रस्य यदत्रपुरायं तद्भट्टाचार्य्योपाध्याय मातापित्र शर्वाङ्ग सङ्गता सकल पुण्यराशि रनन्तविज्ञानफलावाप्तत्र इति श्रीमल्लक्षण सेनदेवपादानामतीतराज्ये सं० ७६ वैशाख वदि १२ गुरौ ।

बोधगया के बड़े मंदिर के बारहदरी के सामने एक छोटे मंदिर में एक संगमरमर के तख्ते पर तीन लिपि खोदी हुई है। यह तख्ता कुछ नीले रंग का चार फीट लंबा और दो फीट ३ इंच चौड़ा है। इस के आगे की ओर दो लिपि है, पहली अपभ्रंश पाली भाषा में और दूसरी ब्रह्मा देश की भाषा में है। और तख्ते की पिछली ओर ३० पंक्ति ब्रह्मा देश की भाषा में है ? परंतु यह संस्कृत नहीं है। उन में से केवल पालीलिपि को यहाँ नागरी अक्षर में प्रकाश किया है—

१। नमस्तस्मै भगवते अरहते सम्यक् सम्बुद्धाय ॥ जयतु ॥ बोधिमूले जिनाः सर्व्वे सर्व्वजुतो तथा अयं। जयतं धम्मगतापि बोधिप्रसादनेन सा। पथ्यावर्त्तश्लोक। अयं महाधम्मराजा अनेकशेनिभप्रतिच्छद्दन्तगजराजस्वामि अनेकशतामं आदित्यकुलसम्मतानं। पीतुपीतामहअव्ययकपाय्यकादिमहा धम्मराजन्नं सम्यकृदि।

२। ट्टिकानं धम्मिकानं प्रवरराजवंशानुक्कमेण असमूमितक्षेत्रिय वंशजो। सन्ध्याशीलाद्यनेकगुनाधिवासो। दानरागेण सन्तोषमानसो। धम्मिको धम्मगुरुधम्मकेतु धम्मध्वजो। बुद्धादिरतनत्रये सततं समितं निम्नपोण प × रहूदयो। नानाविधानि। शारिरिक, परिभोग उद्देश्यक चैत्यानि नानाप्रकारेण नन्दति माने।

३। ति पूजेति संस्करोति। मारजयनक्लेशविध्वंसनसर्व्वधम्मविघातनवीरभूतं महाबोधिम्बि। अभिप्रसादेन पुनप्पुनं मनसि × × × ×। संमति परिवृन्दति कलैरारम्भने गन्य। सप्तपञ्चछिके गते। वसूरतवभूवर्व्वे ?। धम्म विहगे नमारवन्वः।

९। न (त) म्रेपि काले सर्व्वेपि असंख्येया सम्यक् सम्बुद्धा आणा-प्राणवस्तुज्ञानपादकन्धत्रिराकोटिपतसहस्रसविपरसता ज्ञानसंघातं महावज्रज्ञानं भावेत्वा अ।

१०। मार्गपदप्रान सर्व्वज्ञान ज्ञानरति रभिसु। न याहिसे। सण-वहन्ते कल्पे पयस सणवहितो। विनाश्यन्तेपि प × विन्नश्यन्तो अचलपदेपो पृथुद्वीप × बो।

११। धिमण्डो नाम होति॥ एवं अतिच्चरिय मन्वच्चरिय महाबोध-वृत्त एकसत विदित्वा अभिप्रसादमानसो। यथा कालि × चक्रवर्त्तिसिरिधम्मासोको प × महिकोसलो। महार्घ्यं यतिर्वा महाबोधिमभिपूजेसु। तथा पूजेतुकामो। सिरिपवरसुधम्म-महाराजाधिराजाति। मूलभासाय श्रीप्रवरधम्मिक राजा × × × मल।

१२। अतो अनेकश्चेति × प्रतिसरदकुमुदकुन्दइन्दु प्रभासमानवर्ण-च्छद्दन्तगजराजस्वामिमहाधर्म्मराजा। पुरोहित महाराजिन्द अग्ग महाधर्म्मराज गुरुभि × नं भूमिनन्दभारिकामत् पञ्च-महाराजाभिरूप सागरसूरनाभकं। अनेकशतपरिजनेहि मूद। द्विसहस्सत्रिशतपञ्चषष्टिसासनवर्षे। एकसहस्से

१३। शिक शतत्याशीतिसकराजे कार्त्तिकमाससरदकतुपं। स्वबि-जिनरक्ताङ्कदेन नु सार जलजस्थलजमार्गेण पेसेत्वा सरिच्चर महाराजिन्दाररता देवी नामिकाय अग्गमहेसिया सार्द्धं। महाबोधिमूले बुद्धत प्राप्तं भगवन्तमुद्दिश्य। दक्षिणोदकं पा-तन्तो। इमं महापृथुविं साक्षिं कृत्वा महार्घ्यं।

१४। हि सोर्ण रोप्य माणिवथ विचित्रेहि। त। ×। छत्र। ध्वज। पद्योत। कलश। मालाङ्ग लेहि महाबोधिमभिपूजेसि। संसा-रौघनिम्मुग्ग सत्वगणतारणार्थं पि बुद्धत प्रयतमकासि। माता-पीतुपीतामहआच्यक पाच्यकादिनं पि सत्वानं पुण्यभागम-दासि॥ यथानेह रविससि। यावत् क्षयावतिष्ठति।

आसीद्शीतद्युति वंशजातक्ष्मापालमालासुदिवंगतासु ।
साक्षाद्विवस्वानिवभूरिधाम्ना नाम्ना यशोविग्रहइत्युदारः ॥ २ ॥
तत्सुतोभून्महीचन्द्रश्चन्द्रधामनिभंनिजं ।
येनायारमकूपार पारेव्यापारितंयशः ॥ ३ ॥
तस्याऽभूत्तनयोनयैकरसिकः क्रांतद्विषन्मंडलो
विध्वस्तादुभुतवीरयोध विजितः श्रीचन्द्रदेवोनृपः ।
येनोदारतरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रवं
श्रीमद्गाधिपुराधिराज्यसममं दोर्विक्रमेनोर्जितं ॥ ४ ॥
तीर्थाणि काशिकुशिकोत्तारकोसलेन्द्रस्थानीयकानि परिपायताभिगम्य ॥
हेमात्मतुल्यमनिशंददता द्विजेभ्यो येनांकिता वसुमती शतशस्तुलाभिः ॥५॥
तस्यात्मजोमदनपालइतिक्षितींद्रचूड़ामणिर्विजययेनिजगोत्रचन्द्रः ।
यस्याभिषेककलशोल्लसितैःपयोभिः प्रक्षालितंकलिरजःपटलंधरित्र्याः ॥६॥
यस्यासी द्विजयःप्रयाणसमये तुंगाचलौघश्चलन्
माद्यत्कुंभिपदक्रमात्समसरत्त्र्यस्यन्महीमंडले ।
चूड़ारत्न विभिन्नतालुगलितस्थानास्टगुद्भासिताः
शेषःपेशवशादितःक्षणमसौक्रोडेनिलीनाननः ॥ ७ ॥
तस्मादजायत निजायत बाहुवल्लिबद्धावरुद्धनवराष्ट्र गजोनरेंद्रः ।
सांद्रामृतद्रवसुधा प्रभवी गवां यो गोविंदचंद्रइति चंद्रइवांबुराशेः ॥८॥
नकथमप्यलभन्तरणक्षमां स्तिसृषुदिक्षुगजानथतत्क्षिणः ।
ककुभिवभ्रमुरभ्रमुवल्लभं प्रतिभटाइवयस्यघटागजाः ॥ ९ ॥

सोयं समस्तराजचक्रसंसेवितचरणः परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निज भुजोपार्जित श्रीकान्यकुब्जाधिपत्य श्रीचन्द्रदेवपादानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वर श्रीमदनपाल देव पदानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वराश्वपति गजपति नरपति राजत्रयाधिपति विविध विद्याविचारवाचस्पति श्रीमद्गोविन्दचन्द्रदेवो विजयी खरकापत्तलायां मधुवाग्राम निवासिनो निखिलजन पदानुपगतानपि राजाराज्ञी युवराज मन्त्रिपुरोहित प्रतीहार सेनापति भांडागारिकाऽक्षपट लिकभिषग्निमित्तिकान्तः पुरिकदूत करितुरगपत्तनाकरस्थानाऽऽगोकुलाधिकारि पुरुषान्समाज्ञापयति बोधयत्यादिशतिच यथा विदितमस्तुभवतां यथो-

लिङ्गित श्री सोमवंशोद्भव श्री परीक्षित चक्रवर्त्ती। तस्यपुत्रो जन्मेजय-चक्रवर्त्ती हस्तिनापुरे सुखसंकथाविनोदेन राज्यङ्करोति। दक्षिण दिशावरे दिग्विजययात्रेयंविजयङ्करोमि। तुङ्गभद्राहरिद्रासङ्गमे श्री हरिहरेश्वर-सन्निधौ कटकमुत्क्रमितचैत्रमासे कृष्णपक्षदर्शके रवि वासरे ववकरणे उत्तरायण संक्रान्तौ व्यतीपातनिमित्त सूर्यपर्व्वणि अर्द्ध ग्रासग्रसित समये सर्पयागङ्करोमि॥

इस के पीछे ३२००० ब्राह्मण जो वनवासे शान्तलिको गौतम ग्राम और दूसरे गाँवों से आए थे जिन में मुख्य गौतमगोत्री कण्वशाखीय गोविन्द पट्टवर्धन कर्णाट ब्राह्मण, काण्वशाखीय वशिष्ठगोत्री वामन-पट्टवर्द्धन कर्णाट ब्राह्मण, कण्वशाखीय भारद्वाजगोत्री केशव यज्ञ दीक्षित कर्णाटक ब्राह्मण, कण्वशाखीय श्रीवत्सगोत्री नारायण दीक्षित कर्णाटक ब्राह्मण थे। उन को गौतम ग्राम के बारहो गाँव नाद बल्लि, बूदबल्लि, चिक्कहार, कतरलगेरे, सुरलगोड्डु, ताग, रुड्डु, जिंअलूरु, वाचेन, हल्लि, त्रपगोड्डु और किरूसम्य गोड्डु सब सपर्य्या अष्टभोग समेत पूजन करके दिया। इस के नीचे इन गाँओं की सीमा लिखी है। उस के पीछे 'सर्वानेतान् भाविना पार्थिवेन्द्रान' यह और 'दानं वा पालनं वापि' ये दो प्राचीन श्लोक हैं।

मंगलीश्वर का दानपत्र।

यह दानपत्र मंगलीश्वर का कलादगी जिले में बदामो में हिंदू मत की बड़ी गुहाओं के पास खुदा है, इसकी लंबाई और चौड़ाई २५× ४२ इञ्च है। यह मंगलीश्वर कीर्ति वर्म्मा का भाई पुलकेशी का पुत्र था, जो शक ४७७ में राज्य करता था। यह दानपत्र श० ५०० (ई० ५७८) में लिखा गया है जिस के १२ वर्ष पूर्व्व अर्थात् शाके ४८८ (ई० ५६६) में यह राज्य पर बैठा था। इस दानपत्र में मंगलीश्वर ने एक विष्णुमन्दिर बनाया और अपने बड़े भाई को स्मरणार्थ जो निपि-म्मलिंगेश्वर ग्राम दिया है उस का वर्णन है।

स्वस्ति। श्रीस्वामिपादानुध्यातानां मण्डव्यसगोत्राणाम् हारीति पुत्राणाम् अग्निष्टोमाग्निचयनवाजपेयपौंडरीक बहुसु वर्णाश्वमेधावभृथ-

(२)

राजा पटनीमल्ल के, पुत्र नारायण दास।
रचवाये दुइद्वार यह, अचल कीर्त्ति के आस॥

(३)

श्री देवकीनन्दन सूनुरासीघो जनकी पूर्वपद प्रसाद।
तदङ्गजो द्वारमिदं द्रव्य धत राम प्रसन्नोपमहीश्वरोये॥

(४)

श्री मत् बाबू देवकीनन्दन पौत्र उदार।
बाबू रामप्रसन्ना सिंह रचवाये यह द्वार॥सं० १८०७॥

(५)

श्री बाबू भगवानदास बड़े दानि बिदित।
मृजापुर बिच धाम तिन रचवाएं द्वार दुइ॥

(६)

सुनय जानकिदास के, श्री विश्वेश्वर दास।
रचवाए दुइ दुवार वर मुक्ति सुजस के आस॥

(७)

राजा दर्सन सिंह के, सुत कुल अति उजियार।
राजा रघुवरदयाल जस, चाहि किन दुइ दुयार॥

(८)

इण्डियन म्यूज़ियम (Indian Museum) में एक पत्थर के मुंड़ेरे के एक टुकड़े पर नीचे की ओर निम्न लिखित लेख लिखा है। वह पत्थर अशोक के चारदिवाली का है, परंतु यह लेख सन् ईसवी दो सौ बरस पहले का नहीं हो सकता। यह गुप्ताक्षर में पुराचीन रीति से लिखा है—

दी पढंका कता येपां दान × × मशमनिनाचार्य्य।

—(:)—

अशोक के चारदिवाली के मुंड़ेरे के पत्थर पर निचली ओर निम्न लिखित लेख लिखा है। यह दो लाइन (पंक्ति) में है और प्रत्येक लाइन ६ फीट लंबा है।

करते थे उन के वंशवाले भीख मांगते फिरते हैं नित्य नित्य नए नए स्थान बनते जाते हैं वैसेही नए नए लोग होते जाते हैं।

यह मणिकर्णिका तीर्थ सब स्थानों में प्रसिद्ध है और हिंदूधर्म्मवालों को इस का आग्रह सर्वदा से रहा है। इसी कारण जो बड़े बड़े राजा हुए उन सबों ने इस स्थान पर कीर्त्ति करनी चाही और एक के नाम को मिटा कर दूसरा अपना नाम करता रहा। इस स्थान पर तीर्थ दो हैं, एक तो गंगाजी दूसरा चक्रपुष्करिणी तीर्थ और इन दोनों पर लोगों की सदा दृष्टि रही। घाट के नीचे ब्रह्मनाल और नीलकंठ तक अनेक घाटों के बनने के चिह्न मिलते हैं। थोड़े दिन हुए कि मणिकर्णिका पर एक पुराना छत्ता था जिस को लोग राजा कीचक का छत्ता कहते थे, पर न जाने यह कीचक किस वंश में और किस समय में उत्पन्न हुआ था। ऐसा ही राजा मान का एक जनाना घाट है जो गली की भांति ऊपर से पटा है, पर अब इस के ऊपर ब्रह्मनाल की सड़क चलती है। निश्चय है कि योंही घाटों के नीचे अनेक राजाओं के बनाए घाटों के चिह्न मिलैंगे। हम आजकल में मणिकर्णिका पर से एक प्राचीन पत्थर उठा लाए हैं जिस्से उस समय का कुछ वृत्तांत मिलता है। यह पत्थर संवत् १३५९ तेरह सै उन्सठ का लिखा है जो ईसवी सन् १३०२ के समय का होता है। इस के अक्षर प्राचीन काल के हैं और मात्रा पड़े हैं। पर शोच का विषय है कि पूरा नहीं है, कुछ भाग इस का टूट गया है, इससे नाम का पता नहीं लगता कि किस राजा का है। जो कुछ वृत्त उससे जाना गया वह यह है—"उक्त समय में क्षत्रिय राजा दो भाई बड़े विष्णुभक्त और ज्ञानवान हुए और इन की कीर्त्ति परम प्रगट थी, उन लोगों ने मणिकर्णिका घाट बनवाया। उस घाट के निर्माण का विस्तार वीरेश्वर से विश्वेश्वर तक था और मध्य में मणिकर्णिकेश्वर का बड़ा लम्बा चौड़ा और ऊँचा मंदिर बनाया और बीच में बड़ी बड़ी वेदिका बनाई (वेदिका चबूतरे को कहते हैं) यह राजा बड़ा गुणज्ञ था" इत्यादि। इससे निश्चय है कि उस की बनाई कोई वस्तु शेष नहीं रही। अब जो मणिकर्णिकेश्वर हैं वह एक गहिरे नीचे सङ्कीर्ण स्थान में हैं और विश्वेश्वर और वीरेश्वर भी नए नए स्थानों में हैं। ऐसा अनुमान होता है कि गङ्गाजी आगे ब्रह्मनाल की ओर बहुत दब के बहती

जनरल कनिङ्हम (General Cunningham) ने बोधगया के मन्दिर के फाटक के चूर के नीचे एक पत्थर देखा था जिस पर निम्न लिखित लिपि खुदी हुई है। यह लेख २० लाइन में है और कुटिलाक्षर में लिखा हुआ है।

(१) नमोबुद्धाय ॥ आसीद्दृप्तनरेन्द्रवृन्दविजयी श्रीराष्ट्रकूटान्वयः श्रीमान्नन्द इति त्रिलोकविदितस्तेजस्विनामग्रणीः। सत्येन प्रश्रयेन शौच-विधिना श्लाघ्येन विख्यापितस्त्यागैः कल्प महीरुहः प्रणयिषु प्राज्ञो नरेन्द्रात्मजः ॥

(२) यो मत्तमातङ्गमभिद्रवन्तन्नरेन्द्रवीथ्यांऽतुरगेन्द्रगामी । कशाभिघातेन विजित्य वीरः प्रख्यातवान्हस्तितलप्रहारः ॥

(३) दुर्गं दुर्जयमूर्जितक्षितिभुजामत्युत्तमैर्विक्रमैः श्रीमद्धाम कृपाण पुण्यविभवैरुच्चैर्विजिग्ये च यः। येनाद्यापि नरेन्द्रसंसदि सदा सम्भूतरो-मोद्गमैर्वर्ण्यन्ते मणिपूरदुर्गधवलः संवर्ण्य सूरिभिः ॥

(४) यः शौर्यातिशयादनल्पसदृशात्ख्यातो महीभृद्रकः (?) सन्मार्गेण गुणावलोक इति च श्लाघ्यामभिख्यान्दधौ । गेयैर्बुद्धगुणाढ्यैरभिन वस्वान्तर्विशोपोद्गतैर्यश्चान्ते तनुमुत्ससर्ज विधि वद्योगीव तीर्थाश्रयः॥

(५) तस्यालि सूनुर्विजितारिवर्गः प्रतापसंतापितदिग् विभागः । प्रहर्षितार्थिव्रजपद्मषण्डः पूषेव पादाश्रितसर्व्व लोकः ॥

(६) धर्म्मार्थकामेषु गृहीतसारः श्रिया सदाराधितपादपद्मः । अरा-तिमातङ्गकुलैकसिंहस्त्रिलोकविख्यातयशः पताकः ॥

(७) कोपे यमः कल्पतरुः प्रसादे प्रयोगमार्गप्रणयी कलानां । अगण्यविक्रान्तविलासभूमिः प्रभूतसद्वर्णशशाङ्ककीर्त्तिः ॥ रूपोदयै-रर्पितचित्रयोनिर्मतङ्गजारोहनलब्धशब्दः । तुरङ्गमाध्यासनकौशलाप्तः प्रभासते राजसु कीर्त्तिराजः ॥

(८) तस्यात्मजः शुभशतोदितपुण्यमूर्त्तिः साक्षान्मनोभव इव प्रयतात्मभावः । दृप्तद् विपद्विपिनवन्हिरुदीर्णदीप्तिरस्तीह तुङ्ग इति-सान्वयनामधेयः ॥

(९) कामिनीवदनपङ्कजतिग्मभानुर्विद्वन्मनः कुमुदकाननकान्त-रश्मिः। शास्त्रप्रयोगकुशलः कुशलानुवर्त्ती धर्म्मावलोकइति च प्रथितः पृथिव्याम् ॥

किस स्थान पर हुआ ? यह किसका प्रभाव है कि अब उस का खोज भी नहीं मिलता ? काल का अतएव यदि हम प्राचीन, नवीनों से नवीन, बलवानों से बलवान, उत्पत्ति, पालन, नाश कर्त्ता और सर्व तन्त्रस्वतन्त्रादि विशेषणों से विशिष्ट ईश्वर को काल ही का एक नामान्तर कहैं, तो क्या दोष है।

इस पंचक्रोशी के मार्ग और मंदिर और सरोवरों में से दो सौ वा तीन सौ वर्ष से प्राचीन कोई चिन्ह नहीं है और इस बात का कोई निश्चायक नहीं कि पचक्रोश का मार्ग यही है केवल एक कर्दमेश्वर का मंदिर मात्र बहुत प्राचीन है और इस के बौद्धों के काल का वा इस के पीछे के काल का कहैं, तो अयोग्य न होगा। इस मंदिर के अतिरिक्त और कोई प्राचीन चिन्ह नहीं, पर हां, पद पद पर पुराने बौद्ध वा जैन मूर्त्तिखंड, पुराने जैन मंदिरों के शिखर, दासे, खंभे और चौखटें टूटी फटी पड़ी हैं। क्यों भाई हिंदुओ ! काशी तो तुम्हारा तीर्थ न है ? और तुम्हारा वेद मत तो परम प्राचीन है ? तो अब क्यों नहीं कोई चिह्न दिखाते जिस से निश्चय हो कि काशी के मुख्य देव विश्वेश्वर और विंदुमाधव यहाँ पर थे और यहाँ उन का चिह्न शेष है और इतना बड़ा काशी का क्षेत्र है और यह उस की सीमा और यह मार्ग है और यह पंचक्रोश के देवता हैं। बस इतना ही कहो भगवते कालाय नमः। हमारे गुरु राजा शिवप्रसाद तो लिखते हैं कि "केवल काशी और कन्नौज में वेदधर्म्म बच गया था" पर मैं यह कैसे कहूँ, वरंच यह कह सकता हूँ कि काशी में सब नगरों से विशेष जैन मत था और यहीं के लाग दृढ़ जैनी थे, भवतु काल जो न करे सब आश्चर्य्य है। क्या यह संभावना नहीं हो सकती कि प्राचीन काल में जो हिंदुओं की मूर्त्तियाँ और मंदिर थे उन्हीं में जैनों ने अपने काल में अपनी मूर्त्तियाँ बिठा दीं ? क्यों नहीं। केवल कुछ क्षण दिल्ली के सिंहासन पर एक हिंदू बनिया बैठ गया था उतने ही समय में मसजिदों में हिंदुओं ने सिंदूर के भैरव बना दिये और कुरान पढ़ने की चौकियों पर व्यासों ने कथा बांची, तो यह क्या असम्भावित है।

कर्दमेश्वर का मंदिर बहुत ही प्राचीन है और उस के शिखर पर बहुत से चित्र बने हैं जिन में कई एक हिंदुओं के देवताओं के हैं, पर

एक मूर्त्ति पर बोधगया में यह लेख लिखा है। यह दो पंक्ति में है जो प्रत्येक ६ फीट लम्बी है। पूर्णभद्र सुमंतस के पुत्र ने इस [मूर्त्ति] को बनवाया था। इस से उस का और उस के वंश का कुछ वृत्तांत मालूम होता है।

१। वावस्तस्यैव स्वसङ्घतः सङ्घः।

२। सिध्धा। परः श्रीभान् तस्य सुतः श्रीधर्म्मः।

३। थर्थिय जगती कृत्तिक प्रतापनेप्रतां यातः॥ तेनयशः

१। सिन्धौ दातृ × गजो गल्लभूमज :—
नरवर सित्त ग

२। नुसपुररन्ध्री सदुदयकम × पुनः पूतः श्री दुर्गजयसेनः
कुमा कु तर सयू शुभ
म्वोधिलासुकृत ग

१। ये धर्म्मा हेतुप्रभवा हेतुस्तेपां तथागतः ह्यवदत् तेपाञ्चयो निरोध
स्वंवादी महा—

२। श्रमणः।

३। श्रीसामन्तस्तदात्मजस्तस्य। श्रीपुनुभद्रनामा प्रतापेन चन्द्रमः
कोर्त्तिः। द्राञ्च

१। सु × यिप्तो × × श्रीमान्

२। सेनोसन द्योतः। श्रीमति उदण्डपूरे येन

३। तिलरलकता × सिंव चन्द्रनमवृतः सुधियः॥

महाबोधी मन्दिर के समीप एक पत्थर के टुकड़े पर खोदी हुई निम्न लिखित लिपि डवल्यू हाथोर्न (W. Hawthorne Esqr.) ने पायी थी, उस पत्थर को बचनन हमिलटन (Mr. Buchanan Hamilton) ने ईस्ट इन्डिया कम्पनी के म्यूजियम (Museum) में रख दिया था।

नमोबुद्धाय संकल्पोयं प्रवरमहावीरस्वामिनः परमोपासकस्य दैवज्ञ-चरणारविन्दमकरन्दमधुकरहलकारभूपालवेश्मोत्पन्नाऽकृस्ननृपति गुरूह नारायण रिपुराज मत्तगज सिंहति रिवल महीपाल जनकेत्पादिनिज-

शाके कालाद्रिभूपे गतविलकमलं गौड़राजेन्द्रपत्नी
गन्धर्व्वाम्भोधिमम्भोनिधिसमखननं स्वर्गसोपानजुष्टं।
चक्रे राज्ञी भवानी सुकृतिमतिकृतिर्भीमचंडी सकाशे
काश्यामस्यास्सुकीर्त्तिस्सुर पतिसमितौगीयतेनारदाद्यैः।

अर्थात् शाके १६७६ में रानी भवानी ने यह सरोवर बनाया तो इस लेख से ११८ का प्राचीन यह सरोवर है। इस से प्राचीन भी कुछ चिन्ह हैं, पर अत्यन्त प्राचीन नहीं। देहली विनायक जो मुख्य काशी की सीमा हैं वही ठीक नहीं हैं, क्योंकि वहाँ कोई भी प्राचीन चिन्ह शेष नहीं है। वहाँ के मंदिर और सरोवर सब एक नागर के बनाये हुए हैं जिसे अभी केवल सत्तर अस्सी बरस हुए। पर इतने ही समय में वह बहुत टूट गए हैं। काशी के कतिपय पंडित कहते हैं कि प्राचीन देहली विनायक वहाँ से कोसों दूर हैं। अतएव पंचक्रोशी का प्रचलित मार्ग ही अशुद्ध है और यह संभावना भी है, क्योंकि सिंधुसागर तीर्थ का बहुत सा भाग इस मार्ग में वाम भाग पड़ता है, पर प्राचीन मार्ग की सड़क खेतवालों ने संपूर्ण नष्ट कर डाली। रामेश्वर में श्री रानी भवानी की धर्म्मशाला और उद्यान है, परंतु रामेश्वर के कोस भर उधर बीच मार्ग ही में एक बड़ा प्राचीन मंदिर खंड पड़ा है। बीच में शिवपुर एक विश्राम है और वहाँ पाँचो पांडव हैं, परंतु यह विश्राम इत्यादि कोई काशीखंड लिखित नहीं हैं। सब साहो गोपाल दास के भाई भवानी दास साहो के बनाए हुए हैं और अब वह एक ऐसा विश्राम हो गया है कि सब काशी के बंधु वहीं पंचक्रोशी वालों से मिलने जाते हैं। कपिलधारा मानों जैनों की राजधानी है। कारण ऐसा अनुमान होता है कि प्राचीन काल में काशी उधर ही बसती थी, क्योंकि सारनाथ वहाँ से पास ही है और मैं वहाँ से कई जैन मूर्त्ति के सिर उठा लाया हूँ। ऐसी भी जनश्रुति है कि महादेवभट्ट नामक कोई ब्राह्मण था, उसी ने पंचक्रोशी का उद्धार किया है।

मुझे शिव मूर्त्ति अनेक प्रकार की मिली हैं १ पंचमुख दशभुज, २ एक मुख द्विभुज, ३ एक मुख चतुर्भुज, ४ पद्मपर से पैर लटकाए हुए बैठे और पार्वती गोद में बैठी, ५ पालथी मारे, ६ पार्वती को आलिंगन

पुराकपिल व × × ॥ माया देव्यो सुद्धोदवी । निक्षमित्वा × स्तनूले अनु × अ × ।

४ । तं पदं तेन सुदेसिनो धर्म्मो संघो चास्यानुशासितो । दिस्यते दानिलोक । मू वोधिस्वस्य न दिस्यते । इति हि पूराणतन्त्रा-गतानुरूपं । अयं महाधर्म्मरागमनसि करोनो विमसन्तो । परिपृच्छन्तो पीतामहच्छदन्त गजराजस्वामि महाधर्म्मराज-काले । मध्यपदेरागतेहि वाणिरेहि ब्राह्मणेहि × गोहि च ।

५ । मगधराष्ट्रे । गयाशीपपदे च नद्यानेरञ्जनाप्रतीरे सुसमे भूमि-भागे । वनप्रतिभूत्वा प्रतिष्ठिभावं । अर्धखण्डसाखाप्रमाणेन हस्तशत विस्ताराद् ये धर्म्मभावं । × कादी पाति हराग्र्ये गृहणक । लेयय । पिहानं दक्षिण महासाखाय स्वयमेवच्छिन्ना-कारदपा मानभावं वोधिमण्डसंखानवज्रासनयानसिरिधम्मा सोके ।

६ । न नाम सकल जम्बुद्वीपेश्वरमहाराज्ञा कृतचेतियस्य विद्यमान-भावं । पूर्व्वे पड्शतसप्तपञ्चापसकराजे श्वेतगजेन्द्रमहाराजेन तं चैत्यमतिसंचरित्वा धर्म्मभासाय सेनक्ष स्वामिनभावं च श्रुत्वा । तदेनत् वचनं अनेकतन्त्रागतवचनेन सं सन्दति समेति । यथातं गंगोदकेन यमुनोदकस्मि । युक्तायुक्तं विदि ।

७ । स्ना । अवश्यमेवेप भगवता सह जातो महावोधीसि निसंपयं । सन्निधानमकासि । यथावत् कठोन विशेप नियमित्ते हि । मनुर-पानं क्षेत्रवस्त्वादिकर्म्मकरण × ततो यथानुक्रममुन्नतुन्नतभावेन पदवी युगेधे । अष्टराजकरोप मात्रविस्तारोकेप मश्रु प्रमाणा-नम्पिति गानमधिहल्ले । समन्तातिनलना ।

८ । गन्धं गुम्बवनप्रतीनं प्रदक्षिणावद्याभिमूखपरिवारितो रजत-वर्णवालुकाविप्रकिर्णो । भेरितलमिव समे भूमिभागे । वोधिमण्ड संघायस्थ वज्रासनपल्लङ्कस्य अपरमयफलकमिव सन्धुन्नुत्वा । साखा पर्ण × मणिपत्रमिव पटिच्छादेत्वा महावोधिवृक्षः प्रति-ष्ठाति तस्मिन् पनवज्रासनपल्लङ्के अत (न) ।

मूर्त्ति अद्यापि उपलब्ध होती हैं। कालिञ्ज में एक प्रस्तर खंड पड़ा है और इस की लिपि परम प्राचीन है। पंडित शीतलाप्रसाद जी का अनुमान है कि यह लिपि पाली के भी पूर्व की है। इस पत्थर पर एक काली के मंदिर की प्रतिष्ठा का समाचार है और इस का काल अनेक सहस्र वर्ष पूर्व्व है और इस में ये श्लोक लिखे हैं।

१

ख्याता वाराणसीय त्रिभुवनभवने भोगचौरीति दूरात्।
सेवन्ते यां विरक्ताः, जननमरणयो मोक्षमचैकरक्ता ॥

२

यत्र देवोऽविमुक्तः यो दृष्ट्वा ब्रह्महाऽपि च्युतकलिकलुषो जायते शुद्धभावः। अस्यामुत्तुङ्गशृङ्गस्फुटशशि किरिणा ॥

३

प्रतुलिविविधजनपदस्त्रीविलासाऽभिरामं विद्या वेदान्ततत्त्वव्रतजपनियमव्यग्रचंद्राभिजुष्टं ॥ श्रीमत्स्थान सुसेव्य ॥

४

तत्राऽभूत् सार्थनामा शिशुरपि विनयव्यापदो भद्रमूर्त्तिः त्यागी धीरः कृतज्ञः परिलघविभवोप्यात्मवृत्याभिजीवी।

५

वर्णा चंडनरोत्तमांगरचितव्यालम्बिमालोत्कटा।
सर्प्पत्सर्प्पविवेष्टिताङ्गरपशुव्याविद्धशुष्कामिषा लीला नृत्यरुचिर्पिलोस्य

६

यस्यापि न तस्य तुष्टिरभवत् यावत् भवानीगृहं शुशिलष्टा ऽमलसन्धि वन्धघटितं घंटानिनादोज्ज्वलं। रम्यं दृष्टिहरं शिलोच्च्याय ॥
ध्वज चामरं सुकृति नाश्रेयोऽर्थिना कारितं

७

इस लेख के उपसंहार काल में मणिकर्णिका घाट का अवशिष्ट वर्णन करता हूँ। अब जो सांप्रत घाट वर्तमान है वह अहल्याबाई का बनवाया हुआ है और दो बड़े बड़े शिवालय भी घाट की सीमा पर इन्हीं के बनाए हैं और उन पर ये श्लोक लिखे हैं।

१५। तथापि दसेलचरं । तिष्ठतं अनुमोदयति। इदमनेकश्चेतिभ-प्रतिच्छदन्तगजराजस्वामिमहाधर्म्मराजोत्तरं पुज्यसेलदारं। महाजेयसहस्रनामेन पण्डितामन्येन वन्धितं। इदं सेलचरं सिरिराजिन्दमहाधर्म्मराजगुरुनामिकेन पुरोहितेन नागरीलेखाय लिखितं। : ॥ : ॥

—:—

राजा जन्मेजय का दानपत्र

यह दानपत्र युधिष्ठिर के संवत् १११ का है, जो मौज़ अगराहर तालुका अनंतपुर ज़िला महानाद नगर इलाका मैसूर में मिला है। इस में सर्पयाग और सूर्यपर्व का वर्णन है। कर्नल एलिस् साहिब सोचते हैं कि यह उस जन्मेजय का नहीं है, विजयनगर के राजाओं में से किसी का है। वह कहते हैं कि जैसा सूर्यग्रहण इस में लिखा है वैसा स० १५२१ ई० में हुआ था। कोलब्रुक साहिब कहते हैं कि यह प्राचीन काल में ब्राह्मणों ने जाल करके बनाया होगा। परंतु उन दोनों साहिबों की बात का कोई दृढ़ प्रमाण नहीं। इस की लिपि प्राचीन बालबन्द अथवा नन्दिनागर अक्षरों में है। इसके पीछे का भाग बहुत सा टूट गया है और यहाँ हम भी इस का वह भाग नहीं लिखते जिस ने उन दक्षिणी ग्रामों के और उन को चारों सीमाओं के वर्णन में बड़े कठिन कठिन कर्णाटकी शब्द लिखे हैं।

"जयत्याविष्कृतं विष्णोर्वाराहं क्षोभितार्णवम्।
दक्षिणोन्नतदंष्ट्राग्रे विश्रान्तम्भुवनंवपुः ॥

स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्री पृथ्वी वल्लभ महाराज परमेश्वर परम भट्टारक हस्तिनापुरवराधीश्वर आरोहभगदत्तरिपुराय कान्तादक्ष वैरिवैधव्यपाण्डव कुलकमलमार्त्तण्डकदन प्रचण्ड कलिङ्ग कोदण्ड मार्त्तण्ड एकाङ्गवीर रणरङ्गधीर अश्वपतिराय दिशापति गजपति-राय संहारक नरपतिराय मस्तक तलप्रहारिहयारूढ़प्रौढ़रेखरेवन्त सामान्त मृगचामर कोङ्कणचतुर्दश भयङ्करनित्यकर पराङ्गना-पुत्र सुवर्णवराहलाञ्छनध्वजसमस्त राजावलिविराजित समा

यही श्लोक वहाँ खुदा है।

स्वस्ति श्री विक्रमार्केद्विवननगरधरासंमिते १७६२ क्रोधनाब्दे ।
मासीपै शुक्लके दिक्तिथिहरिभयुतेचान्हिविश्वेशतुष्ट्यै ॥
श्रीशाहोः श्रीनिवासः प्रतिनिधिपदगः पर्शुरामात्मजस्त ।
ज्जायाराधाकृतोऽयं जयतिनृहरिदंष्ट्राख्यघट्टः सुबद्धः ॥ १ ॥

प्रत्यंतरमिदं ऊर्ध्वं श्लोकस्यद्वारिदीपवत् ।
अकारिबालकृष्णेन स्वामिकार्यनिरूपकं ॥ २ ॥

तथा काशी में जो वृद्धकाल महादेव का मंदिर है वह भी किसी छत्रपति के आश्रितों में मेघश्याम के पुत्र चाविक उपनामक देवराज ने बनाया है और एक तो कालेश्वर के लिंग का जीर्णोद्धार किया और अपने नाम देवराजेश्वर एक शिव और बैठाया है जो इन श्लोकों से प्रगट है।

अब्देस्वीश्वरसंज्ञके शुभदिने संस्थाप्य कालेश्वरं ।
प्राचीनं प्रणतार्तिभंजनपरं श्रीदेवराजेश्वरं ॥
शाहूछत्रपतेः कृपालुवशगः श्रीदेवरायः स्वयं ।
मेघश्यामसुतः शिवालयमहो काश्यामबध्नात्ध्रुवं ॥ १ ॥
श्रीमत्प्रौढ़प्रतापप्रगटितयशसः शाहुभूपालकस्य ।
प्राजस्याज्ञानुकारिद्विजहितविहितश्चाविकोदेवरायः ।
धात्रब्देमोरभट्टानुमितसुपवनं गेहशालाविशालं ।
काश्यांविश्वेश्वरस्यत्रिजगदधनुषः प्रीतयेनिर्निमाय ॥ २ ॥

पापभक्षेश्वर भैरव का मंदिर भी बाजीराव का बनाया है। जो हो, अब काशी में जितने मंदिर वा घाट हैं उन में आधे से विशेष इन महाराष्ट्रों के बनाए हुए हैं।

शिवपुर का द्रौपदी कुण्ड

यह बात प्रसिद्ध है कि शिवपुर काशी की पंचक्रोशी में कोई तीर्थ नहीं केवल लोगों के वहाँ टिकते टिकते वह टिकान हो गई है और देवता बिठा दिये गए हैं। पर अबकी द्रौपदी कुंड में एक पत्थर के

स्नान पवित्री कृतशिरसाम् चाल्क्यानांवंशेसंभूत: शक्तित्रयसंपन्न: चालक्यवशाम्बर पूर्णचन्द: अनेकगुणगणालंकृतशरीर: सर्वशास्त्रार्थतत्वनिविष्टबुद्धि: अतिबलपराक्रमोत्साहसंपन्न: श्रीमंगलिश्वरोरणविक्रान्त: प्रवर्द्धमानराज्यरसंवत्सरे द्वादशेशकनृपतिराज्याभिषेक संवत्सरे ष्वतिक्रन्तेषु पंचसुशतेपु निजभुजावसम्बितखड्गधारानमितनृपशिरो मकुट मणिप्रभारंजिपादयुगल: चतु:सागरपर्य्यन्तावनिविजय: माङ्गलिकागार: परमभागवतोलयये मयाविष्णुगृह्अतिदैव मानुष्यकाम अत्यद्भुतकर्म विरचितभूमि भागोपभागो परिपर्य्यन्तातिशय दर्शनीय तमकृत्वातस्मिन् महाकार्तिक्यांपौर्णमास्यांब्राह्मणेभ्योमहाप्रदानंत्वाभगवत: प्रलयोदिताक्क मण्डलाकारचक्रपितापकारिपक्षस्य विष्णो: प्रतिमाप्रतिष्ठापनाभ्युदये निपिमलिङ्गेश्वरम् नामग्रामंनारायणावल्युपहारार्थं पोड़शमृङ्ल्येभ्योब्राह्मणेभ्यश्च सत्रनिबन्धं प्रतिदिनंअनुविधानं कृत्वाशेपं च परिव्राजकभोज्यंदत्वा सकलजगन्मंडलावनसमर्थारथहस्त्यश्च पदातसंकुलानेकयुद्धलब्धजय पताकालम्बितचतुस्समुद्रोर्म्मिनिवारितयश: प्रतापनोपशोभिताय देवद्विज-गुरुपूजिताय ज्येष्ठायस्मद्भात्रे कीर्तिवर्मणेपराक्रमेश्वरातत् पुण्योपचयफलम् आदित्याग्निमहाजन समुत्तमुदक पूर्वविश्राणितमस्मद्भ्रातृशुश्रूषणे यत्फलंतन्मह्यंस्यादितिनकैश्चित्परि हापितव्य:। वहुभिर्वसुधादत्ता वहुभिश्चानुपालिता यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यंतस्यतदाफलम्। स्वदत्तांपरदत्तांवायत्नाद्रक्षयुधिष्ठिर। महीमही क्षितांश्रेष्ठंदानाच्छ्रेयोनुपालनं। स्वदत्तांपरदत्तांवायोहरेतवसुधराम्। श्वविष्ठायांकृमिर्भूत्वापितृभिस्सहमज्जति। व्यासगीता:श्लोका:।

मणिकर्णिका।

अहा! संसार का भी कैसा स्वरूप है और नित्य यह कुछ से कुछ हुआ जाता है, पर लोग इस को नहीं समझते और इसी में मग्न रहते हैं। जहाँ लाखों रुपये के बड़े बड़े और दृढ़ मंदिर बने थे वहाँ अब कुछ भी नहीं है और जो लाखों रुपये अपने हाथ से उपार्जन व्यय

जिस में सील लगी हुई थी निकला है। अनुमान होता है कि इस चोंगे में कागज रहा होगा, जो काल पाकर भीतर ही भीतर गल गया है। यह पत्र चन्द्रवंशी क्षत्री दो राजाओं के दिए सं० १६७ के हैं और इन के पढ़ने से उस काल की बहुत सी चाल व्यवहार और उन के राज्य करने की नीति इत्यादि प्रगट होती है। इस से इनका यथा-स्थित संस्कृत का भाषानुवाद यहाँ प्रकाश होता है। इस वंश का और कहीं पता नहीं लगा है। केवल उन दोनों ताम्रपत्रों से जो कालेपानी से सं० १८५७ में एशियाटिकसोसाइटी में आए थे इन का संबंध ज्ञात होता है, क्योंकि उन में यही लिपि और इन्हीं दोनों वंशों का वर्णन है पर नाम अलग अलग है और उन दोनों में संबंध भी नहीं है।

विजनजवन नामक क्षत्रियों के दो प्राचीन कुल थे जिन की संज्ञा ढढ़िया और पुछड़िया थी ॥ १ ॥

अपने वैरियों का सर्व्वस्व धन और धर्म्म नाश करके और भोग करके ढढ़िया वंश समाप्त हुआ।

पुछड़िया कुल के राजा जब दोनों कुलों के स्वामी हुए तब इन लोगों ने प्रजा का बड़ा आडम्बर से सत्कार किया और चक्रवर्त्ती हो गए ॥ ३ ॥

विद्या में बड़े बड़े पद और सभाओं में बड़ी बड़ी वक्तृता और आदर के अनेक आकाशी चिन्हों से इन के अनुयायी सदैव शोभित रहते थे ॥ ४ ॥

उदार ऐसे थे कि समाधि में भी रुपया नहीं बचने पाता था, चारो ओर केवल जाचक ही जाचक दिखाई देते थे ॥ ५ ॥

कलानिपुण ऐसे थे कि इन के सिवा और कोई था ही नहीं और राजनीति के छल बल के तो एकमात्र वृहस्पति थे ॥ ६ ॥

कहते हैं कि शौरसेन यादव वंश में बलदेव जी से इस वंश का साक्षात् संबंध है, क्योंकि अब तक ये जैसे हलीमद प्रिय भी हैं ॥७॥

ये इतने चतुर थे कि और सब जाति के लोग इन के सामने मूर्ख ज्ञात होते थे और प्रबल भी इतने कि इन की बात कभी दोहराई नहीं जाती थी ॥ ८ ॥

थीं, क्योंकि अद्यापि वहाँ नीचे घाट मिलते हैं। निश्चय है कि इस राजा के पीछे भी अनेक वार घाट बने होंगे, परंतु अब जो कुछ टूटा फूटा घाट बचा है वह अहल्याबाई साहब का बनाया है।

मणिकर्णिका कुण्ड की सीढ़ियां जो वर्त्तमान हैं वह दो सै उनचास २४६ वर्ष की बनी हुई हैं और इन को नारायणदास नामक वैश्य ने (जिस का पुकारने का नाम नरैनू था) बनवाई है। यह सोमवंशी राजा वासुदेव का मन्त्री था और रावत इस के पिता का नाम था। यह बात इन श्लोकों से प्रगट होती है जो वहाँ एक पत्थर पर खुदे मिले हैं।

व्योमाष्टपट् चन्द्रमिते शुभेब्दौ मासे शुचौ विष्णुतिथौ शिवायां।
चकार नारायणदासगुप्तः सोपानमेतन्मणिकर्णिकायाः ॥ १ ॥
जातः क्षितीवासतुल्यतेजाः सीमान्यये भूपति वासुदेवाः
तस्यानुवर्त्ती मणिकर्णिकायाश्चकार सोपान ततिर्नरेणुः ॥ २ ॥
वासुदेवाग्रसचिवो नरेणुरावतात्मजः।
चक्रपुष्करणी तीर्थ जीर्णोद्धारमचीकरत् ॥ ३ ॥

॥ काशी ॥

मैं इस में काशी के तीन भाग का वर्णन करूंगा यथा प्रथम भाग में पंचक्रोश का, दूसरे में गोसाइयों के काल का, तीसरे कुछ अन्य स्फुट वर्णन। मैं पंचक्रोशी का वर्णन ऐसा नहीं करना चाहता कि जिसे देख कर लोग पंचक्रोशी की यात्रा करने चले जायँ वरंच मैं भगवान काल के उस परम प्रबल फेर फार रूपी शक्ति को दिखाता हूँ जिस से धैर्य्यमानों का धैर्य्य और अज्ञानों का मोह बढ़ता है। आहा! उस की क्या महिमा है और कैसी अचिंत्य शक्ति है? अतएव मैं मुक्तकंठ से कह सकता हूं कि ईश्वर भी काल का एक नामान्तर है। क्योंकि इस संसार की उत्पत्ति प्रलय केवल इसी पर अटकी है। जिस विजयी और विख्यात सिकन्दर ने संसार को जीता उसकी अस्थि कहां गड़ी है और जिस कालिदास की कविता संसार पढ़ता है वह किस काल में और

गौरचंद्र तथा हनुमच्चंद्र मुड़ाल गोत्र गर्गाङ्गिरस मुड़ाल द्विजवर ठक्कुरनासी के पौत्र ठक्कुर उव्वट के पुत्र ठक्कुर चुप्पठ शर्म्मा को कलिंगदेशान्तर्गत खातावी प्रगने के छींछल प्रगने का पसेसरी और कारंस नामक दो ग्राम दे कर इस के सीर सायर आकास पाताल खेत खर्वट वाटी तिवारी जल थल सब पर इन का अधिकार करते हैं इन के वंश का जो होय वह उस को मानै कोई कर नहीं लगेगा ।

मि० चैत्र शुद्ध १ सं० १६८ विक्रम के लिख सूत्रधार प्रवासी राय और ब्राह्मण ब्राह्ममय ने शुभ ।

(इस के आगे ये श्लोक लिखे हैं)

ये सर्वैस्तुर्भाविनः पार्थिवेन्द्रान्तेभ्यो भूयोयाचते रामचन्द्रः ।
सामान्योऽयं धर्म्मसेतुर्नृपाणां काले काले रक्षणीयो भवद्भिः ॥
स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्ति हरेत्तुयः ।
षष्ठि वर्ष सहस्राणि विष्ठायां जायते क्रिमिः ॥
शुभम् श्रीः ॥

—❀—

कन्नौज का दानपत्र

यह दानपत्र राजा गोविन्दचन्द्र कन्नौज के राजा का है जो दिल्ली के बादशाही खजाने से सिख लोग लाहौर लूट कर ले गए थे और अब श्री पंडित राधाकृष्ण चीफ पंडित लाहौर ने उस की एक प्रति हमारे पास भेजी है। इस राजवंश का पूर्व स्थापक गाहरवाल राजा था और करल्ल इस का अन्तिम राजकुमार हुआ। उसी वंश की एक शाखा महिआल में (वा महिआल का पुत्र) भोज हुआ जिस का काल ८८५ ईस्वी है। इन भोज और करल्ल की कीर्त्ति समाप्त होने के पीछे उसी वंश की शाखा में यशोविग्रह राजा हुआ उस का पुत्र महीचन्द्र, उस का पुत्र चन्द्रदेव, उस का पुत्र मदनपाल और उस मदनपाल का पुत्र गोविंदचन्द्र था, जिस ने यह दान किया है। यह राजा ऐसा दानी था

अनेक ऐसे विचित्र देव और देवी बनी हैं जिस का ध्यान हिंदू शास्त्र में कहीं नहीं मिलता अतएव कर्दमेश्वर महादेव जी का राज्य उस मंदिर पर कब से हुआ यह निश्चय नहीं और पलथी मारे हुए जो कर्दमजी की श्री-मूर्त्ति है वह तो निरसंदेह * * * * कुछ और ही है और इसके निश्चय के हेतु उस मंदिर के आस पास के जैन खंड प्रमाण हैं और उसी गांव में आगे कूप के पास दाहिने हाथ एक चौतरा है उसपर वैसी ही ठीक किसी जैनाचार्य्य की मूर्त्ति पलथी मारे खंडित रक्खी है देख लीजिए और उस के लंबे कान उस का जैनत्व प्रमाण करते हैं। अब कहिए वह तो कर्दम ऋषि हैं ये कौन हैं कपिलदेव जी हैं ? ऐसे ही पंचक्रोशी के सारे मार्ग में वरंच काशी के आस पास के अनेक गांव में सुंदर सुंदर शिल्पविद्या से विरचित जैन खंड पृथ्वी के नीचे और ऊपर पड़े हैं। कर्दमेश्वर का सरोवर श्रीमती रानी भवानी का बनाया है और उस पर यह श्लोक लिखा है।

"शाके गोत्रतुरंभूपतिमिते श्रीमत्भवानीनृपा
गौड़ाख्यानमहीमहेन्द्रवनिता निष्कर्दमं कार्दमं।
कुंडं ग्रावसुखंडमंडिततटं काश्यां व्यधादादरात्
श्रीतारातनया पुरांतकपर प्रीत्यै विमुक्तै नृणां॥

अर्थ—शाके १६७७ में अपनी कन्या श्रीतारा देवी के स्मरणार्थ यह कर्दम कुंड बंगाले की महारानी श्रीभवानी ने बनाया। इन महारानी की कीर्त्ति ऐसी ही सब स्थानों में उज्ज्वल और प्रसिद्ध है और राजा चन्द्रनाथ राय (उनके प्रपौत्र) मानो उस पुन्य के फल हैं। भीमचंडी के मार्ग में भी ऐसे ही अनेक चिह्न हैं और भद्राक्षी नामक ग्राम में एक बड़ा पुराना कोट उलटा हुआ पड़ा है और पंचक्रोशी करानेवाले उस के नीचे उसी के ईंटों से छोटे २ घर बनाते हैं और इस में पुन्य समझते हैं। सम्भावना है कि यहाँ कोई छोटी राजसी रही हो, क्योंकि काशी के चारो ओर ऐसी छोटी छोटी कई राजसियाँ थीं जैसा आशा-पुर। काशीखंड में आशापुर को एक बड़ा नगर कर के लिखा है पर अब तो गाँव मात्र बच गया है। भीमचंडी का कुंड भी श्रीमती रानी भवानी का बनाया है और उस में यह श्लोक लिखा हुआ है।

राश्वपति गजपति नरपति राज्यत्रयाधि विविध विद्याविचारवाचस्पतिः श्रीमद्गोविन्दचन्द्रदेवो विजयी हल्दोपपत्तनायामगोंडलीग्राम निवासिनो निखिलजन पदानुपगतानपि च राजाराज्ञी युवराज मन्त्रिपुरोहित-प्रतिहार-सेनापतिभाण्डारिकाक्षपटलिकभिषक्नैमिमित्तिकान्तः पुरिक-दूत-करि-तुरगपत्तनाकरस्थानागोकुलाधि पुरुषानाज्ञापयति बोधयत्यादिशतिच यथा विदितमस्तुभवतां मयोपरिलिखितग्रामः सजलस्थलः सलोहलवणा-करः समत्स्याकरः सगर्तोखरः समधूकाम्रवनवाटिकः विटपतृणयुतोगोचर-पर्य्यन्तः सोर्ध्वाधश्चत्वारः घटविशुद्धः स्वसीमापर्य्यन्तः द्वयपीत्यधिकैका दशशत संवत्सरे ११८२ माघेमासि कृष्णपक्षे षष्ट्यांतिथौ भृगाववर्पितः श्रीवमतीस्थलेगङ्गायां स्नात्वा विधिवन्मन्त्रदेव मुनिमनुजभूत पितृगणां स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुमहसमुद्धतार्चिषमुपस्थायौषधिपति-सकलशेखरं समभ्यर्च्य त्रिभुवनत्रातुर्वासुदेवस्य पूजां विधायप्रचुरपाय-सेनहविषा हविर्भुजंहुत्वा मातापित्रो रात्मनश्च पुण्ययशोभिवृद्धयेऽस्मा-भिरग्रे करणकुशलतायुतकमतुलोदक पूर्वंगौतमगोत्राभ्यांगौतमाङ्गिर संमुद्गलत्रिः प्रवराभ्यांठक्कुर श्रीआल्हनपुत्राभ्यां श्रीछीछट श्रीवाछट शर्म्मभ्यां आचन्द्रार्कं यावच्छासती कृत्यप्रदत्तामत्वा यथा दीयमानभाग-भोगकर प्रवणिकरतुरुष्कदण्ड सर्वादायनाज्ञां विधेयींभूयदान्तव्योति।

भवन्तिचात्र श्लोकाः।

भूमिंयःप्रतिगृह्णाति यश्चभूमिंप्रयच्छति। उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतंस्वर्गगामिनौ॥ १॥ संवंघमासनंछत्र वराश्वावरवारणाः। भूमिदानस्य-चिन्हानि फलमेतत्पुरंदर॥ २॥ सर्व्वानेतान्भाविनःपार्थिवेन्द्रान्भूयो भूयो याचतेरामचन्द्रः। सामान्योऽयंधर्मसेतुर्नृपाणां कालेकालेपाल-नीयोभवद्भिः॥ ३॥ वहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभिःसगरादिभिः। यस्ययस्य-यदाभूमिस्तस्यतस्यतदाफलम्॥४॥ गामेकाम् स्वर्णमेकञ्च भूमेरप्येकमङ्ग-लम्। हरन्नरकमाप्नोति यावदाहूतसंप्लवम्॥ ५॥ तड़ागानां सहस्रेणा-प्यश्व मेघशतेनच। गवांकोटिप्रदानेन भूमिहर्त्ता न शुद्धति" ॥ ६॥ इति।

—꧁—

किए हुए इत्यादि। तो इस अनेक प्रकार की शिव मूर्त्तियों की प्राप्ति से शंका होती है कि आगे लिंग पूजन का आग्रह नहीं था।

काशी में किसी समय में दश नामी गोसाइयों का बड़ा प्राबल्य था और इन महात्माओं ने अनेक कोटि मुद्रा पृथ्वी के नीचे दबा रक्खी है अतएव अनेक ताम्र पत्र पर बीजक लिखे हुए मिलते हैं, पर वे द्रव्य कहाँ हैं इसका पता नहीं। इन गोसाइयों ने अनेक बड़े बड़े मठ बनवाए थे और ये सब ऐसे दृढ़ बने हैं कि कभी हिल भी नहीं सकते। इन गोसाइयों में पीछे मद्यपान की चाल फैली और इसी से इन का तेजोनाश हुआ और परस्पर की उन्मत्तता और अदालत की कृपा से इन का सब धन नाश हो गया, पर अद्यापि वे बड़े बड़े मठ खड़े हैं। इन गोसाइयों के समय म भैरव की पूजा विशेष फैली थी। कालिज में एक विस्तीर्ण पत्थर पड़ा है उस पर एक गोसाइयों के बनाए मठ और शिवाले और उसकी विभूति का सविस्तर वर्णन है मैं उस को ज्यों का त्यों आगे प्रकाश करूंगा जिससे वह समय स्पष्ट हो जायगा।

यहाँ जिस मुहल्ले में मैं रहता हूँ उस के एक भाग का नाम चौखम्भा है। इस का कारण यह है कि वहाँ एक मसजिद कई सै बरस की परम प्राचीन है। उसका कुतबा कालबल से नाश हो गया है पर लोग अनुमान करते हैं कि ६६४ बरस की बनी है और मसजिदे चिहल सुतून, यही उस की 'तारीख' पर यह दृढ़ प्रमाणी भूत नहीं है। इस मसजिद में गोल गोल एक पंक्ति में पुराने चाल के चार खंभे बने हैं अतएव यह नाम प्रसिद्ध हो गया है। यही व्यवस्था ढाई कनगूरे के मसजिद की है, यह मसजिद भी बड़ी पुरानी है। अनुमान होता है कि मुगलों के काल के पूर्व की है। इसकी निर्मिति का काल में १०५६ ई० बतलाते हैं। इस से निश्चय होता है कि इस मुहल्ले में आगे अब सा हिंदुओं का प्राबल्य नहीं था, पर यह मुहल्ला प्राचीन समय से बसा है।

मैं ने जो अनेक स्थलों पर लिखा है कि जैन मूर्त्ति बहुत मिलती हैं इससे यह निश्चय नहीं कि काशी में जैन के पूर्व हिंदूधर्म्म नहीं था, क्योंकि जैन काल से पूर्व की और सम काल की हिंदुओं की अनेक

संपूर्ण मिलती है। इस के पश्चात् विलंड जिस का शुद्ध नाम राजा श्रीवल्लभाख्य था उस को इतिहास में वर्त्तमान राजा का भाई लिखा है (प्रोफेसर डाउसन के अनुसार छोटा भाई और टेलर के अनुसार बड़ा)। यथार्थ में वह राजा और राज्यप्रबंध का कार्य सम्पादक दोनों था। दानपत्र में छोटे भाई का नाम नवकाम लिखा है। कोगणीमहाराज सोमेश्वर का वृत्तांत जिस का शुद्ध नाम डाउसन शिवग महाराय टेलर शिवरामराय बताते हैं पीछे लिखा है। इतिहास में तो यों है कि इस का पौत्र पृथ्वी कोणगणी महाधिराज था, जो सन् ७४६ में राज्य-सिंहासन पर था। यही नाम दानकर्त्ता का है और यदि भीमकोप और राजाकेसरी इसी राजा के नामांतर मान लिये जायं जैसा कि संभव होता है तो इतिहास और उन पत्र का वृत्तांत एक मिल जाता है।

(१) स्वस्ति जितं भगवता गतघनगगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज्जान्हवेकुलामलव्योमावभासनभास्करः स्वखड्गैकप्रहारखंडितमहाशिलास्तंभलब्धबलपराक्रमोदारणारिगणविदारणोपलब्धवारणविभूषणविभूषितः काण्यायनसगोत्रश् श्रीमत्कोदग्निवर्माधर्ममहाधिराजः तस्य पुत्रः पितुरन्वागतगुणयुक्तो विद्याविनयविहितवृत्तः सम्यक्प्रजापालनमात्राधिगतराज्यप्रयोजनो विद्वत्कविकांचननिकषोपलभूतो नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो दत्तकसूत्रवृत्तेः प्रणेता श्रीमान्मामहाधिराजः तत्पुत्रः पितृपैतामहगुणयुक्तोऽनेकचतुर्दन्तयुद्धावाप्तचतुरुदधिसलिलास्वादितयशाः श्रीमद्धरिवर्मामहाधिराजः, तत्पुत्रो द्विजगुरुदेवतापूजनपरो (२) नारायणचरणानुध्यातः श्रीमान्विष्णुगोपमहाधिराजः तत्पुत्रो त्र्यंबकचरणाम्भोरुहराजपवित्रीकृतोत्तमाङ्गः स्वभुजबलपराक्रमक्रयकृतराज्यः कलियुगबलपंकावसन्नधर्मवृषोद्धरणनित्यसन्नद्धः श्रीमान्माधवमहाधिराजः तत्पुत्रश् श्रीमत्कदंबकुलगगनभक्तिमालिनः कृष्णवर्ममहाधिराजस्य प्रियभागिनेयो विद्याविनयातिशयपरिपूरितांतरात्मा निरवग्रहप्रधानशौर्यो विद्वत्सु प्रथमगण्यः श्रीमान् कोगणिमहाधिराजः अविनततनामा तत्पुत्रो विजृम्भमाणशक्तित्रय "अंदरिह" "अलत्तुप" "पौरुलाले" पेलंगराज्यानेकसमरमुखमखहुतशूरपुरुष पशूपहारविघसविहस्तीकृतकृतान्ताग्निमुखः किरातार्जुनीयपंचदशसर्गो (३) दिकोंकारो दुर्विनतीतनामधेयः तस्य पुत्रो दुर्दान्तविमर्द मिमृमितविश्वम्भरादिपंचालिमालामकरन्दपुंजपिंजरीक्रीय-

श्रीमान् होलकरोपाख्यख्यातो राजन्यदर्पहा ।
मल्लारिरावनामाऽभूत् खंडेरावस्तु तत्सुतः ॥ १ ॥
विलासी गुणकल्पद्रुः शूरो वीराभिसम्मतः ।
तत्पत्नी पुण्यचरिता कुलद्वयविभूषणं ॥ २ ॥
अहल्याख्या तया ख्याता तृषु लोकेषु कीर्तये ।
बद्धोघट्टस्सुसोपानो मणिकर्ण्यास्सुविस्तृतः ॥ ३ ॥
तत्पार्श्वयोर्विधायेमो प्रासादावुन्नतो पृथक् ।
तयोः पश्चिमदिकसंस्थे स्थापितो गौतमेश्वरः ॥ ४ ॥
प्राक् संस्थे तारकेशांक अहल्योद्धारकेश्वरः ।
स्थापितो वसुवेदेह विधुसम्मतवैक्रमे ॥ ५ ॥
रामेन्दूदधि भू युक्ते शालिवाहनजेशके ।
राधशुक्लद्वितीयायां गुरौ दुंदुभिवत्सरे ॥ ६ ॥
घट्टोत्सर्गः सुसम्पन्नः यजमान्यभ्यनुज्ञया ।
स्वामिकार्यहितैकेच्छु जीवाजीशर्म्म हस्ततः ॥ ७ ॥

(शाके १७१३)

काशी में विन्दुमाधव घाट सम्वत् १७६२ में श्री छत्रपति महाराज के पन्त प्रतिनिधि परशुराम के पुत्र श्री श्री निवास की स्त्री श्रीमती राधाबाई ने बनवाया है और ऐसा अनुमान होता है जब यह घाट नहीं बना था तभी से इस का नाम नरसिंह दाढ़ा था; क्योंकि नरसिंह दाढ़े का नाम उस श्लोक में पड़ा है जो बाई साहब के काल का बना है। निश्चय है कि नरसिंह दाढ़ा के नाम से लोग सोचेंगे कि यह कौन वस्तु है, परंतु मैं इतना ही कह सकता हूँ कि वह नरसिंह दाढ़ा एक पत्थर का केवल मुख का आकार है जो रामानंद की मढ़ी में हनुमान जी की बाईं ओर दीवार में लगा है और जब वहाँ तक पानी चढ़ता है तब इंद्रदमन का नहान लगता है। ऐसा अनुमान होता है कि यह इसी नाप के हेतु बनाया हो वा यह किसी पुरानी मूर्ति का मुँह है जो नरसिंह जी के मुँह के नाम से पूजता है। पर कोई कहते हैं कि वह रामानंद गोसाईं का मुँह है। जो हो, मुँह तो गोल पुराना मुड़मुंडा सा है।

तेषु शकवर्षेष्वातितेष्वात्मनः प्रवर्द्धमानविजयवीर्य संवत्सरेपंचाशत्तमेव-र्द्धमाने मान्यपुरमधिवसति विजयस्कंदावारे श्रीमूलमूलशरणाभिनंदितनंदिसंगान्वयइन्नगित्तरंनाम्निगने मूलिकलगच्छे,स्वच्छतरगुणाकरकीरप्रतति-प्रल्हादितसकललोकः चंद्रइवापरः चंद्रनंदिनामगुरुरस्ति तस्य शिष्यः समस्तविबुधलोकपरिरक्षणक्षमात्मशक्तिः परमेश्वरलालनीयमहिमा कुमारवद्द्वितीयः कुमारनंदिनामा मुनिपतिरभवत् तस्यांतेवासी समधिगतसकलतत्वार्थसमर्पितबुधसार्द्धसंपत्संपादितकीर्तिः कीर्तिनंद्याचार्यो नामा महामुनिः समजनि, तस्य प्रियशिष्यः शिष्यजनकमलाकरप्रबोधजनकः मिथ्याज्ञानसंततसनुतससन्मानात्मकसद्धर्मव्योमावभासनभास्करो-विमलचंद्राचार्यः समुदपादि, तस्य महर्षेर्धर्मोपदेशनयाश्रीमद्बाणकलकत्तः सर्वतपोमहानदीप्रवाहः वाहुदण्डमण्डलाखण्डितारिमंडलद्रुमशुंडा डुंडुप्रथमनामधेयो निगुण्डयुवराजो जज्ञे, तस्य प्रियात्मजः आत्मजनित-नयविषनिःशेषीकृतरिपुलोकः लोकहितः मधुरमनोहरचरितः चरितार्त-त्रिकर्णप्रवृत्तिः परमगुणप्रथमधेयः श्रीपृथ्वीनिगुंडराजोऽजायत पक्कवा-धिराजः प्रियतमजायां सगरकुलतिलकात् मरुवर्मणो जातांकुण्डा-धिनामधेयामुवाह भर्तृभावनाविर्भुवयातयासंततप्रवर्तितधर्मकार्य-यानिर्मिताय श्रीपुरोत्तरदिशामलं कुर्वतेलोभतिलकधाम्नेजिनभवनाय खंडस्फुटितनवसंस्कारदेवपूजादानधर्मप्रवर्तनार्थं तस्य एव पृथ्वी-निगुंण्डराजस्य विज्ञापनया महाराजाधिराजपरमेश्वर श्रीजसहितदेवेन निगुंडविषयांतः पाति पोन्नालिनामाग्रामः सर्वपरिहारोपेदत्तः तस्य सीमां तराणि पूर्वस्यांदिशि नोलिवेलदा वेगलेमालदि, पूर्वदक्षिणस्यांदिशिपारयंगेरि, दक्षिणस्यांदिशि वेडगली गेरयादिल गेरयापल्लाद-कुदल, दक्षिणपश्चिमायांदिशिजयद शकेय्यावेडगलमोलादुत्तरपश्चिमायां-दिशि हेनके वितालतुवाजराकेलि, पश्चिमोत्तरस्यांदिशि पुणुसेयगोट्टगा-लाकालकुप्ये, उत्तरस्यांदिशि सामगेडेयपल्लदाह पेरमुडिक्के उत्तरपूर्वस्यां-दिशि कलाम्वेत्यगट, ईशान्यामन्यादिक्षेत्राणि दत्तानि डुंडुसमुद्रदावयलुल-किलुदाडामेगेपदिरकंडुगंमणमपालेयरेनल्लु राजारपाक्क ट्टक डुगं श्रीवरद-डुंडगामण्डरातांडडापडुययांडुतांडु श्रीवरदावयलुल्लकम्मरगत्तिनल्लिरिकं-डुगं कालानिपेरगिलयकेडगेआरमंडुगं रेपूलिगितेयाकोयेलगोदायददं इरुपत्तगुंडुगं भेद्य अद्धवुश्रीवरवा वड्गणापद्धवणाकोनुणन् देवंगेशीम-

देखने से ज्ञात हुआ कि यह प्राचीन तीर्थ है और तीन सौ बरस पहिले भी यहाँ पांडवों का मंदिर था। वरंच "सुकृति कृति हितैषी" पद जो उस में राजा टोडरमल का विशेषण दिया है उस से ज्ञात होता है कि उन्हों ने भी किसी के बनाये हुए कुंड का जीर्णोद्धार किया है इससे उसकी और भी प्राचीनता सिद्ध होती है। यह बावली राजा टोडरमल ने सं० १६४६ में बनवाई थी और "पांडव मंडपे" इस पद से स्पष्ट है कि वहाँ उस काल में पांडवों का मंदिर था। इस का पहिला श्लोक नहीं पढ़ा गया बाकी के तीन श्लोक पाठकों के विनोदार्थ यहाँ प्रकाशित होते हैं।

प्रत्यर्थिक्षितिपालकालनसु ***** ने दूतिका।
मुद्राङ्क प्रकटप्रतापतपनप्रोद्भासिताशामुखे ॥ १ ॥
क्षाणांशेकवरे प्रशासतिं मही तस्मिन् नृपालावलिस्फूर्जन्मौ-
लिमरीचिवीचिरुचिरोदञ्चत्पदाम्भोरुहे ॥ २ ॥
तद्राज्यैकधुरन्धरस्य वसुधा साम्राज्यदीक्षागुरोः।
श्रीमद्दण्डनवंशमण्डनमणेः श्रीटोडरक्ष्मापतेः।
धर्मौघैकविधौ समाहितमतेरादेशतोऽचीकर-
द्वापीं पाण्डवमण्डपे**वनो गोविन्ददासः सुधीः ॥ ३ ॥
ऋतुनिगमरसात्मासम्मिते १६४६ वत्सरेशे
सुकृतिकृतिहितैषी टोडरक्षोणिपालः।
विहितविविधपूर्त्तोऽचीकरच्चारु वापीम्
विमलसलिलसारां बद्धसोपान पंक्तिम् ॥ ४ ॥

—❀—

पंपासर का दानपत्र।

यह दानपत्र गोदावरी के तीर पर एक खेतवाले को मिला है। यह पाँच टुकड़ों में अच्छा गहिरा खुदा हुआ कपाली लिपि में पाँचों टुकड़े एक तामे की सिकड़ी में बँधे हुए एक तामे के डब्बे में बंद और उसी डब्बे में शीसे की भाँति किसी वस्तु के आठ टुकड़े और एक चोंगा

वदनं निजं प्रतिबिंब भूत मितीह निर्मल धीर नीरगमंबुजं । आदातु मुद्यत पाणिना जलदोलनेन गत श्रमा वितनोति कानन कुंभ पूरणमत्र विस्मय विभ्रमा ॥ ५ ।' रसाल तरु मंजुलं पिक विनोद नादोत्कलं क्वचित् कनक केतकोद्भ पराग पिंगांचलं । सशीकर सुशीतलं सुरभि वृंद मंदानिलं मदीय मति निर्मलं जयति वीर भूमी तलं ॥ ६ ॥ यदिय तट भूतलं हसित कुंद पुष्पोज्वलं क्वचिद्विकच मालती कुसुम लोल भृंगे ज्वलं । क्वचित् शरलसारणी तरल नीरता पेशलं स्तुवंति सुरयोपितः किमुत नंदना दप्यलं ॥ ७ ॥ एतद्भित्ति वटालयेषु रुचिरोत्कीर्णैः सुरीणां गणैः क्रीडो पागत पौरयौवत युगोपांते रवंते रपि । तत्ताद्दक्प्रतिबिंबिते रुपलसन्नागांगना संगिभिर्मन्ये कुंडमिदं रमा विरचितं लोकत्रया दद्भुतं ॥ ८ ॥ यद्वारुण प्रतिष्ठा समये समुपेत्त विबुध वृंदस्य । कनक-दुकूल विवरणं विदधाति रमेति लोलुपति सुराः ॥ ९ ॥ यावच्छेप शिरःसुशेखरपदं भूभूतधात्र्या मये मेरुमेरु गिरेरुपर्युपरितो ब्रह्मादि लोकत्रयं । धत्ते यावदमुत्र वा दिनमणि माणिक्य नैराजनं तावच्चारुतरं रमा विरचितं कुंडं चिरं नंदतु ॥ १० ॥

श्री रमा वर्णनं

उन्मीलद्गुण रत्नरोहण मही प्रौढप्रभालंकृता सौंदर्यामृत वाहिनी मधुसुहृत्साम्राज्य सर्वस्वभूः । सौराष्ट्रेश्वर यादवान्वयमणेः श्रीमंडलीक प्रभो राज्ञी चारु रमावती वितनुते संगीतमानंददं ॥ १ ॥ कुंभब्रह्म सुमीरित क्रममगा दुच्छिन्नता यत्वितो तत्पोद्धृत्य गिरीश भक्ति परमा रम्या रमा भारती । संगीतं भरतादि गोत्र विधिना ब्रह्मोक तानोपमा मंदानद विधायकं विलसति प्रोल्हासयंति परम् ॥ २ ॥ नादा नंद मयी वरोन्नतकरा लीलोल्लसद्वल्लकी रागा रक्त गिरीश्वर स्वरकला शर्मोर्मि-रम्यो ज्वला । लीलां दोलित राजहंस गमना सद्भोगि भर्त्तुः सुता पद्मा मोदित मानसा विजयते वागीश्वरी श्रीरमा ॥ ३ ॥ संजाता जलधे विवेक विधुरा धीरेष्वबद्धादरा चापल्याऽभिरता प्रमोद मयते या पंकजातस्थितेः । विद्वत् कुंभ नृपोद्भवा गुण गणा पूर्णा प्रवीणा नदी धैर्य प्रीति मतीति वां विजयते श्रेयो चित श्रीरमा ॥ ४ ॥ राज द्रैवत भूधरां तररतं श्रीकांतमाराधयत् कांतानंदित मानसा यदनिशं राधेव

इन में वेणु के पुत्र सगर के पौत्र द्वीपसिंह के प्रपौत्र नाभाग और त्रिशंकु नामक दो राजा हुए ॥ ९ ॥

नाभाग को भोज मदमत्त और भगवान तीन पुत्र और त्रिशंकु को वावन नामक एक पुत्र था ॥ १० ॥

बावन को गौरचंद्र और हनूमान दो पुत्र हुए, जो अव तमसा कृष्णा तक नीलगिरि से हिमगिरि के प्रांत तक राज्य करते हैं ॥ ११ ॥

इन के अभिषेक के जलकण से और हाथियों के मद से तथा शूरों के परिश्रम और रति शूरों के स्वेद जल और इन के शत्रुओं की स्त्री के नेत्रजल से मिल कर इन की दान जलधारा नगर के चारो ओर खाई सी बन रही है ॥ १२ ॥

जिन लोगों को ये जीतते थे उन की ऐसी दुर्गति होती थी कि वे अन्न वस्त्र को भी दीन हो जाते थे तथापि ये ऐसे दयालु थे कि यही मात्र उन के शरण होते थे ॥ १३ ॥

प्राचीन कर सब इन लोगों ने क्षमा कर दिए। इन के काल में केवल आठ दस कर बच गए। उस पर भी प्रजा को दुःखी देख कर ये उन का बड़ा प्रतिपालन करते थे ॥ १४ ॥

वरंच ये ऐसे दयालु थे कि और राजाओं की भांति आप कर लेने में ये ऐसे लज्जित होते थे जिस का वर्णन नहीं। इसी से पाठशाला धर्म्मशाला इत्यादि धर्म कार्य के हेतु कर संगृहीत हो कर उन्हीं कामों में व्यय होता था ॥ १५ ॥

शुकलानधान उसी को समझते थे जो इन के जातिवालों की नौकरी वा बनज के मिस आवे ॥ १६ ॥

लक्ष्मी के एक मात्र आश्रय सरस्वती के पूरे दुर्गा के वर्ग तीनों शक्ति से ये सम्पन्न और त्रिदेव पुरजन के बड़े आग्रही थे ॥ १७ ॥

इन धर्मावतारों ने पंपासर तीर्थ पर चन्द्रमा के पूर्ण ग्रास पर फाल्गुनी पौर्णिमा सम्वत् १६७ पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र व्यतीपात योग वैद्रथ करण शनिवार कन्या पर गुरु मेप पर शुक्र मीन पर सूर्य कुम्भ में चंद्रमा मिथुन में बुध करकट में मंगल और शनि में पंपासर तीर्थ में स्नान कर परम धार्मिक परमेश्वर परम माहेश्वर भट्टारक महाराज

गोविंद देवजी के मंदिर की प्रशस्ति।

"सम्वत ३४ श्री शकबंध अकबरशाह राज्ये श्रीकुर्मकुल श्रीपृथीराजाधि। राजवंश महाराज श्रीभगवंतदास सुत श्रीमहाराजाधिराज श्रीमानसिंहदेव श्रीवृन्दावन जोग पीठस्थानकरा श्रीगोविन्ददेव को।"

इस के प्रारंभ होने का यह संवत् जानना चाहिए।

"श्रीवृन्दाविपिने शिवादिदिविपद्वृन्दावलीवन्दिते........श्री गोविन्द......ष्णक्सदाराजते॥ १॥ श्रीमानर्कवरोयदा भुवमयात्सर्वातदैवाधुनासर्वः सौख्यम...गणैः स्वंधर्ममुच्चैर्भजन्। श्रीगोविन्द पदंतदेतदयिते वासायसद्वैष्णवालम्भंल...तस्मै सदे वा० पः॥ २॥ तस्मिस्तस्यसदान्वितच्तितिपतिः श्रीमानसिंहाभिधः पृथ्वीराज त्रिराज... घे श्चन्द्रमाः। भूभृदभारहमल्लजात भगवद्दासात्मजोमन्दिरं कुर्वन्निन्दिरयावलादचलया॥ ३॥ ...स्तथाविधमहाराजाधिराजाप्यसौ येनैवारि दिगनेन विजयीध्वरत भ्रमः क्रीड़ति सश्रीमान० सिंह नवायुद्धेयस्य नियत्यं दिव्य गिलयाः कीर्त्तिध्रजत्वंगताः॥ ४॥ यः क० घिपजांतिरेप विजयीश्री मानसिंहोनृपः......सदा विजत......दास सुधीः। श्रीगोविन्दपदारविन्द...स्तनमन्दिरं संमदान् कुर्व्वन्नुदयममत्रतूर्ण...पू... ॥ ५॥ श्रीमानसिंहाद्भुतम॥ ६॥ ...इन्द्रप्रस्थनिवासि...पुगुरुर्गोविन्ददासाभिधः। ...भवदाविष्य दखिल श्रीवैष्णवानांसुखं श्रीकर्ता हरिणासदानि जदयाया० याचिनि...॥ ७॥ श्रीग्रसेनः कृती, तौद्वौश्रीयुतभानसिंहनृपति प्रस्थायितौनन्द ताम्। किम्वागनद्ववनीय...प्रतिपदंसौस्यंगम हद्विन्दतु॥ ८॥ मुनिवेदर्तुचन्द्राहू १६४७ सम्वन्मन्दिर सम्भवे...॥६॥ श्रीमद्रूपसनातननामानौतौभजेतज॥ १०॥"

इन पद्यों का अविकल न होने से अर्थ लिखना हम उचित नहीं समझते। केवल एक दो बात स्मरण रखने के योग्य हैं।

१ म. अकबर का संस्कृत नाम "अर्कवर" है, प्रायः भाषा-रसिक और संस्कृत-रसिक लोगों के उपयोगी है। २ य. मानसिंह की वंशपरम्परा यह है, राजा भारहमल्ल (वा भारामल्ल) राजा भागवतदास

कि इस के दिये हुये गाँवों के शतावधि दानपत्र मिले हैं। ये लोग वैष्णव वा वैष्णवों के अनुयायी थे, क्योंकि इन के दानपत्रों पर गरुड़ का चिह्न और गोविंदचन्द्र की मोहर पांचजन्य शंख है। 'अकुंठोत्कुंठ' यह श्लोक प्रायः दानपत्रों पर है। यह दानपत्र संवत् ११८२ में माघ वदी ६ शुक्रवार को श्रीचमती (?) तीर्थ में गंगा में स्नान कर के राजा गोविंदचन्द्र ने गौतम गोत्र के गोतमाङ्गिरस मुद्गल विप्रवर के ब्राह्मण ठक्कर अल्हन के पुत्र छीभठ वाभठ दोनों भाइयों को हलद तालुके का गोंउली नाम गाँव दिया है।

स्वस्ति—'अकुण्ठोत्कुण्ठवैकुण्ठकण्ठलुठत्करः। संरम्भः सुरतारम्भे सश्रियः श्रेयसेऽस्तुवः ॥ १ ॥ आसीदशीतद्युति वंशजातक्ष्मापालमालासुदिवङ्गतासु। साक्षाद्विवस्वानिवभूरिधाम्ना नाम्ना यशोविग्रह इत्युदारः ॥ २ ॥ तत्सुतोऽभून्महीचन्द्रश्चन्द्रधामनिभंनिजम्। येनापारमकूपार पारेव्यापारितंयशः ॥ ३ ॥ तस्याभूत्तनयोनयैकरसिकः क्रांतद्विपन्मण्डलो विध्वस्तोद्धतवीरयोतिमिरः श्रीचन्द्रदेवोनृपः। येनोदार तरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रवम् श्रीमङ्गाधिपुराधिराज्यमसमं दोर्विक्रमेणार्जितम् ॥ ४ ॥ तीर्थानि काशिकुशिकोत्तरकौशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य ॥ हेमात्मतुल्यमनिशंददता द्विजेभ्यो येनाङ्किता वसुमती शतशस्तुलाभिः ॥५॥ तस्यात्मजोविजयपालइतिक्षितीन्द्रचूड़ामणिर्विजयतेनिजगोत्रचन्द्रः। यस्याभिषेककलशोल्लसितैः पयोभिः प्रक्षालितंकलिरजः पटलं धरित्र्याः ॥ ६ ॥ यस्यासी द्विजयप्रयाणसमये तुङ्गाचलोच्चैश्चलन्माद्यत्कुम्भिपदक्रमायमभरत्रस्यन्महीमण्डलम्। चूड़ारत्न विभिन्नतालुगलितसनासृगुद्भासितः शेषः पेषवशादिवक्षणमसौक्रोडेनिलीनाननः ॥ ७ ॥ तस्मादजायत निजायत बाहुवल्लिवद्धावरुद्धनवराज्य गजोनरेन्द्रः। सान्द्रामृतद्रवमुचा प्रभवो गवां यो गोविन्दचन्द्रइति चन्द्रइवाम्बुराशेः ॥ ८ ॥ नकथमप्यलभन्तरणक्षमास्तिसृषु दिक्षुगजानथवज्रिणः। ककुभिबभ्रमुरभ्रमुवल्लभ प्रतिभटाइवयस्यघटागजाः ॥ ९ ॥

सोयं समस्तराजचक्रसंसेवितचरणः परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निज भुजोपार्जित श्रीकान्यकुब्जाधिपत्य श्रीचन्द्रदेवपदानुयात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्व-

के सामने थी, परंतु अबकी जीर्णोद्धार में परिष्कार एवं संस्कार करके पश्चिम प्रांत में एक चौतरे पर स्थापित कर दी गई। इस में चरणचिन्ह शृङ्गवर के बने हैं और एक स्तंभ पर लिपि है। ज्ञात होता है कि इस में किसी के अस्थि समूह सञ्चित थे, क्योंकि चरणचिन्ह का व्यवहार प्रायः ऐसे ही स्थान में होता है। दूसरे राजाओं में ऐसी रीति भी प्रचलित है पुण्य-स्थान में अस्थि सञ्चय किया जाय।

"सम्वत् १६६३ वरषे कातिक बदि ५ शुभदिने हजरत श्री२ शाहजहाँ राज्ये राणा श्रीअमरसिंह जी को बेटो राजाश्रीभीम जी राणी श्रीरम्भावती चौखंडी सौराई छैजी।"

वौद्धमत का श्लोक जो सारनाथ की धमेख में मिला था।

७ ये धर्म्महेतु प्रभवाहेतुतेषां तथा गता ह्यवदत्
तेषांचयो निरोध एवंवादी महाश्रमणः।

विहार जिले में बहुतेरी प्राचीन बौध मूरतों पर यह श्लोक खुदा हुआ है, वरन् राजगृह के प्रसिद्ध जैन मंदिर में भी जो बस्ती में है एक मूर्त्ति पर यही श्लोक खुदा है, और इसी कारण हम उस को प्राचीन बौधमती अनुमान करते हैं।

जेनरल कनिङ्हाम साहिब ने जो दो हजार बरस के लगभग पुराने राजा वासुदेव की अथवा राजा वासुदेव के संवत् नव्वे में बनवाई महावीर स्वामी की मूर्त्ति मथुरा में पायी है उस पर ६० का अंक लिखा है। जेनरल साहिब ने जो उस मूर्ति पर से हर्फों का छापा लिया है उस के एक (पहले) टुकड़े में (सिद्ध ओं नमो अरहत महावीरस्य...... राजा वासुदेवस्य संवत्सरे ६०) लिखी है। अफसोस है कि हर्फों के घिस जाने के सबब इस से अधिक उस की इबारत पढ़ी ही नहीं जा सकती है।

जिला गया के प्रसिद्ध स्थान देवमंगा में एक सूर्य्य का मंदिर है उस पर यह श्लोक खुदा है। इस लेख से आश्चर्य होता है कि इतने दिनों का लेख वर्त्तमग्न हो।

नागमंगला का दानपत्र ।

श्रीरङ्गपट्टन से १५ कोस उत्तर नागमंगल शहर में एक मंदिर है। वहाँ पर निम्नलिखित लेख ६ ताम्रपत्रों पर खोदा हुआ मिला है जो कि एक मोटे धातु के कड़े से वेधित हैं, ये पत्रे १० इंच लम्बे और ५ इंच चौड़े हैं।

इस लेख से ज्ञात होता है कि पृथिवी निगुड़ राजा की स्त्री कुंदेवी जो पल्लवाधिराज की पोती थी उसने शके ६९९ में एक जैन मंदिर स्थापित किया था। इसी के सहायता के कारण उस के पति को विजय स्कन्धावार के महाराज पृथ्वी कोगणि से उस के राज्यप्राप्ति के पचास बरस बाद प्रार्थना करने पर यह दानपत्र मिला था।

मर्कए के पत्रों के लेख से मिलता हुआ कुछ कोएगू राजाओं का वृत्तांत इस लेख के पूर्व में है, जो सन् ४६६ से आरंभ होता है। इन लेखों में केवल इतना ही अंतर है कि इस में प्रथम महाराज का नाम कोडगणी वर्म धर्म महाधिराज और छठें का कोगणी महाधिराज लिखा है और केवल दानकर्त्ता को कौएगणी लिखा है। इस शब्द के भिन्न भिन्न प्रकार के लिखे जाने से कुछ प्रयोजन नहीं केवल इस से यह सूचना होती है कि कुर्ग में जो एक पत्थर पर खुदा लेख निकाला था और जिस को सत्यवाक्य कोड़गिणी वर्म धर्म महाराजाधिराज ने सन् ८४० में लिखा था उस में भी इसी शब्द कोणगणी ही का अपभ्रंश है और इस को कभी कभी कोडगू भी लिखते थे जो कि कोड़ागू से बहुत मिलता है। यह कोड़ागू उस देश का प्रचलित नाम है जिस को अंग्रेज़ लोग कुर्ग लिखते हैं।

मर्करा के लेख के सदृश इस से भी ज्ञात होता है कि दूसरे माधव और कदंब राजाओं में संबंध भया था अर्थात् पूर्वोक्त ने दूसरे की भगिनी से विवाह किया था, इस में विष्णु गोप के पुत्र गोद लेने और डिंडिकरराय के राज्य का कुछ भी वर्णन नहीं है। इस समय से लेकर भूविक्रम के राज्य तक जिसने सन् ५२१ में राज्यसिंहासन को सुशोभित किया दानपत्र और राज्य इतिहास दोनों में राजाओं की नामावली

त्रेता में—नैमिषारण्य तीर्थ, सोमेश्वर लिङ्ग, जालंधर पीठ। राजा-कद्रू, पुरूरवा, प्रीषघ, वेएय, नैषध, त्रिशृङ्ग, मरीचि, इक्षु, मनु, दिलीप, रघु, त्रिशंकु, हरिश्चंद्र, रोहिताश्व, धुंधुमार, जन्हु, सगर, भगीरथ, वेणु, वत्स, भूपाल, अज, अतिथि, नल, नील, नाभ, पुंडरीक, क्षेमक, शतधन्वा, शतानीक, पारिजातक, दलनाभ, पुष्पसेन, अजपाल, दशरथ, श्रीराम, लवकुश, अङ्गस्वामी, अग्निवर्ण।

द्वापर में—कुरुक्षेत्र तीर्थ, केदारेश्वलिंग, अवंती पत्तन। राजा—भर्तृहरि, पृथु, अनुविरक्त, अव्यक्त, फेन, इंद्र, ब्रह्मा, अत्रि, सोम, बुध, धनुर्जय, शतनु, गव्य, गवाक्ष, असमञ्जस, निर्घोष, प्रजापति, अक्रूर, उपवीर, अनुसंधि, ज्येष्ठभरत, कनिष्ठभरत, धर्मध्वज, शांतनु, पांडु, नरवाहन, क्षेमक, ययाति, क्षान्त, चित्र, पार्थ, अर्जुन, अभिमन्यु, परीक्षित, जन्मेजय।

कलियुग मे—गङ्गा तीर्थ, कालीदेवता, प्रतिष्ठानपुरनगर। कल्कि-अवतार इस ने अलग तीन चाल पर यहाँ लिखा है और उन के परस्पर जन्मदिन, पिता माता के सब अलग अलग हैं। कलियुग के आरंभ से ३०४४ वर्ष के भीतर युधिष्ठिर, परीक्षित, जन्मेजय, वत्सराज, क्षेमसिंह, सोमसिंह, रणकण्य, अंबुसेन, रामभद्र, भरतसिंह, पठाणसिंह, विक्रम-सिंह, नरसिंह, आदित्यसिंह, ब्रह्मसिंह, वसुधासिंह, हर्षसेन, भर्तृहरि। ३०४४ में विक्रम का राज्य, ३१५६ में शालिवाहन का राज्य, फिर सूर्य्य-सेन, शक्तिसिंह, खड्गसेन, सुखसिंह, मम्मलसेन, मुञ्ज, भरत, श्रीपाल, जयानंद, रामचंद्र, छत्रचंद्र, अनूप सिंह, तुम्बरपाल, ननब्रहाण, रणवादी, शालपाल, कीर्त्तिपाल, अनङ्गपाल, विशालाक्ष, सोमदेव, बलदेव, नागदेव, कीर्त्तिदेव, पृथ्वीपति इतने प्रसिद्ध राजा हुए। फिर म्लेच्छों का राज्य आरंभ हुआ। सिकंदरशाह ने विश्वेश्वर का अपराध किया। इस के पीछे मुसलमानों का वर्णन है।

फिर कालनिर्णय यों किया है—व्यासादिक का काल ५१५४ वष कलियुग लगने के पूर्व। श्री कृष्णावतार द्वापर की संध्या प्रारंभ, कलियुग के पूर्व क्योंकि कलि का काल होते भी उस ने प्राबल्य नहीं पाया था। क्षेमक तक युधिष्ठिर का वंश, सुमित्र तक इक्ष्वाकु का वंश

माणचरणयुगलनलिनोमुत्तरनामनामधेयः तस्य पुत्रश्चतुर्दशविद्यास्थाना-धिगतविमलमतिः विशेपतो नवकोशस्य नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो रिपुतिमिरनिकरनिराकरणोदयभास्करः श्रीविक्रमप्रथितनामधेयः तस्य पुत्रः अनेकसमरसम्पादितविजृंभितद्विरदरदनकुलिशघातव्रणसमरुद्धस्वास्थ्यद त्रिजयलक्षणलक्ष्मी कृतविशालवक्षस्थलः समधिगतसकलशास्त्राधितत्त्वः समाराधितत्रिवर्गो निरवद्यचरितप्रतिदिनवर्द्धमानप्रभावो भुविक्रमनामधेयः अपिच ॥

नानाहेतिप्रहारप्रतिहतसुभटारामवाटोत्थितासृग् ।
भारास्वादामृताशक्षुधितपरिसरद्गृध्रसंरुद्धसीमे ॥
सामन्तान्पल्लवेन्द्रान्नरपतिमजयद्योविलंदाभिधाने ।
राज्याश्रीवल्लभाख्यः समरशतजयावाप्तलक्ष्मीविलासः ॥

तस्यानुजो नतनरेन्द्रकिरीटकोटिरत्नार्कदीधितिविराजितपादपद्मः ।
लक्ष्म्याः स्वयं वृतपतिर्नवकामनामाशिष्टप्रियोरिगणदारणगीतकीर्तिः ॥

तस्य कोंगणिमहाराजस्य सीमेश्वरापरनामधेयस्य पौत्रः समवनतसमस्तसामन्तमुकुटतटघटितबहुबलरत्नविलसदमरधनुष्काण्डमण्डितचरणनखमण्डलो नारायणे निहितभक्तिः शूरपुरुषतुरगनरवारणघटा संघट्टदारुणसमरशिरसिनिहितात्मकोपो भीमकोपः प्रकटरतिसमय समनुवर्तनचतुरयुवतिजनलोकधूर्तो लोकधूर्तः सुदुर्धरानेकयुद्धमूर्धन्यलब्धविजयम्पदद्दितगजघटां (५) तकेसरीराजकेसरी अपिच ॥

यो गंगान्वयनिर्मलांलंरतलव्याभासनप्रोल्लसन् ।
मार्तण्डोरिभयंकरः शुभकरः संमार्गरक्षाकरः ॥
सौराज्यं समुपेत्यराज्यसविताराजन्यतारोत्तमो ।
राजा श्रीपुरुपेश्वरो विजयते राजन्यचूड़ामणिः ॥
कामः रामः सचापे दशरथतनयो विक्रमे जामदग्न्यः ।
प्राज्ये वीर्ये बलारिर्बहुमहसिरविः स्वप्रभुत्वेधनेशः ॥
भूयोविख्यातशक्तिः स्फुटतरमखिलप्राणभाजांविधाता ।
धात्राश्लिष्टः प्रजानांपतिरितिकवयोयंप्रशंसंतिनित्यम् ॥

तेन प्रतिदिनप्रवृत्तमहादानजनितपुण्याहघोषमुखरितमन्दिरोदारेण श्रीपुरुषप्रथमनामधेयेन पृथ्वीकोंगणिमहाराजेन, अष्टानवत्युत्तरपट्च्छ-

दर्पं एद्दिदं मूवन्तादूविन्दुमनेतानं अस्य दानस्य साक्षिणः अष्टादशप्रकृतयः अस्य दानस्य साक्षिणः पराणवति सहस्रविपयप्रकृतयः योऽस्यापहर्ता लोभान्मोहात्प्रमादेन वा सपंचभिर्महद्भिः पातकैः संयुक्तो भवति यो रक्षति सपुण्यभाग् भवति अपि चात्रमनुगीताः श्लोकाः ।

स्वदातुं सुमहच्छक्यं दुःखमन्न्यस्य पालनं ।
दानं वा पालनं वेति दानाच्छ्रेयोऽनुपालनं ॥
देवस्वं तु विषं घोरं न विषं विषमुच्यते ।
विषमेकाकिनं हन्ति देवस्वं पुत्रपौत्रकौ ॥

सर्वकलाधारभूतचित्रकलाभिज्ञेन विश्वकर्माचार्येणेदं शासनं लिखितं चतुष्कण्डुकव्री हिवीजमात्रं द्विकण्डुककंगुक्षेत्रं तदपि ब्रह्मदेयमिव रक्षणीयं ।

चित्रकूट (चित्तौर) स्थ रमा कुंड प्रशस्तिः

ओंनमः श्रीगणेशप्रसादात् सरस्वत्यै नमः ॥ श्रीचित्रकोटाधिपति श्रीमहाराजाधिराज महाराणा श्रीकुंभकर्ण पुत्री श्रीजीर्ण प्रकारे सोरठ पति महाराया राय श्रीमंडलीक भार्या श्रीरमाबाई ए प्रासाद रामस्वामि रु रामकुंड कारायिता संवत् १५५४ वर्षे चैत्र सुदि ७ रवौ मुहूर्त कृताः । शुभं भवतु ।

श्रीमत्कुंभ नृपस्य दिग्गज रदातिक्रांत कीर्त्यं बुधेः । कन्या यादव वंश मंडन मसि श्रीमंडलीक प्रिया । संगीतागम दुग्ध सिंधुजसुधा स्वादे परा देवता । प्राद्युम्नं कुरुते वनीपक जनं कं न स्मरंतं रमा ॥ १ ॥ श्रीमत्कुंभलमेर दुर्ग शिखरे दामोदरं मंदिरं श्रीकुंडेश्वर दक्षणा श्रित गिरे स्तीरे सरः सुंदरं । श्रीमद्भूरि महाब्धि सिंधु भुवने श्रीयोगिनी पत्तने भूयः कुंड मचीकरत्किल रमा लोकत्रये कीर्त्तये ॥ २ ॥ श्रीकुंभोद्भवयां बुधिर्नियमितः किं वा सुधा दीधितेर्निक्षेप स्त्रिदशैरशोषण भिया किंवाप्सरा सुंदरं । प्राप्तुं पौर पुरंध्रि वृंद मभुजद्भूमी तलं मानसं चित्रं रामशर प्रहार भयतोब्धिर्वेह कंडायते ॥ ३ ॥ यस्मिन्नीर विहारि कोक मिथुनं क्रीडासमुन्मीलिते शीतांशा वितरेतरेण नितरां विश्लेष मासाद्य वा । तापे नैव तनौ विभर्त्य विरतं सोपान भित्ति स्फुरत् स्वीयांगे प्रतिबिंब संगम वशादूरेपि तीरे चरत् ॥ ४ ॥ पानीय हार विहार सुंदर सुंदरी
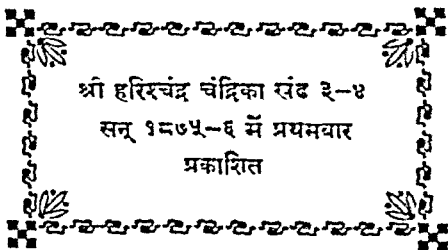
श्री हरिश्चंद्र चंद्रिका खंद २–४
सन् १८७५–६ में प्रथमबार
प्रकाशित

चावत्यतः। मेरौ कुंभकृते महीप तनय श्रीमंडलीक प्रिया श्रीदामोदर मंदिर व्यरचयत् कैलास शैलोज्वलं ॥ ५ ॥ श्रीरस्तु सूत्रधार रामा। अथ श्रीमहाराज श्रीमंडलीक प्रबंधः। इंदोरनिंदित कुलं बहुबाहुजातं वंशेषु यस्य 'बसतेरतुलं बभूव। श्रीमंडलेंद्र गिरि रेवतका-धिवासो दामोदरो भवतु वः सुचिरं विभूत्यै ॥ १ ॥ श्रीमंडलीक दर्शन परितुष्ट मना महेश्वर सुकविः। श्रीमेदपाट बसतिगुणनिधिमेनं यथा मति स्तौति ॥ २ ॥ आश्लिष्टः सुर विटपी संप्रति चिंतामणिर्मया कलितः। लब्धः सुवर्ण शिखरी मिलिते त्वयि मंडलाधीश ॥ ३ ॥ सुर विटपि विटप विशाल भुजदलकलित विपुल महाफलं। कवि चित्त चिंतामणि महागुण जाल जन्म महीतलं। अनवरत सुर सरिदमलत-भजल लुलित सुर शिखरि प्रभं कलयामि मंडल राज महमिह तोष मेमि हिम प्रभं ॥ ४ ॥ परि कलितः पुरुहूतो धन नाथो नयन गोचरो रचितः। साचात् कृतो रतीशस्त्वयि मिलिते मंडलाधीश ॥ ५ ॥ पुरुहूतमिव गुरु मंत्र यंत्रित मंगल मंडितं। धननाथमिव धन दानं तोषित चंद्रमौलिमखं-डितं [। रतिरमणमिव वर युवति कृतनुति महत विषम शरैर्युतं परि-चिंत्य मंडल राज मह मिह गोदमगममनुव्रतं ॥ ६ ॥ अंकुरिता शर्मलता कोरकिता चित चंपक व्रततिः। उल्लसिता तनु नलिनी मिलिते त्वयि मंडलाधीश ॥ ७ ॥ कलधौत विवरण तरल करजल जनित शर्म सदंकुरं जनचित्त चंपक कुसुम संभव मधुर तर मधु बंधुरं। गणनैक मणि विस्फुरण पुलकित विपुल तनु नलिनी दलं अनुभूय मंडल राज मिदमपि भवति हृदय मनाकुलं ॥ ८ ॥ कर्पूरं नयन युगे वपुषि सुधा रश्मि परिषेकः। हृदये परमानंदस्त्वयि मिलिते मंडलाधीश ॥ ६ ॥ घन सार सारसभाभि मार्दवलोचनं हिमनिर्भरे सकलं प्लुतंवपुरद्य हिमहिम धाम धामनि निर्झरे। मम मनसि परमानंद संपदुदारतर मभि बर्द्धते नरनाथ मवति विलोकिते सति मंडलेश शुचिस्मिते ॥ १० ॥ सुर तरु रद्य नरेश गेहदशं मम कलयति। सुरगिरि रिति यदुराज राजमान संकलयति। सुरपति रद्यमिति मति रुदेति। संप्रति नर नायक परिरिति नयनानुरक्ति रुदयति। दृढ़सायक अनुपमतम महिम महीप सुतमंडल सकल कला। अष्ट भूति भवमवधि नवनिधि संनिधि रधिकलमा ॥*

* अत्र अंतिम पंक्तिः पठनाशक्यत्वात्परित्यक्ता।

ब्राह्मणीराज्य नाश होने के समय सन् १४६६ ई० में वास्कोडिगामा ने पुर्तगाल लोगों के साथ कालीकट में प्रथम प्रवेश किया और सन् १५१० में गोआ उन लोगों के आधीन हो गया। बीजापुर के बादशाह आदलशाही और गोलकुंडे के कुतुबशाही और अहमदनगर के निजामशाही कहलाते थे। सन् १६२८ में अहमदनगर की बादशाहत दिल्ली के अधिकार में हो गई और गोलकुंडा और बीजापुर भी सन् १६८७ ई० में दिल्ली में मिल गए।

महाराष्ट्रों का राजस्थापन करनेवाला शिवा जी सन् १६२७ ई० में उत्पन्न हुआ।

उस के पूर्वजों का नाम भोंसला था, जो लोग दौलताबाद के पास बेरूल गाँव में रहते थे।

शिवाजी का दादा मालोजी भोंसला अपने वंश में पहिला प्रसिद्ध मनुष्य हुआ और उस ने अपने बेटे शहाजी* का विवाह अहमदनगर के बादशाह के दशहजारी सरदार जादोराव की बेटी से किया और पूना सूबा बादशाह से जागीर में पाया और शिवनेरी और चाकण दोनों किलों का सरदार भी नियत हुआ।

अहमदनगर की बादशाहत बिगड़ने पर शहाजी दिल्ली में शाहजहाँ के पास गया और वहाँ से अपनी जागीर कायम रखने की सनद ले आया, पर थोड़े ही दिन पीछे किसी वैमनस्य से दिल्ली का अधिकार छोड़ कर वह बीजापुर के बादशाह से जा मिला और अपने राज्य में करनाटक के बहुत से गाँव मिला लिये।

शिवाजी शिवनेरी किले में जनमा और तब उस का बाप करनाटक में रहता था, इस से उस ने छोटेपन में पूना प्रांत में दादोजी कोणदेव से शिक्षा पाई थी। छोटेहीपन से इस में वीरता के चिन्ह और लड़ाई के उत्साह प्रगट थे।

उन्नीस बरस की अवस्था में तोरन का किला जीत लिया और दादोजी कोणदेव के मरने पर पूना के जिले का सब काम अपने हाथ ले लिया।

---

* शाहजी नाम था। (सं०)

वा भगवंतदास राजा मानसिंह। ३ य श्रीरूपगोस्वामि: और श्री सनातन गोस्वामी की प्रशंसा जैसी आज काल है वैसी तीन सौ बरस पहिले भी थी लोग आधुनिक कीर्त्ति कल्पना न समझें।

इस लिपि के निकट ही जगमोहन के द्वार के ठीक सामने भूमि पर एक पत्थर की चट्टान में यह सफल संबंधी लिपि है "राणा श्री अमर सिंह जी सुत श्री बागजी सुत श्री सबलसिंहजी की जात्रा सफल सम्वत् सतरै सै अगरोतरामंगसेर सुद ७ सो में लखत प्रोहेत जी जबारादास पधारो सम्वत् १७७८।

पाँच छोटे छोटे शिखर के दक्षिण, उत्तर में दो मन्दिर, दक्षिण मन्दिर की शिखर कुछ फूटी है और मंदिर का द्वार दो किष्कु ऊँचा है। सीढ़ी के योग से चढ़ते हैं। भीतर एक तल घर में वृंदादेवी (वा पातालदेवी) विराजती हैं। घुमाव की बारह पक्की सीढ़ी उतर कर नीचे दर्शन करना होता है। देवी की मूर्त्ति श्रृङ्गवर (संगमरमर) पाषाण की अष्टभुजी एवं सिंहवाहिनी ११ इञ्च ऊँची और ६ इञ्च चौड़ी है। पास ही एक श्रृङ्गवर की छोटीसी चौकी पर श्रीराधिका जी के चरणचिन्ह हैं। चौकी के तट पर यह पद्य लिखा है।

तप्तकाञ्चनगौराङ्गि राधेवृन्दावनेश्वरि।
वृषभानुसुतेदेवि प्रणमामिहरिप्रिये॥

एक मोरी जिस का निकास बाहर की ओर उत्तर दिशा में है उस के ऊपर यह प्रशस्ति है।

"सम्वत ३४ श्रीशकबन्ध अकबर महाराज श्री कर्म कुल श्री पृथीराजाधिराज वंश श्री महाराज श्रीभगवन्तदास सुत श्रीमहाराजाधिराज श्रीमानसिंहदेव श्रीवृंदावन जोग पीठ स्थान मंदिर कराजो श्रीगोविंददेव को काम उपरि श्रीकल्याणदास आज्ञा कारि माणिकचंद चोपड़० शिल्पकारि गोविंददास दीलवरिकारिगरद: गोरषदासवीभवल॥"

मंदिर के चारो ओर सङ्कीर्ण कच्चे चौक में कोई उत्तम स्थान नहीं है, केवल पूर्व द्वार की बाईं ओर कुछ थोड़ी फुलवारी है और पश्चिम द्वार की ओर अति निकट एक छत्री है। यह छत्री प्रथम नाट्य मंदिर

पर चढ़ाई की और दो बेर सूरत लूटा। जब यह दूसरे बेर सूरत लूटने जाता था तब १५००० फ़ौज इसके साथ थी और राह में हुबली नामक शहर लूटने से बहुत सा धन इस के हाथ आया और फिर तो वह यहाँ तक बलवान हो गया था कि जो अपने भाई बेंक्को जी से बाप की जागीर बँटवाने और बीजापुर का इलाका लूटने को करनाटक की तरफ़ गया था तो इस के साथ ४००० पैदल और ३०००० सवार थे।

सामराज पंत से पेशवाई ले कर मोरोपंत पिंजले को उस स्थान पर नियत किया और प्रतापराव गूजर इस का मुख्य सेनापति था, जिस के मरने पर हंबीर राव मोहिता उसी काम पर हुआ।

सन् १६७६ में रामगढ़ में शिवाजी का विधिपूर्वक राज्याभिषेक हुआ और तब इसने आठ अपने मुख्य प्रधान रखे थे। पेशवापंत, अमात्य, पंतसचिव, मंत्री, सेनापति, सुमंत, न्यायाधीश और पडितराव, यही आठ पद उस ने नियुक्त किये थे और अपने जीते हुए देशों का काम आकाजी सोनदेव के अधिकार में दिया।

जिस समय सब कोंकन और पूना का इलाका और करनाटक और दूसरे देशों में भी कुछ पृथ्वी इस के आधीन थी उस समय सन् १६८० ई० में संभाजी और राजाराम नाम के दो पुत्र छोड़ कर तिरपन वर्ष की अवस्था में यह परलोक सिधारा।

शिवाजी के मरने के पीछे तेईस वर्ष की अवस्था में संभाजी गद्दी पर बैठा, पर यह ऐसा क्रूर और दुर्व्यसनी था कि इस से सब लोग दुखी थे। इस ने अपने छोटे भाई राजाराम की मा को मार डाला और सब पुराने कारबारियों को निकाल कर कलूसा* नामक कनौजिया ब्राह्मण को सब राजकाज सौंप दिया। इस की दुष्टता से इस के पिता का सब प्रबंध बिगड़ गया और सब सर्दार इस के अशुभचिंतक हो गये और यहाँ तक कि सन् १८८६ ई० में जब यह संगमेश्वर की ओर शिकार खेलने गया था तो इस को मुगलों ने पकड़ कर औरंगजेब की आज्ञा से कलूसा ब्राह्मण समेत तुलापुर में मार डाला।

* ठीक नाम कलश है। (सं०)

शून्यव्योमनभोरसेंदुकरभेद्दीने द्वितीयेयुगे ।
माघेवाणतिथौ शिते गुरुदिने, देचो दिनेशालुयं ॥
प्रारंभेदष्टदांचयेरचयितुं सौम्यादिलायांभवो ।
यस्या सीत्सनराधिपः प्रभुतया लोकोविशोकोभुवि ॥

अर्थ—दूसरे युग अर्थात् त्रेता युग के १२१६००० वर्ष बीतने पर मांघ शुक्ल पंचमी गुरुवार के दिन ऐलपुरूरवा जो बुध से इला में उत्पन्न हुआ था उस ने पाषाणादिकों से दिनेश अर्थात् सूर्य्य का मंदिर बनाना प्रारंभ किया था । जब यह राज्य करता था तब इस की प्रभुता से सब प्रजा भूमि में सुखी थी ।

प्राचीन का सम्वत् निर्णय ।

माधवाचार्य्य लिखित किसी की टीका से राजावली ग्रंथ से उद्धृत।

यह राजावली ग्रंथ किसी ज्योतिषी ने सं० १८१६ में बनाया है। इस में संवत्सर, प्रतिपदा के विधान और कालादिक का अनेक निर्णय किया है और फिर कलियुग के राजाओं का और अन्य युग के राजाओं का नाम 'राजाधिराज माधवाचार्य्य टीकायामुक्तं' कह के उस ने माधवाचार्य्य के किसी ग्रंथ की टीका से उद्धृत किया है। यह संवत् और नामादिक प्राचीन इतिहास के उपयोगी जान कर यहाँ प्रकाश किये जाते हैं।

सत्ययुग में—कृष्णातीर में अमरेश्वरलिंग, पुष्करतीर्थ, बौद्धपत्तन-पीठ । राज-कृतसंज्ञ कृतपुत्र कृतदेव त्यागी सेन, मुचकुन्द, भैरवनंद, अंधक, हिरण्यकशिपु, प्रह्लाद, विरोचन, बलि, वाणासुर, गमासुर, कपिलभद्र, निर्घोषा, मान्धाता, वेणु । कश्यप, सूर्य्य, मनु, महामनु, तत्तक, अनुरञ्जन, विश्वावसु, विमना, प्रद्युम्न, धनञ्जय, महीदास, यौवनाश्व, मान्धाता, मुचकुन्द, पुरूरवा, बलि, सुकान्ति, वीर ।

के मरने पर सन् १७१४ ई० में बाला जी विश्वनाथ पेशवा हुआ और महाराष्ट्र के इतिहास में इस का नाम सब से प्रसिद्ध है।

साहू राजा बयालीस वर्ष राज कर के छाछठ वर्ष की अवस्था में सन् १७४६ ई० में मर गया और इस के पीछे सितारे का राज्य पेशवा के अधिकार में रहा। यह मरते समय लिख गया था कि ताराबाई के पोते राजाराम* को गोद ले कर हमारी गद्दी पर बिठा कर राज काज पेशवा करैं।

राजाराम सन् १७४६ ई० में नाम मात्र का राजा हो कर सन् १७७० तक राज्य करके अपुत्र मरा। फिर शिवाजी के भांजे के वंश का एक पुरुष दत्तक लेकर साहू महाराज के नाम से गद्दी पर बिठाया, जो सन् १८०८ ई० में मरा और उस के पीछे उस का पुत्र प्रताप सिंह गद्दी पर बैठा। इस को सन् १८१८ में सर्कार अँगरेज बहादुर ने पेशवा के राज्य से बहुत मुल्क दिया, पर सन् १८४६ में इस पर दोषारोप होने से अँगरेजों ने इसे निकाल कर इसके छोटे भाई शाहाजी को गद्दी पर बिठाया, जो सन् १८४८ ई० में निर्वंश मर कर इस वंश का अंतिम राजा हुआ और उसका सारा राज्य सर्कारी राज्य में मिल गया।

दूसरा भाग।

बालाजी विश्वनाथ ने पेशवा होकर सैयदों की सहायता से दिल्ली के परतंत्र बादशाह से अपने स्वामी का गया हुआ सब राज्य फेर लिया और छ वर्ष पेशवाई करके सन् १७२० में सासवड़ गाँव में मर गया।† उसी साल में हैदराबाद के नवाबों का मूल पुरुष निज़ामुलमुल्क नर्मदा के इस पार आकर बादशाही सेना से लड़ाई कर रहा था और अपना अधिकार बहुत बढ़ा लिया था।

---

* ताराबाई के पौत्र का नाम रामराजा था, भूल से राजाराम लिख गया है। (सं०)

† १ अप्रैल सन् १७२० ई० को मृत्यु। (सं०)

और रिपुञ्जय तक जरासंध का वंश एक सहस्र वर्ष कलियुग बीते समाप्त हो चुका था। फिर १३८ वर्ष प्रद्योतनों का राज्य गत कलि ११३८ वर्ष। शिशुनाग वंश का राज्य ३६२ वर्ष ग० क० १५०० वर्ष। फिर शुद्ध क्षत्रियों का राज्य छूटकर नंदादिकों का राज्य हुआ। नंदों का राज्य १३७ वर्ष ग० क० ११३७ वर्ष। फिर कण्ववंश के राजा उन का राज्य ५५७ वर्ष ग० क० २१९४ वर्ष। फिर आंध्रराजा का ४५६ वर्ष ग० क० २६५० वर्ष। फिर सात आभीर और दस गर्दभिल राजों का राज्य ३९४ वर्ष ग० क० ३०४४ वर्ष। फिर विक्रमों का राज्य १३५ वर्ष ग० क० ३१२९ वर्ष। अंत के विक्रम को शालिवाहन ने मारा, फिर शालिवाहन वंश ने १५५ वर्ष राज्य किया। शेष पुत्र के वंशने १३९, शक्तिकुमार के वंश ने ११४, शूद्रक ने ९५ और इंदुकिरीटी ने ४८। सब ४३७ वर्ष हुए। फिर ३३ वर्ष तोमर, ३४ वर्ष चिंतामणि, ३० वर्ष राम और ३६ वर्ष हेमाद्रि राजा ने राज्य किया। सब १३३ वर्ष हुए। तब शक ५७० था। उसी के पीछे तुरुष्कलोगों का प्रवेश होने लगा। फिर भारतवंश के खंडराज हुए। फिर चालुक्य वंश ने ४४४ वर्ष, पल्लोमदत्ता ५५ वर्ष, गौड़राज २०, भिल्लराज ५० वर्ष राज्य तब शाके १००६ वर्ष कलि ४१८५। फिर यादवराजे २२७ वर्ष तब शक १२३३ वर्ष। इस वंश के देवगिरि के अंतिम राजा रामदेव को शक १२१७ में अलाउद्दीन ने जीत कर राज्य फेर दिया, रामदेव ने ५६ वर्ष और राज्य किया फिर तुरकों का राज्य ३३४ वर्ष हुआ।

सन् १७४८ ई० में एक सौ चार वर्ष का होकर निज़ामुल्मुल्क मर गया। उस के पीछे बारह वर्ष तक उसका राज्य अव्यवस्थित रहा; फिर उस के पुत्रों में से निज़ामअली नाम के एक मनुष्य ने वह राज्य पाया। रघुनाथ राव ने अटक से कटक तक हिंदुस्तान को दो बेर जीता, पर वहाँ का रुपया वसूल करना हुल्कर और सेंधिया के अधिकार में करके आप फिर आया।

इसी अवसर में अहमदशाह अफगानों की बड़ी भारी फौज लेकर हिंदुस्तान में मराठों को जीतने के लिये आया। तब सदाशिव राव भाऊ और पेशवा का बड़ा लड़का विश्वास राव ये दोनों सेंधिया, हुल्कर, गाइकवाड़ और और और सर्दारों के साथ डेढ़ लाख पैदल, पचपन हजार सवार और दो सौ तोप की फ़ौज से दिल्ली की ओर चले और सन् १७६० ई० में जब मरहटों ने दिल्ली जीती थी तब से इन की बहुत सी फ़ौज दिल्ली में भी थी सो वह फ़ौज भी इन लोगों के साथ मिल गई, पर दो महीने पीछे इन के फ़ौज में अनाज का ऐसा टोटा पड़ा कि मरहटों से सिवा लड़ने के और कुछ न बन पड़ा। यह बड़ी लड़ाई पानीपत के मैदान में सन् १७६१ ई० के जनवरी महीने की सातवीं तारीख को हुई। भाऊ निज़ामअली के जीतने से ऐसा गर्वित हो रहा था कि इस लड़ाई को वह बड़ी असावधानी से लड़ा। जब उस ने सुना कि विश्वास राव बहुत जखमी हो गया है तब हाथी पर से उतर पड़ा और फिर उस का पता न लगा। जनको जी सेंधिया और इब्राहीम खाँ गारदी भी मारे गये और दूसरे भी अनेक बड़े बड़े सरदार मारे गये, और मरहटों की ऐसी भारी हार हुई कि सारे दक्खिन में सियापा पड़ गया। और नाना साहब को तो इस हार से ऐसी ग्लानि और दुःख हुआ कि थोड़े ही दिन पीछे परलोक सिधारे। इस मनुष्य के समय में जैसी पहिले महाराष्ट्रों की वृद्धि हुई थी वैसाही एक साथ क्षय भी हो गया। सन् १७६१ में बालाजी बाजीराव उर्फ नाना साहेब के मरने पीछे उन का पुत्र पहिला माधवराव गद्दी पर बैठा। यह स्वभाव का न्यायी सूर धीर और दयालु था। मराठी राज से बेगार की चाल इस ने एक दम उठा दी थी और

महाराष्ट्र देश का इतिहास

सं० १६३३

फड़नवीस को नगर के किले में कैद कर लिया, पर बाजीराव को उस के कैद से छुड़ा कर फिर से दीवान बनाना पड़ा, क्योंकि ऐसा चतुर मनुष्य उस काल में उस को दूसरा मिलना कठिन था। नाना फड़नवीस सन् १८०० में मर गया और मराठा राज्य की लक्ष्मी और बल अपने साथ लेता गया। राज पर बैठने के पहिले बाजीराव ने दौलतराव से करार किया था कि हम पेशवा होंगे तो तुम को दो करोड़ रुपया देंगे, पर जब इतना रुपया आप न दे सका तो दौलतराव के साथ पूना लूटा। सन् १८०२ में जब दौलतराव कहीं दौरा करने गया था तब यशवन्त राव हुल्कर ने पूना पर चढ़ाई किया और पेशवा और सेंधिया दोनों की सैना को हरा कर पूने को खूब लूटा। बाजीराव इस समय भाग कर अँगरेजों की शरण गया और उन से बसई में यह बात ठहराई कि सर्कारी ८००० फौज पूने में रहै और बाजीराव को शत्रुओं से बचावै और उस का सब खर्च बाजीराव दे। अंगरेजी फौज पहुँच जाने के पूर्व ही हुल्कर पूना छोड़ के चला गया और बाजीराव फिर से पेशवा हुआ। बाजीराव ऊपर से तो अंगरेजों से मेल रखता था पर भीतर से बड़ाही बैर रखता था और दूसरे राजों को बहकाने सिवा आप भी छिपी छिपी फौज भरती करता जाता था। सन् १८१५ में गंगाधर शास्त्री पट्टवर्द्धन जो गाइकवाड़ का वकील हो कर सर्कार अँगरेज की सलाह से बाजीराव के दरबार में गया था, उस को बाजीराव ने त्र्यंबक डेंगला नाम के एक अपने मुँहलगे हुये सरदार से मरवा डाला, जो सर्कार के और बाजीराव के बैर का मुख्य कारण हुआ और सर्कार ने उस त्र्यंबक को सन् १८१८ में पकड़ कर चुनार के किले में कैद किया। सर्कारी फौज इस समय गवर्नर-जेनरल की आज्ञा से पिंडारों को शमन करती फिरती थी कि इसी बीच में बाजीराव ने भी किसी बहाने से सर्कार से लड़ाई करनी आरंभ कर दी और बापू गोखला को सेनापति नियत किया, पर अंत में हार कर सन् १८१८ ई० की ३ जून को मालकम साहेब के शरण में जाकर आठ लाख रुपया साल लेकर बिठूर में रहना अंगीकार किया। और इसी बीच में अष्ट गाँव पर छापा मार के सितारा के राजा को पकड़ लिया और इसी लड़ाई में बापू मारा गया। जब बाजीराव भागा फिरता था, उन्हीं
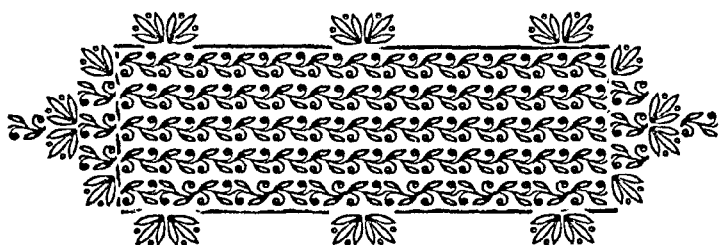
महाराष्ट्र देश का इतिहास

महाराष्ट्र देश का शृंखलाबद्ध इतिहास नहीं मिलता। शालिवाहन राजा वहाँ के पुराने राजों में गिना जाता है। इसने शाका चलाया है और यह भी प्रसिद्ध है कि इसने किसी विक्रम को मारा था। इस की राजधानी प्रतिष्ठान थी, जिसे अब पैठण कहते हैं। देवगिरि का राज्य मुसल्मानों के आगमन तक स्वाधीन था और रामदेव वहाँ का आखिरी स्वतंत्र राजा हुआ। तेरहवें शतक में मुसल्मानों ने देवगिरि (देवगढ़) विजय कर के उस का नाम दौलताबाद रक्खा। सन् १३५० ई० के लगभग दिल्ली के बादशाह के जफर खाँ नामक सूबेदार ने दक्षिण में एक मुसल्मानी स्वतंत्र राज्य स्थापित किया और वह पहिले एक ब्राह्मण का सेवक था, इस से अपना पद ब्राह्मण रक्खा था। इस वंश* ने पहिले गुलबर्गा में, फिर बिदर में, अंदाज डेढ़ सौ बरस राज किया। सन् १५०० के लगभग इस राज की पाँच शाखा हो गई थीं, जिनमें गोलकुंडा, बीजापुर और अहमदनगर वाले विशेष बली थे। इस वंश के राज में सन् १३६६ में बारह बरस का दक्षिण में एक बड़ा भारी अकाल पड़ा था। हिंदुओं में उस समय कोंकण में सिरका नाम का केवल एक स्वाधीन सरदार था, बाकी सब लोग इन के अधीन थे।

*यह ब्रहमनी वंश कहलाता था। (सं०)

बीजापुर के पुरंदर और दूसरे दूसरे कई किले अपने अधिकार में कर के उस पर संतोष न कर के दिल्ली के बादशाही देशों में भी लूट कर इसने अपना बल, सेना और धन बढ़ाया।

मालव नाम की सूर जाति के लोग इस की सेना में बहुत थे और सन् १६४८ ई० में बीजापुर के बादशाह से इस के कल्याण की सूबेदारी लिया, परंतु जब बादशाह ने उसका बल बढ़ते देखा तो सन् १६५६ में अपने अफ़जल खाँ नामक सरदार को उस से लड़ने को भेजा, पर शिवाजी ने धोखा दे कर इस सरदार को मार डाला।
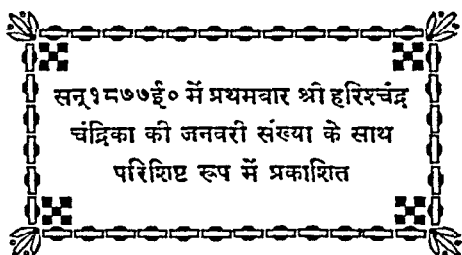
सन् १६६४ ई० में शिवाजी का बाप मर गया और तब से उस ने अपना पद राजा रख कर अपने नाम की एक टकसाल जारी किया।

यह पहले राजगढ़ और फिर रायगढ़ के किले में रहता था। उस ने अपने बहुत से किले बनाये थे, जिन में राजगढ़ और प्रतापगढ़ ये दो मुख्य थे।

सन् १६५६ ई० में सामराज पंत को शिवाजी ने पेशवा नियत किया।

बीजापुर का बादशाह तो शिवाजी को दमन करने में समर्थ न हुआ, औरंगज़ेब ने राजा जसवंत सिंह को बहुत सी फ़ौज दे कर शिवा जी को जीतने को भेजा, पर शिवाजी ने बादशाह के आधीन रहना स्वीकार कर के राजा से मेल कर लिया।* और सन् १६६६ में आप भी दिल्ली गया, पर वहाँ उस का यथेष्ट आदर न हुआ, इस से उस ने बादशाह को कटु वचन कहा, जिस से थोड़े दिन तक कैद में रह कर फिर अपने बेटे समेत दक्खिन भाग गया। कुछ दिन पीछे औरंगज़ेब ने उस को राजा का ख़िताब दिया और उसी अधिकार से उस ने दक्खिन में सन् १६७० में चौथ और सरदेशमुखी नाम के दो कर स्थापन किये। सन् १६६५ में इस ने पानी के राह से मालाबार

---

* जयपुराधीश महाराज जयसिंह के आने पर यह अधीनता स्वीकार की गई थी। (सं०)

सन् १८७७ ई० में प्रथमबार श्री हरिश्चंद्र
चंद्रिका की जनवरी संख्या के साथ
परिशिष्ट रूप में प्रकाशित

इस का पुत्र शिवाजी जिस को साहू जी भी कहते हैं, औरंगजेब की कैद में था, इस से इस का सौतेला भाई राजाराम गद्दी पर बैठा। इस ने सितारा में अपनी राजधानी स्थापन किया और पंत प्रतिनिधि नाम का एक नया पद नियुक्त किया और बड़े भाई के बिगाड़े हुए सब प्रबंधों को नए सिरे से सँवारा। यह १७०० ई० में मरा और फिर आठ वर्ष तक इस की स्त्री ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी को गद्दी पर बिठा कर उस के नाम से राज्य का काम चलाया।

इन लोगों के समय में औरंगजेब ने महाराष्ट्रों को बहुत बिगाड़ना चाहा, परंतु कुछ फल न हुआ, यहाँ तक कि वह सन् १७०७ में आप ही मर गया। जब संभाजी का पुत्र शिवाजी औरंगजेब के पास रहता था तब औरंगजेब इस के दादा को लुटेरा शिवाजी और उस को साहू शिवाजी कहता था, इसी से दूसरे शिवाजी का नाम साहूराजा हुआ। सन् १७०८ ई० में जब साहू औरंगजेब* की कैद से छूट कर आया तब सर्दारों ने उसे सितारे की गद्दी पर बिठाया, और तब उस की चाची ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी को ले कर कोलापुर का एक अलग स्वतंत्र राज स्थापन किया।

जब साहू राजा १७ वर्ष तक कैद में था तब औरंगजेब की बेटी उस पर और उस की मा पर बड़ी मेहरबान थी। इसी से औरंगजेब ने अपने यहाँ के दो बड़े बड़े मरहठे सरदारों की बेटी उसे ब्याह दी थी और उसे बहुत सी जागीर भी दी थी। जब साहू राजा दिल्ली से सितारे आता था तब एक स्त्री ने अपना दूध पीनेवाला बालक उस के पैर पर रख दिया था, जिस के वंश में अब अकलकोट के राजा हैं। साहू राजा का स्वभाव विषयी था, इसी से उस ने अपना सब काम धनाजी राव यादव को सौंप रक्खा था और उसने आवाजी पुरंदरे और बालाजी विश्वनाथ नाम के दो मनुष्य अपने नीचे रक्खे थे। धना जी

* सन् १७०७ ई० में औरंगजेब की मृत्यु हो गई थी और उसके पुत्र बहादुरशाह ने मराठों में फूट डालने को इसे छोड़ दिया। (सं०)

भी पहनाता हूँ। ईश्वर करे आप इसे बहुत दिन तक पहिनें और आप के पीछे यह आप के कुल में बहुत दिन तक रह कर इस शुभ दिन की याद दिलावे जो इस पर छपा है।"

शेष राजाओं को उन के पद के अनुसार सोने या चाँदी के केवल तगमे ही मिले। किलात के खाँ को भी झंडा नहीं मिला, पर उन्हें एक हाथी, जिस पर ४००० की लागत का हौदा था, जड़ाऊ गहने, घड़ी, कारचोबी कपड़े, कमखाब के थान वगैरह सब मिला कर २५००० की चीजें तुहफे में मिलीं। यह बात किसी दूसरे के लिये नहीं हुई थी। इस के सिवाय जो सरदार उन के साथ आए थे उन्हें भी किश्तियों में लगा कर दस हजार रुपये की चीजें दी गईं। प्रायः लोगों को इस बात के जानने का उत्साह होगा कि खाँ का रूप और वस्त्र कैसा था। निस्संदेह जो कपड़ा खाँ पहने थे वह उन के साथियों से बहुत अच्छा था तो भी उन की या उन के किसी साथी की शोभा उन मुगलों से बढ़ कर न थी जो बाज़ार में मेवा लिये घूमा करते हैं। हाँ, कुछ फर्क था तो इतना था कि लंबी गम्भिन दाढ़ी के कारण खाँ साहिब का चिहरा बड़ा भयानक लगता था। इन्हें झंडा न मिलने का कारण यह समझना चाहिये कि यह बिल्कुल स्वतंत्र हैं। इन्हें आने और जाने के समय श्रीयुत वाइसराय गलीचे के किनारे तक पहुँचा गए थे, पर बैठने के लिये इन्हें भी वाइसराय के चबूतरे के नीचे वही कुर्सी मिली थी जो और राजाओं को। खाँ साहिब के मिजाज में रूखापन बहुत है। एक प्रतिष्ठित बंगाली इन के डेरे पर मुलाकात के लिये गए थे। खाँ ने पूछा, क्यों आए हो? बाबू साहिब ने कहा, आप की मुलाकात को। इस पर खाँ बोले कि अच्छा, आप हम को देख चुके और हम आप को, अब जाइये।

बहुत से छोटे छोटे राजाओं की बोलचाल का ढंग भी, जिस समय वे वाइसराय से मिलने आए थे, संक्षेप के साथ लिखने के योग्य है। कोई तो दूर ही से हाथ जोड़े आए, और दो एक ऐसे थे कि जब एडिकाँग के बदन झुका कर इशारा करने पर भी उन्होंने सलाम न किया तो एडिकाँग ने पीठ पकड़ कर उन्हें धीरे से झुका दिया। कोई बैठ कर उठना जानते ही न थे, यहाँ तक कि एडिकाँग को "उठो" कहना पड़ता

साहू राजा ने बालाजी विश्वनाथ के बड़े पुत्र बाजीराव को पेशवाई का अधिकार दिया। यह मनुष्य शूर और युद्ध में बड़ा कुशल था और उस का छोटा भाई चिमनाजी आप्पा भी बड़ा बुद्धिमान् और वीर था और अपने बड़े भाई की राज्य और लड़ाई के कामों में बड़ी सहायता करता था। निजामुल्मुल्क से इस ने तीन लड़ाई बड़ी भारी भारी जीती और गुजरात, मालवा इत्यादि अनेक देशों पर अपना इख्तियार कर लिया और अपनी सेना ले कर सारे हिंदुस्थान को लूटता और जीतता फिरता था। सेंधिया, हुल्कर और गाइकवाड़ ने इसी के समय उत्कर्ष पाया, पर सेंधिया के पुरुषा पहले से बादशाही फौज के सारदारों में थे। वरंच कहते हैं कि औरंगजेब ने इन्हीं पुरुषों में से किसी की बेटी साहूराजा को ब्याही थी। नागपुर वालों ने भी इसी के समय राज पाया। चिमनाजी आप्पा ने पोर्तुगीज लोगों से साष्ठीवेट* का इलाका बड़ी बहादुरी से छीन लिया था। बाजीराव सन् १७४० में मरा और उस का बड़ा पुत्र बालाजी उर्फ नाना साहब पेशवा हुआ। इस का एक छोटा भाई रघुनाथ राव नाम का था। इस ने पूना को अपनी राजधानी बनाया। इस के छोटे भाई के अधिकार में राज्य का सब काम था। यद्यपि नाना साहब राज्य के कामों में बड़ा चतुर था पर कपटी और बड़ा आलसी मनुष्य था, पर उस के दोनों भाई अपने काम में ऐसे सावधान थे कि उस की बात में कुछ फरक न पड़ने पाया।

सदाशिव राव भाऊ ने रामचंद्र बावा शेणबी को साथ लेकर महाराष्ट्री राज्य का फिर से नया और पक्का प्रबंध किया। महाराष्ट्रों का बल उस समय पूरा जमा हुआ था और हिंदुस्तान में ये लोग चारों ओर चढ़ाइयाँ करते फिरते थे। दिल्ली का बादशाह तो मानों इन की कठपुतली था। नाना साहब से नागपुर के सरदार राघोजी भोंसला से कुछ वैमनस्य हो गया था, पर साहू राजा ने बीच में पड़ कर बिहार, अयोध्या और बंगाल का मरहटी अधिकार भोंसला से छोड़वा कर आपस का द्वेष मिटा दिया।

---

* सालसेट। (सं०)

भी तास का नक़ाब पड़ा हुआ था। इस के सिवाय उन के हाथ पाँव दस्ताने और मोजे से ऐसे ढंके थे कि सब के जी में उन्हें देखने की इच्छा ही रह गई। महारानी के साथ में उन के पति राजा सखाराम साहिब और दो लड़कों के सिवाय उन की अनुवादक मिसेज़ फ़र्थ भी थीं। महारानी ने पहले आकर वाइसराय से हाथ मिलाया और अपनी कुर्सी पर बैठ गईं। श्रीयुत वाइसराय ने उन के दिल्ली आने पर अपनी प्रसन्नता प्रगट की और पूछा कि आप को इतनी भारी यात्रा में अधिक कष्ट तो नहीं हुआ? महारानी अपनी भाषा की बोलचाल में बेगम भूपाल की तरह चतुर न थीं, इस लिये जियादा बातचीत मिसेज फ़र्थ से हुई, जिन्हें श्रीयुत ने प्रसन्न हो कर "मनभावनी अनुवादक" कहा। वाइसराय की किसी बात के उत्तर में एक बार महारानी के मुँह से "यस" निकल गया, जिस पर श्रीयुत ने बड़ा हर्ष प्रगट किया कि महारानी अँगरेजी भी बोल सकती हैं, पर अनुवादक मेम साहिब ने कहा कि वे अँगरेजी में दो चार शब्द से अधिक नहीं जानतीं।

इस वर्णन के अंत में यह लिखना अवश्य है कि श्रीयुत वाइसराय लोगों से इतनी मनोहर रीति पर बातचीत करते थे जिस से सब मगन हो जाते थे और ऐसा समझते थे कि वाइसराय ने हमारा सबसे बढ़ कर आदर सत्कार किया। भेंट होने के समय श्रीयुत ने हर एक से कहा कि आप से दोस्ती कर के हम अत्यंत प्रसन्न हुए और तगमा पहिनाने के समय भी बड़े स्नेह से उन की पीठ पर हाथ रख कर बात की।

१ जनवरी को दरबार का महोत्सव हुआ।

यह दरबार, जो हिंदुस्तान के इतिहास में सदा प्रसिद्ध रहेगा, एक बड़े भारी मैदान में नगर से पाँच मील पर हुआ था। बीच में श्रीयुत वाइसराय का षट्कोण चबूतरा था, जिसकी गुंबदनुमा छत पर लाल कपड़ा चढ़ा और सुनहला रुपहला तथा शीशे का काम बना था। कंगुरे के ऊपर कलसे की जगह श्रीमती राजराजेश्वरी का सुनहला मुकुट लगा था। इस चबूतरे पर श्रीयुत अपने राजसिंहासन में सुशोभित हुए थे। उन के बगल में एक कुर्सी पर लेडी साहिब बैठी थीं और ठीक पीछे खवास लोग हाथों में चँवर लिये और श्रीयुत के ऊपर कारचोबी छत्र लगाए खड़े थे। वाइसराय के सिंहासन के दोनों तरफ़ दो पेज (दामन

ग़रीबों के पालने से इस का चित्त बहुत ही बहलता था। नाना फड़न-वीस नामक प्रसिद्ध मनुष्य इस का मुख्य वजीर था और मराठी राज्य की आमदनी उस के समय सात करोड़ रुपया थी। इसी के काल में हैदरअली ने मैशूर के राज की नेव दी थी। इस ने राघोबा दादा को कैद कर के पूने भेज दिया और आप न्याय और धर्म से ग्यारह बरस राज कर के अट्ठाईस बरस की अवस्था में क्षय रोग से मरा। इस के मरने के पीछे इस के भाई नारायण राव को गद्दी पर बैठाया, पर आठ ही महीने पीछे रघुनाथ राव ने उस को एक सूबेदार से मरवा डाला और आप गद्दी पर बैठा। इस से सब कारबारी इतने नाराज़ थे कि जब नारायण राव की स्त्री गंगाबाई (जो विधवा होने के समय गर्भवती थी) पुत्र जनी तो सवाई माधवराव के नाम से उस को राजा बना के उस के नाम की मुनादी फिरवा दी और नाना फड़नवीस सब काम काज करने लगा। राघोबा ने अँगरेज़ों से इस शर्त पर सहायता चाही कि साष्टीबेट, बसई गाँव और गुजरात के कुछ इलाके अँगरेज सरकार को दिये जायँ, पर पोर्तुगीज और बादशाह के कलह से अँगरेज़ों ने आप ही वह बेट ले लिया और फिर कलकत्ते के गवर्नर के लिखे अनुसार नाना फड़नवीस ने साष्टीबेट अँगरेज़ों को लिख दिया और कोंपर गाँव में राघोबा को कुछ महीना कर के रख दिया। राघोबा दादा को बाजीराव, चिमना आप्पा और अमृतराव तीन पुत्र थे परंतु अमृतराव दत्तक थे। राघोबा का कई मनोरथ पूरा नहीं हुआ और सन् १७८४ में मर गया। नाना फड़नवीस से महाजी सेंधिया से कुछ लाग थी, इस से महाजी उस के तावे कभी नहीं हुआ और सदा कुछ उत्पात करता रहा। नाना की फ़ौज के हरिपंत फड़के और परशुराम पंत पट्टवर्द्धन ये दो बड़े सरदार थे। सन् १७६५ में निज़ाम अली से महाराष्ट्र लोगों से एक लड़ाई, जिस में मरहटे जीते और अँगरेजों से भी तीन बरस तक कुछ कलह रही, पर फिर मेल हो गया। सन् १७६६ में नाना फड़नवीस के वंश में रहने के दुःख से माधव राव गिर के मर गया और राघोबा का बड़ा बेटा दूसरा बाजीराव पेशवा हुआ, पर इस से भी नाना फड़नवीस से खपपट चली ही गई। बाजीराव ने दौलतराव सेंधिया को उभारा और उस ने छल बल कर के नाना

वाइसराय के सिंहासन के पीछे, परंतु राजसी चबूतरे की अपेक्षा उस से अधिक पास, धनुपखंड के आकार की दो श्रेणियाँ चबूतरों की ओर बनी थीं जो दस भागों में बाँट दी गई थीं। इन पर आगे की तरफ थोड़ी सी कुर्सियाँ और पीछे सीढ़ीनुमा बेंचें लगी थीं, जिन पर नीला कपड़ा मढ़ा था। यहाँ ऐसे राजाओं को जिन्हें शासन का अधिकार नहीं है और दूसरे सरदारों, रईसों, समाचारपत्रों के संपादकों और यूरोपियन तथा हिंदुस्तानी अधिकारियों को, जो गवर्नमेंट के नेवते में आये थे या जिन्हें तमाशा देखने के लिये टिकट मिले थे, बैठने की जगह दी गई थी। ये २००० के अनुमान होंगे। क़िलात के खाँ, गोआ के गवरनर-जेनरल, विदेशी राजदूत, बाहरी राज्यों के प्रतिनिधि समाज और अन्यदेश संबंधी कांसल लोगों की कुर्सियाँ भी श्रीयुत वाइसराय के पीछे सरदारों और रईसों की चौकियों के आगे लगी थीं।

दरबार की जगह के दक्खिन तरफ १५००० से ज्यादा सरकारी फ़ौज हथियार बाँधे लैस खड़ी थी और उत्तर तरफ़ राजा लोगों की सजी पलटनें भाँति भाँति की वरदी पहने और चित्र विचित्र शस्त्र धारण किये परा बाँधे खड़ी थीं। इन सब की शोभा देखने से काम रखती थी। इस के सिवाय राजा लोगों के हाथियों के परे जिन पर सुनहली अमारियाँ कसी थीं और कारचोबी झूलें पड़ी थीं, तोपों की क़तार, सवारों की नंगी तलवारों और भालों की चमक, फरहरों का उड़ना, और दो लाख के अनुमान तमाशा देखने वालों की भीड़ जो मैदान में डटी थी, ऐसा समा दिखलाती थी जिसे देख जो जहाँ था वहीं हक्का बक्का हो खड़ा रह जाता था। वाइसराय के सिंहासन के दोनों तरफ हाइलैन्डर लोगों का गार्ड ऑव ऑनर और बाजेवाले थे, और शासनाधिकारी राजाओं के चबूतरे पर जाने के जो रास्ते बाहर की तरफ थे उन के दोनों ओर भी गार्ड ऑव ऑनर खड़े थे। पौने बारह बजे तक सब दरबारी लोग अपनी अपनी जगहों पर आ गए थे। ठीक बारह बजे श्रीयुत वाइसराय की सवारी पहुँची और धनुप खंड आकार के चबूतरों की श्रेणियों के पास एक छोटे से खंभे के दरवाजे पर ठहरी। सवारी पहुंचते ही बिलकुल फौज ने शस्त्रों से सलामी उतारी पर तोपें नहीं छोड़ी गईं। खंभे में श्रीयुत ने जाकर स्टार ऑव इंडिया के परम प्रति-

दिनों में भीमा के किनारे कारे गाँव में मरहठों की फौज से और सर्कारी फौज से एक बड़ा घोर युद्ध हुआ, जिस में सर्कारी ३०० सिपाही और बीस अँगरेज मारे गये, पर इन लोगों ने बहादुरी से उनको आगे न बढ़ने दिया। सर्कार की ओर से यहाँ जयसूचक एक कीर्त्तिस्तंभ बना है। सर्कार ने महाराष्ट्र देश का राज अपने हाथ में लेकर एलफिंस्टन साहेब को वहाँ का प्रबंध सौंपा और पूर्वोक्त साहब ने महाराष्ट्रों की परंपरा के मान और रीति का पालन कर के किसी की जागीर किसी के साथ बंदोबस्त कर के वहाँ की प्रजा को ऐसा संतुष्ट किया कि वे लोग अब तक उन को स्मरण करते हैं।
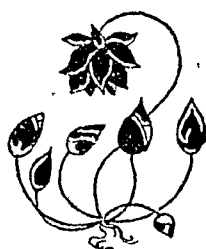
हुए नियम और उस राजाज्ञापत्र के अनुसार जो १ जनवरी सन् १८०१ को राजसी मुहर होने के पीछे प्रकाश किया गया, हम ने यह पदवी ली "विक्टोरिया ईश्वर की कृपा से ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड के संयुक्त राज की महारानी स्वधर्म रक्षिणी," और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि उस नियम के अनुसार, जो हिंदुस्तान के उत्तम शासन के हेतु बनाया गया था, हिंदुस्तान के राज का अधिकार, जो उस समय तक हमारी ओर से ईस्ट इंडिया कंपनी को सपुर्द था, अब हमारे निज अधिकार में आ गया और हमारे नाम से उस का शासन होगा। इस नये अधिकार की कि हम कोई विशेष पदवी लें और इन सब वर्णनों के अनंतर इस ऐक्ट में यह नियम सिद्ध किया गया है कि ऊपर लिखी हुई बात के स्मरण निमित्त कि हम ने अपने मुहर किये हुए राजाज्ञापत्र के द्वारा हिंदुस्तान के शासन का अधिकार अपने हाथ में ले लिया, हम को यह योग्यता होगी कि यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसंबंधी पदवियों और प्रशस्तियों में जो कुछ उचित समझें बढ़ा लें। इस लिये अब हम अपने प्रीवी काउंसिल की संमति से योग्य समझ कर यह प्रचलित और प्रकाशित करते हैं कि आगे को, जहाँ सुगमता के साथ हो सके, सब अवसरों में और संपूर्ण राजपत्रों पर जिन में हमारी पदवियाँ और प्रशस्तियाँ लिखी जाती हैं, सिवाय सनद, कमिशन, अधिकारदायक पत्र, दानपत्र, आज्ञापत्र, नियोगपत्र, और इसी प्रकार के दूसरे पत्रों के, जिन का प्रचार यूनाइटेड किंगडम के बाहर नहीं है, यूनाइटेड किंगडम और उस के अधीन देशों की राजसंबंधी पदवियों में नीचे लिखा हुआ मिला दिया जाय, अर्थात् लैटिन भाषा में "इंडिई एम्परेट्रिक्स" [हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी] और अँगरेजी भाषा में "एम्प्रेस ऑव इंडिया"। और हमारी यह इच्छा और प्रसन्नता है कि उन राजसंबंधी पत्रों में जिन का वर्णन ऊपर हुआ है यह यह नई पदवी न लिखी जाय। और हमारी यह भी इच्छा और प्रसन्नता है कि सोने चाँदी और ताँबे के सब सिक्के, जो आज कल यूनाइटेड किंगडम में प्रचलित हैं और नीतिविरुद्ध नहीं गिने जाते और इसी प्रकार तथा आकार के दूसरे सिक्के जो हमारी आज्ञा से अब छापे जायँगे, हमारी नई पदवी लेने से भी नीतिविरुद्ध

दिल्ली दरबार दर्पण

दोहा

जयति राजराजेश्वरी जय युवराज कुमार।
जय नृप-प्रतिनिधि कवि लिटन जय दिल्ली दरबार॥
स्नेह भरन तम हरन दोउ प्रजन करन उँजियार।
भयो देहली-दीप सो यह देहली दरबार॥

सं० १९३४

सन् १८५८ ईसवी की १ नवंबर को श्रीमती महारानी की ओर से एक इश्तिहार जारी हुआ था, जिस में हिंदुस्तान के रईसों और प्रजा को श्रीमती की कृपा का विश्वास कराया गया था, जिस को उस दिन से आज तक वे लोग राजसंबंधी बातों में बड़ा अनमोल प्रमाण समझते हैं।

वे प्रतिज्ञा एक ऐसी महारानी की ओर से हुई थीं, जिन्होंने आज तक अपनी बात को कभी नहीं तोड़ा, इस लिये हमें अपने मुँह से फिर उन का निश्चय कराना व्यर्थ है। १८ बरस की लगातार उन्नति ही उन को सत्य करती है और यह भारी समागम भी उन के पूरे उतरने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस राज के रईस और प्रजा जो अपनी अपनी परंपरा की प्रतिष्ठा निर्विघ्न भोगते रहे और जिन को उचित लाभों की उन्नति के यत्न में सदा रक्षा होती रही उन के वास्ते सरकार की पिछले समय की उदारता और न्याय आगे के लिये पक्की ज़मानत हो गई है।

हम लोग इस समय श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने का समाचार प्रसिद्ध करने के लिये इकट्ठे हुए हैं, और यहाँ महारानी के प्रतिनिधि होने की योग्यता से मुझे अवश्य है कि श्रीमती के उस कृपायुक्त अभिप्राय को सब पर प्रगट करूँ जिस के कारण श्रीमती ने अपने परंपरा की पदवी और प्रशस्ति में एक पद और बढ़ाया।

पृथ्वी पर श्रीमती महारानी के अधिकार में जितने देश हैं—जिन का विस्तार भूगोल के सातवें भाग से कम नहीं है, और जिन में तीस करोड़ आदमी बसते हैं—उन में से इस बड़े और प्राचीन राज के समान श्रीमती किसी दूसरे देश पर कृपादृष्टि नहीं रखतीं।

सब जगह और सदा इंगलिस्तान के बादशाहों की सेवा में प्रवीण और परिश्रमी सेवक रहते आए हैं, परंतु उन से बढ़ कर कोई पुरुषार्थी नहीं हुए, जिन की बुद्धि और वीरता से हिंदुस्तान का राज सरकार के हाथ लगा और बराबर अधिकार में बना रहा। इस कठिन काम में जिस में श्रीमती की अँगरेजी और देशी प्रजा दोनों ने मिलकर भली भाँति परिश्रम किया है, श्रीमती के बड़े बड़े स्नेही और सहायक राजाओं ने भी शुभचिंतकता के साथ सहायता दी है, जिन की
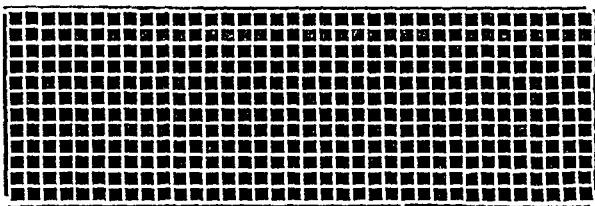
दिल्ली दरबार दर्पण

सब राजाओं की मुलाकातों का हाल अलग अलग लिखना आवश्यक नहीं, क्योंकि सब के साथ वही मामूली बातें हुईं। सब बड़े बड़े शासनाधिकारी राजाओं को एक एक रेशमी झंडा और सोने का तगमा मिला। झंडे अत्यंत सुंदर थे। पीतल के चमकीले मोटे मोटे डंडों पर राजराजेश्वरी का एक मुकुट बना था और एक एक पटरी लगी थी जिस पर झड़ा पाने वाले राजा का नाम लिखा था और फरहरे पर जो डंडे से लटकता था स्पष्ट रीति पर उनके शस्त्र आदि के चिह्न बने हुए थे। झंडा और तगमा देने के समय श्रीयुत वाइसराय ने हरएक राजा से ये वाक्य कहे :—

"मैं श्रीमती महारानी की तरफ से यह झंडा खास आप के लिये देता हूँ, जो उन के हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी की पदवी लेने का यादगार रहेगा। श्रीमती को भरोसा है कि जब कभी यह झंडा खुलेगा आप को उसे देखते ही केवल इसी बात का ध्यान न होगा कि इंगलिस्तान के राज्य के साथ आप के खैरखाह राजसी घराने का कैसा दृढ़ संबंध है वरन् यह भी कि सरकार की यह बड़ी भारी इच्छा है कि आप के कुल को प्रतापी, प्रारब्धी और अचल देखे। मैं श्रीमती महारानी हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार आप को यह तगमा

आजकल ऐसी राजनीति के कारण जिस से सब जात और सब धर्म के लोगों की समान रक्षा होती है, श्रीमती की हर एक प्रजा अपना समय निर्विघ्न सुख से काट सकती है। सरकार के समभाव के कारण हर आदमी बिना किसी रोक टोक के अपने धर्म के नियमों और रीतों को बरत सकता है। राजराजेश्वरी का अधिकार लेने से श्रीमती का अभिप्राय किसी को मिटाने या दबाने का नहीं है वरन् रक्षा करने और अच्छी राह बतलाने का। सारे देश की शीघ्र उन्नति और उस के सब प्रांतों की दिन पर दिन वृद्धि होने से अँगरेजी राज के फल सब जगह प्रत्यक्ष देख पड़ते हैं।

हे अँगरेजी राज के कार्यकर्त्ता और सच्चे अधिकारी लोग—यह आप ही लोगों के लगातार परिश्रम का गुण है कि ऐसे ऐसे फल प्राप्त हैं, और सब के पहले आप ही लोगों पर मैं इस समय श्रीमती की ओर से उनकी कृतज्ञता और विश्वास को प्रगट करता हूँ। आप लोगों ने इस भारी राज की भलाई के लिये उन प्रतिष्ठित लोगों से जो आप के पहले इन कामों पर नियत थे किसी प्रकार कम कष्ट नहीं उठाया है और आप लोग बराबर ऐसे साहस, परिश्रम और सचाई के साथ अपने तन, मन को अर्पण करके काम करते रहे जिस से बढ़कर कोई दृष्टांत इतिहासों में न मिलेगा।

कीर्त्ति के द्वार सब के लिये नहीं खुले हैं परंतु भलाई करने का अवसर सब किसी को जो उसकी खोज रखता हो मिल सकता है। यह बात प्रायः कोई गवर्नमेंट नहीं कर सकती कि अपने नौकरों के पदों को जल्द जल्द बढ़ाती जाय, परंतु मुझे विश्वास है कि अँगरेजी सरकार की नौकरी में 'कर्त्तव्य का ध्यान' और 'स्वामी की सेवा में तन, मन को अर्पण कर देना' ये दोनों बातें 'निज प्रतिष्ठा' और 'लाभ' की अपेक्षा सदा बढ़कर समझी जायँगी। यह बात सदा से होती आई है और होती रहेगी कि इस देश के प्रबंध के बहुत से भारी भारी और लाभदायक काम प्रायः बड़े बड़े प्रतिष्ठित अधिकारियों ने नहीं किये हैं वरन् ज़िले के उन अफ़सरों ने जिनकी धैर्यपूर्वक चतुराई और साहस पर संपूर्ण प्रबंध का अच्छा उतरना सब प्रकार आधीन है।

था। कोई झंडा, तगमा, सलामी और ख़िताब पाने पर भी एक शब्द धन्यवाद का नहीं बोल सके और कोई बिचारे इन में से दो ही एक पदार्थ पा कर ऐसे प्रसन्न हुए कि श्रीयुत वाइसराय पर अपनी जान और माल निछावर करने को तैयार थे। सब से बढ़ कर बुद्धिमान हमें एक महात्मा देख पड़े जिन से वाइसराय ने कहा कि आपका नगर तो तीर्थ गिना जाता है, पर हम आशा करते हैं कि आप इस समय दिल्ली को भी तीर्थ ही के समान पाते हैं। इस के जवाब में वह बेधड़क बोल उठे कि यह जगह तो सब तीर्थों से बढ़ कर है, जहाँ आप हमारे "खुदा" मौजूद हैं। नवाब लुहारू की भी अंगरेजी में बात चीत सुन कर ऐसे बहुत कम लोग होंगे जिन्हें हँसी न आई हो। नवाब साहिब बोलते तो बड़े धड़ाके से थे, पर उसी के साथ कायदे और मुहावरे के भी खूब हाथ पाँव तोड़ते थे। कितने वाक्य ऐसे थे जिन के कुछ अर्थ ही नहीं हो सकते, पर नवाब साहिब को अपनी अंगरेजी का ऐसा कुछ विश्वास था कि अपने मुँह से केवल अपने ही को नहीं वरन् अपने दोनों लड़कों को भी अंगरेजी, अरबी, ज्योतिष, गणित आदि ईश्वर जाने कितनी विद्याओं का पंडित बखान गए। नवाब साहिब ने कहा कि हम ने और रईसों की तरह अपनी उमर खेल कूद में नहीं गँवाई वरन् लड़कपन ही से विद्या के उपार्जन में चित्त लगाया और पूरे पंडित और कवि हुए। इस के सिवाय नवाब साहिब ने बहुत से राज-भक्ति के वाक्य भी कहे। वाइसराय ने उत्तर दिया कि हम आप की अंगरेजी विद्या पर इतना मुबारकबाद नहीं देते जितना अँगरेजों के समान आप का चित्त होने के लिये। फिर नवाब साहिब ने कहा कि मैंने इस भारी अवसर के वर्णन में अरबी और फारसी का एक पद्य ग्रंथ बनाया है जिसे मैं चाहता हूँ कि किसी समय श्रीयुत को सुनाऊँ। श्रीयुत ने जवाब दिया कि मुझे भी कविता का बड़ा अनुराग है और मैं आप सा एक भाई-कवि (Brother-poet) देख कर बहुत प्रसन्न हुआ, और आप की कविता सुनने के लिये कोई अवकाश का समय अवश्य निकालूँगा।

२६ तारीख का सब के अंत में महारानी तंजौर वाइसराय से मुलाकात को आईं। ये तास का सब वस्त्र पहने थीं और मुँह पर

इंडिया के परम प्रतिष्ठित पद वालों और आर्डर आफ वृटिश इंडिया के अधिकारियों की संख्या ही में थोड़ी सी बढ़ती नहीं की है किंतु इसी हेतु एक बिल्कुल नया पद और नियत किया है जो "आर्डर आफ दि इंडियन एम्पायर" कहलावेगा।

हे हिंदुस्तान की सेना के अँगरेजी और देशी अफ़सर और सिपाहियो,—आप लोगों ने जो भारी भारी काम बहादुरी के साथ लड़ भिड़ कर सब अवसरों पर किये और इस प्रकार श्रीमती की सेना की युद्ध-कीर्त्ति को थामे रहे, उस का श्रीमती अभिमान के साथ स्मरण करती हैं। श्रीमती इस बात पर भरोसा रखकर कि आगे को भी सब अवसरों पर आप लोग उसी तरह मिल जुल कर अपने भारी कर्त्तव्य को सचाई के साथ पूरा करेंगे, अपने हिंदुस्तानी राज में मेल और अमन चैन बनाए रखने के विश्वास का काम आप लोगों ही को सुपुर्द करती हैं।

हे वालंटियर सिपाहियो,—आप लोगों के राजभक्तिपूर्ण और सफल यत्न जो इस विषय में हुए हैं कि यदि प्रयोजन पड़े तो आप सरकार की नियत सेना के साथ मिलकर सहायता करें इस शुभ अवसर पर हृदय से धन्यवाद पाने के योग्य हैं।

हे इस देश के सरदार और रईस लोग,—जिन की राजभक्ति इस राजा के बल को पुष्ट करनेवाली है और जिन की उन्नति इस के प्रताप का कारण है, श्रीमती महारानी आप को यह विश्वास करके धन्यवाद देती हैं कि यदि इस राज के लाभों में कोई विघ्न डाले या उन्हें किसी तरह का भय हो तो आप लोग उस की रक्षा के लिए तैयार हो जायँगे। मैं श्रीमती की ओर से और उन के नाम से दिल्ली आने के लिये आप लोगों का जी से स्वागत करता हूँ और इस बड़े अवसर पर आप लोगों के इकट्ठे होने को इंगलिस्तान के राजसिंहासन की ओर आप लोगों की उस राजभक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण गिनता हूं जो श्रीमान् प्रिंस आफ वेलस के इस देश में आने के समय आप लोगों ने दृढ़ रीति पर प्रकट की थी। श्रीमती महारानी आप के स्वार्थ को अपना स्वार्थ समझती हैं, और अँगरेजी राज के साथ उस के कर देने वाले और स्नेही राजा लोगों

बरदार), जिन में एक श्रीयुत महाराज जंबू का अत्यंत सुंदर सब से छोटा राजकुमार और दूसरा कर्नल वर्न का पुत्र था, खड़े थे और उन के दहने बाएँ और पीछे मुसाहिब और सेक्रेटरी लोग अपने अपने स्थानों पर खड़े थे। वाइसराय के इस चबूतरे के ठीक सामने कुछ दूर पर उस से नीचा एक अर्द्धचंद्राकार चबूतरा था, जिस पर शासनाधिकारी राजा लोग और उन के मुसाहिब, मदरास और बंबई के गवरनर, पंजाब, बंगाल और पश्चिमोत्तर देश के लेफ़टिनेंट गवरनर, और हिंदुस्तान के कमांडरइनचीफ़ अपने अपने अधिकारियों समेत सुशोभित थे। इस चबूतरे की छत बहुत सुंदर नीले रंग के साटन की थी, जिस के आगे लहरियादार छज्जा बहुत सजीला लगा था। लहरिये के बीच बीच में सुनहले काम के चाँद तारे बने थे। राजाओं की कुर्सियाँ भी नीली साटन से मढ़ी थीं और हर एक के सामने वे झंडे गड़े थे जो उन्हें वाइसराय ने दिये थे और पीछे अधिकारियों की कुर्सियाँ लगी थीं, जिन पर भी नीली साटन चढ़ी थी। हर एक राजा के साथ एक एक पोलिटिकल अफ़सर भी था। इन के सिवाय गवर्नमेंट के भारी भारी अधिकारी भी यहीं बैठे थे। राजा लोग अपने अपने प्रांतों के अनुसार बैठाए गए थे, जिस से ऊपर नीचे बैठने का बखेड़ा बिलकुल निकल गया था। सब मिला कर तिरसठ शासनाधिकारी राजाओं को इस चबूतरे पर जगह मिली थी, जिनके नाम नीचे लिखे हैं :—

महाराज अजयगढ़, बड़ौदा, बिजावर, भरतपुर, चरखारी, दतिया, ग्वालियर, इंदौर, जयपुर, जंबू, जोधपुर, करौली, किशुनगढ़, पन्ना, मैसूर, रीवाँ, उर्छा, महाराना उदयपुर, महाराव राजा अलवर, बूँदी, महाराज राना झलावर, राना धौलपुर, राजा बिलासपुर, बमरा, बिरोंदा, चबा, छतरपुर, देवास, धार, फ़रीदकोट, जींद, खरोंद, कूचबिहार, मंडी, नाभा, नाहन, राजपीपला, रतलाम, समथर, सुकेत, टिहरी, राव जिगनी, टोरी, नवाब टोंक, पटौदी, मलेरकोटला, लुहारू, जूनागढ़, जौरा, दुलाना, बहावलपुर, जागीरदार अलीपुरा, बेगम भूपाल, निज़ाम हैदराबाद, सरदार कलसिया, ठाकुर साहिब भावनगर, मुर्वी, पिपलोदा, जागीरदार पालदेव, मीर खैरपुर, महंत कोंदका, नंदगाँव और जाम नवानगर।

लोगों में स्वाभाविक ही उत्तम हैं उन्हें अपने को और अपने संतान को केवल उस शिक्षा के द्वारा योग्य करना अवश्यक है, जिससे कि वे श्रीमती महारानी अपनी राजराजेश्वरी की गवर्नमेंट की राजनीति के तत्वों को समझें और काम में ला सकें और इस रीति से उन पदों के योग्य हों जिन के द्वार उन के लिये खुले हैं।

राजभक्ति, धर्म, अपक्षपात, सत्य और साहस देश संबंधी मुख्य धर्म हैं उनका सहज रीति पर वरताव करना आप लोगों के लिये बहुत आवश्यक है, और तब श्रीमती की गवर्नमेंट राज के प्रबंध में आप लोगों की सहायता बड़े आनंद से अंगीकार करेगी, क्योंकि पृथ्वी के जिन जिन भागों में सरकार का राज है वहाँ गवर्नमेंट अपनी सेना के बल पर उतना भरोसा नहीं करती जितना कि अपनी संतुष्ट और एकजी प्रजा की सहायता पर जो अपने राजा के वर्त्तमान रहने ही में अपना नित्य मंगल समझकर सिंहासन के चारों ओर जी से सहायता करने के लिये इकट्ठे हो जाते हैं।

श्रीमती महारानी निवल राज्यों को जीतने या आसपास की रियासतों को मिला लेने से हिंदुस्तान के राज की उन्नति नहीं समझतीं वरन् इस बात में कि इस कोमल और न्याययुक्त राजशासन को निरुपद्रव बराबर चलाने में इस देश की प्रजा क्रम से चतुराई और बुद्धिमानी के साथ भागी हो। जो हो उनका स्नेह और कर्त्तव्य केवल अपने ही राज से नहीं है वरन् श्रीमती शुद्ध चित्त से यह भी इच्छा रखती हैं कि जो राजा लोग इस बड़े राज की सीमा पर हैं और महारानी के प्रताप की छाया में रहकर बहुत दिनों से स्वाधीनता का सुख भोगते आते हैं उन से निष्कपट भाव और मित्रता को दृढ़ रक्खें। परंतु यदि इस राज के अमन चैन में किसी प्रकार के बाहरी उपद्रव की शंका होगी तो श्रीमती हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी अपने पैतृक राज की रक्षा करना खूब जानती हैं। यदि कोई विदेशी शत्रु हिंदुस्तान के इस महाराज्य पर चढ़ाई करे तो मानो उस ने पूरब के सब राजाओं से शत्रुता की, और उस दशा में श्रीमती को अपने राज के अपार बल, अपने स्नेही और कर देने वाले राजाओं की वीरता और राजभक्ति और अपनी

ष्ठित पद के ग्रांड मास्टर का वस्त्र धारण किया। यहाँ से श्रीयुत राजसी छत्र के तले अपने राजसिंहासन की ओर बढ़े। श्री लेडी लिटन श्रीयुत के साथ थीं और दोनों दामनबरदार बालक, जिन का हाल ऊपर लिखा गया है, पीछे दो तरफ से दामन उठाए हुए थे। श्रीयुत के चलते ही बंदीजन (हेरल्ड लोगों) ने अपनी तुरहियाँ एक साथ बहुत मधुर रीति पर बजाईं और फौजी बाजे से ग्रांड मार्च बजने लगा। जब श्रीयुत राजसिंहासनवाले मनोहर चबूतरे पर चढ़ने लगे तो ग्रांडमार्च का बाजा बंद हो गया और नैशनल ऐन्थेम अर्थात् (गौड सेव दि कीन—ईश्वर महारानी को चिरंजीवी रक्खे) का बाजा बजने लगा और गार्ड्स ऑव ऑनर ने प्रतिष्ठा के लिये अपने शस्त्र झुका दिये। ज्योंही श्रीयुत राजसिंहासन पर सुशोभित हुए, बाजे बंद हो गए और सब राजा महाराजा, जो वाइसराय के आने के समय खड़े हो गए थे, बैठ गए। इस के पीछे श्रीयुत ने मुख्य बंदी (चीफ़ हेरल्ड) को आज्ञा की कि श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के विषय में अँगरेजी में राजाज्ञापत्र पढ़ो। यह आज्ञा होते ही बंदीजनों ने, जो दो पाँती में राज्यसिहासन के चबूतरे के नीचे खड़े थे, तुरही बजाई और उस के बंद होने पर मुख्य बंदी ने नीचे की सीढ़ी पर खड़े होकर बड़े ऊँचे स्वर से राजाज्ञापत्र पढ़ा, जिस का उलथा यह है :—

महारानी विक्टोरिया

ऐसी अवस्था में कि हाल में पार्लियामेंट की जो सभा हुईं उन में एक ऐक्ट पास हुआ है, जिस के द्वारा परम कृपालु महारानी को यह अधिकार मिला है कि यूनाइटेड किंगडम और उस के अधीन देशों की राजसंबंधी पदवियों और प्रशस्तियों में श्रीमती जो कुछ चाहें बढ़ा लें और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड के एक में मिल जाने के लिये जो नियम बने थे उन के अनुसार भी यह अधिकार मिला था कि यूनाइटेड किंगडम और उस के अधीन देशों की राजसंबंधी पदवी और प्रशस्ति इस संयोग के पीछे वही होगी जो श्रीमती ऐसे राजाज्ञापत्र के द्वारा प्रकाश करेंगी, जिस पर राज की मुहर छपी रहे। और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि ऊपर लिखे

हमारे राज में उन लोगों को स्वतंत्रता, धर्म और न्याय प्राप्त हैं और हमारे राज का अभिप्राय और इच्छा सदा यही है कि उन के सुख की वृद्धि, सौभाग्य की अधिकता, और कल्याण की उन्नति होती रहे।"

मुझे विश्वास है कि आप लोग इन कृपामय वाक्यों की गुणग्राहकता करेंगे।

ईश्वर विक्टोरिया संयुक्त राज की महारानी और हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी की रक्षा करे।

इस ऐड्रेस के समाप्त होते ही नेशनल एन्थेम का बाजा बजने लगा और सेना ने तीन बार हुर्रे शब्द की आनंदध्वनि की। दरबार के लोगों ने भी परम उत्साह से खड़े होकर हुर्रे शब्द और हथेलियों की आनंदध्वनि करके अपने जी का उमंग प्रगट किया। महाराज सेंधिया, निज़ाम की ओर से सर सालारजंग, राजपुताना के महाराजों की तरफ़ से महाराज जयपुर, बेगम भूपाल, महाराज कश्मीर और दूसरे सरदारों ने खड़े होकर एक दूसरे को बधाई दी और अपनी राजभक्ति प्रगट की। इस के अनंतर श्रीयुत वाइसराय ने आज्ञा की कि दरबार हो चुका और अपनी चार घोड़े की गाड़ी पर चढ़कर अपने खेमे को रवाने हुए।

श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के उत्सव में गवरन्मेंट ऑव इंडिया ने हिंदुस्तान के रईसों और साधारण लोगों पर जो अनेक अनुग्रह किये हैं उन्हें हम संक्षेप के साथ नीचे लिखते हैं।

सलामी

जंबू, ग्वालियर, इंदौर, उदयपुर और त्रावणकोर के महाराजों की सलामी उनकी जिंदगी भर के लिये १९ के बदले २१ तोप की हो गई और महाराज जयपुर की १७ से बढ़ कर २१।

जोधपुर और रीवाँ के महाराजों के लिये उनकी जिंदगी भर को १७ से बढ़कर १९ तोप की सलामी हो गई।

किशुनगढ़ और उर्छा के महाराजों की सलामी उनके जीवन समय के लिये १५ तोप के बदले १७ हो गई, और नवाब टोंक की ११

न समझे जायंगे, और जो सिक्के यूनाइटेड किंगडम के अधीन देशों में छापे जायंगे और जिन का वर्णन राजाज्ञापत्र में उन जगहों के नियमित और प्रचलित द्रव्य करके किया गया है और जिन पर हमारी संपूर्ण पदवियाँ या प्रशस्तियाँ या उन का कोई भाग रहे, और वे सिक्के जो राजाज्ञापत्र के अनुसार अब छापे और चलाए जायँगे इस नई पदवी के बिना भी उस देश के नियमित और प्रचलित द्रव्य समझे जायंगे, जब तक कि इस विषय में हमारी कोई दूसरी प्रसन्नता न प्रगट की जायगी।

हमारी विंडसर की कचहरी से २८ अप्रैल को एक हजार आठ सौ छिहत्तर के सन् में हमारे राज के उनतालीसवें बरस में प्रसिद्ध किया गया।

ईश्वर महारानी को चिरंजीव रक्खे !

जब चीफ़ हेरल्ड राजाज्ञापत्र को अँगरेज़ी में पढ़ चुका तो हेरल्ड लोगों ने फिर तुरही बजाई। इस के पीछे फ़ॉरेन सेक्रेटरी ने उर्दू में तर्जुमा पढ़ा। इस के समाप्त होते ही बादशाही झंडा खड़ा किया गया और तोपखाने से, जो दरबार के मैदान में मौजूद था, १०१ तोपों की सलामी हुई। चौंतीस चौंतीस सलामी होने के बाद बंदूकों की बाढ़ें दगीं और जब १०१ सलामियाँ तोपों से हो चुकीं तब फिर बाढ़ छूटी और नैशनल ऐन्थेम का बाजा बजने लगा।

इसके अनंतर श्रीयुत वाइसराय समाज को एड्रेस करने के अभिप्राय से खड़े हुए। श्रीयुत वाइसराय के खड़े होते ही सामने के चबूतरे पर जितने बड़े बड़े राजा लोग और गवर्नर आदि अधिकारी थे खड़े हो गए पर श्रीयुत ने बड़े ही आदर के साथ दोनों हाथों से हिंदुस्तानी रीति पर कई बार सलाम करके सब से बैठ जाने का इशारा किया। यह काम श्रीयुत का, जिस से हम लोगों की छाती दूनी हो गई, पायोनीयर सरीखे अँगरेज़ी समाचार पत्रों के संपादकों को बहुत बुरा लगा, जिन की समझ में वाइसराय का हिंदुस्तानी तरह पर सलाम करना बड़े हेठाई और लज्जा की बात थी। ख़ैर, यह तो इन अगरेज़ी अख़बारवालों की मामूली बातें हैं। श्रीयुत वाइसराय ने जो उत्तम ऐड्रेस पढ़ा उस का तर्जुमा हम नीचे लिखते हैं :—

महाराज ग्वालियर, श्रीजयाजीराव सेंधिया जी० सी० एस० आई० ।
„ इंदौर, श्रीतुकाजीराव हुल्कर जी० सी० एस० आई० ।
„ जयपुर, श्रीरामसिंह जी० सी० एस० आई० ।
„ त्रावनकोर, श्रीरामवर्मा जी० सी० एस० आई० ।
„ जींद, श्रीरघुबीर सिंह जी० सी० एस० आई० ।
„ नवाब रामपुर, कलबअलीखाँ जी० सी० एस० आई० ।

पद का अधिकार रहने तक

श्रीयुत् रिचार्ड सांटाजिनेट पैम्बेल जी० सी० एस० आई० ड्यूक ऑव बकिहेम ऐन्ड शान्डॉस, मद्रास के गवरनर ।

सर फिलिप उडहाउस जी० सी० एस० आई०, के० सी० बी०, बम्बई के गवरनर ।

सर एफ० हेन्स के० सी० बी०, हिंदुस्तान के कमांडरिनचीफ़ ।

सर रिचर्ड टेम्पल के० सी० एस० आई० बंगाल के लेफ़्टेनेन्ट गवरनर ।

सर जॉर्ज कूपर सी० बी० पश्चिमोत्तर देश के लेफ़्टेनेन्ट गवरनर ।

सर राबर्ड डेवीस के० सी० एस० आई०, पंजाब के लेफ़्टेनेन्ट गवरनर ।

सर जॉन स्ट्रैची के० सी० एस० आई० गवरनर जेनरल की काउंसिल के मेंबर ।

सर हेनरी नार्मन के० सी० बी० गवरनर-जेनरल की काउंसिल के मेंबर ।

आनरेबल ए० हॉबहाउस क्यू० सी०, गवरनर-जेनरल की काउंसिल के मेंबर ।

सर ए० क्लार्क के० सी० एम० जी०, सी० बी०, गवरनर-जेनरल की काउंसिल के मेंबर ।

आनरेबल ई० बेली सी० एस, आई०, गवरनर-जेनरल की काउंसिल के मेंबर ।

सर ए० आरबुथनाट के० सी० एस० आई०, गवरनर-जेनरल की काउंसिल के मेंबर ।

सेना ने लड़ाई की मिहनत और जीत में श्रीमती की सेना का साथ दिया है, जिन की बुद्धिपूर्वक सत्यशीलता के कारण मेल के लाभ बने रहे और फैलते गए हैं, और जिन का यहाँ आज वर्त्तमान होना, जो कि श्रीमती के राजराजेश्वरी की पदवी लेने का शुभ दिन है, इस बात का प्रमाण है कि वे श्रीमती के अधिकार की उत्तमता में विश्वास रखते है और उन के राज में एका बने रहने में अपना भला समझते हैं।

श्रीमती महारानी इस राज को, जिसे उन के पुरखों ने प्राप्त किया और श्रीमती ने दृढ़ किया, एक बड़ा भारी पैतृक धन समझती हैं जो रक्षा करने और अपने वंश के लिये संपूर्ण छोड़ने के योग्य है, और उस पर अधिकार रखने से अपने ऊपर यह कर्त्तव्य जानती हैं कि अपने बड़े अधिकार को इस देश की प्रजा की भलाई के लिये यहाँ के रईसों के हकों पर पूरा पूरा ध्यान रखकर काम में लावें। इस लिये श्रीमती का यह राजसी अभिप्राय है कि अपनी पदवियों पर एक और ऐसी पदवी बढ़ावें, जो आगे सदा को हिंदुस्तान के सब रईसों और प्रजा के लिये इस बात का चिन्ह हो कि श्रीमती के और उन क लाभ एक हैं और महारानी की ओर राजभक्ति और शुभचिंतकता रखनी उन पर उचित है।

वे राजसी घरानों की श्रेणियाँ जिन का अधिकार बदल देने और देश की उन्नति करने के लिये ईश्वर ने अँगरेजी राज को यहाँ जमाया, प्रायः अच्छे और बड़े बादशाहों से खाली न थीं परंतु उन के उत्तराधिकारियों के राज्यप्रबंध से उन के राज्य के देशों में मेल न बना रह सका। सदा आपस में झगड़ा होता रहा और अंधेर मचा रहा। निर्बल लोग बली लोगों के शिकार थे और बलवान् अपने मद के। इस प्रकार आपस की काट मार और भीतरी झगड़ों के कारण जड़ से हिलकर और निर्जीव होकर तैमूरलंग का भारी घराना अंत को मिट्टी में मिल गया, और उस के नाश होने का कारण यह था कि उस से पच्छिम के देशों की कुछ उन्नति न हो सकी।

महाराज कश्मीर—"इन्द्रमहेन्द्र बहादुर सिपरेसल्तनत" (राज्य की ढाल)

महाराज अजयगढ़—"सवाई"

महाराज बिजावर—"सवाई"

महाराज चरखारी—"सिपहदारुल्मुल्क" (देश के सेनापति)

महाराज दतिया—"लोकेन्द्र"

नीचे लिखे हुए सरदारों और रईसों को "महाराज" की पदवी अपनी जिन्दगी भर के लिये मिली :—

आनंदराव पँवार, धार के राजा।

छत्र सिंह, समथर के राजा बहादुर।

धनुर्जय नारायणभंज देव, किलाक्योंझार के राजा, उड़ीसा।

देव्या सिंह देव, पुरी के राजा, उड़ीसा।

जगदेन्द्रनाथ राय, [राजा नाटौर के घराने की बड़ी औलाद]

राजा ज्योतींद्र मोहन ठाकुर।

कृष्णचंद्र, मोरभंज वाले, उड़ीसा।

महीपत सिंह, पटना।

आनरेबल राजा नरेंद्रकृष्ण, कलकत्ता।

राजा कृष्ण सिंह, सुसाँग के राजा।

राजा रामनाथ ठाकुर, कलकत्ता।

नीचे लिखी हुई रानियों को उनके जीवन समय के लिये "महारानी" की पदवी मिली :—

रानी हरसुंदरी देव्या, सिरसौल, बर्दवान।

रानी हींगन कुमारी, पैंदरा, मानभूम।

रानी सुरतसुंदरी देव्या, राजशाही।

राजा सर दिनकरराव के० सी० एस० आई० को "राजा मुशीरे-खास बहादुर" [राजा मुख्य सलाहकार बहादुर] की पदवी उनकी ज़िंदगी के लिये मिली।

नीचे लिखे हुए सरदारों और रईसों को उनकी ज़िंदगी के लिये "राजा बहादुर" की पदवी मिली :—

श्रीमती की ओर से राजकाज संबंधी और सेना संबंधी अधिकारियों के विषय में मैं जितनी गुणग्राहकता और प्रशंसा प्रगट करूँ थोड़ी है क्योंकि ये तमाम हिंदुस्तान में ऐसे सूक्ष्म और कठिन कामों को अत्यंत उत्तम रीति पर करते रहे हैं और करते है जिन से बढ़ कर सूक्ष्म और कठिन काम सरकार अधिक से अधिक विश्वासपात्र मनुष्य को नहीं सौंप सकती। हे राजकाज संबंधी और सेना संबधी अधिकारियो,— जो कमसिनी में इतने भारी जिम्मे के कामों पर मुकर्रर होकर बड़े परिश्रम चाहनेवाले नियमों पर तन, मन से चलते हो और जो निज पौरुप से उन जातियों क बीच राज्य प्रबंध के कठिन काम को करते हो जिन की भाषा, धर्म और रीतें आप लोगों से भिन्न हैं—मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि अपने अपने कठिन कामों को दृढ़ परंतु कोमल रीति पर करने के समय आप को इस बात का भरोसा रहे कि जिस समय आप लोग अपने जाति की बड़ी कीर्त्ति को थामे हुए हैं और अपने धर्म के दयाशील आज्ञाओं को मानते हैं उसी के साथ आप इस देश के सब जाति और धर्म के लोगों पर उत्तम प्रबंध के अनमोल लाभों को फैलाते हैं।

उस पश्चिम की सभ्यता के नियमों को बुद्धिमानी के साथ फैलाने के लिये, जिस से इस भारी राज का धन बराबर बढ़ता गया, हिंदुस्तान पर केवल सरकारी अधिकारियों ही का एहसान नहीं है, वरन् यदि मैं इस अवसर पर श्रीमती की उस यूरोपियन प्रजा को जो हिंदुस्तान में रहती है पर सरकारी नौकर नहीं है, इस बात का विश्वास कराऊँ कि श्रीमती उन लोगों के केवल उस राजभक्ति ही की गुणग्राहकता नहीं करतीं जो वे लोग उनके और उनके सिंहासन के साथ रखते हैं किंतु उन लाभों को भी जानती और मानती हैं, जो उन लोगों के परिश्रम से हिंदुस्तान को प्राप्त होते हैं तो मैं अपनी पूज्य स्वामिनी के विचारों को अच्छी तरह न वर्णन करने का दोपी ठहरूँगा।

इस अभिप्राय से कि अपने राज के इस उत्तम भाग को प्रजा को सरकार की सेवा या निज की योग्यता के लिये गुणग्राहकता देखाने का विशेप अवसर मिले श्रीमती ने कृपापूर्वक केवल स्टार आफ

श्यामनंद दे, बलेसर।
श्यामशंकर राय, टिउटा।
सरदार सूरत सिंह मंजिठिया सी० एस० आई०।
राव साहिब त्र्यंवक जी नाना अहीर, नागपुर के राव।
काँदोकिशोर भूपति जमींदार सुकींदा, उड़ीसा।
पादोलव राव, जमींदार ओल, उड़ीसा।

३२ आदमियों को "राव बहादुर" की पदवी मिली, जिन में गोपाल राव हरी देशमुख, अहमदाबाद की स्मालकाजकोर्ट के जज और नारायण भाई दंडकर वरार के शिक्षाविभाग के डाइरेक्टर भी हैं।

२१ मनुष्यों को "राय बहादुर" की पदवी मिली जिन में डाक्टर राजेंद्र लाल मित्र और बाबू कृष्णोदास पाल के नाम भी गिनने चाहियें।

८ आदमियों को "राव साहिब" की पदवी मिली, ४ को "राव" की और ५ को "राय" की। इन में से अजमेर के पाँच आदमी "रावसाहिब" और तीन "राय" हुए। निस्संदेह अजमेर के चीफ़ कमिश्नर सिफारिश करने में बड़े उदार जान पड़ते हैं क्योंकि और भी बहुत सी पदवियाँ उधरवालों के हिस्से में आई हैं। हमारे पश्चिमोत्तर देश से तो सिवाय दो एक के कोई पूछा ही नहीं गया है यद्यपि योग्य पुरुषों की यहाँ कमी नहीं है।

राय मुंशी अमीचंद अजमेर के जुडिशल असिस्टेंट कमिश्नर को "सरदार बहादुर" की पदवी मिली, रतनसिंह मध्य भरतखंड के पुलीस सुपरिंटेंडेंट को "सरदार" की; देवर परगना के ठाकुर हीरासिंह को "ठाकुर रावत" की; और लछमीनरायन सिंह केरावाले को "ठाकुर" की पदवी दी गई। ४ आदमी "नवाब" हुए। ४० को "ख़ाँ बहादुर" का ख़िताब मिला, जिन में से एक मौलवी अबदुल्लतीफ़ ख़ाँ कलकत्ते के डिपटी कलेक्टर भी हैं; और दो को "खाँ" का ख़िताब मिला।

का जो शुभ संयोग से संबंध है उस के विश्वास को दृढ़ करने और उसके मेल जोल को अचल करने ही के अभिप्राय से श्रीमती ने अनुग्रह करके वह राजसी पदवी ली है जिसे आज हम लोग प्रसिद्ध करते हैं।

हे हिंदुस्तान की राज राजेश्वरी के देसी प्रजा लोग,—इस राज की वर्त्तमान दशा और उस के नित्य के लाभ के लिये अवश्य है कि उस के प्रबंधको जाँचने और सुधारने का मुख्य अधिकार ऐसे अँगरेजी अफसरों को सुपुर्द किया जाय जिन्हों ने राज काज के उन तत्त्वों को भली भाँति सीखा है जिन का बरताव राज राजेश्वरी के अधिकार स्थिर रहने के लिये अवश्य है। इन्हीं राजनीति जानने वाले लोगों के उत्तम प्रयत्नों से हिंदुस्तान सभ्यता में दिन दिन बढ़ता जाता है और यही उसके राज काज संबंधी महत्त्व का हेतु और नित्य बढ़नेवाली शक्ति का गुप्त कारण है और इन्हीं लोगों के द्वारा पच्छिम देश का शिल्प, सभ्यता और विज्ञान, (जिन के कारण आज दिन यूरोप लड़ाई और मेल दोनों में सब से चढ़ बढ़ कर है) बहुत दिनों तक पूरब के देशों में वहाँ वालों के उपकार के लिये प्रचलित रहेगा।

परंतु हे हिंदुस्तानी लोग! आप चाहे जिस जाति या मत के हों यह निश्चय रखिये कि आप इस देश के प्रबंध में योग्यता के अनुसार अँगरेजों के साथ भली भाँति काम पाने के योग्य हैं, और ऐसा होना पूरा न्याय भी है, और इंगलिस्तान तथा हिंदुस्तान के बड़े राजनीति जानने वाले लोग और महारानी की राजसी पार्लमेंट व्यवस्थापकों ने बार बार इस बात को स्वीकार भी किया है। गवर्नमेंट ऑव इंडिया ने भी इस बात को अपने सम्मान और राजनीति के सब अभिप्रायों के लिये अनुकूल होने के कारण माना है। इसलिये गवर्नमेंट ऑव इंडिया इन बरसों में हिंदुस्तानियों की कारगुजारी के ढंग में, मुख्यकर बड़े बड़े अधिकारियों के काम में पूरी उन्नति देख कर संतोष प्रगट करती है।

इस बड़े राज्य का प्रबंध जिन लोगों के हाथ में सौंपा गया है उन में केवल बुद्धि ही के प्रबल होने की आवश्यकता नहीं है वरन् उत्तम आचरण और सामाजिक योग्यता की भी वैसी ही आवश्यकता है। इस लिये जो लोग कुल, पद और परंपरा के अधिकार के कारण आप

राजालोगों के सलामी की शोधी हुई नई फ़िहरिस्त।

—❀—

राज की सलामी

२१

गाइकवाड़ बड़ोदा, निज़ाम हैदराबाद और महाराज मैसूर।

१६

महाराना मेवाड़, ख़ान क़िलात, बेगम भूपाल, महाराज जम्बू, इंदौर, ग्वालियर, ट्रैवंकोर और कोल्हापुर।

१७

बहावलपुर के नवाब, बूँदी के महाराव राजा, कोटा के महराव, कोचीन के राजा, कच्छ के राव और भरतपुर, बीकानेर, जैपुर, करौली, जोधपुर, पटियाला और रीवाँ के महाराजा।

१५

धार, दतिया, ईडर, कृष्णगढ़, शिकम और उर्छा के महाराजा, देवास के छोटे बड़े राजा, प्रतापगढ़ के राजा, अलवर के महाराव राजा, राना धौलपुर, डूँगरपुर और जैसलमेर के महा रावल, झालावार के महाराज राना, खैरपुर के खाँ और सिरोही के राव।

१३

महाराजा बनारस, जावरा और रामपुर के नवाब, कोंच बिहार, रतलाम और त्रिपुरा के राजा।

११

चंबा, छतरपुर, धांगध्रा, फरीदकोट, झबुआ, जींद, कहलूर, कपूरथला, मंडी, नाभा, नरसिंहगढ़, राजपिपला, सीतामऊ, सिलहना, सिरमौर और सुकेत के राजे। बावनी, कम्बे, जूनागढ़, राधनपुर, राजगढ़ और टोंक के नवाब। अजयगढ़, बिजावर, चरखारी, पन्ना और समथर के महाराजे, बाँसवारा के महारावल, भावनगर के ठाकुर, नवा नगर के जाम, पालनपुर के दीवान और पोर बंदर के राना।

प्रजा के स्नेह और शुभचिंतकता के कारण इस बात की भरपूर शक्ति है कि उसे परास्त करके दंड दें।

इस अवसर पर उन पूरब के राजाओं के प्रतिनिधियों का वर्त्तमान होना जिन्होंने दूर दूर देशों से श्रीमती को इस शुभ समारंभ के लिये बधाई दी है, गवर्नमेंट ऑव इंडिया के मेल के अभिप्राय, और आस पास के राजाओं के साथ उस के मित्र का स्पष्ट प्रमाण है। मैं चाहता हूँ कि श्रीमती की हिंदुस्तानी गवर्नमेंट की तरफ से श्रीयुत खानक़िलात और उन राजदूतों को जो इस अवसर पर श्रीमती के स्नेही राजाओं के प्रतिनिधि होकर दूर दूर से अँगरेजी राज में आए हैं और अपने प्रतिष्ठित पाहुने पर श्रीयुत गवरनर-जेनरल गोआ और बाहरी कांसलों का स्वागत करूँ।

हे हिंदुस्तान के रईस और प्रजा लोग,—मैं आनंद के साथ आप लोगों को वह कृपापूर्वक संदेसा जो श्रीमती महारानी आप लोगों की राजराजेश्वरी ने आज आप लोगों को अपने राजसी और राजेश्वरीय नाम से भेजा है सुनाता हूँ। जो वाक्य श्रीमती के यहाँ से आज सबेरे तार के द्वारा मेरे पास पहुँचे हैं, ये हैं :—

"हम, विक्टोरिया, ईश्वर की कृपा से, संयुक्त राज (ग्रेट ब्रिटेन औ आयरलैंड) की महारानी, हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी, अपने वाइसराय के द्वारा अपने सब राज काज संबंधी और सेना संबंधी अधिकारियों, रईसों, सरदारों और प्रजा को, जो इस समय दिल्ली में इकट्ठे हैं, अपना राजसी और राजराजेश्वरीय आशीर्वाद भेजते हैं और उस भारी कृपा और पूर्ण स्नेह का विश्वास कराते हैं जो हम अपने हिंदुस्तान के महाराज्य की प्रजा की ओर रखते हैं। हम को यह देख कर जी से प्रसन्नता हुई कि हमारे प्यारे पुत्र का इन लोगों ने कैसा कुछ आदर सत्कार किया, और अपने कुल और सिंहासन की ओर उन की राजभक्ति और स्नेह के इस प्रमाण से हमारे जी पर बहुत असर हुआ। हमें भरोसा है कि इस शुभ अवसर का यह फल होगा कि हमारे और हमारी प्रजा के बीच स्नेह और दृढ़ होगा, और सब छोटे बड़े को इस बात का निश्चय हो जायगा कि

१२

उमर बिन सल्लह बिन मुहम्मद नकीब मकला, औध बिन उमर जमादार शहरा।

११

नवाब मालेर कोटला, ठाकुर मोरवी और राजा टेहरी।

९

महारावल बाँसवाड़ा, महाराजा बलरामपुर, महारावल धरमपुर, ध्रोल गोंदल, लिमडी, पालीटाना, राजकोट और वादवान के ठाकुर, जंजीरा के और सुचीन के नवाब, खरोड़, बंकनीर बिरोंदा और मैहर के राजे और सुलतान सकोतरा तथा किलिचीपुर के राव।

विदित रहे कि महाराज नैपाल, सुल्तान मसकत, सुलतान जंजीबार और अमीर काबुल की सलामी भी २१ है।

से बढ़ कर १७। भूपाल की बेगम के पति और हैदराबाद के शम्सुल उमरा नामी दूसरे मंत्री की सलामी नए सिर से १७तोप की नियत हुई।

नवाब रामपुर की सलामी उमर के लिये १३ से १५ तोप हुई, और भाव नगर के ठाकुर, नवा नगर के जाम, जूनागढ़ के नवाब और काठियावाड़ के राजा की ११ से बढ़कर १५। आरकट के शहज़ादे और बेगम भूपाल की संबंधिनी कुदसिया बेगम को १५ तोप की सलामी नए सिर से मुकर्रर हुई।

महाराज पन्ना, राजा जींद और राजा नाभा की ११ से १३ तोप की सलामी ज़िंदगी भर के लिये हो गई और महारानी तंजौर और महाराज बर्दवान को नए सिर से १३ तोप की सलामी मिली।

मकला के नक़ीब और शिवहर के जमादार को १२ तोप की सलामी उमर भर के लिए मिली।

मलेरकोटला के नवाब की सलामी ज़िदगी भर के लिये ९ से ११ हो गई, और मुरवी के ठाकुर साहिब और टिहरी के राजा के लिये नए सिर से ११ तोप की सलामी कायम हुई।

नीचे लिखी हुई जगहों के राजाओं, सरदारों या ठाकुरों के जीवन समय के लिये नए सिर से नौ नौ तोप की सलामी मिली—

धरमपुर, ध्रोल, बलरामपुर, बसडा, बिरोंदा, गोंदाल, जंजीरा, ख़रींद, किलचीपुर, लिमडी, मैहर, पलिटाना, राजकोट, सुकेतरा (के सुल्तान), सुचीन, बादवान और वंकानेर।

यहाँ यह भी लिखना आवश्यक है कि १ जनवरी सन् १८७७ से श्रीमती राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार उनकी सलामी १०१ तोप की और राजसी झंडे तथा हिंदुस्तान के गवर्नर-जेनरल की ३१ तोप की नियत हुई।

नीचे लिखे हुए राजा और अधिकारी लोग "काउंसिलर ऑव दि एम्प्रेस" (राजराजेश्वरी के सलाहकार) नियत हुए :—

जीवन समय तक।

महाराज कश्मीर, श्रीरणवीरसिंह जी० सी० एस० आई०।

" बूँदी, श्रीरामसिंह जी० सी० एस० आई०।

नीचे लिखे हुए राजाओं को प्रथम श्रेणी के स्टार ऑव इंडिया (जी० सी० एस० आई०) की पदवी मिली :—

श्रीयुत् महाराज रामसिंह, बूँदी।
,, महाराज ईश्वरीप्रसादनारायण सिंह, बनारस।
,, महाराज जसवन्त सिंह, भरतपुर।
,, प्रिंस अजीमजाह बहादुर, आर्काट।

इन लोगों को दूसरी श्रेणी के स्टार ऑव इंडिया (के० सी० एस० आई०) की पदवी मिली :—

श्रीशिवाजी छत्रपति, राजा कोल्हापुर।
राजा आनंदराव पँवार, धारवाले।
श्रीमानसिंहजी, राजा ध्रांगध्रा।
श्रीविभवजी, जाम नवानगर।

आर० जे० मैकडोनल्ड, श्रीमती के ईस्ट इंडीज की जहाजी फौजों के कमांडरिनचीफ़।

सर जॉर्ज कूपर सी० बी० पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टेनेन्ट गवरनर।

जेम्स स्टीवन साहिब, गवरनर जेनरल की काउंसिल के पहले मेंबर।

आर्थर हाबहाउस साहिब, गवरनर-जेनरल की काउंसिल के मेंबर।

ई० सी० बेली साहिब सी० एस० आई० गवरनर-जेनरल की काउंसिल के मेंबर।

तीसरे दरजे के स्टार ऑव इंडिया [सी० एस० आई०] की पदवी २५ आदमियों को मिली, जिन में मथुरा के सेठ गोविंद दास, कश्मीर के दीवान ज्वाला सहाय, और त्रावणकोर के दीवान शशिया शास्त्री को भी गिनना चाहिये। नीचे लिखे हुए राजाओं को उनके नाम के सामने लिखी हुई पदवियाँ मिलीं।

महाराज गाइकवाड़ बड़ोदा—"फरजंदे खास दौलते इंगलिशिया" (अँगरेजी सरकार के मुख्य बेटे)

महाराज ग्वालियर—"हिसामुस्सलतनत" [राज्य की तलवार]

विलायत के बादशाहों की बेटी ली, पर अपनी बेटी मुसलमान को न दी *।

आज हम उसी बड़े पराक्रमशाली प्राचीन वंश का इतिहास लिखने बैठे हैं। इसमें हमारे मुख्य सहायक ग्रंथ टॉड साहिब का राजस्थान, उदयपुर के वंशचरित्र के भाषाग्रंथ और प्राचीन ताम्रपत्र हैं। जैसे संसार के सब राजों के इतिहास प्रारंभ में अनेक आश्चर्य घटना पूरित होते हैं वैसे ही इस के भी प्रारंभ में अनेक आश्चर्य इतिहास हैं। उन से कोई इस के ऐतिहासिक इतिवृत्ति में संदेह न करैं; क्योंकि प्रायः प्राचीन इतिवृत्त अनेक अद्भुत घटना पूर्ण होते हैं और इतिहासवेत्ता लोग उन्हीं चमत्कृत इतिहासों का सारासार निस्सार पूर्वक सारा निर्णय बुद्धि बल से कर लेते हैं।

राजस्थान में मेवाड़ और जैसलमेर का राज्य सब से प्राचीन है। आठ सौ बरस से भारतवर्ष में विदेशियों का राज्य प्रारंभ हुआ, तब से अनेक राज्य बिगड़े और बने पर यह ज्यों का त्यों है। ग़ज़नी के बादशाह लोग सिंधु नदी का गंभीर जल पार कर के हिंदुस्तान में आए। उस समय जहाँ मेवाड़ के राज्य का सिंहासन था वहीं अब भी है। बहुत से राजा लोग उस राज्य के चारो ओर, बहुत से वहाँ से और कहीं जा बसे, पर इन के महल अब भी वहीं खड़े हैं जहाँ पहले खड़े थे। सतयुग से आज तक इसी वंश के सब पुरुष सिंहासन ही पर मरे।

---

* कहते हैं कि जब औरंगज़ेब ने उदयपुर घेर लिया था तब राना साहब शिकार खेलते थे और उन को बादशाह की दो बेगम फौज से बिछड़ी जंगल में भटकती हुई मिलीं, जिन को राना ने अपनी बहिन कह के पुकारा और रक्षापूर्वक लाकर उन को औरंगज़ेब को सौंप दिया। मुसलमान तवारीख लिखनेवालों ने अपनी क्षति इसी बहाने पूरी की और कहा कि उदयपुरवालों ने बेटी नहीं दी, तो क्या हुआ, बादशाह बेगम को अपनी बहिन बनाया तो सही। बरंच इसी हेतु उस दिन से उन बेगमों को उदयपुरी बेगम लिखा गया। भाषाग्रंथों में इन बेगमों के नाम रंगी चंगी बेगम लिखे हैं।

रघुवीरदयाल सिंह, विरोंदा के राजा।
खड्गसिंह, सुरीला के राजा।
उदितप्रतापदेव, खरोंद के राजा।
राजा विशेशर मालिया, सिरसौल, वर्द्धवान।
राजा हरिवल्लभसिंह, विहार।
राजा हरनाथ चौधरी, दुवलहट्टी, राजशाही।
राजा मंगलसिंह; भिनाई, अजमेर।
राजा रामरंजन चक्रवर्त्ती, वीरभूम।

—❀—

नीचे लिखे हुए मनुष्यों को उन के जीवन समय के लिये "राजा" की पदवी मिली :—

बाबू अजीत सिंह, तरौल, प्रतापगढ़।
बाबा बलवंत राव, जबलपुर।
बलवंत सिंह, गंगवाना।
डमरू कुमार वेंकटिया नयुदू, जमींदार कलाहस्थी, उत्तर आरकट।
देवा सिंह, राजगढ़।
दिगंबर मित्र, कलकत्ता।
राव गंगाधरराम राव जमींदार पितापुर, गोदावरी प्रांत।
राव छत्रसिंह, जमींदार, कन्याधना।
हरिश्चंद्र चौधरी, मैमनसिंह।
कमलकृष्ण, कलकत्ता।
राय बहादुर क्षेत्रमोहनसिंह, दीनाजपुर।
कुँअर हरनरायण सिंह, हाथरस।
कुँअर लछमन सिंह, डिप्टी कलेक्टर, बुलंदशहर।
सर टी० माधवराव के० सी० एस० आई०, बड़ोदा के दीवान।
ठाकुर माधव सिंह, अजमेर।
प्रताप सिंह, अजमेर।
रामनरायन सिंह, मुंगेर।

शिलादित्य वा शीलादित्य तक एक प्रकार का क्रम लिख आए हैं। अब आगे नामों में और उन के समय में कितना गड़बड़ और उस के ठीक निर्णय में कितनी विपत्ति है यह दिखाते हैं। आर्यमत के अनुसार चार युग में काल बाँटा गया है। इसमें ब्रह्मा की उत्पत्ति से सत्ययुग माना जाता है। अब अनेक पुराणों से और प्रसिद्ध विद्वानों के मत से प्रारंभ से काल लिखते हैं।

पुराण के मत से इक्ष्वाकु को २१८५००० वर्ष हुए। जोन्स के मत से ६८७७ और विलफर्ड के मत से ४५७८, टॉड के मत से ४०७७, वेण्टली के मत से ३४०५।

श्री रामचंद्र का समय पुराण० ८६८६७६ वर्ष, जोन्स० ३६०६, विलफर्ड० ३२३७, वेण्टली० २८२७, टॉड० ४०००।

महाराज युधिष्ठिर का समय पुराण० ४६७६, वेंटली २४५१, और जोन्स-टाड ३३०७ और विलफर्ड के मत से श्री रामचंद्र का और युधिष्ठिर का समय एक है, विल्सन के मत से ३३०७।

सुमित्र का समय पुराण० ३६७७, जोन्स २६०६, विलफर्ड २५७७, वेंटली १६६६, विल्सन० २८०२, ब्रह्मावालों के मत से २४७७।

शिशुनाग का समय पुराण० ३८३६, जोन्स० २७४७, विलफर्ड० २४७७, विल्सन० २६५४, ब्रह्मावाले० २४७७।

नंद का समय पुराण० ३४७७, जोन्स० २५७६, विल्सन० २२६२, ब्रह्मावाले० २२८१।

चंद्रगुप्त का समय पुराण० ३३७६, जोन्स० २४७७, विलफर्ड० २२२७, विल्सन० २१६२, टॉड० २१६७, ब्रह्मावाले० २२६६।

अशोक का समय पुराण० ३३४७, जोन्स० २२१७, विल्सन० २१२७, ब्रह्मावाले० २२०७।

जोन्स प्रिंसिप साहब के मत से परशुराम जी को ३०५३ वर्ष हुए और वेंटली साहब के मत से वाल्मीकि रामायण बने केवल १५८६ वर्ष हुए।

कलियुग का प्रारंभ पुलोम के समय तक भागवत के मत से ३७३४, ब्रह्माण्डपुराण के मत से ३६५२, वायुपुराण के मत से ३६०६, जैनों के

इन सरदारों को उनके नाम के सामने लिखे हुए ख़िताब ख़ानदानी मिले :—

महाराज सर जयमंगलसिंह बहादुर के० सी० एस० आई० गिद्धौर, मुंगेर—"महाराज बहादुर"।

धर्मजीत सिंह देव, सरदार उदैपुर, छोटानागपुर महाल—"राजा उदयपुर"।

नवाब ख्वाजा अबदुलग़नी, ढाका—"नवाब"

दीवान ग़यासुद्दीनअली ख़ाँ सज्जादानशीन, अजमेर, को उन की ज़िंदगी भर के लिये "शेखुलमशायख़" का ख़िताब मिला और सरदार अतरसिंह बहादुर, भदौर, को "मलाजुल् उलमा वलफ़ीज़ला" का।

इस के सिवाय एक को "दीवान बहादुर" की, एक को "दीवान" की और १३ को "ऑनररी असिस्टेंट कमिशनर" की पदवी दी गई।

दो यूरोपियन महाशयों को फ़ारिन डिपार्टमेंट के आनरेरी असिस्टेंट सेक्रेटरी का और ऑनरेरी असिस्टेंट प्राइवेट सेक्रेटरी का पद भी अलग अलग दिया गया।

सेना के कितने अधिकारों के साथ भी "सरदार बहादुर" और "बहादुर" की पदवियाँ लगा दी गईं, और सब छोटे छोटे अधिकारियों, जहाज़ी नौकरों, सेना के सिपाहियों और गोरों को एक एक दिन की तनख्वाह इनाम मिली और दूसरी रिआयतें भी इन के साथ की गईं। इस के सिवाय नेटिव कमीशंड आफ़िसर लोगों की तनख़ाह भी कुछ बढ़ा दी गई है।

रहीमख़ाँ ख़ाँ बहादुर, असिस्टेंट सर्जन लाहौर को "ऑनरेरी सर्जन" की पदवी मिली।

श्रीयुत रणवीर सिंह जी० सी० एस० आई० महाराज जम्बू और कश्मीर, और श्रीयुत जयाजीराव सेंधिया जी० सी० एस० आई० महाराज ग्वालियर को सेना के जेनरल [जरनैल] का पद प्रतिष्ठा की रीति पर श्रीमतीराजराजेश्वरी की ओर से दिया गया।

—(:)—

दिलीप, भगीरथ, श्रुत, नाभाग, अंबरीप, सिंधुद्वीप, अयुताश्व, १७ ऋतुपर्ण, सर्वकाम, सुदास, कल्मापपाद, १८ असमक, १६ हरिकवच, २० दशरथ, इलिवथ, विश्वासह, २१ खट्वाँग, दीर्घबाहु, रघु, अज, दशरथ, श्रीराम, २२ कुश, अतिथि, निपध, नल, नाभ, पुंडरीक, क्षेमधन्वा, २३ द्वारिक, अहीनज, कुरुपरिपात्र, २५ दल, २६ छल, उकथ, २७ बज्रनाभि, २८ शंखनाभि, २६ व्युथिताभि, ३० विश्वासह, हिरण्यनाभि, ३१ पुष्प, ३२ ध्रुवसंधि, ३३ अपवर्म, शीघ्र, ३४ मरु, प्रसव श्रुत, ३५ सुसंध, आमर्प, ३६ महाश्व, वृहद्वाल, वृहद्शान, उरुक्षेप, वत्स, वत्सव्यूह प्रतिव्योम, ३७ देवकर, सहदेव, ३८ वृहदश्व, ३६ भानुरत्न, सुप्रतीक, मरुदेव, सुनक्षत्र ४० ।

केशीनर, ४१ अंतरीक्ष, ४२ सुवर्ण, अमित्रजित्, वृहद्राज, ४३ धर्म ४४ कृतंजय, ४५ रणंजय, संजय, शाक्य, ४६ क्रोधदान, शाक्य सिंह, ४७ अतुल, प्रसेनजित, क्षुद्रक, कुंदक, ४८ सुरथ, सुमित्र ।

समय से अनेक ग्रंथकार द्वापर की प्रवृत्ति मानते हैं (इन्हीं कुश का एक पुत्र कूर्म नामक था जिस से कछवाहे लोग अपनी वंशावली मानते हैं।) २३ ना० देवानीक । २४ ना० अहीनग । २६ ना० बल । २५ ना० रणच्छल । २७ बज्रनाभि के पीछे कोई अर्क तब शंखनाभि को लिखता है । २८ ना० सगण । २६ ना० विधृत । ३० ना० विशित्राश्व । ३१ ना० पुष्य । ३२ ध्रुवसंधि और अपवर्म के बीच मेंकोई सुदर्शन नामक और एक राजा मानता है । ३३ ना० अग्निवर्म । ३४ ना० मनु । ३५ ना० संधि । ३६ ना० अवस्वान, इसी महाश्व के पीछे विश्वबाहु, प्रसेनजित और तक्षक नामक तीन राजा वृहद्वाल के पहले अनेक ग्रंथकार मानते हैं और कहते हैं, कलियुग का प्रारंभ इसी समय से हुआ । ३७ प्रतिव्योम और देवकर के बीच में कोई भानु को भी जोड़ते हैं। इसी देवकर का नामांतर दिवाकर है । ३८ सहदेव, तब बीर, तब वृहदश्व, यह किसी का मत है । ३६ ना० भानुमत वा भानुमान, ग्रंथकारों का मत है कि ईरान का जो प्रसिद्ध बहमन नामक राजा हुआ था वह यही भानुमान है । इस के और सुप्रतीक के बीच में कोई प्रतिशोश्व नामक राजा मानते हैं । ४० ना० पुश्कर । ४१ ना० रेख । ४२ ना० सुतपा । ४३ ना० बाढ़ि । ४४ कोई ग्रंथकार कहते हैं कि यही कृतंजय प्रथम सौराष्ट्र में आया । ४५ ना० जयरान । ४६ ना०

९

अली राजपुर, बड़वानी और लुनवारा के राना, घैरिया, छोटा उदयपुर, नागोद और सोंठ के राजा; बालाशिनोर के बाबी, फुज़्दी और लदज के सुलतान तथा सावंतवाड़ी के देसाई और मालेर कोटला के नवाब।

—:—

शारीरक सलामी।

२१

महाराज दिलीप सिंह, महाराज जयाजी राव सेंधिया, महाराज तुकोजी राव होलकर, महाराना सज्जनसिंह जी उदयपुर, महाराज रामसिंह सवाई जयपुर, महाराज रणवीर सिंह कश्मीर, महाराज श्रीरामवर्मा ट्रवायँकोर।

१९

मुरशिदाबाद के नवाब निजाम, महाराज जसवंत सिंह जोधपुर, महाराज सर जंग बहादुर वज़ीर नैपाल, महाराज रघुराज सिंह रीवाँ।

१७

बेगम भूपाल के पति, हैदराबाद के सालारजंग और शमसुल् उम्रा, महाराज पृथ्वी सिंह कृष्णगढ़, महाराज महेंद्रप्रताप सिंह उर्छा और नवाब इब्राहीम खाँ टोंक।

१५

आर्कट के प्रिंस अज़ीमजाह, ठाकुर तख्तसिंह जी भावनगर, कुदसिया बेगम भूपाल, राजा मानसिंह ध्रांगध्रा, नवाब महाबत खाँ जूनागढ़, जाम श्रीविभव जी नवानगर, नवाब कलबअली खाँ रामपुर।

१३

महाराज महताबचंद बर्दवान, महाराज जींद, महाराज पन्ना, महाराज विजयनगरम्, राजा नाभा और रानी विजय महिश्री मुक्ताबाई तंजोर।

वापा तक नाम का क्रम हम पूर्व में लिख आए हैं, परंतु प्राचीन ताम्रपत्रों से ले कर यदि वंशावली लिखी जाय, तो सेनापति वा भट्टारक तथा धरासेन, द्रोणसिंह (प्रथम), ध्रुवसेन, धरापति, गृहसेन, श्रीधरसेन (प्रथम), शिलादित्य (प्रथम), चारुग्रह वा खड्ग्रह (द्वितीय) श्रीधरसेन (द्वितीय), ध्रुवसेन (तृतीय), श्रीधरसेन (तृतीय), शिलादित्य (इस के पीछे तीन नाम छूट गए हैं), शिलादित्य (तृतीय) और (चतुर्थ) शिलादित्य ।

टॉड साहब की वंशावली और वल्लभीपुर की वंशावली में कितना अंतर है यह ऊपर के नामों से प्रगट होगा । पादरी अंडरसन साहब ने दो नए ताम्रपत्र पढ़ कर इस वंशावली को शोधा है और वे कहते हैं कि इस में जहाँ जहाँ श्रीधरसेन लिखा है वह सब नाम धरासेन है और शिलादित्य का नाम क्रमादित्य वा विक्रमादित्य है और इन्हीं को धर्मादित्य भी कहते हैं* । और वंशावली के प्रथम पुरुष को सेनापति वा भट्टारक वा धर्मादित्य भी लिखा है । दोनों वंशावली में वल्लभीपुर का अंतिम राजा शिलादित्य है और इन दोनों के संवत् भी पास पास मिलते हैं । पारसी इतिहासवेत्ताओं के मत से इसी शिलादित्य का पुत्र ग्रह वा ग्रहादित्य, जिस ने ग्रहलोत वा ममोधिया गोत्र चलाया, नौशेरवाँ का रक्षित पुत्र था, परंतु महाराज जैसिंह ने राजा अजयसेन का ही नामांतर नौशेरवाँ लिखा है । पारसी इतिहासवेत्ताओं के मत से नौशेरवाँ के पुत्र नोशीजाद (हमारे यहाँ का नागादित्य) और यजदिजिर्द की बेटी माहवानू, जो इन्हीं राजाओं में से किसी को व्याही थी, इस वंश के मूल पुरुष हैं । विलफर्ड साहब के मत से वल्लभीशक के स्थापनकर्ता अजयसेन वा दूसरी वंशावली के अनुसार धरासेन को ही पुराणों में शूद्रक वा शूरक लिखा है, जिस ने ३२९० वर्ष कलियुग बीते सन् १९१ वा २९१ में प्रथम विक्रमादित्य के नाम से राज्य किया था ।† मेजर वॉटसन के मत से सेनापति भट्टारक के सौराष्ट्र जीतने के दो वर्ष

---

* Bomb. Jour. VLIII P. 216
† as Ras VL IX pp. 135. 230.

उदयपुरोदय

[अर्थात् मेवाड़ का पुरावृत्त-संग्रह]

सं० १६३४

शिलादित्य को कोई जीत नहीं सकता था। और यह भी कथित है कि सूर्य की दी हुई शिलादित्य के पास एक ऐसी शिला थी जिसको दिखा देने से वा स्पर्श करा देने से शत्रुओं का नाश हो जाता था। और इसी वास्ते इनका नाम शिलादित्य था। इन के किसी शत्रु ने इन्हीं के किसी निज भेदिये की सम्मति से उस पवित्र कुंड को गोरक्त द्वारा अशुद्ध कर दिया, जिस से वल्लभीपुर के नाश के समय राजा के बारंबार आवाहन करने से भी वह अश्व नहीं निकला और राजा सपरिवार युद्ध में निहत हुआ और वल्लभीपुर नाश हुआ। जैनग्रंथों के अनुसार संवत् २८५ में वल्लभीपुर नाश हुआ और श्री महाराणा उदयपुर के राज्य कृत संग्रह के अनुसार राजा शिलादित्य का नाम सलादित्य था और वल्लभीपुर का नाम विजयपुर।

अँगरेजी विद्वानों का मत है कि नगरावरोधकारी शत्रुदल ने हिंदुओं को दुःख देने के हेतु गोरक्त से वल्लभीपुर के जल कुंडों को अशुद्ध कर दिया होगा, जिससे हिंदू लोग घबड़ा कर एक साथ लड़ने को निकल खड़े हुए होंगे। अलाउद्दीन बादशाह ने गागरौन देश के खीची राजाओं से यही छल किया था। वल्लभीपुर के शत्रुओं का यही छल मानो इस कथा का मूल है।

वल्लभीपुर को किस असभ्य जाति ने नाश किया इस का निर्णय भली भाँति नहीं होता। प्राचीन पारस निवासी लोग वृष को पवित्र समझते थे और सूर्य के सामने उसको बलिदान भी करते थे। इस से निश्चय होता है कि ये लोग पारसी तो नहीं थे। प्राचीन ग्रंथों में पाया जाता है कि ख्रिष्टीय दूसरी शताब्दी में सिंधु नद के किनारे पारद वा पार्थियन लोगों का एक बड़ा राज्य था। विष्णुपुराण में लिखा है कि सूर्यवंशी सगर राजा ने म्लेच्छों को चिह्न विशेष देकर भारतवर्ष से निकाल दिया था, जिस में यवन सर्व शिरोमुंडित केश, अर्द्ध शिर-मुंडित, पारद मुक्त केश और पन्हव वा पल्हव श्मश्रुधारी बनाए गए थे। उसी काल में श्वेत वर्ण की एक हूण जाति भी सिंधु के किनारे राज्य करती थी। हूण जाति नामक प्राचीन असभ्य मनुष्यों का लेख पुराणों और यूरप के इतिवृत्तों में भी पाया जाता है। संभा-

उदयपुरोदय
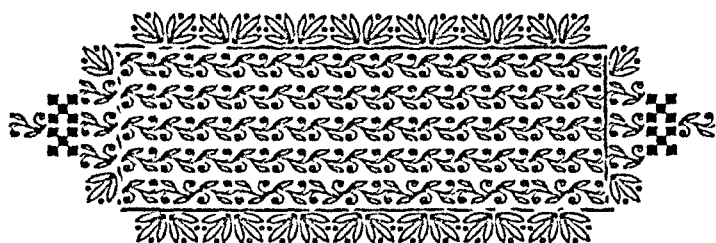
—❀—

पहिला अध्याय

मेवाड़ का शुद्ध नाम मेदपाट है और यहाँ के महाराज की संज्ञा सीसौंधिया है। कहते हैं कि इन के वंश में कोई राजा बड़े धार्मिक थे। एक समय वैद्यों ने छल से औषध में मद्य मिला कर उन को पिला दिया, क्योंकि जिस रोग में वे ग्रस्त थे उस की औषधि मद्य ही के साथ दी जाती थी। शरीर स्वच्छ होने पर जब उन्हों ने जाना कि हम ने मद्य पीया था, तो उसके प्रायश्चित्त के हेतु गलता हुआ सीसा पीकर प्राण त्याग किया। तभी से सीसौंधिया इस वंश की संज्ञा हुई। यही वंश भारतखंड में सब से प्राचीन और सब से माननीय है। इसी वंश में महात्मा मांधाता, सगर, दिलीप, भगीरथ, हरिश्चंद्र, रघु आदि बड़े बड़े राजा हुए हैं और इसी वंश में भगवान् श्रीरामचंद्र ने अवतार लिया है। इसी वंश के चरित्र में कालिदास, भवभूति, वरंच व्यास, वाल्मीकि ने भी वह ग्रंथ बनाए हैं जो अब तक भारतवर्ष के साहित्य के रत्नभूत हैं। हिंदुस्तान में यही वंश ऐसा बचा है जिस में लोग सत्ययुग से लेकर अब तक बराबर राज्यसिंहासन पर अचल छत्र के नीचे बैठते आए। उदयपुरवाले ही ऐसे हैं जिन्होंने और और

दूसरा अध्याय

वल्लभी वंश की रात्रि का अवसान हुआ। उदयपुर के इतिहास की यहाँ से शृंखला बँधी। पूर्व में लिख आए हैं कि वल्लभीपुर को यवनों ने घेरा और राजा शिलादित्य ने सकुटुंब सपरिवार वीरों की गति पाया। अब और सीमंतिनीगण राजा की सहगामिनी हुईं, किंतु रानी पुष्पवती (वा कमलावती) मात्र जीवित रही।

रानी पुष्पवती चंद्रावती नगर (सांप्रत आबूनगर) के राजा की दुहिता थीं। वल्लभीपुर के आक्रमण के पूर्व ही यह रानी गर्भवती होकर अपने पिता के राज में जगदंबा (आशांम्बिका) के दर्शन को गई थी और वहाँ से लौटती समय मार्ग में अपने प्राणवल्लभ और वल्लभीपुर का विनाश सुना और उसी समय अपना प्राण देना चाहा। परंतु वीरनगर की एक ब्राह्मणी लक्ष्मणावती जो रानी के साथ थी उसके समझाने से प्रसव काल तक प्राण धारण का मनोरथ कर के मालिया प्रदेश के एक पर्वत की गुहा में कालयापन करना निश्चय किया। इसी गुहा में गुहा का जन्म हुआ और रानी ने सद्यःजात संतान उस ब्राह्मणी को देकर आप अग्नि-प्रवेश किया। मरती समय रानी ब्राह्मणी को समझा गई थी कि इस पुत्र को ब्राह्मणोचित शिक्षा देकर क्षत्रिय कन्या से व्याह देना।

लक्ष्मणावती ब्राह्मणी उस बालक का लालन पालन करने लगी और द्वेषियों के भय से भांडेरगढ़ और पराशर वन में क्रम से रही। गुहा में जन्म होने के कारण बालक का नाम भी गुहा (ग्रहादित्य वा केशवादित्य) रक्खा। गुहा की प्रकृति दिन दिन अति उत्कट होने लगी और बहुत से वनवासी बालकों को इन्होंने अपना अनुगामी बना लिया। इसी वृत्तांत पर उस देश में यह कहावत अब भी प्रचलित है कि सूर्य की किरण को कौन छिपा सकता है।

मेवाड़ की दक्षिण सीमा पर ईदर के राज्य पर उस समय भीलों का अधिकार था और उस समय के भीलों के राजा का नाम मंडलिका

भगवान रामचंद्र के ज्येष्ठ पुत्र लव ने अपने राज्य-समय में लवपुर अर्थात् लाहौर बसाया था और सुमित्रायु नामक राजा लव से पचपन पीढ़ी पीछे हुआ। पुराणों में लिखा है कि सुमित्र ने कलियुग में राज्य किया और बहुत से प्रमाणों से मालूम होता है कि ये विक्रमादित्य के कुछ पहले वर्तमान थे। इन के पीछे कनकसेन तक राजाओं का ठीक वृत्तांत नहीं मिलता। जहाँ तक नाम मिले हैं उसमें पहला महारथ, उस का पुत्र अंतरीक्ष, उस का अचलसेन और उस का पुत्र राजा कनकसेन हुआ। राजा कनकसेन ही सौराष्ट्र देश में आये, परंतु इस का नहीं पता लगता कि उन्हों ने लाहौर किस हेतु से छोड़ा और किस पथ से सौराष्ट्र पहुँचे। यहाँ आकर इन्हों ने किसी पवाँर वंश के राज का अधिकार जीत कर सन् १४४ में वीर नगर नामक नगर संस्थापन किया। कनकसेन को महामदनसेन, उनको शोणादित्य और उनको विजय भूप हुआ। इस ने जहाँ अब धोल का नगर है वहाँ पर विजयपुर नामक नगर संस्थापन किया और जहाँ अब सिहोर है तहाँ विदर्भ नगर बनाया। और वल्लभीपुर नामक एक बड़ा नगर बसा कर उसे अपनी राजधानी बनाया। अब धोल नगर से पाँच कोस उत्तर-पश्चिम वालभी नामक जो गाँव है वहीं इस प्रसिद्ध वल्लभीपुर का अवशेष है। शत्रुञ्जय-माहात्म्य नामक जैन ग्रंथ में भी इस नगर की बड़ी शोभा लिखी है मेवाड़ के राजा लोग बल्लभीपुर से आए हैं यह प्रवाद बहुत दिन से था, पर कोई इस का पक्का प्रमाण नहीं था। अब उदयपुर के राज्य में एक टूटे शिवालय में एक प्राचीन खोदा हुआ पत्थर मिला है, उस से यह संदेह मिट गया, क्योंकि उस में लिखा है कि जिन महात्माओं का ऊपर वर्णन हुआ उस की साक्षी वल्लभीपुर के प्राचीर हैं। राणा राजसिंह के समय के बने हुये एक ग्रंथ में भी लिखा है कि सौराष्ट्र देश पर बरबरों ने चढ़ाई करके बालकानाथ को पराजय किया।

इस बल्लभीपुर के विप्लव में सब लोग नष्ट हो गये और केवल एक प्रमार की दुहिता मात्र बची। वल्लभीपुर शिलादित्य के समय में नाश हुआ। विजयभूप के पद्मादित्य, उन के शिवादित्य, उन के हरादित्य, उन के सुयशादित्य, उन के सोमादित्य, उन के शिलादित्य।

पुत्र ग्रहादित्य (वा द्वितीय नागादित्य)। घासा गाँव इन्हीं के नाम से प्रसिद्ध है। गुहा राजा से लेकर नागादित्य पर्यंत छ (टॉड साहब के मत से सात) राजाओं ने इसी पर्वत भूमि का राज्य किया, पर इन में से कोई अत्यंत प्रसिद्ध न था, किंतु नागादित्य का पुत्र वाप्पा बड़ा प्रसिद्ध और नामी मनुष्य हुआ, वरंच उदयपुर के राज का इसे मूलस्तंभ कहें तो अयोग्य न होगा। वापा का वर्णन उदयपुर से जो लिख कर आया है उसे हम यहाँ पर अविकल प्रकाश करते हैं। "ग्रहादित्य के वाष्प नामक पुत्र हुआ। कहते हैं कि वाष्प नंदी गण के अवतार थे। यह कथा सविस्तर वायु पुराणांतर्गत एकलिंग-माहात्म्य में लिखी है। जब राजा ग्रहादित्य के एक शत्रु जंजावल नाम राजा ने घासा नगर को आन आवर्तन किया वहाँ राजा ग्रहादित्य बड़े पराक्रम के साथ मारे गए और घासा में जंजावल का अधिकार हो गया तब आपत्ति-काल अवलोकन कर प्रमरवंशोद्भव ग्रहादित्य की राज्ञी ने अपने पुत्र वाष्प को शिशुता के भय से निज पुरोहित वशिष्ठ के गृह में गोपन कर पिहित रहना स्वीकार किया। बहुत समय व्यतीत होने पीछे वाष्प ने वशिष्ठ की गो-चारन का नियम लिया। लिखा है कि उस गो निकर में एक कामधेनु नाम धेनु थी, सो जब वाष्प गो-चारन को जाते वहाँ उक्त गाय एक वेणु-चय में प्रवेश करती। वहाँ एक स्फटिक का लिंग था उस पर अपने स्तनों से दुग्ध श्रवती। इस वास्ते गुरुपत्नी ने एक दिन वाष्प को उपालंभ दिया कि इस धेनु के स्तनों में दुग्ध नहीं सो कहाँ जाता है। द्वितीय दिवस वाष्प ने उस गाय को दृष्टि से पिहित न होने दिया। वह सुरभी तो शिव लिंग पर पूर्वोक्त दुग्ध श्रवने लगी अरु वाष्प ने इस चरित्र को देख साक्षी बनाने को हारीत नामा ऋषि, ज्यों भृंगी गण का अवतार लिखा है वहाँ तपस्या करते हुये, को देख वाष्प ने निमंत्रण कर वह चरित्र दिखाया। जब भृंगी गण ने कहा कि हे वाष्प, इस श्रीमदेकलिंगेश्वर के दर्शनार्थ तो मैं यहाँ ऐसा कठिन तप करता था अरु तू भी इन्हीं का सेवक नंदीगण का अंशावतार है, तब वाष्प को भी स्वरूप-ज्ञान हुआ। फिर श्रीशंकर की स्तुति कर वर पाय हारीत ऋषि तो कैलास सिधारे और वाष्प ने राज्य की अपेक्षा करी। इससे उन को

मत से २६५५ और चीन और ब्रह्मा के मत से २५६८ वर्ष से है। अँगरेजी विद्वानों के पुराणों के अनुसार इस समय तक पुलोम का समय जोड़ कर एक सम्मति है कि कलियुग बीते ५००० वर्ष लगभग हुए, परंतु इस मत को वे सत्य नहीं मानते, क्योंकि फिर आप ही लिखते हैं कि स्वायंभु मनु को हुए ५८८३ वर्ष और वैवस्वतमनु को ४८२७ वर्ष हुए।

युधिष्ठिर के ३०४४ संवत् बीते विक्रम का संवत् चला और विक्रम के १३५ वर्ष पीछे शालिवाहन का शाका चला।

ऊपर जो कालनिर्णय में विद्वानों के परस्पर विरुद्ध मत वर्णन किए गए इस से यह बात प्रसिद्ध होगी कि प्राचीन समय निर्णय करना कितना दुरूह है, इस के आगे जो ब्रह्मा से लेकर सुमित्र पर्यंत नामावली दी जाती है उसके मध्यगत काल का निर्णय न कर के सुमित्र के समय से जो हमारे मत के अनुसार २००० वर्ष बीते हुआ है काल का निर्णय प्रारंभ करेंगे।

ब्रह्मा, मरीचि, कश्यप, विवस्वान, श्राद्धदेव, इक्ष्वाकु, विकर्ती १ पुरंजय, काकुत्स्थ, २ अनेनास, ३ पृथु, ४ विश्वगश्व, ५ अर्द्र, भाद्रआर्द्र, युवनाश्व, ६ श्रवस्थ, बृहदश्व, ७ कुवलयाश्व, दृढ़ाश्व, हर्यश्व, निकुंभ, ८ संकटाश्व, ९ प्रसेनजित्, युवनाश्व, १० मांधाता, पुरुकुत्स, त्रिविशदश्व, अनारण्य, पृषदश्व, हयश्व, ११ वसुमान, १२ त्रिधन्वा, १३ त्रयारण्य, त्रिशंकु, हरिश्चंद्र, रोहिताश्व, हारीत, १४ चुंचु, विजय, १५ रुरुक, वृक, १६ बाहु, सगर, असमंजस, अंशुमान्,

१ नामांतर काकुत्स्थ। २-३ ना० अनपृथु। ४ ना० विश्वगंधि। ५ ना० चंद्र। ६ ना० स्वसव या श्रव। ७ ना० धुंधुमार। ८ संकटाश्व के पीछे वरुणाश्व और कृशाश्व दो नाम और मिलते हैं। ९ ना० सेनजित। १० ना० सुबंधु इन को चक्रवर्ती लिखा है। ११ ना० महंश या अरुण। १२ ना० त्रिविधन १३ ना० सत्यव्रत। १४ ना० चंप, किसी पुस्तक में चंप के पीछे सुदेव तब विजय लिखा है। १५ ना० भरुक। १६ ना० बाहुक। १७ ऋतुपर्ण के पीछे किसी पुस्तक में नल, तब सार्वकाम लिखा है। १८ ना० आमक। १९ ना० मूलक। २० दशरथ, और इलिबिथ दो के बदले किसी पुस्तक में ऐड़ाबिड़ एक ही नाम लिखा है। २१ ना० खरभंग। २२ कुश के

रीति के अनुसार नागेंद्रनगर के सोलंखी राजा की क्वारी कन्या अपनी अनेक सखियों के साथ झूलने को आई थी, किंतु उन के पास डोरी नहीं थी कि वह झूला बाँधें। वापा को देखकर उन सबों ने इन से डोरी माँगी। इन्हों ने कहा पहिले व्याह खेल खेलो तो डोरी दें। बालिका लोगों के हिसाब सभी खेल एक से थे, इस से इन लोगों ने पहिले व्याह खेल ही खेलना आरंभ किया। राजकुमारी और वापा की गाँठ जोड़ कर गीत गाकर दोनों की सबने सात फेरी किया। कुछ दिन पीछे जब राजकुमारी का व्याह ठहरा तब एक वरपक्ष ज्योतिषी ने हाथ देख कर कहा कि इस का तो व्याह हो चुका है। कुमारी का पिता यह सुन के बहुत ही घबड़ाया और इसकी खोज करने लगा। वापा के साथी गोपाल गण यह चरित्र जानते थे, परंतु वापा ने इसके प्रगट करने की उन से शपथ ली थी। यह शपथ भी विचित्र प्रकार की थी। एक गड़हे के निकट वापा ने अपने सब संगियों को बैठाया और हाथ में एक एक छोटा पत्थर देकर कहा कि तुम लोग शपथ करो कि "तुमारा भला बुरा कोई हाल किसी से न कहेंगे, तुमको छोड़ के न जायँगे, और जहाँ जो कुछ सुनेंगे सब आ कर तुम से कहेंगे। यदि इस में कोई बात टालें, तो हमारे और पुरुषों के धर्म कर्म इस ढेले की भाँति धोबी के गड़हे में पड़ें"। वापा के संगियों ने यही कह कह के ढेला गड़हे में फेंका और उस के अनुसार वापा का विवाह करना उन के संगियों ने प्रकाश न किया। किंतु छ सौ सरला कुमारियों पर जो बात विदित है, वह कभी छिप सकती है? धीरे धीरे यह विवाह खेल की कथा राजा के कान तक पहुँची। वापा को तीन वर्ष की अवस्था से भांडीर दुर्ग * से लाकर

---

* वापा भांडीर दुर्ग में भीलों के हाथ से पले थे। जिस भील ने वापा को पाला वह जदुवंशी था। उस प्रदेश में भीलों की दो जाति हैं। एक उजले अर्थात् शुद्ध भील वंश के दूसरे संकर भील। यह संकर भील राजपूतों से मिल कर उत्पन्न हुए हैं और पँवार, चौहान, रघुवंशी, जदुवंशी इत्यादि राजपूतों की जाति के नाम उन की जाति के भी होते हैं। यह भांडीर दुर्ग मेवाड़ में जारोल नगर से आठ कोस दक्षिण-पश्चिम है।

महाराज जैसिंह के ग्रंथ के अनुसार सुमित्र के पीछे महारितु, अंतरित, अचलसेन, कनकसेन, महामदनसेन, सुदंत वा प्रथम सोणादित्य, (विजयसेन वा अजयसेन वा विजयादित्य) पद्मादित्य, शिवादित्य, हरादित्य, सूर्यादित्य, शिलादित्य, ग्रहादित्य, नागादित्य, भागादित्य, देवादित्य, आशादित्य, कालभोज वा भोजादित्य, द्वितीय ग्रहादित्य और बापा। सुमित्र से महाऋतु तक चार नाम नहीं मिलते और इस क्रम से श्रीरामचंद्र से बापा अस्सी पीढ़ी में हैं। तत्तक से ले कर के बाहुमान वा भानुमान तक आठ राजाओं का नाम कई वंशावली में नहीं मिलता। अनेक ग्रंथकारों का मत है कि इसी तत्तक के समय से ईरान, तूरान, तुरकिस्तान इत्यादि देशों में इसका वंश राज करता था और तुरकिस्तान का प्राचीन नाम तत्तकस्थान बतलाते हैं और यूनान में जो अर्तत्तर्क नामक राजा हुआ है वह भी इसी तत्तक का नामांतर मानते हैं।

राजा जयसिंह का मत है, कनकसेन के समय में अर्थात् सन् १४४ में सौराष्ट्र देश में इस वंश का राज हुआ और वही लिखते हैं कि विजय वा अजयसेन का नामांतर नौशेरवाँ था। इस ने विजयपुर वा विराटगढ़ वसाया और सन् ३१९ में वल्लभीशक स्थापन किया। उन्हीं का मत है कि शिलादित्य को यवनों ने जीता और सौराष्ट्र से यह राज छिन्न भिन्न हो गया और इसका पुत्र केशव वा गोप वा ग्रहादित्य भांडेर के जंगल में रहा और उस के पुत्र नागादित्य के समय से इस वंश का गोत्र गहलौत कहलाया और फिर आशादित्य ने मेवाड़ में अपने वंश की पहली राजधानी आशापुर और आहार वसाया और इस के पीछे बापा ने सन् ७१४ में चित्तौड़ का राज्य पाया, दूसरे ग्रहादित्य का नाम द्वितीय नागादित्य भी लिखा है।

शुद्धोधन इसी का पुत्र प्रसिद्ध शाक्यसिंह है, जो भादो सुदी ५ को जन्मा था, और बौद्ध और जैन के नाम से जिस का मत संसार की एक तिहाई में व्याप्त है। ४७ ना० लांगल वा सिंघल वा रातुल। ४८ ना० सुरत वा सुराष्ट्र, कहते हैं कि इसी के नाम से सौराष्ट्र देश बसा है।

भील स्वीय शोणित से राजललाट में तिलकार्पण और राजकीय बाहु धारण कर के सिंहासन में अभिषिक्त कराते हैं। उंद्री प्रदेश का भील तावत् काल दंडायमान हो कर राजतिलक का उपकरण * द्रव्य का पात्र लिये रहता है। जो प्रथा पुरुषानुक्रम से इस प्रकार से प्रतिपालित होती चली आती है, उस का मूल किस प्रकार से उत्पन्न हुआ था यह अनुसंधान कर के ज्ञात होने से अंतःकरण कैसा विपुल आनंद रस से आप्लुत हो जाता है।

मेवार के राज्याभिषेक के समुदय प्राचीन नियम रक्षा करने में विपुल अर्थ का व्यय होता है इसी कारण उसका अनेक अंग परित्यक्त हो गया है। राणा जगतसिंह के पश्चात् और किसी का अभिषेक पूर्ववत् समारोह के साथ संपन्न नहीं हुआ। उन के अभिषेक में नव्वे लक्ष रुपया व्यय हुआ था। मेवार के अति समृद्ध समय में समग्र भारतवर्ष की आय ६० लक्ष रुपया थी।

नगेंद्र नगर से वाप्पा के जाने का कारण पहिले वर्णित हुआ है, वह संपूर्ण संगत है, परंतु भट्ट कविगण के ग्रंथ में उन के प्रस्थान का अन्य प्रकार का विवरण दृष्ट होता है। उन लोगों ने कविजन सुलभ कल्पना-प्रभाव से दैव घटना का आरोप कर के उस की विलक्षण शोभा संपादन किया है। काल्पनिक विवरण से अलंकृत न हो ऐसा संभ्रांत वंश भारतवर्ष में अतीव दुर्लभ है, सुतरां हम भी भट्टगण वर्णित वाप्पा के सौभाग्यसंचार का विवरण निम्न में प्रकटित करते हैं—

पहले कह आये हैं कि वाप्पा ब्राह्मणगण का गोचारण करते थे। † उन की पालित एक गऊ के स्तन में ब्राह्मणगण ने उपर्य्युपरि कियद्दिवस

---

* राजटीका का प्रधान और प्राचीन उपकरण जल संयुक्त तंदुल चूर्ण राजस्थान की चलित भाषा में उस राजटीका का नाम "खुशकी" काल क्रम से सुगंधि मिला हुआ चूर्ण तदुपकरण मध्य परिगणित हो गया है।

† सूर्यवंशियों में ब्राह्मण की गोचारण करना प्राचीन प्रथा है। रघुवंश में दिलीप का इतिहास देखो।

पीछे प्रसिद्ध स्कन्दगुप्त मरा।* इस से गुप्त संवत के आस ही पास वल्लभी संवत् भी है और इस विषय के उन्होंने अनेक प्रमाण भी दिए हैं। इस वल्लभी संवत के निर्णय में इतिहासवेत्ता विद्वानों के बड़े बड़े झगड़े हैं, जिस से कई दरजन कागज़ के बड़े ताव रँग गए हैं। लोग सिद्धांत करते हैं कि गुप्तवंश जब प्रबल था तब वल्लभीवंश के लोग उसके वंश के अनुगत थे, यहाँ तक कि भट्टारक सेनापति गुप्त वंश बिगड़ने के पीछे स्वाधीन हुआ और अपने दूसरे बेटे द्रोणसिंह का महाराज किया। पाँच छः ताम्रपत्र इस वंश के जो मिले हैं उन के परस्पर नामों में बड़ा फरक है, जैसा गुहसेन धरासेन शिलादित्य धरासेन शिलादित्य वा गुहसेन के दो पुत्र शिलादित्य और खड़्ग्रह, खड़्ग्रह के दो पुत्र धरासेन और ध्रुवसेन वा शिलादित्य के देरभट्ट, उनके शिलादित्य खड़्ग्रह और ध्रुवसेन और शिलादित्य के बाद फिर शिलादित्य।

इन नामों के परस्पर अत्यंत ही विरुद्ध होने से कोई निश्चित वंशावली नहीं बन सकती, अतएव इन झगड़ों को छोड़ कर राजा कनकसेन के समय से हम ने पूर्व वृत्तांत प्रारंभ किया। कारण यह कि जब एक बड़ा वंश राज्य करता है तो उस की शाखा प्रशाखा आस पास छोटे छोटे राज्य निर्माण कर के राज करती हैं। इस में क्या आश्चर्य है कि ताम्रपत्रों में ऐसे ही अनेक श्रेणियों की वंशावली का वर्णन हो जो वास्तव में सब वल्लभी वंश से संबंध रखती हैं। ऐसा ही मान लेने से पूर्वोक्त समय और वंश निर्णय की असमंजसता, जटिलता, घनता, असंबद्धता और विरोधिता दूर होगी।

सुमित्र से लेकर शिलादित्य तक एक प्रकार का निर्णय ऊपर हो चुका और इस से निश्चय हुआ कि महाराज सुमित्र कलियुग के अंत में हुए थे और वल्लभीपुर का नाश भए दो हजार वर्ष के लगभग हुए। कहा है कि वल्लभीपुर में सूर्यकुंड नामक एक तीर्थ था। युद्ध के समय शिलादित्य के आवाहन करने से इस कुंड में से सूर्य के रथ का सात सिर का घोड़ा निकलता था और इस अश्व के रथ पर बैठने से फिर

---

* In Ant. VL III P. XXXIII.

तत्पश्चात् वाप्पा का यह क्रम था कि नित्यप्रति योगी का दर्शन करना और तत्कथित मंत्र का अनुष्ठान करना। काल पाकर भगवती पार्वती ने मंत्र-प्रभाव से वाप्पा को दर्शन दिया और राज्यादिक के वरप्रदान पूर्वक दिव्य शस्त्र से वाप्पा को सुसज्जित किया।

कियत् कालानंतर ध्यान से योगी ने अपने परमधाम जाने का समय निकट जान कर वाप्पा को तद्वृत्तांत विदित कर बोले "कल तुम अति प्रत्यूप में उपस्थित होना।" वाप्पा निद्रा के वशीभूत होकर आदेशानुरूप प्रत्यूप में उपस्थित हो नहीं सके और विलंब कर के जब वहाँ गए तो देखा कि हारीत ने आकाशपथ में कियद् दूर तक आरोहण किया है। उन का विद्युत-निभ विमान उज्ज्वलांग अप्सरागण वहन करती हैं। हारीत ने विमान गति स्थगित कर के वाप्पा को निकटस्थ होने का आदेश किया। उस विमान तक पहुँचने के उद्यम से वाप्पा का कलेवर तत्क्षणात् २० हाथ दीर्घ हो गया। किंतु तथापि उन को गुरुदेव का रथ प्राप्त नहीं हुआ। तब योगी ने उन को मुख व्यादान करने को कहा। तदनुसार वाप्पा ने वदन व्यादित किया। कथित है योगीश्वर ने उन के मुख विवर में उगाल परित्याग किया था।* वाप्पा ने उससे घृणा करके इस निष्ठीवन का पदतल में निक्षेप किया और इसी अपराध से उनको अमरत्वलाभ नहीं हुआ। केवल उनका शरीर अस्त्र शस्त्र से अभेद्य हो गया। हारीत अदृश्य हुए। वाप्पा ने इस प्रकार सदेवानुगृहीत होकर और अपने को चित्तौर के मोरी राजवंश का दौहित्र जानकर और आलस्य में कालक्षेप करना युक्ति संगत अनुमान नहीं किया। अब गोचारण से उनको अत्यंत घृणा हुई और उन्होंने कतिपय सहचर समभिव्यवहार में लेकर अरण्यवास परित्याग करके लोकालय में गमन किया। मार्ग में † नाहर-मगरा नामक पर्वत में विख्यात

---

* कथित है मुसलमानधर्मप्रचारक महम्मद ने स्वीय प्रिय दौहित्र हसन के वदन में ऐसाही निष्ठीवन परित्याग किया था। क्या आश्चर्य है जो मुसल्मान लोगों ने यह कथा भारतवर्ष के इसी उपाख्यान से ली है।

† मेवार के राजधानी उदयपुर के पूर्व भाग में प्रवेश करने को रास्ते में कोस के अंदर नाहरमगरा पर्वत अवस्थित है। इस पर्वत में राजा और तत्पारि-

वना होती है कि इन्हीं दो जातियों में से किसी ने वल्लभीपुर नष्ट किया होगा। पारद और हूण दो जातियों का आदिनिवास शाकद्वीप है। महाभारत में शाकद्वीपी और पूर्वोक्त हूणादिकों को इसी प्रकार यवन लिखा है। पुराणों में इन सबों को एक प्रकार का क्षत्री लिखा है। ये सब असभ्य जाति शाकद्वीप से किस काल में यहाँ आए इसका पता नहीं लगता। वेरटली साहब का मत है कि शाकद्वीप इंगलैंड का नामांतर है। विशेष आश्चर्य का विषय यह है कि ये सब शाकद्वीपी काल पाके आर्य जाति में मिल गए, यहाँ तक कि ब्राह्मण और क्षत्रियों में भी शाकद्वीपी वर्त्तमान हैं।

यह निश्चय हुआ कि इन्हीं म्लेच्छ जाति के लोगों में से किसी जाति ने वल्लभीपुर नाश किया। साँदोंराई से जो वंशपत्रिका मिली है उसमें लिखा है कि वल्लभीपुर नाश होने के पीछे वहाँ के लोग मारवाड़ में आकर साँदोंरावालों और नांदोर नगर वसा कर रहने लगे और फिर गाजनी नामक एक नगर का और भी उल्लेख है। एक कवि अपने ग्रंथ में लिखता है "असभ्यों ने गाजनी हस्तगत किया, शिलादित्य का घर जनशून्य हुआ और जो वीर लोग उस की रक्षा को निकले वे मारे गए"।

हिंदू सूर्य के वंश का यहाँ चौथा दिवस अवसान हुआ। प्रथम दिवस इक्ष्वाकु से श्री रामचंद्र तक अयोध्या में बीता, दूसरा दिन लव से सुमित्र तक अन्य राजधानियों में, तीसरा सुमित्र से विजयभूप तक अँधेरे मेघों से छिपा हुआ कहाँ बीता न जान पड़ा और यह चौथा दिन आज वल्लभीपुर में शिलादित्य के अस्त होने से समाप्त हुआ। पाँचवें दिन का इतिहास बहुत स्पष्ट है, जो गुह और बाप्पा के विचित्र चित्रों से चित्रित होकर दूसरे अध्याय में वर्णन होगा।

इति उदयपुरोदय प्रथम अध्याय

पूर्व में मान राजा के ऊपर विरक्त हो रहे थे। एक आगंतुक वाप्पा के ऊपर उन के समधिक अनुराग संदर्शन से वे लोग और भी सातिशय इर्पान्वित हुए। इसी समय में चित्तौर राज विदेशीय शत्रु-कर्तृक आक्रांत होने से सर्दार लोग युद्धार्थ आहूत हुए, परंतु उन लोगों ने युद्धोद्योग नहीं किया। अधिकंतु सैनिक नियमानुसार भुक्त भूमि का पट्टा प्रभृति दूर निक्षेप करके साहंकार वाक्य बोले कि राजा अपने प्रियतर सरदार को युद्धार्थ नियोग करें।

वाप्पा ने यह सुन कर उपस्थित युद्ध का भार ग्रहण करके चित्तौर से यात्रा किया। सरदार गण यद्यपि भूमि-वृत्ति-वंचित हुए थे तथापि लज्जावशतः वाप्पा के अनुगामी हुए। समर में विपक्ष गण ने पराजित होकर पलायन किया। वाप्पा ने सरदार गण के साथ चित्तौर में प्रत्यागत न होकर स्वीय पैत्रिक राजधानी गाजनी नगर में गमन किया। सलीम नामक जनैक असभ्य उस काल मे गाजनी के सिंहासन पर था। वाप्पा ने सलीम को दूरीभूत करके वहाँ का सिंहासन जनैक चौर वंशीय राजपूत को दिया और आप पूर्वोक्त असंतुष्ट सरदार गण के साथ चित्तौर प्रत्यागमन किया। कथित है कि वाप्पा ने इस समय सलीम की कन्या का पाणिग्रहण किया था। जातरोष सरदार गण ने चित्तौर राजा के साथ वैरनिर्यातन में कृतसंकल्प होकर सब ने एक वाक्य होकर नगर परित्याग करके अन्यत्र गमन किया। राजा ने उन लोगों के साथ संधि करने के मानस से वारंवार दूत प्रेरण किया, किंतु किसी प्रकार सरदार गण का कोप शांत नहीं हुआ। उन लोगों ने कहा, "हम लोगों ने राजा का नमक खाया है, इस से एक वत्सर काल मात्र प्रतीक्षा करेंगे। अनंतर उन को व्यवहार के विहित प्रतिशोध देने में त्रुटि न करेंगे।" वाप्पा के वीरत्व और उदार प्रकृति के वशंवद

राजा और सरदारगण के मध्य और सरदार और तदधीन साधारण प्रजावर्ग के मध्य पूर्वोक्त मूल नियम के आनुषंगिक अन्यान्य नियम समुदय पृथक् पृथक् रूप से व्यवसित करते थे। राजस्थान के सैनिक नियम का विवरण इतः पर पृथक् एक खंड में सविस्तार से प्रवर्तित होगा।

था। प्रतिपालक शांतिशील ब्राह्मणों के साथ गुहा का जी नहीं मिलता था। इस से सम स्वभाव उग्र प्रकृति वाले भीलों से अपनी उद्दंड प्रचंड प्रकृति की एकता देखकर गुहा उन्हीं लोगों के साथ वन वन घूमते थे और काल-क्रम से भीलों के ऐसे स्नेहपात्र हो गए कि सवन पर्वत ईदर प्रदेश भीलों ने इनको समर्पण कर दिया। अबुलफ़ज़ल और भट्ट गण गुहा के भील-राजप्राप्ति का वर्णन यों करते हैं। एक दिन खेल में भील बालक लोग एक बालक को राजा बनाना चाहते थे और सब ने एक वाक्य हो कर गुहा ही को राजा बनाना स्वीकार किया। एक भील के बालक ने चट से अपनी उँगली काट के ताजे लहू से गुहा के सिर में राजतिलक लगाया। यह खेल का व्यापार पीछे कार्यतः सत्य हो गया, क्योंकि भील-राजा मंडलिका ने यह समाचार सुन कर प्रसन्न हो कर ईदर का राज्य गुहा को दे दिया। *कहते हैं कि गुहा ने व्यर्थ भीलराज मंडलिका को पीछे से मार डाला।* गुहा के नाम के अनुसार उन के वंश के लोग गोहिलोट (गहिलौत वा गिहलोट) कहलाए। टॉड साहब कहते हैं कि गहिलौट ग्राहिलोत का अपभ्रंश है।

गुहा (केशवादित्य) के पुत्र नागादित्य हुए। इन्हीं ने पराशर वन में नागह्रद नामक एक बड़ा ह्रद बनवाया। इन्हीं के नाम के कारण लक्ष्मणावती ब्राह्मणी के संतान वा वह वन और तालाब सब नागदहा के नाम से प्रसिद्ध हैं और सिसौधियों को भी नागदहा कहते हैं। नागादित्य के भोगादित्य। इन्हों ने कुटिला नदी पर पक्का घाट बनाया और इंद्र सरोवर नामक तालाब का जीर्णोद्धार किया। पूर्वोक्त तड़ाग इन के नाम से अब तक भोडेला कहलाता है। इन के पुत्र देवादित्य, जिन्हों ने देलवाड़ा ग्राम निर्माण किया और उन के आशादित्य जिन्हों ने अहाड़पुर नगर बसा कर अपनी राजधानी बनाया। यह अहाड़पुर अब राणा लोगों का समाधिस्थल है। कहते हैं कि अहाड़पुर में जो गंगोद्भव तीर्थ है वह इसी राजा का निर्माण किया है और इन्हीं की भक्ति से उस में गंगा जी का आविर्भाव हुआ था। उस प्रांत में इस तीर्थ का बड़ा माहात्म्य है। यह तीर्थ उदयपुर से एक कोस पूर्व की ओर है। आशादित्य के पुत्र कालभोजादित्य और उन के

लिखा है कि बाप्पा ने इस्पहान, कंदहार, काश्मीर, इराक, तूरान और काफरिस्तान प्रभृति देश अधिकार करके तत् समुदय देशीया कामिनियों का पाणिपीड़न किया था। उन म्लेच्छ महिला के गर्भ से उनको १३० पुत्र जन्मे थे। उन लोगों की साधारण उपाधि "नौशीरा पठान है"। उन सब पुत्रों में से प्रत्येक ने अपने अपने मातृनामानुसार्या नाम से एक एक वंश विस्तार किया है। बाप्पा के हिंदू संतान की संख्या भी अल्प नहीं। हिंदू महिला गण के गर्भ में उन्हों ने ६८ पुत्र उत्पादन किया था। उन लोगों की उपाधि "अग्नि उपासी सूर्यवंशी" है। उक्त ग्रंथ में लिखा है, बाप्पा ने चरम काल में सन्यास आश्रम अवलंब कर के सुमेरु शिखर * मूल में अवस्थिति किया था। उन का प्राण त्याग नहीं हुआ है, जीवदशा में ही इस स्थान में उन की समाधि क्रिया संपन्न हुई थी। अन्यान्य प्रवाद में कथित है कि बाप्पा की अंत्येष्टि क्रिया संबंध में उन के हिंदू और म्लेच्छ प्रजागण के मध्य तुमुल कलह उपस्थित हुआ है। हिंदू लोग उन का शरीर अग्निदग्ध और म्लेच्छ लोग मिट्टी में प्रोथित करने को कहते थे। उभय दल ने इस विषय का विवाद करते करते शव का आवरण खोल कर देखा शव नहीं है तत् परिवर्त्तन में कतिपय प्रफुल्ल शतदल विराजमान है। उन लोगों ने वह सब कमल ले

---

* कोई कोई कहते हैं हिंदू ग्रंथानुसार पृथ्वी के उत्तर केंद्र का नाम सुमेरु। किसी किसी ग्रंथ में सुमेरु तद्रूप अर्थ में व्यवहृत हुआ है, परंतु पुराण के वर्णन से अनुमान होता है कि किसी विशेष पर्वत का नाम सुमेरु है। जम्बू द्वीप के मध्य इलावृत वर्ष में "कनकाचल सुमेरु विराजमान है, इसके दक्षिण में हिमवान, हेमकूट और निषध पर्वत, उत्तर नील और श्वेत पर्वत।" चंद्रवंश का आदि पुरुष इला स्त्री रूप में जहाँ "आवृत्ति" हुए थे, उन का नाम इलावृत्त वर्ष। "सुमेरु के दक्षिण प्रथमतःभारतवर्ष"। इस से अनुमान होता है कि मध्य एशिया का नाम इलावृत्तवर्ष। अनुसंधान करने से सुमेरु आविष्कृत हो कर पौराणिक भूगोल वृत्तांत का अधिकांश परिष्कृत हो सकता है। केवल नाम परिवर्त्तन होकर इतना गबड़ा हुआ। कोई कोई कहते हैं कि पेशावर और जलालाबाद के मध्यस्थल में प्रायः चौदह सौ हस्त उच्च मारकोह नाम अति अनुर्वर जो एक पर्वत है वही हिंदू पुराण का सुमेरु है।

शंकर ने वरदान दिया कि तेरा शरीर अभिन्न और महत्तर होगा और तुझे इस भर्तृहरि के पर्वत में खनन करने से बहुत द्रव्य मिलेगा, जिससे सेना एकत्र कर अरु चित्तौड़ का राज्य अपने अधिकार में कीजियो और आज से तुम्हारे नाम पर रावल पद प्रख्यात रहैगा। यह लिंग-प्रादुर्भाव विक्रमार्क गताब्द २६० वैशाख कृष्ण १ को हुआ था, सो उक्त महीने की इसी तिथि को अब भी प्रादुर्भावोत्सव प्रति वर्ष होता है। फिर रावल बाप्प ने इष्टाज्ञा ले द्रव्य निष्कासन कर महत्तर सेना बनाय चित्तौड़ के राजा मानमोरी को जय किया और उसी दुर्ग को अपनी राजधानी बनाया। इस महिपाल ने समस्त भारतवर्ष को विजय किया।"

बापा के विषय में ऐसे ही अनेक आश्चर्य्य उपाख्यान मिलते हैं। पृथ्वी पर जितने बड़े बड़े राजवंश हैं उन में ऐसे कोई भी न होंगे जो कवि जनों की विचित्र कल्पना से अलंकृत न हों, क्योंकि उस समय में उन के विषय में विविध दैवी कल्पनाओं का आरोप ही मानों उन के प्राचीनता और गुरुत्व का मूल था। रोम राज्य के स्थापनकर्त्ता रमूलस देवता के पुत्र थे और बाघिन का दूध पी कर पले थे। ग्रीस राज्य के हर्क्यूलिस और इंगलैंड राज्य के आरथर राजाओं के दैत्यों से युद्ध इत्यादि अनेक अमानुष कर्म प्रसिद्ध हैं। जगद्विजयी सिकंदर की दो सींग थीं। औफार के अफ़रासियाब ने जब देव सदृश अनेक कर्म किए, तो हिंदुस्तान के बड़े बड़े उदयपुर, नेपाल, सितारा, कोल्हापुर, ईजा-नगर, डूँगरपुर, प्रतापगढ़ और अलीराजपुर इत्यादि राजवंशों के मूल-पुरुष बापा के विषय में विचित्र बातें लिखी हों तो कौन आश्चर्य की बात है। बापा सैकड़ों राजकुल के आदि पुरुष, लोकातीत, संभ्रम-भाजन और चिरजीवी, फिर उन के चरित्र अलौकिक घटनाओं से क्यों न संघटित हों।

बापा बाल्यकाल से गोचारण करते थे, यह पूर्व में कह आए हैं। कहते हैं कि शरत्काल में गोचारण के हेतु वन में गमन करके बापा ने एक साथ छ सौ कुमारियों का पाणिग्रहण किया। उस देश में शरद ऋतु में बालक और बालिका गन बाहर जा कर झूला झूलते हैं। इसी

साधन किया है वह विलक्षण बुद्धि व्यंजक है, परंतु जटिल और नीरस है इस कारण सविस्तर से इस स्थान में प्रगटित नहीं किया। उस की मीमांसा का स्थूलतात्पर्य यह कि वल्लभीपुर विनाश के १६० बरस पश्चात् विक्रमादित्य के ७६६ संवत् में वाप्पा ने जन्म ग्रहण किया था। कुलाचार्य गण ने भ्रम वशतः इस १६० संख्या को विक्रमादित्य का संवत् कर के लिखा है। तत् पश्चात् पंचदश वर्ष की अवस्था में वाप्पा चित्तौर राज्य में अभिषिक्त हुए थे। सुतरां ७८४ संवत् उन का चित्तौर प्राप्तकाल निरूपित हुआ। उस समय से सार्द्ध एकादश वत्सरावधि वाप्पा के वंशीय साठ राजा गण ने क्रमान्वय से चित्तौर के सिंहासन पर उपवेशन किया है।

यद्यपि भट्ट गण के ग्रंथानुयायी वाप्पा के जन्मकाल की प्राचीनत्व रक्षा नहीं हुई, परतु जो समय टॉड साहब ने निरूपित किया है वह भी नितांत आधुनिक नहीं है। तदनुसार प्रकाश होता है कि वाप्पा फरासी राजा के करोली भिजिया वंशीय राज गण के और मुसलमान साम्राज्य के वलीद खलीफा के समकालवर्ती थे।

आइतपुर * नगर से मेवाड़वंशीय और एक खोदित लिपि संगृहीत हुई थी। वह लिपि १०२४ संवत् समय की है। तत्कालीन चित्तौर के सिंहासन में वाप्पा के वंशीय शक्ति कुमार राजा प्रतिष्ठित थे। उस लिपि में शक्ति कुमार के चतुर्दश पुरुष के मध्य एक जन शील नाम से अभिहित हुए हैं। राजभवन की वंशावली अपेक्षा तल्लिपि में यही एक मात्र अतिरिक्त नाम लक्षित होता है, तद्भिन्न विषय में समता है। इंगलैंड के प्रसिद्ध कवि ह्यूम ने कहा है "यद्यपि कविगण सूक्ष्म सत्य के तादृश अनुरागी नहीं, और यदिच वह इतिवृत्त का रूपांतर कर देते हैं, तो भी उन लोगों की अत्युक्ति के मूल में सत्य की सत्वालक्षित होती है"। हमें वर्णित विषय में ह्यूम की एतदुक्तिका सारत्व प्रतीयमान होता है। जन समागम शून्य श्वापद पूर्ण आइतपुर के

* आइतपुर—सूर्य्यपुर। आदित्य शब्द का अपभ्रंश आइत। आइत शब्द का संकीर्ण रूप एत, यथा एतवार आदित्यवार।

ब्राह्मणों ने इसी नागेंद्र नगर * के समीप निविड़ पराशर कानन में त्रिकूट पर्वत के नीचे अपने घर में रक्खा था, इस से बापा उसी सोलंखी राजा के प्रजा थे। राजा ने यह समाचार सुन लिया, यह जान कर बापा नागेंद्र नगर छोड़ कर पर्वतों में छिप रहे और उसी समय से उन का सौभाग्य संचार होने लगा। किंतु इन छ सौ कुमारियों का फिर पाणिग्रहण न हुआ और बापा ही के गले पड़ीं। इसी कारण सैकड़ों राजा जमींदार सरदार सिपाही क्षत्री अपने को बापा † की संतान बतलाते हैं।

नागेंद्र नगर से चलने के समय में दो भील वाप्पा के सहगामी हुए थे। इन में एक उंद्री प्रदेशवासी और इस का नाम वालव, अपर ‡ अगुणापानोर नामक स्थान-निवासी, इस का नाम देव। इन दोनों भीलों का नाम वाप्पा के नाम के साथ चिरस्मरणीय हो रहा है। चित्तौर के सिंहासन पर अभिषिक्त हाने के समय वालव ने स्वीय करागुंलि कर्त्तन कर के सद्यो शोणित से वाप्पा के ललाट में राजतिलक प्रदान किया था। तदनुसार अद्यावधि पर्यंत वाप्पा वंशीय राजगण के सिंहासनारोहण के दिवस इन्हीं दो भीलों के संतान गण आ कर अभिषेक-विधि संपादन करते हैं। अगुणा प्रदेश के

---

* नागेंद्र नगर का नाम नागदहा प्रसिद्ध है। यह उदयपुर से पाँच कोस उत्तर की ओर है। यहाँ से टॉड साहब ने अनेक प्राचीन लिपि संग्रह किया था। इन सबों में एक पत्थर ईसवी नवम शतक का है जिस में राजाओं की उपाधि (गोहिलोट) लिखी है।

† वाप्पा दुलार में लड़के को कहते हैं। एक प्राचीन ग्रंथ में बापा का नाम शिलाधीश लिखा है, किंतु प्रसिद्ध नाम इन का बापा ही है।

‡ टॉड साहब कहते हैं, भारतवर्ष के मध्य अगुनापनोर प्रदेश अद्यावधि प्राकृतिक स्वाधीन अवस्था में है। अगुना एक सहस्र ग्राम में विभक्त। तत्रस्थ भीलगण जातीय जनैक प्रधान के आधीन में निर्विघ्नता से वास करते हैं। इस प्रधान की उपाधि भी राणा है, पर किसी राज के साथ इन लोगों का विशेष कोई संस्रव नहीं। विग्रह उपस्थित होने से अगुना का राणा धनुःशर पाँच सहस्र जन एकत्र कर सकता है। आगुनापनोर मेवार राजा के दक्षिण-पश्चिम प्रांत में अवस्थित है।

वृत्तांत संप्रति प्रकटित होता है। समर सिंह का राजत्व काल केवल मेवाड़ के इतिवृत्ति का प्रधान काल नहीं, स्वरूपतः समुदय हिंदू जाति के पक्ष में एक प्रधान समय है। उनके राजत्व समय में भारतवर्ष का राज-किरीट हिंदू के सिर से अपनीत हो कर तातारी मुसलमान के सिर में आरोपित हुआ था। वाप्पा के समर सिंह के मध्य चार शताब्दी काल का व्यवधान है। इस काल के मध्य में चित्तौर के सिंहासन पर अष्टादश राजाओं ने उपवेशन किया था। यदिच उन लोगों का राजत्व का विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता, तो भी नितांत नीरव में तत्तावत् काल उल्लंघन करना उचित नहीं। उन सब राजाकी लोहितवर्ण पताका सुवर्णमयी प्रतिमा से शोभमान चित्तौर के सौध शिखर पर उड्डीयमान थी और तन्मध्य में अनेक का नाम उन लोगों के राज्यस्थ शैल शरीर में लोह लेखनी की लिपि योग से अद्यावधि विद्यमान है।

इस के पहिले आइतपुर की जिस खोदित लिपि का उल्लेख किया है, उस से वाप्पा और समर सिंह के मध्यवर्ती शक्तिकुमार राजा का राजत्व काल संवत् १०२४ निरूपित हुआ। जैन ग्रंथ से ज्ञात होता है कि शक्तिकुमार के चार पुरुष पूर्ववर्ती उल्लत नाम राजा ९२२ संवत् में चित्तौर के सिंहासनारूढ़ हुए थे। ७६४ खृष्टाब्द में वाप्पा ने ईरान देश में गमन किया। ११९३ खृष्टाब्द में समर सिंह के समय में हिंदू राजत्व का अवसान हुआ। इस उभय घटना के मध्यवर्ती समय में मेवाड़ राज्य और एक बार मुसलमान गण से आक्रांत होने का विवरण राजवंश के ग्रंथ में प्राप्त होता है। तत्काल खुमान नामक एक राजा चित्तौर के सिंहासनस्थ थे। उनके राजत्व-काल में ८१२ से ८३६ खृष्टाब्द के अंतर्गत किसी समय में मुसलमानों ने चित्तौर नगर आक्रमण किया था। खुमान रासा नामक ग्रंथ में तत् आक्रमण संक्रांत वृत्तांत सविस्तार निवृत्त हुआ। मेवाड़ राज्य के पद्य-विरचित इतिहास ग्रंथ-समूह के मध्य खुमानरासा सर्वापेक्षा पुरातन है।

टॉड साहब कहते हैं भारतवर्ष का एतत् समय का इतिवृत्त नितांत तमसाच्छन्न है। इस कारण खुमानरासा प्रभृति हिंदू ग्रंथ से तत् संबंध

तक दुग्ध नहीं पाया, इस से संदेह किया कि वाप्पा इस गऊ को दोहन कर के दुग्ध पान कर लेते हैं। वाप्पा इस अपवाद से अति क्रुद्ध हुए, किंतु गऊ के स्तन में स्वरूपतः दुग्ध न देख कर ब्राह्मणगण के संदेह को अमूलक न कह सके। पश्चात् स्वयं अनुसंधान कर के देखा कि यह गऊ प्रत्यह एक पर्वत गुहा में जाया करती थी और वहाँ से प्रत्यागमन करने से उस के स्तन पयःशून्य हो जाते हैं। वाप्पा ने गऊ का अनुसरण कर के एक दिन गुहा में प्रवेश किया और देखा कि उस वेतसवन में एक योगी ध्यानावस्था में उपविष्ट है। उन के सम्मुख में एक शिवलिंग है और उसी शिवलिंग के मस्तक पर पयस्विनी का धवल पयोधर प्रचुर परिमाण से परिवर्षित होता है।

पूर्वकाल के योगी ऋषिगण भिन्न यह प्राकृतिक और पवित्र देवस्थली इति पूर्व में और किसी को दृष्टिगोचर नहीं हुई थी। वाप्पा ने जिन योगी का ध्यान अवस्था में दर्शन किया था उन का नाम हारीत।* जन समागम से जोगी का ध्यान भंग हुआ, वाप्पा का परिचय जिज्ञासा करने से वाप्पा ने आत्म वृत्तांत जहाँ तक अवगत थे सब निवेदन किया। योगी के आशीर्वाद ग्रहणांतर उस दिन गृह में प्रत्यागत भए। अतः पर वाप्पा प्रत्यह एक बार योगी के निकट गमन कर के उन का पादप्रक्षालन, पानार्थ पयःप्रदान और शिवप्रीति काम होकर धतूरा, अर्क प्रभृति शिव-प्रिय वन पुष्प समूह चयन किया करते। सेवा से तुष्ट होकर योगीवर ने उन को क्रम क्रम से नीति शास्त्र में शिक्षित और शैव मंत्र से दीक्षित किया और स्वकर से उन के कंठ में पवित्र यज्ञसूत्र समर्पण पूर्वक "एकलिंग को देवान" यह उपाधि प्रदान किया।

---

* हारीत के वंशीय ब्राह्मण लोग अद्यावधि एकलिंग के पूजक पद में प्रतिष्ठित हैं। टॉड साहब के समकालीन पुरोहित हारीत से षष्ठाधिक षष्ठितम पुरुष थे उन के निकट में राणा के मध्यवर्त्तिता से शिवपुराण प्राप्त हो कर टॉड साहब ने इंग्लैंड के रॉयल एशियाटिक सोसाइटी (Royal Asiatic Society) समाज को प्रदान किया था।

पहिले वाप्पा के वंशीय राजगण का वृत्तांत विवरित किया जाता है, पश्चात् यथायोग्य स्थान में मुसलमान गण का भारतवर्ष संक्रांत इतिवृत्त प्रकटित होगा।

गिहलोट वंश की चतुर्विंशति शाखा। तन्मध्य अनेक शाखा वाप्पा से समुत्पन्न। चित्तौर-अधिकार के पश्चात् वाप्पा ने सौराष्ट्र देश में गमन कर वंदर द्वीप के यूसुफगुल * नाम राजा की कन्या से विवाह किया। वंदर द्वीप-निवासी व्यानमाता नामक एक देवी की उपासना करते थे। वाप्पा ने इस देवी की प्रतिमा और स्वीय वनिता सह चित्तौर में प्रत्यागमन किया था। गिहलोट वंशीय अद्यावधि व्यानमाता की उपासना करते हैं। वाप्पा ने इस देवी को जिस मंदिर में प्रतिष्ठित किया था, वह आज तक चित्तौर में विद्यमान है, तद्भिन्न तत्रत्य अन्यान्य अनेक अट्टालिका वाप्पा कर्तृक विनिर्मित हैं, यह भी प्रवाद प्रचलित है। यूसुफगुल के कन्या के गर्भ में वाप्पा को एक पुत्र जन्मा था, उस का नाम अपराजित। द्वारका नगरी के निकटवर्ती कालवायो नगर के प्रमार वंशीय जनैक राजा की कन्या से भी वाप्पा ने विवाह किया था। उस रमणी के गर्भ में इस के पहिले वाप्पा को और एक आसिल नामक पुत्र जन्मा था, यदिच् आसिल ज्येष्ठ तथापि अपराजित चित्तौर में जन्मे थे, इस कारण उन्हों नें वहाँ का राज प्राप्त किया। आसिल सौराष्ट्र देश के किसी एक राज्य में राजा हुए थे †। उन

* कथित है, समुद्र में वंदर द्वीप और स्थल में चायाल नामक स्थान यूसफ़गुल राजा के अधिकार में था। यूसफ़गुल चौर वंशीय राजपूत, अनल परम का संस्थापनकर्त्ता रेणुराज अनुमान होता है। इसी यूसफ़गुल का वृत्तांत कुमारपालचरित नामक ग्रंथ में लिखा है। रेणुराज के पूर्व पुरुष वंदर द्वीप के अधिपति थे। वंदर द्वीप आज कल पोर्त्तुगीस जाति के अधिकार में है। इसका आधुनिक नाम डिश्रो हैं। यह नाम पोर्त्तुगीस जाति प्रदत्त है।

† आसिलां के नामानुसार एक किला का आसिला नाम रक्खा था, यह वंशपत्रिका से ज्ञात होता है। संग्रामदेव नामक जनैक राजा के निकट से कुंभायत (कांवे) नगर अधिकार करने के अभिलाष में आसिल के पुत्र विजयपाल

'गोरखनाथ' ऋषि के साथ उनका साक्षात् हुआ था। गोरक्ष ने उन को और द्विधार तीक्ष्ण करवाल* प्रदान किया था। मंत्रपूत कर के चलाने से उस तीक्ष्ण कृपाण के आघात से पर्वत भी विदीर्ण हो जाता था। वाप्पा ने उसी के प्रताप से चित्तौर का सिंहासन प्राप्त किया था। भट्ट कविगण के ग्रंथ में वाप्पा के नागेंद्र नगर से प्रस्थान का यह विवरण प्राप्त होता है और इस विवरण में मेवार निवासी लोगों का प्रगाढ़ विश्वास भी है।

मालव के भूतपूर्व अधिपति प्रमारवंशीय तत्काल में भारत वर्ष के सार्वभौम थे। इस वंश की एक शाखा का नाम मोरी। मोरी वंशियों का इस समय में चित्तौर पर अधिकार था, किंतु चित्तौर तत्काल प्रधान राजपाट था या नहीं यह निश्चित नहीं। विविध अट्टालिका और दुर्ग प्रभृति में इस वंश के राजत्व काल की खोदित लिपि विद्यमान हैं, उससे ज्ञात होता है कि मोरी राजागण उस समय में विलक्षण पराक्रमशाली थे।

वाप्पा जब चित्तौर में उपस्थित हुए तत्काल में मोरीवंशीय मान राजा सिंहासनारूढ़ थे। चित्तौर के राजवंश के साथ उन का संबंध था। † सुतरां विशेष समादर से राजा ने उन को सामंत पद में अभिषिक्त करके तदुचित भूमि-वृत्ति प्रदान किया। चित्तौर के सरदार गण सैनिक नियम भोग करते थे ‡। वे लोग समुचित सम्मानभाव से इति

पद्वर्ग मृगया काल में उपवेशन करते थे। उन लोगों के बैठने के स्थान सब अद्यापि असंस्कृत और जीर्ण अवस्था में पतित हैं।

* कथित है यह करवाल अद्यावधि विद्यमान है। राणा प्रति वत्सर में निरूपित दिवस में उस की पूजा करते हैं।

† वाप्पा की माता प्रमारवंशीया थी। सुतरां वर्त्तमान प्रमार के सहित मामा भागिनेय का संबंध था।

‡ सैनिक नियम (Feudal System) इस नियमानुसार से भुक्त भूमि के कर के परिवर्त्तन में प्रत्येक सरदार को अपने अपने वृत्ति भूमि के परिमाणानुरूप नियमित संख्या की सेना ले कर विग्रह समय में विपक्ष के साथ संग्राम करना होता है। प्राचीनकाल में वृहत् वृहत् राज्य भूमि संक्रांत यह नियम प्रचलित था।

होकर सरदार गण ने उन को चित्तौर का अधिपति करने का अभिप्राय प्रकाश किया। वाप्पा ने सरदार गण के सहायता से चित्तौर नगर आक्रमण करके अधिकार कर लिया। भट्ट कविगण ने लिखा है "वाप्पा मोर राजा के निकट से चित्तौर ले कर स्वयं उस के 'मौर' (अर्थात् मुकुट सुरूप) हुए।" चित्तौरप्राप्ति के पश्चात् सर्व सम्मति से वाप्पा ने 'हिंदूसूर्य' 'राजगुरु' और 'चकवै' यह तीन उपाधि धारण किया था। शेषोक्त उपाधि का अर्थ सार्वभौम।

वाप्पा के अनेक पुत्र हुए थे। उन में किसी किसी ने स्वीय वंश के प्राचीन स्थान सौराष्ट्र राज्य में गमन किया। आईन अकबरी ग्रंथ में लिखा है कि अकबर सम्राट् के समय में इस वंश के पचास सहस्र पराक्रांत सरदार सौराष्ट्र देश में वास करते थे। वाप्पा के अपर पाँच पुत्र ने मारवाड़ देश में गमन किया था। गोहिल-वाल नामक स्थान में गोहिल वंशीय भी वाप्पा की संतान हैं। परंतु वे लोग अपने वंश का मूल विवरण आप भूल गए हैं। इति पूर्व में उन लोगों ने चीर * प्रदेश में आ कर वास किया था। और अब पूर्व काल के पूर्व पुरुषगण के नाम वा वंश का अन्य कोई विवरण वह लोग नहीं बतला सकते। घटनाक्रम से उन लोगों ने वालभी ग्राम में वास भी किया, किंतु यह नहीं जाना कि यही स्थान उन लोगों की पैत्रिक भूमि है। यह लोग अब अरब गण के सहवास से वाणिज्य कर के जीविका निर्वाह करते हैं।

वाप्पा के चरम काल का विवरण सर्वापेक्षा आश्चर्य है। कथित है परिणत वयस में उन्होंने स्वीय राजसंतान गण को परित्याग कर के खुरासान राज्य में गमन किया था और तद्देश अधिकार कर के म्लेच्छ वंशीय अनेक रमणी का पाणिग्रहण किया था। इन सब रमणी के गर्भ से बहुसंख्यक संतान समुत्पन्न हुए थे।

सुना जाता है कि एक शत वर्ष की अवस्था में वाप्पा ने शरीर त्याग किया। देलवारा प्रदेश के सर्दार के निकट एक ग्रंथ है, उस में

* मारवाड़ प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम प्रान्त में लूणी नदी के निकट चीर भूमि है।

श्री हरिश्चंद्र मैगजीन सन् १८७३ पृ० १७-१९ तथा पृ० ६० पर पूर्व भाग और शेष भाग श्री हरिश्चंद्र चंद्रिका सन् १८७८ की नवंबर की खं० ६ सं० में छपा। पुस्तकाकार खड्गविलास प्रेस बाँकीपुर से सन् १८८३ में प्रकाशित।

कर ह्रद में रोपन कर दिया था। पारस्य देश के नौशेरवाँ की और काशी के प्रसिद्ध भगवद्भक्त कबीर की अन्त्येष्टि क्रिया का प्रवाद भी ठीक ऐसा ही है।

मेवाड़ के राजवंश के प्रधान पुरुष वाप्पा का यह संक्षेपक इतिहास प्रकटित किया गया। प्राचीन कालीन अन्यान्य राजपुरुष की भाँति वाप्पा की कहानी भी सत्यमिथ्या से मिलित है। किंतु इस विचार को छोड़कर चित्तौर के सिंहासन में सूर्यवंशी राजगण ने दीर्घ कालावधि जो आधिपत्य किया था, उस आधिपत्य का वाप्पा ही से प्रारंभ है इस कारण गिह्लोट गण का चित्तौर का राजत्व कितने दिन का है यह निरूपण करने को वाप्पा का जन्मकाल का निरूपण करना अत्यंत आवश्यक है। वल्लभीपुर २०५ संवत् शिलादित्य के समय में विनष्ट हुआ था। शिलादित्य से वाप्पा दशम पुरुष, परंतु आश्चर्य का विषय यह है कि उदयपुर के राजभवन की वंशपत्रिका में वाप्पा का जन्म-काल १९१ संवत् में लिखा है। विशेषतः चित्तौर की एक खोदित लिपि से प्रकाश हुआ था कि ७७० संवत् में चित्तौर नगर मोरी वंशीय मान राजा के अधिकार में था। इसी मान राजा के समय में असभ्य गण ने चित्तौर नगर आक्रमण किया था। उन लोगों का पराभव कर के उस के पश्चात् वाप्पा ने पंचदश वर्ष की अवस्था में चित्तौर का सिंहासन प्राप्त किया था। इस कारण ईदृश विवरण से वाप्पा का जन्मकाल १९१ संवत् किसी प्रकार स्वीकृत नहीं हो सकता। परंतु उदयपुर के राजवंश के कुलाचार्य भट्ट गण पूर्वोक्त समुदय घटना स्वीकार कर के भी कहते हैं कि वाप्पा ने १९१ संवत् में जन्म ग्रहण किया था। टॉड साहब ने अनेक अनुसंधान कर के अवशेष में सौराष्ट्र देश में सोमनाथ के मंदिर की एक खोदित लिपि से जाना था कि वल्लभी संवत् नाम का एक और भी संवत् प्रचलित था। वह संवत् विक्रमादित्य के संवत् से ३७५ बरस के पश्चात् प्रारंभ हुआ था, २०५ वल्लभी संवत् में वल्लभीपुर विनष्ट हुआ था, सुतरां विक्रमादित्य के संवतानुसार उस के विनाश का काल ५८० हुआ। जिस प्रणाली से टॉड साहब ने चित्तौर के मान राजा का राजत्व, वल्लभीपुर का विनाश और कुलाचार्य गण लिखित वाप्पा के जन्मसमय का परस्पर समन्वय

हमारे पूर्वोक्त आर्य शब्द के दो बेर के प्रयोग से कोई यह शंका न करे कि देश के पक्षपात से मैंने यह आग्रह से आदर का शब्द रक्खा है क्योंकि आर्य जाति के निवास का मुख्य यही देश है और यहीं से आर्य जाति के लोग सारे भारतवर्ष में फैले हैं, यह अंगरेजी हिंदुस्तान के इतिहासों के पाठ से स्पष्ट हो जायगा। हमारे एक मित्र से इस बात का मुझ से बड़ा विवाद उपस्थित हुआ था। वह कहते थे कि पंजाब देश अपवित्र है क्योंकि महाभारत में कर्ण पर्व के आरंभ में शल्य राजा से कर्ण ने पंजाब देश की बड़ी निंदा की है और वहाँ के बहुत बुरे आचरण दिखाये हैं परंतु वह निंदा निंदा की भाँति गृहीत नहीं होती क्योंकि पश्चिम में गुजराती या मध्य देश के वासियों की भाँति सोला पामरा का प्रचार नहीं है और न ऊपर से वे लोग स्वच्छ रहते हैं परंतु यह मैं निस्संदेह कह सकता हूँ कि यहाँ के काले चित्तवाले मनुष्यों से उनका चित्त कहीं उजला है। इसके अतिरिक्त कर्ण शल्य का शत्रु है इससे शत्रु की की हुई निंदा निंदा नहीं कहाती। हाँ, इस बात का हम पूर्ण रूप से प्रमाण देते हैं कि भारतवर्ष में पहिले पहिले आर्य लोग केवल पंजाब से लेकर प्रयाग तक बसते थे। श्रीमान जॉन म्योर साहब ने लाहौर के चीफ पंडित पंडित राधाकृष्ण को जो पत्र लिखा है उसमें मुक्त कंठ से उन्हों ने स्थापन किया है कि जहाँ तक मैंने प्राचीन वेदादिक पुस्तकें पढ़ीं, उनसे मुझे पूरा निश्चय है कि आर्य लोग पहले इन्हीं देशों में बसते थे। ऋग्वेद संहिता, दशम मंडल, ७५ सू० ५ ऋक् 'इमं मे गंगे यमुने सरस्वती शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या आसिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्यासुषोमया।' ६ मंडल सू० ४५ ऋ० ३१ 'अधिवृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात् उरुकक्षो न गांग्यः।' १० मंड० सू० ७५ ऋ. और ५ मं ५२ सू. ऋ. १७ 'सप्तमे सप्तशाकिन एकमेकाशता ददुः यमुनायामश्रुतमुद्राधोगव्यं मृधे निराधो अश्व्या मृधेः'। मंड ३ सू० ३३ ऋ० १ 'प्रपर्वताना-मुशती उपस्था दश्वे इव विषिते हासमाने गावेव शुभ्रे मातरारिहाणे विपाट् छुतुद्री पयसा जवेते।' ३ मंड २३ सू० ४ ऋ० 'नित्वादधेवरे आपृथिव्या इलायास्पदे सुदिनत्वे अन्हाम् दृषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीहि।' ६ मंड ६१ सू० ऋ० २ 'इयंशुष्मेभिर्बि-

कानन में जो सब नाम बिलुप्त हो जाते और उन सब नामों के कभी किसी के कर्णगोचर होने की संभावना नहीं थी, किंतु भट्ट कविगण की वर्णना प्रभा में मेवाड़ राजवंश के प्राचीन काल के वह सब नाम चिरस्मरणीय हो रहे हैं।

इस १०२४ संवत् समय में वलीद खलीफा के सेनापति महम्मद बिन कासिम ने भारतवर्ष में आकर सिंधु देश जय किया था। इस के पहिले मोरी वंशीय मानराजा के समय जिस असभ्य राजा ने चित्तौर नगर आक्रमण किया था और वाप्पा कर्तृक जो पराजित हुआ था, वह अनुमान होता है कि यही बिन कासिम है।

वाप्पा और शक्ति कुमार के मध्यवर्त्ती नौ राजा ने चित्तौर में राजत्व किया था। उस समय से दो शत वर्ष के मध्य में नौ जन राजा का राजत्व असंभव नहीं। तदनुसार मेवाड़ के इतिवृत्त का निम्नोक्त चार प्रधान काल निरूपित हुआ। प्रथम, कनकसेन का काल १४४। द्वितीय, शिलादित्य और वल्लभीपुर विनाश का काल ५२४। तृतीय, वाप्पा के चित्तौर प्राप्ति का काल खृष्टाब्द ७२८। चतुर्थ, शक्तिकुमार का राजत्व काल खृष्टाब्द १०६८।

तृतीय अध्याय

वाप्पा और समर सिंह के मध्यवर्त्ती राजगण, वाप्पा का वंश, अरब जाति के भारतवर्ष-आक्रमण का विवरण, मुसलमानगण से जिन सब राजाओं ने चित्तौर नगर रक्षा किया था उन लोगों की तालिका।

७८४ संवत् में वाप्पा को चित्तौर सिंहासन प्राप्त हुआ था। मेवाड़ के इतिवृत्त में तत्परवर्त्ती प्रधान समय समर सिंह का राजत्व काल— संवत् १२४६। अतएव वाप्पा के ईरान राज्य-गमन के समय ८२० संवत् से समर सिंह के समय पर्यन्त भट्टगण के ग्रंथानुसार मेवाड़ राज्य का

हिमालय की नीची श्रेणी में जा छिपे और जब उसने क्षत्रियों का संहार करना आरंभ किया तब से ये सब क्षत्री खत्रियों के नाम से वनिये बन कर बच गये। कोई कहते हैं कि ये लोग हैं तो क्षत्री पर कलजुग के प्रभाव से वैश्य हो गये हैं क्योंकि कलजुग के प्रकरण में लिखा है कि "वैश्य वृत्यातु राजानः"। कोई ऐसा भी निश्चय करते हैं कि किसी समय सारे भारतवर्ष में जैनों का मत फैल गया था? तब सब वर्ण के लोग जैन हो गये थे, विशेष करके वैश्य और क्षत्री। उन में से जो क्षत्री आबू के पहाड़ पर ब्राह्मणों ने संस्कार देकर बनाये वे तो क्षत्री हुए और उन लोगों से सैकड़ों वर्ष पीछे जो क्षत्री जैन धर्म छोड़ कर हिंदू हुए वे खत्री कहाये और क्षत्रियों के पंक्ति से न मिले। गुरु गोविंद सिंह ने अपने ग्रंथ नाटक के दूसरे तीसरे चौथे पाँचवें अध्याय में लिखा है कि "सब खत्री मात्र सूर्यवंशी हैं। रामजी के दो पुत्र लव और कुश ने मद्र देश के राजा की कन्या से विवाह किया और उसी प्रांत में दोनों ने दो नगर बसाये। कुश ने कसूर, लव ने लाहौर। उन दोनों के वंश में कई सौ वर्ष लोग राज्य करते चले आये। एक समय में कुशवंश में कालकेतु नामा राजा हुआ और लव वंश में कालराय। इन दो राजाओं के समय में दोनों वंशों से आपुस में बड़ा विरोध उत्पन्न हुआ। कालकेतु राजा बलवान था, उसने सब लववंशी क्षत्रियों को उस प्रांत से निकाल दिया। राजा कालराय भागकर सनौड देश में गया और वहाँ के राजा की बेटी से विवाह किया और उससे जो पुत्र हुआ उस का नाम सोढ़ीराय रक्खा। उस सोढ़ीराय के वंश के क्षत्री सोढ़ी कहाये। कुछ काल बीते जब सोढ़ियों ने कुश वंशवालों को जीता तो कुश वंश के भाग कर काशी में चले आये और वे लोग यहाँ रह कर वेद पढ़ने लगे और उन में प्रायः बड़े बड़े पंडित हुए। बहुत दिनों पीछे जब सोढ़ियों ने सुना कि हमारे दूसरे भाई लोग काशी में वेद पढ़कर पंडित हुए हैं तो उनको काशी से बुलाया और वेद सुनकर अपना सब राज्य उन लोगों को दे दिया, जिनकी वेद पढ़ने से वेदी संज्ञा हो गई थी। काल के बल से इन दोनों वंश के राज्य नष्ट हो गए और वेदियों के पास केवल बीस गाँव रह गये और उन्हीं वेदियों के वंश में संवत

में जो कुछ आलोक लाभ हो सकता है वह परित्याग करना उचित नहीं। भारतवर्ष में एतत् काल में जो सब ऐतिहासिक विवरण सत्य कह कर प्रसिद्ध हैं सो हिंदू ग्रंथ में लिखित विवरण अपेक्षा अधिक असंगत वा परिच्छन्न नहीं। जो हो, तदुभय एकत्रित रहने से भावि कालीन इतिवृत्तप्रणेता उस में से अनेक उपकरण लाभ कर सकेंगे। इस कारण (मुसलमान साम्राज्य के आरंभ से गजनगर राज्य संस्थापन पर्यंत) भारतवर्ष में अरब जाति के समागम का संक्षिप्त विवरण इस अध्याय में सन्निविष्ट किया जायगा। परंतु अरब समागम का सविस्तार विवरण-विशिष्ट कोई ग्रंथ नहीं मिलता, यह बड़े सोच की बात है। अलमकीन नामक ग्रंथकार ने खलीफा गण के इतिवृत्त में भारतवर्ष का प्रायः उल्लेख नहीं किया है। अबुलफ़जल के ग्रंथ में अनेक विषय का सविशेष विवरण प्राप्त होता है और वह ग्रंथ भी विश्वास के योग्य है। फरिश्ता ग्रंथ में इस विषय का एक पृथक् अध्याय है, परंतु उस का अनुवाद यथोचित मत से निष्पन्न नहीं हुआ है *। अब

* टॉड साहब ने फ़िरिश्ता के अनुवाद में जो सब विषय परित्याग किया है तन्मध्य में अफ़गान जाति की उत्पत्ति का विवरण अतीव प्रयोजनीय है। मुसलमान गण के साथ हिजरी ६२ अब्द में जिस काल में अफ़गान जाति का प्रथम आगमन हुआ तब वे लोग सुलेमान पर्वत के निकटस्थ प्रदेश में वास करते थे। फ़िरिश्ता ने जिस ग्रंथ के ऊपर निर्भर कर के अफ़गान का विवरण लिखा है वह यह है "अफ़गान लोग कायर जाति के लोग फिर उस उपाधिकारी राजगण के अधीन वास करते थे। उन लोगों में बहुतों ने मूसा की प्रतिष्ठित नूतन धर्म-व्यवस्था अवलंबन किया था। जिन लोगों ने पूर्व की पौत्तलिकता त्याग नहीं किया वे लोग हिंदुस्तान से भाग कर कोह सुलेमान के निकटवर्ती देश में वास करते थे। सिंधु देश से आगत बिन कासिम के साथ उन लोगों का समागम हुआ था। हिजरी १४३ अब्द में उन लोगों ने किरमान और पेशावर प्रदेश और तत् सीमावर्ती समुदय स्थान अधिकार किया था।" कोहिस्थान का भूगोल वृत्तांत, रोहिला शब्द की व्युत्पत्ति और अन्यान्य प्रयोजनीय विषय टॉड साहब ने स्वीय अनुवाद में परित्याग किया है।

श्रान्तोऽतिष्ठत् क्षणं यावद्रिपुनार्य्यः समागताः ।
अन्वेषयनत्यः संग्रामभूम्यां स्वीयान् पतीन् मृतान् ॥ ३१ ॥
आक्रोशंत्योभिधेयेन पुत्रवृत्त गृहादिना ।
विलपन्, योमुहुर्दुःखाद्घातयन्त्य उरःस्थलं ॥ ३२ ॥
लक्ष्मीविलास नामैको वैश्यस्तावत्समागतः ।
करुणापूर्ण हृदयो दृष्ट्वा तासां हि दुर्गतिम् ॥ ३३ ॥
पत्युर्नाशं महद्दुःखं ज्ञात्वा ताः शीलशालिनीः ।
दानशौण्डोधनाढ्यश्च सद्बुध्या ताः सुदुःखिताः ॥ ३४ ॥
बालाननाथान् मत्वा ऽपोवनयत् स्वगृहं प्रति ।
सान्त्वयित्वा विवेकेन परेण परमाः सतीः ॥३५॥
लालनं पालनं तेषां पोषणं वत्स्त्रियामुत ।
बालानां क्षत्रवंश्यानामकरात् स्नेहभावतः ॥३६॥
एवमेव ततो रंगभूम्याः काश्चित् स्त्रियो हृताः ।
दुष्टैः काश्चिद्विड्निभैश्च दयालुभिरुपाहृताः ॥३७॥
लक्ष्मीविलास संज्ञन शिक्षा ते बालका यदा ।
व्रतबंधार्हतां प्राप्ताः समकार्युपनायनं ॥३८॥
स्वधर्माचरणे चैवं शिक्षा ते सुनियोजिताः ।
एवमेवापरे बालाः स्त्रियो येन सुरक्षिताः ॥३९॥
पोषिताः स्वीयदत्तेन अन्नेनैव तथैव ते ।
मत्वा तमेव चाचारं वव्रतुस्तेन सन्मुदा ॥४०॥
इमे लक्ष्मीविलासेन रक्षिताः क्षत्रवंशजाः ।
शुद्धाः सदाचारयुक्ता बभूवुर्भाग्यशालिनः ॥४१॥
येषां कलियुगेपीमे चत्वारो वंशजा स्मृताः ।
अग्निः सोमश्च सूर्य्यश्च नाग एते चतुर्विधाः ॥४२॥
अद्यापि भूमौ वर्तंते चतुस्सन्तानवर्द्धकाः ।
दानशूराः सदाचारा भाग्यवंतः सुविक्रमाः ॥४३॥

अर्थ—जब परशुराम जी दिग्विजय करने निकले तब सब पृथ्वी आनंदपूर्ण हो गई क्योंकि दुष्टों के भार से पृथ्वी व्याकुल हुई थी और इन्होंने दुष्टों का संहार किया। सब पृथ्वी पर घूमते और बाहुबल से

की संतान परंपरा से वहाँ विपुल वंश विस्तार हुआ था। इस वंश की उपाधि आसिला गिहलोट है।
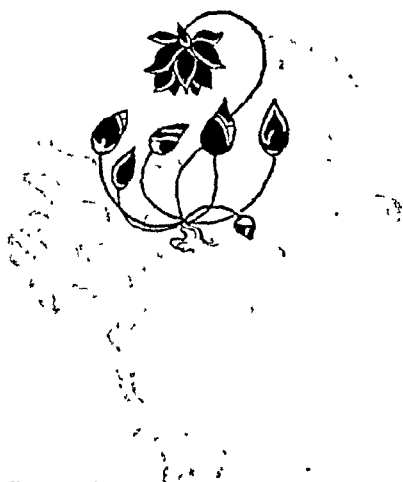
समर में निहत हुए थे। विजय की इसी आकस्मिक मृत्यु घटना के पहिले तद्-गर्भस्थ पुत्र अकाल में भूमिष्ठ हुआ था, उस पुत्र का नाम सेतु। टॉड साहब कहते हैं अस्वाभाविक मृत्यु-प्राप्त व्यक्तिगण भूतयोनि प्राप्त होते हैं। हिंदूगण का यह संस्कार है और स्त्री भूत का हिदुस्तानी नाम चुरइल, सेतु की माता के अस्वाभाविक मृत्यु वशतः सेतु का वंश काचोराइल नाम से प्रसिद्ध हुआ। आसिल से द्वादशतम अधस्तन पुरुष बीजा गिरनार के राजा शृंगार देव के भांजे थे और मातुल के निकट से इन्होंने सालन स्थान प्राप्त किया था। सुराट का राजा जयसिंह देव के साथ समर में बीजा निहत हुए थे। फ़िरिश्ता ग्रंथ में जो देवी सालिमा वंश का उल्लेख है, अनुमान होता रहा है देवी और चोरइल, इन दो नाम के समता से तन्नाम की उत्पत्ति हुई है।

हाहाकारो महानासीत्तत्र क्षत्रिय पर्य्यये ।
नार्य्यो, वृद्धाश्च बालाश्च मुमुहुर्भयविह्वलाः ॥६॥
हतेषु तेषु शूरेषु बालवृद्धेषु च क्रमात् ।
अनाथाश्चाभवन् सर्व्वाः क्षत्रियाण्यो हतान्वयाः ॥ ७ ॥
तत्र कश्चिन् महावैश्यः सुधर्म्मा नामकः प्रभुः ।
आसीन् नागान्वये जातः क्षत्रियाणां प्रियंकरः ॥ ८ ॥
हतेषु सर्ववालेषु व्याकुलाश्रुकुलेक्षणः ।
चतुःपञ्चावशेषेषूपायंसमकरोत्तदा ॥ ९ ॥
नीत्वा स बालान् तान् सर्व्वान् स्वप्रियायै प्रदत्तवान् ।
तस्य भार्य्या महाप्राज्ञी सुशीला नाम नामतः ॥
वात्सल्यमकरोत्तेषु यथा स्वोदरजे भृशं ॥ १० ॥
यदा निवर्तितो देवो निःक्षत्रीकृत्य पार्थिवान् ।
ऊचुस्तस्मै समागत्यं तद्वृत्तं पिशुनास्तदा ॥ ११ ॥
अस्ति कश्चिन् महावैश्यो क्षत्रियाणां प्रियंकरः ।
रक्षितास्तेन बालास्ते क्षत्रियाणां नरोत्तम ॥ १२ ॥
तच्छ्रुत्वा स द्विजो धावन्नुश्वसन्नुरगो यथा ।
उद्यम्य परशु तत्र गतः क्रोधाकुलेन्द्रियः ॥ १३ ॥
तं दृष्ट्वा स महान् वैश्यः प्राप्तं कालानलोपमं ।
दुर्निवारं मनुष्येभ्यो भक्त्या बुध्याप्यपूजयत् ॥ १४ ॥
सारस्वतास्तु ये विप्राः क्षत्रियाणां पुरोहिताः ।
तेपि तत्रागमन् सर्व्वे यजमानहितेप्सवः ॥ १५ ॥
ऊचुः प्राञ्जलयो विप्राः प्रणामानतकन्धराः ।
वैश्यः सुधर्म्मा तत्पत्नी भार्गवं भर्गविक्रमं ॥ १६ ॥

सर्व्वे ऊचुः

नमो नमस्ते श्रितविग्रहाय । नमो नमस्ते हृत विग्रहाय ।
नमो नमस्ते कृत विग्रहाय । नमो नमस्ते धृत प्रग्रहाय ।
नमस्ते पूर्णकामाय दुष्ट वामाय ते नमः ।
नमो रामाभिरामाय रूपश्यामाय ते नमः ॥ १८ ॥
क्षात्रद्रुमकुठाराय चाकूपाराय ते नमः ।
नमस्तेऽकृतदाराय चाकूपाराय ते नमः ॥ १९ ॥

खत्रियों की उत्पत्ति
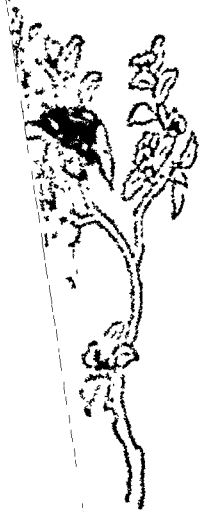
सूतउवाच—इति संस्थाप्य भगवान् प्रजाबीजं प्रजापतिः।
जगाम तपसे शैलं गौतमाचलमुत्तमं ॥ ९ ॥
ततः प्रभृति ते सर्वे क्षत्रिया द्विजपालिताः।
त्यक्तक्षत्रियधर्म्माणो वणिग्वृत्तं समाश्रिताः ॥१०॥
ते सूर्य्य शशि वंशीया अग्निवंशसमुद्भवाः।
उत्तमाः क्षत्रियाः ख्याताः इतरे मध्यमाः स्मृताः ॥११॥
भोठ भिल्ल निचारादि महिपावत क्रोटकाः।
दैत्यवंश समुत्पन्नाः क्षत्रियास्तेपि विश्रुताः ॥१२॥
टिकसेल इति ख्याता प्रेतवंशोद्भवाः श्रुवाः।
उन्नाइवंशसंभूतातेस्तु कायस्थ पूर्वजाः ॥१३॥
विसेना वर वाराश्च अवखास्तवखासतथा।
अक्काश्चामर गौडाद्या सूतवंशसमुद्भवाः ॥१४॥
कक्कान कनवाराश्च मोरभंजास्तु वैश्यकाः।
सेंगराख्या सोनगृहावत्सा ब्राह्मणवंशजाः ॥१५॥
भरां भद्रा भार्गवाश्च मुण्डिता नाकुलन्धराः।
एवमन्येपि बहुशो क्षत्रियत्वं समाश्रिताः ॥१६॥
नागवंशोद्भवा दिव्याः क्षत्रियास्समुदाहृताः।
ब्रह्मवंशोद्भवाश्चान्ये तथाऽरुद्रवंशसम्भवाः ॥१७॥
एतेषु भविता ह्येको महात्मा विगतज्वरः।
उदासीनः कुलगुरुः कलौ सार्द्धे चतुर्गते ॥१८॥
इत्येतत् कथितं तात क्षत्रियाणां विनाशनं।
पालनं चापि मद्रेषु किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥१९॥
इति पूर्व्वभविष्ये एकचत्वारिंशोध्यायः।

खत्री के उत्पत्ति विषय में मेरे मित्र पंडित चण्डीप्रसाद जी वर्णन करते हैं कि जब परशुराम श्री दशरथ जी के समय में क्षत्रियों को मारते थे तौ वे सब खत्री कहि के बचि गये! तब से वे खत्री कहलाए अद्यावधि उसी नाम से प्रकट हैं। कोई कहते हैं कि (ख) आकाशनिवासी (त्रि) तीन ऋषियों के सन्तान हैं अतएव खत्री शब्द से प्रसिद्ध हैं। और जो परशुराम जी को शिरोनमन पूर्वक प्रणाम करि बद्धांजलि हो गए तब तो परशुराम जी ने प्रसन्न होकर कहा, धन्य हौ तुम निर्भय रहो

खत्रियों की उत्पत्ति

—※—
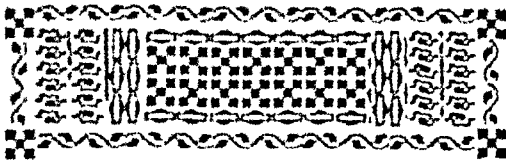
मेरी बहुत दिन से इच्छा थी कि इस जाति का पुरावृत्त संग्रह करूँ परंतु मुझे इस में कोई सहायक न मिला और जिन जिन मित्रों ने मुझ से पुरावृत्त देने कहा था वे इस विषय में असमर्थ हो गए और इसी से मेरा भी उत्साह बहुत दिनों तक मंद पड़ा रहा। परंतु मेरे परम मित्र ने इस विषय में मुझे फिर उत्साहित किया और कुछ मुझे ऐसी सहायता भी मिल गई कि मैं फिर से इस जाति के समाचार अन्वेषण में उत्सुक हुआ।

लाहोर निवासी श्रीपंडित राधाकृष्णजी ने इस विषय में मुझे बड़ी सहायता दी और वैसी ही कुछ सहायता श्री मुंशी बुधसिंह के मिहिर प्रकाश और श्रीयुत शेरिंग साहब के जातिसंग्रह से मिली।

इस समय में प्रायः बहुत जाति के लोग अपनी अपनी उन्नति दर्शन में प्रवृत्त हुए हैं जैसा दूसर (जिन के वैश्यत्व में भी संदेह है क्योंकि उनके यहाँ फिर से कन्या का पति होता है) अपने को कहते हैं कि हम ब्राह्मण हैं, कायस्थ (जो शूद्रधर्म कमलाकर की रीति से संकर शूद्र हैं) कहते हैं कि हम क्षत्रिय हैं और जाट लोगों में भी मेरे मित्र बेसवाँ के राजा श्री ठाकुर गिरिप्रसाद सिंह ने निश्चय किया है कि वे क्षत्रिय हैं तो इस दशा में इस आर्य जाति का पुरावृत्त होना भी अवश्य है, जो मुख्य आर्य जाति के निवास-स्थल पंजाब और पश्चिमोत्तर देश में फैली हुई है और जिस में सर्वदा से अच्छे लोग होते आए हैं।

देश बोली से सब खत्री कहलाने लगे। सोई रीति अद्यावधि चली आती है। इत्यादि प्रकार से प्रसिद्ध है। जो आकाश निवासी ३ ऋषि हैं उनका नाम १ आकर्ष २ पद्माख्य ३ खत्रिंश इत्यादि सुदर्शन संहिता में लिखा है। खत्रिंश की सन्तान खत्री कहलाते हैं। यह आख्यायिका उक्त संहिता के द्वादश अध्याय में विदित है। इत्यलम्बहुना।

(शालिग्रामदास)

आज कल बहुधा लोग श्रेष्ठ वर्ण बनने के अधिकारी हुये हैं उनमें एक खत्री भी हैं। ये लोग अपने को क्षत्री कहते हैं इस बात को मैं भी मानता हूँ कि इनके आद्य पुरुष क्षत्री थे। क्योंकि जो जो कहानियाँ इस विषय में सुनी गई हैं उन से स्पष्ट मालूम होता है कि ये लोग क्षत्री वंश में हैं।

लोग कहते हैं कि खत्री हयहो वंश के वंश में हैं। सहस्रार्जुन से और परशुराम से जब युद्ध ठनी तो परशुराम ने उस वंश के क्षत्रियों को मार डाला और यह प्रतिज्ञा किया कि इस वंश के क्षत्री को निर्वंश कर डालेंगे। यह प्रतिज्ञा सुनकर उस वंश के दूषण कुलकलंक कई एक कायर यह कह कर बच गये कि हम बनियों के बालक हैं। और जब परशुराम जी चले गये तो ये जाकर हयहोवंशियों से कहने लगे कि भाई हम लोग विपत्ति में ऐसा कहकर बच गये। यह सुनकर उन सबों ने बहुत प्रकार से धिक्कार दिया और कहा कि रे चांडाल तुम सबों ने यह क्या किया अपनी जननी को कलंक लगाया। हाय! तुम सब क्षत्री कुल में कलंक पैदा हुए। जाओ यहाँ से भागो दूर हटो न तो अभी शिर काट लेंगे क्या तुम सब हम लोगों के तुल्य हो सकते हो? अपने वंश के लोगों की रक्षा क्या करोगे अपने बाप के माथे पाप चढ़ाये अब हम लोग तुम लोगों के साथ कोई व्यवहार न रक्खेंगे तुम लोगों ने अपने माता पिता को कैसा कलंक लगाया। यह सुनकर ये सब अपनी श्री गवांकर वहाँ से आके वैश्यों से कहा कि भाई तुम लोग अपनी जाति अर्थात् वैश्य हम लोगों को बनाओ। कारण हम लोग बनियां के बालक कहकर बच गये हैं और अपनी सारी व्यवस्था कह गये। बनियांओं

सखाइवारुजत् सानुगिरीणां तविषेभिरुर्म्मिभिः पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमाविवासेमधीतिभिः" इत्यादि श्रुतियों में गङ्गा, यमुना, व्यास, सतलज, सरस्वती इत्यादि नदियों की महिमा कही है और ऋग्वेद में पहले और दूसरे मंडल में कई ऋचाओं में सरस्वती की महिमा कही है। यास्क ने अपने निरुक्त में इन ऋचाओं के अर्थ में विश्वामित्र ऋषि के सतलज और व्यास के मुहाने पर यज्ञ करने का और इन नदियों के स्तुति करने का प्रकरण लिखा है *। और कीकट देश तथा अन्य प्रदेश और इत्यादि प्रदेश और गोमती इत्यादि नदियों के जो कहीं श्रुतियों में नाम आ गये हैं वे परस्पर विरुद्ध होने के कारण तादृश प्रमाणभूत नहीं होते। इस से इस बात को हम पूर्ण रूप से प्रमाणित कर चुके कि आर्य लोगों के निवास का स्थान पंजाब से लेकर यमुना के किनारे तक के देश हैं तो इससे वहाँ के प्राचीन निवासियों को यदि हम परम आर्य कहें तो क्या हानि है।

अब इस बात का झगड़ा रहा कि ये कौन वर्ण हैं? तो हम साधारण रूप से कहते हैं कि ये क्षत्री हैं। क्षत्री से खत्री कैसे हुए इस में बड़ा विवाद है। बहुत लोगों का तो यह सिद्धांत है कि पंजाब के लोग क्ष उच्चारण नहीं कर सकते, इससे ये क्षत्री से खत्री कहलाये। कोई कहते हैं कि जब परशुराम जी ने निःक्षत्र किया तब पंजाब देश में कई बालक खत्री कहकर बचा लिये गये थे। वे ब्राह्मण, वैश्य और शूद्रों के घरों में पले थे और अब उन्हीं से खत्री, अरोड़े, भाटिये इत्यादि अनेक उपजाति बन गईं और उनके आचरण भी अपने अपने पालकों के अनुसार अलग अलग हो गये। तीसरे कहते हैं कि क्षत्री और खत्री से भेद राजा चंद्रगुप्त के समय से हुआ क्योंकि चंद्रगुप्त शूद्री के पेट से था और जब उसने चाणक्य ब्राह्मण के बल से नंदों को मारा और भारतवर्ष का राजा हुआ तो सब क्षत्रियों से उसने रोटी और बेटी का व्यवहार खोलना चाहा तब से बहुत से क्षत्री अलग होकर

* मनु ने भी इन्हीं को पुण्य देश कहा है "सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरं", "कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पांचालाः शूरसेनकाः"।

जादव वंश निशेन नृप, खत्रि ख्याति बिजवान।
अगरवार सुरवार भौ, पंचगोतिया नृप जान ॥ ३ ॥
महीदहार कठिहार पुनि, धाकर और सिरमौर।
लकरिहार जनवास पुनि, बड़ गुंजर मड़िऔर ॥ ४ ॥
भदवरिया प्रगटे बहुरि, काश्यप और सोमवंश।
मंडवलिया गाइ सहित, पाछिल भौ अवतंश ॥ ५ ॥
कठहरिया उत्पन्न भौ, मलन हांस करिहार।
पोड पुंडर बुंदेल पुनि, गौरवार भिलवार ॥ ६ ॥
हाडा भए नरवनी, छत्री अति रणधीर।
षड्‌ग दान वर्णन करी, विरदावलि अति वीर ॥ ७ ॥
सोनकी और जगार भौ, वहुरि तरेढ गरेर।
ठकुराई सांवत कहौ, खीची और धंधेर ॥ ८ ॥
पुवि भौ प्रगट सिद्धोगिया, छत्री नृपति कुलीन।
किनवार सिघल नृप, कुलपालक अघहीन ॥ ९ ॥
पुनि प्रगटेउ महरौठ नृप, कामधेनु ते जानि।
करचोलिया छत्री भएउ, एहि प्रकार सभ खानि ॥ १० ॥
नागवंशी छत्री भए, गडवरिया सकसेल।
जाति वंश कुल उत्तम, पुनि प्रगटेउ रकसेल ॥ ११ ॥
अनटैया अगरेढ नृप, कुश भौ नाम निहार।
अपर वंश कहँ लगि कहौं, भए धेनु औतार ॥ १२ ॥

[शिवराम सिंह]

१५२६ में कालू चोणे के घर बाबा नानक का जन्म हुआ और सोढ़ियों के वंश में गुरु गोविंद सिंह हुए"। गुरु नानक साहब अपने ग्रंथ साहब में जहाँ चारों वर्णों का नाम लिखते हैं वहाँ ब्राह्मण, खत्री, वैश्य, शूद्र लिखते हैं।

कोई कहते हैं कि बाबर के पहिले की किसी पुस्तक में खत्री का शब्द नहीं मिलता। इससे निश्चय होता है कि बाबर ने जिन क्षत्रियों को अपने सेना में नौकर रक्खा था उनका नाम खत्री रक्खा।

परंतु कोई कहते हैं कि पंजाब में नाग भाषा का बहुत प्रचार था और अब भी पंजाबी भाषा में उनके बहुत शब्द मिलते हैं और क्षत्री खत्री की नाग भाषा है।

ऊपर के लेख से हम सिद्ध कर चुके कि खत्री क्षत्रिय हैं और उस में लोगों के जो अनेक विकल्प हैं, वे भी लिखे गए परंतु हम कोई विकल्प नहीं करते क्योंकि नीचे लिखे हुए वाक्य पुराणोपपुराण सारसंग्रह में दशावतार प्रकरण में परशुराम जी के दिग्विजय में मिले हैं; जिन से इनका क्षत्रिय होना स्पष्ट है, यथा—

यदा श्रीमत्परशुरामो गतो दिग्विजयेच्छया ॥
सकलाभूस्तदाजाता पूर्णं मोदान्विता यतः ॥ २४ ॥
दुष्टसंहारकृद्धीमान् दुष्टभाराकुला रसा।
पर्यटन् सकलां पृथ्वीं जयन् बाहुबलेन च ॥ २५ ॥
गतः पंचनदान्देशान्यद्राज्ञा क्रूरसंगरं।
कृतं परशुरामेण महाविक्रमशालिना ॥ २६ ॥
एकाकिनापि तद्राज्ञः सैन्यं सर्वं विनाशितं।
कतिचिद् द्रुवुर्वीरा हतास्तु बहवोऽभवन् ॥ २७ ॥
असृङ्मेदवती भूमिः शुशुभे रणमंडले।
धुनी लोहितपंकाढ्या बभूवातिभयंकरा ॥ २८ ॥
धूलिः सैन्यस्य यस्यां सा मग्ना पंकीबभूव ह।
जन्यभूमिगता यत्र वीराणां मृतमस्तकाः ॥ २९ ॥
कमलाभां वहन्ती या कल्लोलैरावृताप्यभूत्।
राजानं संनिहत्यासौ रामस्तत्र तरोः पदे ॥ ३० ॥

[सन् १८८२ ई० में बोधोदय प्रेस,
बाँकीपुर से प्रथमबार प्रकाशित]

जय करते हुए पंचनद देशों में गए और वहाँ के राजा से बड़ा संग्राम किया। यद्यपि भगवान अकेले थे तथापि वहाँ के राजा की सब सेना मार डाली—इत्यादि।

उन हत वीरों की स्त्रियाँ और बालकों को लक्ष्मीविलास नामक वैश्य ले गया और धर्मपूर्वक रक्षण किया और उनके पुत्रों का लालन पालन और यज्ञोपवीतादि संस्कार किया। इसी भाँति उन मृत वीरों की स्त्रियाँ और बालक ब्राह्मण वा शूद्रादि जिन वर्णों के घर गए उनके ऐसे ही आचरण हुए और लक्ष्मीविसास का पालित क्षत्रियों का समूह जो अग्नि, सूर्य, चंद्रमा और नागवंश का था, क्षत्रियसंस्कार पाकर भी वैश्यधर्म में निष्ठ हुआ इत्यादि।

इनका विशेष वर्णन भविष्य पुराण के पूर्वार्द्ध में जो लिखा है उस से और भी निश्चय होता है कि सब क्षत्रिय हैं। इन श्लोकों की संस्कृत ऐसी ही सहज है कि अर्थ लिखने की आवश्यकता नहीं। सिद्धांत यह है कि वैश्यों की वा दूसरी वृत्ति करनेवाले क्षत्रिय जो पंजाब देश में हैं वे क्षत्रिय ही हैं किंतु परशुराम जी के समय से वहाँ के क्षत्रियों का युद्ध संस्कार छूट गया है और ऐसे लोगों की एक पृथक जाति, खत्री, रोड़े, भाटिये इत्यादि हो गई है। इस विषय के दोनों अध्याय यहाँ प्रकाशित किए जाते हैं।

सूतउवाच

एवं बहुविधे देशे स हत्वा क्षत्रियर्षभान्।
गतो पञ्चनदे देवो क्षत्रियान्वयसूदनः ॥१॥
तत्र प्राप्तान् महाशूरान् क्षत्रियान् रणदुर्मदान्।
युयुधेऽतिबलो रामः साक्षान्नारायणांशजः ॥२॥
जनन्या जनितो लोके कः शूरोयस्तु पार्थिवान्।
पाञ्चालान् जयते युद्धे विना नारायणं स्वयं ॥३॥
सर्व्वान् हत्वा महाराजान् क्षत्रियान् सद्विजोत्तमः।
रुरुधे पङ्कजवने यथा मत्त द्विपाधिपः ॥४॥
एवं हत्वा रणे शूरान् तरुणान् रणदुर्म्मदान्।
प्रवृत्तो वृद्धबालेषु हन्तुं क्रोधाकुलेक्षणः ॥५॥

पाल से मिला कर यह क्रम माना जाय तो वैरिविहंड तक एक प्रकार का क्रम मिलैगा, किंतु दोलाराय [दुर्ल्लभराय ?] जिस से सन् ६८४ इस्वी में मुसल्मानों ने अजमेर छीना उस के पूर्व दो सौ बरस के लग-भग कौन राजे हुए इस का पता नहीं। दोलाराय के पीछे माणिक्य राय (सन् ६९५ ई०) हुआ, जिसने साँभर का शहर बसाया और साँभरी गोत स्थापन किया। फिर महासिंह, चंद्रगुप्त [?], प्रतापसिंह, मोहनसिंह, सेतराय, नागहस्त, लोहधार, बीरसिंह [?], विबुधसिंह और चंद्रराय के नाम क्रम से मिलते हैं। Bombay Government Selection Vol. III. P. 193 टॉड साहब लिखते हैं कि भट्ट लोगों ने दूसरे ग्यारह नाम यहाँ पर लिखे हैं। परंतु प्रिंसिप साहब के क्रम से दोलाराय के पीछे हरिहर राय [टॉड साहब के मत से हर्षराय] सन् ७७४ ई० में हुआ और इस ने सुबुकतगीं को लड़ाई में हराया, फिर बली अगराय (बेलनदेव Tod) हुआ जो सुल्तान महमूद के अजमेर के युद्ध में मारा गया। उस के पीछे प्रथमराय और उस को अंगराज (अमिल्लदेव) हुआ। अमिल्लदेव के विशालदेव राजा हुआ। (विल्फर्ड १०१६ ई०, लिपि १०३१ से १०९५ ई० तक टॉड साहब के मत में चंद के रायसे अनुसार संवत् ९२१ में और फीरोज की एक लिपि से (१२२० संवत्) फिर सिरगदेव [सारंगदेव वा श्रीरंगदेव], अन्हदेव [जिस ने अजमेर में अन्ह सागर खुदवाया], हिसपाल [हंस-पाल], जयसिंह तारीख फिरिश्ता का जयपाल [जो प्रिंसिप साहब के मत से सन् ९७७ ईस्वी में हुआ], सोमेश्वर [जिसने दिल्ली के राजा अनंगपाल की बेटी से ब्याह किया], पृथीराय [लाहौर का जिसे शहा-बुद्दीन ने कत्ल किया ११७६], रायनसी (रायनृसिंह जो ११९२ में दिल्ली के युद्ध में मारा गया), विजयराज और उसके पाछे लकुनसी (लक्ष्मण सिंह) हुआ, जिसकी सत्ताईसवीं पीढ़ी में वर्त्तमान समय के नीमरान के राजा हैं।

अब टॉड साहब का मत है कि हाड़ालोगों का वंश माणिक्य देव की शाखा में वा विशाल देव के पुत्र अनुराज से यह वंश चला है। प्रिंसिप साहब अनुराज ही से हाड़ा लोगों की वंशा-वली लिखते हैं। किंतु बूँदी के भट्ट संगृहीत ग्रंथों में और तरह

नमो नमस्ते सर्व्वायार्चितशर्व्वाय ते नमः ।
हृतराजन्यगर्व्वाया पूर्व्वखर्व्वाय ते नमः ॥ २० ॥
मीन कच्छप वाराह नृसिंह वटु रूपिणे ।
कृत लीलावताराय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ २१ ॥
रेणुका-गर्भरत्नाय च्यवनानन्ददायिने ।
भार्गवान्वय जाताय नमो रामाय विष्णवे ॥ २२ ॥
नमः परशुहस्ताय खड्गिने चक्रिणे नमः ।
गदिने शार्ङ्गिणे नित्यं शौरिणे ते नमोनमः ॥ २३ ॥
नमस्तेऽद्भुतविप्राय धराभारापहारिणे ।
शरणागतपालाय श्रीरामाय नमोनमः ॥ २४ ॥

इति श्री भविष्यपुराणे पूर्वखण्डे वर्णाचारनिर्णये चत्वारिंशोध्यायः ॥

सूतउवाच—इत्थं स्तुतः स भगवान् उवाच श्लक्ष्णया गिरा ।
वरं व्रणीध्वं भद्रं वो मा भैष्ट विगतज्वराः ॥ १ ॥
सारस्वता ऊचुः—नाशिता भवता देव राजन्या भूरिविक्रमाः ।
सन्ति तेषान्दयासिन्धो बाला दीनास्त्रियस्तथा ॥ २ ॥
तेभ्योऽभयं वय त्वत्तो देव वाञ्छामहे सदा ।
सुधर्म्माउवाच—मया संरक्षिता ये तु मामकीं वृत्तिमाश्रिताः ॥ ३ ॥
त्यक्तक्षत्रियधर्म्मास्ते सम्भविष्यन्ति बालकाः ।
वैश्यस्तु भवताऽवध्यः सदा त्वत्पादसेवकः ।
अनुकम्प्यो दयासिन्धो दीनोऽहं बन्धु-वञ्चितः ॥ ४ ॥
परशुरामउवाच—अत्राऽगतोहं नाशार्थं तेषामेव न संशयः ।
किन्तु तत् स्तवनात्प्रीतो विरक्तोहं वधांतप्रति ॥ ५ ॥
मत्प्रसादाद्भविष्यन्ति बाला विटधर्म्मसमाश्रिताः ।
लक्ष्मीवन्तः प्रजावन्तो नानाशास्त्रविचक्षणाः ॥ ६ ॥
पण्यवीथीषु चतुरा राजसेवाविधायिनः ।
पुरुषाश्च स्त्रियः सर्व्वा सुभगाः कूलमाश्रिताः ॥ ७ ॥
यूयं सारस्वता विप्राः प्रतिगृह्णन्तु बालकान् ।
कुर्व्वन्तु चापि सर्व्वेषां संस्कारं क्षत्रियोचितम् ॥ ८ ॥

राव बंगदेव जी हुए।" राव बंगदेव से भट्टों की और प्रिंसिप साहब की वंशावली एक है। प्रिंसिप साहब के मत से अनुराज ने आसी वा हाँसी का राज किया। उस के पीछे इष्टपाल वा इष्ठपाल (शायद अस्थिपाल यही है) ने १०२४ ई० में असीरगढ़ में राज किया। उस का चण्डकर्ण वा कर्णचंद्र, उस का लोकपाल और उस का हम्मीर हुआ। इस हम्मीर का पृथ्वीराज रायसे में भी जिक्र है और पृथ्वीराज ही के युद्ध में यह ११९३ ई० में मारा गया। हम्मीर के पीछे क्रम से कालकर्ण, महामग्द (महामत्त), राव बच (राव वत्स) और रामचंद्र हुए। रावचंद्र का परिवार शहाबुद्दीन ने सन् १२९८ में मारा। केवल एक पुत्र रायसी बच गया, जो चित्तौर में पाला गया और जिसने भैंस रोर में राज स्थापन किया। रायन्सी के कोलन राय हुए, जिसने मध्य-देश में प्रमारों का राज्य किया और उसके बंगदेव हुए, जो हुन के राजा हुए और मैनाल लोगों पर प्रभुत्व किया। राव बंगदेव से वंश परंपरा में और भेद नहीं है, केवल समर सिंह के पुत्र हर राज (हाराराज, जिस से हाड़ा वंश चला) प्रिंसिप साहब वंशावली में विशेष मानते हैं। बूँदीवालों के मत से बंगदेव ने (सन् १३४१ ई० में) बंबावदा में राज किया और इन के पुत्र राव देव सिंह ने बूँदी में राज स्थापन किया और अपने पुत्र देव सिंह (संवत् १२९८) को बूँदी राज देकर चले गए। यही राव देव लोधी लोगों के दरबार में बुलाए गए, जो प्रिंसिप साहब के मत से अपने पुत्र हरराज को राज दे कर चले गए। बूँदी परंपरा में हरराज का नाम नहीं है, इस से संभव होता है कि हरराज और समरसिंह दोनों राव देव के पुत्र हैं। हरराज ने कुछ दिन राज किया, फिर समरसिंह ने भीलों को जीता था। समरसिंह के पीछे क्रम से ये राजा हुए। राव रनपालसिंह (नापा जी) संवत् १३३२, राव हम्मीर (हामाजी वा हामूजी) सं० १३४३, राव बरसिंह वा वीरसिंह सं० १३९३, राव वैरीशाल्य वा बैरी-साल वा वीरूजी सं० १४५० (P. 4190. A. D. G.), राव सुभांडदेव वा बाँदा जी सं० १४९०, इनके समय में बड़ा काल पड़ा (ई० १४८७) और समरकंदी अमरकंदी नामक दो भाइयों ने इन को राज से उतार कर बारह बरस राज्य किया, राव नारायण दास ने पिता का राज्य

क्योंकि तुम अरुट् हौ अर्थात् क्रोध बिना हौ सोई अब अरोड़ा कहलाते हैं। और मेरे मित्र पंडित गोकुलचंद्र जी के पास एक पुस्तक थी। तिस में लिखा है कि लव जी के वंश में एक राजा थे तिन्ह के दो स्त्री थीं। जो कि छोटी थीं वह राजा को परम प्यारी थी जो दूसरी बड़ी थी उस में कुछ रुचि कम थी एक एक पुत्र दोनों में प्रकट भये। छोटी स्त्री ने स्वामी से कहा कि राज्य मेरे पुत्र को देवो। राजा ने न माना। अंत में मंत्रीको भी उस राणी ने स्ववशवर्ति करि के कहवाया कि छोटे को राज्य देना चाहिए। मंत्रियों ने कहा कि राजन्! एक को समस्त धन दे दो। एक को केवल राज्य दे दो। सुनि के राजा ने बड़े पुत्र को समस्त धन दे दिया। छोटे पुत्र को स्वकीय राज्य दे दिया। छोटे पुत्र ने राज्य पाय के बड़े भ्राता से कहा कि तुम मेरे देश तें निकल जाओ, तब तो वह तिलाचार होकर मूलत्राण नगर अर्थात् मुलतान के पास में चला आया। और उस के और और जातियों के मित्र जो थे वे भी चलि आये तब तो उसने कहा कि हम सब एक जाति कहलावैं और एक अपने नाम पर ग्राम बसावैं जहाँ हमारी जाति सब सुखपूर्वक निवास करें। इस सलाह को सबने माना तब उस राजकुमार ने सब को कहा कि हम सब रुट् (कोप) कभी करैं, नहीं आपस में अतएव अरुट् हमारा नाम हुआ। सब ने प्रसन्न होकर माना। परंच जो जो पुरुष आये थे उनके नाम से अरुट् में भी कई जाति हो गई सो सब इस पंचनद देश में विस्तृत हैं। उसी समय उस राजकुमार ने उक्त नगर के निकट में एक अरुट् कोट नाम ग्राम बनवाय कर निवास किया जिस को आज कल आरोड़कोट कहते हैं। वह ग्राम अरोड़ों का पूर्व निवास भूमि है। आज कल भी कई एक पुरुष उसी स्थान में जाय के विवाहादि करि आते हैं, जिन्हों को इस देश में कन्या नहीं मिलती हैं। अब देश प्रभाव से उस देश के लोक आचार से हीन होते हैं दूसरे गदहा को अनेक ही पुरुष रखते हैं उसपर निःसंक सवार भी हो जाते हैं अतएव नीच गिने जाते हैं नहीं तो जाति में अच्छे हैं। जो लघु राजकुमार क्षत्री था उस को इस पांचाल देश के लोगों ने खत्री शब्द से प्रसिद्ध किया क्योंकि जो श्री गुरु अंगद जी ने गुरुमुखी अक्षर बनाये उसमें केवल मूर्द्धन्य खकार है और (क्ष) अक्षर नहीं है अतएव

बुधसिंह * सं० १७५२ (P. 1710 A. D.), इन्होंने बहादुरशाह की सहायता की थी, किंतु जयपुरवालों ने इन्हें राज्यच्युत कर दिया। महाराव राजा उमेदसिंह सं० १८०१ (1744 A. D.), होलकर की सहायता से बूँदी फेर लिया (1747) और फिर विरक्त हो कर राज छोड़ कर चले गए। अजीत सिंह सं० १८२७ (1771), महाराव राजा विष्णुसिंह सं० १८३०। इन्होंने सं० १८७४ में सर्कार से अहदनामा किया। महाराव राजा रामसिंह, ये वर्त्तमान बूँदी के महाराव हैं। संवत् १८७८ में सावन कृष्णा ११ को इन्होंने राज पाया और पूस सुदी ३ सं० १८६६ को इनका जन्म है। ये महाराज बड़े धर्मनिष्ठ और संस्कृत के अनुरागी हैं। सर्कार से इस राज्य की सलामी १७ तोप की नियत की गई है और महाराव राजा श्री रामसिंह जी को जी० सी०

---

* शिवसिंहसरोज में लिखा है, बुद्धराव (संवत् १७५५)—

ये महाराज बूँदी के राजा जयसिंह सवाई आमेरवाले के बहनोई थे। बहादुरशाह बादशाह ने इन का बड़ा मान किया। इस बादशाह के यहाँ दूसरे की ऐसी इज्जत न थी। जब सय्यद बारहा ने बादशाह को बेदखल कर आप ही बादशाही नकारा बजाते हुए गली कूचों में निकलने लगा तब तो इस शूरवीर से कब रहा जाता था। सय्यदों का मुँह तरवारों की धार से फेर दिया और तमाम उमर बादशाह के यहाँ रहा। कविता इनकी बहुत ही अपूर्व है और कवि लोगों का बड़ा मान दान देनेवाला था।

कीनो तुम मान मैं कियो है कब मान अब कीजै सनमान अपमान कीनो कब मैं।
प्यारी हँसि बोलु और बोलैं कैसे बुद्धराज हँसि हँसि बोलु हँसि बोलि हौं जू अब मैं॥
दृग करि सौंहैं कोरि सौंहैं करि जानत हैं अब करि सौंहैं अनसौंहैं कीने कब मैं।
लीजै भरि अंक जहाँ आवे भरि अंक हौ न काहू भरि अंक उर अंक देखे अब मैं॥१॥

ऐसी ना करी है काहू आज लौं अनैसी जैसी सैयद करी है ये कलंक काहि चढ़ैंगे।
दूजे को नगाबे बाजै दिल्ली में दिलीश आगे हम सुनि भागैं तौ कविंद कहाँ पढ़ैंगे॥
कहै राव बुद्ध हमैं करने हैं युद्ध स्वामि धर्म में प्रबुद्ध जेह जान जस मढ़ैंगे।
हाड़ा कहवाय कहा हारि करि कढ़ै ताते झारि शमशेर आजु रारि करि कढ़ैंगे॥२॥

ने भी इस बात को अस्वीकार किया अर्थात् कहा कि आज विपत्ति पड़ने पर तुम लोग बनियां के बालक कहकर बच गये कल विपत्ति पड़ने पर शूद्र के बालक कहोगे इस से हम लोग तुम लोग को वैश्य अर्थात् बनियां न बनावेंगे इस बात को सुनकर ये लोग बड़े विपद में पड़े और आपस में सलाह कर के न क्षत्री न वैश्य एक विचित्र जाति खत्री बन गये।

कोई कोई कहते हैं कि खात नामक राजपूत के वंश में एक वेश्या से इन लोगों की उत्पत्ति है और कोई २ कहते हैं कि नहीं ये लोग बढ़ई के वंश में हैं अर्थात् बढ़ई को खाति कहते हैं। काल प्रभाव से कुछ द्रव्य पाकर वैश्यों के गिनती में हो गये। जो हो कोई ऐसा भी कहते हैं कि खेचर नामक राजपूत के वंश में खत्री हैं। कोई कहते हैं कि ये लोग क्षत्री हई नहीं है क्योंकि परशुरामजी से जो लोग अभय पाये हैं वे लोग वैश्य क्षत्री हैं जो वैश्यवारे में रहते हैं। और खत्रियों की दास की पदवी अब तक प्रचलित है इस से ये लोग शूद्र हैं परन्तु बड़े अफसोस की बात है कि जिनका बाप दास उनके बेटा अपने को क्षत्री लिखते हैं। ठीक है "श्यार सुत सेर होत निधन कुबेर होत दीनन को फेर होत मेरु होत माटि को"। कोई कहते हैं कि यदि इन के मूल पुरुष क्षत्री थे तौ भी ये अब क्षत्री नहीं हो सकते कारण खानपान बैठब उठब सब क्षत्रियों से न्यारी है और मूल्य पुरुष तो पैठान के भी क्षत्री हैं क्योंकि प्राथियन से पैठान शब्द बना है और बेणु वंश के कोल भील खेरो आदि हैं तो क्या अब ये क्षत्री हो सकते कदापि नहीं। कोई कहते हैं कि चीनी लवण आदि का व्यापार करने से ब्राह्मण शूद्र हो जाता है तो क्षत्री होकर लवणादि बेचे तो क्या रहा। इसी भाँति से लोग अनेक प्रकार से खत्रियों की उत्पत्ति वा वर्णनिर्णय बतलाते हैं परंतु मैं इन बातों को छोड़ कर नृपवंशावली से पता देता हूँ कि ये लोग क्षत्री के वंश में हैं।

दोहा—एक समय बसुधा भई, कामधेनु को रूप।
पुलक गात रोमांच युत, झारि दियो तन कूप ॥ १ ॥
तेहि रोमांच के मूल ते, प्रगटेउ छत्री खानि।
ताको निज निज नाम सभ, विधिवत कहो बखान ॥ २ ॥

बूँदी का राजवंश

दोहा

चार वेद प्रिय चार पद चारहु जुग परमान।
जयति चतुर्भुज जासु जग विदित बंस चौहान ॥
बूँदी राज प्रसिद्ध अति राजपुताना देस।
जहँ के भारत में प्रगट हाड़ा नाम नरेस ॥
यह तिनकी बंसावली क्षत्रिन हित सानंद।
लिखी अतिहि संछेप में ग्रंथन सों हरिचंद ॥

सं० १९३९

सन् १८८५ ई० में द मेडिकल हॉल
प्रेस से मुद्रित तथा मल्लिकचंद्र
एंड को० काशी से प्रथम
वार प्रकाशित
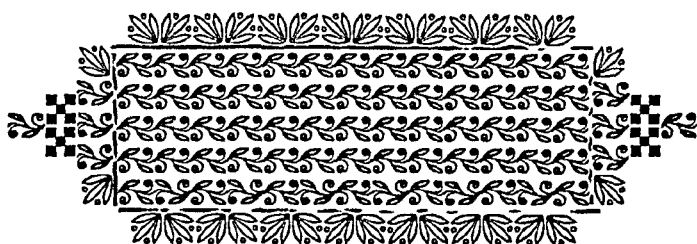
बूँदी का राजवंश

—❀—

बूँदी का राजवंश चौहान क्षत्रियों से है। इस वंश का मूल पुरुष अन्हल चौहान प्रसिद्ध है। भट्ट लोगों के मत से चौहान का शुद्ध नाम चतुर्भुज है। अन्हल अनल शब्द का अपभ्रंश है, क्योंकि अनल अग्नि को कहते हैं और आबू के पहाड़ पर जो चार क्षत्री वंश उत्पन्न किए गए वे अग्नि से उत्पन्न किए गए थे। जेम्स प्रिंसिप साहब को संदेह है कि पार्थिअन❀ (पार्थिव ?) Parthian Dynasty से यह वंश निकला है। उन्हींके मत के अनुसार ईसामसीह से ७०० वर्ष पूर्व अनल ने गढ़मंडला में राज स्थापन किया। अनल के पीछे सुवाच और फिर मल्लन हुआ (जिसने मल्लनी वंश चलाया ?) फिर गलन सूर हुआ। यहाँ तक कि ईस्वी सन् १४५ में (विराट का सं० २०२) अजयपाल ने अजमेर बसा कर राज किया। इसके पूर्व ८०० बरस और पीछे ५०० बरस ठीक ठीक नामावली नहीं मिलती। विल्फर्ड साहब के मत के अनुसार सन् ५०० ई० के अंत तक सामंतदेव, महादेव, अजयसिंह [अजयपाल ?], वीरसिंह, विंदुसूर और वैरी विहंड इन राजाओं के नाम क्रम से मिलते हैं। यदि अजय-

---

❀ और पठान शब्द भी इसी से निकला हुआ मालूम होता है, क्योंकि जो हिंदुस्तान के पास के क्षत्रियधर्म्मा मुसल्मान हैं वे ही पठान कहलाते हैं।

से इस वंश की उत्पत्ति लिखी है। ये लिखते हैं* "वशिष्ठ जी ने आबू पहाड़ पर यज्ञ किया। उस से चार उत्तम पुरुष उत्पन्न हुए, उन में से चतुभुज जी (चौहान वा चहुमान) से १५६ पीढ़ी में भोमचंद्र राजा हुआ। उस का पुत्र भानुराज राक्षसों (यवनों) की लड़ाई में मारा गया। तब आशापुरा देवी ने कृपा कर के भानुराज की अस्थि एकत्र कर के जिला दिया और तब से भानुराज का नाम अस्थिपाल हुआ। अस्थिपाल के पीछे क्रम से पृथ्वीपाल, सेनपाल, शत्रुशल्य, दामोदर, नृसिंह, हरिवंश, हरियश, सदाशिव, रामदास, रामचंद्र, भागचंद्र, रूपचंद्र, मंडन जी (जिस ने दक्षिण में मांडलगढ़ बसाया), आत्मा-राम, आनंदराम, राव हमीर, राव सुमेर, राव सरदार, राव जोधराज, राव रत्न जी, राव कोल्हण जी, राव आशुपाल, राव विजयपाल और

* अग्नि कुल की उत्पत्ति पुराणों में इस तरह लिखी है। जब परशुराम जी के मारे क्षत्रिय कुल का नाश हो गया तब उन्हों ने पृथ्वी की रक्षा के हेतु चिंता कर के आबू पर्वत पर ऋषियों से इस विषय का परामर्श कर के सब के साथ क्षीरसागर पर जा कर भगवान की स्तुति किया। आज्ञा हुई कि चार कुल उत्पन्न करो। फिर ऋषियों के साथ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और इंद्र आबू पहाड़ पर आये और वहाँ यज्ञ किया। इंद्र ने पहले अपनी शक्ति से घास का पुतला बना कर कुंड में डाला जिस से मार मार कहता हुआ भाला लिए हुए एक पुरुष निकला, जिस को ऋषियों ने प्रमार नाम देकर धार और उज्जैन का देश दिया। उसी भाँति ब्रह्मा ने वेद और खड्ग लिए हुए एक पुरुष उत्पन्न किया, एक चुलुक (चुल्लू) जल से जी उठने से इस का नाम चालुक्य हुआ और अन्हलपुर इस की राजधानी हुई। रुद्र ने तीसरा क्षत्री गंगाजल से उत्पन्न किया, यह धनुष लिए काला और कुरूप था, इस से इस का नाम परिहार रख कर पर्वतों और वनों की रक्षा इस को दी। अंत में विष्णु ने चार भुजा का एक मनुष्य चतुर्भुज नामक उत्पन्न किया। इस की राजधानी अकावती (गढ़ मंडल) हुई। इन्हीं चार पुरुषों से क्रम से पँवार, सोलंखी, परिहार और चौहान वंश हुए।

प्राचीन काल में चौहान लोगों का सामवेद, पंच प्रवर, मधु (मध्य ?) शाला वत्सगोत्र, विष्णु (श्रीकृष्ण) वंश होने से सोमवंश, अम्बिका देवी, अर्बुद अचलेश्वर शिव, भृगुलक्षण विष्णु और कालभैरव क्षेत्रपाल थे।

कश्मीर के राजाओं के वर्णन के एकत्र किए थे। नीलमुनि ने इस इतिहास में एक बड़ा सा पुराण ही बनाया था। किंतु हाय! अब वे ग्रंथ कहीं नहीं मिलते। * कश्मीर के बचे बचाये जितने ग्रंथ थे सब दुष्टों ने जला दिए। आर्य्यों की मंदिर मूर्ति आदि में कारीगरी कीर्तिस्तंभादिकों के लेख और पुस्तकों का इन दुष्टों के हाथ से समूल नाश हो गया। परशुराम जी ने राजाओं का शरीरमात्र नाश किया, किंतु इन्हों ने देह, बल, विद्या, धन, प्राण की कौन कहै कीर्ति का भी नाश कर दिया।

कल्हण ने जयसिंह के काल में सन् ११४८ ई० में राजतरंगिणी बनाई। यह कश्मीर के अमात्य चंपक का पुत्र था और इसी कारण से इस को इस ग्रंथ के बनाने में बहुत सा विषय सहज ही में मिला था।

इस के पीछे जोनराज ने १४१२ में राजावली बना कर कल्हण से लेकर अपने काल तक के राजओं का उस में वर्णन किया। फिर उसके शिष्य श्री वरराज ने १४७७ में एक ग्रंथ और बनाया। अकबर के समय में प्राज्यभट्ट ने इस इतिहास का चतुर्थ खंड लिखा। इस प्रकार चार खंडों में यह कश्मीर का इतिहास संस्कृत में श्लोकबद्ध विद्यमान है।

महाराज रणजीत सिंह के काल में जान मैकफेयर नामक एक यूरोपीय विद्वान ने कश्मीर से पहले पहल इस ग्रंथ का संग्रह किया। विल्सन साहब ने एशियाटिक रिसर्चेज में इस के प्रथम छ सर्ग का अनुवाद भी किया था।

इसी राजतरंगिणी ही से यह इतिहास मैं ने लिखा है। इस में केवल राजाओं के समय और बड़ी बड़ी घटनाओं का वर्णन है। आशा है कि कोई इस को सविस्तर भी निर्माण कर के प्रकाश करैगा।

राजतरंगिणी छोड़ कर और और भी कई ग्रंथों और लेखों से इस में संग्रह किया है। यथा आइने अकबरी,......का फारसी इतिहास,

---

* नीलमुनि का नीलमत पुराण अब मिल गया है। (सं०)

अपने चचा लोगों से लिया। राव सूरजमल ने संवत् १५८४ (1533 A. D.) में भट्ट लोगों के मत से महाराना रत्न सिंह जी का वध किया, किंतु जेम्स प्रिंसिप साहब के मत से महाराना ने इन्हें मारा। इस से संभव होता है कि इन दोनों राजाओं में ऐसा घोर बैर हुआ कि दोनों मृत्यु के परस्पर कारण हुए। राव राजा सुरतान जी सं० १५८८ [1537 A. D.], यह पागल थे, इस से पंचों ने इन को राव से अलग कर के नारायणदास के पुत्र अर्जुनराव को राजा किया। इन के बहुत थोड़े ही समय राज के पीछे चित्तौर की लड़ाई में मारे जाने से राजावली में इन की गिनती नहीं हुई। राव राजा सुरजन जी सं० १६११ [1560 A. D.], इन्हों ने महाराजाधिराज अकबर से काशी और चुनार पाया और काशी में राजमंदिर बसाया। राव राजा भोज सं० १६४२, इनके समय से कोटा और बूँदी का राज अलग हुआ। राव रतन जी सं० १६६४ (T. 1613 A. D.), इनके पुत्र कुँवर माधवसिंह ने जहाँगीर से कोटा पाया और कुँअर गोपीनाथ युवराज हुए। कुँअर गोपीनाथ भी [सं० १६७१] युवराजत्व के समय ही में शांत हुए, इस से उन के पुत्र रावराजा शत्रुशाल राव रतन जी के गोद बैठे (सं० १६८८) और माधव सिंह कोटा के राजा हुए। यह राजा शत्रुशाल [प्रसिद्ध छत्रसाल] बड़ा वीर हुआ है, जिस ने कुलबर्गा जीता और उज्जैन की प्रसिद्ध लड़ाई में १२ राजाओं के साथ मारा गया, * राव राजा भावसिंह सं० १७१५ (1658 A. D) इन्हों ने औरंगजेब से औरंगाबाद की सूबेदारी पाया। राव राजा अनरुद्धसिंह सं० १७३८ (P. 1681 A. D.), ये भावसिंह के छोटे भाई के पौत्र थे। राव राजा

---

*दारासाहि औरंग जुरे हैं दोऊ दिल्ली दल एकै गए भाजि एक रहे रूँधि चाल में।
भयो घोर युद्ध उद्ध माच्यो अति दुंद जहाँ कैसहु प्रकार प्रान बचत न काल में॥
हाथी तें उतरि हाड़ा जूझ्यो लोह लंगर दै एती लाज का मैं जेती लाज छत्रसाल में।
तन तरवारन में मन परमेश्वर में प्रन स्वामि कारज मैं माथो हर माल में॥

आई० और "काउन्सेलर आफ़ दी इम्प्रेस" (राजराजेश्वरी के सलाह-कार) की उपाधि दिल्ली के दरबार में (1877 A. D.) मिली।❀

कोटा की शाखा।

राव माधोसिंह सन् १५७६ ई०
राव मुकुंद सिंह सन् १६३० ई०
राव जगतसिंह सन् १६५७ ई०
राव किशवर (किशोर) सिंह सन् १६६६ ई०
राव रामसिंह सन् १६८५ ई०
राव भीमसिंह सन् १७०७ ई०
महाराव अर्जुनसिंह सन् १७१६ ई०
महाराव दुर्जनशाल (निस्संतान)
महाराव अजीतसिंह (विष्णुसिंह के पोते)
महाराज छत्रसाल
महाराज गुमानसिंह सन् १७६५ (अपने भाई छत्रसाल की गद्दी पर बैठे) जालिमसिंह इनके फौजदार थे।
महाराव उमेदसिंह सन् १७७० ई०
महाराव किशोरसिंह सन् १८१६ ई०
महाराव उम्मेदसिंह सन् १८८६ ई० (सं०)

❀ सन् १८८६ ई० में महाराव राजा रघुवीर सिंह गद्दी पर बैठे। इनका जन्म सन् १८६८ ई० में हुआ था। (सं०)

जैतसिंह को पिनशिन मिली और जंबू का राज्य लाहौर में मिल गया। जैतसिंह के पुत्र रघुबीरदेव के पुत्र पौत्र अब अंबाले में हैं और सर्कार अँगरेज से पिनशिन पाते हैं। ध्रुवदेव के दूसरे पुत्र सूरतसिंह को जोरावर सिंह और मियाँ मोटासिंह दो पुत्र थे। मियाँ मोटा को विभूतिसिंह और उन को एक पुत्र व्रजदेव हैं, जिन को वर्त्तमान महाराज जंबू ने कैद कर रक्खा है। जोरावरसिंह को किशोरसिंह और उन को तीन पुत्र हुए, गुलाबसिंह, सुचेतसिंह और ध्यानसिंह। महाराज गुलाबसिंह ने महाराजाधिराज रणजीतसिंह से जंबू का राज्य फिर पाया। सुचेतसिंह का वंश नहीं रहा। राजा ध्यानसिंह को हीरासिंह, जवाहरसिंह और मोतीसिंह हुए, जिन में राजा मोतीसिंह का वंश है। महाराज गुलाबसिंह के उद्धवसिंह, रणधीरसिंह और रणवीरसिंह तीन पुत्र हुए। प्रथम दोनों नौनिहालसिंह और राजा हीरासिंह के साथ क्रम से मर गए, इस से महाराज रणवीरसिंह वर्त्तमान जंबू और कश्मीर के महाराज ने राज्य पाया। इन के एक वैमात्रेय भाई मियां हट्ठूसिंह हैं, जिन को महाराज ने कैद कर रक्खा था, पर सुनते हैं कि आज कल वह कैद से निकल कर नैपाल प्रांत में चले गए हैं। सन् १८६१ में महाराज को जी० सी० एस० आई० का पद सरकार ने दिया और १८६२ में दत्तक लेने का आज्ञापत्र भी दिया। इन को २१ तोप की सलामी है। दिल्ली दरवार में इन को और भी अनेक आदर-सूचक पद मिले हैं। ये संस्कृत विद्या और धर्म के अनुरागी हैं। इन को तीन पुत्र हैं यथा युवराज प्रतापसिंह, कुमार रामसिंह और कुमार अमरसिंह*।

---

* वर्त्तमान महाराज के परिषदवर्ग भी उत्तम हैं। इन के एक बड़े शुभ-चिंतक पंडित रामकृष्ण जी को कई वर्ष हुए लोगों ने षड्चक्र कर के राज्य से अलग कर दिया था और अब उन के पुत्र पंडित रघुनाथ जी काशी में रहते हैं। महाराज के अमात्य दीवान ज्वाला सहाय के पौत्र दीवान कृपाराम के पुत्र अनंतराम जी हैं, जो अँगरेजी फारसी आदि पढ़े और सुचतुर हैं। बाबू नीलाम्बर मुकुर्जी, पंडित गणेशचौबे प्रभृति और भी कई चतुर लोग राज्यकार्य में दक्ष हैं।

काश्मीर कुसुम

अथवा

राजतरंगिणी-कमल

'कोऽन्यः कालमतिक्रांतं नेतुं प्रत्यक्षतां क्षमः ।
कवीन् प्रजापतींस्त्यक्त्वा रम्यनिर्माणशालिनः' ॥
'भुजतरुवन छायां येषां निषेव्य महौजसां ।
जलधिरसनामेदिन्यासीदसावकुतोभया ॥
स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा विना यदनुग्रहं ।
प्रकृतिमहते कुर्मस्तस्मै नमः कविकर्मणे' ॥

सं० १९३९

ने गांधार देश के स्वयंवर में मारा और इस की सगर्भा रानी को राज्य पर बैठाया। इस समय श्रीकृष्ण ने कश्मीर की महिमा में एक पुराण का श्लोक कहा। (१ त० ३२ श्लोक) यही प्रकरण इस बात का प्रमाण है कि कश्मीर का राज्य बहुत दिन से प्रतिष्ठित है। इस रानी के पुत्र

छप्पय—मद्रक सुंभक पनस किंपुरुस द्रुम नृप कोसल,
सोमदत्त बाल्हीक भूरि सह भूरिस्रवा सल।
युधामन्यु गोनर्द अनामय पुनि उतमौजा,
चेकितान अरु अंग बंग कालिंग महौजा।
नृप बृहत छत्र कैसिक मुदित आहुति सहित भुआल सब
चढ़ि लरैं द्वार पश्चिम जबर, अरि पश्चिम गति देन दब॥

(१० सर्ग के छंद)

कैसिक नृप अति विक्रमवंत। अरिमरदन संग मिल्यो तुरंत॥
धरम बृद्ध गोनर्द महीप। करन लगे रथ जोरि समीप॥ ११॥

हरिगीत छंद—तहँ काश्मीरी भूमिपति गोनर्द धनु टंकारि कै।
भट धर्म बृद्धहि छाय दीनो मारु मारु पुकारि कै।
सुफलक सुवन धनु धारि निज अहि सरिस बान प्रहारिकै।
सब काटिकै दुसमन बिसिख महि मध्य दीनो डारिकै॥ ६५॥
गोनर्द तब बोलत भयो तू ज्ञान प्रगट लखात है।
क्यों धर्म्म बृद्ध कहात है आचरज यह अधिकात है।
पै एक बात बिचारि करि संदेह मेरो जात है।
रन धरम बृद्धन को धरै अति सिथिल तेरो गात है॥ ६६॥
जदुवीर अब बोलत भयो नृप साँच तोहि बातैं कहै।
हम धर्म बृद्ध कहात हैं पै करम बृद्ध नहीं अहैं।
अरु धर्म बृद्ध को नाम है सो बृद्ध बहु दिन को भयो।
गोनरद तू रद रहित बूढ़ो पतिहि क्यों चाहै नयो॥ ६७॥
इमि बचन सुनि सुफलक सुवन के कासमीरी कोपि कै।
बहु बरखि आयुध बारिधर सम दियो पर रथ लोपि कै।
तिमि धर्म बृद्ध बजाय धनु सर त्याग कीने चोपि कै।
गोनर्द सत्र उड़ायकै गरज्यो बिजय पन रोपि कै॥ ६८॥

DEDICATION.

—❀—

हे सौभाग्य काश्मीर,

केवल ग्रंथकर्त्ता ही से नहीं इस ग्रंथ से भी तुम से अनेक संबंध हैं। तुम कुसुम जाति हौ, यह ग्रंथ भी। काश्मीर के क्षेत्र से दर्शकों का मन प्रसन्न होता है, तुम्हारे दर्शन से हमारा। कश्मीर इस पृथ्वी का स्वर्ग है, तुम हमारे हेतु इस पृथ्वी में स्वर्ग हौ। यह ग्रंथ राजतरंगिणी कमल है, तुम वर्ण से राजतरंगिणी कमला ही नहीं हमारी आशाराज-तरंगिणी में कमल हो। तरंगिणी गण की रानी भोगवती भागीरथी है, तुम हमारी हृदयपातालवाहिनी राजतरंगिणी हौ। कश्मीर भू स्वर्णमयी नीलमणि-प्रभवा है, तुम भी इन्हीं अनेक संबंधों से समझो या केवल हमारे हृदय संबंध से यह ग्रंथ तुम को समर्पित है।

और फिर जी गया इत्यादि। विक्रमादित्य के मरने के थोड़े ही समय पीछे प्रवरसेन राजा ने नाव का पुल बाँधा और वह ललाट में त्रिशूल की भाँति तिलक देता था (३ त० ३५६ और ३६७ श्लो०)।

जयापीड़ राजा का समय फिर ध्यान देने के योग्य है, क्योंकि इस के समय में कई पंडित हुए हैं, जिनमें शंकु नामक कवि ने मम्म और उत्पल की लड़ाई में भुवनाभ्युदय नामक काव्य बनाया था। (४ त० २५ श्लो०) इसी समय में वामन नामक वैयाकरण पंडित हुआ है जिस की कारिका प्रसिद्ध है। (४ त० ४८७ से ४६४ श्लो० तक) इसी वामन का वोपदेव ने खंडन किया है। (वोपदेव महाग्राहग्रस्तो वामने कुंजरः) इस से वोपदेव जयापीड़ के समय (७५ ई०) के पीछे हुए हैं यह सिद्ध होता है। जयापीड़ ने द्वारका फिर से बसा कर मंदिर बनवाए। (४ त० ५६० श्लो०) और उस समय नेपाल का राजा अरमुड़ि था (४ त० ५२६ श्लो०)।

राजा शंकरवर्मा का समय भी दृष्टि देने योग्य है। इस के पास ३०० हाथी, लाख घोड़े और नौ लाख प्यादे थे। उस समय गुजरात में 'खानाल खान' का जोर था। दरद और तुरुष्क देश के राजा भारत में बड़ा उपद्रव मचाए हुए थे। लल्लियशाह खानालखान का सर्दार था (५ त० १५३ से १६० श्लो० तक)। इस ग्रंथ में मुसलमानों का वर्णन पहले यहीं आया है। इस से स्पष्ट होता है कि ईस्वी नवीं शताब्दी के अंत तक जो मुसलमान चढ़ाई करते थे वे गुजरात की राह से करते थे; उत्तर पच्छिम की राह नहीं खुली थी। इस तरंग में कायस्थों की बड़ी निंदा की है (४ त० ६२५ श्लो० से और ५ त० १७६ श्लो० आदि)।

चतुर्थ और पंचम तरंग में कई बात और दृष्टि देने के योग्य है। जैसे ताँबे की 'दीनार' पर राजाओं का नाम खुदा रहना। (४ त० ६२० श्लो०) जहाँ पथिक टिकें उस स्थान का नाम गंज (४ त० ५६२ श्लो०)। रुपयों की हुंडिका (हुंडी) का प्रचार। (५ त० १५६ श्लो०) मेष के ताजे चमड़े पर खड़े होकर तलवार ढाल हाथ में लेकर शपथ खाना इत्यादि (५ त० ३२० श्लो०)। इसी तरंग में गानेवालों का नाम

भूमिका

भारतवर्ष के निर्मल आकाश में इतिहासचंद्रमा का दर्शन नहीं होता, क्योंकि भारतवर्ष की प्राचीन विद्याओं के साथ इतिहास का भी लोप हो गया। कुछ तो पूर्व समय में शृंखलाबद्ध इतिहास लिखने की चाल ही न थी और जो कुछ बचा बचाया था वह भी कराल काल के गाल में चला गया। जैनों ने वैदिकों के ग्रंथ नाश किये और वैदिकों ने जैनों के। एक राजधानी में एक वंश राज्य करता था। जब दूसरे वंश ने उसको जीता तो पहले वंश की संपूर्ण वंशावली के ग्रंथ जला दिए। कवियों ने अपने अन्नदाता की झूठी प्रशंसा की, कहानी जोड़ लीं और उन के जो शत्रु थे उनकी सब कीर्ति लोप कर दीं। यह सब तो था ही, अंत में मुसलमानों ने आकर जो कुछ बचे बचाये ग्रंथ थे जला दिए। चलिए छुट्टी हुई। ऐसी काली घटा छाई कि भारतवर्ष के कीर्तिचंद्रमा का प्रकाश ही छिप गया। हरिश्चन्द्र, राम, युधिष्ठिर ऐसे महानुभावों की कीर्ति का प्रकाश अति उत्कट था इसी से घनपटल को वेध कर अब तक हम लोगों के अँधेरे हृदय को आलोक पहुँचाता है। किंतु ब्रह्मा से ले कर आज तक और जितने बड़े बड़े राजा या वीर या पंडित या महानुभाव हुए किसी का समाचार ठीक ठीक नहीं मिलता। पुराणादिकों में नाम मिलता है तो समय नहीं मिलता।

ऐसे अँधेरे में काश्मीर के राजाओं के इतिहास का एक तारा जो हम लोगों को दिखलाई पड़ता है इसी को हम कई सूर्य से बढ़कर समझते हैं। सिद्धांत यह कि भारतवर्ष में यही एक देश है, जिसका इतिहास शृंखलाबद्ध देखने में आता है और यही कारण है कि इस इतिहास पर हमारा ऐसा आदर और आग्रह है।

कश्मीर के इतिहास में कल्हण कवि की राजतरंगिणी ही मुख्य है। यद्यपि कल्हण के पहले सुव्रत, क्षेमेंद्र, हेलाराज, नीलमुनि, पद्ममिहिर और श्री छविल्लभट्ट आदि ग्रंथकार हुए हैं, किंतु किसी के ग्रंथ अब नहीं मिलते। कल्हण ने लिखा है कि हेलाराज ने बारह हजार ग्रंथ

बात का आग्रह होता था कि उन्हीं के नाम के सिक्के का प्रचार विशेष हो। इस समय (बारहवीं शताब्दी के मध्य में) कालिंजर का राजा कल्ह था। (८ त० २०५ श्लो०) हर्ष का सिर काट कर लोगों ने भाले पर चढ़ाया, किंतु इस के पहिले किसी राजा के सिर काटने की चाल नहीं थी। हर्ष का व्याख्यान इस तरंग में अवश्य पढ़ने के योग्य है, जिस से शृंगार, वीर आदि रसों का हृदय में उदय हो कर अंत में वैराग्य आता है।

राजतरंगिणी में राम लक्ष्मण की मूर्त्ति का पृथ्वी के भीतर से निकलना इस बात का प्रमाण है कि मूर्त्तिपूजा यहाँ बहुत दिन से प्रचलित है।

इस में देवी, देवता, भूत, प्रेत और नागों की अनेक प्रकार की आश्चर्य कथा हैं जिन को ग्रंथ बढ़ने के भय से यहाँ नहीं लिखा। और भी वृक्ष, शस्त्र, औषधि और मणि आदिकों के अनेक प्रकार के वर्णन हैं। कोई महात्मा इस का पूरा अनुवाद करैंगे तो साधारण पाठकों को इस का पूर्ण आनंद मिलैगा।

इस में एक मणि का वर्णन बड़ा आश्चर्यजनक है। एक बेर राजा नदी पार होना चाहता था किंतु कोई सामान उस समय नहीं था। एक सिद्ध मनुष्य ने जल में एक मणि फेंक दी, उस से जल हट गया और सैना पार उतर गई। फिर दूसरी मणि के बल से इस मणि को उठा लिया। एक कहानी ऐसी और भी प्रसिद्ध है कि किसी राजा की अँगूठी पानी में गिर पड़ी। राजा को उस अमूल्य रत्न का बड़ा शोच हुआ। यह देखकर मंत्री ने अपनी अंगूठी डोरे में बाँधकर पानी में डाली। मंत्री के अँगूठी के रत्न में ऐसी शक्ति थी कि अन्य रत्नों को वह खींच लेती थी, इस से राजा की अँगूठी मिल गई।

—※—

हर्षदेव।

हर्षदेव के विषय में यद्यपि राजतरंगिणी में कुछ विशेष नहीं लिखा है किंतु इस राजा का नाम भारतवर्ष में बहुत प्रसिद्ध है और एक इस

एशियाटिक सोसाइटी के पत्र, विल्सन, विल्फर्ड, प्रिंसिप, कनिंगहम, टॉड, विलिअम्स, गोशेन और ट्रायर आदि के लेख, बाबू जोगेशचन्द्रदत्त की अंगरेजी तवारीख, दीवान कृपाराम जी की फारसी तवारीख आदि ।

बहुतों का मत है कि कश्मीर शब्द कश्यपमेरु का अपभ्रंश है। पहले पहल कश्यप मुनि ने अपने तपोबल से इस प्रदेश का पानी सुखा कर इस को बसाया था। इन के पीछे गोनर्द तक अर्थात् कलियुग के प्रारंभ तक राजाओं का कुछ पता नहीं है। गोनर्द से ही राजाओं का नाम शृंखलाबद्ध मिलता है। मुसल्मान लेखकों ने इस के पूर्व के भी कई नाम लिखे हैं, किंतु वे सब ऐसे अशुद्ध और प्रति शब्द में खाँ उपाधि विशिष्ट हैं कि उन नामों पर श्रद्धा नहीं होती।

गोनर्द से लेकर सहदेव तक पूर्व में सैंतीस सौ बरस के लगभग डेढ़ सौ हिंदू राजाओं ने कश्मीर भोगा, फिर पूरे पाँच सौ बरस मुसल्मानों ने इस का उत्पीड़न किया। (बीच में बागी हो कर यद्यपि राजा सुखजीवन ने ८ बरस राज्य किया था पर उसकी कोई गिनती नहीं) फिर नाममात्र को कश्मीर कुस्तानी राज्यभुक्त होकर आज चौंसठ बरस से फिर हिंदुओं के अधिकार में आया है। अब ईश्वर सर्वदा इस को उपद्रवों से बचावै। एवमस्तु।

आश्चर्य नहीं। प्रशस्ति के 'क्ष्मापालमाला सुदिवंगतासु' इस पद से ऐसा झलकता भी है। यशोविग्रह से लेकर जयचंद तक नामों में जितनी प्रशस्ति मिली हैं उन में बड़ा ही अंतर है। जो ताम्रपत्र मैंने देखा है उस का क्रम यह है—यशोविग्रह, महीचंद, चंद्रदेव, मदनपाल, गोविंदेंद्र और जयचंद्र। जैनों ने इसी जयचंद्र को जयंतीचंद्र लिखा है और काशी का राजा लिखने का हेतु यह है कि 'तीर्थानि काशीकुशिकोत्तरकौशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य' इस पद से स्पष्ट है कि काशी भी उस समय कन्नौजवालों के अधिकार में थी, इसी से काशी का राजा लिखा। और जयचंद्र के प्रपितामह या उस के भी पिता के काल में जो श्रीहर्ष कवि था उस को जयचंद्र के काल में लिख दिया। छतरपुर की लिपि में जो श्रीहर्ष राजा का पुत्र यशोधर्म वा वर्म लिखा है, वही यशोविग्रह मान लिया जाय और जयचंद्र उस के बड़े पुत्र का वंश और छतरपुर की लिपि वाले छोटे पुत्र के वंश में हैं, ऐसा मान लीजिए तो विरोध मिट जायगा। चंद्रदेव ने 'श्रीमद्गाधिपुराधिराज्यमखिलं दोर्विक्रमेनार्जितम्' इस पर से कान्यकुब्ज का राज्य अपने बल से पाया यह भी झलकता है। इस से यह भी संभव है कि श्रीहर्ष का राज्य कन्नौज में शेष न रहा हो और चंद्रदेव ने नए सिरे से राज्य किया हो। यशोविग्रह के वंश की कई शाखा हैं इस का प्रमाण प्रशस्तियों के भिन्न भिन्न नामों ही से है। इस से ऐसा निश्चय होता है कि संवत् ६०० के लगभग जो श्रीहर्ष नामक कान्यकुब्ज का राजा था, उसी के हेतु रत्नावली आदि ग्रंथ बने हैं *। कालिदास, विक्रम, भोज सब इस काल के सौ बरस के आस पास पीछे उत्पन्न हुए हैं और इसी से कालिदास ने मालविकाग्निमित्र में धावक का परिचय दिया है। कल्हण कवि ने जो राजतरंगिणी में कालिदास या इस श्रीहर्ष का नाम नहीं दिया उस का कारण यही है कल्हण का स्वभाव असहिष्णु था और कालिदास से कश्मीर के राजा भीमगुप्त से (जो ६७५ ई० के काल में राज्य करता था) महा वैर था, इस से उस ने कालिदास का या उस के

---

* पूर्व में तुंजीन के काल में एक हर्ष हुआ है यह लिख भी आए हैं।
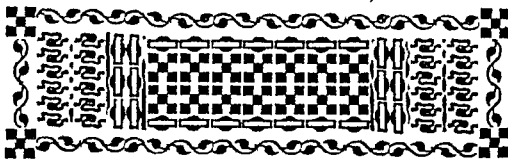
कश्मीर की संक्षिप्त वंशपरंपरा

कश्मीर के वर्त्तमान महाराज की संक्षिप्त वंशपरंपरा यों है। ये लोग कछवाहे क्षत्री हैं। जैपुर प्रांत से सूर्यदेव नामक एक राजकुमार ने आकर जंबू में राज्य का आरंभ किया। उस के वंश में भुजदेव, अवतारदेव, यशदेव, कृपालुदेव, चक्रदेव, विजयदेव, नृसिंहदेव, अर्जुनदेव और जयदेव ये क्रम से हुए। जयदेव का पुत्र मालदेव बड़ा बली और पराक्रमी हुआ। इस ने हँसी हँसी में पचास मन के जो पत्थर उठाए हैं वह उस की अचल कीर्त्ति बन कर अब भी जंबू में पड़े हैं। उस के पीछे हंबीरदेव, अजेय्यदेव, वीरदेव, घोड़ादेव, कर्पूरदेव और सुमहलदेव क्रम से राजा हुए। सुमहल के पुत्र संग्रामदेव ने फिर बड़ा नाम किया। आलमगीर इन की वीरता से ऐसा प्रसन्न हुआ कि महाराजगी का पद छत्र चँवर सब कुछ दिया। ये दक्षिण की लड़ाई में मारे गए। इन के पुत्र हरिदेव ने और उनके पुत्र गजसिंह ने राज को बहुत ही बसाया। सब प्रकार के नियम बाँधे और महल बनवाए। गजसिंह के पुत्र ध्रुवदेव ने बहुत दिन तक ऐश्वर्यपूर्वक राज्य किया। ध्रुवदेव के रणजीतदेव और सूरतसिंह पुत्र थे। रणजीतदेव को व्रजराजदेव और उन को निज परंपरासंपूर्णकारी संपूर्णदेव हुए। संपूर्णदेव को संतति न होने के कारण रणजीतदेव के दूसरे पुत्र दलेलसिंह के पुत्र जैतसिंह ने राज्य पाया। महाराज रणजीतसिंह लाहोरवाले के प्रताप के समय में

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	डुबर के मत से समय	कनिंङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
१	आदि गोनर्द	६८८॥	०	०	१४००ई० पूर्व	३५।६	२५४८ ईसवी पूर्व, जरासंध के युद्ध में बलदेव जी ने मारा, प्रिंसिप के मत से १०४५ ई० पू०, नामांतर गोनंद वा अंगद, फारसीवालों के मत से राज्य १७ बरस; मुसल्मानों का नाम आदि गंद।
२	दामोदर	७२४	०	०	०	३०	गंधार देश के स्वयंवर में श्री कृष्ण ने इस को मारा और इस की यशोवती रानी को जो सगर्भा थी राज्य पर बैठाया।
३	बालगोनर्द*	७५४	०	०	०		श्री कृष्ण ने आप आकर राज पर बैठाया. महाभारत के युद्ध में विद्यमान था।
३८	पैंतीस राजे*	१४६४	०	०	०	७१०*	इनके नाम कर्म कुछ भी विदित नहीं. मुसल्मानों के मत से ये पैंतीस नहीं सैंतीस थे और पांडव वंश में थे।
३९	लव	१४९९	०	०	५७०	३।८	लोलूर बसाया. नामांतर बाललव. मुसल्मानों का लू, लोलूर में बीस लाख अस्सी हज़ार मनुष्यों की बस्ती थी. १७०६ ई० पू०।

इस चक्र में राजाओं के नाम पर जहाँ ※ ऐसा चिन्ह दिया है वहाँ समझना चाहिए कि पूर्व वंश समाप्त होकर आगे से नया वंश चला।

* तीसरे से अड़तीसवें राजा तक का राज्यकाल (सं०)

राजतरंगिणी की समालोचना

जिस महाग्रंथ के कारण हम लोग आज दिन कश्मीर का इतिहास प्रत्यक्ष करते हैं उसके विषय में भी कुछ कहना यहाँ बहुत आवश्यक है। इस ग्रंथ को कल्हण कवि ने शाके एक हजार सत्तर १०७० में बनाया था। उस समय तीसरे गोनर्द से तेईस सौ तीस बरस बीत चुके थे। इस ग्रंथ की संस्कृत क्लिष्ट और एक विचित्र शैली की है। कवि के स्वभाव का जहाँ तक परिचय मिला है ऐसा जाना जाता है कि वह उद्धत और अभिमानी था, किंतु साथ ही यह भी है कि उस की गवेषणा अत्यंत गंभीर थी। नीलपुराण छोड़ कर ग्यारह प्राचीन ग्रंथ इस ने इतिहास के देखे थे। केवल इन्हीं ग्रंथों के भरोसे इस ने यह ग्रंथ नहीं बनाया वरंच आजकल के पुरातत्ववेत्ता (Antiquarian) की भाँति प्राचीन राजाओं के शासनपत्र, दानपत्र तथा शिवालय आदि की लिपि भी इसने देखी थी। (प्रथम तरंग १५ श्लोक देखो) यह मंत्री का पुत्र था, इस से संभव है कि इन वस्तुओं को देखने में इसको इतना परिश्रम न पड़ा होगा जितना यदि कोई साधारण कवि बनाता तो उसको पड़ता। इस ग्रंथ में आठ हजार श्लोक हैं। साढ़े छ सौ बरस कलियुग बीते कौरव-पांडवों का युद्ध हुआ था, यह बात इसी ने प्रचलित की है। जरासंध के युद्ध में कश्मीर का पहला राजा गोनर्द मारा गया। यहाँ से कथा का आरंभ है *। इसी आदि गोनर्द के पुत्र को श्रीकृष्ण

* इस ग्रंथकर्त्ता के पिता श्रीयुत कविवर गिरिधरदास जी ने अपने जरासंध-वध नामक महाकाव्य में जरासंध की सैना में कश्मीर के आदि गोनर्द के वर्णन में कई एक छंद लिखा हैं वह भी प्रकाश किया जाता है। (३ सर्ग ४० छंद)

चलेउ भूप गोनर्द वर्द्वाहन समान बल,
संग लिये बहु मर्द सर्द लखि होत अपर दल।
फेंटा सीस लपेटा गल मुकुता की माला,
सिर केसर को पुंड्र धरे पचरंग दुसाला।
रथ चारु जराऊ सोहतो रूप सबन मन मोहतो,
कश्मीर भूप भरि रिसि लसी मथुरापुर दिसि जोहतो॥

(६ सर्ग २५ छंद)

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंड्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
५२	हुष्क, जुष्क और कनिष्क*	१९४२।९	०	०	०	३५	१२७७ ई० पू० ये तीनों तुर्क (किंवा तातार) थे किंतु बौद्ध थे। शाक्यसिंह को १५० बरस हुए थे। नागार्जुन सिद्ध इन्हीं के समय में हुआ और बौद्धमत को फैलाया।
५३	अभिमन्यु	१९७७।९	०	०	०	३५	मुसल्मानों का अभिगुन वा अभिवलन। १२१७ ई० पू० विल्फर्ड के मत से ४२३ ई० पू० प्रिंसिप के मत से से ७३ ई० पू० बौद्धों का उपद्रव हुआ, हिम बहुत पड़ा, चंद्रदेव ब्राह्मण ने बौद्धों को जीता, नीलपुराण सुना, महाभाष्य का प्रचार हुआ।
५४	गोनर्द (३)	२०१२।९	११८२ ई० पूर्व	५३।३ ई० सन	११८२ ई० पूर्व	४५।६	प्रिंसिप के मत से १०८ ई० पू०, मुसल्मानों ने इसका नाम कृष्ण लिखा है। विल्फर्ड के मत से ३८८ ई० पू० नागपूजा चलाया।
५५	विभीषण	२०५८।२	११४७	६१।९	११४७	३०।६	विल्फर्ड के मत से ३७० ई० पू०। मुसल्मानों के मत से पखनपति नाम राज्यकाल ५३। ६। ७।
५६	इंद्रजित्	२०८८।९	१०९३।६	७३।१	१०९६	३०।६	वि० ३५२। मुसल्मान लेखकों ने इन्द्रजित रावण इन दोनों का राज्य ३६ वर्ष लिखा है।
५७	रावण	२११९।२	१०५८	७३।१	१०६०।६	३५	वि. ३१४. मुसल्मानों ने इसके बेटे बरवाल का नाम और लिखा है और उसका राज्य भी ३५ बरस लिखा है।

का नाम द्वितीय गोनर्द हुआ, जो महाभारत के युद्ध में मारा गया। इसी से स्पष्ट है कि पूर्वोक्त तीनों राजा जवानी ही में मरे, क्योंकि एक पांडवों के काल में तीनों का वर्णन आया है। इन लोगों के अनेक काल पीछे अशोक राजा जैनी हुआ। इसी ने श्रीनगर बसाया। इस के पीछे जलौकराजा प्रतापी हुआ, जिसने कान्यकुब्जादि देश जीता। यह शैव था। (भारतवर्ष में मूर्तिपूजा और शैव वैष्णवादि मत बहुत ही थोड़े काल से चले हैं यह कहने वाले महात्मागण इस प्रसंग को आँख खोल कर पढ़ैं) (१ त० ११३ श्लो०)। फिर हुष्क, जुष्क और कनिष्क ये तीन विदेशी (Bactro-Indian tribe) राजा हुए। इनके समय में शाक्य सिंह को हुए डेढ़ सौ बरस हुए थे। (१ त० १७२ श्लोक) इससे स्पष्ट होता है कि राजतरंगिणी के हिसाब से शाक्यसिंह को हुए पचीस सौ बरस हुए। इसी समय में नागार्जुन नामक सिद्ध भी हुआ। इनके पीछे अभिमन्यु के समय में चंद्राचार्य ने व्याकरण के महाभाष्य का प्रचार किया और एक दूसरे चंद्रदेव ने बौद्धों को जीता। कुछ काल पीछे मिहिरकुल नामक एक राजा हुआ। इस के समय की एक घटना विचारने के योग्य है। वह यह कि इस की रानी सिंहल का बना रेशमी कपड़ा पहने थी। उस पर वहाँ के राजा के पैर की सोनहली छाप थी। इस पर कश्मीर के राजा ने बड़ा क्रोध किया और लंका जीतने चला। तब लंकावालों ने 'यमुपदेव' नामक सूर्य के बिंब के छापे का कपड़ा दे कर उस से मेल किया। (१ त० ३०० श्लोक) इस से स्पष्ट होता है कि चाँदी सोने से कपड़ा छापना लंका में तभी से प्रचलित था। अद्यापि दक्षिण हैदराबाद में (लंका के समीप) छापा अच्छा होता है। उस समय तक भट्टि (Bhatti), दारद (Dardareans) और गांधार (Kandharians) ब्राह्मण होते थे।

फिर तुंजीन नामक राजा के समय में चंद्रक कवि ने नाटक बनाया। (२ त० १६ श्लो०) इस के समय में एक बात और आश्चर्य की लिखी है कि एक समय बड़ा काल पड़ा था तो परमेश्वर ने कबूतर बरसाये थे। (२ त० ५१ श्लो०) और हर्ष नामक एक कोई और राजा उस काल में हुआ था। इस राजा के कुछ काल पीछे संधिमान राजा की कथा भी बड़ी आश्चर्य की लिखी है कि वह सूली दिया गया था

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
६६	बक	२५४८।१	६३४।८	१७४।८	६३५।२	३०	वि. १८२, मुसल्मानों का जंग। इस को एक स्त्री ने बलि दे दिया।
६७	क्षितिनंदन	२५७८।१	५७१।८	१८७।८	५७२।२	५२	वि. १६४, क्षितिनंद वा नंदन. मुसल्मानों का आनंद-कांत. इसका बेटा कतानंद, उस को बसुनंद हुआ।
६८	वसुनंद	२६३०।१	५४१।८	१६५।२	५४२।२	६०	वि. १४६, आईने अकबरी का विस्तंद कामशास्त्र बनाया।
६९	नर (२)	२६६०।१	४८४।६	२०८।२	४६०	६०	वि. १२८, नामांतर बर, आईने अकबरी का निर।
७०	अक्ष	२७५०।१	४२६।६	२२३।२	४३०	६०	वि. १००, आईने अकबरी का अज। मुसल्मान इतिहास-लेखकों ने इसका नाम लिखा ही नहीं है।
७१	गोपादित्य	२८१०।१	३६६।६	२३८।२	३७०	५७	वि. ८२ ई० पू० आईने अकबरी का कुलवती, मुसल्मानों का कोमानंद, वैदिक धर्म की उन्नति की।
७२	गोकर्ण	२८६७।१	३०६।६	२५३।२	३१०	३६।३	वि. ६४ ई० पू० आ० अ० का करन।
७३	नरेंद्रादित्य	२९०३।४	२५१।७	२६६।११	२५३	३४	वि. ४: ई० पू० आ० अ० का नरेंद्रावत, मुसल्मानों का नरानंद, नामांतर लिखिल।
७४	अंधयुधिष्ठिर *	२९३७।४	२१५।४	२७९	२१६।९	३२	वि. २८ ई० पू० अंधसंज्ञा कमती सूझने से हुई, विषयी था। अंत में राज्य छोड़ कर भाग गया।

डोम लिखा है। (५ त० ३५८ श्लो०) यह दीनार, गंज, हुंडी और डोम शब्द अब तक भाषा में प्रचलित हैं, वरंच मीरहसन ने भी 'डोमनपना' लिखा है। जैसा इस काल में रंडी और इन की बुढ़िया तथा भँडुओं के समझने की और साधारण लोग जिस में न समझें * ऐसी एक भाषा प्रचलित है, वैसी ही उस काल में भी थी। गानेवाले को हेलू गाँव दिया गया, इस की उस काल की भाषा हुई *'रंगस्सहल्लुदिराणा'* (५ त० ४०२ श्लो०)।

षष्ठ तरंग में दिद्दारानी का उपद्रव और बहुत से राजाओं के नाम के पूर्व में शाहि पद ध्यान देने के योग्य है।

सप्तम तरंग (५३ श्लो०) में हम्मीर नाम का एक राजा तुंग के समय में और (१६० श्लो०) अनंत के समय में भोज का राजा होना लिखा है। मान के हेतु लोगों को ठाकुर की पदवी दी जाती थी। (७ त० २६ श्लो०) तुरुष्क देश से सोने का मुलम्मा करने की विद्या हर्ष के समय में आई। (७ त० ५३ श्लो०) इसी के काल में खस लोगों ने पहले पहल बंदूक का युद्ध किया। (७ त० ६८४ श्लो०) कलिंजर के राजा, राजा उदय सिंह आदि कई राजाओं के प्रसंग से (१३०० श्लो० के आसपास) नाम आए हैं। युद्ध हारने के समय क्षत्रानियाँ राजपुताने की भाँति यहाँ भी जल जाती थीं। (७ त० १५०० श्लो०)

अष्टम तरंग में भी कायस्थों की बहुत निंदा की है। (८ त० ८६ श्लो० आदि) कैदियों को भाँग से रंग कर कपड़ा पहनाते थे। (८ त० ६३ श्लो०) कल्याण के हेतु लोग *भीष्मस्तवराज, गजेंद्रमोक्ष,* दुर्गापाठ आदि का पाठ करते थे (८ त० १०६ श्लो०) टकसाल का नाम टंकशाला। (८ त० १५२ श्लो०) उस समय में भी राजाओं को इस

---

* वर्त्तमान काल में रंडियों की भाषा का कुछ उदाहरण दिखाते हैं। नगर की वारवधूगण की संकेत भाषा यथा—लूरा-पुरुष, लूरी-रंडी, चीसा-अच्छा बीला बुरा, भीमटा रुपया आदि। ग्राम्य रंडियों की भाषा यथा-सेरुआ-पुरुष, सेरुइ-स्त्री, कनेरी-रुपया, सेमिल-अच्छा है और छौलिआयल्यः अर्थात् रुपया सब ठग लो।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रॉयर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
८१	मेघवाहन	३१५३।४	२४।६ ई० सन्	३८३	२३।३ ई० सन्	३०	गांधार (कंदहार) का था, वहाँ के राजा गोपादित्य ने इसे पाला था। बौद्धों को बसाया।
८२	श्रेष्ठसेन	३१८३।४	५८।६	४००	५७।६	३०।२	मुसल्मानों के अनुसार खता के बादशाह की बेटी इसको व्याही थी। इसने प्रत्यक्ष पशु से घृणा करके पिष्ट की चाल चलाई। रुपये को दीनार कहते थे, आईने अकबरी का मेगदहन।
८३	हिरण्य*(२)	३२१३।६	८८।६	४१५	८७।३	४।६	तोरमान कुमार का प्रतिद्वंद्वी था। मुसलमानों ने लिखा है कि इसका भाई पुरवाहन इसका मंत्री था।
८४	मातृगुप्त	३२१८।३	११७।११	४३०	११८।५	६०	विक्रमादित्य ने उज्जैन से भेजा। जाति का ब्राह्मण था। इस विक्रमादित्य का नाम हर्ष था। उस काल में लोग ललाट में त्रिशूल की मुद्रा देते थे। किंतु कालिदास वाला विक्रम नहीं है।
८५	प्रवरसेन	३२७८।३	१२३।८	४३२।६	१२२।२	३६	यह प्राचीन वंश का था। शिलादित्य नामक गुजरात के राजा से लड़ा। मुसलमानों के अनुसार पुरवाहन का बेटा था। श्रीनगर फिर से बसाया। मुसलमानों ने शिलादित्य को विक्रमादित्य का बेटा लिखा है।

बात की प्रसीद्धि पर कि रत्नावली इत्यादि काव्यग्रंथ उसके समय में बने थे। इस राजा पर मेरी विशेष दृष्टि पड़ी। इस का समय विक्रम और कालिदास के समय के बहुत पीछे स्पष्ट होने से इस बात की मुझ को बड़ी चिंता हुई कि वह कौन पुण्यात्मा श्री हर्ष है, धावक ने जिस की कीर्ति आचंद्रार्क स्थिर रक्खी है। वह श्री हर्ष निश्चय मम्मट, कालिदासादि के पूर्व और वत्सराज के पश्चात् हुआ है। वंशावलियों में खोजने से कई हर्ष मिले। यथा मालवा के राजाओं में एक हर्षमेघ १६१ ई० पू० हुआ है। यह युद्ध में मारा गया और कोई विशेष कथा इसकी नहीं है। छतरपुर में एक लिपि में श्री हर्ष नाम का एक राजा धिहल का पुत्र यशोधर्मदेव का पिता लिखा है। और यह लिपि श्री हर्ष के प्रपौत्र की सं० १०१६ की है। एक श्री हर्ष नैपाल का राजा ३६३१ ई० पू० हुआ है। एक विक्रमादित्य जिस का दूसरा नाम हर्ष था मातृगुप्त के समय में हुआ। शक १००० में एक विक्रम और इस के कुछ ही पूर्व कान्यकुब्ज में एक हर्ष नामक राजा हुआ। कालिदास और श्री हर्ष कवि भी इसी काल में थे। जैन लोगों ने लिखा है कि वाराणसी के जयंतीचंद नामक राजा के दरबार में श्री हर्ष कवि था। (१०८६ शक) यह जैनों का भ्रम है। और हर्षों को छोड़ कर कान्यकुब्ज के हर्ष को यदि धावक कवि का स्वामी मानें तभी कुछ लड़ सब बातों की मिलेगी। जैसा रत्नावली में जिस वत्सराज का चरित है वह कलियुग के प्रारंभ में उरुदेप का पुत्र वत्स था। शुनकवंश का प्रथम राजा एक प्रद्योत हुआ है। [३००० ई० पू०] संभव है कि इसी प्रद्योत की बेटी वत्स को ब्याही हो। धावक ने एक उदयन का भी वर्णन किया है। वह पांडवों के वंश की अंतावस्था में हुआ था। यह सब अति प्राचीन हैं। इस से ३६३१ ई० पू० के नैपाल-वाले श्रीहर्ष के हेतु धावक ने काव्य बनाया है, यह नहीं हो सकता। कन्नौज में जो श्रीहर्ष नामक राजा था, जिस की सभा में श्रीहर्ष नामक कवि का पिता रहता था वही श्री हर्ष धावक का स्वामी था। छतरपुर की लिपि का काल १०१६ है। चार पुश्त पहले यह काल ८५० संवत् में जा पड़ेगा। यशोविग्रह के पहले कदाचित् राजविप्लव हुआ हो और श्री हर्ष से यशोविग्रह तक दो एक राजे और हो गए हों तो

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
६२	प्रतापादित्य (२)	३७८२।११।१३	६३३।३	६३०।६	६५१।५	८।८	नामांतर दुर्लभक।
६३	चन्द्रापीड़	३७६१।७।१३	६८३।३	६८०।६	७०१।५	४।०।२४	नामांतर चंद्रानंद। बहुत धार्मिक था। इस के समय में भी क्षमाविक्रम नाम का कोई राजा था।
६४	तारापीड़	३७९५।८।७	६९१।११	६८९।२	७१०।१	२६।७।११	मुसलमानों का रणजीत।
६५	ललितादित्य	३८२२।३।१८	६९५।११	६९३।२	७१४।१	१।०।१५	चमार की एक झोपड़ी मंदिर में पड़ती थी। वह नहीं देता था। राजा ने स्वयं उसको राजी किया। कन्नौज के यशोवर्म से लड़ा। खता और खतन तथा बुखारा गुजरात, तिब्बत, बंगाल तक जीता। बड़ा प्रतापी था। पृथ्वी में से राम लक्ष्मण की मूर्ति मिलीं, उनकी प्रतिष्ठा की। सनद और सुलहनामा लिखने की चाल थी। शाहि शब्द सर्दारवाचक था। भवभूति महाकवि इसी के समय में था। इस समय में देवताओं के भीतर द्रव्य भी रहता था। राजा लोग जैन मतवालों का भी आदर करते थे।
६६	कुवलयापीड़	३८२३।४।३	७३२।७	७२९।९	७५०।८	७	मुसल्मानों से गुलाम बेंचने की चाल सीखी। मुसल्मानों ने ललितादित्य का बेटा रमा वा रणानंद, उस का पुत्र सगरानंद या शकानंद राजा हुआ, यह क्रम लिखा है

स्वामी विक्रम का नाम नहीं लिखा। कल्हण प्रायः सभी राजाओं की कुछ कुछ निंदा कर देता है, जैसा इसी हर्षदेव की, जिस की और स्थानों में बड़ी स्तुति है, कल्हण ने निंदा की है। और ग्रंथकारों के मत में श्रीहर्ष बड़ा न्यायपरायण स्वयं महा कवि अति उदार था। पुकार सुनने के हेतु महल की भित्तियों पर घंटियाँ लटकतीं थीं। रात दिन गुणियों से घिरा रहता था और अंत में संसार को असार जानकर त्यागी हो गया। कल्हण से हर्षराज से द्वेष का यह कारण है कि इस के स्वामी जयसिंह का बाप सुस्सल हर्ष के पोते भिक्षाचर को मार कर राज्य पर बैठा था।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंह्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
१०३	संग्रामापीड़ (२)	३८८७।५।१०	७६७।८	७६४।११	८१५।१०	१२	नामांतर पृथिव्यापीड़ ।
१०४	बृहस्पति*	३८६६।५।१०	८०४।८	८०१।११	८२२।१०	३६	नामांतर चिप्पटजय । वेश्यापुत्र था । इसके पाँच भाइयों ने इस के नाम से राज चलाया ।
१०५	अजितापीड़	३६३५।५।१०	८१६।८	८१३।११	८३४।१०	३	इन्हीं लोगों ने राज्य पर बैठाया ।
१०६	अनंगापीड़	३६३८।५।१०	८५२।८	८४६।११	८७०।१०	३१	
१०७	उत्पालपीड़*	३६६६।५।१०	८५५।८	८५२।११	८७३।१०	२७	कर्कोटकवंश का अंतिम राजा ।
१०८	आदित्यवर्मा	३६६६।५।१०	८५७।८	८५४।११	८७५।१०	१८	नामांतर अवंतिवर्मा । बड़ा काल पड़ा । बहुत से इतिहासवेत्ताओं का निश्चय है कि जालंधर के यादव राजाओं से इस का वंश निकला है । मुसल्मानों ने लिखा है कि यह सखतवर्मा (शक्तिवर्मा) का पुत्र था और अपने रिश्तेदार शिववर्मा मंत्री की सहायता से गद्दी पर बैठा । इस का राज्य अट्ठाईस बरस तीन महीना तीन दिन ।
१०९	शंकरवर्मा	४०१४।५।१०	८८६।८	८८३।२	९०४।१	२	गुर्ज्जर और भोज से लड़ा । बड़ा उद्धत था । नामांतर श्रीवर्मा या शिववर्मा । मु० राज्यकाल १७ बरस ७ महीना १६ दिन ।

४०	कुशेशय	१५०१।८	०	०	०	६०	नामांतर कुश. १६६४ ई० पू० मुसल्मानों का किशन।
४१	खगेंद्र	१५६२।८	०	०	०	३०।६	१६६० ई० पू० मुसल्मानों के मत से काकापुर और कथ नामक नगर बसाए। मुसल्मानों का गुलकन्द।
४२	सुरेंद्र*	१५६३।२	०	०	०	३५।७	मुसल्मानों का सुंदर। १६०० ई० पू० ईरान से मान्वास्प नामक हकीम को बुलवाया, ईरान के बादशाह बहमन को जीता। निस्संतान मरा। मुसल्मानों के मत से इस की बेटी बहमन को व्याही थी।
४३	गोधर	१६२८।६	०	०	०	६०	१५७३ ई० पू०
४४	सुवर्ण	१६८८।६	०	०	०	६	स्वर्णनदी नाम की नदी पहाड़ खोद कर लाया। मुसल्मानों का बसरन।
४५	जनक	१६६४।६	०	०	०	७१	१४७७ ई० पू०।
४६	शचीनर	१७६५।६	०	०	०	६२	मुसल्मानों का संजीनरायन। १४७१ ई० पू०।
४७	अशोक	१८२७।६	०	०	०	३०	१३६४ ई० पू० यह शचीनर का भतीजा था। श्रीनगर इसी ने बसाया और जैन मत का प्रचार किया। मुसल-मानों ने इस को शुकराज वा शकुनी का बेटा लिखा है। उस काल में श्रीनगर में छः लाख मनुष्य थे।
४८	जलौक	१८५७।६	०	०	०	२५	जाति विभाग किया, सप्त प्रकृति स्थापन किया। नन्दि-पुराण सुना। इसी को और ग्रंथकारों ने पटने के अशोक का पोता लिखा है। यवनराजा यूथिदेयुस को हराया। अन्तिओकस के साथ सुलहनामा किया। बड़ा प्रतापी था। १३३२ ई० पूर्व मुसल्मानों का चकवक।
४९	दामोदरद्वितीय*	१८८२।६	०	०	०	६०	१३०२ ई० पू० शैवमत का प्रचार हुआ।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंङहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
							फकीर हो गया। कहते हैं कि मम्मट इस समय में था। मुसल्मान लेखकों ने लिखा है कि संग्रामदेव का लड़का अमान था। इस को इसकी मा ने मार डाला. उस का पुत्र एक बरस राज कर के दादी के डर से फकीर हो गया। फिर तृभुवनगुप्त और बहमन (भीमगुप्त) गद्दी पर बैठे पर इन की दादी ने इन को मार डाला। फिर विग्रहदेव राजा हुआ। यह दिद्दा का भतीजा था। इस को भी नृसिंहराय नामक दिद्दा के साधक वज़ीर ने मार डाला।
१२५	संग्रामदेव*	४०६९	०	९४८	९६९	१|४|०	पर्वगुप्त ने मार डाला।
१२६	पर्वगुप्त	४०७०|४	९५१	९४८	९६९	४|६	सुरेश्वरी क्षेत्र में मारा गया।
१२७	क्षेमगुप्त	४०७४|१०	९५२	९५०	९७१	१३|१०	बौद्धों के बहुत से विहार तोड़ डाले। किसी के मत से आठ बरस।
१२८	अभिमन्युगुप्त	४०८८|८	९६१	९५८	९७९	१|१	
१२९	नंदिगुप्त	४०८९|९	९७५	९७२	९९३	४	इस की दादी दिद्दारानी ने इस को मार डाला।
१३०	त्रिभुवनगुप्त	४०९४|९	९७६	९७३	९९४	५	तथा।
१३२	भीमगुप्त	४०९९|९	९७८	९७५	९९६	२३	ध्रुवाचार्य और विचुल पंडित इस की सभा में थे।

५८	विभीषण (२)	२१५४।३	१०२८	८०।८	१०३०।६	३६।६	वि. ३१६. मुसल्मानों ने लिखा है कि यह त्यागी था। इसका नाम पलनपत था। यह आजाद राजा का बेटा और बड़ा कवि था। पहले इसका ज्येष्ठ पुत्र इंद्रायन गद्दी पर बैठा किंतु उसके दुष्कर्मों से दुखी होकर लोगों ने उसे मार डाला और इसको गद्दी पर बैठाया।
५९	किन्नर	२१६४	६६२।६	८६।२	६६३	६०	वि. २६८, नामांतर नर, बौद्ध था, मुसल्मानों ने इसको बड़ा क्रूर लिखा है और लिखा है कि दो वर्ष मात्र राज्य किया फिर राज्य कुछ दिन शून्य रहा।
६०	सिद्ध	२२५४	६५२।६	६६।२	६५३।२	३०।६	वि. २८०, मुसल्मानों ने लिखा है कि धाय इसको छिपाये हुए थी।
६१	उपल	२२८४।६	८६२।६	११४।२	८६३।२	३७।७	वि. २६२, आईनेअकबरी में इसका नाम आदित्य वल्लभ लिखा है. नामांतर उत्पलाक्ष, मुसल्मानों का गुरुदत्त वा पलाशन. यह आँख का कंजा था।
६२	हिरण्य	२३२२।१	८६२।३	१२१।६	८६२।६	६०	वि. २४४, नामांतर हिरण्याक्ष, मुसल्मानों का तिरन्य।
६३	हिरण्यकुल	२३८२।१	८२४।८	१११।२	८२५।२	६०	वि. २२६, मुसल्मानों का हिरणकुल।
६४	बसुकुल	२४४२।१	७६४।८	१४६।२	७६५।२	७०	वि. २१८, आईने अकबरी का एविशाक,बड़ा विषयी था।
६५	मिहिरकुल	२५१२।१	७०४।८	१६३।८	७०५।२	३६	वि.२००,ट्रायर के मतसे नाम मुकुल, लंकापर चढ़ाई की, बड़ा क्रूर था, दारद, गांधारों और भाटियों का प्राबल्य हुआ, पहाड़ तोड़ कर हाथियों से ढोंके हटाकर नदी निकलवाई। लंका में राजा का पैर छपा कपड़ा होता था। यह ऐसा क्रूर था कि एक बेर हाथी का पहाड़ पर से गिरना उसको अच्छा मालूम हुआ इस से सौ हाथी पहाड़ पर से गिरवा दिए। बहुत सी स्त्रियों को भी इसने मार डाला।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
१४०	शंखराज	४२१७।७।२	०	११००	१०५२	०।१।२०	उच्चल को मार कर राज पर बैठा। नामांतर रड्ड। इस को उच्चल के भाई सुस्सल ने मार डाला। मुसल्मानों ने इसका नाम ढैन लिखा हैं।
१४१	सल्ह	४२१७।८।२२	०	१११०	१००२।०	१६	इन राजाओं के समय में बड़ी लड़ाई हुई। मुसल्मानों ने इस का नाम असस और इस के भाई का नाम एजिल लिखा है।
१४२	सुसल्ह	४२३३।८।२२	०	११११	१०७२	०।६।०	मल्लदेव का छोटा बेटा उच्चल का भाई।
१४३	भिक्षाचर*	४२३४।२।२२	०	११२७	१०८८	२२	
१४४	जयसिंहदेव	४२५६।२।२२	०	११२७	१०८८	६।६	मुसल्मानों का जैनक। मुसल्मानों ने इस के राज्य का अंत ५३५ हिजरी में लिखा है। राजतरंगिणी बनी। शाके १०७० में यहाँ तक पूरा हिसाब करने से गत कलि ईसवी हिजरी संवत् शाका सब दश पंद्रह बरस के हेर फेर में ठीक हो जाते हैं।
१४५	परमान	४२६५।८।२२	०	११४६	१११०	७	
१४६	वन्दिदेव	४२७२।८।२२	०	११५६	१११६	६	
१४७	वोप्यदेव	४२८१।८।२२	०	११६६	११२६	२५	

७५	प्रतापादित्य	२९६६।४	१६७।३	२८७।६	१६८।६	३२	वि. १० ई० पू० किसी विक्रमादित्य का नातेदार था। मुसल्मानों के मत से नाम बरतपात है और मालवा से वहाँ जाकर राजा हुआ।
७६	जलौक (२)	३००१।४	१३५।३	३०३।६	१३६।६	२६	वि. २२ ई० सन् आ० अ० का जगुह।
७७	तुंजीन*	३०२७।४	१०३।३	३१६।६	१०४।६	८	वि. ५४ ई० मुसल्मानों ने इसका नाम शनीचर और इस की रानी का नाम दक्षिणा लिखा है। नामांतर वंजीर। बड़ा भारी काल पड़ा, खजाना सब गरीबों को बाँट दिया। आकाश से लोगों के घर में कबूतर गिरे. बड़ा धर्मात्मा था। चंद्रक कवि ने नाटक काव्य बनाए।
७८	विजय	३०३५।४	६७।३	३३८।६	६६।६	३७	वि. ९० ई० नामांतर वेजिरी, मुसल्मानों का विजयमल्ल।
७९	जयेंद्र	३०७२।४	५६।३	३४१।६	६०।६	४७	वि. ९८ ई० नामांतर चंद्र; मुसलमानों का विजयेंद्र।
८०	संधिमान*	३११९।४	२२।३	३६६	२३।६	३४	नामांतर आर्यराज, जयेंद्र का मंत्री था। इसके विषय में यह विचित्र बात प्रसिद्ध है कि फाँसी पड़कर मर कर फिर जिया था। मुहम्मद अज़ीम ने अपने फारसी इतिहास में लिखा है कि जिस समय संधिमान शूली पर मर गया, उसी काल में राजा भी मर गया। तब प्रजा लोगों ने संधिमान मंत्री के पुत्र अरिराय को राज पर बैठाया और इस भाँति संधिमान के कपाल का लिखा पूरा हुआ। अरिराय विरागी हो कर जंगल में चला गया। फिर युधिष्ठिर का पोता गोपाल राजा, जो बड़ा ही सुंदर था, राजा हुआ. अपने ससुर खता के बादशाह की मदद से काश्मीर का राजा हुआ था और सूरत तक जीता।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
							फिल सजी गई। जब दुलहिन श्रृंगार करके निकाह पढ़ाने आई, साथ में कटार छिपाकर लाई। ठीक विवाह के समय कटार पेट में मारकर मर गई। अंत समय कहा 'ले विश्वासघातक जिस शरीर को तू चाहता है यह तेरे सामने है !!! हिंदुओं का राज्य इसी के साथ समाप्त हुआ। कुछ कम चार हजार बरस आर्य लोगों ने कश्मीर का भोग किया।
१५८	शाहमीर	४४४१।०।२४	०	१३३४।६।१०	०	१।११	नामांतर शमसुद्दीन।
१५९	जमशैद	४४४२।११।२४		१३३७।५		१२	
१६०	अलाउद्दीन	४४५४।११।२४		१३३९।४		१८	
१६१	शहाबुद्दीन	४४७२।११।२४		१३५२।०।२३		१६	
१६२	कुतुबुद्दीन	४४८८।११।२४		१३७०।०।२३		२४	
१६३	सिकंदर	४५१२।११।२४		१३८६।०।२३		७	तैमूर का आना। यह ऐसा कट्टर मुसलमान था कि केवल कश्मीर के प्राचीन मंदिर ही नहीं तोड़े, अपने सारे कश्मीर मंडल में संस्कृत के जितने ग्रंथ मिले सब को दीवार की नेव में डाल दिया !!! हा ! आज वे ग्रंथ होते तो न जाने क्या क्या बात हमलोग जानते।

८६	युधिष्ठिर (२)	३३१७।३	१८३।८	४६४	१८५।२	०।८।१३	मुसल्मान लेखकों से यहाँ बड़ा भेद है। वे लिखते हैं प्रवरसेन का बेटा चंद्रश्री, उसने ७३ वर्ष ३ महीना राज्य किया, उस का बेटा लक्ष्मण, राज्यकाल ३ बरस उस का बेटा जयादित्य।
८७	नरेंद्रादित्य	३३१७।११।१३	२०४।११	४८३	२२४।५	३००*	इसी का नामांतर कोई लक्ष्मण मानते हैं वा नंद्रावत।
८८	रणादित्य	३६१७।११।१३	२१७।११	४६०	२३७।५	४२	इस का राज्यकाल ग्रंथ में तीन सौ वर्ष लिखने से अनुमान होता है कि इसके पीछे के कुछ राजाओं के नाम छूट गए हैं। चोलराज की बेटी ब्याही। मुसल्मानों ने लिखा है कि महात्मा मुहम्मद इसी के समय में उत्पन्न हुए थे और इस को राज्य करते जब २५८ वर्ष बीते थे तब वह मक्के से मदीने गए अर्थात् सन् हिजरी आरंभ हुआ।
८९	विक्रमादित्य	३६५९।११।१३	५१७।११	५५६।५	५३७।५	३७	
९०	बालादित्य*	३६९६।११।१३	५५६।११	५७६।६	५७६।५	३६	गोनर्दवंश का अंतिम राजा, मुसल्मानों का जयानंद। मुसल्मान लेखकों ने लिखा है कि उपलास नामक एक बड़ा पंडित इसके समय में हुआ। इस के पास पचीस हजार खासे के घोड़े और तीन लाख सवार और रात को प्रकाश करने वाले लाल थे। मुसल्मानों के अनुसार पहले इसका बेटा चंद्रानंद, फिर उसका भाई रवाजीत, फिर उस से छोटा अलतादित गद्दी पर बैठा।
९१	दुर्लभवर्धन	३७३२।११।१३	५९७।६	५६४।६	६१५।५	५०	नामांतर प्रज्ञादित्य। कर्कोटक वंश का। यज़्दिजिंद (Yezdejerd) का समकालीन।

* नरेंद्रादित्य तथा रणादित्य के बीच के राजाओं के नाम अप्राप्त हैं और सबका सम्मिलित राज्यकाल तीन सौ वर्ष दिया है। (सं०)

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
१८०	गाज़ीशाह	४६८६				६	मुसल्मानों के मत से नौ बरस, राजावली में ६ वर्ष। और लोगों का राज्य स्फुट रहा ऐसा लिखा है।
१८१	हुसैनशाह	४६९५				९	
१८२	अलीखाँ आदिल-शाह	४७०४				१	
१८३	युसुफ़शाह *	४७०५				१	
१८४	सैयदमुबारकखाँ	४७०६				०।२	
१८५	लोहरशाह	४७०६				३	राजावली में लोहर के पुत्र याकूब का राज्य एक वर्ष लिखा है।
१८६	युसुफ़शाह (२ बेर)	४७०९				१	
१८७	याकूबशाह	४७१०				०	राजा भगवानदास से लड़ कर अपने नाम का सिक्का जारी किया।
१८८	हुसैनशाह *	४७१०				०	
१८९	शमसी चक*	४७११				१९	
१९०	अकबर	४७३०				२२	१५८३ में अकबर ने कश्मीर लिया। इस प्रसिद्ध और बुद्धिमान बादशाह की कहानी संसार में प्रसिद्ध है।

							और इस के पीछे ललितादित्य का छोटा लड़का प्रहत्त गद्दी पर बैठा। ३१ वर्ष इन तीनों ने राज्य किया। इस के पीछे विजयानंद ४ वर्ष राजा रहा, फिर ३ वर्ष सगरानंद का बेटा रतिकाम राजा रहा और फिर २ वर्ष असदानंद राजा हुआ। करकोटक वंश का यह अंतिम राजा था। इस वंश में २००० वर्ष ५ महीना २० दिन राज्य रहा और जब यह वंश समाप्त हुआ तब हिजरी सन् २०६ था।
९७	वज्रादित्य*	३८३०।४.३	७३३।७	७३०।६	७५१।८	४।१	
९८	पृथिव्यापीड़	३८३४।५।३	७४०।७	७३७।११	७५८.८	०।०७	
९९	संग्रामापीड़	३८३४।५।१०	७४४।८	७४१ ११	७६२।१०	३	
१००	जज्ज*	३८३७।५।१०	७५१।८	७४८।११	७६६।१०	३१	जज्ज जयापीड़ का साला था। जब जयापीड़ परदेश गया तब वह राज्य पर बैठ गया।
१०१	जयापीड़	३८६८।५।१०	७५४।८	७५१।११	७७२।१०	१२	गौरदेश के जयंत राजा की बेटी व्याही। गुजरात के राजा भीमसेन को जीता। विद्या का प्रचार किया। (८४१) महाभाष्य की पुस्तक मँगाई। चीर और उद्भट पंडित तथा मनोरथ, शंखदत्त, चटक, संघिमान और वामन इत्यादि इस की सभा के कवि थे। द्वारका नगर बसाया और मूर्ति स्थापना की। ताँबे के दीनार अपने नाम के चलाए। उस समय नैपाल का राजा अरमूड़ि था। शंभुकवि ने भुवनाभ्युदय नामक काव्य मम्म और उत्पल की लड़ाई का बनाया। इस का नामांतर विजयादित्य था। लोग गंजों में टिकते थे।
१०२	ललितापीड़	३८८०।५।१०	७८५।८	७८२।११	८०३।१०	७	

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
२००	राजासुखजीवन*	४८८७				८	इसने बागी होकर आठ वर्ष चार महीने राज्य किया।
२०१	अहमदशाह (२बेर)	४८९६				९	११७५ हिजरी में फिर अहमदशाह की सेना ने जीता। महानंद पंडित और कैलाश पंडित नामक इसके दीवानों ने प्रबंध किया। ११७९ में बड़ी बड़ी लड़ाईं हुईं।
२०२	तैमूरशाह*	४९२०				२०	११८४ में गद्दी पर बैठा। ३ महीने बड़ा भूकंप हुआ। पहले वजीर ने बड़ा उपद्रव किया, बहुत से लोग जल में डुबा दिये। तब पंडित दिलाराम नामक बड़ा बुद्धिमान यहाँ का सूबा हुआ। यह बड़ा बुद्धिमान था। अंत में पहले वज़ीर के बेटे को फिर सूबेदारी मिली और इस ने भी बाप की भाँति महा अनर्थ किया।
२०३	जमाँशाह	४९४६				२६	१२०८ हिजरी में गद्दी पर बैठा। दीवान नंदराम कश्मीर का सूबेदार हुआ।
२०४	सुलतानमहमूद					०	इन दोनों के काल का विशेष वृत्त नहीं ज्ञात हुआ।

११०	गोपालवर्मा	४०१६।५।१०	६०४।८	६०२।१०	६२२।६	०।०।२०	जवानी में मारा गया। इस का मंत्री प्रभाकरदेव बड़ा लोभी था। इसने अपने जामाता लकुज को शाहराज की पदवी देकर बड़े पद पर पहुँचाया किंतु यही पीछे से राजा मंत्री दोनों की मृत्यु का कारण हुआ।
१११	संकटवर्मा*	४०१६।६।०	६०६।८	६०३।१०	६२४।६	२	वर्मवंश का अंतिम राजा। मुसलमानों के मत के अनुसार यह गोपालवर्मा का वास्तविक भाई नहीं था, मुँहबोला भाई था।
११२	सुगंधारानी	४०१८।६	६०६।६	६०३।१०	६२४।६	१०	पार्थ को राज्य पर बैठाया। शंकरवर्मा की स्त्री थी।
११३	पार्थ	४०२८।६	६०८।८	६०५।१०	६२६।६	८	तातारी और एकांग जाति ने उपद्रव किया। निर्जितवर्मा का पुत्र था।
११४	निर्जितवर्मा	४०३६।६	६२४।६	६२०।१०	६४१।६	१४	पंगु था।
११५	चक्रवर्मा	४०५०।६	६२५।६	६२१।१०	६४२।६	१	जातियुद्ध हुआ, राजचक्र में बड़ा गड़बड़ हुआ।
११६	सूरवर्मा या शूरवर्मा	४०५१।६	६२६।६	६३१।१०	६५२।६	५	मुसलमानों का शिववर्मा।
११७	पार्थवर्मा	४०५६।६	६३७।६	६३२।१०	६५३।६	०	फिर से गद्दी पर बैठा।
११८	चक्रवर्मा	४०५६।६	६३८।६	६३३।४	६५४।३	०	फिर से बैठा।
११९	शंकरवर्धन	४०५६।६	६३६।३	६३३।१०	६५४.८	०	राजतरंगिणी में इस का नाम नहीं है। मुसलमानों ने इस का नाम शंकर दास लिखा है और लिखा है कि यह बड़ा ही क्रूर था।
१२०	चक्रवर्मा	४०५६।६	६३६।७	६३५।४	६५६।३	२	तीसरी बेर गद्दी पर बैठा।
१२१	उन्मत्तवर्मा	४०५८।६	६३६।११	६३६।८	६५७।७	१	अवंतिवर्मा नामांतर।
१२२	शूरवर्मा(२)*	४०५६।६	६४१।११	६३८।१०	६५६।८	६	
१२३	यशस्करदेव (तथा वर्णाट)	४०६८।६	६४२	६३६	६६०	०।६।०	इस के पीछे वर्णाट ने ६ दिन राज्य किया। प्रभाकरदेव का पुत्र था। बड़ा ही उत्तम राजा हुआ है। अंत में

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	टूयर के मत से समय	कनिंङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
							पाया ।*
२१३	महाराजरणवीर सिंह †	४६७०					संवत् १९१४ में महाराज गुलाबसिंह के मरने पर ये राजा हुए अब कश्मीर का रकबा २५,००० और आमदनी ५०००० समझी जाती है ।

* सन् १८३९ ई० में रणजीत सिंह की मृत्यु हुई और सात वर्ष बाद गुलाब सिंह राजा हुए । (सं०)

† महाराज रणवीर सिंह ने सन् १८५७ से १८८५ तक तथा महाराज प्रतापसिंह ने सन् १९२५ ई० तक राज्य किया । वर्तमान नरेश महाराज हरीसिंह बहादुर हैं । गतकलि वर्ष देने में कहीं कहीं अशुद्धि हुई है क्योंकि वर्तमान गतकलि वर्ष ५०४७ है । (सं०)

१३३ १३४	दिद्दा संग्रामदेव	४१२२।६ ४१४६।६	६८२ १००६।६	६८० १००३।६	१००१ १०२४.७	२४ ५२।४।७	कालिदास तथा श्रीहर्षादि कवि और एक विक्रम भी इसी के समय में थे। अर्थात् इस समय से हर्ष के राज्यारंभ तक कवियों के उदय का काल था। पूर्वोक्त तीनों को मार कर राज पर बैठी। इस के काल में हम्मीर नामक तुर्क ने चढ़ाई की और हार पाई।
१३५	हरिराज और अनंतदेव	४१६६।२।७	०	१०२८	१०३२	८।१	सोमदेव ने वृहत्कथा में अनंत का पिता संग्रामदेव लिखा। हरि ने २२ दिन मात्र राज्य किया था, फिर अनंत राजा हुआ। अनंत ने फौज के लोगों को एक वेर ६२ करोड़ काश्मीरी रुपया बाँटा था। मुसलमानों का गुलशान।
१३६	कलश	४२०७।२।७	०	१०८०	१०५४	०।०।२३	विल्हण ने अपने विक्रमांक चरित में इस की बड़ी स्तुति लिखी है। इस की माता का नाम सुभटा और मामा का नाम लोहराखण्डल क्षितपति था। ये लोग वैष्णव उदार और पंडित थे। विल्हण ने इन का एक भाई विजयमल्ल नामक और लिखा है। सोमदेव ने वृहत्कथा इसी के समय में बनाई।
१३८	उत्कर्ष और हर्ष*	४२०७।३	०	१०८८	१०६२	१०।४।२	और लेखकों के मत से इस ने १२ वर्ष राज्य किया था। चालुक्य वंश में एक विक्रम उस समय भी था। और लेखकों का मत है कि यह पिता पुत्र भाई सब एक काल में जुदा जुदा राज्य बाँटकर करते थे। मुसलमानों ने लिखा है कि १२०० मशालें नित्य इस की सभा में जलती थीं और बड़ा ही न्यायी था।
१३९	उदयन विक्रम*	४२१७।७.२	०	११००	१०६२	०	हर्ष से राज्य पाया। नामांतर उद्दाम विक्रम वा उच्चल। मुसलमानों का वाजिल।

प्रथम वार सन् १८८४ ई० में द मेडिकल
हॉल प्रेस में क्वार्टो साइज़ में छपा।
उसी वर्ष के अगस्त में शुभचिंतक
पत्र में समालोचना निकली।

१४८	जस्सदेव	४३०६।८।२२	०	११७५	११३५	१४	बोप्यदेव का भाई था, खत्री था, किसी के मत से १८ बरस ।
१४९	जगदेव	४३२०।८।२२	०	११९३	११७३	२३	
१५०	राजदेव	४३४३।८।२२	०	१२०८	११६७	१६	
१५१	संग्रामदेव	४३५९।८।२२	०	१२३१	११९०	२।१।१	
१५२	रामदेव	४३८०।६।२२	०	१२४७	१२०६	३।६।२	
१५३	लक्ष्मणदेव*	४३८४।३।२४	०	१२६८	१२२७	१४।४	
१५४	सिंहदेव *	४३९८।७।२४	०	१२८१	१२६१	१९	
१५५	सिंहदेव*(२)	४४१७।७।२४	०	१२९२	१२७०	३।२	
१५६	श्रीरिंछण *	४४२०।६।२४	०	१३१८	१२९४	१६।१	ट्रायर के मत से नाम उदयदेव, भोटवंश का ।
१५७	कोटारानी	४४३६।१०।२४	०	१३३४	२२९४	३।५।०	रिंछन सुलतान के काल में द्वितीय कालस्वरूप दुल्लच नामक मुग़ल ने (जो न मुसल्मान था न हिंदू) कश्मीर में प्रवेश करके वहाँ के नगर, मंदिर, अट्टालिका, बगीचा सब निर्मूल कर दिया और मनुष्यों को घास की भाँति काट कर देश उजाड़ कर दिया । मानों आर्यों का राज्य नाश होता है यह समझ कर ईश्वर ने कश्मीर की प्राचीन शोभा ही शेष नहीं रक्खी । फिर कोटारानी के साथ उसके पालित दास शाहमीर ने विश्वासघात और कृतघ्नता करके अपने को राजा बनाया और कोटा से विवाह करने को चिन्तारी को तंग किया । पहले कोटा भागी किंतु पकड़ आने पर ब्याह करना स्वीकार किया । ब्याह की मह-

उस को समझा नहीं, नहीं तो आज दिन हिंदुस्तान मुसलमान होता। हिंदू-मुसलमान में खाना पीना व्याह शादी कभी चल गई होती। अँगरेजों को भी जो बात नहीं सूझी वह इस को सूझी थी।

यद्यपि उस उर्दू शैर के अनुसार 'बाग़बाँ आया गुलिस्ताँ में कि सैयाद आया। जो कोई आया मेरी जान को जल्लाद आया।' क्या मुसलमान क्या अँगरेज भारतवर्ष को सभी ने जीता, किंतु इन में उनमें तब भी बड़ा प्रभेद है। मुसलमानों के काल में शत सहस्र बड़े बड़े दोष थे किंतु दो गुण थे। प्रथम तो यह कि उन सबोंने अपना घर यहीं बनाया था इस से यहाँ की लक्ष्मी यहीं रहती थी। दूसरे बीच बीच में जब कोई आग्रही मुसलमान बादशाह उत्पन्न होते थे तो हिंदुओं का रक्त भी उष्ण हो जाता था इस से वीरता का संस्कार शेष चला आता था। किसी ने सच कहा कि मुसलमानी राज्य हैजे का रोग है और अँगरेजी क्षयी का। इन की शासनप्रणाली में हम लोगों का धन और वीरता निःशेष होती जाती है। बीच में जाति-पक्षपात, मुसलमानों पर विशेष दृष्टि आदि देख कर लोगों का जी और भी उदास होता है। यद्यपि लिबरल दल से हमलोगों ने बहुत सी आशा बाँध रक्खी है पर वह आशा ऐसी है जैसे रोग असाध्य हो जाने पर विषवटी की आशा। जो कुछ हो, मुसल्मानों की भाँति इन्हों ने हमारी आँख के सामने हमारी देवमूर्त्तियाँ नहीं तोड़ीं और स्त्रियों को बलात्कार से छीन नहीं लिया, न घास की भाँति सिर काटे गए और न जबरदस्ती मुँह में थूक कर मुसल्मान किए गये। अभागे भारत को यही बहुत है। विशेषकर अँगरेजों से हम लोगों को जैसी शुभ शिक्षा मिली है उस के हम इन के ऋणी हैं। भारत कृतघ्न नहीं है। यह सदा मुक्तकंठ से स्वीकार करैगा कि अँगरेजों ने मुसल्मानों के कठिन दंड से हमको छुड़ाया और यद्यपि अनेक प्रकार से हमारा धन ले गए किंतु पेट भरने को भीख माँगने की विद्या भी सिखा गए।

मेरे प्रमातामह राय गिरधरलाल साहब, जो यावनी विद्या के बड़े भारी पंडित और काशीस्थ दिल्ली के शहज़ादों के मुख्य दीवान थे, उन की इच्छा से दिल्ली के प्रसिद्ध विद्वान सैयद अहमद ने एक ऐसा चक्र

१६४	अलीशाह	४५१६।११।२४	०	१४१०।०।२३	०	५०	फ़कीर हो कर मक्के चला गया। कोई कहता है कि जैनुलाबदीन की कैद में मरा।
१६५	जैनुलाबदीन	४५६६।११।२४		१४१७।०।२३		२	नामांतर बडुशाह वा शाही खाँ। पंचाइत की अदालत (Local Self-Government) जारी किया।
१६६	हैदरशाह	४५७१।११।२४		१४६७।०।२३		१२	बड़ा विषयी था। दीवार के नीचे दब कर मर गया।
१६७	हसन	४५८३।११।२४		१४६९।०।२३		२	बड़ा विषयी था।
१६८	मुहम्मद	४५८५।११।१४		१४८१।०।२८		११	
१६९	फतहशाह	४५९६।११।१४		१४८३।७।२८		३१	
१७०	मुहम्मद(२वेर)	४६२७।११।२४		१४९१।७।२८		२२	
१७१	फतह (२वेर)	४६४९।११।२४		१५१३।५।७		१	
१७२	मुहम्मद(३वेर)	४६५०।११।२४		१५१४।५।७		३	
१७३	फतह (३वेर)	४६५३।११।२४		१५१७।५।७		३	
१७४	मुहम्मद(४वेर)	४६५६।११।२४		१५२०।५।७		७	
१७५	नाज़ुकशाह	४६६४		१५२७।५।७		३	
१७६	मुहम्मद(५वेर)	४६६७		१५३०।५।७		७	
१७७	नाज़ुकशाह(२वेर)	४६७४		१५३७.५।७		४	शम्सुद्दीन, इस्माइलशाह, इबराहीमशाह, हबीबशाह, अलीशाह और ग़ाज़ीशाह इतने बादशाहों के नाम यहाँ भिन्न भिन्न तवारीख़ों में और मिलते हैं।
१७८	मिरज़ाहैदर	४६७८		१५४१।५।७		०	शीओं को बड़ी दुर्दशा से मारा। नाज़ुकशाह के नाम से राज्य करता रहा।
१७९	हुमायूँ	४६७८		०		११	बीच में हुमायूँ के समय से उस के मरने तक कामरों का काश्मीर में आना और उपद्रव करना और अनेक उपद्रवों में २५ या ३० वर्ष काल नष्ट हुआ।

नंबर	नाम बादशाहों का	बाप का नाम	जाति	राज्य पाने का समय	अवस्था	मरने का समय	मृत्यु का कारण	विवरण
१	कुतुबुद्दीन ऐबक	०	गोरी बादशाहों का दास	१२०६	बूढ़ा होकर मरा	१२१०	घोड़े से गिर कर	पहले शहाबुद्दीन मुहम्मदगोरी का गुलाम था। सन् ११९३ में जब पृथ्वीराज से दिल्ली ली तब मुहम्मद इसी को यहाँ का राज दे गया। यही गुलाम हिंदुओं की गुलामी का मूल है। (सन् १२०६ में मुहम्मद मरा। सं०)
२	आरामशाह	कुतुबुद्दीन	०	१२१०	नहीं मालूम	०	०	साल भर तख्त पर नहीं रहा कि शमसुद्दीन अलतिमश ने उतार दिया।
३	शमशुद्दीन अलतिमश	०	०	१२१०	०	१२३६	स्वाभाविक	बहुत दिन जीते। चंगेजखाँ इसी के काल में आया।
४	रुक्नुद्दीन फीरोजशाह	शमसुद्दीन अलतिमश	०	१२३६	०	०	०	सातही महीने तख्त पर रहा। बड़ा विषयी और निकम्मा था।
५	रजिया बेगम	तथा	०	१२३६	०	१२३९	मारी गई	बड़ी सावधान थी। हबशी गुलाम पर विशेष कृपा करने के कारण लोगोंने मार डाला।
६	मुईज़ुद्दीन बहराम	तथा	०	१२३९	०	१२४१	कैद में मरा	बड़ा मूर्ख था।
७	अलाउद्दीन मसऊद	फीरोज़शाह	०	१२४१	०	१२४६	मारा गया	

१६१	जहाँगीर	४७५२				२२	सन् १६०५ में तख्त पर बैठा, १६२७ ई० में मरा।
१६२	शाहजहाँ	४७७४				३१	१६२८ में तख्त पर बैठा, १६५६ में औरंगजेब ने कैद किया। १६६४ में मरा।
१६३	औरंगजेब	४८०५				४८	१७०७ में मरा।
१६४	मुअज्जमबहादुर शाह शाहआलम	४८३६				५	औरंगजेब के पीछे मुसलमानों का राज्य शिथिल हो गया इस से कई बादशाह हुए। सब नाम यथाक्रम लिए जाँय तो पहले आज़िम, फिर मुअज़्ज़म, जहाँदारशाह फर्रुखसियर, रफीउद्दरजात, रफीउद्दौलत, निकोसियर, मुहम्मदशाह, इबराहीमशाह, अहमदशाह, आलमगीर-सानी, शाहजहाँ, शाहआलम, बेदारबख्त, अकबरसानी और बहादुरशाह ये नाम होंगे।
१६५	जहाँदारशाह	४८३७				१	
१६६	फ़र्रुखसियर	४८४३				६	
१६७	मुहम्मदशाह*	४८६३				२०	१७१६ में तख्त पर बैठा।
१६८	नादिरशाह*	४८७८				१५†	सन् ११५१ हिजरी में नादिरशाह का खुतबा कश्मीर में पढ़ा गया। किंतु नादिर के मरने पर कश्मीर फिर कुछ दिन गड़बड़ में रहा। ११६१ हिजरी में अहमद शाह के वजीर असमतुद्दीन खाँ ने चढ़ाई की थी पर हार गया।
१६६	अहमदशाह*	४८७६				२	११६६ हिजरी में पूरी तरह कश्मीर अहमद के अधिकार में आया।

* सन् १७३६ ई० में नादिरशाह आया था इसी से बीस वर्ष दिया गया है, यद्यपि मुहम्मदशाह सन् १७४८ ई० तक दिल्ली का सम्राट था।

† नादिरशाह सन् १७४७ ई० में मर गया था अतः उसका राज्यकाल पंद्रह वर्ष है पर यह अहमदशाह के आरंभ तक का है। (सं०)

नंबर	नाम बादशाहों का	बाप का नाम	जाति	राज्य पाने का समय	अवस्था	मरनेका समय	मृत्यु का कारण	विवरण
१५	फखरुद्दीन महम्मद तुगलक (अलगखाँ)	गयासुद्दीन	तथा	१३२५	०	१३५१	स्वाभाविक	राजा शिवप्रसाद के लिखने के अनुसार बड़ा दाता, बड़ा पंडित, बड़ा बुद्धिमान, बड़ा भाग्यवान, बड़ा वीर, बड़ा मूर्ख, बड़ा क्रूर, बड़ा झक्की और बड़ा पागल था।
१६	फ़ीरोजशाह	मुहम्मद	तथा	१३५१	९०	१३८८	तथा	अच्छा था। बहुत से धर्मार्थ काम किए।
१७	गयासुद्दीन	फ़ीरोजशाह	तथा	१३८८	०	१३८९	मारा गया	पाँच महीने राज्य किया। मूर्ख था।
१८	अबूबकर	तथा (पोता)	तथा	१३८९	०	०	कैद में मरा	एक वर्ष भी पूरा राज्य न किया।
१९	नासिरुद्दीन मुहम्मद	तथा	तथा	१३९०	०	०	स्वाभाविक	
२०	हुमायूँ सिकंदरशाह	नासिरुद्दीन	तथा	१३९४	०	१३९४	तथा	केवल ४५ दिन बादशाह था।
२१	नासिरुद्दीन महमूद	सिकंदर शाह	तथा	१३९४	०	१४१२	तथा	

							जमाँशाह के २६ वर्ष में इन दोनों का भी समय समझना चाहिये।
२०५	शाहशुजा *					०	महाराज रणजीतसिंह ने कोहनूर हीरा इसी से लिया था।
२०६	महाराजरणजीत सिंह	४९४६				२१	१२३४ हिजरी अर्थात् १८१८ ईस्वी १८७५ संवत् में कश्मीर जीता। कश्मीर जीतने की तारीख। बोलो जी वाह गुरूजी का खालसा, बोलोजी वाह गुरूजी की फतेह।
२०७	महाराजखड्ग सिंह	४९४७				१।४	१८९६ संवत् में महाराजा रणजीतसिंह मरे और ये राज पर बैठे।
२०८	कुँअरनौनिहाल सिंह	४९४७				०।०।१	ये अपने पिता की क्रिया करके आये उसी समय पत्थर के नीचे दबकर मर गये।
२०९	महाराजशेरसिंह	४९५०				३	इनको सिंधांवालों ने मार डाला।
२१०	महाराजदलीप सिंह	४९५२				२	बालक अवस्था में नाममात्र को राजा थे। अब विलायत में पेनशिन पाते हैं।
२११	राजराजेश्वरी विक्टोरिया *	४९५२				०।०।७	सन् १८४६ ईस्वी संवत् १९०२ में सर्कार ने पंजाब जीता। सात दिन मात्र कश्मीर सर्कार के अधिकार में रहा।
२१२	महाराजगुलाब सिंह	४९६३				११	१८४६ ईस्वी के १६ मार्च को सर्कार से कश्मीर इन्होंने

* तैमूरशाह (सन् १७७३-९३), जमाँशाह (सन् १७९३-१८०० ई०) और सन् १८१८ ई० में रणजीतसिंह के कश्मीर विजय करने तक महमूद, दोस्त महम्मद और शुजा का समय है। (सं०)

के गवर्नर अबुल्फतह लोदी को जीतने को वह तीसरी बेर हिंदुस्तान में आया (१००५ ई०)। चौथी चढ़ाई उस ने जयपाल के पुत्र आनंदपाल के जीतने को की। आनंदपाल भी असंख्य हिंदू सैन्य ले कर उस से भिड़ा, किंतु ठीक युद्ध के समय उस के हाथी के बिचलने से वह लड़ाई भी महमूद जीता और नगरकोट लूट कर भारतवर्ष की अनंत लक्ष्मी ले गया। इसमें २० मन तो केवल जवाहिर था (१००८ ई०)। अबुल्फतह के बागी होने से मुलतान पर उस की पाँचवीं चढ़ाई हुई (१०१०)। छठीं बेर उस ने थानेश्वर लूटा (सन् १०११)। सातवीं और आठवीं चढ़ाई इस ने सन् १०१३ और १०१४ में कश्मीर पर किया, किंतु वहाँ के राजा संग्रामदेव ने इस को हटा दिया। नवीं बार यह सन् १०१७ में बड़ी धूम से कन्नौज पर चढ़ा, किंतु कन्नौज के राजा के दासत्व स्वीकार करने से मथुरा नाश करता हुआ लौट गया। १० वीं चढ़ाई इस की सन् १०२२ में कालिंजर पर हुई और उसी बरस ११ वीं चढ़ाई इस की फिर लाहौर पर हुई। १२ वीं बेर गुजरात पर चढ़ाई कर के सन् १०२४ में सोमनाथ का प्रसिद्ध मंदिर तोड़ा। इस के पीछे वह हिंदुस्तान में नहीं आया और सन् १०३० में मर गया। इस के वंश वालों का हिंदुस्तान में केवल पंजाब पर कुछ अधिकार रहा।

ग़ज़नी राज्य निर्बल होने पर जगतदाहक अलाउद्दीन ग़ोरी ने ग़ज़नी के अंतिम राजा बहराम को मार कर अपने को बदशाह बनाया और कुछ दिन पीछे उस के भतीजे शहाबुद्दीन महम्मद गोरी ने बहराम के पोते को मार कर ग़ज़नी के राज्य का नाम भी शेष नहीं रक्खा। यही महम्मद हिंदुस्थान में मुसलमानों के राज्य का मूल है। इस ने सन् ११७६ से लेकर १६ बरस तक कई बेर हिंदुस्थान पर चढ़ाई किया किंतु कुछ फल नहीं हुआ। कन्नौज के राजा जयचंद के बहकाने से इस ने सन् ११६१ में दिल्ली के चौहान राजा पृथ्वीराज पर बड़ी धूम से चढ़ाई किया था, किंतु तरौरी नामक स्थान में घोर युद्ध के पीछे पृथ्वीराज से हारकर वह अपने देश को लौट गया। सन् ११६३ में यह बड़ी धूम और कौशल से फिर दिल्ली पर चढ़ा। हिंदुओं की सैना भी बड़ी धूम से इस के मुकाबिले को बाहर निकली। चित्तौर के समर सिंह इस सेना के सेनापति थे। युद्ध के डेरे पड़ने पर सुलह की बातचीत होने

बादशाहदर्पण

अर्थात्

[हिन्दुस्तान के मुसल्मान बादशाहों के समय और जन्म आदिक मुख्य बातों के वर्णन का चक्र]

सं० १९४१

राज्य कर के वलवाइयों के हाथ से यह मारी गई। इस का भाई मुइ-ज़ुद्दीन वहराम दो बरस दो महीना बादशाह रहा फिर लोगों ने इस को क़ैद कर के इस के भतीजे अलाउद्दीन मसऊद को बादशाह बनाया। किंतु चार बरस बाद यह भी मारा गया और इस का चाचा नसीरुद्दीन महमूद बादशाह हुआ। अल्तिमश का दास और दामाद बलबन इस के समय में मंत्री था और इस ने नरवर और चंदेरी का क़िला तथा गज़नी का राज्य जय किया था। सन् १२६६ में नसीर के मरने पर बलबन बादशाह हुआ और बीस बरस राज्य कर के ८० बरस की अवस्था में मर गया। इसका पोता कैकुबाद राजा हुआ किंतु यह ऐसा विषयी था कि दो बरस भी राज्य न करने पाया कि लोगों ने इस को मार डाला और दिल्ली का राज्य गुलामों के वंश से निकल कर खिल-जियों के हाथ में आया।

पंजाब से आकर सत्तर वर्ष की अवस्था में जलालुद्दीन खिलजी तख़्त पर बैठा। मालवा और उज्जैन उस के समय में विजय हुए। इस के भतीजे अलाउद्दीन ने सन् १२६४ में देवगढ़ भी जीत लिया। किंतु दुष्ट अलाउद्दीन ने इस विजय के पीछे ही अपने वृद्ध चाचा को प्रयाग में मिलने के समय कटवा दिया और आप बादशाह हुआ। (१२६५) बादशाह होते ही इस ने जलालुद्दीन के दो लड़के और उस के पक्षपाती कई सर्दारों को क़त्ल किया और फिर बड़ी निर्दयता से गुजरात जीता। अनेक प्रकार के दुखदाई कर प्रचलित किए। १३०० में रणथम्भौर का प्रसिद्ध क़िला एक बरस की लड़ाई में टूटा और शरणागतवत्सल परम वीर हम्मीर * राजा सकुटुंब वीरों की गति को गया। १३०३ में इस ने चित्तौर पर चढ़ाई की। राजा रतन-

* मीर मुहम्मदशाह मंगोल नामक एक सर्दार पर अपनी एक उपपत्नी से व्यभिचार के संदेह से अलाउद्दीन ने क्रोध करके उस के बध की आज्ञा दी थी। वह हम्मीर की शरण गया। बादशाह ने हम्मीर से मंगोल को माँगा किंतु धीर वीर हम्मीर ने अपने शरणागत को नहीं दिया इसी पर अलाउद्दीन चढ़ दौड़ा। राजा हम्मीर के विषय में यह दोहा जगतप्रसिद्ध है, सिंह सुवन सुपुरुष बयन, कदलि फलै इक सार। तिरिया तेल हमीर हठ चढ़ै न दूजी बार॥

भूमिका

रामायण में भगवान् बालमीकिजी ने कहा है जो वस्तु हुई हैं नाश होंगी, जो खड़ी हैं गिरेंगी, जो मिले हैं बिछुड़ेंगे, और जो जीते हैं अवश्य मरैंगे। सच है इस जगत की गति पहिए की आर की भाँति है। जो आर अभी ऊपर थी नीचे गई और जो नीचे थी ऊपर हो गई। आधीरात को सूर्य का वह प्रचंड तेज कहाँ है जो दोपहर को था? दिन को ठंढी किरनों से जी हरा करने वाला चंद्रमा कहाँ है? संसार की यही गति है। जो भारतवर्ष किसी समय में सारी पृथ्वी का मुकुटमणि था, जिस की आन सारा संसार मानता था और जो विद्या वीरता और लक्ष्मी का एक मात्र विश्राम था वह आज हीन दीन हो रहा है—यह भी काल का एक चरित्र है।

जब से यहाँ का स्वाधीनता सूर्य अस्त हुआ उस के पूर्व समय का उत्तम *शृंखलाबद्ध कोई इतिहास नहीं है। मुसल्मान लेखकों ने जो* इतिहास लिखे भी हैं उनमें आर्यकीर्त्ति का लोप कर दिया है। आशा है कि कोई माई का लाल ऐसा भी होगा जो बहुत सा परिश्रम स्वीकार कर के एक बेर अपने 'बाप दादों' का पूरा इतिहास लिख कर उन की कीर्त्ति चिरस्थायी करेगा।

इस ग्रंथ में तो केवल उन्हीं लोगों का चरित्र है जिन्होंने हम लोगों को गुलाम बनाना आरंभ किया। इस में उन मस्त हाथियों के छोटे छोटे चित्र हैं जिन्हों ने भारत के लहलहाते हुए कमलवन को उजाड़ कर पैर से कुचल कर छिन्न भिन्न कर दिया। मुहम्मद, महमूद, अलाउद्दीन, अकबर और औरंगजेब आदि इन में मुख्य हैं।

प्यारे भोले भाले हिंदू भाइयो! अकबर का नाम सुन कर आप लोग चौंकिए मत। यह ऐसा बुद्धिमान शत्रु था कि उस की बुद्धि-बल से आज तक आप लोग उस को मित्र समझते हैं। किंतु ऐसा है नहीं। उस की नीति (Policy) अँगरेजों की भाँति गूढ़ थी। मूर्ख औरंगजेब

तुग़लक़ रक्खा। (१३२५) इसका प्रकृत नाम फ़खरुद्दीन अलग़खाँ था। पहिले यह बड़ा बुद्धिमान और बड़ा दानी था। हजार दर का महल बनाया। मुगलों से सुलह किया और दक्षिण में अपना अधिकार फैलाया। पर पीछे से ऐसे काम किये कि लोग उसे पागल समझने लगे। हुकुम दिया कि दिल्ली की प्रजा मात्र दिल्ली छोड़ कर देवगढ़ में रहै, जिसको दक्षिण में दौलताबाद नाम से बसाया था। इस का फल यह हुआ कि देवगढ़ तो न बसा किंतु दिल्ली उजड़ गई। अंत में फिर दिल्ली लौट आया। फारस और खुरासान जीतने के लिये तीन लाख सतरह हजार सवार इकट्ठे किए। इन में से एक लाख को चीन लेने के लिए भेजा। ये सब के सब हिमालय में नष्ट हो गये, कोई न बचा। बहुत से कर प्रचलित किए। लोग शहर छोड़ कर जंगलों में भाग गये पर वहाँ भी पीछा न छोड़ा और जानवरों की भाँति उन लोगों का शिकार किया गया। कागज़ का सिक्का चलाया। बड़ा भारी दुर्भिक्ष पड़ा। लाखों मनुष्य मरे। चारों ओर विद्रोह हो गया। बंगाल और तैलग स्वाधीन हो गये। मालवा, पंजाब और गुजरातवाले विद्रोही हो गये। कर्णाटक में विजयपुर नाम का एक नया राज्य हो गया। हुसैन बामनी ने मध्यप्रदेश में एक नया राज्य बनाया। अंत में विद्रोह शान्ति के लिए स्वयं सब जगह घूमा किंतु मालवा और पंजाब छोड़ कर कहीं शांत न हुआ, रास्ते में सिंधु के पास ठट्टा में इसकी मृत्यु हुई (१३५१)। मुहम्मद का भाई फ़ीरोज़शाह बादशाह हुआ (१३५१)। इस ने स्थान स्थान पर हम्माम, चिकित्सालय, सराय, पुल, तालाब, पाठशाले और सुंदर महल बनवाए थे। कर्नाल से हाँसी हिसार तक जमुनाजी नहर निकाली। इस ने अपने को अति वृद्ध समझकर नसीरुद्दीन को राज्य दिया किंतु इस के दो बरस पीछे नसीरुद्दीन के दो भाइयों ने बलवा करके इस को निकाल दिया और फ़ीरोज़ शाह के पोते गियासुद्दीन को तख्त पर बैठाया। १३८८ में नव्वे बरस की अवस्था में फ़ीरोज़ मरा और उसके पाँच ही महीने बाद १३८८ में इन्हीं बलवाइयों ने गियासुद्दीन को भी मार डाला और उस के भाई अबूबकर को बादशाह किया। अबूबकर साल भर भी राज्य नहीं करने पाया था कि नसीरुद्दीन उस को जीत कर आप बादशाह बन बैठा। चार बरस

बनाया था, जिस में तैमूर से लेकर शाहआलम तक सब बादशाहों के नाम आदि लिखे थे। उस फारसी ग्रंथ से इस में बहुत सी बातें ली गई हैं, इस कारण तैमूर के पूर्व के बादशाहों का वर्णन इतना पूरा नहीं है जितना तैमूर के पीछे है। फिर मेरे मातामह राय खिरोधरलाल ने बहादुरशाह के काल के आरंभ तक शेष वृत्त संग्रह किया। और और बातें और स्थानों से एकत्र की गई हैं। इस में परंपरागत बहुत से बादशाहों के नाम हैं जो और इतिहासों में नहीं मिलते।

यद्यपि इस से कुछ विशेष उपकार नहीं है किंतु हम लोगों का इस से बहुत सा कौतूहल शांत होगा जब हमलोग इस में बादशाहों की माता आदि के नाम जो अन्य इतिहासों में नहीं है, पढ़ेंगे।

पोर्चुगीज़ लोग पहले पहल इसी के काल में यहाँ आए। १५१६ में इस के मरने पर इसका बेटा इबराहीम बादशाह हुआ। यह ऐसा नीच और दुष्ट और अभिमानी था कि सब सूबेदार इस से फिर गए। पंजाब का सूबेदार सिकंदर लोदी जो इस का गोती था इस से ऐसा दुखी हुआ कि इस ने काबुल के बादशाह बाबर जो तैमूर से छठी पुश्त में था उस को अपनी सहायता को बुलाया। बाबर ने आते ही पहले सिकंदर ही का राज नाश किया, फिर १५१६ में पानीपत के प्रसिद्ध युद्ध में इब-राहीम को जीत कर आप हिंदुस्तान का बादशाह हुआ।

बाबर ने बड़ी सावधानी से राज्य करना आरंभ किया। दिल्ली के अधीनस्थ जो सूबे फिर गये थे सब जीते गए। १५२७ में मेवाड़ के राजा संग्राम सिंह ने बहुत से देश जीत लिए थे, इस से कई बेर इन से घोर संग्राम हुआ, १४२८ में चंदेरी का क़िला टूटा। सब राजपूत बड़ी वीरता से खेत रहे। इसी साल राणा संग्राम सिंह ने रंतभँवर का क़िला ले लिया। १५२६ में बिहार, लाहौर, बंगाल आदि में अफ़गानों को बाबर ने पराजित किया। १५३० सन् में २६ दिसम्बर को बाबर की मृत्यु हुई। कहते हैं हुमायूँ बहुत बीमार हो गया था। बाबर ने इस बात का इतना सोच किया कि आप ही बीमार होकर मर गया। बाबर में कई गुण सराहने के योग्य थे। हुमायूँ ने राज्य पर बैठ कर अपने तीनों भाई कामरान्, हिंदाल और अस्करी को यथाक्रम काबुल, संभल और मेवात का देश दिया। पहले जौनपुर का विद्रोह निवारण करके फिर वह गुजरात पर चढ़ा और वहाँ के बादशाह बहादुर शाह को बड़ी बहादुरी से जीत लिया। १५३७ में शेरशाह ने बंगाला जीत लिया और जब इधर हुमायूँ शेरशाह से लड़ने को आया तो बहादुर शाह फिर स्वतंत्र हो गया। शेरशाह पहले बाबर का एक सेनाध्यक्ष था। हुमायूँ ने पहले तो चुनार शेरशाह से जीता, किंतु पीछे शेरशाह ने विश्वास-घात करके रोहतासगढ़ के राजा को मार कर उस के क़िले में अपना परिवार रख कर हुमायूँ पर एकबारगी ऐसा धावा किया कि बनारस और कन्नौज तक जीत लिया। १५३६ में फिर एक बेर शेरशाह ने हुमायूँ का पीछा किया और गंगा में कूद कर हुमायूँ ने अपने को बचाया। सन् चालीस में फिर हुमायूँ शेरशाह से हारा और गंगा में

८	नासिरुद्दीन महमूद	अलतिमश	०	१२४६	बूढ़ा होकर मरा	१२६६	स्वाभाविक	बहुत अच्छे स्वभाव का था।
६	गयासुद्दीन बलबन	०	०	१२६६	८० वर्ष	१२८८	०	महमूद का बहनोई था।
१०	मुईजुद्दीन कैकुबाद*	कुराखाँ (बलबन का बेटा	०	१२८६	२० वर्ष	१२८८	मारा गया	मूर्ख था।
११	जलालुद्दीन फीरोज-खिलजी	०	खिलजी पठान	१२८८	बूढ़ा	१२६५	तथा	सीधा था।
१२	अलाउद्दीन	जलालुद्दीन का भतीजा	तथा	१२६५	अधेड़	१३१६	स्वाभाविक	बड़ा दुष्ट था। पहले अपने बूढ़े चाचा को मरवाया फिर अनेक पाप किए। चित्तौर, रणथम्भौर, प्रथम विश्वनाथ का मन्दिरादि इसी चांडाल ने तोड़ा। बड़ा ही क्रूर और उपद्रवी था।
१३	कुतबुद्दीन मुबारक-शाह †	अलाउद्दीन	तथा	१३१६	०	१३२१	हिंदू गुलाम के हाथ मारा गया	बाप की भाँति गोत्रहंता और क्रूर था। विशेषता यह थी कि आप विषयी और नीच भी थे। इसके पीछे चार महीने इसके गुलाम खुसरो खाँ ने सिक्का चलाया।
१४	गयासुद्दीन	०	तुगलक	१३२१	०	१३२५	काठके मकानके नीचे दबकर मरा	अच्छा था।

* प्रथम दस सुलतान दास वंश के थे। (सं०)

† यहाँ तक खिलजी वंश दिल्ली का सुलतान रहा। (सं०)

बादशाह हुआ। बैरम खाँ खानखानाँ राज्य का प्रबंध करता था। बदखशाँ के बादशाह सुलेमान शाह ने काबुल दखल कर लिया है, यह सुन कर बैरम अकबर को ले कर पंजाब के मार्ग से काबुल गया। इधर हेमूँ * बनिया ने तीस हजार सैन्य ले कर दिल्ली और आगरा जीत लिया और पंजाब की ओर अकबर के जीतने को आगे बढ़ा। बैरम खाँ ने यह सुन कर शीघ्र ही दिल्ली को बाग मोड़ी और पानीपत में हेमूँ से घोर युद्ध हुआ, जिस में हेमूँ मारा गया और बैरम की जीत हुई। इस जय से बैरम को इतना गर्व हो गया कि वह अकबर को तुच्छ समझने लगा। परिणामदर्शी अकबर उस की यह चाल देखकर बहाने से निकल कर दिल्ली चला आया और वहाँ (१५६०) यह इश्तिहार जारी किया की सल्तनत का सब काम उस ने अपने हाथ में ले लिया है। बैरम इस बात से खिसिया कर बागी हुआ, किंतु बादशाही फ़ौज से हार कर बादशाह की शरण में आया। अकबर ने उस के सब अपराध क्षमा किए और भारी पिनशन नियत कर दी। किंतु बैरम को उसी वर्ष मक्का जाती समय मार्ग में एक पठान ने मार डाला। इसी बैरम का पुत्र अबदुलरहीम खाँ खानखानाँ संस्कृत और हिंदी भाषा का पड़ा पंडित और कवि हुआ है। यों अट्ठारह बरस की अवस्था में अकबर इतने बड़े राज्य का स्वतंत्र कर्त्ता हुआ। इस ने अपनी परंपारगामिनी बुद्धि से यह बात सोच लिया कि बिना हिंदुओं का जी हाथ में लिए उस की राज्यश्री स्थिर नहीं रह सकती। इस ने हिंदू मुसलमान दोनों को बड़े बड़े काम दिए। जोधपुर और जयपुर के राजाओं की बेटियों से ब्याह किया। मत का आग्रह छोड़ दिया। यहाँ तक कि कई हिंदुओं के तोड़े हुए मंदिर इस ने फिर से बनवा दिए। लखनऊ, जौनपुर, ग्वालियर, अजमेर इत्यादि इस के राज्य के आरंभ ही में इस के आधीन हो गए थे। १५६१ में मालवा भी, जो अब तक राजा बाजबहादुर के अधिकार

* इस का वास्तव में बसन्तराय नाम था। कई तवारीखों में इस की जाति ढूसर लिखी है। किंतु अगरवालों के भाट इस को अगरवाला कहते हैं।
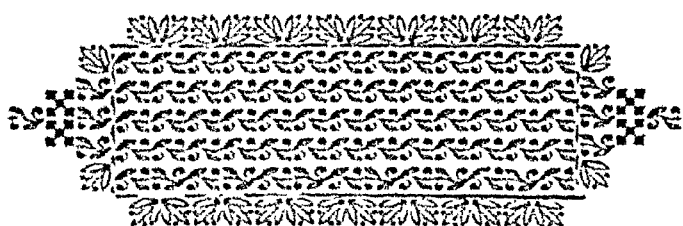
मुसल्मान-राज्यत्व का संक्षिप्त इतिहास

—※—

सन् ५७० में महम्मद का जन्म हुआ। ४० वर्ष की अवस्था में उन्हों ने मुसल्मान धर्म का प्रचार किया। सन् ६३२ में इनकी मृत्यु हुई। इन के उत्तराधिकारियों में वलीद खलीफा ने अपने भतीजा क़ासिम को ६००० फौज के साथ सिंधु देश जय करने को भेजा। सिंधु का राजा दाहिर युद्ध में मारा गया और इस की दो बेटियों के कौशल से कासिम को भी वलीद ने मार डाला।

सन् ८१२ में मामूं ने हिंदुस्तान पर फिर चढ़ाई किया किंतु चित्तौर के राजा खुमान ने २४ बेर युद्ध कर के उस को भगा दिया।

बुखारा के पाँचवें बादशाह अब्दुल्मालिक का अलप्तगीन नामक एक ग़ुलाम था जो मालिक के मरने पर बादशाह हुआ। सुबुक्तगीन इस का एक दास था। स्वामीपुत्र के मरने पर यही खुरासान का राजा हुआ और गजनी को अपनी राजधानी बनाया। सन् ९७० में इसने हिंदुस्थान पर चढ़ाई किया और लाहौर के राजा जैपाल को जीता। सन् ९९९ में उस के मरने के पीछे अपने भाई को कैद कर के सुलतान महमूद बादशाह हुआ। सन् १००१ में महमूद ने हिंदुस्थान पर चढ़ाई किया और अपने पुराने शत्रु जैपाल को कैद कर लिया। सन् १००४ में भटनेर के राजा को जीतने को महमूद की दूसरी चढ़ाई हुई। मुलतान

उदयपुर का नगर भी बसाया और बहुत सा देश भी जीत लिया। १५७३ में गुजरात, ७६ में बंगाला और बिहार, ८६ में काश्मीर, ९२ में सिंध और ९५ में दक्खिन के सब राज्य अकबर ने जीत लिए। अहमद नगर के युद्ध में [१६००] चाँद सुल्ताना नामक वहाँ के बादशाह की चाची ने बड़ी शूरता प्रकाश की थी। इसी समय युवराज सलीम बाग़ी हो गया और इलाहाबाद आदि अपने अधिकार में कर लिया। किंतु अकबर जब दक्खिन से लौटा तो जहाँगीर इस के पास हाजिर हुआ। अकबर ने अपराध क्षमा करके बंगाला और बिहार इस को दिया। १०८३ में युसुफ़ज़ाइयों की लड़ाई में अकबर के प्रिय सभासद महाराज बीरबल मारे जा चुके थे और अबुलफ़ज़ल को जहाँगीर के विद्रोह के समय उरछा के राजा ने मार डाला था, तथा उस का दूसरा लड़का मुराद भी अति मद्यपान करके मर चुका था। अब (१६०५) में अकबर को उस के तीसरे लड़के दानियाल को भी अति मद्यपान से मर जाने का समाचार पहुंचा। इतने प्रियवर्ग के मर जाने से इस का चित्त ऐसा दुखी हुआ कि बीमार हो कर ६३ वर्ष की अवस्था में आगरे में अकबर ने इस असार संसार को त्याग किया।

अकबर अति बुद्धिमान और परिणामदर्शी था। आलस्य तो इस को छू नहीं गया था। प्रथमावस्था में तो कुछ भोजन पानादि का व्यसन भी था किंतु अवस्था बढ़ने पर यह बड़ा ही सावधान हो गया था। बरस में तीन महीना मांस नहीं खाता था। आदित्यवार को मांस की दुकानें बंद रहती थीं। जिज़िया नामक कर और प्रत्यक्ष गोहिंसा उस ने उठा दिया था। कर का भी बंदोबस्त अच्छा किया था। महाराज टोडर मल्ल (टंडन खत्री), अबुलफ़ज़ल, खानखानाँ, मानसिंह, तानसेन, गंग, जगन्नाथ पंडितराज और महाराज बीरबल आदि सब प्रकार के चुने हुए मनुष्य इस की सभा में थे। काग़ज़, हुंडी, बही आदि का नियम इन्हीं टोडर मल्ल का बाँधा हुआ है। विधवाविवाह के प्रचार में भी इस ने उद्योग किया था और तीर्थों का कर भी छूट गया था। भूमि की उत्पत्ति से तृतीयांश लिया जाता था और पंद्रह सूबों में राज बटा हुआ था।

लगी। शहाबुद्दीन ने कहा हम ने अपने भाई को सब वृत्तांत लिखा है, उत्तर आने तक लड़ाई बंद रहै। हिंदू सेना इस बात पर विश्वास कर के शिथिल हो गई थी कि धोखा देकर एकाएक शहाबुद्दीन ने लड़ाई आरंभ की। बहुत से हिंदू वीर मारे गए। समरसिंह भी वीर गति को गए। पृथ्वीराज और उन के कवि चंद को कैद कर के ग़ज़नी भेज दिया। कहते हैं कि शब्दभेदी बान से अंधे होने की अवस्था में एक दिन पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन के भाई ग़यासुद्दीन का प्राण विनाश किया और उसी समय पूर्व संकेतानुसार चंद्र कवि ने उन को मारा और उन्हों ने चंद * को। भारतवर्ष से हिंदुओं के स्वाधीनता का सूर्य सदा के हेतु अस्त हो गया। पीछे शहाबुद्दीन ने कन्नौज का राज भी ले लिया और बनारस को भी ध्वंस किया।

भाई के मरने पर शहाबुद्दीन सन् १२०२ में पूरा बादशाह हुआ, किंतु आठ बरस भी राज्य करने नहीं पाया था कि बदमाशों के हाथ से (१२१०) मारा गया। उस समय हिंदुस्तान उस के दास कुतुबुद्दीन ऐबक के हाथ में था क्योंकि इसी को वह यहाँ का प्रबंध सौंप गया था। यों भारतवर्ष के राजेश्वरों का राज्य एक दास के अधीन हुआ।

कुतुबुद्दीन ऐबक को शहाबुद्दीन के भतीजे महमूद गोरी ने बादशाह का खिताब भेज दिया और तब से हिंदुस्तान का राज्य निष्कंटक इस के अधिकार में आया। चार बरस राज्य कर के यह मर गया। इस का पुत्र आरामशाह साल भर भी राज्य करने न पाया था कि इस के बह-नोई शम्सुद्दीन ने जो पहिले एक गुलाम था इस को सिंहासन से उतार मुकुट अपने सिर पर रक्खा। इस के समय में बंगाला, मुलतान, कच्छ, सिंधु, कन्नौज, विहार, मालवा और ग्वालियर तक दिल्ली के राज्य में मिल चुका था। इस के मरने के पीछे इस का बेटा रुकुनुद्दीन फीरोज़ बादशाह हुआ किंतु यह ऐसा नष्ट था कि इस को उतार कर लोगों ने इस की बहिन रजिया बेगम को बादशाह बनाया। साढ़े तीन बरस

---

* चंद की उक्ति = 'अब की चढ़ी कमान को जानै फिरि कब चढ़ै।
जिनि चुक्कै चौहान इक्कै मारय इक सर ॥'

मन शाहजहाँ से फेर दिया। पिता का मन फिरा देख शाहजहाँ बागी हो गया। दक्षिण में और बंगाले में यह बराबर लड़ता रहा और बादशाही फौज इस का पीछा किए फिरती थी। अंत में एक अर्जी भेजकर बाप से इस ने अपराध की क्षमा चाही और अपने दो लड़कों को दर्बार में भेज कर आप दक्षिण की सूबेदारी पर चला गया। नूरजहाँ ने एक बेर बंगाले के सूबेदार प्रसिद्ध वीर महाबतखाँ को हिसाब देने को बुला भेजा। महाबतखाँ इस आज्ञा से शंकित होकर आया सही, किंतु पाँच हजार चुने हुए राजपूत अपने साथ लाया। इस समय जहाँगीर काबुल जाता था। ज्योंहीं झेलम पार इस की सैना उतर चुकी थी कि महाबत खाँ ने बादशाह और बेगम को घेर कर अपने अधिकार में कर लिया। किंतु नूरजहाँ की चालाकी से कुछ दिन पीछे (१६२६) जहाँगीर महाबतखाँ के अधिकार से निकल आया। १६२७ में कश्मीर में जहाँगीर ऐसा रोगग्रस्त हुआ कि लाहौर में आकर साठ बरस की अवस्था में मर गया। आसफ़खाँ नामक नूरजहाँ के भाई ने जिस के हाथ में सारा राज्यचक्र था खुसरो के बेटे दावरबख़्श को नाममात्र बादशाह कर के आप काम काज करने लगा और शाहजहाँ को दक्खिन से बुला भेजा। शाहजहाँ के पहुँचने पर आसफ़खाँ ने दावरबख़्श को मार डाला। कहते हैं कि चौदह महीने यह नाम मात्र को बादशाह था। इंग्लिस्तान के बादशाह जेम्स (१) का एलची सर टामस रो जहाँगीर की सभा में आया था।

शाहजहाँ १६२८ में बड़ी धूम धाम से दिल्ली के तख्त पर बैठा। डेढ़ करोड़ रुपया उसी दिन व्यय हुआ था। महाबतखाँ और आसफ़खाँ इस के मुख्य मंत्री थे। दिल्ली फिर से बसाई गई। सात करोड़ दस लाख रुपया लगाकर तखतेताऊस (मोर का सिंहासन) बनवाया। आगरे में ताजगंज नामक प्रसिद्ध स्थान इसी बादशाह का बनवाया है। नूरजहाँ जहाँगीर के पीछे २० बरस जीती रही और शाहजहाँ पच्चीस लाख रुपया साल इस को देता था। शाहजहाँ ने जैसा राज भोगा और सुख किया और हिंदुस्तान की बादशाहत को चमकाया, पहले कभी ऐसा किसी और ने नहीं किया था। बत्तीस

सेन से प्रथम मित्रता दिखला कर फिर विश्वासघात कर के उन को बंदी किया किंतु रानी पद्मावती अपनी बुद्धि और वीरता से राजा को छुड़ा ले गई। फिर तो क्षत्रियों ने जीवनाशा छोड़ कर बड़ा युद्ध किया और सब के सब वीरगति को गए। छत्रानियाँ सब चिता पर बैठ कर भस्म हो गईं। १३०६ में देवगढ़ के राजा के कर न देने से फिर से उस पर चढ़ाई हुई और किला तोड़ा। १३१० में कर्णाटक में द्वारसमुद्र के राजा बल्लालदेव को और तैलंग के राजा लद्धर को जीता। १३११ में विद्रोह के कारण एक दिन में इस ने अपने पंद्रह हज़ार मुग़ल सिपाही कटवा दिए। यह अति उग्र अभिमानी और निष्ठुर था। इस के मृत्यु के वर्ष १३१६ में देवगढ़ के राजा के जामाता राजा हरपाल ने देवगढ़ और गुजरात को जीत कर स्वतंत्र कर दिया। इस के मरने पर मलिक काफ़ूर नामक एक इस के गुलाम ने जिसे इस ने सर्दार बनाया था इस के दो बड़े बेटों को अंधा कर दिया और तीसरे मुबारक को अंधा करते समय आप ही मारा गया। कुतुबुद्दीन मुबारक ने बादशाह हो कर (१३१७) अपने छोटे भाई को अंधा किया और बहुत से सर्दारों को मार डाला। यह अति विषयी और मूर्ख था। इस के एक हिंदू गुलाम ने, जिस का मुसल्मान होने पर खुसरो नाम हुआ था, १३१९ में मलाबार जीता और १३२० में मुबारक को सकुटुंब काटकर आप राज पर बैठा। दिल्ली में चार महीने तक इस का सिक्का चलता रहा। इस के समय में हिंदुओं ने मुसल्मान सर्दारों की स्त्रियों को दासी और वेश्या बनाया, मसजिदों में मूरतें बिठा दीं और क़ुरान की चौकी बना कर उस पर बैठते थे। यह उपद्रव सुनकर पंजाब का सूबेदार गाज़ी खाँ सेना लेकर दिल्ली में आया और खुसरो को मार कर आप बादशाह बना।

गाज़ी खाँ ने बादशाह होकर अपना नाम ग़ियासुद्दीन तुग़लक़ रखा (१३२१)। इस का बाप बलबन का गुलाम था। बीदर और वारंगल जीता। तुग़लक़ाबाद का क़िला बनाया। तिरहुत जीत कर जब लौटा, तो नगर के बाहर इस के बेटे जूना ने एक काठ का नाचघर जो इस के लौटने के आनंद में बनाया था उस के नीचे दब कर मर गया। (१३२५) जूनाखाँ ने गद्दी पर बैठ कर अपना नाम मुहम्मद

कर अराकान भागा और वहीं सवंश मारा गया। दारा ने सिंध की राह से अजमेर आकर बीस हजार सैना एकत्र कर के औरंगजेब पर चढ़ाई किया, किंतु युद्ध में हार गया और औरंगजेब ने बड़ी निर्दयता से उस को मरवा डाला। उस के पुत्र सिपहरशिकोह को ग्वालियर के किले में कैद किया और फिर बहुत से शाहजादों को, जिन का बादशाह से दूर का भी संबंध था, कटवा डाला। कहते हैं कि दाराशिकोह बादशाह होता तो लोग अकबर को भी भूल जाते। इस के पीछे शाहजहाँ सात बरस जिया था।

औरंगजेब के राज्य के आरंभ ही से मुसलमानी बादशाहत का वास्तविक ह्रास समझना चाहिए। जिजिया का कर फिर से जारी हुआ। हिंदुओं के मेले और त्योहार बंद किए। तीर्थ और देवमंदिर ध्वंस किए गए। इसी से 'तीन पुश्त की कमाई' स्वरूप हिंदुओं की जो दिल्ली के बादशाहों से प्रीति थी वह नाश हो गई। इधर दक्षिण में महाराष्ट्रों का उदय हुआ। शिवाजी नामक एक वीर पुरुष ने, जो यादवराव का नाती और मालोजी का पुत्र था, दक्षिण में अपनी स्वतंत्रता का डंका बजाया। पहले विजयपुर के राज में लूटपाट कर के अपनी सामर्थ्य बढ़ा कर १६६२ में बादशाही देशों को लूटना आरंभ किया। बादशाही सैनाध्यक्ष शाइस्ताखाँ ने इन के विरुद्ध आ कर पूने में अपना अधिकार कर लिया। किंतु असम साहसी शिवाजी केवल पचीस मनुष्य साथ ले कर एक रात उस के डेरे में घुस गए और शाइस्ता बिचारे प्राण ले कर भागे। शिवाजी ने अबकी पूने से ले कर गुजरात तक अपना प्रताप बढ़ाया और तंजौर और मंदराज जीत कर १६६४ में अपने को राजा प्रसिद्ध किया। औरंगजेब शिवाजी के इस साहस से बहुत ही खिसिया गया और जयसिंह के साथ बहुत सी सैना उसे जीतने को भेजी। राजा जयसिंह और शिवाजी से संधि हो गई और उस से मरहठे दक्षिण में बादशाही मालगुजारी की चौथ लेने लगे। १६६५ में शिवाजी दिल्ली आए और औरंगजेब ने जब उन को नजरबंद कर लिया तो कुछ दिन पीछे बड़ी सावधानी से वह दिल्ली से निकल गए। १६६७ में औरंगजेब ने शिवाजी को राजा की पदवी भेज दी और बीजापुर

राज्य करके यह मर गया और इस का बड़ा बेटा हुमायूँ अपने को सिकंदर शाह प्रसिद्ध करके बादशाह हुआ। यह केवल ४५ दिन जीआ और इस के पीछे इस का छोटा भाई महमूद तुग़लक़ बादशाह हुआ (११९४)। इस की अवस्था छोटी होने के कारण राज्य में चारो ओर अप्रबंध हो गया और गुजरात, मालवा और ख़ानदेश के सूबे स्वतंत्र हो गये और वज़ीर बिगड़ कर जौनपुर का स्वतंत्र राजा बन बैठा। इसी समय अमीर तैमूरलंग जो कि परमेश्वर की मानो मूर्त्तिमयी संहार शक्ति थी बहुत से तातारियों को लेकर हिंदुस्तान में आया (१३९८)। यह लँगड़ा था। इस के नाम तैमूर साहबकिराँ और गोरकाँ थे और जगद्दाहक चंगेज़ खाँ के वंश में था। पंजाब के रास्ते में भटनेर इत्यादि जितने नगर या गाँव मिले उनको प्रलय की तरह लूटता और जलाता हुआ दिल्ली को भी खूब लूटा और जलाया। लाख मनुष्य जो रास्ते में पकड़ गये थे क़तल किये गये। १५ बरस से छोटे लड़के गुलामी के लिए नहीं मारे गये। महमूद गुजरात में भाग गया और तैमूर के नाम का खुतबा पढ़ा गया। सन् १३९९ में मेरट लूटता हुआ यह अपने देश चला गया। महमूद फिर आया और छ बरस राज्य करके मर गया। और दौलत खाँ लोदी ने पंद्रह महीने तक राज्य किया। तैमूर के सूबेदार ख़िज्र खाँ सैयद ने इस से राज्य छीन लिया। सैयद अहमद ने अपने जामेजम नामक चक्र में नसीरुद्दीन आदि दो तीन बादशाह और लिखे हैं जो और तवारीखों में नहीं हैं। १४१४ से १४२१ तक ख़िज्र खाँ बादशाह रहा और उस के मरने पर उस का बेटा मुबारकशाह बादशाह हुआ। १४३६ में उस के मंत्री अब्दुल सैयद और सदानंद खत्री ने उस को मार कर उस के भतीजे मुहम्मद को बादशाह बनाया। १४४४ ई० में इसके मरने पर इस का बेटा अलाउद्दीन बादशाह हुआ। उस समय की बादशाहत नाम मात्र को था। १४५० ई० में बहलूल लोदी ने पंजाब से आकर तख्त छीन लिया और अलाउद्दीन बदायूँ चला गया।

बहलूल के बादशाह होने से पंजाब दिल्ली में मिल गया। जौनपुर-वालों से छब्बीस बरस तक लड़कर उस ने वह बादशाहत भी दिल्ली में मिला ली। १४८८ में इस के मरने पर इस का बेटा सिकंदर बादशाह हुआ। इसने हिंदुओं को अनेक कष्ट दिए। तीर्थ बंद कर दिए।

संधि की। सिक्खों ने इस के समय में भी बड़ा उपद्रव किया। बहादुर शाह पाँच बरस राज कर के मर गया। इस के पीछे सभी बादशाह बनने लगे और बहुत सा रुधिर बहने के पीछे (१७१२) जहाँदार शाह बादशाह हुआ। यह भी साल भर नहीं रहा कि इस का भतीजा फर्रुखसियर इस को सपरिवार मार कर आप बादशाह हो गया (१७१३)। इस के समय में भाई बंदा नामक सिक्ख बड़ी धर्म-वीरता से मारा गया। १७१६ में सैयद अब्दुल्ला और सैयद हुसेन, जो इस के मुख्य सहायक थे, इस से बिगड़ गये और फर्रुखसियर मारा गया। सैयदों ने रफीउल्दरजात और रफीउलशान को सिंहासन पर बैठाया, किंतु वे चार चार महीने में मर गये। जहाँदार और फर्रुख-सियर ने इतने शाहजादे मार डाले थे कि सैयदों ने बड़ी कठिनता से रौशनअख्तर नामक एक शहजादे को खोज कर कैद से निकाला और मुहम्मद शाह के नाम से बादशाह बनाया। [१७१३] विद्रोह चारों ओर फैल गया। १७२० में मालवा और १७२५ में हैदराबाद स्वतंत्र हो गए। सैयद लोग इस के पूर्व ही मारे जा चुके थे। इधर भरतपुर में जाटों ने नया राज्य स्थापन कर के लूटपाट आरंभ कर दी। इधर प्रताप शाली बाजीराव पेशवा ने दिल्ली के द्वार तक जीत कर चंबल के दक्षिण का सब देश अपने अधिकार में मिला लिया। (१७३७) इस के सर्दारों में से हुल्कर ने इंदौर, सेन्धिया ने ग्वालियर, गायकवाड़ ने बड़ोदा और भोंसला ने नागपुर राज्य स्थापन किया। इसी समय ईश्वर के क्रोध का एक पंचम अवतार ईरान का बादशाह नादिरशाह हिंदुस्तान में आया। करनाल में मुहम्मदशाह ने इस से मुक़ाबला किया, किंतु जब हार गया तो नादिरशाह के पास हाज़िर हुआ। नादिर ने इस का बड़ा शिष्टाचार किया। दोनों बादशाह साथ ही दिल्ली आए। उस समय दिल्ली ऐसे निकम्मे और लुच्चे लोगों से भरी हुई थी कि दूसरे ही दिन लोगों ने यह गप्प उड़ा दी कि नादिरशाह मारा गया। बद-माशों ने उस के मनुष्यों को काटना आरंभ कर दिया। इस बात पर नादिर ने ऐसा क्रोध किया कि सारी दिल्ली को काट देने का हुकुम दिया। डेढ़ पहर तक शाक की भांति लाख मनुष्यों के ऊपर काटे गये। अंत को महम्मदशाह रोता हुआ उस के सामने गया, तब नादिरशाह

तैर कर किसी तरह फिर बच गया। दिल्ली पहुँच कर अपना परिवार लेकर वह लाहौर गया, किंतु वहाँ भी शेरशाह ने पीछा न छोड़ा, इस से वह सिंध होता हुआ राजपुताने में आया। यहीं इसी आपत्ति के समय अमरकोट में १५४२ में अकबर का जन्म हुआ। डेढ़ बरस अमरकोट के राजा के आश्रय में रह कर हुमायूँ ईरान में चला गया और वहाँ के बादशाह की सहायता से वहीं रहने लगा।

शेरशाह ने (१५४०) हुमायूँ के अधीनस्थ सब राज्य अधिकार करके रायसेन, माड़वार और मालवा जीता। (१५४५) चित्तौर जीतने का दृढ़ संकल्प कर के मार्ग में कालिंजर का क़िला घेरे हुए पड़ा था कि रात को मेगज़ीन में आग लगने से झुलस कर प्राण त्याग किया। यह बड़ा धीर और बुद्धिमान् था। घोड़े की डाँक, राजस्वकर, सराय, तहसीलदार आदि कई नियम उस ने उत्तम बाँधे थे। बंगाल से मुलतान तक एक राजमार्ग इस ने बनवाया था। इस के मरने पर इस का छोटा बेटा जलालखाँ सलीमशाह सूर नाम रख कर बादशाह हुआ। १५५३ में इस के मरने पर इस के बेटे फीरोज़-शाह को मार कर इस का साला मुहम्मदशाह अदली बादशाह हुआ। राज्य का सब भार हेमू नामक एक बनिये के ऊपर छोड़ कर आप अति विषय में प्रवृत्त हुआ। चारों ओर बलवा हो गया। इसी वंश के इबराहीम सूर ने दिल्ली, आगरा, सिकंदर सूर ने पंजाब और महम्मद सूर ने बंगाला जीत लिया। हुमायूँ, जो हिंदुस्तान जीतने का अवसर देख ही रहा था, इस समय को अनुकूल समझ कर पंद्रह हज़ार सवार ले कर सिंध उतर कर हिंदुस्तान में आया और (१५५५) पंजाब जीतता हुआ दिल्ली में पहुँच कर फिर से भारतवर्ष के सिंहासन पर बैठा। जितने देश अधिकार से निकल गए थे सब जीते गए। किंतु मृत्यु ने उस को राज भोगने न दिया और एक दिन संध्या को महल की सीढ़ी पर से पैर फिसल कर गिरने से (१५५६) परलोक सिधारा।

इस की मृत्यु पर इस का पुत्र जगद्विख्यात अबुलमुज़फ्फ़र जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर शाह साढ़े तेरह बरस की अवस्था में

हुआ कि बहुत बड़ी सेना ले कर फिर हिंदुस्तान में आया। पेशवा ने यह सुन कर अपने भतीजे सदाशिवराव भाऊ के साथ तीन लाख सेना और अपने पुत्र विश्वास राव को उस से युद्ध करने को भेजा। मरहट्टों ने पहले दिल्ली को लूटा, फिर पानीपति के पास डेरा डाला। पहले कुछ सुलह की बातचीत हुई थी, किंतु अंत को ६ जनवरी १७६१ को दोनों दल में घोर युद्ध हुआ, जिस में दो लाख से ऊपर मरहट्टे मारे गए और अहमदशाह की जय हुई। इस हार से मरहट्टों का उत्साह, बल, प्रताप, सभी नष्ट हो गए और साथ ही मुग़लों का राज्य भी अस्त हो गया। शुजाउद्दौला ने आलमगीर के बेटे अलीगौहर को शाहआलम के नाम से बादशाह बनाया (१७६१)। यह दस बरस तक तो पहले नजीबुद्दौला के डर से इलाहाबाद में पड़ा रहा, फिर उस के मरने पर मरहट्टों की सहायता से दिल्ली में गया। थोड़े ही दिन पीछे ग़ुलाम-क़ादिर नामक नजीबुद्दौला के पोते ने दिल्ली लूट कर बादशाह को पृथ्वी पर पटक कर छाती पर चढ़ कर कटार से आँख निकाल ली और हाथ बाँध कर वहीं छोड़ दिया। महादजी सेंधिया यह सुन कर दिल्ली में आया और ग़ुलामक़ादिर को पकड़ कर बड़ी दुर्दशा से मारा और अंधे शाहआलम को फिर से तख्त पर बैठाया। चारों ओर उपद्रव था। १८०३ में लार्ड लेक ने अँगरेजी सेना ले कर दिल्ली को मरहट्टों के हाथ से लिया और शाहआलम को पिन्शन नियत कर दी। शाहआलम को अकबर सानी और उस को बहादुरशाह हुए। ये लोग साढ़े सोलह लाख की जागीर और पिनशन भोगते रहे। अंत को वह भी न रही। यों मुसल्मानों का प्रतापसूर्य आठ सौ बरस तप कर अस्ताचल को गया।

कनकपात्र रत नगजटित, फेंकत जौन उगार।
तिन की आजु समाधि पर, मूतत स्वान सियार॥
जे सूरज सों बढ़ि तपे, गरजे सिंह समान।
भुज बल विक्रम पारि निज, जीत्यो सकल जहान॥
तिन की आजु समाधि पै, बैठ्यो पूछत काक।
'को' हो तुम अब 'का' भए, 'कहाँ' गए करि साक॥

॥ इति ॥

में था, इस के सेनापति ने जीत लिया। राजा के पहले ही पकड़ जाने पर उस की रानी दुर्गावती बड़ी शूरता से लड़ी।* दो बेर बादशाही फौज को इस ने भगा दिया, किंतु तीसरी लड़ाई में जब हार गई तो आत्मघात कर के मर गई। इस पवित्र स्त्री का चरित्र अब तक बुंदेलखंड में गाया जाता है। अकबर ने बाजबहादुर को अपना निज मुसाहिब बना कर अपने पास रक्खा। १५६८ में अकबर ने चित्तौर का क़िला घेरा। राणा उदयसिंह पहाड़ों में चले गए, किंतु उन के परम प्रसिद्ध वीर जयमल्ल नामक सेनाध्यक्ष ने दुर्ग की बड़ी सावधानी से रक्षा किया। एक रात जयमल्ल क़िले के बुर्जों की मरम्मत करा रहा था कि अकबर ने दूरबीन से देख कर गोली का ऐसा निशाना मारा कि जयमल्ल गिर पड़ा। इस सैनाध्यक्ष के मरने से क्षत्री लोग ऐसे उदास हुए कि सब बाहर निकल आए। स्त्रियाँ चिता पर जल गईं और पुरुष मात्र लड़कर वीर गति को गए। उस युद्ध में जितने क्षत्री मारे गए उन सबका जनेऊ अकबर ने तौलवाया तो साढ़े चौहत्तर मन हुआ। इसी से चिट्ठियों पर ७४॥ लिखते हैं, अर्थात् जिस के नाम की चिट्ठी है उस के सिवा और कोई खोले तो चित्तौर तोड़ने का पाप हो। यद्यपि चित्तौर का क़िला टूटा किंतु वह बहुत दिनों तक बादशाही अधिकार में नहीं रहा। राणा उदय सिंह के पुत्र राणा प्रतापसिंह सदा सर्वदा लड़भिड़ कर बादशाही सेना का नाश किया करते थे। जहाँ बरसात आई और नदी नालों से बाहर आने का मार्ग बंद हुआ कि वह क्षत्रियों को ले कर उतरे और बादशाही फौज को काटा। मानसिंह का तिरस्कार करने से अकबर की आज्ञा से १५७६ में जहाँगीर और महाबत खाँ के साथ बड़ी सैना लेकर मानसिंह ने राणा पर चढ़ाई की। प्रताप सिंह ने हल्दीघाट नामक स्थान पर बड़ा भारी युद्ध किया, जिसमें बाईस हज़ार राजपूत मारे गए। इस पर भी राणा ने हार नहीं माना और सदा लड़ते रहे। अपने बाप के नाम से

* रानी दुर्गावती क्षत्राणी तथा गढ़ा मांडल की अधीश्वरी थी। इससे मालवा से कोई संपर्क न था और इस पर सन् १५६४ ई० में चढ़ाई हुई थी। (सं०)

तुई बर बारगाहे नीयत आगाह।
व पेशे शाह दादी नीयते शाह॥

हे परमेश्वर ! जिस स्थान को देखता हूँ वहाँ सब तेरे ही खोज में हैं और जिस से सुनता हूँ तेरी ही बात करते हैं। धर्माधर्म सब तेरे ही मार्ग में चलते हैं और एक ब्रह्माद्वैत ही का भाषण करते हैं। यदि तेरे वंदना के स्थान हैं तो वहाँ तेरे पवित्र नाम की शब्दध्वनि करते हैं और यदि देवस्थान हैं तो वहाँ सब तेरे ही अभिलाषा में शंखनाद करते हैं। कभी मैं मूर्तिमंदिर की परिक्रमा करता हूँ और कभी तेरे वंदनालय में रहता हूँ, अर्थात् तुझी को घर घर ढूँढ़ता हूँ। यद्यपि जो लोग तुझ में ही लवलीन हो रहे हैं, उन्हें इस द्वैतता से कुछ प्रयोजन नहीं और इन दोनों को तेरे अंतर भेद में गम्य नहीं। मूर्तिपूजकों को मूर्तिपूजा और वंदनावालों को वंदना किसी प्रकार चित्तरोग की शांति है।

यह मंदिर भारतवर्ष के ब्राह्मद्वैतवादियों के विशेष कर काश्मीर प्रांत के प्रिय मूर्तिपूजकों के चित्त तोषार्थ सिंहासन और मुकुट के स्वामी साम्राज्य के मणिद्वीप महाराजाधिराज अकबर की आज्ञा से बनाया गया। जो सत्यानाशी सत्य पर दृष्टि न रखकर इस घर को गिरावेगा वह मानों अपने इष्ट का मंदिर ढहावेगा। यदि ईश्वर से सच्चे चित्त से संबंध है तो सब मत के स्थानों को बनाना चाहिये और मिट्टी पत्थर पर दृष्टि है तो सब को गिराना चाहिये।

हे ईश्वर ! तू सब कर्मों के तत्व का समझनेवाला है और कर्मों की मूल मति है और तू ही हमलोगों की अंतर मति को जानता है और तू ही ने राजा को राजा योग्य मति दी है।

किंतु इस आज्ञापत्र पर दुष्ट औरंगजेब ने कुछ ध्यान न दिया और अपनी आज्ञा से इसे तोड़वा दिया।

औरंगजेब ने एक आज्ञा सन् १०६९ हिजरी में ऐसी प्रचलित की थी कि बनारस में न कोई मंदिर तोड़े जायं, न हिंदुओं को दुख दें। १०६८ में विश्वनाथ का मंदिर उसने तुड़वाया था, उस के साल भर पीछे न जानें क्या दया आपके चित्त में आई कि यह आज्ञा प्रचलित की गई, किंतु यह आज्ञा उस की किसी विशेष युक्ति से शून्य नहीं थी,

अकबर के मरने पर सलीम नूरुद्दीन जहाँगीर के नाम से सिंहासन पर बैठा। इस ने बहुत से कर जो अकबर के समय भी बच गए थे बंद कर दिये। नाक कान काटने की सजा, बादशाही फौज का जमींदार या प्रजा से रसद लेना और अफ़ीम और मद्य का प्रचार इस ने बंद कर दिया। महल में एक सोने की जंजीर लटकाई थी कि किसी दीन दुखी की पुकार जो कोई राजपुरुष न सुनै तो वह जंजीर हिला दे। जंजीर की घंटी के शब्द पर वह आप बाहर निकल आता था और न्याय करता था। किंतु १६०६ में जब उसका लड़का खुसरो पंजाब में बागी हो गया था तब जहाँगीर ने उसके सात सौ साथियों को बड़ी निर्दयता से उस के आँख के सामने मरवा डाला। १८१० से चार बरस तक मलिक अंबर और अहमद से लड़ाई होती रही। १६१४ में खुर्रम (शाहजहाँ) के साथ एक बड़ी सेना इस ने उदयपुर जीतने को भेजी थी, किंतु राजा ने मेल कर लिया। १६११ में जहाँगीर ने नूरजहाँ से व्याह किया। नूरजहाँ का पिता ग़ियासबेग ईरान का एक धनी था किंतु विपत्ति पड़ने से वह व्यापार को हिंदुस्तान आता था। मार्ग में नूरजहाँ का जन्म हुआ। ग़िआस यहाँ आ कर अकबर के दरबार में भरती हो गया था। उसी समय से जहाँगीर की नूरजहाँ पर दृष्टि थी, किंतु अकबर के डर के मारे कुछ कर न सका और शेर अफ़गन नामक एक पठान अमीर के साथ जिसे अकबर ने बंगाला और बिहार में जागीर दी थी, नूरजहाँ का व्याह हो गया था। बादशाह होते ही जहाँगीर ने बंगाले के सूबेदार को नूरजहाँ को किसी प्रकार भेज देने को लिखा। शेर अफ़गन बड़ी वीरता से मारा गया और नूरजहाँ बादशाह के पास भेज दी गई। चार बरस तक जहाँगीर ने इस की सुश्रुषा करके इस के साथ विवाह किया। फिर तो नूरजहाँ ही सारी बादशाहत करती थी; जहाँगीर नाम मात्र को बादशाह था। यह स्त्री चतुर भी अतिशय थी। १६२१ में जहाँगीर का बड़ा बेटा खुसरो मर गया। परवेज़ मूर्ख था, इस से जहाँगीर ने खुर्रम शाहजहाँ को ही अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहा। किंतु नूरजहाँ की बेटी जहाँगीर के चौथे पुत्र शहरयार को व्याही थी, इससे नूरजहाँ ने उसी को बादशाह बनाने की इच्छा से जहाँगीर का

मश्रानी बाएस परेशानी व तफरक: हाल ईं गरोह मी गर्दद लिहाजा हुक्म वाला सादिर मीशवद कि बाद अज़ वरूद ईं मनशूर लामअल-नूर मुकर्रर कुनद कि मन बाद अह्दे बवजूह बेहिसाब तआरुज व तशवीश बअह्वाल बिरहमनान व दीगर हनूद मुतवतन: आँ महाल नरसानद ता आँ हा बदस्तूर एय्याम पेशीं बजा व मुक़ाम खुद बूद: बजमैयत खातिर बदुआए बकाए दौलत दाद अबद मुद्दत अज़ल बुनि-याद कयाम नुमायंद दरीं बाब ताकीद दानद। बतारीख १५ शहर जमादिउस्सानिय: सन् १०६६ हिजरी नविश्त: शुद:

शाहज़ादा सुलतानमुहम्मद मुहर

सुलतान

बरिसालए नवाब कुद्सी अलक़ाब नौ बाद: बर सितान खिलाफत गुर्जी समर: शजर: रफअत चिराग़ दूदमान अबहत फरोग़ खानदान शौकत कुर: नासिर: दौलत व इकबाल तरह नामिया हशमत व इजलाल गिरामी नसब समीउल् मकान अल ममदूह बलसानुल् बाद बातुहर शाहज़ाद: नामदार कामगार वालातबार मुहम्मद सुलतान बहादुर।

यह आज्ञापत्र शाहज़ादे मुहम्मद सुल्तान बहादुर के नाम है। इस का आशय यह है—'कुरान में लिखा है कि पुराने मंदिर को नहीं गिराना और नए नहीं बनाने देना। ऐसा सुना गया है कि बनारस के ब्राह्मणों को लोग दुख देते हैं, इस हेतु यह आज्ञा दी जाती है कि आगे से कोई हिंदुओं के स्थानों को न छेड़े और ब्राह्मणों को निर्विघ्न पाठ पूजा करने दे (इत्यादि) १५ जमादिउस्सानी १०६६।

इस के पीछे का कृत्तवासेश्वर की मस्जिद पर का लेख।

ज़ हुक्मे शाह सुलताने शरीअत। दलीले ज़हद बुर्हाने तरीक़त॥
शहाबे आसमाने सरफ़राज़ी। मुहम्मदशाह आलमगीर ग़ाज़ी॥
सरे अस्नाम बुतखान: शिकस्त:। ज़हूरे मस्जिदे दिलख्वाह गश्त:॥
(१०७७)

करोड़ साल इस की आमदनी थी। प्रति वर्ष सालगिरह में डेढ़ करोड़
व्यय होता था। मकानों में सोना और हीरा जड़ा जाता था। इस पर
भी मरने के समय यह बयालीस करोड़ रुपया नक्द छोड़ गया था।
१६३२ में कंदहार के ईरानी सूबेदार अलीमर्दानखाँ के शाहजहाँ से मिल-
जाने से कंदहार फिर हिंदुस्तान के राज्य में मिल गया था, किंतु इक्कीस
बरस पीछे ईरानियों ने फिर जीत लिया। १६४६ में बुखारा भी बाद-
शाह ने जीता। १६४७ में कई बरस की लड़ाई के पीछे दक्षिण में भी
शांति स्थापन हुई और अबदुल्ला शाह गोलकुंडे के बादशाह से संधि
हो गई। इसी संधि में कोहनूर नामक प्रसिद्ध हीरा बादशाह के हाथ
लगा। शाहजहाँ को चार पुत्र थे। दाराशिकोह, शुजा, औरंगजेब
और मुराद। दाराशिकोह बड़ा बुद्धिमान, नम्र और उदार था, किंतु
औरंगजेब इस के विरुद्ध दीर्घदर्शी और महा छली था। शुजा वीर
था, परंतु अव्यवस्थित था और मुराद चित्त का बड़ा दुर्बल था।
१६५७ में शाहजहाँ बहुत ही अस्वस्थ हो गया। दारा के हाथ में राज
का शासन था। औरंगजेब ने इस अवसर को उत्तम समझ कर मुराद
को बहकाया कि बेदीन दारा से बादशाहत तुम ले लो, हम तुम्हारी
सहायता करेंगे और तुम को तख्त पर बैठा कर मक्के चले जायँगे।
मुराद दारा से लड़ने चला। औरंगजेब भी आगे बढ़ कर उस से मिल
गया। १६६२ में बंगाल से शाहशुजा भी फौज ले कर चढ़ा, किंतु
सुलैमान शिकोह (दाराशिकोह के बेटे) से बनारस के पास लड़ाई में
हार कर फिर बंगाले चला गया। मुराद और औरंगजेब इधर यशवंत
सिंह को जीतते हुए आगरे से एक मंजिल श्यामगढ़ में आ पहुँचे।
दारा एक लाख सवार लेकर इन से युद्ध करने को निकला। राजा
रामसिंह, राजा रूपसिंह, छत्रसाल आदि कई क्षत्री राजे उसकी सहा-
यता को आए थे और बड़ी वीरता से मारे गए। परमेश्वर को मुस-
लमानों का राज्य स्थिर नहीं रखना था इस से हाथी बिचलने से दारा
की फौज भाग गई और औरंगजेब ने आगरे में प्रवेश कर के विश्वास-
घातकता से मुराद को कैद कर के १६५८ में अपने को बादशाह बनाया।
अंत में एक दिन मुराद को भी मरवा डाला और सुलैमानशिकोह को
भी, जो कश्मीर से पकड़ आया था, मरवा डाला। शुजा लड़ाई हार

और गोलकुंडा के बादशाहों से लड़ने को इन को कहला भेजा। शिवाजी इन दोनों बादशाहों से लड़े और अंत में जब संधि हुई तो अपने राज्य का शिवाजी ने सुप्रबंध किया। १६६६ में शिवाजी का प्रभुत्व दक्षिण में स्थिर हो गया था, इस से औरंगजेब ने क्रोध करके महाबत खाँ को बड़ी सैना के साथ उन को दमन करने को भेजा, किंतु (१६७०) शिवाजी ने उन को परास्त कर दिया। इसी समय सत्तनामी और सिख नामक दो दल हिंदुओं के और औरंगज़ेब के विरुद्ध खड़े हुए। १३७८ में जोधपुर के राजा यशवंत सिंह के सिंधुपार मारे जाने पर उन की स्त्री और पुत्र को निरपराध औरंगजेब ने क़ैद करना चाहा। यद्यपि दुर्गादास नामक सैनापति की शूरता से लड़के तो क़ैद नहीं हुए, किंतु बादशाह की इस बेईमानी से राजपुताना मात्र विरुद्ध हो गया। उदयपुर के राणा राजसिंह, जयपुर के रामसिंह और सभी राजाओं ने बादशाह के विरुद्ध शस्त्र धारण किया। इधर दुर्गादास ने औरंगज़ेब के लड़के अकबर को बहका कर बागी कर दिया और सत्तर हज़ार सैना लेकर अजमेर में बादशाही सेना से बड़ा युद्ध किया। १६८० में बिरार, खानदेश, बिल्लोर, मैसूर आदि देश में अपना अधिकार, यश और प्रताप विस्तार कर के शिवाजी मर गए। शिवाजी का पुत्र शंभुजी राजा हुआ और बादशाह के पुत्र मुअज्ज़म को जीत कर बहुत देश लूटा, किंतु एक युद्ध में बादशाही सैना से घिर कर पकड़ा गया और औरंगजेब ने उस को मरवा डाला। इधर बीस बरस के रगड़े झगड़े के पीछे गोलकुंडा और बीजापुर भी औरंगज़ेब ने जीत लिया। यद्यपि इस जीत से औरंगज़ेब का गर्व बढ़ गया, किंतु साथ ही उस का आयुष्य और प्रताप घट गया। दक्षिण की लड़ाई के मारे खजाना खाली हो गया। हिंदुओं का जी अति खट्टा हो गया। अंत में १७०७ में ८६ वर्ष की अवस्था में औरंगजेब मर गया और मुगलों का सौभाग्य भी उसी के साथ कब्र में समाहित हुआ।

औरंगजेब के तीन लड़कों में से आज़म और मुअज्ज़म दोनों ही बादशाह बन बैठे, किंतु आजम लड़ाई में मारा गया और कामबख्श भी दक्खिन में मारा गया, इस से मुअज़्ज़म ही बहादुर शाह के नाम से बादशाह हुआ। इस ने उदयपुर, महाराष्ट्र आदि प्रबल राजों से

ने आज्ञा दिया कि काटना बंद हो जाय। उस की आज्ञा ऐसी मानी जाती थी कि उस के प्रचार होते ही यदि किसी ने किसी के शरीर में आधी तलवार गड़ाई थी सो वहीं से उठा ली—दिल्ली को यों उजाड़ कर के अट्ठावन दिन वहाँ रह कर सत्तर करोड़ का माल साथ लेकर नादिर अपने मुल्क को लौट गया (१३७६)। कुछ दिन पीछे उसके देशवालों ने नादिरशाह को मार डाला और अहमदशाह नामक उस का एक सैन्याध्यक्ष कंदहार, बलख, सिंध और कश्मीर का बादशाह बन बैठा। लाहौर लेते हुए (१७४७) हिंदुस्थान में भी उस ने प्रवेश करना चाहा, किंतु मुहम्मद शाह का पुत्र अहमद शाह ने सरहिंद में युद्ध कर के उस को पीछे हटा दिया। इस के पूर्व (१७३०) बाजीराव मर गए थे, किंतु उन के पुत्र बालाजी राव ने मालवा ले लिया था। १७४८ में मुहम्मद शाह मर गया। यह अति रागरंगप्रिय और विषयी था। इस का पुत्र अहमद शाह बादशाह हुआ। इस के समय में रुहेलों ने बड़ा उपद्रव उठाया था किंतु मरहट्टों ने इनका दमन किया। १७५४ में ग़ाजिउद्दीन ने अहमद शाह को अंधा और कैद कर के जहाँदारशाह के एक लड़के को तख्त पर बैठाया और आलमगीर सानी उसका नाम रक्खा। ग़ाजिउद्दीन ने अहमदशाह दुर्रानी के पंजाब के सूबेदार की माँ को कैद कर लिया था। इस बात से अहमदशाह ने ऐसा क्रोध किया कि बड़ी भारी सैना लेकर सीधा दिल्ली पर चढ़ दौड़ा। ग़ाजिउद्दीन बड़ी दीनता से उस के पास हाजिर हुआ, किंतु वह बिना कुछ लिए कब जाता था। (१७४५) बल्लभगढ़ और मथुरा लूटी और काटी गई। दिल्ली और लखनऊ के लोगों से भी रुपया वसूल किया गया। अंत में नजीबुद्दौला को दिल्ली का प्रधान मंत्री बना कर अपने देश को लौट गया। ग़ाजिउद्दीन ने मरहट्टों से सहायता चाही और पेशवा का भाई रघुनाथ राव दिल्ली पर चढ़ आया। नजीबुद्दौला भाग गया और ग़ाजिउद्दीन फिर वज़ीर हुआ। इधर मरहट्टों ने अहमदशाह दुर्रानी के लड़के तैमूर को पंजाब से निकाल कर वह देश भी अधिकार में कर लिया अर्थात् अब मरहठे सारे भारतवर्ष के अधिकारी हो गए। इसी समय में ग़ाज़िउद्दीन ने बादशाह को मार डाला और आप दिल्ली छोड़ कर भाग गया। अहमदशाह दुर्रानी इस बात से ऐसा क्रोधित

ग्रंथ का उपष्टम्भक

—❀—

अकबर ने काश्मीर में हिंदुओं के हेतु एक मंदिर का जीर्णोद्धार कराया था, क्योंकि उस को मुसल्मान लोग तोड़ डाला करते थे। और उस पर उस की एक आज्ञा भी खुदी हुई है, जो यहाँ प्रकाशित होती है। इस से लोग उसका चित्त देखें।

किताबए अबुलफ़ज़ल बरलौह संग कलीसाए कश्मीर कि बमूजिब हुक्म अकबर तामीर याफ्तः बूद व आँरा औरंगजेब आलमगीर गाज़ी मिस्मार साख्त। इलाही बहर कुजा कि मीनिगरम् जूयाये तवानद व बहर ज़ुबान कि मीशनूम गोयाये तवानद। शैर—

कुफ़्रो इस्लाम दर रहश पोयाँ। वहदः लाशरीक वलह गोयाँ॥

अगर मस्जिदस्त बयाद तो नारः कुदूस मीज़नंद व अगर कलीसास्ता बशौक तो नाक़स मीज़ुंबानंद। शैर—

गहे मुहतक़िफ़ दैरम व गहे साकिने मस्जिद।
यानी कि तुरा मीतलबम् खानः] बखानः॥

गर्चे खासान तररा बकुफ़्रो इस्लाम कारे न पस ईं हर दोरा दरपर्दः इसरार तो बारी नः। शैर—

कुफ़्र काफिर रा व दीन दीनदार रा। जर्रः दर्दे दिल अत्तार रा॥

ईं खानः कि बनीयत तालीफ कुलूब मूहिदान हिंदुस्तान खसूसा माबूद परस्ताँ अर्सए कश्मीर तामीर याफ्तः। शैर—

बफ़र्माने खदीवे तख्तो अफ़सर। चिरागे आफरीनश शाह अकबर॥

हरखानः खराब कि नज़र बर सिद्क नः अंदाख्तः ईं खानः रा खराब साजद बायद कि नखस्त मोबिद खुद रा बर अंदाजद गर्चे नज़र बर्दिल अस्त बाहमः साख्तनीस्त व अगर चश्म बर आबो गिलस्त हमः अंदाख्तनीस्त। शैर—

खुदावंदा चु दारी कार दादी।
मदारे कार बर नीयत निहादी॥

घटना	समय	विशेष
इक्ष्वाकु जन्म, प्रथम बुद्ध	२२००	टॉड ,,
,, ,,	३५००	जॉस ने स्थानांतर में माना है।
श्रीराम ...	८६७१०२	पौराणिक मत से
,, ...	२०२६	जॉंस ,,
,, ...	१३६०	विल्फर्ड ,,
,, ...	९५०	बेंटली के मत से
,, ...	११००	टॉड ,,
युधिष्ठिर ...	३१०२	पौराणिक मत से
,, ...	५७६	बेंटली ,,
,, ...	१४३०	विल्फर्ड ,,
,, ...	१३९१	डेविस ,,
,, ...	११८०	जॉंस और कोलब्रुक ,,
महाभारत का युद्ध...	१३६७	विल्सन के मत से
कश्मीर राज्य-स्थापन	३७१४	
परीक्षित	३१०१	
श्री विष्णु स्वामी	३०००	
श्री निंवार्क स्वामी	३०००	
जनमेजय	१३००	
सुमित्र और प्रद्योत	२१००	पौराणिक मत से
,, ...	१०२९	जॉंस ,,
,, ...	७००	विल्फर्ड ,,
,, ...	११९	बेंटली ,,
,, ...	९१५	विल्सन ,,
,, ...	६००	वर्मावाले ,,
स्वायंभुवमनु ...	४००६	
जयगुप्त ने नैपाल राज्य की स्थापना की	२५९५	

और यह आज्ञा कार्य में परिणित भी नहीं हुई, क्योंकि १०७७ में इसी काशी में कृत्तवासेश्वर का मंदिर इसी की आज्ञा से तोड़ा गया था। वहाँ जो मस्जिद है उस का लेख भी यहाँ प्रकाशित होता है, इसी से उस के चित्त की कुटिलता स्पष्ट होगी। मंदिर न तोड़नेवाला असली आज्ञापत्र काशी में महादेव नामक एक ब्राह्मण के पास अद्यापि विद्यमान है।

बिस्मिल्ला अल्रहमान अल्रहीम

खुदा

लायक़ुल एनायः व अल् मरहमः अबुल्हसन बइल्तफात शाहानः उम्मीदवार बूदः बिदानद कि चूँ बमुक़्तज़ाय मराहिम ज़ाती व मकारिम जबली हमगी हिम्मत वाला नहिम्मत व तमामी नीयत हक़ सबीयत मा-बर-रिफाहियत जम्हूर व इंतजाम अहवाल तबक़ात खवास व अवाम मसरूफस्त व अज़ रूये शरअ शरीफ न मिल्लत मनीफ मुकर्रर चुनीं अस्त कि दैरहाए देरीन बरअंदाख्तः न शवद व बुतकदः-हाए ताजः बिना नयाबद व दरीं अय्याम मादलत इंतजाम बगरज अशरफ़ अकदस अर्फा आला रसीद कि बाज़ मर्दुम अज राह अनफ़ व तादी बहनूद सकनः कस्बः बनारस व बर्खे अमकनः दीगर कि बनिवाहे आँ वाकः अस्त व जमाअः बिरहमनान सदनः आँ महाल कि सदानत बुतखानः हाय कदीम आँजा व आँहा ताल्लुक दारद मुजाहिम व मोतरिज़ मीशवंद व मीख्वाहंद कि एशाँरा अज़ सदानत आँ कि अज़ मुद्दत मदीद ब आँहा मुतअल्लिक अस्त बाज दारंद व ई

घटना	समय	विशेष
शिशु नाग	८७०	जोन्स ,,
तिव्वत राज्यारंभ	६६२ ई० पू०	तिव्वत के अनुसार
विलायत में चाँदी तथा सोने का सिक्का बनना	८६४	
मालवा का राज्य चला (धनंजयस)	८४०	
विलायत में चंद्रग्रहण गिना जाना	७२१	किसी के मत से इसी साल गौतम का जन्म
शिशुनाग	७५७	
वलीद के काल में मुसल्मानों ने भारतवर्ष में उपद्रव मचाया	७११	
अन्हल चौहान	७००	
शंकर ने गौड़ (लखनौती नगर) बसाया	७३१ ई० पू०	
चौहान (राज्यस्थापन, अन्हल चौहान)	७०० ई० पू०	दिल्ली अजमेर का राज्य इस वंश में अब निमरान के राजा हैं।
चीनी और तातारियों में बड़ी लड़ाई	६३६	
नंद ...	... १६००	पौराणिक मत से
,,	६६६	जोन्स ,,
महावीर स्वामी (जैनों के)	६२६	
भारतवर्ण से विजयराज ने लंका में जाकर जीतकर राज स्थापन किये	५४३ ई० पू०	

ब इस्तसवाब नूरुल्लाह मुफ्ती। गुलामे दरगहे पीराने चिश्ती॥
सनाए खानः जीनत अस्त पैदा। जे दौलतखाना तारीखश हुवेदा॥

(१०७७ हि०)

अर्थ—मुसल्मानी धर्म के स्वामी (इत्यादि) औरंगज़ेब बादशाह की आज्ञा से देवमंदिर के देवताओं के सिर तोड़ कर यह मस्जिद बनाई गई (इत्यादि) १०७७ हिजरी।

घटना	समय	विशेष
सिकंदर ...	३३४	
सिकंदर ने हिंदुस्तान पर चढ़ाई की	३३१ ई० पू०	
दूसरे अरस्तू जुकरात, वुकरात आदि का उदय	३३०	
सिकंदर का भारतवर्ष में आगमन	३२७	
सिकंदर की मृत्यु	३२३	
क़हक़हा दीवाल का बनना	३००	
बली ...	६०८ ई० पू०	पौराणिक मत
,, ...	१४६	जोन्स ,,
जैसलमेर में यादवों का राज्य-स्थापन	१५० ई० पू०	
विक्रमादित्य	५६ ई० पू०	

ईसवी सन् से पूर्व या ईसवी सन् में।

घटना	समय	विशेष
विक्रमादित्य गद्दी पर बैठा	५७	
कैसर का उदय	५०	
ईसा मसी फाँसी पड़े	३३ ई०	
रोमवालों ने लंडननगर बनवाया	५० ई०	
सौराष्ट्र में वल्लभी वंश	१ ई०	
मनीपुर राज्यारंभ (पाखंबा)	३५ ई०	
फ़ारस राज्य स्थापन (अर्द शेर)	२२६ ई०	

कालचक्र

अर्थात्

संसार में जो बड़ी बड़ी घटना हुई हैं उन का समय निर्णय

सं० १६४१

घटना	समय	विशेष
गुजरात राज्य-स्थापन (शीलदेव द्वारा)	६६६ ई०	
बापारावल ...	७१३ ई०	
हारूँरशीद ...	७८६	
ईसामसीह के जन्म से ईस्वी संवत की गणना चली	७४८	
वकील विद्या की यूनान और रोम में सृष्टि हुई	७८८	
मेवाड़ राज्य-स्थापन	७५०	
रुरिक ने रूस बसाया	८६१	
इंगलैंडके लोगों ने ईंटा और मोमबत्ती बनाना सीखा	८८४	
चालुक्य वंश राज्य	८१०	
सुबुक्तगीन की भारतवर्ष पर चढ़ाई	९७०	
जयपाल और सुबुक्तगीन का युद्ध	९७७ ई०	
दूसरे आरडोनों ने स्पेन में सत्तर हजार मुसलमानों को मारा।	९१८	
इंगलैंग में फ्रीमैसन चला	९२६	
यूरोप में गणित विद्या चली	९४१	
तैलंग राज्य-स्थापन (राज-धानी वारंगगोला)	९५१	
महमूद ग़ज़नवी की पहली चढ़ाई	१००१	

ॐ कालात्मने भगवते श्री कृष्णाय नमः

भूमिका

हाय! इस 'कालचक्र' को पूरा करके छपाने की भी नौबत न पहुँची कि पूज्यपाद भारतेंदु जी आप ही कालचक्र के कराल गाल में जा फँसे! अस्तु भगवदिच्छा, अब कोई वश नहीं।

यह उन का परिश्रम आप लोगों की सेवा में भेंट किया जाता है, यदि इस से आप लोगों को कुछ भी सहायता मिलेगी तो सब परिश्रम सुफल हो जायगा।

बनारस	सेवक
वैशाख कृष्ण १ सं० १९४९	श्री राधाकृष्ण दास

घटना	समय	विशेष
गया उद्धार के हेतु उदयपुर के नौ राजाओं का वीरगति पाना	१२०० ई०	
रणथम्भौर का हम्मीर	१२६६ ई०	
चंगेज़खाँ ...	१२०६	
हलाकू ...	१२५६	
कुतुबुद्दीन ऐबक	१२०६	
चंगेज़ खाँ का भारत में उपद्रव	१२१२	
रज़िया बेगम स्त्री-बादशाह हुई	१२३६	
दक्षिण पर मुसल्मानों की पहली चढ़ाई	१२६४	
हलाकू ने तातार राज्य स्थापन किया	१२५६	
बंगाले में (लखनौती गौड़) मुसल्मान राज्यारंभ (बखतियार खिलजी)	१२०३	इन लोगों ने अकबर के समय तक राज्य किया
इंगलैंड में जिआग्रफी गई	१२१०	
प्रसिद्ध मैगनाचार्टा पर हस्ताक्षर हुए और पार्लियामेंट इंगलैंड में चली	१२१५	२५ जून
कंपनी बनाकर व्यापार करने की चाल चली	१२३२	
इंगलैंड में प्रतिष्ठित लोगों को इस्कायर कहने की चाल चली।	१२४४	
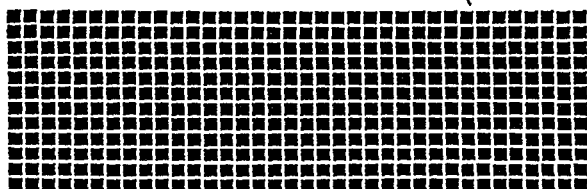
ॐ कालात्मने श्रीकृष्णाय नमः

कालचक्र

[ईसवी के पूर्व का काल]

घटना	समय	विशेष
सृष्टि का प्रारंभ	१६७२६४७१०१	आर्य लोगों के मत से।
सत्ययुग का प्रारंभ	३८६११०१	
त्रेतायुग का प्रारंभ	२१६३१०१	
द्वापरयुग का प्रारंभ	८६७१०१	
कलियुग का प्रारंभ	३१०१	ज्योतिष के मत से
"	१८५७	भागवत "
"	१७७५	ब्रह्माण्ड पुराण "
"	१७२६	वायुपुराण "
"	१०७८०	बौद्ध लोग "
इक्ष्वाकु का जन्म और प्रथम बुद्ध	२१८३१०२	पौराणिक मत से
" "	५०००	जोंस "
" "	२७००	विल्फर्ड "
" "	१५२८	बेंटली "

घटना	समय	विशेष
मालवा राज्य-ध्वंस	१२३० ई०	मुसलमानी राज्य में मिल गया।
गुरु नानक	१४१६	
गुरु अङ्गद	१४३०	
बीजापुर की बादशाहत का आरंभ	१४८६	
इंगलैंड में बारूद बनी	१४१८	
काठ के टाइप से यूरोप में पहले पहल छापना चला	१४३०	
वहाँ शीशा बनाना चला	१४५७	
वहाँ तौल नियत हुई	१४९२	
वास्कोडिगामा का हिंदुस्तान खोजने को चलना	१४६७	
कोलम्बस के साथियों द्वारा अमेरिका का प्रादुर्भाव	१४६६	
बीकानेर राज्य-स्थापन (बीका)	१४५८	
आसाम राज्यारंभ	१४००	
मैसूर राज्य-स्थापन (वड्डावाडियार)	१४६०	
साँगा राणा का बाबर को जीतना।	१५०८	
राणा प्रताप सिंह अकबर का घोर युद्ध।	१५८३	
गुरु अमरदास	१५५२	

घटना	समय	विशेष
सृष्टि का प्रारंभ	४००४	हिबरू धर्म पुस्तक के मत से
,, ...	५८७२	अन्य विद्वानों के मत से
,, ...	४७००	समारतिन मत से
,, ...	४७१०	जूलियन मत से
आदम की उत्पत्ति	४००४	
कायन की उत्पत्ति	४००३	
नूह का प्रलय	२३४६	
चीन राज-स्थापन	२२०७	
मिश्र राज्य-स्थापन	२१८८	
इब्राहीम का जन्म	१९९६	
हिंदुस्तान से एथिओपियन लोगों का मिश्र में जाना	१६१५	
मूसा की उत्पत्ति	१५७१	
यूनान की सभ्यता	१५००	
यूरोप में पहले पहल जहाज़ चलना	१४८५	
शाक्य सिंह	१०२७ ई० पू०	चीनियों के अनुसार
,,	९६२ ई० पू०	तिब्बत के अनुसार
दाऊद का काल	१०३४	
रुस्तम हिंदुस्तान में आकर कन्नौज में शिवराजवंश स्थापन किया	१०२७ ई० पू०	फरिश्ता
सुलेमान का उदय	९९२	
क्वीन सेमीरैमिस अर्थात् शमीरामा देवी	८१०	तृतीय बलबश की स्त्री कहते हैं कि यह भारतवर्ष में आई थी।
शिशु नाग	१९६२	पौराणिक मत से

घटना	समय	विशेष
गुरु हरिगोविंद	१६०६	
गुरु हरिराय	१६६४	
गुरु हरिकृष्ण	१६६१	
गुरु तेगबहादुर	१६६४	
गुरु गोविंदसिंह	१६७५	
व्यास जी	१६१२	
अकबर का मरना	१६०५	
शिवा जी का जन्म	१६२७	
ईस्ट इंडिया कंपनी स्थापित हुई	१६००	
मदरास में अंगरेज जमे	१६२०	
तथा बंबई में	१६६१	
बंदा साहब	१७०८	
लंका का राज्य अंगरेजों ने लिया	१७६८	
हैदराबाद का राज्य आसफ-जाह ने स्थापन किया	१७१७	
बाजीराव का अंत	१७१८ ई०	
लखनऊ राज्यारंभ	१७००	
पानीपत में भाऊ की हार	१७५६	
शाह आलम को गुलाम कादिर ने अंधा किया	१७८८	
सिंहल (लंका) का अंतिम राजा श्रीविक्रमराजसिंह	१७६८ ई०	अंगरेज़ों ने लिया
सर न्यूटन जोतसी	१७००	

घटना	समय	विशेष
ब्रह्माराज्य स्थापन	६६१ ई० पू०	
विलायत में गानविद्या का नियमित रूप से चलना	६००	
चंद्रगुप्त ...	१५०२	पौराणिक मत से
,, ...	६००	जोन्स ,,
गौतम (बौद्ध मत का प्रचार)	६०८ ई० पू०	बर्मा वालों के मत से
रोम नगर में पहिले पहले मद्दु मशुमारी	५६६	
नौशेरवाँ की सेना हिंदुस्तान में आई।	५३०	
एथीन्सनगर में पहले पहल दुःखांत नाटक खेला जाना	५३५	
पयथागोरस मिश्र में आया	५३४	
अशोक ...	१४७०	पौराणिक मत से
,, ...	५४०	जोन्स ,,
अरस्तू का अंत और सुकरात का उदय	४६८	
नंद ...	४१५	नवीन विद्वानों के मत से।
दहलू ने दिल्ली बसाई	४७१ ई० पू०	
सिकंदर का जन्म	३५६	
चंद्रबीज (मगध का अंतिम राजा)	४५२	पौराणिक मत से
,,	३००	जोन्स ,,
चंद्रगुप्त ...	३१५ ई० पू०	
अशोक ...	३३० ई० पू०	

घटना	समय	विशेष
फ़रासीस में अंगरेज़ों को अति दुःखित जान कर दयालु आर्यों ने केवल वंगदेश से पद्रह लाख और अन्य २ देश में से करोड़ों रुपया भेजा।	१७६८	इलबर्टबिल विद्वेषी इस को पढ़ कर भी हमलोगों से कृतघ्नता करने में न चूकेंगे?
टीपू हारा, अंगरेज़ों ने श्रीरंगपट्टन लिया।	१७६६	
हैदराबाद में निजाम राज्य-स्थापन (आसफ़जाह)	१s१७	
वनारस में सरकार का राज्य	१७६३	राजा चेतसिंह को निकाल दिया १७८१
वज़ीर अली का उपद्रव	१७६८	
मथुरा में क़त्लेआम	१७५८	
नादिरशाही	१७३६ ई०	
कलकत्ता सर्कार ने लिया	१७५८	
पलासी की लड़ाई	१७६३	
विजयनगर (विद्यानगर) राज्य-नाश	१७५६	राजा त्रिमल राव को सुलतान ख़ाँ ने राज्य से उतारा।
पेशवा राज्यारंभ (बाला जी)	१७४०	
नागपुर राज्यारंभ (रघु जी)	१७३४	भोंसले

घटना	समय	विशेष
आमेर राज्य-स्थापन (नल-नरवर गढ़)	२६४ ई०	
कर्णाट राज्यस्थापन	३०० ई०	
यूनान और एशिया में महाभूकंप हुआ १५० नगर नष्ट हो गये	३५८	
राठौर राज्य कन्नौज में स्थापन (यवनाश्व)	३००	
भोज ...	४८३ ई०	
मुहम्मद ...	५६४ ई० जन्म ५६६ ई० मृत्यु ६५३ ई०	
भारतवर्ष से यूरप में रेशम गया	५५१ ई०	
एलोमार्चिश ...	६४८ Poulomeon of Chinese	
अबूबकर ...	६३२ ई०	
उमर ...	६३४	
उसमान ...	६४४	
अली ...	६५६	
हुसेन ...	६६१	
करबला का युद्ध ...	६८१	
मुहम्मद का मदीने पलायन हिजरी सन् का स्थापन	६२२	
मुसल्मानों ने इसकंदरिया का प्रसिद्ध पुस्तकालय जला दिया जिस में केवल पुस्तकों की अग्नि से महीनों सब काम हुआ. हा !	६४०	

घटना	समय	विशेष
महारानी विक्टोरिया राज्य पर बैठी	१८३७ २० जून	उस समय अंगरेजी राज्य की आमदनी साढ़े छियालिस करोड़ थी।
महारानी विक्टोरिया का विवाह। दोस्तमहम्मद का पकड़ा जाना। रेल का नियमित रूप से चलना	१८४१ फर्वरी १०	
प्रिंस आफ वेल्स का जन्म	१८४१	
प्रिंसेस आफ वेल्स का जन्म	१८४४	
हिंदुस्तान में बलवा	१८५७	
महारानी का ईस्ट इंडिया कंपनी से राज्य अपने हाथ में लेना	१८५८	
ड्यूक आफ एडिन्बरा का भारतवर्ष में आना	१८७० ई०	
प्रिन्स आफ वेल्स का शुभागमन	१८७५ ई०	
स्वामी दयानंद का उदय	१८७०	
महारानी का इम्प्रेस आफ इंडिया का पद धारण करना	१८७७	
हिंदी में प्रथम नाटक (नहुष नाटक)	१८५९	
तथा द्वितीय—(शकुंतला)	१८६३	

घटना		समय	विशेष
जान एडम	...	१८२३—१८२३ ई०	
एमहर्स्ट	...	१८२३—१८२८ ई०	
बेली	...	१८२८—१८२८ ई०	
बेन्टिक	...	१८२८—१८३५ ई०*	
मेटकाफ़	...	१८३५—१८३६ ई०	
ऑकलैंड	...	१८३६—१८४२ ई०	
एलेनबरा	...	१८४२—१८४४ ई०	
हार्डिंग्ज	...	१८४४—१८४८ ई०	
डलहौसी	...	१८४८—१८५६ ई०	
कैनिंग	...	१८५६—१८६२ ई०†	
एलगिन	...	१८६२—१८६३ ई०	
राबर्ट नेपियर	...	१८६३—१८६३ ई०	
विलियम डेनिसन		१८६३—१८६४ ई०	
लारेन्स	...	१८६४—१८६९ ई०	
मेयो	...	१८६९—१८७२ ई०	
स्ट्राची	...	१८७२—१८७२ ई०	
मार्चिस्टून (लॉर्ड नेपियर ऑव)		१८७२—१८७२ ई०	
नॉर्थब्रुक	...	१८७२—१८७६ ई०	
लिटन	...	१८७६—१८८० ई०	
रिपन	...	१८८०—१८८४ ई०‡	

* अब तक ये पदाधिकारी गवर्नर जेनरल ऑव बंगाल कहलाते थे पर इन्हीं के समय से गवर्नर जेनरल ऑव इंडिया कहे जाने लगे। (सं०)

† सन् १८५८ ई० से क्वीन विक्टोरिया के घोषणापत्र से ये पदाधिकारी वाइसराय भी कहे जाने लगे। (सं०)

‡ इसके अनंतर के बड़े लाटों की सूची इस प्रकार है—

डफरिन	१८८४—१८८८ ई०
लैन्सडाउन	१८८८—१८९४ ई०
एल्गिन	१८९४—१८९९ ई०

घटना	समय	विशेष
कुष्ठ की बीमारी भारतवर्ष में देखी गयी	१३००ई०पू०	डाक्टर राजेन्द्रलालमित्र लिखते हैं कि कुष्ठ की बीमारी ऐत्रे ऋषि के समय में प्रथम भारतवर्ष में दिखाई दी जिसे आज ३२ सौ वर्ष हुए होंगे।

—(-:०:-)—

जयपुर राजवंश

नाम		राज्यारम्भ सन्		मृत्यु सन्
पृथ्वी सिंह	...	१५०३	...	१५२८ ई०
भारमल्ल	...	१५२८	...	१५७४ ई०
भगवानदास	...	१५७४	...	१५९० ई०
मानसिंह	...	१५९०	...	१६१५ ई०
भावसिंह	...	१६१५	...	१६२१ ई०
जयसिंह	...	१६२२	...	१६६७ ई०
रामसिंह	...	१६६७	...	१६९९ ई०
जयसिंह	...	१७००	...	१७४४ ई०
ईश्वरीसिंह	...	१७४४	...	१७५१ ई०
माधोसिंह	...	१७५१	...	१७७८ ई०
प्रतापसिंह	...	१७७९	...	१८०३ ई०
जगतसिंह	...	१८०३	...	१८१९ ई०
रामसिंह	...	१८३५	...	१८८० ई०
माधोसिंह	...	१८८०	...	०

* मानसिंह वर्तमान नरेश हैं। यह सूची अधूरी है, बीच बीच में भी नाम छूट गए हैं। मृत्यु के कारण भारतेंदु जी इसे ठीक नहीं कर सके। (सं०)

घटना	समय	विशेष
गुरु रामदास	१५७४	
गुरु अर्जुन	१५८१	
श्रीवल्लभाचार्य	१५३५	
श्री कृष्ण चैतन्य	१५४२	
श्री हितहरिवंशजी	१५८२	
बाबर का दिल्ली राज्य पर बैठना	१५२६	
सक्के ने चमड़े का सिक्का चलाया	१५३६	
गोलकुंडा की बादशाही का आरंभ	१५१२	
डिफेंडर आफ दी फेथ का पद हेनरी (७) को दिया गया जो अब भी महारानी को है।	१५२१	Defender of the faith
प्रोटेस्टेंट मत स्थापन	१५२६	
एंगलैंड में डाकखानों की सृष्टि	१५३१	
वहाँ के लोगों ने सूई बनाना सीखा।	१५४५	
मेरी स्काटलैंड की रानी का सिर काटा गया।	१५८७	एलिजबेथ ने व्यर्थ यह पाप किया। एलिजबेथ बड़ी पापासक्त थी किंतु प्रकट में धार्मिक बनी थी।
इंगलिश मर्क्यूरी नामक प्रथम समाचारपत्र चला	१५८८	English Mercury
कवि शेक्सपीयर का उदय	१५६५	
शिवाजी	१६४७ ई०	

घटना	समय	विशेष
इंगलिस्तान में सूत की कल तथा फारस में प्रथम बैल्यून	१७३०	
कलकत्ता अंगरेज़ों ने स्वाधीन किया	१७५६	
बकसर की सिराजुद्दौला की लड़ाई	१७६४	
यह बात जानी गई कि जल दो वायु मिलकर बनता है	१७८१	
अमेरिका स्वतंत्र हुआ, सवा अरब रुपया, पचास हजार प्राणी और कई टापू गवाँ कर अंगरेज़ शांत हुए	१८७२	
विद्युत्शक्ति प्रचारक बेनजामिन फैंकलिन मरा	१७६०	
नेपोलियन बोनापार्ट	उदय १७६४ अस्त १८२१	
वारन हेस्टिंग्स—जिस ने राजा चेतसिंह से महा अन्याय पूर्वक बनारस का राज्य छीना था, सात लाख रुपया पार्लियामेंट में व्यय कर के सात बरस में उन लोगों की दृष्टि में दोष मुक्त हुआ।	१७६५	किंतु न्यायकर्त्ता परमेश्वर के सामने से दोष मुक्त कब हो सकता है ?

घटना	समय	विशेष
सेंधिया राज्यारंभ (रानू जी)	१७२४	
हुलकर राज्यारंभ (मल्हार राव)	१७२४	
गाइकवाड़ राज्यारंभ (दामाजी)	१७२०	
महाराज रणजीतसिंह	१८०५	
लखनऊ में बादशाही पद गाजीउद्दीन	१८१४	
लखनऊ का नाश	१८४७	
लार्ड लेक ने दिल्ली ली	१८०३	
तार की ख़बर का प्रचार.	१८००	
इन्जिन से नाव चलाना चला	१८१२	
शाहशुजा से महाराज रणजीत सिंह ने कोह-नूर हीरा लिया।	१८१४	
महारानी विक्टोरिया का जन्म	१८१६ मई २०	
लार्ड बेंटिंक ने सती होना बंद किया।	१८२६	
अमेरिका से पहले पहल जहाज़ में बरफ़ भर के कलकत्ते में आया।	१८३३	
अंगरेज़ी राज्य के सब टापू में लौंडी गुलाम स्वतंत्र कर दिए गए।	१८३४	

में से ऐसी थोड़ी सी बातें चुन कर दिखाते हैं जो बहुत से विद्वानों की जानकारी में आज तक नहीं आई हैं।

रामायण बनने का समय बहुत पुराना है, यह सब मानते हैं। इस से उस में जो बातें मिलती हैं वे उस जमाने में हिंदुस्तान में बरती जाती थीं, यह निश्चय हुआ। इस से यहाँ वे ही बातें दिखाई जाती हैं जो वास्तव में पुरानी हैं पर अब तक नई मानी जाती हैं और विदेशी लोग जिन को अपनी कहकर अभिमान करते हैं।

रामायण कैसा सुंदर ग्रंथ है और इस की कविता कैसी सहज और मीठी है, इसे जिन लोगों ने इस की सैर की है वे अच्छी तरह जानते हैं, कहने की आवश्यकता नहीं। और इस में धर्मनीति कैसी चाल पर कही है, इस से हम यहाँ पर और बातों को छोड़ कर केवल वही बातें दिखाना चाहते हैं जो प्राचीन विद्या (एंटीक्वेटी) से संबंध रखती हैं।

बालकांड—अयोध्या के वर्णन में किले की छत पर यंत्र रखना लिखा है। यंत्र का अर्थ कल है * इस से यह स्पष्ट होता है कि उस जमाने में किले की बचावट के हेतु किसी तरह की कल अवश्य काम में लाई जाती थी, चाहे वे तोप हों या और किसी तरह की चीज़ (या यंत्र से दूरबीन मतलब हो)।

---

* यंत्र उस को कहते हैं जिस से कुछ चलाया जाय। श्रीगीता जी में लिखा है "ईश्वरः सर्व्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। भ्रामयन् सर्व्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया"। ईश्वर प्राणियों के हृदय में रहता है और वह भूत मात्र को जो (मानो) कल पर बैठे हैं माया से घुमाता है। तो इस से स्पष्ट होता है कि यंत्र से इस श्लोक में किसी ऐसी चीज से मतलब है जो चरखे की तरह घूमती जाय। कल शब्द भी हिंदी है, "कल गतौ" से बना हो वा "कल प्रेरणे" से निकला होगा (कवि-कल्पद्रुम कोष देखो) दोनों अर्थ से उस चीज़ को कहेंगे जो आप चले वा दूसरे को चलावे।

घटना	समय	विशेष
तथा तृतीय (विद्यासुंदर)	१८७१	
हिंदी नए चाल में ढली	१८७३	
हिंदी का प्रथम समाचार पत्र (सुधाकर)	१८५०	
तीर्थों का कर छूटा	१८३७	
बनारस में पसेरी का उपद्रव	१८४२	
काशी में दो महीने का महा भूकंप	१८३७	
पीपे में आग लगी	१८५०	
लाट भैरो की हिंदू मुसल्मान की लड़ाई	१८०६	
पेशवा राज्यांत बाजीराव	१८१८	
नागपुरराज्यांत (मूडाजी)	१८१८	
इलबर्ट बिल और आर्यों में ऐक्य का बीज	१८८३	
गवर्नरजेनरल वारेन हेष्टिंग्स	१७७४—१७८५ ई०	
मैकफर्सन ब्यारोनेट	१७८६—१७८६ ई०	
कॉर्नवालिस ...	१७८६—१७९३ ई०	
सर जान शोर ...	१७९३—१७९८ ई०	
एलुरेड क्लार्क ...	१७९८—१७९८ ई०	
वेल्सली ...	१७९८—१८०५ ई०	
मार्क्विस कॉर्नवालिस	१८०५—१८०५ ई०	
बार्लो ...	१८०५—१८०७ ई०	
मिन्टो ...	१८०७—१८१३ ई०	
हेस्टिंग्स ...	१८१३—१८२३ ई०	

लिखा है, इस से प्रकट है कि रामायण के बनने से पहिले जैनियों का मत था।

जिस समय राजा दशरथ ने अश्वमेध यज्ञ किया उस समय का वर्णन है कि रानी कौशिल्या ने अपने हाथ से घोड़े को तलवार से काटा। इस बात से प्रगट होता है कि आगे की स्त्रियों को इतनी शिक्षा दी जाती थी कि वह शस्त्रविद्या में भी अति निपुणता रखती थीं।

अभी एशियाटिक सोसाइटी के जरनल में पंडित प्राणनाथ एम० ए० ने इस का खडन किया है कि वराहमिहर के काल में श्रीकृष्ण की पूजा ईश्वर समझ के नहीं करते थे और वराहमिहर के श्लोकों ही से श्रीकृष्ण की पूजा और देवतापन का सबूत भी दिया है। और भी बहुत से विद्वान इस बात में झगड़ा करते हैं। और योरोप के विद्वानों में बहुतों का यह मत है कि श्रीकृष्ण की पूजा चले थोड़े ही दिन हुए, पर ४० वें सर्ग के दूसरे श्लोक में नारायण के वास्ते दूसरा शब्द वासुदेव लिखा है और फिर पचीसवें श्लोक में कपिलदेव जी को वासुदेव का अवतार लिखा है; इस से स्पष्ट प्रगट है कि उस काल से श्रीकृष्ण को लोग नारायण कर के जानते और मानते हैं। *

अयोध्याकाण्ड—२० वें सर्ग के २९ श्लोकों में रानी कैकेयी ने राम जी को वन जाते समय आज्ञा दिया कि मुनियों की तरह तुम भी माँस न खाना, केवल कंदमूल पर अपनी गुजरान करना। इस से प्रकट है कि उस समय मुनि लोग माँस नहीं खाते थे †।

३० वें सर्ग के ३७ श्लोक में गोलोक का वर्णन है। प्रायः नये विद्वानों का मत है कि गोलोक इत्यादि पुराणों के बनने के समय के पीछे निकाले गए हैं और इसी से सब पुराणों में इन का वर्णन नहीं

* भारत के भी आदि पर्व का २४७ से २५३ श्लोक तक और २४२७ से २४३२ श्लोक तक देखो, श्रीकृष्ण को परब्रह्म लिखा है। और भी भारत में सभी स्थानों में है, उदाहरण के हेतु एक पर्व मात्र लिखा।

† यहाँ माँस से बिना यज्ञ के माँस से मुराद होगी।

घटना	समय	विशेष
ब्राह्म मत का प्रचार ...	१८२७ ई०	
पहिली पुस्तक छपी ...	१४५७ ई०	
एशियाटिक सोसाइटी स्थापन	१७४८ ई०	
काबुल युद्ध ...	१८४२ ई०	
भारत में प्रथम ईस्ट इंडियन रेल का खुलना	१८५४ ई०	
महाराज जंगबहादुर की मृत्यु	१८७७ ई०	
मिस्टर ग्लैडस्टन का जन्म	१८०९ ई०	
गारी बाल्डी का जन्म ...	१८०७ ई०	
,, मृत्यु ...	१८८२ ई०	
बुद्ध का जन्म ...	५५० ई० पू०	

कर्जन	१८९९–१९०४ ई०
एम्टहिल	१९०४–१९०४ ई०
कर्जन	१९०४–१९०५ ई०
मिंटो	१९०५–१९१० ई०
हार्डिंग	१९१०–१९१६ ई०
केम्सफोर्ड	१९१६–१९२१ ई०
रीडिंग	१९२१–१९२६ ई०
अर्विन	१९२६–१९३१ ई०
विलिंगडन	१९३१–१९३६ ई०
लिनलिथगो	१९३६–१९४३ ई०
वावेल	१९४३–१३४६ ई०
माउंटबेटन	१९४६–

१५ अगस्त सन् १९४७ को भारत को स्वतंत्रता अंग-भंग के साथ मिली।

देश में गदहे और कुत्ते अच्छे होते थे, दूसरे यह कि वहाँ की हिंदुस्तान से राह सिंधु देकर थी।

७१ वें सर्ग में मूर्त्तियों का वर्णन है, इस से दयानंद सरस्वती इत्यादि का यह कहना कि रामायण में कहीं मूर्त्तिपूजन का नाम नहीं है अप्रमाण होता है।

इसी स्थान में निषाद का लड़ाई की नौकाओं के तैयार करने का वर्णन है, जिस से यह बात प्रमाणित होती है कि उस काल के लोग स्थल की भाँति पानी पर भी लड़ सकते थे। *

दक्षिण के लोगों की सिर में फूल गूँथने की बड़ी प्रशंसा लिखी है। इस से यह बात झलकती है कि उत्तर के देश में फूल गूँथने का विशेष रिवाज नहीं था।

१०८ सर्ग में जाबालि मुनि ने चार्वाक का मत वर्णन किया है। और फिर १०९ सर्ग में बुध का नाम और उन के मत का वर्णन है। इस से प्रगट है कि ये दोनों वेद के विरुद्ध मत उस समय में भी हिंदुस्तान में फैले हुये थे। अभी हम ऊपर बालकाण्ड में जैनियों के उस काल में रहने का जिक्र कर चुके हैं तो अब ये सब बातें रामायण के बनने के समय, बुध के जन्म का और बौद्ध और जैन मत अलग होने के समय की विवेचना में कितनी हलचल डालेंगी प्रगट है।

आरण्यकांड—चौथे सर्ग के २२३ श्लोक में लिखा है कि असुरों की यह पुरानी चाल है कि वे अपने मुर्दें गाड़ते हैं। इस से प्रगट है कि वेद के विरुद्ध मत माननेवालों में यह रीति सदा से चली आती है।

किष्किंधाकांड—१३ वें सर्ग के १६ श्लोक में कलम अर्थात् जोंधरी के खेत का बयान है, और कोष में "लेखनी कलमित्यपि" लिखा है। इस वाक्य से प्रगट होता है कि क़लम लिखने की चीज़ का नाम संस्कृत में भी है और वह और चीज़ों के साथ जोंधरी का भी होता था; और इसी से यह भी साफ़ हो जाता है कि सिवा ताड़ के पत्र के कागज़ पर भी आगे के लोग लिखते थे, क्योंकि ताड़ पर मिटने के डर से सिर्फ़

* सर्ग ८४ श्लोक ७-८। (सं०)

भरतपुर के राजाओं का नाम।

नंबर	नाम रईस	गद्दी नशीनी का संवत्	देहान्त संवत्	मुद्दत हुकूमत
१	बदनसिंह	संवत् १७७६ चैत सुदी १	संवत् १८१२ ज्येष्ठ सुदी १०	३३ बरस, २ माह, १० दिन।
२	सूरजमल	संवत् १८१२ ज्येष्ठ सुदी १२	संवत् १८२० पौष कृष्ण १२	८ साल, छः माह, १५ दिन।
३	जवाहिरसिंह	संवत् १८२० पौष कृष्ण १३	संवत् १८२५ श्रावण सुदी १५	४ साल, ७ माह, १७ दिन।
४	रत्नसिंह	संवत् १८२५ भाद्रपद कृष्ण १	संवत् १८२६ चैत्र सुदी ५	७ माह, २० दिन
५	केसरीसिंह	संवत् १८२६ चैत्र सुदी ६	संवत् १८३४ चैत्र कृष्ण १५	७ साल, ११ माह, २४ दिन।
६	रणजीतसिंह	संवत् १८३४ चैत्र सुदी १	संवत् १८६२ मृगशिर सुदी १५	२७ साल, ८ माह, १५ दिन।
७	रणधीरसिंह	संवत् १८६२ पौष कृष्ण १	संवत् १८८० आश्विन सुदी ४	१७ साल, ६ माह, १६ दिन।
८	बलदेवसिंह	संवत् १८८० आश्विन सुदी ५	संवत् १८८१ फागुन सुदी ११	१ साल, ४ माह, १६ दिन।
९	दुर्जनशाल	संवत् १८८१ चैत्र कृष्ण ६	संवत् १८८२ पौष सुदी १० *	९ माह, १७ दिन।
१०	बलवन्तसिंह	संवत् १८८२ पौष सुदी ११	संवत् १९०९ फाल्गुन सुदी १०	२७ साल, २ माह, २ दिन।
११	महाराज जसवंतसिंह	संवत् १९१० आषाढ़ कृष्ण २	संवत् १९४२ तक मौजूद	३२ साल जारी।

—❀—

* यह गद्दी से भारत-सरकार द्वारा उतारे गए थे और यह मिती मृत्यु की न होकर गद्दी से हटाए जाने की है। (सं०)

६ वें सर्ग के २५ और २६ श्लोकों में वर्णन है कि लंका में जो गलीचे बिछे थे उन में घर, नदी, जंगल इत्यादि बने हुये थे। अब यदि विलायत का कोई गलीचा आता है, जिस में मकान, उद्यान इत्यादि बने रहते हैं तो देख कर हम लोग कैसा आश्चर्य्य करते हैं। कैसे सोच की बात है कि हम लोग नहीं जानते कि हमारे हिंदुस्तान में भी इस प्रकार की चीजें पहिले बनती थीं। यहीं पर जब हनुमान जी ने रावण के मंदिरों को जा कर देखा है तो उस में भोजन के अनेक प्रकार के धातुओं के, मणियों के और काँच के पात्रों को भी देखा है। चिमचा, काँटा आदि भी उस समय होता था और बड़ी शोभा से खाना-चुना जाता था। और भी अँगरेजी चाल के पात्र और गहने भुवनेश्वर के मंदिर में भी बहुत प्राचीन काल के बने हैं। बाबू राजेंद्र लाल मित्र का उड़ीसा प्रथम भाग देखो।

इसी स्थान में अशोक-वन में जानकी जी के शिंशिपा के दरख्त के नीचे रहने का वर्णन है।

हिंदुस्तान के बहुत से पंडितों का निश्चय है कि शिंशिपा शीशम वृक्ष को कहते हैं। किंतु हमारी बुद्धि में शिंशिपा सीताफल अर्थात् शरीफे के वृक्ष को कहते हैं। इस के दो बड़े भारी सबूत हैं। प्रथम तो यह कि यदि जानकी जी से शरीफे से कुछ संबंध नहीं तो सारा हिंदुस्तान उस को सीताफल क्यों कहता है। दूसरे यह कि महाभारत के आदि पर्व में राजा जन्मेजय की सर्पयज्ञ की कथा में एक श्लोक है जिस का अर्थ यह है कि आस्तिक की दोहाई सुन कर जो सांप न जायगा उस का सिर शिंश वृक्ष के फल की तरह सौ टुकड़े हो जायगा *। शिंश और शिंशपा दोनों एकही वृक्ष के नाम हैं, यह कोषोंसे और नामों के संबंध से स्पष्ट है। शीशम के वृक्ष में ऐसा कोई फल नहीं होता जिस में बहुत से टुकड़े हों। और शरीफ़े का फल ठीक ऐसाही होता है जैसा श्लोक में लिखा है। इस से लोग निश्चय करें कि सीता जी शरीफ़े ही के वृक्ष के नीचे थीं।——

---

* आस्तीक वचनं श्रुत्वा यः सर्पो न निवर्त्तते।
शताधाभिद्यतेमूर्द्धा शिंशिवृक्ष फलं यथा॥

रामायण का समय

सं० १९४१

लाई जाती थी। इन बातों से हमारा यह कहना तो ठीक ज्ञात होता है कि आगे कल * अवश्य थी पर शतघ्नी किस चाल का हथियार था यह हम नहीं कह सकते। †

११३ सर्ग ४२ श्लोक में राजा भोज के बेटे के नाम से जो सिंह और रीछ की कहानी प्रसिद्ध है वह ठीक ठीक यहाँ कही गई है।

(११० सर्ग २७ श्लोक) रामजी से ब्रह्मा ने कहा कि सीता लक्ष्मी हैं और आप कृष्ण हैं। (इस से हमारा वासुदेव शब्द वाला पहिला प्रमाण और भी दृढ़ होता है। ‡

(१२७ सर्ग ३ श्लोक) पुराणों का वर्णन है।

(१२८ सर्ग) जब राजा लोग राज पर बैठते थे तब नज़र खिलअत इत्यादि आगे भी ली और दी जाती थीं। इसी सर्ग में लिखा है कि रामायण वाल्मीकि जी ने जो पहिले से बनाया है वह जो सुनता है सो सब पापों से छूट जाता है। इस में (पुराकृतं) पद से जैसे मनु का शास्त्र भृगु ने एकत्र किया है वैसे ही वाल्मीकिजी की कविता भी किसी ने एकत्र किया है, यह संदेह होता है। इसी सर्ग के १२० श्लोक में लिखा है कि जो रामायण लिखते हैं उनको भी पुण्य होता है। इस से उस काल में पोथियाँ लिखी जाती थीं, यह भी स्पष्ट है।

---

* महाभारत की टीका में युद्ध में नीलकंठ चतुर्धर ने यंत्र का अर्थ अग्नि यंत्र लिखा है, पर राजा राधाकांत ने अग्नियंत्र और अश्मयन्त्र इन दोनों शब्दों का अर्थ बंदूक किया है ("कामान बंदूक इति भाषा") और दारुयंत्र का अर्थ कल लिखा है। महाभारत में एक जगह लिखा है "यंत्रस्यगुण दोषौ न विचार्य्यौ मधुसूदन। अहं यंत्रो भवान् यंत्री न मे दोषो न मे गुणः।

† विजय रक्षित ग्रंथ में लिखा है "अयः कंटक संछन्ना शतघ्नी महती शिला' अर्थात् लोहे के काँटों से छिपाई हुई शिला का नाम शतघ्नी है। मेदिनीकोष में करंज भी इस का नाम है।

‡ पाणिनि के सूत्रों में वासुदेव आदि शब्द मिले हैं। इस विषय का विस्तार हमारे प्रबंध 'वैष्णवता और भारतवर्ष' में देखो।
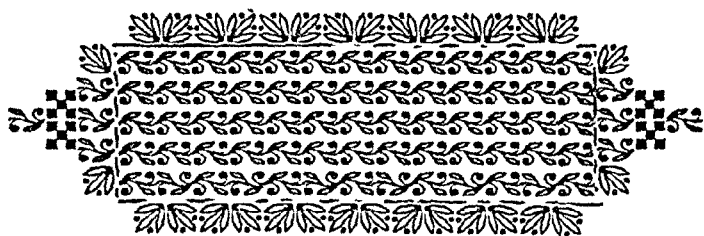
रामायण का समय

(रामायण बनने के समय की कौन कौन बातें विचार करने के योग्य हैं)

पुराने समय की बातों को जब सोचिये और विचार कीजिये तो उन का ठीक ठीक पता एक ही बेर नहीं लगता। जितने नये नये ग्रंथ देखते जाइए उतनी ही नई नई बातें प्रकट होती जाती हैं। इस विद्या के विषय में बुद्धिमानों के आज कल दो मत हैं। एक तो वह जो बिना अच्छी तरह सोचे विचारे, पुराने अंग्रेजी विद्वानों की चाल पर चलते हैं और उसी के अनुसार लिखते पढ़ते भी हैं और दूसरे वे लोग जिन को किसी बात का हठ नहीं है, जो बातें नई जाहिर होती गईं उन को मानते गये। दूसरा मत बहुत दुरुस्त और ठीक तो है, पर पहिला मत माननेवालों को ऐंटिक्वेरियन (Antiquarian) बनने का बड़ा सुभीता रहता है। दो चार ऐसी बँधी बातें हैं जिन्हें कहने ही से वे ऐंटिक्वेरियन हो जाते हैं। जो मूर्त्तियाँ मिलें वह जैनों की हैं, हिंदू लोग तातार से वा और कहीं पच्छिम से आये होंगे, आगे यहाँ मूर्त्तिपूजा नहीं होती थी इत्यादि कई बातें बहुत मामूली हैं, जिन के कहने ही से आदमी ऐंटिक्वेरियन हो सकता है। जो कुछ हो इस बात को लेकर हम इस समय हुज्जत नहीं करते, हम सिर्फ यहाँ वाल्मीकीय रामायण

बतलाया था उन की सात सात सौ बरस की प्राचीन पुस्तकें मिलीं। लोग भागवत ही को बोपदेव का बनाया कहते थे, किंतु चन्द के रायसे में भागवत का वर्णन मिलने से और प्राचीन पुस्तकों से यह सब बातें खंडित हो गईं।

उत्तरकांड से मालूम होता है कि अयोध्या, काशी और प्रयाग ये तीनों राज्य उस समय अलग थे और उस समय हिंदुस्तान में तीन सौ राज्य अलग अलग थे।

इसी कांड के चौरान्नवे सर्ग में यह लिखा है कि उत्तरकांड भार्गव ऋषि ने बनाया है। यह भी एक आश्चर्य्य की बात है। इस वाक्य से तो अँगरेज़ी विद्वानों का सन्देह सिद्ध होता है।

॥ इति ॥

एक श्लोकी रामायणम्।
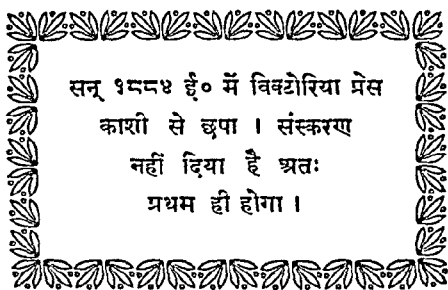
आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगं काञ्चनम्,
वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीवसंभाषणम्।
वालीनिग्रहणं समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनम्,
पश्चाद्रावणकुम्भकर्णहननम् एतद्धि रामायणम्॥

शतघ्नी * यह उस चीज़ को कहते हैं जिस से सैकड़ों आदमी एक साथ मारे जा सकें। कोषों में इस शब्द के अर्थ यह दिये हैं कि शतघ्नी उस प्रकार की कल का नाम है जिस से पत्थर और लोहे के टुकड़े छूट कर बहुत से आदमियों के प्राण लेते हैं और इसी का दूसरा नाम वृश्चिकाली है। (सर राजा राधाकान्त देव का शब्दकल्पद्रुम देखो।) इस से मालूम होता है कि उस समय में तोप या ठीक उसी प्रकार का कोई दूसरा शस्त्र अवश्य था।

अयोध्या के वर्णन में उस की गलियों में जैन फ़क़ीरों का फिरना

---

* शतघ्नी को भी यंत्र करके लिखा है। शतघ्नी कौन चीज़ है इसका निश्चय नहीं होता। तीन चीज़ में इस का संदेह हो सकता है, एक तोप, दूसरे मतवाले, तीसरे जम्हीरे में। इस के वर्णन में जो जो लक्षण लिखे हैं उन से तोप का तो ठीक संदेह होता है, पर यह मुझे अब तक कहीं नहीं मिला कि ये शतघ्नियाँ आग के बल से चलाई जाती थीं, इसीसे उनके तोप होने में कुछ संदेह हो सकता है। मतवाले से शतघ्नी के लक्षण कुछ नहीं मिलते, क्योंकि मतवाले तो पहाड़ों वा किलों पर से कोल्हू की तरह लुढकाये जाते हैं और इस के लक्षणों से मालूम होता है कि शतघ्नी वह वस्तु है जिस से पत्थर छूटैं। जहमीरा वा जम्हीरा एक चीज़ है, उस से पत्थर छूट छूट कर दुश्मन को जान लेते हैं (हिंदुस्तान की तवारीख़ में मुहम्मद क़ासिम की लड़ाई देखो)। इस से शतघ्नी के लक्षण बहुत मिलते हैं। पर रामायण में लिखा है कि लोहे की शतघ्नी होती थीं और फिर सुंदरकांड में टूटे हुए वृक्षों की उपमा शतघ्नी की दी है। इससे फिर संदेद होता है कि हो न हो यह तोप ही हो। रामायण के सिवा और पुराणों में भी किले पर शतघ्नी लिखा है। (मत्स्य-पुराण में राज्यधर्म वर्णन में) दुर्गेयंत्राः प्रकर्त्तव्याः नाना प्रहरणान्विताः। सहस्रघातिनो राजंस्तैस्तुरक्षाविधीयते ॥ १ ॥ दुर्गञ्च परिस्वोपेतं वप्राट्टालसंयुतं। शतघ्नी यंत्र मुख्यैश्च शतशश्च समावृतं ॥ २ ॥ इस में ऊपर के श्लोकों में शतघ्नी के बदले सहस्रघाती शब्द है (यहाँ शत और सहस्र शब्दों से मुराद अनगिनत से है)। तोप की भाँति सुरंग उड़ाना भी यहाँ के लोग अति प्राचीन काल से जानते हैं। आदि पर्व का २७८ श्लोक देखो। सुरंग शब्द ही भारत में लिखा है।

सन् १८८४ ई० में विक्टोरिया प्रेस
काशी से छपा । संस्करण
नहीं दिया है अतः
प्रथम ही होगा ।

मिलता। किंतु इस वर्णन से यह बात बहुत स्पष्ट हो गई कि गोलोक का होना हिंदू लोग उस काल से मानते हैं जब कि रामायण बनी। *

३२ वें सर्ग में तैत्तिरीय शाखा और कठकलाप शाखा का नाम है। इस से प्रकट होता है कि वेद उस काल तक बहुत से हिस्सों में बँट चुके थे।

रामजी ने वन जाने की राह इस तरह बयान की गई है। अयोध्या से चल कर तमसा अर्थात् टोंस नदी के पार उतरे। फिर वेदश्रुति, † गोमती, स्यंदिका ‡ और गंगा पार होते हुए प्रयाग आये और वहाँ से चित्रकूट (जोकि रामायण के अनुसार १० कोस है) § गए। यह बिल्कुल सफर उन्हों ने पाँच दिन में किया। और सुमंत उन को पहुँचा कर शृंगवेरपुर अर्थात् सिंगरामऊ से दो दिन में अयोध्या पहुँचा। पहली बात से प्रकट हुआ कि पुराने जमाने के कोस बड़े होते थे। और दूसरी बात से विदित हुआ कि सड़क उस समय में भी बनाई जाती थी, नहीं तो इतनी दूर की यात्रा का पाँच दिन में तै करना कठिन था।

भरत जी जब अपने नाना के पास से, जो कि कैकय अर्थात् गक्कर देश का राजा था, आने लगे तो उस ने कई बहुत बड़े और बलवान कुत्ते दिये और तेज़ दौड़नेवाले गदहों (खच्चर) के रथ पर उन को बिदा किया। वे सिंधु और पंजाब होते हुए इक्षुमती को पार कर अयोध्या आये। इस से दो बात प्रकट हुईं; एक तो यह कि उस काल में कैकय

---

* वेद में ब्रह्म के धाम के वर्णन में लिखा है कि वहाँ अनेक सींगों की गऊ हैं।

† वेदसा नाम की एक छोटी नदी गोमती में मिलती है, शायद उसी का नाम वेदश्रुति लिखा है।

‡ जिस को अब सई कहते हैं।

§ यह बड़े संदेह की बात है, अब जो चित्रकूट माना जाता है वह प्रयाग से तीन चार मंजिल है पर यहाँ दस कोस लिखा है। इस दस कोस से यह आशय है कि वहाँ से उस पर्वत की श्रेणी (लाइन) आरंभ होती है, पर जहाँ डेरा किया था वह स्थान दूर होगा।

अवद्मनाफ, हाशिम, अव्दुल् मतलव, अव्दुल्लाह और इनके अबुल् कासिम मुहम्मद ।

अव्दुल्मतलव के अनेक पुत्र थे, जैसा हमज़ा, अब्बास, अबूतालिव, अवुल्हव, अईदाक । कोई कोई हारिस, हजव, हकूम, जरार जुवैर, कासमे असगर, अवदुलकावा और मकूम को भी कुछ विरोध से अव्दुल् मतलव का पुत्र मानते हैं। इन में अवदुल्लाह और अबूतालिव एक माँ से हैं। अबूतालिव के तीन पुत्र अक़ील, जाफर और अली । यह अली महात्मा मुहम्मद के मुसलमानी सत्य मत प्रचार करने के मुख्य सहायक और रात दिन के इनके दुख-सुख के साथी थे और यह अली जब महात्मा मुहम्मद ने दूतत्व का दावा किया तो पहिले पहल मुसल्मान हुए ।

महात्मा मुहम्मद की माँ का नाम आमिना है, जो अवदमनाफ के दूसरे वेटे वहव की वेटी हैं और आदरणीय अली की माँ का नाम फातमा है, जो असद की वेटी है और यह असद हाशिम के पुत्र हैं। इस से मुहम्मद और अली पितृकुल और मातृकुल दोनों रीति से हाशिमी हैं।

महात्मा मुहम्मद १२ वीं रवीउल्औवल सन् ५६६ ईस्वी को मक्का में पैदा हुए।

महात्मा मुहम्मद के पिता के इन के जन्म से पूर्व (एक लेखक के मत से इन के जन्म के दो वर्ष पीछे) मर जाने से उन के दादा इन का लालन पालन करते थे । अरब के उस समय की असभ्य रीति के अनुसार कोई दाई अनाथ लड़के को दूध नहीं पिलाती थी और इस में वहाँ की स्त्रियाँ अमंगल समझती थीं, किंतु अलीमा नामक* एक स्त्री ने इन को दूध पिलाना स्वीकार किया । इस दाई को वालक ऐसा हिए लग गया कि एक दिन अलीमा ने आकर महात्मा मुहम्मद की माता अमीना से कहा कि मक्के में संक्रामक रोग वहुत से होते हैं इस से इस वालक को मैं अपने साथ जंगल में ले जाऊंगी । उन की माँ ने आज्ञा दे दी और साढ़े चार वरस तक महात्मा मुहम्मद अलीमा के साथ वन

* An Ethiopian Female Slave.

लोहे की क़लम से लिखा जा सकता है जैसा कि अब तक बंगाले और ओड़ीसे में रिवाज है। *

६२ वें सर्ग के ३ श्लोक में पुराणों का वर्णन है, जिस से नई तबीयत और नई तलाश (लाइट) के लोगों का यह कहना कि पुराण सब बहुत नए हैं कहाँ तक ठीक है, आप लोगों पर आप से आप विदित होगा।

इस कांड में और बातों की भाँति यह भी ध्यान करने के योग्य है कि रामजी ने बालि से मनु के २ श्लोक कहे हैं और यह भी कहा है कि मनु भी इस को प्रमाण मानते हैं। इस से प्रगट हुआ कि मनु की संहिता उस काल में भी बड़ी प्रामाणिक और प्रतिष्ठित समझी जाती थी। †

सुंदरकांड—तीसरे सर्ग के १८ श्लोक में क़िले के शस्त्रालय (सिलहगाह) के वर्णन में लिखा है कि जिस तरह से स्त्री गहनों से सजी रहती है वैसे ही बुर्ज यंत्रों से सजे हुए थे। इस से स्पष्ट प्रगट होता है कि तोप या और किसी प्रकार का ऐसा हथियार जिस से कि दूर से गोले की भाँति कोई वस्तु छूट कर जान ले उस समय में अवश्य था।

चौथे सर्ग के १८ श्लोक में फिर क़िले पर शतघ्नी रखने का वर्णन है।

५ वें सर्ग के पहिले श्लोक में लिखा है कि चंद्रमा सूर्य्य के प्रकाश से चमकता है। इस से स्पष्ट प्रकट हो सकता है कि उस समय में ज्योतिषविद्या की बड़ी उन्नति थी।

६ वें सर्ग के १३ श्लोक में लिखा है कि पुष्पक-विमान के चारो ओर सोने के हुंडार बने थे और खाने पीने की सब वस्तु उस में रक्खी रहा करती थीं और वह बहुत से लोगों को बिठला कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता था। इस से सोचा जाता है कि यह विमान निस्संदेह कोई बेलून की भाँति की वस्तु होगी और हुंडार उस में पहचान के हेतु लगाये गये होंगे।

---

* इस विषय के लिये "सज्ज़नविलास" देखो।

† भारत में भी कई स्थान पर मनु का नाम है। उदाहरण के हेतु आदि पर्व का १७२२ श्लोक देखो।

पापाचार के विरुद्ध खड़े हुए और "ईश्वर एक मात्र अद्वितीय है" यह सत्य स्थान स्थान में गंभीरनाद से घोषणा करने लगे, उस समय वह अकेले थे। एक मनुष्य ने भी उन को सम विश्वासी रूप से परिचित होकर उन के उस कार्य में सहानुभूति दान नहीं किया। किंतु उन्हों ने किसी की मुखापेक्षा नहीं किया, किसी का अणु मात्र भय नहीं किया, बुद्धि-विचार-तर्क की तृसीमा में भी नहीं गये, प्रभु का आदेश पालन करना ही उन का दृढ़ व्रत था। जब वह ईश्वर के आदेश से "ला इलाह इल्लिल्लाह" (ईश्वर एक मात्र अद्वितीय है) इस सत्य प्रचार में प्रवृत्त हुए, तब सब अरबी लोग, उन के कई एक पितृव्य और समस्त ज्ञाति संबंधी निज अवलंबित धर्म के विरुद्ध वाक्य सुन कर भयानक क्रोधांध हुए और उन के स्वदेशीय और आत्मीय गण "महम्मद मिथ्यावादी और ऐंद्रजालिक है" इत्यादि उक्ति कहके उनके प्रति और सबों का मन विरक्त और अविश्वस्त करने लगे। स्वजन्त संबंधियों के द्वारा क्लेश अपमान प्रहार यंत्रणा आदि उन को जितनी सह्य करनी पड़ती थीं उतनी दूसरे किसी महापुरुष को नहीं सहनी पड़ी। विपरीत लोगों के प्रस्तराघात से उन का शरीर क्षत विक्षत हुआ था। किसी के प्रस्तराघात से उन का दो दाँत भग्न और ओठ विदीर्ण तथा ललाट और बाहु आहत हुआ था। किसी शत्रु ने उन को आक्रमण कर के उन का मुखमंडल कंकड़मय मृत्तिका में घर्षण किया था, उस से मुँह क्षत विक्षत और शोणिताक्त हुआ था। एक दिन किसी ने उन के गले में फाँसी लगा कर स्वाँसरोध कर के उन को वध करने का उपक्रम किया था। एक दिन किसी ने उन का गला लक्ष्य कर के करवालाघात किया था, तब गह्वर में छिपकर उन्होंने अपने प्राण की रक्षा किया था। कई बार उन की जीवनाशा कुछ भी नहीं थी। एक दिन उन के पितृव्य और जातिवर्ग उन को वध करने को कृत संकल्प हुए थे। उन की प्रियतमा दुहिता फातिमा ने जान कर रोते रोते उन से निवेदन किया। उस में धर्म्मवीर विश्वासी महम्मद अकुतोभय भाव से बोले कि वत्से! मत रो, हम को कोई वध नहीं कर सकेगा, हम उपासनारूप अस्त्र धारण करेंगे, विश्वास वर्म से आवृत होंगे। जब हजरत महम्मद को प्रहार-क्षत-कलेवर और निःसहाय देख कर उन के पितृव्य

१८ वें सर्ग के १२ श्लोक में गुलाब पाश का वर्णन है। इसलिए हमारे भाई लोग यह न समझें कि यह निधि हम को मुसल्मानों से मिली है, यह हिंदुस्नान ही की पुरानी वस्तु है।

३० वें सर्ग के १८-१९ श्लोक में लिखा है कि ब्राह्मण, चत्री, वैश्य प्राय: संस्कृत बोलते थे, किंतु जब छोटे लोगों से बात करते थे तो यह संस्कृत से नीच भाषा में बोलते थे। इस से बहुत लोगों का यह कहना कि संस्कृत कभी बोली ही नहीं जाती थी खंडित होता है। हाँ, इस में कोई संदेह नहीं, सब से इस को काम में नहीं लाते थे।

६४ वें सर्ग के २४ श्लोक में लिखा है कि हनुमान जी राक्षसों के सिर इस तरह से तोड़ तोड़ कर फेंकते थे जैसे यंत्र से ढेले छूटें। इस से ऊपर जहाँ हम यंत्रों का वर्णन कर आए हैं उस से लोग समझें कि वह निस्संदेह कोई ऐसी वस्तु थी, जिस से गोली या कंकड़-पत्थर छोड़े जाते थे।

लंकाकांड—(३ सर्ग १२ श्लोक) (३ सर्ग १३ श्लोक) (३ सर्ग १९ श्लोक) (३ सर्ग १७ श्लोक) (४ सर्ग २३ श्लोक) (२१ सर्ग श्लोक अंत का) (३९ सर्ग २६ श्लोक) (६० सर्ग ५४ श्लोक) (६१ सर्ग ३२ श्लोक) (७६ सर्ग ६८ श्लोक) (८६ सर्ग २२ श्लोक)। इन श्लोकों में यंत्र और शतघ्नी का वर्णन है।

यंत्र और शतघ्नी ये रामायण में किस किस प्रकार से वर्णन की गई हैं यह ऊपर के श्लोकों के देखने से प्रगट होगा। इन दोनों के विषय में हमें कुछ विशेष कहना नहीं है, क्योंकि हमारे पाठकों पर आप से आप यह प्रगट होगा कि यंत्र और शतघ्नी का कोई रूप रामायण से हम ठीक नहीं कर सकते।

पत्थर ढोने की कल किसी चाल की बाल्मीकि जी के समय में अवश्य रही होगी और किवाड़ भी किसी चाल के कल से बंद किये जाते होंगे।

यंत्र बहुत ऊँचे ऊँचे भी होते थे, जैसा कि कुंभकर्ण की उपमा में कहा गया है। शतघ्नी फ़ौलाद की बनती थी और वृक्षों की तरह लंबी होती थी और केवल क़िले ही पर नहीं रहती थी परंतु लड़ाई में भी

जगत् में अद्वितीय ईश्वर की महिमा को महीयान् किया। एकेश्वर की पूजा और सत्य का राज्य प्रतिष्ठित किया। प्रभु का आदेशपालन के हेतु सब प्रकार का दारिद्र, क्लेश, अपमान और आत्मीय जन का निग्रह अम्लान बदन से सिर नीचा कर के सहन किया। धन्य! ईश्वर के विश्वास किंकर महम्मद! आज मुसलमान धर्म के प्रवर्त्तक ईश्वर के आज्ञाकारी विश्वस्त भृत्य मुहम्मद के नाम और उनके प्रवर्त्तित पवित्र एकेश्वर के धर्म में एशिया से योरोप आफ्रिका तक कोटि कोटि मुसलमान एक सूत्र में ग्रथित हैं। वह ऐसा आश्चर्य धर्म का बंधन जगत् में संस्थापन कर गए हैं कि आज दिन उस के खोलने की किसी को सामर्थ्य नहीं है।

२. बीबी फ़ातिमा

अब हम लोग उस का जीवनचरित्र लिखते हैं जिस को करोड़ों मनुष्य सिर झुकाते हैं और जिस के दामन से प्रलय पीछे करोड़ों मनुष्य को ईश्वर के सामने अपने अपराधों की क्षमा मिलने की आशा है। यह बीबी फ़ातिमा मुसलमान धर्माद्याचार्य महात्मा मुहम्मद की प्यारी कन्या थी। महात्मा मुहम्मद जैसे दुहितृवत्सल थे वैसी ही बीबी फातिमा पितृभक्त थीं। यह बाल्यावस्था ही में मातृहीना हो गई, क्योंकि इन की माता महात्मा मुहम्मद की प्रथमा स्त्री बीबी खदीजा इनको शैशवावस्था ही में छोड़ कर परलोक सिधारीं। यद्यपि महात्मा मुहम्मद को अनेक संतति थीं पर औरों का कोई नाम भी नहीं जानता और इन को आबालवृद्ध वनिता सब जानते हैं। मुहम्मद ने अपने मुख से कहा है कि ईश्वर ने संसार की सब स्त्रियों से फातिमा को श्रेष्ठ किया। इन्होंने आठ बरस तक जिस असाधारण निष्ठा और परम श्रद्धा से पिता की सेवा की पराकाष्ठा की है वैसी संदेह है कि किसी स्त्री ने भी न की होगी और न ऐसी पितृगतप्राणा नारीरत्न और कहीं उत्पन्न हुई होगी। महात्मा मुहम्मद क्षण भर भी दृष्टि से दूर रखने में कष्ट पाते थे। पिता के अलौकिक दृष्टांत और उपदेशों के प्रभाव से शैशवावस्था ही से इन को अत्यंत धर्म्मनिष्ठा थी। इन का मुख भोला भाला

उत्तरकांड—उत्तरकांड में बहुत सी बातें अपूर्व और कहने सुनने के योग्य हैं पर अँग्रेज़ विद्वानों ने उस के बनाने का काल रामायण से पीछे माना है, इस से हमारा उन बातों के लिखने का उत्साह जाता रहा तब भी जो बातें विशेष दृष्टि देने के योग्य हैं यहाँ लिखी जाती हैं।

(३१ सर्ग श्लोक ४२।४३) रावण शिव जी की पूजा करता था,* इस से दयानंद स्वामी का यह कहना कि रामायण में मूर्त्तिपूजा नहीं है, खंडित होता है। हाँ, यदि वे भी कह दें कि यह कांड क्षेपक है या नया बना है तो इस का उत्तर नहीं।

(५३ सर्ग श्लोक २०, २१, २२) श्रीकृष्णावतार का वर्णन है। † विदित हो कि तीसरे सर्ग के १२ श्लोक में भी एक जगह विष्णु का नाम गोविंद कहा है "गोविंद कर निस्मृता" और गोविंद श्रीकृष्ण का नाम तब पड़ा है जब गोवर्द्धन उठाया है, यह विष्णुपुराणादिक से सिद्ध है, यथा "गोविंद इतिचाभ्यधात्" तो इस से भी हमारी बालकांड वाली युक्ति सिद्ध हुई।

(६४ सर्ग श्लोक ८) छन्दोविदः पुराणज्ञान् इस वाक्य में पुराणों का वर्णन किया है। पुराणज्ञैश्च महात्मभिः इत्यादि वाक्यों में और भी कई स्थानों पर पुराणों का वर्णन है और पुराणों की अनेक कथा भी इस कांड में मिलती हैं। इस से यह निश्चय होता है कि उत्तरकांड के बनने के पहले पुराण सब बन चुके थे।

पुराणों के विषय की बहुत सी शंकाएँ काल क्रम से मिट गईं। जिन पुराणों को विलायती विद्वानों ने चार पाँच सौ बरस का बना

---

* यत्रयत्रस्मयातीह रावणोराक्षसेश्वरः। जाम्बूनदमयं लिङ्गं तत्र तत्रस्मनीयते ॥४२॥
वालुका वेदि मध्येतुतल्लिङ्गंस्थाप्य रावणः। अर्चयामासगन्धैश्चपुष्पैश्चामृतगन्धिभिः ॥४३॥

† उत्पत्स्यतेहिलोकेऽस्मिन् यदूनां कीर्तिवर्द्धनः।
वासुदेव इति ख्यातो विष्णुःपुरुषविग्रहः ॥ २० ॥
स ते मोक्षयिता शापात् राजंस्तस्माद्भविष्यसि।
कृता च तेन कालेन निष्कृतिस्ते भविष्यति ॥ २१ ॥
भारावतरणार्थंहि नरनारायणावुभौ। उत्पत्स्येते महावीर्यौकलौयुगउपस्थिते॥२२॥

हमालन की बेटी आप के चलने की राह में काँटा बिछा आती थी तथा अबूसफिनान की स्त्री को आप की निंदा के सिवा कोई काम ही नहीं है, यह भी आप को अविदित नहीं। सब उस सभा में उपस्थित रहेंगी और रूम और मिश्र के बहुमूल्य अलंकार धारण कर के मणिपीठ के ऊचे आसन पर बड़े गर्व से बैठेंगी। उस सभा में आप की कन्य को एक मैली फटी पुरानी चद्दर ओढ़ कर जाना होगा। हम को देख कर वे सब कहेंगी कि इस कन्या को क्या हुआ। इस की माता की अतुल संपत्ति क्या हो गई जो इस वेश से यहाँ आई है। पिता! इन लोगों को धर्मज्ञान और अंतरचक्षु नहीं है, केवल जगत् के बाह्याडंबर में भूली हैं, इस से हम को देख कर वह आप की निंदा करेंगी और केवल हमारे कारण आप का अपमान होगा।

फातिमा पिता से यह कहती थीं और उन के नेत्रों से जल बहता था। महात्मा महम्मद ने उत्तर दिया—बेटी! तुम किंचितमात्र भी सोच मत करो। हमारे पास उत्तम वस्त्राभरण और धन तो निस्संदेह कुछ भी नहीं है, परंतु निश्चय रक्खो कि जो आज लाल पीले वस्त्र पहन कर अलंकार के उद्यान में फूली फूली दिखाई पड़ती हैं वे अपने दुष्कर्मों से कल तृण से भी तुच्छ हो कर नर्क की अग्नि में जलेंगी। हम लोगों का वस्त्र और शोभा वैराग्य है। महात्मा महम्मद और भी कुछ कहना चाहते थे कि फातिका ने कहा—पिता! क्षमा कीजिए अब विलंब करने का कुछ प्रयोजन नहीं, आपकी आज्ञा हम को सर्वथा शिरोधार्य है।

यह कह कर बीबी फातिमा घर से निकलीं * और उस विवाह सभा की ओर अकेली चलीं परंतु लिखा है कि ईश्वर के अनुग्रह से उन के अंग पर दिव्य अमूल्य वस्त्राभरण सज्जित हो गये। कुरेशवंश में और अरब की स्त्री लोग अभिमान से फातिमा की मार्ग की परीक्षा कर

* हमारे पुराणों में भी लिखा है कि सती जब उदास हो कर दक्ष के यज्ञ में बिना सिंगार किये ही चलीं तो मार्ग में कुवेर ने उनको उत्तम उत्तम वस्त्राभूषण पहिना दिया। वैसे ही अनुमान होता है कि अपने आचार्य महात्मा मुहम्मद की बेटी को वस्त्रहीन देख कर उन के किसी धनिक सेवक ने अमूल्य वस्त्राभूषण से उन को सजा दिया।

पंच पवित्रात्मा

अर्थात्

मुसलमानी मत के मूलाचार्य महात्मा मुहम्मद, आदरणीय
अली, बीबी फातिमा, इमाम हसन

और

इमाम हुसैन की संक्षिप्त जीवनी

सं० १९४१

आपस में प्रीति करो। अनेक स्त्रियाँ फातिमा का यह अतुल प्रभाव देख कर उसी समय मुसलमान हुईं और जिन्हों ने उन का धर्म नहीं ग्रहण किया उन्हों ने भी उन का बड़ा आदर किया।

किसी विशेष रोग के कारण इन की मृत्यु नहीं हुई। पितृवियोग का शोक ही इन की मृत्यु का मुख्य कारण है। कहते हैं कि महात्मा महम्मद की मृत्यु के पीछे फातिमा शोक से अत्यंत विह्वल रहीं। किसी भाँति भी इन को बोध नहीं होता था, रात दिन रोती थीं और बारंबार मूर्च्छित हो जाती थीं। एक दिन उन्हों ने कुछ स्वप्न देखा और मृत्यु के हेतु प्रस्तुत हो कर अपने प्रिय स्वामी आदरणीय अली को बुला कर कहा "कल पितृदेव को स्वप्न में देखा है जैसे वह चारो ओर नेत्र फैला कर किसी के मार्ग की प्रतीक्षा कर रहे हैं। हम ने कहा, पिता! तुम्हारे विच्छेद से हमारा हृदय विदग्ध और शरीर अत्यंत जीर्ण हो रहा है। उन्हों ने उत्तर दिया, पुत्री! हम भी तो मार्ग ही देख रहे हैं। फिर हम ने ऊँचे स्वर से कहा-पिता! आप किस का मार्ग देख रहे हैं? तब उन्हों ने कहा—कि तुम्हारा मार्ग देख रहे हैं। पुत्री फातमा! हमारा तुम्हारा वियोग बहुत दिन रहा, इस से तुम्हारे बिना अब हमारे प्राण व्याकुल हैं। तुम्हारे शरीर त्याग का समय उपस्थित है; अब तुम अपनी आत्मा को शरीर संपर्क शून्य करो। इस निकृष्ट संकीर्ण जगत् का परित्याग कर के उस प्रसारित उन्नत देदीप्यमान आनंदमय जगत् में गृहस्थापन करो। संसाररूपी क्लेश-कारागार से छुट कर नित्य सुखमय परलोक-उद्यान की ओर यात्रा करो। फातिमा! जब तक तुम न आओगी तब तक हम नहीं जायँगे। हम ने कहा—पिता! हम भी तुम्हारी दर्शनार्थी हैं, तुम्हारी सहवास संपत्ति लाभ करें यही हमारी भी आकांक्षा है। इस पर उन्हों ने कहा—तो फिर विलंब मत करो, कल ही हमारे पास आओ। इस के पीछे हमारी नींद खुली, अब उस उन्नत लोक में जाने के लिये हमारा हृदय व्याकुल है। हम को निश्चय है कि आज साँझ या पहर रात तक हम इस लोक का त्याग करेंगे। हमारे पीछे तुम अत्यंत शोकाकुल रहोगे, इससे जिस में हमारे संतान भूखे न रहें हम आज रोटी कर के रख देते हैं और पुत्र-कन्या का वस्त्र भी धो देते हैं। हमारे पीछे यह कौन करेगा इस
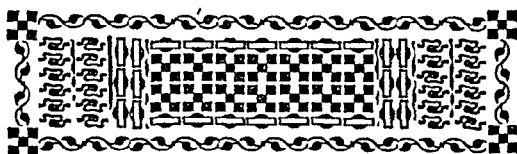
पंच पवित्रात्मा

—:❀:—

१—महात्मा मुहम्मद

जिस समय अरब देशवाले बहुदेवोपासना के घोर अंधकार में फँस रहे थे उस समय महात्मा मुहम्मद ने जन्म ले कर उन को एकेश्वर-वाद का सदुपदेश दिया। अरब के पश्चिम ईसामसीह का भक्तिपथ प्रकाश पा चुका था, किंतु वह मत अरब, फारस इत्यादि देशों में प्रबल नहीं था और न अरब ऐसे कट्टर देश में महात्मा मुहम्मद के अतिरिक्त और किसी का काम था कि वहाँ कोई नया मत प्रकाश करता। उस काल के अरब के लोग मूर्ख, स्वार्थतत्पर, निर्दय और वन्यपशुओं की भाँति कट्टर थे। यद्यपि उनमें से अनेक अपने को इब्राहीम के वंश का बतलाते और मूर्ति-पूजा बुरी जानते, किंतु समाजपरवश होकर सब बहुदेवोपासक बने हुए थे। इसी घोर समय में मक्के से मुहम्मद-चंद्र उदय हुआ और एक ईश्वर का पथ परिष्कार रूप से सबको दिखलाई देने लगा।

महात्मा मुहम्मद इब्राहीम के वंश में इस क्रम से हैं:—इब्राहीम, इस्माईल, कवजार, हमल, सलमा, अलहौसा, अलीसा, ऊद, आद, अदनान, साद, नजार, मजर, अलपास, बदरका, खरीमा, किनाना, नगफर, मलिक, फहर, गालिब, लवी, काब, मिरह, कलाव, फजी,

तुम से कुछ कहना भी अवश्य है। हमारी बात सुनो और हमारे वियोग का शर्बत बाध्य होकर पान करो। अली फातिमा का सिर गोद में लेकर बैठे। फातिमा ने नेत्र खोलकर अली की ओर देखा; उस समय अली के नेत्रों से आँसू के बूँद फातिमा के मुख पर टपकते थे। अली को रोते देखकर फातिमा ने कहा—हे नाथ! यह रोने का समय नहीं है, अवकाश बहुत थोड़ा है। अंतिम कथा सुन लो। अली ने कहा—कहो क्या कहती हो? फातिमा ने कहा—हमें चार बात कहनी है; पहली यह कि हम तुम्हारे साथ बहुत दिन तक रहे। यदि हमसे कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा करो। अली रोने लगे और बोले—कभी तुम ने आज तक कोई ऐसी बात ही नहीं किया जो हमारे प्रतिकूल हो। प्यारी तुम तो सर्वदा हमारी मनोरंजनी रही, भूल कर भी तुम ने हम को कोई कष्ट नहीं दिया, तुम ने सब आपत्ति अपने ऊपर सहन किया, परंतु हम को दुख न दिया, तुम उपकारिणी थीं, अपकारिणी नहीं। तुम को हम ने कोमल पुष्पमाला की भाँति अपने हृदय पर धारण किया कंटक की भाँति नहीं। बोलो, और बोलो और कौन बात है? फातिमा ने कहा, दूसरे यह कि हमारे प्यारे हसन-हुसैन की रक्षा करना। जिस लाड़ प्यार और राव चाव से हम ने उन को पाला है उस में कुछ न्यूनता न हो; उन की सब अभिलाषा पूरी करना। तीसरे यह कि हमारे शव को रात्रि को भूमिशायी करना, क्योंकि जीवन दशा में जैसे पर पुरुष की दृष्टि हमारे शरीर पर नहीं पड़ी है वैसा ही पीछे भी हो। चौथे हमारी समाधि पर कभी कभी आ जाना। इतने में हसन-हुसेन भी आ गए और माता की यह अवस्था देखकर बहुत रोने लगे। फातिमा ने किसी प्रकार समझा कर फिर बाहर भेजा और दासी को बुला कर बीबी फातिमा * ने स्नान किया और एक धौत वस्त्र परिधान कर के एक निर्जन गृह में दक्षिण पार्श्व से शयन कर के ईश्वर का स्मरण करने लगीं। इसी अवस्था में उन्होंने परलोक गमन किया।

* इफ़ताम अरबी में बच्चे को दूध से छुड़ाने को कहते हैं। इन का फातिमा नाम इसी हेतु पड़ा था कि छोटेपनही में इन की मृत्यु हुई थी।

में रहे। परंतु इनके दैवी चमत्कार से कुछ शंका करके दाई फिर इनको इन की माता के पास छोड़ गई। इन की छ बरस की अवस्था में इन की माता अमीना का भी परलोक हुआ और आठ बरस की अवस्था में इन के दादा अब्दुल् मतलब भी मर गए। तब से इन के सहोदर पितृव्य अबूतालिब पर इन के लालन पालन का भार रहा। अबूतालिब महात्मा मुहम्मद के बारह और पितृव्यों में इन के पिता के सहोदर भ्राता थे। हाशिम महात्मा मुहम्मद के परदादा का नाम था और यह मनुष्य ऐसा प्रसिद्ध हुआ कि उस के समय से उस के वंश का नाम हाशिमी पड़ा। यहाँ तक कि मक्का और मदीने का हाकिम अब भी "हाशिमियों के राजा" के पद से पुकारा जाता है। अब्दुल् मतलब महात्मा मुहम्मद को बहुत चाहते थे और नाम भी उन्हीं का रक्खा हुआ था। इस हेतु मरती समय अबूतालिब को बुला कर महात्मा की बाँह पकड़ा कर उन के पालन के विषय में बहुत कुछ कह सुन दिया था। अबूतालिब ने पिता की शिक्षा अनुसार महात्मा मुहम्मद के साथ बहुत अच्छा बरताव किया और इन को देश और समय के अनुसार शिक्षा दिया और व्यापार भी सिखलाया।

उन्हों ने किस रीति-मत से विद्या शिक्षा किया था इस का कोई प्रमाण नहीं मिला। पचीस बरस की अवस्था तक पशु-चारण के कार्य में नियुक्त थे। चालीस बरस की अवस्था में उन का धर्म भाव स्फूर्ति पाया। ईश्वर निराकार है और एक अद्वितीय है; उनकी उपासना बिना परित्राण नहीं है। यह महासत्य अरब के बहुदेवोपासक आचार-भ्रष्ट दुर्दांत लोगों में वह प्रचार करने को आदिष्ट हुए। तंतालिस बरस की अवस्था के समय में अग्निमय उत्साह और अटल विश्वास से प्रचार में प्रवृत्त हुए। "रौजतुः शोहदा" नामक मुहम्मदीय धर्म ग्रंथ में उन की उक्ति कह कर ऐसा उल्लिखित है। "हमारे प्रति इस समय ईश्वर का यह आदेश है कि निशा जागरण कर के दीन हीन लोगों की अवस्था हमारे निकट निवेदन करो, आलस्य-शय्या में जो लोग निद्रित हैं उन लोगों के बदले तुम जागते रहो, सुख-गृह में आनंद विह्वल लोगों के लिए अश्रुवर्षण करो।" पैगंबर महम्मद जब ईश्वर का स्पष्ट आदेश लाभ करके ज्वलंत उत्साह के साथ पौत्तलिकता के और

प्रवृत्त हैं, उस समय सुयोग समझ कर अतर्कित भाव से उस ने अली के सिर में एक आघात किया। अली आघात पाकर चिल्लाकर भूतल-शायी हुए। शोणित-स्रोत से मस्जिद स्नावित हो गई। उन के आहत मस्तक से मस्तिष्क उद्भिन्न हो कर गिरा। दुरात्मा इब्न मुलज़म उसी क्षण धृत हो कर बंदी हुआ। पीछे उस ने दुष्कर्म का समुचित प्रतिफल भोग किया। अली ने दो दिवस विष की विषम यंत्रणा भोग कर के बंधुवर्ग को शोकसागर में मग्न कर के परलोक गमन किया। मृत्युकाल में स्वीय प्रियतम पुत्र हसन को यह अनुमति दिया कि हमारा देह निशीथ समय में किसी निभृत स्थान में निहित करना, वही कार्य में परिणत हुआ। जब हसन पितृदेह भूमि निहित कर के लौटते थे उस समय एक व्यक्ति के रोने का शब्द सुन पड़ा। वह क्रंदन को लक्ष कर के वहाँ उपस्थित हुए, देखा कि एक दरिद्र अंध वृद्ध आकुल हो कर रो रहा है। हसन ने रोने का कारण पूछा, तो वह बोला कि प्रति दिन रात को एक महापुरुष आकर हम को आहार देते थे और सुमिष्ट वचन से परितोष करते थे। आज तीन दिन से वह नहीं आते हैं और वह मधुर वचन नहीं सुनने पाते हैं, हम अनाहार हैं। हसन ने पूछा—उन का नाम क्या है? अंधा बोला-उन्हों ने हम को अपना परिचय नहीं दिया। परिचय पूछने से वह कहते थे, हमारे परिचय से तुम्हारा कोई प्रयोजन नहीं है, तुम हमारी सेवा ग्रहण करो। उन का कंठस्वर ऐसा था, वह अल्ला अल्ला की सदा ध्वनि करते थे। हसन अंधे की बात से जान गए कि वह महापुरुष उन के पिता थे। तब अश्रुपात कर के बोले कि आज वह महात्मा परलोक सिधारे हैं। अभी उन की अंत्येष्टि क्रिया समाधान कर के हम चले आते हैं। वृद्ध यह सुन कर शोक से मूर्च्छित हो गिर पड़ा। पीछे रोते रोते बोला—तुम लोग हम को अनुग्रह कर के उन की पवित्र समाधि भूमि में ले चलो। हसन हाथ पकड़ कर वृद्ध को वहाँ ले गए। वृद्ध ने वहाँ शोक और अनाहार से प्राण त्याग किया।

एक दिन किसी विपथगामी ईश्वरविरोधी व्यक्ति ने परम प्रेमिक अली से पूछा था कि हे ज्ञानवान् अली! गृह और उच्च प्रासाद शिखर पर भी ईश्वर तुम्हारे रक्षक हैं, यह तुम स्वीकार करते हो? अली बोले

हमजा महाक्रोध से अबुलहब और अबूजोहल प्रभृति मुहम्मद के परम शत्रु पितृव्य और दूसरे दूसरे ज्ञाति संबंधियों को प्रहार करने जाते थे, उस समय वह बोले, "जिन ने हम को सत्यधर्म प्रचार के हेतु मनुष्य मंडली में प्रेरण किया है, उस सत्य परमेश्वर के नाम पर शपथ कर के हम कहते हैं, यदि तुम सुतीक्ष्ण करवाल के द्वारा नीच बहुदेवोपासक लोगों को निहत करो और उसी भाव से हमारी सहायता करने को अग्रसर हो तो तुम अपने को शोणित में कलंकित कर के पुण्यमय सत्य परमेश्वर से दूर जा पड़ोगे। ईश्वर के एकत्व में और हम उन के प्रेरित हैं, इस सत्य का विश्वास जब तक न करोगे तब तक तुम को युद्ध-विवाद में कोई फल नहीं होगा। पितृव्य, यदि तुम वात्सल्यरूप औषध हम को प्रदान करना चाहते हो, और हमारे आहत हृदय में आरोग्य का औषध लेपन करना चाहते हो, तो "ला इलाह इल्लिल्लाह महम्मद रसूलल्लाह" (ईश्वर एकमात्र अद्वितीय और मुहम्मद उस का प्रेरित है) यह वाक्य उच्चारण करो। यह सुन कर हमजा विश्वासी होकर कलमा उच्चारण पूर्वक एक ईश्वर के धर्म में दीक्षित हुए। तीन बरस शत्रु मंडली से अवरुद्ध होकर हजरत महम्मद को महा क्लेश से एक गिरिगुहा में कालयापन करना पड़ा था। इस बीच में बहुत से मनुष्यों ने उन के साथ उस उन्नत विश्वास में योग दिया था और उन के निकट एक ईश्वर के धर्म में दीक्षित हुए थे। ईश्वर की आज्ञापालन के लिए वह दस बरस मक्का नगर में अपरिसीम क्लेश और अत्याचार सहन कर के पीछे मदीना नगर में चले गए। वहीं शत्रुगण से आक्रांत होकर उन लोगों के अनुरोध से और आवाहन से युद्ध करने को बाध्य हुए। वह विपन्न अत्याचारित होकर कभी तनिक भी भीत और संकुचित नहीं हुए थे। जितनी बाधा और विघ्न उपस्थित होता था उतना ही अधिक उत्साहानल से प्रज्वलित हो उठते थे। सब विघ्न अतिक्रम कर के अटल विश्वास से वह ईश्वरादेश पालन व्रत में दृढ़ व्रती थे। वह ईश्वर और मनुष्य के प्रभु-भृत्य का संबंध अपने जीवन में विशेष भाँति प्रदर्शन करा गए हैं। वह स्वामी-आदेश शिरोधार्य कर के स्वर्गीय तेज और अलौकिक प्रभाव से कोटि कोटि मनुष्य को अँधेरे से ज्योति में लाए। लक्ष लक्ष जन का सांसारिक बल एक विश्वास के बल से चूर्ण कर के

हुआ है। अकस्मात् ईश्वर में ऐसी कुबुद्धि उपस्थित हो तो भूमिष्ठ प्रणत होना। भूमि को शोकाश्रुस्रोत से अभिषिक्त करना और कहना, हे ईश्वर! इस कुचिंता से हमारी रक्षा करो। तब परम परीक्षक ईश्वर तुम को रक्षा करेंगे।"

इमाम हसन और इमाम हुसैन

महात्मा मुहम्मद के जन्म का समाचार पूर्व में लिखा जा चुका है। इन को अठारह संतति हुई, किंतु वंश किसी के आगे नहीं चला, केवल बीबी फ़ातिमा को वंश हुआ। यह बीबी फ़ातिमा आदरणीय अली से व्याही थीं। जब तक यह जीती थीं और विवाह आदरणीय अली ने नहीं किया केवल इन्हीं को अली मान कर इन्हीं के मुखपंकज के अली बने रहे। बीबी फ़ातिमा को पाँच सन्तति हुई, तीन पुत्र हसन, हुसैन और मुहसिन, और जैनब और उम्म कुलसुम यह दो बेटियाँ थीं। इन में मुहसिन छोटेपन ही में मर गए। अली ने बीबी फ़ातिमा के मरने के पीछे उमुलनबीन से विवाह किया। उस से चार पुत्र अब्बास, जाफ़र, उसमान और अब्दुल्लाह उत्पन्न हुए, जो चारो अपने भाई इमाम हुसेन के साथ करबला में वीर गति को गए। इन में से अब्बास की संतति चली। तीसरी स्त्री क़ैसी, उस से अब्दुल्लाह और अबूबकर, यह दोनों भी करबला में मारे गए। चौथी स्त्री इसमानित से मुहम्मद और यहिया दो पुत्र हुए। इन चारों को संतति नहीं है। पाँचवीं स्त्री सहबाई से उमर और रुकिया, जिनमें से उमर की संतति है। छठवीं स्त्री अम्मामा। इसको मुहम्मद मध्यम नामक पुत्र हुआ, किंतु आगे सन्तति नहीं। सातवीं स्त्री इन की खूला है, जिनके पुत्र बड़े मुहम्मद हुए, जिनका वंश वर्त्तमान है। आदरणीय अली को इन बेटों के सिवा चौदह बेटियाँ भी हुई। इन सब से इमाम हसन, इमाम हुसैन, अब्बास, मुहम्मद और उमर का वंश है, जिन में इमाम हसन और इमाम हुसेन की संतति सैयद कहलाती है और शेष तीनों की साहबजादों के नाम से पुकारी जाती है। किंतु शीया लोगों में अनेक इमाम हसन के वंश को भी सैयद नहीं कहते हैं और कहते हैं कि ठीक सैयद केवल इमाम जैनुलआबदीन (इमाम हुसेन के मध्यम पुत्र) का

सहज सौंदर्य्य से पूर्ण और सतोगुणी तेज से देदीप्यमान था। कभी इन्होंने सिंगार न किया। सांसारिक सुख की ओर यौवनावस्था में भी इन्हों ने तृणमात्र चित्त न दिया। मर्म की विमल ज्योति और ईश्वरीय प्रताप इन के चेहरे से प्रगट था। धर्मसाधन और कठिन वैराग्य व्रतपालन ही में इनको आनंद मिलता था और अनशनादिक नियम ही इन का व्यसन था। इन के समस्त चरित्र में से दो एक दृष्टांत रूप यहाँ पर लिखे जाते हैं।

महात्मा मुहम्मद के चचेरे भाई और परम सहायक आदरणीय अली से इन का विवाह हुआ और सुप्रसिद्ध हसन-हुसैन इन के दो पुत्र थे।

एक वेर कुरेशवंशीय अनेक संभ्रातजन महात्मा मुहम्मद के पास आए और वोले कि यद्यपि हमारा आप का धर्म संवंध नहीं है पर हम आप एक ही वंश के और एक ही स्थान के हैं, इस से हम लोगों की इच्छा है कि हम लोगों के यहाँ जो अमुक आप के संबंधी का अमुक से विवाह होनेवाला है उस कार्य को आप की पुत्री फातिमा चल कर अपने हाथ से संपादन करै। महात्मा मुहम्मद ने अच्छा कह कर विदा किया और फातिमा के निकट आ कर कहने लगे—वत्से ! लोगों से सद्भाव तथा शत्रुओं का उत्पीड़न सहन करना और शत्रुतारूपी विष को कृतज्ञता-रूपी सुधा भाव से पान ही हमारा धर्म है। आज अरब के अनेक मान्य लोगों ने अपने विवाह में तुम को बुलाया है। यह हमारी इच्छा है कि तुम वहाँ जाओ, परंतु तुम्हारी क्या अनुमति है हम जानना चाहते हैं। फातिमा ने कहा–ईश्वर और ईश्वर के भेजे हुए आचार्य की आज्ञा कौन उल्लघन कर सकता है ? हम तो आप की आज्ञाधीना दासी हैं, इस से हमारी सामर्थ्य नहीं कि आप की आज्ञा टालें। हम विवाह सभा में जायगे, परंतु शोच यह है कि हम कौन सा वस्त्र पहन के जायँगे। वहाँ और स्त्री लोग महामूल्य वस्त्राभरणादिक धारण कर के आवेंगी और हमारी फटी चद्दर देख कर वे लोग हमारा और आप का उपहास करेंगी। अवूजुहल की वहिन आनवा की स्त्री और शवा की वेटी इत्यादि अनेक अरव की स्त्री कैसी असभ्यचारिणी और मंदप्रकृति हैं यह आप भली भाँति जानते हैं और

सन् ४६ हिजरी (६७० ई०) में मुआविया के पुत्र यज़ीद ने इमाम हसन की एक दुष्ट स्त्री जादा के द्वारा उनको विष दिलवाया। कहते हैं कि दो बेर पहिले भी इस दुष्टा स्त्री ने इस लोभ से कि वह यज़ीद की स्त्री होगी इमाम को विष दिया था, किंतु तीसरी बार का विष ऐसा था कि उससे प्राण न बच सके और इस असार संसार को छोड़ गए। पंद्रह पुत्र और आठ कन्या, इन को हुई थीं। अब लोग इन दुष्टों के धर्म को देखें कि साक्षात् परमाचार्य ईश्वर-प्रिय 'वरंच ईश्वर-तुल्य', अपने गुरु की संतति और गुरु-पुत्र और स्वयं भी गुरु उस का इन लोगों ने कैसे आनंद से वध किया।

इमाम हसन के मरने के पीछे यज़ीद बहुत प्रसन्न हुआ और अपने राज्य को निष्कंटक समझने लगा। अब केवल इन लोगों की दृष्टि में इमाम हुसैन बचे जो कि रात दिन खटकते थे, क्योंकि धर्मी और श्रद्धालु लोग इन के पक्षपाती थे। मुआविया और उस के साथी लोग अब इस सोच में हुए कि किसी प्रकार इन को भी समाप्त करो तो निर्द्वंद राज्य हो जाय। सन् ४६ के अंत में मुआविया मर गया और यज़ीद नारकी मुसलमानों का महंत हुआ। यह मद्यप परस्त्री-गामी और बेईमान था, इसी हेतु इस के महंत होने से अनेक लोगों ने अप्रसन्नता प्रकट की। मक्के और मदीने में सभ्य और अनेक प्राचीन लोग उस के धर्म शासन से फिर गए और अनेक लोग नगर छोड़ छोड़ कर दूर जा बसे। इमाम हुसैन का तो मानो वह शत्रु ही था। मदीना के हाकिम को लिख भेजा कि या तो इमाम हुसैन हमारा शिष्यत्व स्वीकार करें या उन का सिर काट लो। मदीने के हाकिम ने यह वृत्त इमाम हुसैन से कहा और उन पर अधिकार जमाने को नाना प्रकार की उपाधि करने लगा। यह बिचारे दुखी हो कर अपने नाना और माँ की समाधि पर बिदा होने गए और रो रो कर कहने लगे कि नाना तुम्हारे धर्म के लोग निरपराध हुसैन को कष्ट देते हैं, हसन को विष दे कर मार चुके पर अभी इन को संतोष नहीं हुआ। तुम्हारे एक मात्र पुत्र और उत्तराधिकारी दीन हुसैन को महंतों का पद त्याग करने पर भी यह लोग नहीं जीता छोड़ा चाहते। इसी प्रकार अनेक विलाप कर के अपनी माँ और भाई की समाधि पर से भी बिदा हुए

थीं और कहती थीं कि आज हम लोगों की सभा में महात्मा महम्मद की बेटी फटा कपड़ा पहन कर आवेगी और हम लोगों के उत्तम वस्त्राभूषण देख के आज वह भली भाँति लज्जित होगी। इतने में विद्युल्लता की भाँति साम्हने से फातिमा की शोभा चमकी और विवाह-मंडप में इन के आते ही एक प्रकाश हो गया। फातिमा ने नम्र भाव से सब स्त्रियों को यथायोग्य अभिवादन किया, परंतु वे सब स्त्रियाँ ऐसी हत्-बुद्धि और धैर्यरहित हो गईं कि सलाम का उत्तर न दे सकीं। फातिमा का मुखचंद्र देख कर अभिमानिनी स्त्रियों के हृदय-कमल मुरझा गये और आँखों में चकचौंधी छा गई। सब की सब घबड़ा कर उठ खड़ी हुईं और आपस में कहने लगीं कि यह किस महाराज की कन्या और किस राजकुमार की स्त्री है। एक ने कहा, यह देवकन्या है। दूसरी बोली नहीं, कोई तारा टूट कर गिरा है। कोई बोली सूर्य्य की ज्योति है। किसी ने कहा, नहीं नहीं, आकाश से चंद्रमा उतरा है। परंतु जिस के चित्त में धर्मवासना थी उन्हों ने कहा कि यह ईश्वरीय ज्योति है। यह अनेक अनुमान तो लोगों ने किये, परंतु यह संदेह सब को रहा कि कोई होय पर यह यहाँ क्यों आई है? अंत में जब लोगों ने पहचाना कि यह बीबी फातिमा है तो सब को अत्यंत लज्जा और आश्चर्य हुआ। सबसे ऊँचे आसन पर उनको लोगों ने बैठाया और आप सब सिर झुका कर उनके आस पास बैठ गईं। कई उनमें से हाथ जोड़कर बोलीं—हे महापुरुष महम्मद की कन्या! हम लोगों ने आप को बड़ा कष्ट दिया, हम लोगों के कारण जो आप के नित्य कर्म में व्यवधान पड़ा हो उसे क्षमा कीजिये और हमारे योग्य जो कार्य हो आज्ञा कीजिये। हम लोगों को जैसा आदेश हो वैसा भोजन और शरबत आप के वास्ते सिद्ध करें। बीबी फातिमा ने विनयपूर्वक उत्तर दिया—भोजन और शरबत से हमारा संतोष नहीं, हमारा और हमारे पितृदेव का विषय में विराग सहज स्वभाव है। अनशन व्रत हम लोगों को सुस्वादु भोजन के बदले अत्यंत प्रिय है। हमारा और हमारे पिता का संतोष ईश्वर की प्रसन्नता है। तुम लोग देवी, देवता, भूत, प्रेत इत्यादि की पूजा और पाखंड छोड़ कर सत्य धर्म के प्रकाश में आओ, एक परमेश्वर की भक्ति करो, परस्पर बैर का त्याग और

उन को वहाँ भी जाने न दिया और पकड़ लाए और इब्ने ज़ियाद की आज्ञा से उन का सिर काटा गया और उन का साथी हानी भी मारा गया, वरंच उन के दो लड़कों को भी मार डाला। महात्मा मुसलिम मरने के समय यही कहते थे कि मुझे अपने मरने का कष्ट नहीं, क्योंकि सत्य मार्ग स्थापन में मेरे प्राण जाते हैं। मुझे शोच यही है कि मेरे पत्र के विश्वास पर इन कृतघ्नी और विश्वासघाती कूफा वालों के विश्वास पर इमाम हुसेन यहाँ चले आवैंगे और उन महापुरुष के साथ भी ये कापुरुष कुपुरुष यही व्यवहार करैंगे और आचार्य मुहम्मद की संतान को निरपराध ये लोग वध कर डालैंगे। हाय! उन के भाई मुसलिम कूफे में यों अनाथ की भाँति मारे गये, यह हुसैन को नहीं मालूम था और वे मंजिल मंजिल इधर ही बढ़े आते थे यहाँ तक कि जब शाम के हाते के भीतर पहुँच चुके तब उन्होंने मुसलिम का मरना सुना। उस समय आपने अपने साथ के लोगों से कहा कि भाई अब तुम सब लोग अपने देश लौट जाओ, हम तो प्राण देने जाते हैं। उस समय वे सब लोग, जो अरब से साथ आए थे, प्राण के भय से अपने सच्चे स्वामी को छोड़ कर चले गये। यहाँ तक कि हज़ारों की जमात में केवल बहत्तर मनुष्य साथ रह गए। जब इन लोगों के साथ इमाम सरलफ नामक स्थान पर पहुँचे तो हुर नामी उबेदुल्लाह का सेनापति दो हज़ार सिपाहियों के साथ मिला और वह इन लोगों को घेर कर शाम की तरफ बढ़ता हुआ ले चला। इस समय इमाम ने फिर सब लोगों को जाने को कहा, परंतु अब तो वे लोग साथ थे जो सच्चे बंधु थे। ऐसे कठिन समय में कौन साथ छोड़ कर जा सकता था। इसी समय शाम से और भी फौजें आने लगीं। इमाम ने उन लोगों को बहुत समझाया और कहा कि हम यज़ीद के राज्य के बाहर चले जायँ, किंतु किसी ने उन की बात न सुनी। जब इमाम का डेरा करबला नामक स्थान में पड़ा था, उस समय शिमर नामक इब्ने ज़ियाद के सैनापति ने फुरात नहर का पानी भी इन पर बंद कर दिया। एक तो गरमी के दिन, दूसरे सफर की गरमी और उस पर यह आपत्ति कि पानी बंद। शिमर और उमर इस लश्कर में मुख्य थे। यदि इन में से किसी को भी कभी दया और धर्म सूझता भी, लोभ उसे हटा देता।

हेतु हम आप ही इन कामों से छुट्टी कर रखते हैं। हमारे अभाव में हमारे पुत्रों को कौन प्यार करेगा? हमारी इच्छा थी कि आज इन का सिर सँवारें, परंतु हम को संदेह है कि कल कोई उन के मुँह की धूल भी न भारेगा"।

अली यह सुन अत्यंत शोकाकुल हो कर रोने लगे और कहा कि फातिमा! तुम्हारे पिता के वियोग से हृदय में जो क्षत है वह अब तक पूरा नहीं हुआ और उन महात्मा के चरणदर्शन बिना जो शोक है वह किसी प्रकार से नहीं जाता। इस पर तुम्हारा वियोग भी उपस्थित हुआ। यह आघात पर आघात और विपत्ति पर विपत्ति पड़ी। फातिमा ने कहा—अली! उस विपत्ति में धैर्य किया है और इस में भी करो, इस क्षण में मुहूर्त्त भर भी हमसे अलग मत रहो, हमारे श्वासवायु अवसान का समय निकट है; नित्यधाम में हम तुम फिर मिलेंगे यह प्रतिज्ञा रही।

बीबी फातिमा यह कहती थीं और हसन-हुसेन के मुख की ओर देख कर दीर्घश्वास के साथ अश्रुवर्षण करती जाती थीं। माता की यह बात सुन कर हसन-हुसेन भी रोने लगे। फातिमा ने कहा—प्यारे बच्चो! थोड़ी देर के वास्ते तुम लोग मातामह के समाधि-उद्यान में जाओ और हमारे हेतु प्रार्थना करो। वे लोग माता के आज्ञानुसार चले गये। फातिमा तब बिछौने पर लेट गईं और अली से कहा, प्रिय तुम पास बैठो। विदा का समय उपस्थित है। अली बैठे और शोक से रोने लगे। तब फातिमा ने आसमा नाम की दासी को बुला कर कहा कि अन्न प्रस्तुत रक्खो, हमारे प्यारे हसन-हुसैन आ कर भोजन करेंगे। जब वे घर आवें तब उन लोगों को अमुक स्थान पर बैठाना और भोजन कराना। उन को हमारे निकट मत आने देना, क्योंकि हमारी अवस्था देख कर वे घबड़ायेंगे। आसमा ने वैसा ही किया। इधर फातिमा ने अली से कहा—हमारा, सिर तुम अपनी गोद में ले बैठो, अब जीवन में केवल कुछ ही क्षण बाकी है। अली ने कहा—फातिमा! तुम्हारी ऐसी बातें हम नहीं सुन सकते। फातिमा ने उत्तर दिया—अली! पथ खुला है, हम प्रस्थान करेहींगे और मन अत्यंत शोकाकुल है और

किया या कोई और बात धर्म विरुद्ध की ? किस बात पर तुम लोग हम को निरपराध वंध करते हो ? इस का उत्तर किसी ने न दिया, तब इमाम यह कह कर उस ऊँट पर से उतरे कि हम ने संसार में तुम से हुज्जत समाप्त कर ली, अब ईश्वर के यहाँ हमारा तुम्हारा झगड़ा है और घोड़े पर सवार हुए। युद्ध आरंभ हुआ और बड़ी वीरता से इन के साथी सब मारे गए। अंत में इमाम अपने एक छोटे बच्चे को, जो प्यास से व्याकुल हो रहा था, उन लोगों के सामने लाए और कहा कि इस नौ महीने के बच्चे पर दया कर के केवल इस के पीने को तो पानी दो। इस के उत्तर में उन दुष्टों में से एक ने ऐसा तीर मारा कि वह बच्चा वहीं मर गया। और फिर चारो ओर से घेर कर हजारों वार लोगों ने किए, यहाँ तक कि वे घोड़े पर से गिरे। उस समय किसी ने उन का सिर काटा, किसी ने मरे पर भाला मारा, किसी ने हाथ की उँगली नोची। इस पर भी इन लोगों को संतोष न हुआ और उन लोगों के मरे शरीर पर घोड़े दौड़ाए। हाय ! इतने बड़े मनुष्य की यह गति ! भूख प्यास से दुखी और दीन मनुष्य को निरपराध बाल बच्चे समेत स्त्रियों के सामने मारना इन्हीं लोगों का काम है, उस पर भी गुरु-पुत्र को।

आदरणीय अली की मृत्यु का समाचार

परम धार्मिक सुप्रसिद्ध अली मुसलमान धर्म के प्रवर्त्तक हज़रत महम्मद के जामाता और शीआ संप्रदाय के पहिले इमाम (आचार्य) थे। हज़रत महम्मद के लोकांतर गमन पीछे मुसलमान धर्म की स्थिति और उन्नति अली के ही ऊपर निर्भर थी। जैसे भक्तिभाजन ईसा को उन के शिष्य जूडा ने विंशति मुद्रा के लोभ से शत्रुहस्त में समर्पण कर के वध किया था वैसे ही इब्नमुलज़म नामक एक व्यक्ति ने एक दुश्चारिणी नारी के प्रलोभन में उस की कुमंत्रणा से स्वीय धर्माचार्य अली को स्वयं करवालाघात से निहत किया। यह उस से भी भयंकर व्यापार है। इब्नमुलज़म के भाव चरित्र की चंचलता देख कर पहिले ही उस के ऊपर अली का संदेह हुआ था। एक दिन इब्नमुलज़म ने अली को एक उत्कृष्ट सामग्री उपहार दी थी। अली उस उपहार के प्रति अनादर प्रदर्शन कर के बोले कि हम तुम्हारे इस उपढौकन ग्रहण में नहीं प्रस्तुत हैं; तुम परिणाम में हम को जो उपढौकन प्रदान करोगे उस के लिए हम विशेष चिंतित हैं। इस के कुछ दिन पीछे अली शिष्यमंडली के साथ कूफ़ा नगर में उपस्थित हुए। वहाँ इब्नमुलज़म ने कुत्तामा नाम की एक दुश्चरित्रा विधवा युवती के सौंदर्य से मुग्ध होकर उस से परिणय-अभिलाषा प्रगट की। कुत्तामा ने उसे प्रलोभन जाल में आवद्ध कर के कहा-हमारे तीन पण हैं सो पूर्ण करने से हम तुम्हारे साथ व्याह में सम्मत हैं। एक सहस्र दिरहम (ताम्रमुद्रा विशेष), एक जन सुगायिका सुंदरी दासी और मुहम्मद के जामाता अली का वध-साधन। यह सुन कर इब्नमुलज़ाम वोला—पहिले दोनों पण कठिन नहीं हैं वह संसाधन कर सकेंगे, किंतु तीसरा पण गुरुतर है इस के संसाधन में हम अक्षम हैं। कुत्तामा बोली—शेषोक्तपण ही सब में प्रधान है, अली हमारे पितृकुल का शत्रु है, उस का प्राणसंहार बिना किए कोई भाँति विवाह नहीं हो सकता है। दुरात्मा इब्नमुलज़्म उसका सुदृढ़ पण देखकर उस में भी सम्मत हुआ एवं विपाक्त तीक्ष्ण करवाल के द्वारा गुरु की हत्या करने का सुयोग देखने लगा। एक दिन निशीथ समय में अली कूफ़ा की जामा मस्जिद के दरवाजे पर खड़े होकर नमाज में

नं०	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
१	मुहम्मद	अब्दुल्लाह	अमीना	१२ रबीउलअौवल ५२ हिजरी के पूर्व	६३
२	फ़ातिमा	मुहम्मद	खदीजा	६०४ ईसवी	२८
३	अली	अबूतालिब	फ़ातिमा (असद की बेटी)	५९९ ईसवी ११ रजब मक्के में	६२
४	हसन	अली	फ़ातिमा	१५ शाबान सन् २ हिजरी ६२५ ई०	४५॥
५	हुसैन	अली	फ़ातिमा	५ शाबान सन् ४ हिजरी ६२६ ई०	५१ वर्ष ५ महीना ५ दिन
६	अबूबकर	अबीक़हाफ़	उमउल् खैर	५७१ ईसवी	६३

"हाँ, शैशव में, यौवन में, सर्वक्षण सर्वस्थान में वह हमारे प्राण के रक्षक हैं।" यह बात सुन कर वह बोला, "तुम अपने को, इस अट्टालिका पर से गिरा कर ईश्वर तुम को रक्षा करते हैं, इस विश्वास की पूर्णता प्रदर्शन करो, तब तुम्हारे विश्वास का हम विश्वास करेंगे और तुम्हारी ईश्वरनिष्ठा प्रमाण युक्त होगी।" तब अली बोले "चुप रहो और चले जाओ और स्पर्द्धा कर के जीवन को कलंकित मत करो। मनुष्य का क्या साध्य है कि ईश्वर को परीक्षा में बुलावे। केवल उन को परीक्षा करने का अधिकार है। वह प्रति मुहूर्त्त में मनुष्य के निकट परीक्षा उपस्थित करते हैं। वह हम लोगों के पास हैं। हमलोग क्या हैं वह प्रकाश कर देते हैं। अंतर में हम लोग किस भाँति धर्मभाव रखते हैं, वह दिखला देते हैं। कौन मनुष्य ईश्वर को ऐसी बात कह सकता है कि यह सब पाप अपराध कर के हम ने तुम्हारी परीक्षा किया। हे ईश्वर! देखें, तुम्हारी कितनी सहिष्णुता है! हा! ऐसा कहने का किस को अधिकार है? तुम्हारी बुद्धि अत्यंत दुष्ट हुई है। तुम्हारी यह उक्ति सब पापों से बढ़ कर है। जो यह सुविशाल नभोमंडल का रचयिता है उस की तुम परीक्षा करने क्या जानो? तुम अपना शुभाशुभ तो जानते ही नहीं हो। पहिले अपनी परीक्षा करो, पीछे दूसरे की परीक्षा करना। पथप्रदर्शक अग्रगामी गुरु की जो शिष्य परीक्षा करता है वह मूर्ख है। जिस को तुम ने परीक्षक किया है, हे अविश्वासी, यदि उन्हीं की धर्ममार्ग में तुम परीक्षा करो, तो तुम्हारी दुःसाहसिकता और मूर्खता प्रकाश होगी। तुम ईश्वर की क्या परीक्षा करोगे? धूलिकणिका क्या पर्वत की परीक्षा कर सकती है? मनुष्य अपने बुद्धिगत अनुमान से तुला यंत्र प्रस्तुत कर के ईश्वर को उस में स्थापन करने जाता है, किंतु ईश्वर बुद्धि के अनायत्त हैं, उन के द्वारा बुद्धि-निर्मित परिमाण यंत्र चूर्ण हो जाता है। ईश्वर की परीक्षा करना और उन को आयत्त करना एक ही है। तुम एतादृश महाराज को आयत्त करने की चेष्टा मत करो, चित्रित वस्तु किस प्रकार से चित्रकार की परीक्षा करेगा। उन के असीम ज्ञान में जो सब चित्र विद्यमान हैं उन के पास परिदृश्यमान विश्वचित्र क्या पदार्थ है? जब परीक्षा ग्रहण की कुबुद्धि के द्वारा तुम आक्रांत होते हो, तब जानना तुम को संहार करने के लिए दुर्भाग्य उपस्थित

नं०	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
७	उमर	खिताब	खतमा	५८२ ईसवी	६३
८	उसमान	अफ़ान	अरदी	५७५ ईसवी	८२
९	इमाम जैनुलाब-दीन	इमाम हुसेन	शहरबानू (नौशे-रवाँ से पाँचवीं)	३६ हिजरी	५८
१०	इमाम बाकर	हुसैन के पुत्र अली	उसम (अबदुल्ल-हई इमन की बेटी)	५८ हिजरी	६३
११	इमाम जाफर सादिक	बाकर	उम्मे फरदा (अबू-बकर की पोती	८० वा ८३ हिजरी	६७
१२	इमाम मूसा काज़िम	जाफर	हमीरा	१२८ हिजरी	४५ या ५५
१३	अलीरज़ा	मूसा काजिम	तकीम	१५३ हिजरी	४६
१४	अबूजाफ़र नकी	अली	रहीना	१९५ हिजरी	२५
१५	अबुलहसन असकरी तकी	नक़ी	समाना	२१४ हिजरी	४०
१६	अबूमहम्मद	असकरी	सौसन	२३२ हिजरी	२८

वंश है। आदरणीय अली सब के पहिले मुसल्मान हुए और दाहिनी भुजा की भाँति महात्मा मुहम्मद के सदा सहायक रहे। इन्हीं अली के पुत्र इमाम हुसेन थे, जिनका दुष्टों ने करबला में बध किया, जिस का हम क्रम से वर्णन करते हैं।

महात्मा मुहम्मद के (६३२ ई०) मृत्यु के पीछे अबूबकर (६३२ ई०) खलीफा हुए और उन के पीछे उमर (६३४ ई०)। इस में कुछ संदेह नहीं कि महात्मा मुहम्मद के पीछे उन के सब शिष्यों को धन और देश और शासन के लोभ ने ऐसा घेर लिया था कि सब धर्म को भूल गए थे। केवल आड़ के वास्ते धर्म था। यद्यपि उपद्रव तो मुहम्मद महात्मा की मृत्यु के साथ ही हुआ, किंतु तीसरे खलीफा (महन्त) के काल से उपद्रव बढ़ गया। यह हम पक्षपात छोड़ कर कह सकते हैं कि ऐसे घोर समय में आदरणीय अली ने बड़ा संतोष प्रकाश किया था। शाम (Asia minor) के लोग इन सब उपद्रवों की जड़ थे। उन में भी कूफा के सन् ६५६ में इन उपद्रवियों ने उसमान महंत का व्यर्थ वध किया और आदरणीय अली को खलीफ़ा बनाया। यही समय मुहर्रम के अन्याय की जड़ है। उसमान खलीफा के समय में महात्मा मुहम्मद ने निज शिष्यों में एक मनुष्य मुआविया (जो इन का गोत्रज भी था) नामक शाम और मिस्र आदि देशों में गवर्नर था। जब अली खलीफा हुए तो इस मुआविया ने चाहा कि उनको जय करके आप खलीफा हों। यहाँ तक कि अनेक युद्धों में मुसलमानों पर अपना अधिकार जमाता गया। सन् ६६१ में पाँच बरस खलीफ़ा रह कर अली एक दुष्ट के हाथ से मारे गये। इन के पीछे इन के बड़े पुत्र और महात्मा मुहम्मद के नाती इमाम हसन खलीफ़ा हुए, किंतु मुआविया ने इन को भी अपने राज्य-लोभ से भाँति २ का कष्ट देना आरंभ किया। उस समय के लोग ऐसे क्रूर, लोभी और दुष्ट थे कि धर्म छोड़ कर लोभ से बहुत मुआविया से मिल गए और अपने परमाचार्य की एक मात्र संतति हसन-हुसैन को दुःख देने लगे। इमाम हसन यहाँ तक दुःखी हुए कि चार लाख साल पिंशन पर निराश हो कर खिलाफत से बाज आए। कुछ ऊपर छ महीने मात्र ये खलीफा थे। किंतु इस पिंशन के देने में भी मुआविया बड़ी देर और हुज्जत करता रहा। यहाँ तक कि

नं०	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
१७	अबुलक़ासिम मिहदी	अबूमुहम्मदज़की	नरगिस	२५५ हिजरी	०
१८	इमाम अबूहनीफ़	साबित		८०	७७
१९	इमाममालिक	उन्स	उमउलमुहसिन (इमामहसन के परपोते की बेटी)	९५	८४
२०	इमाम शाफ़ई	इदरीस		१५०	५४
२१	इमाम हुमल	मुहम्मद		१६५	७६
२२	इमाम ग़ौस आज़म	अबासालिह (इमामहुसेन के वंश में)	फ़ातिमा उम-उलख़ैर (इमाम हसन के वंश में)	४७०	९१

और अपनी सपत्नी नानियों और संबंधियों से विदा हो कर मक्के की ओर चले। इसी समय कूफा के लोगों ने इमाम को एक पत्र लिखा। उस में उन लोगों ने लिखा कि "हम लोग यजीद मद्यप के धर्मशासन से निकल चुके हैं, आप यहाँ आइए, आप ही वास्तव में हमारे गुरु हैं, हम लोग आप के चरण के शरण में रहेंगे और प्राण पर्यंत आप से अलग न होंगे। इस बात की हम शपथ करते हैं।" इस पत्र पर कूफा के हजारों मनुष्यों के हस्ताक्षर थे। इस पत्र को पाकर इमाम ने कूफा जाना चाहा। उन के बंधुओं ने उन से बहुत कहा कि कूफे के लोग झूठे होते हैं, आप उन का विश्वास न कीजिए। पर उन के ईश्वर की शपथ खाने पर विश्वास कर के इमाम ने किसी का कहना न सुना और अपने मक्का की यात्रा की समय अपने चचेरे भाई मुसलिम को कूफियों के पास भेजा कि उन को मक्का से लौटती समय इमाम के कूफा आने का सम्वाद पहिले से दें। इनको इधर भेज कर आप वंदना के हेतु मक्के चले। मुसलिम जब कूफे में पहुँचे तो इन का वहाँ के लोगों ने बड़ा शिष्टाचार किया और इमाम हुसैन के गुरुत्व को सब ने स्वीकार किया। यह देख कर इन्होंने इमाम को पत्र लिखा कि आप निश्शंक कूफा आइए; यहाँ के लोग सब आप के दासानुदास हैं और तीस हजार आदमियों ने आप को गुरु माना है। इस पत्र के विश्वास पर इमाम हुसैन कूफे की ओर और भी निश्चिंत हो कर चले और बांधवों का वाक्य स्वीकार न किया। किंतु शोच की बात है कि बिचारे मुसलिम वहाँ मारे जा चुके थे। कारण यह हुआ कि यजीद ने जब सुना कि कूफा में मुसलिम इमाम हुसैन का आचार्यत्व चला रहे हैं तो उस ने वहाँ के हाकिम को बदल दिया और उबैदुल्लाह जियाद-नंदन को हाकिम बनाया और आज्ञा भेजा कि हुसैन को बकरे की भाँति जिबह करो और मुसलिम को तो जाते ही मार डालो। जब ज़ियाद-पुत्र शाम का हाकिम हुआ तो मुसलिम के पकड़ने की फिक्र में हुआ। पहिले तो कूफे के लोग मुसलिम के साथ उस के मकान पर चढ़ गए, परंतु जब उसने उन लोगों को धमकाया और लालच दिया तो एक एक कर के सब मुसलिम का साथ छोड़ कर चले गए और मुसलिम बिचारे भाग कर एक घर में जा छिपे। परंतु लोगों ने

कहते हैं कि यज़ीद हिमदानी ने साद से जाकर इमाम के वास्ते पानी माँगा और कहा कि क्या तुम को ईश्वर को मुँह नहीं दिखलाना है जो अपने गुरुपुत्र को निरपराध वध करते हो? इस के उत्तर में उस दुष्ट ने कहा कि हम रै* की हाकिमी को धर्म से अच्छी समझते हैं। अंत में उबैदुल्लाह ने सादपुत्र को आज्ञा लिखा कि क्यों इतनी देर करते हो? या तो हुसैन का सिर लाओ या उन को यज़ीद के मत में लाओ। इस आज्ञा के अनुसार (सन् ६१ हिजरी के) ६ वीं मुहर्रम की संध्या को अट्ठाईस हज़ार सैना से उमर ने इमाम का लशकर घेर लिया। इमाम उस समय संध्या की वंदना में थे। उठ कर सेना से कहा कि रात भर की मुझे और फ़ुरसत दो। उमर ने इस बात को माना। इमाम ने साथ के लोगों से कहा कि अब अच्छा है चले जाओ और मेरे पीछे प्राण मत दो। परंतु किसी ने न माना और सब मरने को उद्यत हुए। रात भर सब लोग ईश्वर की स्तुति करते रहे। सवेरे इमाम ने स्त्रियों को धैर्य और संतोष का उपदेश दिया और आप ईश्वर का स्मरण करते हुए सब हथियार बाँध कर अपने साथियों के साथ मरने को निकले। इन के साथ जितने लोग मारे गए उन की संख्या बहत्तर है। इन में बत्तीस सवार और चालीस पैदल थे। सरदारों में मुसलिम बिन उनका जरगामः, वहब उन्स, मालिक, हुज्जाज, जहीर, असदो, आमिर, उम्मग, उमरान, शईब यमर, शूदब और हबीब इब्ने मज़ाहिर (एक वृद्ध मनुष्य) थे और इमाम के नातेदारों में इनकी बहिन ज़ैनब के दो लड़के मुहम्मद और ऊन, और तीन मुसलिम के भाई, पाँच इमाम हुसैन के विमात्र भाई अब्बास, उसमान, मुहम्मद अब्दुल्लाह और जाफर और तीन पुत्र इमाम हसन के अब्दुल्लाह, जैद और कासिम (किसी के मत से पाँच अबूबकर और उमर भी) और एक पुत्र इमाम हुसैन के अली अकबर (अठारह बरस के) इतने मनुष्य थे। युद्ध होने के पूर्व इमाम एक ऊँट पर बैठ कर सैना के सामने आए और मृदु और गंभीर स्वर से बोले कि हमने किसी की स्त्री छीनी या किसी का धन हरण

---

* एक स्थान। (सं०)
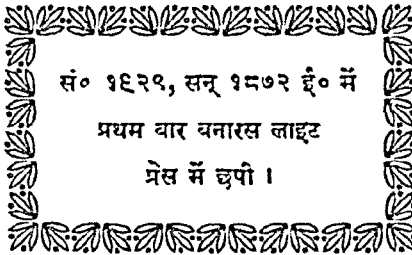
भारतेन्दु-ग्रन्थावली
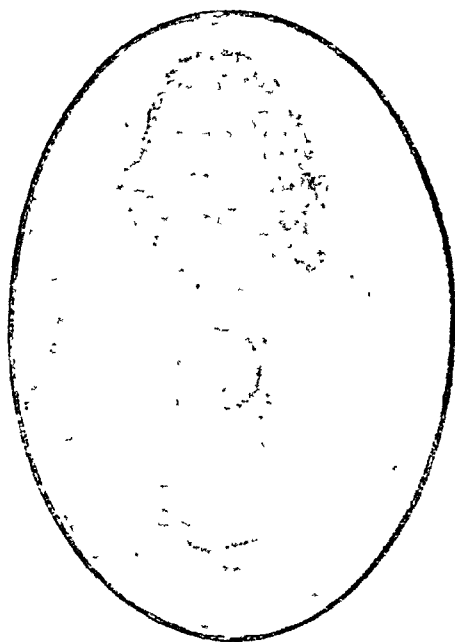
अनन्य वीर वैष्णव हरिश्चंद्र
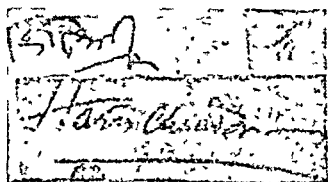
भारतेन्दु हरिश्चंद्र के हस्ताक्षर

सं० १९२९, सन् १८७२ ई० में
प्रथम बार बनारस लाइट
प्रेस में छपी।

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
१२ रबीउल्-औ० ६३२ ईसवी ११ हिजरी	४ पुत्र, ४ कन्या	मदीना	बहु देववादी भूतपिशाचोपासी अरब जाति में इन्हीं ने एकेश्वर वाद स्थापन कर के मुसलमानी मत चलाया; ग्यारह विवाह किए बुद्धि आश्चर्य कौशल सम्पन्न थी। किसी के मत में १४ विवाह १८ संतति।
११ हिजरी	३ पुत्र, २ कन्या	मदीना	महात्मा मुहम्मद की एक मात्र वंश रखने वाली प्यारी कन्या थी। स्वभाव बहुत नम्र और दयालु था।
४० हिजरी १९ रमजान	१७ पुत्र वा १९, १७ कन्या	कूफा० नजफ ठीक नहीं मालूम	सुन्नियों के चौथे खलीफ़ा। शीआओं के पहले इमाम। पाँच बरस तीन महीना खिलाफ़त किया। माता और पिता दोनों सबंध में यह म० मुहम्मद के बहुत पास थे अर्थात् चचेरे और मौसेरे भाई थे। यह सैयदों के वंशकर्त्ता और फकीरों के मूल गुरु हैं। नौ विवाह किए थे।
१ रबीउल् औवल ४९ हिजरी ६७० ईसवी	१९ पुत्र, ८ कन्या	मदीना	सुन्नियों के पाँचवें खलीफ़ा तथा शीआओं के दूसरे इमाम थे। छ महीना खिलाफत किया। विष से शहीद हुए। पाँच पुत्रों का वंश है।
१० मुहर्रम ६१ हिजरी ६८३ ई०	६ पुत्र, ८ कन्या	करबला	शीआओं के तीसरे इमाम। करबला के प्रसिद्ध युद्ध में शहीद हुए।
१३ हिजरी ६३४ ई०	३ पुत्र, २ कन्या	मदीना	सुन्नियों के पहले खलीफा थे। महात्मा मुहम्मद के पीछे दो बरस तीन महीना खलीफा रहे। महात्मा मुहम्मद की छोटी स्त्री आयशा के पिता थे। चार स्त्री थीं और मुसलमानी धर्म फैलाने को इन्होंने बहुत सा द्रव्य व्यय किया था।

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
२३ हिजरी ४४ ई०	६ पुत्र, ३ कन्या	मदीना	दूसरे खलीफा थे, १० बरस आठ महीने खलीफा रहे। शहीद हुए, ६ पत्नी और दो उप-पत्नी थीं।
३५ या ३४ हिजरी ६५२ ई०	३ पुत्र, ४ कन्या	मदीना	तीसरे खलीफा थे। १२ बरस खलीफा रहे। इन को महात्मा मुहम्मद की दो बेटियाँ व्याही थीं किंतु उन को संतति नहीं थी। आठ स्त्री थीं। पूर्वोक्त तीनों खलीफा की संतति शेख कहलाती है।
६४ हिजरी	६ पुत्र, ८ कन्या	मदीना	शीआ लोग केवल इन्हीं की संतति को सैयद मानते हैं।
११८ वा ११७ हिजरी	११ पुत्र, ४ कन्या	मदीना	
१४८ हिजरी	६ पुत्र, ३ कन्या	मदीना	
१८३	२ पुत्र, १ कन्या	बुगदाद	शीआ कहते हैं कि सुन्नियों के उपद्रव से अरब छोड़ कर चले गये। किंतु सुन्नी कहते हैं कि उस काल के खलीफा बुगदाद में रहते थे इससे आदर के हेतु इन को भी वहीं बुलाकर बसाया। ये बड़े भारी वंशकर्त्ता हुए हैं।
२०३	८ पुत्र, २२ कन्या	बुगदाद	शीआ मत का विशेष प्रचार किया। किंतु सुन्नी लोग कहते हैं कि ये लोग भी सब सुन्नी थे।
२२०	५ पुत्र, १ कन्या	बुगदाद	
२५४	२ पुत्र, २ कन्या	सरमनराय	
२६०	२ पुत्र, १ कन्या	सरमनराय	

विशेषतः कलियुग में भगवद्धर्म ही की नित्यता है, यह भी निश्चय है।

यथा हेमाद्रौ श्री भागवद्वाक्यम्

कलौ सभाजयन्त्यार्य्याः गुणज्ञास्सारभागिनः।
यत्र सङ्कीर्त्तनेनैव सर्व्वं स्वार्थोभिलभ्यते ॥

अनेक निबन्धेषु महाभारते

कलौ कलिमलध्वंसं सर्वपापहरं हरिम्।
येऽर्च्चयन्ति नरानित्यं तेपिवंद्या यथा हरिः ॥

मदन पारिजाते योगि याज्ञवल्क्यः

विष्णुर्ब्रह्माचरुद्रश्च विष्णुर्देवो जनार्दनः।
तस्मात्पूज्यतमंनान्यमहंमन्ये जनार्दनात् ॥ इत्यादि

और इसमें विशेषता यह है कि एक श्री भगवान के पूजन में सबका पूजन आ जाता है—यथा श्री मद्भागवते—

यथा तरोर्मूलनिषेचनेन तृप्यन्ति तत्स्कन्दभुजोपशाखाः।
प्राणोपहाराच्च तथेन्द्रियाणां तथैव सर्व्वार्हणमच्युतेज्या ॥

और इस भगवद्धर्म के सब अधिकारी हैं; यह श्री मुख से गाया है—स्त्रियोवैश्यास्तथा शूद्रास्तेपियान्ति पराङ्गतिम्। ऐसा ही परम भक्त श्री प्रह्लाद जी ने भी कहा है—

नालं ऋषित्वं द्विजत्वं देवत्वं वाऽसुरात्मजाः।
प्रीणनाय मुकुन्दस्य न धनं न बहुज्ञता ॥ इत्यादि

इससे सर्वसाधारण को और अनेक धर्मों को छोड़कर केवल भगवद्धर्म मुख्य हुआ तो भगवद्धर्मों में परम पुनीत कार्तिक व्रतादि यहाँ दिखाते हैं।

कार्तिक सब मासों में पवित्र है और उसकी नित्य क्रिया क्या है यह कार्तिक कर्म विधि नामक निबंध में लिख चुके हैं। यहाँ वे धर्म लिखे जाते हैं जो नैमित्तिक हैं और जैसे कार्तिकस्नान आश्विन शुद्धा ११ से आरंभ होता है, इससे नैमित्तिक कृत्य भी उसी दिन से लिखते हैं।

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
२६७	१ पुत्र	बुगदाद	शीत्राओं के मत से ६ वर्ष की अवस्था में पर्वतगुहा में चले गए फिर प्रलय के समय निकलेंगे। सुन्नियों के मत से अभी जन्म ही नहीं हुआ, प्रलय में पैदा होंगे।
१५०	०	मदीना	
१७६	०	मिस्र	नं० १८ से २१ तक ये सुन्नी मतके चार इमाम हैं, शीत्रा इन को नहीं मानते। ये चारो पृथक मत के प्रवर्त्तक हैं यथा हानिफी, मालिकी, शाफेई और जम्बूली।
२०४	०	बुगदाद	अकबर के वंश के बादशाह हानिफी थे। दत्तात्रेय की भाँति अबूहनीफा ने अनेक गुरु किये थे, जिनमें इमामजाफर भी थे।
२४२	०	बुगदाद	सुन्नियों में इन्हीं चारों की चार मुख्य मत शाखा हैं। ये क्रम से एक के दूसरे शिष्य भी थे।
५६१	०	बुगदाद	सुन्नियों में ये एक प्रसिद्ध इमाम हुए हैं, हसनी-हुसैन सैयद थे और बड़े भारी विद्वान और सिद्ध थे। शीत्रा लोग इनको नहीं मानते हैं वरंच सैयद भी नहीं कहते।

अथ कार्तिक कृष्णा ४—इस चतुर्थी को कर्क चतुर्थी का व्रत है। इसी चतुर्थी में रानियों सहित राजा दशरथ की पूजा करना।

अथ कार्तिक कृष्णा ८—इस अष्टमी का नाम राधाष्टमी है। यह अष्टमी अरुणोदय-व्यापिनी लेना और अरुणोदय की समय न मिले तो सूर्योदय-व्यापिनी मानना। इस अष्टमी को श्री राधाकुंड में स्नान करना और श्री राधिका का पूजन करना। इस दिन श्री राधा-सहस्रनाम पाठ का बड़ा पुण्य लिखा है। इस दिन पुत्रवती स्त्री को गो-पूजन का, दाम्पत्य और शिव पूजन का विधान भी कोई ग्रंथकार लिखते हैं।

अथ कार्तिक कृष्णा ११—इस एकादशी का नाम रमा है। इसमें व्रत और जागरण और श्री राधादामोदर का पूजन करना और रात्रि को दीपदान करना।

कार्तिक कृष्णा १२—इसको वत्स-द्वादशी कहते हैं। यह द्वादशी सायंकाल-व्यापिनी मानना और इसमें नक्त व्रत करना। ब्रह्मचर्य से रहना और उड़द का भोजन करना, पृथ्वी पर सोना, साँझ की समय गऊ की पूजा करना। वह गऊ सीधी और दूध देने वाली हो और उसका बच्चा भी उसी रंग का हो। सब पूजा करके तामे के अरघे में इस मंत्र से अर्घ देना।

क्षीरोदार्णवसंभूते सुरासुरनमस्कृते।
सर्वदेवमयेमातर्गृहाणार्घ्यं नमोस्तुते॥

फिर इस मंत्र से गोग्रास देना।

सर्व्वदेवमयेदेवि सर्वदेवैरलंकृते।
मातर्ममाभिलपितं सफलं कुरु नन्दिनि।

इसी दिन गऊ का घी, दूध, दही और मठा तथा तेल का और कढ़ाई का किया भोजन न करना। इस द्वादशी से पाँच दिन तक साँझ पीछे देवता, ब्राह्मण, गऊ, अपने से बड़े मनुष्य, मातादिक अपने से बड़ी स्त्री, हाथी और घोड़े की आरती करना और साँझ को दीये बालना। उत्तर मुख नव वा विशेष दीए बाल कर शुभाशुभ विचारना। दीया बालने का मंत्र।

पीछे हाथ मे जलती लकड़ी वा पलीता लेकर पित्रों को मार्ग दिखावे। मंत्र—

अग्निदग्धाश्चयेजीवा येप्यदग्धाः कुले मम।
उज्वलज्योतिषादग्धास्तेयांतु परमांगतिम्॥
यमलोकम्परित्यज्य आगता ये महालये।
उज्वलज्योतिषावर्त्म प्रपश्यन्तु व्रजन्तु ते॥

इसी रात्रि को कोई काली-पूजन भी करते हैं और हनुमान जी का जन्मोत्सव भी इसी रात्रि को होता है और इसी रात्रि में वीरों का पूजन, कुमारी-पूजन और तंत्रोक्त मंत्रों की सिद्धि भी होती है पर यह अधिकारी-परत्व है। सतोगुनी भक्तों को तो परम भागवत हनुमान जी का ही पूजन ग्राह्य है। हनुमान जी को तुलसी दल पर श्री राम नाम लिखकर चढ़ाना और लड्डू भोग रखकर रामायण का पाठ वा और कुछ रामचरित्र सुनना।

मंत्र—यत्र यत्र रघुनाथकीर्त्तनं तत्र तत्र कृत मस्तकांजलिम्।
वाष्पवारि परिपूरित लोचनं मारुतिन्नमतराक्षसान्तकम्॥

इस चतुर्दशी को नक्तव्रत करना वा उड़द के पत्ते के शाक का फल विशेष है। जो इस चतुर्दशी को मंगलवार पड़े तो चित्राव्रत और शिव-पूजन करना।

अथ कार्तिक कृष्णा ३०—यह दीपावली अमावस्या है, इसमें दिन को व्रत करना। साँझ को भगवान के मंदिर में दीपदान करना और दीए के वृक्ष बनाना और अनेक प्रकार के भोग समर्पण करके हटरी में बैठाना। साँझ को अपना घर सब स्वच्छ करके यथाशक्ति उसकी शोभा करना। सड़कों को राजा आज्ञा देकर स्वच्छ करावै और तोरणादिक सड़क के बाहर लगाना, दूकान पर वस्तु रखना और घर में सब स्थानों पर दीया बाल के लक्ष्मी और बलि का पूजन करना, लक्ष्मी को खोए का लड्डू भोग लगाना और इस मंत्र से दीपदान करना।

त्वं ज्योतिः श्री रविश्चन्द्रो विद्युत्सौवर्ण तारकाः।
सर्वेषां ज्योतिषांज्योतिर्दीपज्योतिर्नमोस्तुते॥

कार्तिक नैमित्तिक कृत्य

'तत्कर्महरितोषंयत्सा विद्यातन्मतिर्यया।'

सं० १९२९

रखना और एक कंदरा बनाना। वहाँ भगवान की मूर्ति रखकर षोड़शोपचार पूजन करना और अन्नकूट भोग लगाना। जहाँ गिरिराज की शिला हो वहाँ तो गिरिराज की शिला कंदरा में रखकर पूजन करना। जहाँ शिला न हो वहाँ शालिग्राम वा छोटे श्री ठाकुर जी की मूरत रखकर पूजा करनी और गऊ गोप की भी पूजा करनी। पहिले भगवान की पूजा करनी, उसके मंत्र—

बलिराज्ञो द्वारपाल भवानद्यभवप्रभो।
निज वाक्यर्थनार्थाय सगोवर्द्धन गोपते॥
गोपालमूर्त्ते विश्वेश शक्रोत्सव विभेदक।
गोवर्द्धनकृतच्छत्र पूजांमे हरगोपते।
देवे वर्षति यज्ञविप्लवरुषा वर्षाश्मपर्षानिलैः।
सीदत्पालपशुस्त्रियात्मशरणं दृष्ट्वानुकम्प्युत्स्मयन्।
उत्पाट्यैक करेणशैकमबलो लीलोच्छिलींध्रं यथा।
बिभ्रद्गोष्टमपान्महेन्द्रमदभित् प्रीयान्नइन्द्रोगवां॥

इति भगवत्-प्रार्थना मंत्र।

गोवर्द्धनधराधार गोकुलत्राणकारक।
विष्णुबाहुकृतच्छाय गवांकोटि प्रदोभव॥
एषोऽव जानतेमर्त्यान् कामरूपी वनौकसः।
हंतह्यस्मै नमस्यामः शर्म्मणे आत्मनोगवाम्॥
हंतायमद्रिरबला हरिदासवर्य्यो।
यद्रामकृष्णचरणस्पर्श प्रमोद :॥
मानंतनोति सहगोगणयोस्तयोर्यत्॥
पानीयसूयवसुकन्दरकन्द मूलैः॥

इति गिरिराज-प्रार्थना मंत्रः।

या लक्ष्मीर्लोकपालानां धेनुरूपेण संस्थिता।
घृतं वहतियज्ञार्थे ममपापंव्यपोहतु॥
अग्रतस्सन्तुमेगावो गावोमेसन्तु पृष्ठतः।
गावोमेहृदयेसन्तु गवाम्मध्येवसाम्यहम्॥

इति गो प्रार्थना मंत्रौ।

भूमिका।

मेरे प्यारे मित्र—यद्यपि तुम्हारे प्रेम मार्ग में यावत् कर्ममात्र निष्फल हैं तथापि तुम्हारे मिलने के साधन रूप कर्म तो कर्त्तव्य ही हैं, इसी आशय से यह विधि लिखी गई है। इसको देखकर कई पंडित रुष्ट होंगे पर यह तो समझें कि पंडितों के हेतु तो संस्कृत पुस्तकें बनी ही हैं, यह तो केवल उन्हीं के आनंदार्थ है जो श्रद्धावान हैं परंतु संस्कृत ग्रंथों को नहीं देखते। इसमें श्री रामार्चन चंद्रिका, निर्णय सिंधु, धर्म-सिंधु, जयसिंह-कल्पद्रुम, भगवद्भक्तिविलास और कार्तिक-महात्म्यादिक ग्रंथों का सारांश लिखा है। जो हो, तुम इससे प्रसन्न हो, यही इसका फल है। अतएव प्यारे! यह तुम्हारे चरणों में समर्पित है अंगीकार करो।

तुम्हारा रसिक

हरिश्चंद्र

बलि राजा की पूजा करके कुबेर और लक्ष्मी की पूजा करनी। पूजा के पीछे स्त्रियाँ आरती करें।

तीसरे पहर कास और कुस की मार्ग-पाली बनाकर नगर के बाहर वृक्ष में बाँधना और नीचे लिखे हुए मंत्र से उसको नमस्कार करके सब लोग वाहनादि समेत उसके नीचे से निकलें। इससे वर्ष भर कुशल होती है। मंत्र—

मार्गपालिनमस्तेस्तु सर्व लोक सुखप्रदे।
विधेयैःपुत्रदाराद्यैः पुनरेहि व्रतस्य मे ॥

साँझ को कुश काश की मोटी रस्सी बनाना और उसको एक ओर से राजपुत्रादिक एक ओर से नीचे लोग खींचे। जो नीचे लोग खींच ले जायँ तो जानना कि राजा की जय होगी।

रात को जूआ खेलना। यद्यपि जूआ खेलने का विधान तीनों दिन है परंतु इस दिन मुख्य है। रात को जूआ स्त्रियों से खेलना और दीपदान करना, ब्राह्मणों को और:मित्रों को वस्त्र और पान देना। इति।

अथ कार्तिक शुद्धा २—इसका नाम यम द्वितीया है। इसमें प्रातः काल श्री यमुना स्नान। जहाँ श्री यमुना जी न हों वहाँ श्री यमुना जल-पान वा मार्जन करना। काशी वासियों को यम तीर्थ स्नान और यमेश्वर का दर्शन करना। इस दिन अपने घर नहीं खाना, मुख्य करके छोटी बहिन के घर भोजन करना। छोटी बहिन न हो तो बड़ी के घर भोजन करना। वह भी न हो तो बूआ के घर वा नाते की बहिन के घर खाना। जो नाते की भी कोई बहिन न हो तो मानी हुई बहिन वा मित्र की बहिन के घर खाना और बहन की पूजा करना। अपने घर कभी नहीं खाना। बहिन खिलाती समय इस मंत्र से भाई की प्रार्थना करे।

भ्रातस्तवानुजाताहं भुंक्ष्वभक्तमिदंशुभं।
प्रीतयेयमराजस्य यमुनाया विशेषतः॥

इस दिन श्री यमुना जी ने यमराज को भोजन कराया है, इससे यमराज ने वरदान दिया है कि आज के दिन जो यमुना-स्नान करेगा और बहिन का आदर करके बहिन के घर खायगा, उसको यम दंड न होगा। तीसरे पहर यमराज, यमी, यमुना, चित्रगुप्त और यमदूतों
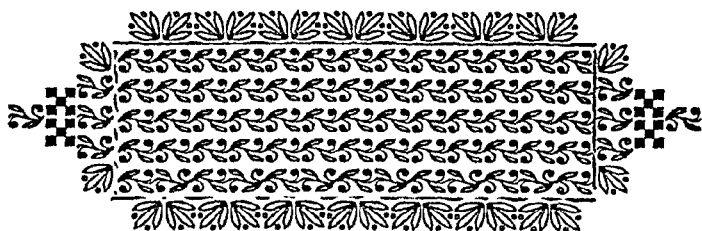
कार्तिक नैमित्तिक कृत्य

* श्री राधादामोदरायनमः *

दोहा

जेहि लहि फिर कछु लहन की आस न चित में होय।
जयति पवित्री जग करन प्रेम-बरन यह दोय ॥ १ ॥

छप्पय

जदपि पान करि परम अमृतमय प्रेम भरयौ रस।
जड़ उनमत्त समान होइ बिचरत गत कलमस ॥
सकल कर्म को जाल सिथिल किय परम प्रीति सों।
रह्यौ न कछु कर्त्तव्य शेष कुल वेद रीति सों ॥
पै जानि भागवत धर्म एहि सूझत सो पथ जेहि लहत।
लखि दीन जीव संसार के परम कृपा गहि कछु कहत ॥

कार्त्तिक-धर्म यहाँ क्यों विधान करते हैं? इस हेतु से कि सब धर्मों में भगवद्धर्म मुख्य है और यही श्रीमुख से भी कहा है—

"मन्मनाभवमद्भक्तो मद्याजीमान्नमस्कुरु मामेवैष्यसिकौन्तेय" इत्यादि ॥

इमेदीपा मयादत्ता प्रदीप्ताघृतपूरिता ।
धात्रिदेवि नमस्तुभ्यमतश्शान्तिम्प्रयच्छमे ॥

फिर भोगादिक समर्पण करके इन मंत्रों से पुष्पांजलि चढ़ावै—

धात्रिदेवि नमस्तुभ्यं सर्व्वपापक्षयंकरि ।
पुत्रान्देहि महाप्राज्ञे यशोदेहिबलञ्चमे ॥
प्रज्ञांमेधाञ्चसौभाग्यं विष्णुभक्तिञ्चशाश्वतीम् ।
निरोगंकुरुमांनित्यं निष्पापंकुरु सर्वदा ।
सर्वज्ञङ्कुरुमांदेवि धनवंतन्तथा कुरु ।
सम्वत्सरकृतं पापं दूरी कुरुममाक्षये ॥

फिर इस मंत्र से सूत्र लपेटकर फेरी करे ।

दामोदरनिवासायै धात्र्यैदेव्यैनमोनमः ।
सूत्रेणानेनवध्नामि सर्वदेवनिवासिनीम् ॥

फिर इन मंत्र से फूल चढ़ावे । धात्र्यैनमः, शान्त्यैनमः, कान्त्यै०, मेधायै०, प्रकृत्यै०, विष्णुपत्न्यै०, महालक्ष्म्यै०, रमायै०, कमलायै०, इन्दिरायै, लोकमात्रे०, कल्याण्यै०, कमनीयायै०, सावित्र्यै०, जगद्धात्र्यै०, गायत्र्यै०, सुधृत्यै०, अव्यक्तायै०, विश्वरूपायै०, सुरूपायै०, अब्धिभवायैनमः इन मंत्रों से फूल चढ़ाना, धात्री के मूल में तर्पण करना ।

पितापितामहाश्चान्ये येऽपुत्रायेप्य गोत्रिणः ।
तेपिवन्तु मयादत्तं धात्रीमूलेऽक्षयम्पयः ॥

आब्रह्मस्तम्ब पर्य्यन्तमित्यादि से फिर तर्पण करे । यह तर्पण सव्य ही से करे ।

धात्री के नीचे दामोदर भगवान की पूजा करे, चित्रान्न, चित्रवस्त्र समर्पे, ब्राह्मणों का जोड़ा खिलावे, भगवान की षोडशोपचार पूजा करके इस मंत्र से अर्घ दे ।

अर्घ्यं गृहाण भगवन् सर्वकामप्रदोभव ।
अक्षय्यासंततिर्मेस्तु दामोदर नमोस्तुते ॥ इत्यादि

अथ कार्तिक शुद्धा १०—इस दसमी को सार्वभौम वृत होता है ।

अथ कार्तिक शुद्धा ११—इस एकादशी का नाम प्रवोधिनी है । इस दिन भगवान सो कर उठते हैं, इससे यह परम मंगल दिन है । इस दिन

अथ आश्विन शुद्धा, ११—इसी एकादशी से कार्तिक के सब व्रत आरंभ करना। इस एकादशी का नाम पापाङ्कुशा है। इसमें भगवान की पद्मनाभ नाम से पूजा करै।

अथ आश्विन शुद्ध १५—यदि एकादशी से कार्तिक-स्नान न आरंभ किया हो तो इस दिन से करना। इस पूर्णिमा में दो कर्म हैं—प्रथम रासोत्सव, द्वितीय कोजागर व्रत।

रासोत्सव जिस दिन सायंकाल में पूर्ण चन्द्र हो उस दिन करना क्योंकि, "कलाहीने शशाङ्के तु न कुर्य्याच्छारदोत्सवम्" इस वाक्य में हीन चंद्र का निषेध है और भगवान को श्वेत वस्त्र, श्वेताभरण, श्वेत नैवेद्य समर्पण करना और चाँदनी में शृंगार सहित बैठाकर रासलीला के भजन गाना। इस दिन श्री मद्भागवत की रासपंचाध्यायी का पाठ बहुत पुण्य देने वाला है और किसी ग्रंथकार ने यह भी लिखा है कि रात्रि को चंद्रमा की चाँदनी में सूई में डोरा पिरोना और कुछ अक्षर पढ़ना, इससे नेत्र की जोति बढ़ती है।

कोजागर व्रत जिस दिन आधीरात को पूर्णिमा हो, उस दिन करना। साँझ से लक्ष्मी और इंद्र का स्थापन करके पूजा करना और नारियल का जल लक्ष्मी को भोग लगाकर पीना। आधीरात के समय लक्ष्मी जी यह कहती हुई निकलती हैं कि जो जागता मिलेगा और जूआ खेलता होगा, मैं उसे धन दूँगी। कमल पर बैठी हुई लक्ष्मी का ध्यान करना और 'ॐ लक्ष्म्यैनमः' इस मंत्र से सब पूजा करके इस मंत्र से पुष्पांजलि देना।

नमस्ते सर्व्व देवानां वरदासि हरिप्रिये।
यागतिस्त्वत्प्रपन्नानां सामेभूयात्त्वदर्च्चनात्॥

इंद्र को भी चार दाँत के श्वेत हाथी पर बैठे ध्यान करके 'इंद्राय-नमः' इस मंत्र से पूजा करके पुष्पांजलि इस मंत्र से देना।

विचित्रैरावतस्थाय भास्वत्कुलिशपाणये।
पौलोम्यालिंगितांगाय सहस्राक्षायतेनमः॥

इसी पुनवासी को बड़े पुत्र की आरती और तिलक करना और रात को जागरण करना।

इन मंत्रों से जगा के पंचामृत स्नान कराना और चंदनादिक से उद्वर्त्तन करके शीत के नए वस्त्र समर्पण करके पुष्पादिकों से पूजन करना। मंत्र—

गतामेवा वियच्चैव निर्म्मलं निर्म्मलादिशः।
शारदानिच पुष्पाणि गृहाण मम केशव॥

इस भाँति पुष्प, गंध, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य, तांबूल, फलादिक अर्पण करके आरती करके इन मंत्रों से स्तुति करना।

योऽविद्ययाऽनुपहतोपिदशार्द्ध वृत्या
निद्रामुवाह जठरीकृतलोकयात्रः।
अन्तर्जलेहि कशिपुस्पर्शानुकूलाम्
भीमोर्मिमालिनि जनस्य सुखं विवृण्वन्॥
सोसावदभ्र करुणो भगवान् विवृद्ध
प्रेमस्मितेन नयनाम्बुरुहं विजृम्भन्।
उत्थाय विश्वविजयायचनोविषादम्
माध्व्यागिराऽपनयतात्पुरुषः पुराणम्॥
यन्नाभिपद्मभवनादज आविरासीत्
लोकत्रयोपकरणो यदनुग्रहेण।
तस्मै नमस्त उदरस्थ भवाय योग
निद्राऽवसान विकसन्नलिनेक्षणाय॥

प्रार्थना करके दंडवत प्रदक्षिणा करके कार्तिक के सब व्रत भगवान के सामने समाप्त करे। इस दिन श्री ठाकुर जी को रथ पर बिठा कर नगर में घुमाने का महापुण्य है। भगवान को रथ पर बैठा कर मंगल-पाठ वेदपाठ बाजा शंख घंटा बजाते हुए नगर में घुमावे और जहाँ जहाँ रथ जाय वहाँ वहाँ लोग पूजा करें। मंत्र—

यद्रोपविभ्रम विवृत्तकटाक्षपात
संभ्रान्त नक्र मकरो भयगीर्ण घोषः।
सिन्धुश्शिरस्यर्हण (परि) गृह्य रूपी
पादारविन्दमुपगम्य बभाष एतत्।
नत्वावयं जड़धियोरुवि दाम एतत्॥

सूर्य्यांशसम्भवादीपा अंधकार विनाशकाः ।
त्रिकाले मां दीपयन्तु दिशन्तुच शुभाशुभम् ॥

अथ कार्तिक कृष्णा १३—इस दिन साँझ को यम का दीया द्वार के बाहर देना । मंत्र—

मृत्युनापाशदंडाभ्यां कालेनश्यामयासह ।
त्रयोदश्यांदीपदानात् सूर्यजः प्रीयतां मम ॥

इसी तेरस के दिन गो-व्रत भी होता है ।

अथ कार्तिक कृष्णा १४—इस चतुर्दशी में जो मंगलवार पड़े तो श्री महादेव जी का व्रत और पूजा करना । यह चतुर्दशी स्नानवाले चंद्रोदय व्यापिनी मानें और सर्वसाधारण इसमें अवश्य स्नान करें, क्योंकि जो इसमें तेल लगाके सिर मल के नहीं नहाते उनको बड़ा दोष होता है । स्नान की समय खेत की हल से निकाली मिट्टी, चिचिडा, भटकटैया और तुम्बी तीन बेर अपने ऊपर से फिरावै और स्नान करके तिलक करके तब नित्य का कार्तिक स्नान करै । चिचिड़ा घुमाने का मंत्र—

सीतालोष्ट समायुक्त सकंटकदलान्वित ।
हरपापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः ॥

नित्य स्नान करके यम तर्पण करे । यह तर्पण जिसका पिता जीता हो वह भी करे । मंत्र—

यमायनमः, धर्मराजायनमः, मृत्यवेनमः, अंतकायनमः, वैवस्वतायनमः, कालायनमः, सर्वभूतक्षयायनमः, औदुम्बरायनमः, दध्नायनमः, नीलायनमः, परमेष्टिनेनमः, वृकोदरायनमः, चित्रायनमः; चित्रगुप्तायनमः ।

इस मंत्र से तीन तीन अंजली जल तिल समेत दे । इस चतुर्दशी से प्रतिपदा तक महाराज बलि का राज रहता है, इससे इन तीनों दिन घर स्वच्छ रक्खे, दीए बालै, उज्वल वस्त्र पहिने और गीतादिक से चित्त प्रसन्न रक्खे । रात को चौमुखा दीया, नर्क के नाम का, इस मंत्र से निकाले ।

दत्तो दीपं चतुर्दश्यां नरकप्रीतये मुदा ।
चतुर्वत्तिसमायुक्त सर्वपापापनुत्तये ॥

तुलसी-विवाह की विधि विशेष और ग्रंथों में लिखी है, देख लो। सक्षेप से यहाँ लिखते हैं। तुलसी अपने हाथ से घर वा बगीचे में लगाना, जब तीन महीने का वृक्ष हो तब उसका पूजन आरंभ करना और फिर शुभ मुहूर्त्त देखकर विवाह करना। मंडप, कलश-स्थापन, वेदी इत्यादि सब विवाह की भाँति बनाकर नवग्रह, मख, मातृका-पूजन नांदी श्राद्ध करके दान करना। जो लग्न कोई अच्छी मिले तो उस लग्न में, नहीं तो गोधूली में विवाह करना। अंतरपट करके "वासश्रुत:" इस मंत्र से वस्त्र पहिराना। "यदाबध्ने" इस मंत्र से कंकण बाँधना और मंगलाष्टक पाठ करके अंतरपट हटाकर "मयासम्वर्द्धिता यथाशक्त्य-लंकृतामिमांतुलसीं देवीं दामोदराय वराय तुभ्यमहं सम्प्रददे" यह संकल्प करके जल भगवान के सामने छोड़ना और तुलसी को भगवान से छुला देना। उस समय यह मंत्र पढ़वाना "कोदात्कस्मा अदात" इत्यादि। फिर होम करना "पंचत्वनो अग्ने इत्यादि" मंत्र से नव आहुति देकर फिर होम इन मंत्रों से करना। पहिले द्वादशाक्षर से फिर वासुदेवायनमः स्वाहा, नारायणाय०, माधवाय०, गोविन्दाय०, विष्णवे०, मधुसूदनाय०, त्रिविक्रमाय०, वामनाय०, श्रीधराय०, हृषीकेषाय०, पद्मनाभाय०, दामोदराय०, उपेन्द्राय०, वासुदेवाय०, अनिरुद्धाय०, अच्युताय० अनन्ताय०, गदिने०, चक्रिणे०, विष्वक्सेनाय०, वैकुंठाय०, जनार्दनाय०, मुकुन्दाय०, अधोक्षजायनमः स्वाहा इन मंत्रों से होम करके दक्षिणा, भूयसी-दक्षिणा, आचार्य-दक्षिणा, शय्यादानादिक करके इस मंत्र से प्रार्थना करना।

त्वन्देवि मेग्रतो भूया तुलसी देवि पार्श्वतः।
देवित्वं पृष्ठतो भूयास्त्वद्दानात् मोक्षमाप्नुयाम्॥

विवाह के समय स्त्रियाँ गीत गावें।

इति तुलसी विवाह।

इस एकादशी को व्रत करके रात को जागरण करना। इस रात को जागरण का, दीपदान का बड़ा पुण्य है। जो इस एकादशी को सोमवार और उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र हो तो बड़ी फलदात्री हो। इसी

रात को राज मार्ग में, स्मशान में, नदी के वा तड़ाग के तटों पर, मंदिरों में शिखरों में, गलियों में और दुर्गम स्थानों में राजा दिया बालने की आज्ञा दे। सब लोग शृंगार करके, सुगंध लगा के, पान खाते बाहर निकलें और मित्रों से संबंधियों से मिलें। वारांगना और नटनर्तकादिक नृत्य-गीत करें। राजा (यदि हिंदू हो) इस बात की डौंड़ी पिटवा दे कि आज महाराज बलि का राज्य है, कोई दुखी न हो, सब अपना मनमाना करैं। जीवहिंसा, सुरापान, अगम्यागमन, चोरी और विश्वासघात ये पाँच पाप छोड़कर छूई हुई वस्तु का भोजन, वारांगनासेवन, द्यूत और सब जाति के संग बैठना यह सब राजा बलि के राज में पाप नहीं हैं।

गोप लोग गऊ का शृंगार करैं और सब लोग गऊ को भोजन दें। मल्ल लोग मल्ल युद्ध करें। घोड़े वाले घोड़ा नचावैं। रात को राजा नगर के बाहर निकले और बालकों को एकत्र करके उनका खेल देखे और उनको खिलौना मिठाई दे। सब लोग बाजे बजावैं और आनंद की बातें करैं। रात को स्त्रियों के वा ब्राह्मणों वा स्नेहियों के संग जूआ खेलें। इसमें पूर्व पूर्व मुख्य है। आधी रात को जब पुरुष सोने लगें तब स्त्रियाँ सूप और डौंड़ी पीटती हुई दरिद्रा को घर से बाहर निकालें। इस दिन भी अभ्यंग की विधि है।

अथ कार्तिक शुद्धा १— इसमें श्री गोवर्द्धन-पूजन, बलि-पूजा, दीपोत्सव, गोक्रीड़ा, मार्गपालीबंधन, वृष्टिकाकर्षण, नया वस्त्र पहिरना, उत्सव जूआ खेलना, मंगल मालिका और स्त्रियों की आरती करना ये मुख्य कर्म हैं। उसमें प्रथम श्री गोवर्धन-पूजन है। यह उत्सव अवश्व माननीय है क्योंकि इसके हेतु श्री मुख वाक्य है।

एतन्ममतन्तात क्रियतां यदि रोचते।
अयं गोब्राह्मणादीनाम्मह्यञ्च दयितोमखः॥

इसमें प्रेम-मार्ग में वा और अन्य मार्ग में जैसी जिसकी रीति हो वह पूजन करे। अब साधारण लोगों के हेतु यह रीति लिखी जाती है। जहाँ साक्षात श्री गोवर्द्धन पर्वत है वहाँ तो उन्हीं की और जहाँ गोवर्द्धन नहीं है वहाँ गऊ के गोबर का पर्वत बनाना, उत्तर मुख

इसमें नक्तव्रत वा उपवास करना । साँझ को कृत्तिका का पूजन करना-मंत्र-शिवायैनमः, सम्भूत्यैनमः, प्रीत्यैनमः, संतत्यैनमः, अनुसूयायैनमः, क्षमायैनमः, कर्तिकेयायनमः, खड्गिनेनमः, वरुणायनमः, हुताशनायनमः । इन मंत्रों से कृत्तिका और कार्तिकेय का पूजन करना। पूजा करके क्षीरसागर दान करना । चौबीस अंगुल का क्षीरसमुद्र बना कर गऊ का दूध भर कर सोने की मछली और मोती की आँख बनाकर दान करना । जो एकादशी को व्रत न समाप्त किया हो तो कार्तिक व्रत इस मंत्र से समाप्त करना ।

इदं व्रतं मयादेव कृतं प्रीत्यै तव प्रभो ।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत् प्रसादाज्जनार्दन ॥

इसी पूर्णिमा में नील वृषभ दान करना और इसी में संतान व्रत, राशि व्रत और मनोर्थ पूर्णिमा व्रत होता है । इसी पूर्णिमा में चातुर्मास के व्रत समाप्त करना । उस व्रत के दान लिखते हैं। नक्त व्रत में दो वस्त्र दान करना । एकान्तर उपवास में गऊ । भू-शयन में शय्या । एक बेर खाने से गऊ देना । जो अन्न छोड़ा, हो तो वह सोने का बनाकर देना । कृच्छ्र किया हो तो दो गऊ देना । शाकाहार किया हो वा दूध छोड़ा हो वा दूध पीता हो वा और कोई गोरस छोड़ा हो तो गऊ देना । ब्रह्मचर्य लिया हो तो सोना देना । पान छोड़ा हो तो दो वस्त्र देना । मौन लिया हो तो घी का घड़ा, दो वस्त्र और घंटा देना । जो नित्य रंग से मंदिर में स्वस्तिकादिक बनाते हो तो गऊ और सोने का कमल देना । दीपदान में दीए और दो वस्त्र देना । गऊग्रास देते हों तो गऊ और बैल देना । पृथ्वी पर भोजन करता हो तो काँसे की थाली और गऊ देना । सौ फेरी देते हों तो वस्त्र । अभ्यंग छोड़ा हो तो तेल का घड़ा । केश न बनवाया हो तो मधु, चीनी, सोना । गुड़ छोड़ा हो तो ताम्र का पात्र और गुड़ और सोना देना । ऐसे ही जिस वस्तु को छोड़ा हो वह स्वर्ण समेत देना । जो लाख तुलसी चढ़ाया हो तो उद्यापन करना । साँझ को इस मंत्र से दीपदान करना ।

नमः पितृभ्यः प्रेतेभ्यो नमो धर्माय विष्णवे ।
नमो याम्याय रुद्राय कान्ताय पतयेनमः ॥

अहोभाग्यमहोभाग्यं नन्दगोप व्रजौकसाम् ।
यन्मित्रम्परमानन्दं पूर्णब्रह्मसनातनं ॥
आसामहोचरणरेणुजुषामहंस्यां
वृन्दावनेकिमपि गुल्मलतौषधीनां ।
यादुस्त्यजंम्वजन आर्य्यपथंविहाय
भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्यां ॥
यावैश्रियार्चितमजादिभिरासकामैः
योगेश्वरैरपियदात्म निरासगोष्ठ्यां ।
कृष्णस्य तद्भगवतश्चरणारविन्दे
न्यस्तं स्तनेपुविजहुः परिरभ्यतापं ॥
वन्दे नन्द व्रजस्त्रीणां पादरेणूमभीक्ष्णशः ।
यासांहरिकथोद्गीतं पुनातिभुवनत्रयम् ॥

इति गोप-गोपी-प्रार्थना मंत्राः

धन्येयमद्यधारणी तृणवीरुधस्त्वत्
पादास्पृशो द्रुमलता करजाभिमृष्टाः ।
नद्योद्रयः खगमृगास्सदयावलोकैः
गांप्योंतरेण भुजयोरपियत्स्पृहाश्रीः ॥

इति व्रजप्रार्थना मंत्रः

इन मंत्रों से गोवर्द्धन-पूजन करके अन्नकूट भोग भगवान को समर्पण करके नमस्कार करना । इति ।

इस प्रकार गोवर्द्धन-पूजा करके महाराज बलि की पूजा करे। घर के एक कोने में महाराज बलि की और रानी बिंध्यावलि की मूर्ति पाँच रंग से लिखे। जीभ, ओठ, हथेली, तलवा और आँख के कोने लाल रंग से, बाल काले रंग से और सब अंग पीले रंग से, कपड़े श्वेत रंग से और आयुधादिक नीले रंग से लिखे। दो भुजा बनावे और राजाओं के सब चिन्ह बनाकर अक्षत और षोड़शोपचार से पूजा करे। मंत्र—

बलिराजनमस्तुभ्यं विरोचनसुतप्रभो ।
भविष्येन्द्र सुराराते पूजेयं प्रतिगृह्यतां ॥

का पजन करना । 'यमायनमः' इस मंत्र से षोड़शोपचार पूजन करके इन मंत्रों से पुष्पांजलि देना ।

यमायनमः, निहंत्रेनमः, पितृराजायनमः, धर्मराजायनमः, वैवस्वतायनमः, दंडधरायनमः, कालायनमः, भूताधिपायनमः, दत्तानुसारिणेनमः, कृत्तानुसारिणेनमः ।

इन नाम मंत्रों से पूजा करके अर्घ देना, उसका मंत्र—

एह्येहिमार्तंडजपाशहस्त यमांतकालोकधरामरेश ।
भातृद्वितीयाकृतदेवपूजां गृहाणचार्घ्यंभगवन्नमस्ते ॥

अथ कार्तिक शुद्धा ४—इस दिन शेषादिक महानागों की पूजा करना ।

अथ कार्तिक शुद्धा ५—इस दिन जया व्रत करना, विष्णु की जया सहित पूजा करना, श्वेत वर्ण द्विभुज जया का ध्यान करके विष्णु और जया की प्रत्यंग-पूजा करके बाँस के पात्र में सप्तधान दान करना और "येन बद्धो बली राजा" इस मंत्र से रक्षाबंधन करना ।

अथ कार्तिक शुद्धा ६—जो मंगलवार हो तो अग्नि का पूजन करके ब्राह्मण भोजन कराना ।

अथ कार्तिक शुद्धा ७—इस दिन कार्त्तवीर्य्य की पूजा करके उनका दीप-दान करना ।

अथ कार्तिक शुद्धा ८—इस दिन गऊ का पूजन, गोग्रास दान करना और इसी में शाक व्रत है । नक्तव्रत करना, शाक खाना और शाक ही ब्राह्मण को देना ।

अथ कार्तिक शुद्धा ९—इस दिन श्री वृंदावन की परिक्रमा करना । यह नवमी द्वापर की युगादि भी है । इसमें कुष्मांड दान करना और जगद्धात्री का पूजन करना । तुलसी के विवाह का उत्सव इसी दिन से आरंभ होता है । जो तुलसी विवाह करे वह तीन दिन का व्रत करे । यद्यपि धात्री-पूजन कार्तिक में नित्य ही है तथापि जो और दिन न किया हो तो इस दिन करे । 'ॐ धात्र्यैनमः' इस मंत्र से षोड़शोपचार पूजा करे और आठ दीए आठ ओर बाल कर यह मंत्र पढ़े—

सं० १६२६ में छपी कार्तिक नैमित्तिक कृत्य के मुख पृष्ठ पर इसका उल्लेख है अतः इसके पहले की रचना है।

जिस समय मुहूर्त अच्छा हो उस समय भगवान को जगाना। पहिले नीचे पृथ्वी में अनेक रंगों से मंगल-मंडप, सथिया, चक्र इत्यादिक बना कर उसपर चौसठ ऊख का चार खंभा बनाकर खड़ा करना, उसके नीचे भगवान को बिठाना और फिर घंटा शंख बजाते हुए इन मंत्रों से जगाना।

ब्रह्मेन्द्ररुद्राग्नि कुवेरसूर्य सोमादिभिर्वन्दित वन्दनीय।
बुद्धयस्वदेवेश जगन्निवास मंत्रप्रसादेनसुखेनदेव॥
इयं च द्वादशी देव प्रबोधार्थंतुनिर्मिता।
त्वयैवसर्वलोकानां हितार्थं शेषशायिना॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठगोविन्दत्यजनिद्राम्जगत्पते।
त्वयिसुप्तेजगत्सुप्तमुत्थितेउत्थितं जगत्।
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठगरुड़ध्वज।
उत्तिष्ठपुण्डरीकाक्ष त्रैलोक्ये मङ्गलंकुरु॥

तथाच जो निकुंज के परम रस के अधिकारी हों वह इस मंत्र से जगावें।

विगता रजनी नाथ प्रमदानां सुखप्रदा।
उदेत्ययंदिनमणिर्वियोगी जनवंचकः॥
प्राणनाथ जगन्नाथ गोपीनाथ कृपानिधे।
चिरसुप्तोसिजागृष्व सुरतश्रम कर्पितः॥
ललितावाद्यतेवीणां विशाषा नृत्यतेंगणे।
गायन्ति गोपिकास्सर्वास्तावकंनिर्म्मलंयशः॥
वयस्या द्वारि सम्प्राप्ताः क्रीड़ार्थंतवमानद॥
ह्य्यंगवीनहस्ता सा त्वां यशोदाऽभि वांछति।
वियुक्ताश्चक्रवाकिन्यः पक्षिणो कुर्व्वते रवम्।
वाति वायुस्सुखस्पर्शो दीपोयं मन्दतांगतः॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ प्राणेश उत्तिष्ठोत्तिष्ठ वल्लभ।
मुखन्दर्शय मे नाथ वियोगं शमयप्रिय।
त्वयि सुप्ते जगन्नाथ जगत्सुप्तम्भवेदिदम।
उत्थिते चेष्टते सर्व्वमुत्तिष्ठोत्तिष्ठ माधव॥

पर्व और व्रत इत्यादि तो अनेक हैं और नित्य ही स्नानादिक का बड़ा फल है परंतु मार्गशीर्ष, कार्तिक, माघ, वैशाख सब महीनों में उत्तम गिने जाते हैं तिस में भी कार्तिक-स्नान का फल विशेष है। यह बात सब शास्त्र में प्रसिद्ध है कि कार्त्तिक के महीने में काशी में पंचगंगा-स्नान का बड़ा पुण्य है।

यथा काशीखंडे

कार्त्तिकेमासि मे यात्रा यैः कृता भक्तितत्परैः।
विंदुतीर्थे कृतं स्नानं तेषाम्मुक्तिर्न दूरतः॥ १॥
शतं समास्तपस्तप्त्वा कृते यत्प्राप्यते फलं।
तत्कार्त्तिके पंचनदे सकृत्स्नानेन लभ्यते॥ २॥
कार्त्तिके विंदुतीर्थे यो ब्रह्मचर्य्यपरायणः।
स्नानमर्थोदिते भानौ भानुजात्तस्य भी कुतः॥ ३॥

यथा पाद्मे, भार्गवार्चनचन्द्रिकायां च

आश्विनस्य तु मासस्य या शुक्लैकादशी भवेत्।
कार्त्तिकस्य व्रतानीह तस्यां वै प्रारभेत्सुधीः॥ ४॥

यथा विष्णुरहस्ये

प्रारभ्यैकादशीं शुक्लामाश्विनस्य तु मानवः।
प्रातः स्नानम्प्रकुर्वीत यावत् कार्त्तिकभास्करः॥ ५॥

यथा मदनपारिजाते विष्णुः, तथा नारदीये च

कार्त्तिकं सकलं मासं नित्यस्नायी जितेन्द्रियः।
जपन् हविष्यभुक् शान्तः सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ ६॥

इन वाक्यों का सारांश अर्थ यह है कि आश्विन शुक्ल एकादशी से आरंभ करके जो कार्त्तिक में जितेंद्रिय होकर और व्रतादिक कर पंच-गंगा में प्रातः स्नान करता है वह मुक्तिभागी होता है और उसको यम-राज का भय नहीं रहता और भी इसका महाफल लिखते हैं।

तथा पुराणसारोद्धारे, नारदीये च

प्रयागे माघमासे तु सम्यक् स्नानस्य यत्फलं।
तत्फलं कार्त्तिके काश्यां पंचनद्यां दिनेदिने॥ ७॥

कूटस्थमादिपुरुषं जगतामधीशं।
यत्सत्वतस्सुरगणा रजसः प्रजेशा
अन्येय भूतपतय स्सभवात् गुणेशः ॥
कामम्प्रयाहि जहि विश्रवसोवमेह
त्रैलोक्य रावणमवाप्नुहि वीर पत्नीम्।
वध्नीहि सेतुमिहिते यशसो वितत्यै
गायन्ति दिग्विजयिनो यमुपेत्य भूपाः ॥
स्वस्त्यतु विश्वस्य खलः प्रसीदताम्
ध्यायन्तु भूतानि शिवम्मिथोपिवा।
मनश्चभद्रम्भजता दधोत्तजे
आवेश्य तान्नो मतिरप्य हैतुकी ॥

पुक्तश्शैण्यादिवा हैमरकतसुरणत्किङ्किणीजालमाला
रत्नोघैर्मौक्तिकानामविरलमणिभिस्सम्भृतैश्चैवहारैः ॥
हेमैः कुम्भैः पताका शिवतर रुचिभिर्भूषितः केतु मुख्यैः।
छत्रैर्ब्रह्मेशवन्धो दुरित हरहरेः पातु जैत्रो रथोव ॥
वक्त्रं नीलोत्पलरुचि लसत् कुण्डलाभ्यां सुमृष्टम्।
चन्द्राकारं रचित तिलकं चन्दने नाक्षतैश्च ॥
गत्यां लीला जनसुखकरीं प्रेक्षणेनामृतौघम्
पद्मावासं स्मृतसमुरसा धारयन् पातु विष्णुः ॥

मोदन्तां सुजनास्त्वनिन्दितधियस्त्यक्ताखिलोपद्रवाः।
स्वस्थास्सुस्थिरबुद्धयः प्रतिहता मित्रारमन्तां सुखम् ॥
रे दैत्यागिरिगह्वराणि गहनान्याशु व्रजध्वं भयात्।
दैत्यारिर्भगवान यन्नरहरिं यानं समारोहति ॥
पलायध्वम्पलायध्वं रेरे दनुज दानवाः।
संरक्षणाय लोकानां रथारूढो नृकेशरी ॥

इन मंत्रों को पढ़ते और भगवान का चरित्र गाते हुए रथ को घुमावे। रथ के खींचने का, रथ के संग चलने का, रथ पर बैठे भगवान् के दर्शन करने का, तथाच पूजा करने का अनन्त माहात्म्य है। विस्तार भय से यहाँ नहीं लिखा। इसी दिन तुलसी जी का विवाह भी है।

बढ़ाने वाला कार्त्तिक व्रत जो लोग करते हैं उन को तीर्थों में घूमने से और उस की सेवा से क्या है अर्थात् वह सब कुछ कर चुके। वह और उन के कुल धन्य हैं और पूज्य हैं जो कार्त्तिक में व्रतादिक से विष्णु की भक्ति करते हैं।

तथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

न कार्त्तिकसमं धर्म्यमर्थ्यं नो कार्त्तिकात्परं।
न कार्त्तिकसमं काम्यं मोक्षदानं च कार्त्तिकात् ॥१५॥
तस्मात्सौरैश्च गाणेशैः शाक्तैः शैवैश्च वैष्णवैः।
कर्त्तव्यं कार्त्तिकस्नानं सर्व्वपापापनुत्तये ॥१६॥
न कार्त्तिकसमो मासो न काशीसदृशी पुरी।
न प्रयागसमं तीर्थं न देवः केशवात् पुरः ॥१७॥
प्रसंगाद्वा बलाद्वापि ज्ञात्वाऽज्ञात्वा कृतंतु यत्।
स्नानं कार्त्तिकमासस्य न पश्येद्यमयातनां ॥१८॥
तावद्गर्ज्जन्ति पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च।
न कृतं कार्त्तिके स्नानं यावज्जन्तुभिरादरात् ॥१९॥
तीर्थराजादितीर्थानि प्राप्ते कार्त्तिकमासके।
स्नानार्थं पंचगंगांतु समयांति न संशयः ॥२०॥
दुर्लभो मानुषो देहो दुर्लभा काशिका पुरी।
तत्रापि कार्तिके मासि पंचगंगं सुदुर्लभम् ॥२१॥

कार्त्तिक के समान न कोई धर्म है, न अर्थ है, न काम है, न मोक्ष है, न दान है। सब एक ही हैं इससे शैव, वैष्णव, शाक्त और गाणपत्य सब को कार्त्तिक स्नान करना चाहिए। काशी के समान कोई पुरी नहीं, प्रयाग के समान कोई तीर्थ नहीं, केशव के समान कोई देवता नहीं और कार्त्तिक के समान कोई महीना नहीं है। संग साथ से वा बल से, जाने वा बिना जाने भी जिसने कार्त्तिकस्नान किया है उस को यम का भय नहीं है। ब्रह्महत्यादिक पाप तभी तक गर्ज्जना करते हैं जब तक जीव ने कार्त्तिकस्नान नहीं किया। प्रयागादिक सब तीर्थ कार्त्तिक में पंचगंगा स्नान को आते हैं। एक तो मनुष्य का देह

दिन से भीष्म पंचक का व्रत करना। १०८ द्वादशाक्षर मंत्र जप करके भगवान को पंचामृत स्नान कराके 'ॐ विष्णवेनमः' इस मंत्र से १०८ आहुति देकर वृत करना, पृथ्वी पर सोना, भीष्म तर्पण करना। पहिले दिन तुलसी से चरण पूजन करके गोबर प्राशन करना, दूसरे दिन विल्व-पत्र से जाँघ की पूजा करके गोमूत्र प्राशन करना, तीसरे दिन भँगरैया से नाभि-पूजन करके दूध प्राशन करना, चौथे दिन कनैल से कंधा पूजन करके दही प्राशन करना, पाँचए दिन की विधि पूर्णमासी की विधि में देखो। इसी दिन मत्स्य भगवान को घड़े पर रख के स्वर्ण की मूर्ति बनाकर पूजा करना भी किसी का मत है। पूजा करके इस मंत्र से घड़ा दान कर देना।

जगद्योनिर्जगद्रूपो जगदादिरनादिमान्।
जगदाद्यो जगद्बीजो प्रीयतां मे जनार्दन॥

अथ कार्त्तिक शुद्धा १२—यह मन्वंतरादि है। इसमें दीपदान, प्रातः समय नीराजनादिक करना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा १४—इसका नाम चतुर्दशी है। यह परम पुण्य दिन है। इसमें स्नान-दानादिक करना। इसी चतुर्दशी में ब्रह्मकूर्चक वृत और पाषाण होते हैं। इसमें विश्वेश्वर का दर्शन और पूजन होता है। इसमें रात को जागरण करना और कार्त्तिक का उद्यापन करना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा १५—यह बड़ी पवित्र तिथि है। इसमें जो विशाखा के सूर्य्य और कृत्तिका के चंद्रमा हों तो पद्मक नामक बड़ा पवित्र योग हो। इसमें पुष्कर-स्नान वा श्री यमुना-स्नान वा श्रीगंगा-स्नान करके गोदान करना। इसमें जो भरणी, कृत्तिका वा रोहिणी नक्षत्र हों तो बड़ा फल है। इसी पूर्णिमा में मत्स्य जयन्ती मत्स्य भगवान का पूजन-करके दानादिक करना। इसी में साँझ को त्रिपुरोत्सव करना। साँझ को इस मंत्र से दीपदान करना—कीटाः पतंगाः मशकाश्च वृक्षाः जले स्थले ये विचरन्ति जीवाः। दृष्ट्वा प्रदीपं नव जन्म भागिनो भवन्तु नित्यं श्वपचाश्च विप्रा॥

इस पूर्णिमा को कार्त्तिकेय का दर्शन करना। यह मन्वादि भी है।

यह कार्त्तिक का मासोपवास व्रत अत्यंत पवित्र है। इस की विशेष विधि व्रतार्क में लिखी है। कार्त्तिक का माहात्म्य सूचन कर के अब कुछ उस के नियम लिखे जाते हैं जिस से विदित हो कि कार्त्तिक व्रत कब से करना और किस किस वस्तु का त्याग करना इत्यादि। कार्त्तिक स्नान आश्विन सुदी ११ एकादशी से प्रारंभ करना, इस के वाक्य ऊपर लिख आए हैं।

यथा स्कान्दे तथा ब्रह्मपुराणे च

वैष्णवं वैष्णवानां यद्व्रतंविष्णुपदप्रदं।
आश्विनस्यासितेपक्षे एकदश्यां द्विजोत्तमैः।
वैष्णवैः कल्पनापूर्वम्प्रारम्भोस्य विधीयते ॥२७॥

विष्णुपद का देने वाला यह वैष्णवों का परम वैष्णव व्रत कुँवार सुदी एकादशी से वैष्णव लोगों को कल्पनापूर्वक प्रारंभ करना चाहिए तथा कार्त्तिक में खाने पीने का संयम और ब्रह्मचर्य तो अवश्य ही करना चाहिए।

प्रमाणं नारदीये

अव्रतेन क्षतेद्यस्तु मासं दामोदरप्रियं।
तिर्य्यग्योनिमवाप्नोति नात्र कार्य्याविचारणा ॥२८॥

तथा काशीखंडे

ऊर्ज्जे यवान्नमश्नीयाद् देवान्नमथवा पुनः।
वृन्ताकं शूरणं चैव शूकशीर्वींश्च वर्जयेत् ॥२९॥

स्कान्दे

कार्त्तिके वर्ज्जयेत्तद्वद्विदलं बहुबीजकं।
माष मुद्‌ग मसूराँश्च चणकाँश्च कुलत्थकान् ॥३०॥

कार्त्तिक का महीना जो लोग बिना व्रत के बिताते हैं वे पशु योनि पाते हैं। कार्त्तिक में यव और पवित्र हविष्यान्न खाना और भंटा, सूरन और सेम इत्यादि नहीं खाना। कार्त्तिक में द्विदल, बहुत बीया-वाली वस्तु, उड़द, मोट, मसुरी, चना और कुलथी इत्यादि खाना।

इस मंत्र से दीपदान करना। यह पूर्णिमा परम फलदात्री है। इसमें कुछ सुकृत हो सो करना। भीष्म पंचक का व्रत इसी दिन समाप्त करके कालपुरुष का दान करना, होम करना। यह तिथि श्री राधिकाजी को बहुत प्यारी है, इससे वैष्णवों को इस तिथि में श्री राधासहस्रनाम-पाठ, श्री राधिका-मंत्रजप और श्री राधिका-पूजन करना। इसी पूर्णिमा को गोलोक में श्री ठाकुर जी ने श्री राधिकाजी का पूजन किया था और उस समय श्री महादेव जी ने ऐसा गान किया कि श्रीराधिकाजी सहित भगवान द्रव हो गए। इससे इसी पौर्णमासी को गंगाजी का जन्म है, अतएव इस दिन गंगा स्नान का बड़ा फल है और तुलसी का भी जन्म दिन यही है, यह देवी पुराण में लिखा है, इससे इस तिथि में तुलसी पूजन और भगवान को तुलसी समर्पण की मुख्यता है। विशेष कहाँ तक कहें, यह कार्तिक ऐसा पवित्र महीना है, इसमें स्नान, दान, जप, तप, व्रत, जागरण, दीपदान इत्यादि सब कर्म अक्षय होते हैं।

दोहा

प्राणनाथ-पद-रज सुमिरि धारि हृदय आनन्द।
परम प्रेमनिधि रसिक बर बिरची श्री हरिचन्द।
प्राणपियारे प्रेमनिधि प्रेमिन-जीवन-प्राण।
तिनके पद अरपन कियो यह कारतीक विधान॥

इति श्री

नोन और समुद्र का नोन, दही, घी, बिना घी निकला दूध, कटहर, आम, हर्रे, केला, हारफारेवड़ी, आँवला, चीनी मिश्री (गुड़बिना), पीपल, जीरा, नारंगी, इमली, तेल में न किया होय ऐसे अन्न को मुनि लोग हविष्य कहते हैं। हविष्य में जव मुख्य है वा नहीं तो धान भी ग्राह्य है परंतु उड़द, कोदो, सपेद गेहूँ तो कुछ अन्न न मिलता होय तौ भी नहीं लेना। धान, साठी का चावल, मूँग, कलाई, जल, दूध, साँवाँ, तिन्नी, लाल गेहूँ ये व्रत में लेना। भोजन करने की वस्तु लिख के अब न खाने वाली वस्तु लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

सर्वथैव न भोक्तव्यमामिषान्नं तु कार्त्तिके।
तत्सर्वदा वर्जनीयं कार्त्तिके तु विशेषतः ॥३७॥
दग्धमन्नं द्विपक्वं च मसूरान्नं सवल्कलं।
उद्दालकाः पर्युषितमन्नमामिष उच्यते ॥ ३८ ॥
वृन्ताकानि पटोलानि तुम्बिका च कलिंगकं।
विम्बीफलानि त्रपुसं फलशाकेषु चामिषं ॥ ३६ ॥
दोरका तुलसी चिल्ली छत्राकं पोत्र पत्रकं।
चक्रवर्त्ती राजगिरिः पत्रशाकेषु चामिषं ॥ ४० ॥
गजरं रक्तमूलं च पलांडुलशुनं तथा।
सर्वदैवामिषाणि स्युः कार्तिके स्मरणं त्यजेत् ॥ ४१ ॥
परमांसैः स्वमांसानि यः पुष्णाति नराधमः।
परजन्मनि तस्यैव विष्टायां जायते कृमिः ॥ ४२ ॥
वालान्मृगान् पक्षिणोवा तथा वालफलानि च।
घातयन्ति दुरात्मानो जायन्ते मृतबालकाः ॥ ४२ ॥
सर्वाण्येकत्रदानानि सर्वतीर्थान्यथैकतः।
सर्वव्रतान्येकतश्च ह्यहिंसाकलया समा ॥ ४४ ॥
एवं विचार्य्य भुंजीत स्वान्नं विष्णुनिवेदितम्।

कार्त्तिक में मांस और उस के समान जितनी वस्तु हैं वह सब सर्वथा न खाना। और यह मांस तो सर्वदा वर्जनीय है परंतु कार्त्तिक में विशेष करके अर्थात् मांस इत्यादिक बुरी वस्तु कभी नहीं खाना! जल अन्न,

कार्तिक-कर्म-विधि

सं० १६२६

देखना कार्त्तिक में विशेष करके वर्जित है और अब कार्त्तिक में बहुत स्त्रियों के नहाने जाने से कितने ही पुरुष भी सवेरा भया कि कार्त्तिक नहाने के बहाने उन का दर्शन करने जाया करते हैं उन लोगों को चाहिए कि इस वाक्य को कान खोल के सुनें।

कार्त्तिक के व्रत और उस के नेम लिख के अब कार्त्तिक स्नान की विधि और मंत्रादिक लिखते हैं जिस का प्रमाण और विशेष विधि पुराणसारोद्धार, पुराणसमुच्चय, निर्णयसिंधु, स्कंदपुराणांतर्गतकार्त्तिक-माहात्म्य, पद्मपुराणांतर्गत कार्त्तिकमाहात्म्य, ब्रह्मपुराण आदिक ग्रंथों में लिखा है। विशेष करके इस का विस्तारपूर्वक विधान सनत्कुमार-संहिता के कार्त्तिक माहात्म्य में है, जिस में से आवश्यक कर्म यहाँ पर लिखे जाते हैं। प्रातः काल उठ के धर्म चिंतवन करके भगवान का ध्यान करना, जैसा सनत्कुमार-संहिता में ध्यान लिखा है।

प्रातःस्मरामि भवभीतिमहार्तिशान्त्यै
नारायणं गरुडवाहनमब्जनाभं।
ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं
चक्रायुधं तरुणवारिजपत्रनेत्रम्॥ ४७॥
प्रातर्नमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना
पादारविंदयुगलं परमस्य पुंसः।
नारायणस्य नरकार्णवतारकस्य
पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य॥ ४८॥
प्रातर्भजामि भजतामभयंकरं तं
प्राक् सर्व्वजन्मकृतपापभयापहत्यै।
योग्राहवक्त्रपतितांघ्रि गजेंद्रघोर
शोकान्तिनाशनकरोधृतशंखचक्रः॥ ४९॥
श्लोकत्रयमिदम्पुण्यं प्रातः प्रातः पठेन्नरः।
लोकत्रयगुरुस्तस्मै दद्यादात्मपदं हरिः॥ ५०॥

और भी जो कुछ हो सके भगवान का स्मरण कर के अपने गुरु का ध्यान करना।
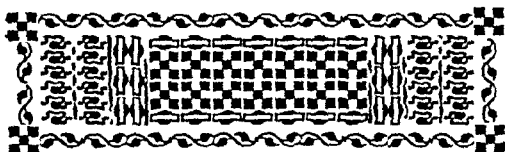
श्रीराधाकृष्णाय नमः

श्रीराधादामोदराय नमः

कार्त्तिक-कर्म-विधि

—:o:—

जै जै श्री नँदनंद श्रीराधारसबस रसिक।
दामोदर ब्रजचंद गोपीनाथ अनाथगति ॥ १ ॥
रासरसिक राधारमण मनमोहन घनश्याम।
कोटि कोटि मनमथ मथन सुंदर सब सुखधाम ॥ २ ॥
बदौं कातिक मास दामोदर प्रिय पुण्यप्रद।
नासत यम की त्रास हिय हुलास कर अतिसुखद ॥ ३ ॥

श्लोकः

श्रीकृष्णं करुणाकरं कविवरं कान्तापतिं कामदं
गोपीनां नयनोत्सवं गुणनिधिं गो-गोपवृन्दप्रियं।
राधाराधितविग्रहं रतिरतं रामानुजं रासगं
मानार्थं मथुराधिपं मनहरं मान्यं मनोज्ञं भजे ॥१॥

इस संसार में जन्म लेके मनुष्यों को भगवत्स्मरण और स्नान-दानादिक करना यही मुख्य धर्म है, क्योंकि बड़े बड़े पर्वों में स्नान-पूजा-व्रत-दानादिक करने से पाप नाश होते हैं और मुक्ति मिलती है और

एकालिंगे गुदे सप्त दश वामकरे तथा ।
उभयोः सप्त दातव्याः पादयोर्मृत्तिकाद्वयम् ॥५४॥

लिंग में एक, गुदा में सात, बायें हाथ में दश, फिर दोनों हाथ में सात, पैर में दो दो बेर मिट्टी लगा के धोना । ब्रह्मचारी को इसकी दूनी, वानप्रस्थ को तिगुनी और यति को चौगुनी यह क्रम है । फिर

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे ।
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम् ॥५५॥

इस मंत्र से शुद्ध मृत्तिका से हाथ पैर धो के फिर दतुवन करना ।

यथा गार्ग्याम्

कंटकी चीर कार्पास निर्गुंडीब्रह्मवृत्तिका ।
वटै रंड विगंधाढ्यान्न कुर्य्याद्दन्तधावनम् ॥ ५६ ॥

बबूल, बैर, कपास, निर्गुंडी, पलाश, बड़, रेंड़, दुर्गंध के वृक्ष इसकी लकड़ी से दतुवन नहीं करना तथा दतुवन करनेके समय यह मंत्र पढ़ना ।

तत्रैव

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशु वसूनि च ।
ब्रह्मप्रज्ञां च मेधां च त्वन्नो देहि वनस्पते ॥ ५७ ॥

फिर कुल्ला करना । उपवास, नवमी, छठ, श्राद्ध के दिन, अमावस, आदित्यवार, इतने दिन दतुवन नहीं करना । मिट्टी वा और किसी वस्तु से मुख शुद्ध कर लेना और बारह कुल्ला करने से मुख की शुद्धि हो जाती है । फिर श्रीगंगा स्नान करने जाना । उस समय चित्त एकाग्र करके जाना, मुख में भगवान का यश गावते जाना । लोग श्रीगंगा स्नान करने जाते हैं उन को पैर पैर पर अश्वमेध और वाजपेययज्ञ का फल होता है ।

यदुक्तं श्रीमद्भागवते पंचमस्कन्धे

यस्यां स्नानार्थं चागच्छतःपुंसःपदेपदेऽश्वमेधराजसूय
फलंदुर्लभमिति ॥ ५८ ॥

ऐसे श्रीगंगा जी के स्नान को मन अति शुद्ध करके जाना, सो जाय के पहले श्रीगंगा जी के तट पर दीपदान करना और भी देवालय तुलसीवृक्ष के निकट दीपदान करना ।

कृते धर्म्मनदं नाम त्रेतायां धूतपापकं ।
द्वापरे बिन्दुतीर्थं च कलौ पंचनदं स्मृतम् ॥ ८ ॥
अव्रतः कार्त्तिको येषां गतो मूढधियामिह ।
न तेषाम्पुण्यलेशोपि दुष्टानां शूकरात्मनां ॥ ६ ॥

माघमहीने में प्रयाग नहाने का जो फल है वह कार्त्तिक में पंचगंगा में एक दिन स्नान से मिलता है । सत्ययुग में धर्मनद, त्रेता में धूतपापा, द्वापर में बिंदुसर, कलियुग में पंचगंगातीर्थ ही मुख्य है । जो लोग कार्त्तिक में स्नान-व्रतादिक नहीं करते वे मूढ़बुद्धि हैं, उन्हें किसी पुण्य का फल नहीं होता ।

यथा पद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये सत्यभामां प्रति श्रीकृष्ण वाक्यम्

कार्त्तिके मासि ये नित्यं तुलासंस्थे दिवाकरे ।
प्रातः स्नास्यन्ति ते मुक्ताः महापातकिनोपि वा ॥१०॥
स्नानं जागरणं दीपं तुलसीवनपालनं ।
कार्त्तिके ये प्रकुर्वन्ति ते नरा विष्णुमूर्त्तयः ॥ ११ ॥
कार्त्तिकव्रातिनां पुंसां विष्णुवाक्यप्रणोदिताः ।
रक्षां कुर्वन्ति शक्राद्याः राजानं किंकरा यथा ॥ १२ ॥
विष्णुप्रियं सकलकल्मपनाशनं यत्
सर्वत्र धर्म्मधनधान्यविवृद्धिकारि ।
ऊर्जव्रतं सनियमं कुरुते मनुष्यः
किं तस्य तीर्थपरिशीलनसेवया च ॥ १३ ॥
ते धन्यास्ते सदापूज्यास्तेषां च कुलमेव च ।
विष्णुभक्तिपरा ये स्युः कार्त्तिकव्रतकादिभिः ॥ १४ ॥

तुला के सूर्य्य में कार्त्तिक में जो लोग प्रातः स्नान करते हैं वे महा-पातकी हों तो भी मुक्त होते हैं । स्नान, जागरण, दीपदान, तुलसीपूजन इत्यादिक जो लोग करते हैं वे सब विष्णु के स्वरूप हैं । कार्त्तिक के व्रती लोगों की इंद्रादिक देवता ऐसी रक्षा करते हैं जैसे राजा की सेवक रक्षा करै क्योंकि उन को श्रीविष्णुभगवान की यही आज्ञा है । विष्णु का प्यारा, कल्मश नाश करने वाला, और सब धर्म धान्य धन का

केवल तुलसी की मट्टी लगाना। फिर श्रीगंगा जी की मृत्तिका का तिलक (अश्वक्रांते रथक्रांते) इस मंत्र से करके हाथ जोड़ के दंडवत् कर के प्रार्थना करना।

किरणा धूतपापा च पुण्यतोया सरस्वती।
गंगा च यमुना चैव पंचनद्यः पुनन्तु माम्॥ ६६॥
अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः॥६७॥
विष्णोराज्ञामनुप्राप्य कार्त्तिकव्रतकारिणः।
रक्षन्ति देवास्ते सर्व्वे मां पुनन्तु सवासवाः॥६८॥
वेदमन्त्राः सबीजाश्च सरहस्यामखान्विताः।
कश्यपाद्याश्च मुनयो मां पुनन्तु सदैवते॥६०॥
नमस्ते देवदेवेश शंखचक्रगदाधर।
देव देहि ममानुज्ञां युष्मत्तनार्थनिषेवणे॥७०॥
नन्दिनीत्येव ते नाम देवेषु नलिनीतिच।
दक्षा पृथ्वी च विहगा विश्वनाथा शिवा सती॥७१॥
विद्याधरी सुप्रसन्ना तथा लोकप्रसादिनी।
क्षेमावर्ता जान्हवी च शान्ता शान्तिप्रदायिनी॥७२॥
एतानि पुण्यनामानि स्नानकाले प्रकीर्तयेत्।
भवेत्सन्निहिता तत्र गंगा त्रिपथगामिनी॥७३॥

फिर हाथ जोड़ के यह मंत्र पढ़िए।

स्वर्गारोहणसोपानं त्वदीयमुदकं शिवे।
अतः स्पृशामि पादाभ्यामपराधं क्षमस्व मे॥७४॥

ऐसे प्रार्थना करके मौन होय के स्नान करना, भगवान का नाम लेना। श्री गंगा जी के निकट कुल्ला नहीं करना। ऐसे स्नान करके सीढ़ी पर एक अर्घ्य देना।

मंत्र।

यन्मया दूषितं तोयं शारीरमलसम्भवैः।
तद्दोषपरिहारार्थं यक्ष्माणं तर्पयाम्यहम्॥७५॥

फिर शुद्ध हो वस्त्र पहिन के संध्यादिक करना। स्कंद पुराण में लिखा

दुर्लभ है दूसरे काशी पुरी दुर्लभ है तिस में भी कार्त्तिक महीने में पंचगंगा तीर्थ अति दुर्लभ है ।

और भी इस का महिमा बहुत लिखा है ।

यथा पद्मपुराणे स्वर्गखंडे तृतीयाध्याये
तथा नारदीये रुक्मांगदोपाख्याने

प्रातः स्नानं नरो यो वै कार्त्तिके श्रीहरप्रिये ।
करोति सर्व्वतीर्थेषु यत् स्नात्वा तत्फलं लभेत् ॥२२॥

सब तीर्थों में स्नान करने का जो फल है वह कार्त्तिक में प्रातः स्नान से मिलता है ।

तथा तत्रैव विंशतितमेध्याये

श्रेष्ठं विष्णुव्रतं विप्र तत्तुल्या न शतं मखाः ।
कृत्वा व्रत व्रजेत् स्वर्गं वैकुंठं कार्त्तिकव्रती ॥२३॥

श्रीविष्णु भगवान् का व्रत सब व्रतों में उत्तम है, सौ यज्ञ भी उस के समान नहीं हैं, जो लोग इस कार्त्तिक का व्रत करते हैं वे व्रती लोग वैकुंठ नामक स्वर्ग में जाते हैं ।

तथा वायुपुराणे ।

यदीच्छेद्विपुलान् भोगान् चन्द्रसूर्य्यग्रहोपमान् ।
कार्त्तिकं सकलम्प्राप्य प्रातःस्नायी भवेन्नरः ॥

कार्त्तिक का माहात्म्य सब शास्त्रों में बहुत कहा है, कहाँ तक लिखें ।

इस कार्त्तिक में एक व्रत और भी होता है, जिसका नाम मासोपवास है ।

यथा हेमाद्रौ विष्णुरहस्ये

व्रतमेतत्तु गृह्णीयाद्यावत्त्रिंशद्दिनानि तु ।
आश्विनस्यासितेपक्षे एकादश्यामुपोषितः ॥२४॥
वासुदेवं समुद्दिश्य कार्त्तिके सकले नरः ।
मासं चोपवसेद्यस्तु स मुक्तिफलभाग् भवेत् ॥२५॥
कृत्वा मासोपवासं च विचार्य्य विधिवन्मुने ।
कुलानां शतमुद्धृत्य विष्णुलोकं व्रजेन्नरः ॥ २६ ॥

एवं सम्प्रार्थ्य विधिवन्मालां कृष्णगलेऽर्पितां।
धारयेत् कार्त्तिके यो वै स गच्छेत् वैष्णवम्पदम् ॥ ८१ ॥

निर्णयसिंधु ग्रंथ में माला-धारण लिखते हैं। वहाँ स्कन्द-पुराण का यह वचन है कि तुलसी के काठ की माला भगवान की प्रसादी जो लोग भक्ति से पहनते हैं उनके एक पाप भी नहीं बचते। महापापों के दूर करनेवाली सब कामों के देनेवाली तुलसी की माला वा आँवले की माला को कभी भी नहीं त्यागना। विष्णुधर्म्म में। कलियुग में आँवले की माला से जितना रोआँ छू जाता है उतने हजार बरस उस मनुष्य को स्वर्गवास मिलता है। ऊपर जो मंत्र लिखा है उस से जो विधिपूर्वक माला सदा धारण करते हैं वा श्रीकृष्ण की प्रसादी माला जो लोग कार्त्तिक में धारण करते हैं उनको वैष्णव पद मिलता है।

इस रीति से तिलक माला धारण करके क्या करना चाहिये, सो लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायाम्

ततः सन्ध्यामुपासीत स्वसूत्रोक्तेन कर्मणा।
ततः कार्य्यो जपो देव्या यावत्सूर्य्योदयो भवेत् ॥ ८३ ॥

फिर अपने सूत्र के अनुसार संध्या करना, फिर जब तक सूर्य्योदय न होय तब तक गायत्री देवी का जप करना।

निर्णयसिंधु बनाने वाले ने यह निर्णय किया है कि कार्त्तिक के महीने में बिना अरुणोदय भी संध्या करने का दोष नहीं है।

मया कृतं मूत्रपुरीषशौचं स्नानंच गंडूषणमेहनंच।
वस्त्रस्यसंचालनमेवदोषान् क्षमस्व गंगे मम सुप्रसीद ॥ ८४ ॥

श्री गंगा जी की प्रार्थना इस मन्त्र से करना। अब सूर्य्योदय पीछे जो करना चाहिए वह लिखते हैं।

तत्रैव

विष्णोः सहस्रनामाद्यं सन्ध्यान्ते च पठेन्नरः।
देवालये समागत्य पुनः पूजनमारभेत् ॥ ८५ ॥

तथा नारदीये स्कान्दे च

कार्त्तिके वर्जयेत्तैलं कार्त्तिके वर्जयेन्मधु ।
कार्त्तिके वर्जयेत्कांस्यं कार्त्तिके शुक्लसन्धितं ॥३१॥

कार्त्तिक में तेल, मधु, कांस्यपात्र में भोजन, बासी अन्न, और खारे शाक ये सब वर्जित हैं ।

कार्त्तिक के व्रत में ब्रह्मचर्य्य और हविष्यभोजन ही मुख्य है जैसा कि ऊपर लिख आए हैं "जपन्हविष्यभुक् शान्तः" । अब हविष्य में कौन कौन वस्तु है सो लिखते हैं और कार्त्तिक में किस किस वस्तु का त्याग है वह भी लिखते हैं ।

तथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

तथा पुराणसारोद्धारे च पुराणसमुच्चयेपि भविष्योक्ते
हैमंतिकं सिता स्विन्नं धान्या मुद्गास्तिला यवा ॥
कलाय कंगु नीवारा वास्तुकं हिलमोचिकां ।
षष्टिका कालशाकं च मूलकं केमुकोत्तरं ॥३२॥
कंदं सैंधव सामुद्रौ लवणौ दधि सर्पिषी ।
पयानुद्धृतसारं च पनसाम्रौ हरीतकी ॥३३॥
कदली लवली धात्री फलान्यगुडमैक्षवं ।
पिप्पली जीरकं चैवं नागरंगकतिन्त्रणी ।
अतैलपक्वं मुनयो हविष्यान्नम्प्रचक्षते ॥३४॥

तथा हेमाद्रौ छान्दोग्यपरिशिष्टेकात्यायनः

हविष्येषु यवाः मुख्यास्तदनु व्रीहयः स्मृताः ।
माषकोद्रवगौरादीन् सर्वाभावेपि वर्जयेत् ॥३५॥

तत्रैव अग्निपुराणे

व्रीहि षष्ठिक मुद्गाश्च कलायाः सलिलम्पयः ।
श्यामाकाश्चैव नीवारा गोधूमाद्यावृते हिताः ॥३६॥

हविष्य में इतनी वस्तु लेना । जाड़े का सफेद चावल, धान, मूँग, तिल, यव, मटर, कँगुनी, तिन्नी का चावल, बथुआ का शाक, हेला का शाक, कालिका का शाक, केमुका का शाक, साठी का चावल, सेंधा

ऊपर लिखे हुए मंत्र से तुलसी तोड़ कर श्रीभगवान की पूजा करने का अकथनीय फल है। अब पूजा करने की विधि लिखते हैं। वह पूजा दो प्रकार की है—जिसमें नियम नहीं और परमभावात्मिका उसका नाम सेवा और जिसमें नियम हो, चाहै नैमित्तिक होय, उसका नाम पूजा। इसके भेद और प्रकार आदि पुराण और गर्गसंहिता में और भी संप्रदाय के ग्रंथों में विस्तारपूर्वक लिखे हैं। अब हम इस स्थान पर पूजा करने की विधि लिखते हैं। श्रीभगवान की पूजा में चित्त एकाग्र रखना, पहिले मंदिर में जा करके प्रभु को जगाना, फिर षोड़शोपचार पूजा की सामग्री ले के पूजा आरंभ करना तहाँ पहिले आवाहन करना।

मंत्र

गोलोकधामाधिपते रमापते गोविन्ददामोदर दीनवत्सल ॥
राधापते माधव सात्वतां पते सिंहासनेस्मिन्मम सम्मुखोभव ॥६३॥

अथ आसनम्

श्रीपद्मरागस्फुरदूर्ध्वपृष्ठ महार्हवैदूर्य्यविचित्रपदाब्जं।
वैकुंठवैकुंठपते गृहाण पीतं तडिद्भ्राजकवस्त्रयुक्तम् ॥ ६४ ॥

अथ पाद्यम्

परिस्थितं निर्मलमेकपात्रे समागतं विष्णुसरोवराद्धि।
योगेश देवेश जगन्निवास गृहाण पाद्यं प्रणमामि पादौ ॥ ६५ ॥

अथ अर्घ्यम्

नमस्ते देवदेवेश नमस्ते धरणीधर।
नमस्ते कमलाकान्त अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यताम् ॥ ६६ ॥

अथाचमनम्

कर्पूरवासितं तोयं मन्दाकिन्याःसमाहृतं।
आचम्यतां जगन्नाथ मया दत्तं हि भक्तितः ॥ ६७ ॥

अथ स्नानम्

काश्मीरपाटीरविमिश्रितेन स्वमद्रिकोशीरवताजलेन।
स्नानं कुरु त्वं यदुनाथ देव गोविन्दगोपालक तीर्थपाद ॥ ६८ ॥

दो बेर किया हुआ अन्न, मसूर, कुरथी, बासी अन्न ये सब भी मांस कहलाते हैं। भंटा, परवल, तुम्बी फल, तरबूज, कुंदुरू और ककड़ी, ये सब फल के शाक में मांस के तुल्य हैं। तुलसी, छाता शाक, पोई, चकोंड़, राजगीरा ये सब पत्तो शाक में आमिष के तुल्य हैं। गाजर, लाल मूली, लहसुन, गोभी, प्याज इत्यादि मांसवत् सर्वदा ही त्याग करना और कार्त्तिक में तो इन का स्मरण भी नहीं करना। दूसरे जीवों के मांस से जो पापी अपने मांस को पुष्ट करता है अर्थात् जो लोग बल पुष्टता वा स्वाद के लोभ से किसी पशु पक्षी का मांस खाते हैं वे मनुष्याधम दूसरे जन्म में उसी जीव के (जिसका मांस खाया है) विष्टा के कीड़े होते हैं। छोटे पशुओं को, छोटे पक्षियों को जो मारते हैं, जो कच्चे फलों को तोड़ते हैं, वे लोग दूसरे जन्म में मरे बालक होते हैं। सब व्रत और सब दान और सब तीर्थ का एकत्र फल और अहिंसा का फल बराबर है ऐसा विचार के सुंदर प्रसादी अन्न ही भोजन करना, मांसादिक सर्वथा नहीं खाना।

तथा पाद्मे कार्त्तिकमाहात्म्ये

परान्नं परशय्यां च परवादं परांगनां।
सदा च वर्ज्जयेत्प्राज्ञो कार्त्तिके तु विशेषतः॥ ४५॥
वेद देव द्विजानां च गुरु गो व्रतिनान्तथा।
स्वराजोपहृतां निन्दां वर्ज्जयेत्कार्त्तिके व्रती॥ ४६॥

दूसरों का अन्न, दूसरों की सेज, दूसरों की निंदा, दूसरों की स्त्री इनको सदा बचाना चाहिए, कार्त्तिक में विशेष करके। वेद देव, तीनों वर्ण अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, गुरू, गऊ, व्रत करनेवाले जिन का राज्य अर्थात् सम्पदा नाश हो गई है इन लोगों की निंदा नहीं करना। इस का भावार्थ यह है कि कार्त्तिक में जहाँ तक बन सके दूसरों का अन्न नहीं खाना और दूसरों की शैया से बचना अर्थात् दूसरों की स्त्री से बचना, दूसरों की निंदा नहीं करना। अब इस काल में लोग लोगों की निंदा बहुत करते हैं और दूसरों की निंदा करना महापाप है क्योंकि जो लोग दूसरों की निंदा करते हैं वे लोग जिन की निंदा करते हैं उन का सब पाप आप ले लेते हैं तथा दूसरों की स्त्री को कुदृष्टि से

अथ जलम्

गंगोत्तरीवेगबलात्समुद्धितं सुवर्णपात्रेण हिमांशुशीतलं।
सुनिर्मलाभं ह्यमृतोपमं जलं गृहाण राधावर दीनवत्सल ॥ १०९ ॥

अथ आचमनम्

कंकोलजातीफलपुष्पवासितं परं गृहाणाचमनं दयानिधे।
राधापते श्रीगिरिजापते प्रभो श्रियःपते सर्व्वापते च भूपते ॥ ११० ॥

अथ ताम्बूलम्

जातीफलैलाखुरपुष्पयुक्तं यांविविपूगीफलपत्रवृन्दं।
मुक्ताफलाखादि रुगोचनाढ्यं गृहाण ताम्बूलमिदंनृपेश ॥ १११ ॥

अथ दक्षिणा

नाकपालवसुपालमौलिभिः वन्दितांघ्रियुगल प्रभो हरे।
दक्षिणां परिगृहाण माधवयज्ञरूपप्रभु दक्षिणापते ॥ ११२ ॥

अथ प्रदक्षिणा

यानिकानिच पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्व्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदेपदे ॥ ११३ ॥

अथ नीराजनम्

प्रस्फुरत्परमदीप्तमंगलं गोघृताक्तनवपंचवर्त्तिकं।
आर्त्तिकं परिगृहाण चार्त्तिहन्पुण्यकीर्तिविशदीकृता वने ॥ ११४ ॥

अथ प्रार्थना

हरे मत्समः पातकी नास्ति भूमौ
तथा त्वत्समो नास्ति पापापहारी॥
इति त्वां च मत्वा जगन्नाथ देव
यथेच्छा भवेत्ते तथा मां कुरु त्वम् ॥ ११५ ॥

अथ नमस्कारः

नमोस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्रनाम्नेपुरुषायशाश्वतेसहस्रकोटीयुगधारिणेनमः ॥ ११६ ॥

इस प्रकार से भगवान की पूजा करके तब तुलसी पूजन करे। तुलसी पूजन की विधि लिखते हैं।

यथा गार्ग्यां

ज्ञानमुद्रापरं ध्यायेत् श्रीगुरुं स्वस्तिकामनं ।
ध्यात्वा कृष्णं परं ध्यायेत् भक्त एकाग्रमानसः ॥ ५१ ॥

किशोरं कोमलं श्यामं वंशीवेत्रविभूषितं ।
एवं कृत्वा हरेर्ध्यानं पुनर्गच्छेद्बहिस्थलम् ॥ ५२ ॥

पलथी मारे बैठे ज्ञानमुद्रा से उपदेश कर रहे हैं ऐसा अपने श्रीगुरु का ध्यान कर के फिर श्रीकृष्णचंद्र का ध्यान करना। कोमल अंग किशोर स्वरूप श्यामसुंदर वंशी छड़ी धारण किए ऐसे श्री भगवान् का ध्यान करके फिर महादेव इत्यादिक देवता, गंगादिक नदी, नारदादि ऋषि, पृथ्वी, सप्तसमुद्र, नवग्रह इत्यादिक का ध्यान करके, वैष्णवन का ध्यान करके अपना हाथ देखना वा दूब, ऐना, सोना, गऊ इत्यादिक मंगल-वस्तुओं को देख लेना, जिस में दुष्ट मुख दर्शन का दोष नाश हो जाय। फिर यह मंत्र पढ़ के पृथ्वी पर पैर रखना—

समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमंडिते ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥ ५३ ॥

फिर मंदिर में जाकर के श्रीभगवान् को दंडवत करना। फिर नगर के बाहर शौच कर के पवित्र होना। नदी के, तालाब के वा कोई जलाशय के किनारे मल त्याग नहीं करना, इसका महादोष है; और भी अन्न के खेतखलिहान में, देवालय में, राजमार्ग में मलत्याग नहीं करना, इस का माघ-माहात्म्य में बड़ा पाप लिखा है और जहाँ मल त्याग करना वहाँ तृण बिछाय के और मुख के आगे वस्त्र को आड़ करके सूर्य और चंद्रमा की ओर मुख फेर कर के मल त्याग करना। ऐसे मल त्याग करके फिर मृत्तिकास्पर्श करके पवित्र होना, जिसकी विधि सब स्मृतियों और पुराणों में लिखी है। "एका लिंगे गुदे पंच इत्यादि।" यह वाक्य पृथक् पृथक् पुस्तकों में अनेक चाल से मिलता है और गिनती में परस्पर विरोध पड़ता है, परंतु यहाँ हम वही वाक्य लिखते हैं जो सनत्कुमारसंहिता के कार्त्तिक-माहात्म्य में है, क्योंकि यहाँ प्रसंग कार्त्तिक का है। यथा,

किरीटहारकेयूरकुण्डलादिविभूषितां ।
धवलांशुकसंयुक्तां पद्मासननिषेविताम् ॥ १२३ ॥

अथ आवाहनम्

देवि त्रैलोक्यजननि सर्वलोकैकपावनि ।
आगच्छ भगवत्यत्र प्रसीद श्रीहरिप्रिये ॥ १२४ ॥

अथासनम्

सर्वलोकमये देवि सर्वदा विष्णुवल्लभे ।
देवि स्वर्णमयं दिव्यं गृहाणासनमव्ययम् ॥१२५॥

अथार्घ्यम्

सर्वदेवदलाकारे सर्वदेवनमस्कृते ।
दत्तं पाद्यं गृहाणेदं तुलसि त्वं प्रसीद मे ॥१२६॥

अथाचमनीयम्

सर्वलोकस्य रक्षार्थं सदा कल्याणकारिणी ।
गृहाण तुलसि प्रीत्या इदमाचमनीयकम् ॥१२७॥

अथ स्नानम्

गंगादिभ्यो नदीभ्यश्च समानीतमिदं जलं ।
स्नानार्थं तुलसीदेवि प्रीत्या तत् प्रतिगृह्यताम् ॥१२८॥

अथ वस्त्रम्

क्षीरोदमथनोद्भूते लक्ष्मी चंद्रसहोदरे ।
गृह्यतां परिधानार्थमिदं क्षौमाम्बरं शुभे ॥१२९॥

अथ गन्धम्

श्रीगंधकुंकुमं दिव्यं कर्प्पूरागरुसंयुतं ।
कल्पितं ते महादेवि प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम् ॥१३०॥

अथ पुष्पम्

नीलोत्पलसुकल्हारमालत्यादीनि शोभने ।
पद्मादि गंधवत्शीते पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् ॥१३१॥

अथ धूपम्

धूपं गृहाण देवेशि मनोहरि सुमंगलं ।
आज्यमिश्रंतु तुलसि भक्त्या भीष्टदायिनि ॥१३२॥

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

देवालये नदीतीरे राजमार्गे विशेषतः।
निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्रीः सर्व्वतोमुखी ॥ ५९ ॥

फिर श्रीगंगा जी के निकट आय के बाल झाड़ना। प्रमाण स्मृति में—

अशोधितेषु केशेषु स्नानं यः कुरुते नरः।
सम्यक् पुण्यं न लभते तस्मात्केशांश्च शोधयेत् ॥ ६० ॥

फिर संकल्प करै "कार्त्तिकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुक वासरे अमुकगोत्रोत्पन्नो अमुकशर्म्माहं अचिन्त्यफल प्राप्त्यर्थं श्रीगंगास्नान-महंकरिष्ये।"

ऐसे संकल्प करके फिर प्रतिज्ञा करना इस मंत्र से—

कार्त्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातः स्नानं जनार्द्दन।
प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह ॥ ६१ ॥

यह प्रतिज्ञा का मंत्र पढ़ना (यह मंत्र सब कार्त्तिकमाहात्म्य में लिखा है) फिर अर्घ्य इन मंत्रों से दीजिए।

यथा स्कान्दे पाद्मे ब्राह्मे सनत्कुमारसंहितायां च

नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने।
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश गृहाणार्घ्यं नमोस्तुते ॥
नित्ये नैमित्तिके कृत्ये कार्त्तिके पापशोधने।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे ॥ ६२ ॥
व्रतिनः कार्त्तिके मासि स्नातस्य विधिवन्मम।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं दनुजेन्द्रनिषूदन ॥ ६३ ॥
दामोदर जगन्नाथ शंखचक्रगदाधर।
राधाकान्त गृहाणार्घ्यं प्रसीद परमेश्वर ॥ ६४ ॥
द्रवरूपेण देवेश वर्त्तते गांगवारिषु।
इदमर्घ्यं गृहाण त्वं स्वीकृत्य करुणां कुरु ॥ ६५ ॥

ऐसे अर्घ्य प्रदान करके फिर बाल में आँवला तिल और तुलसी की मट्टी लगाना और जिस जिस दिन आँवला तिल न लगाना हो उस दिन

प्रत्यासत्तिविधायिनी भगवतः कृष्णस्य संरोपिता ।
न्यस्ता तच्चरणे विमुक्तिफलदा तस्यै तुलस्यै नमः ॥ १४३ ॥

अथ प्रार्थना

प्रसीद मयि देवेशि कृपया परया सदा ।
अभीष्टफलसिद्ध्यर्थं कुरु मे माधवप्रियं ॥ १४४ ॥

इस रीति से नित्य तुलसी पूजन करना और तुलसी के पत्र से विष्णु का पूजन करना ।

यथा गारुडे

गवामयुतदानेन यत्फलंलभते स्वग ।
तुलसीपत्रमेकेन तत्फलं कार्त्तिके स्मृतम् ॥ १४५ ॥

अयुत गोदान करने का जो फल है वह कार्त्तिक में एक तुलसी पत्र चढ़ाने से मिलता है, यह आप श्रीमुख से आज्ञा करते हैं गरुड़जी से ।

इस भाँति तुलसी पूजन कर के फिर आँवला की पूजा करना तथा कार्त्तिक में आँवला की माला भी पहिरना ।

यथा स्कान्दे कार्त्तिक माहात्म्ये पुराणसारोद्धारे च ।

सर्व्वदेवमयी धात्री वासुदेवमनःप्रिया ।
आरोपणीया सेव्या च पूजनीया सदा बुधैः ॥ १४६ ॥
धात्रीफलविलिप्ताङ्गो धात्रीफलविभूषितः ।
धात्रीफलकृताहारो नरो नारायणो भवेत् ॥ ४७ ॥
धात्रीछायां समाश्रित्य कुर्य्याच्छ्राद्धन्तयो मुने ।
मुक्तिं प्रयान्ति पितरः प्रसादात्तस्य वै हरेः ॥ १४८ ॥
कार्त्तिकेमासि विप्रेन्द्र धात्रीवृक्षोपशोभिते ।
वने दामोदरं विष्णुश्चित्रान्नैस्तोषयेद्विभुम् ॥ १४९ ॥

श्रीवासुदेव के मन की प्यारी सब देव मयी धात्री पंडित लोगों को सदा लगाना चाहिये, सेवा करना चाहिये और पूजना चाहिये । आँवला जिसने देह में लगाया है वा उस की माला पहिनते हैं वा जो लोग आँवला का फल खाते हैं वे मनुष्य नारायण होते हैं । आँवले की छाया में जो श्राद्ध करता है भगवान की कृपा से उस के पितर स्वर्ग में

है कि श्रीगंगा जी में ये तेरह कर्म नहीं करना। शौच, कुल्ला, जूठा फेंकना, मल करना, तेल लगाना, निंदा, प्रतिग्रह, रति, दूसरे तीर्थ की इच्छा तथा दूसरे तीर्थ की प्रशंसा, वस्त्र धोना, उपद्रव, ये सब कर्म श्री-गंगा जी में नहीं करना। फिर श्री गंगाजल माथे पर छिड़क कर अघमर्पण करना, फिर वस्त्रांग आचमन करके शिखा बाँधना फिर तिलक करना बिना तिलक संध्यादिक नहीं करना।

यथा पाद्मे

यज्ञो दानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणं।
भस्मीभवति तत्सर्व्वं ऊर्ध्वपुंड्रं विना कृतम् ॥७६॥

यज्ञ, दान, तप, होम, स्वाध्याय, पितृतर्पण इत्यादिक सब कर्म ऊर्ध्वपुंड्र किए बिना जो करते हैं उनका निष्फल होता है। ऊर्ध्वपुंड्र ही लगाना और तिलक न लगाना इस का सिद्धांत श्रीश्रीगिरिधरदेव चरण ने ऊर्ध्वपुंड्र मार्तंड में किया है। ऐसे ही सर्वदा तुलसी की माला धारण करना और जो सब दिन धारण न करते हों तो कार्त्तिक में अवश्य धारण करना।

यदुक्तं निर्णयसिन्धौ। अथ मालाधारणम्। तत्र

स्कान्दे द्वारकामाहात्म्ये

निवेद्य केशवे मालां तुलसीकाष्ठसंभवां।
वहते यो नरो भक्त्या तस्य नैवास्ति पातकम् ॥७७॥
नजह्यात्तुलसीमालां धात्रीमालांविशेषतः।
महापातक संहन्त्रीं सर्वकामार्थदायिनीम् ॥ ७८ ॥

विष्णुधर्म्मे

स्पृशेत्तु यानि लोमानि धात्रीमाला कलौ नृणां।
तावद्वर्ष सहस्राणि वैकुंठे वसतिर्भवेत् ॥ ७९ ॥
मालायुग्मं तु यो नित्यं धात्री तुलसिसम्भवां।
वहते कंठदेशे तु कल्पकोटिदिवं वसेत् ॥ ८० ॥

मंत्र

तुलसी काष्ठसम्भूते माले कृष्णजनप्रिये
बिभर्मि त्वामहं कंठे कुरु मां कृष्णवल्लभम् ॥ ८१ ॥

तथा निर्णयामृते निर्णयसिन्धौ च पुष्करपुराणे

तुलायान्तिलतैलेन सायङ्काले समागते ।

आकाशदीपं योदद्यान्मासमेकं हरिं प्रति ॥ १५५ ॥

महतीं श्रियमाप्नोति रूपसौभाग्यसम्पदाम् ।

जो भगवन्मंदिर में आकाशदीप देते हैं उन्हें हजार अग्निष्टोम (यज्ञ) का फल होता है। कार्त्तिक के महीने भर जो लोग श्रीकृष्ण के प्रति संध्या को आकाशदीप देते हैं वे लोग बड़ी लक्ष्मी और बहुत संपदा और रूप सौभाग्य पाते हैं।

तथा हेमाद्रौ आदिपुराणे

दिवाकरेऽस्ताचलमौलिभूते गृहाददूरे पुरुषप्रमाणं ।
यूपाकृतिं यज्ञिय वृत्तदारुमारोप्यभूमावथतस्य मूर्ध्नि ॥ १५६ ॥
यवांगुलच्छिद्रयुतास्तु मध्य द्विहस्तदीर्घा अथ पट्टिकास्तु ॥
कृत्वा चतस्रोष्टदलाः कृतास्तु याभिर्भवेदष्टदिशानुसारि ॥ १५७ ॥
तत् कर्णिकायान्तु महाप्रकाशो दीपाः प्रदेया दलगास्तथाष्टौ ॥
निवेद्य धर्म्माय हराय भूम्यै दामोदरायाप्यथ धर्म्मराज्ञे ॥
प्रजापतिभ्यस्त्वथमत्पितृभ्यः प्रेतेभ्य एवाथतमः स्थितेभ्यः ॥१५८॥

जब संध्या होय तब घर के पास मनुष्य के बराबर पवित्र लकड़ी गाड़ के उस के ऊपर दो हाथ का बाँस लगाना, उस ऊपर चौमुखा वा अठमुखा दीया रख के आठ बत्ती वा आठ पत्ती पर आठ दीया बालना। इन आठों के निमित्त १ धर्म्म २ महादेव जी ३ पृथ्वी ४ श्री राधादामोदर ५ धर्म्मराज ६ प्रजापतिगण ७ पितृगण ८ अंधेरे में रहने वाले प्रेत। इन आठों के निमित्त दीपदान करना और वैष्णवों के मंदिर में ऊँचा बाँस गाड़ के उस पर इस मंत्र से दीपदान करना।

दामोदराय नभसि तुलायां दोलया सह ।
प्रदीपं ते प्रयच्छामि नमोनन्ताय वेधसे ॥१५९॥

कार्त्तिकमाहात्म्य में २० वा ६ वा ५ हाथ का बाँस लिखा है। इस प्रकार आकाश दीपदान करके फिर भगवन्मंदिर में, राजमार्ग में, गंगा जी के तट पर दीपदान करना।

संध्या करके विष्णुसहस्र नाम इत्यादिक ग्रंथों का पाठ करके फेर भगवान की पूजा को आरंभ करना। तहाँ फूल से भगवान की पूजा करना इसका माहात्म्य लिखते हैं।

यथाभार्गवार्चनदीपिकायां नृसिंहपुराणे

अगस्त्यकुसुमैर्देवं योऽर्चयेच्च जनार्दनं ।
दर्शनात्तस्य देवर्षे नरकं नार्हते नरः ॥ ८६ ॥
विहाय सर्वपुष्पाणि मुनिपुष्पेण केशवं ।
कार्त्तिके यो ऽर्चयेद्भक्त्या वाजपेयफलं लभेत् ॥ ८७ ॥

स्कान्दे

मालतीमालया विष्णुः केतक्या चैव पूजितः ।
समाः सहस्रं सुप्रीतो भवेत्स मधुसूदनः ॥ ८८ ॥

पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे

कार्त्तिके नार्चिता यैस्तु कमलैः कमलेक्षणः ।
जन्मकोटिषु विप्रेन्द्र न तेषां कमला गृहे ॥ ८९ ॥
कार्त्तिके केशवो पूजा येषां नाम्ना सुतैः कृता ।
ते निर्भर्त्स्य रवेः पुत्रं वसंति त्रिदिवे सदा ॥ ९० ॥
तुलसीदललक्षेण कार्त्तिके योऽर्चयेत् हरिं ।
पत्रे पत्रे मुनिश्रेष्ठ मौक्तिकं लभते फलम् ॥ ९१ ॥

अगस्त के फूल से जो भगवान की पूजा करते हैं उन के दर्शन से नरक नहीं मिलता। सब फूलों को छोड़ के कार्त्तिक में जो अगस्त के फूल से भक्तिपूर्वक पजा करते हैं उन्हें वाजपेय का फल होता है। कार्त्तिक में जिसने कमल से श्रीभगवान की पूजा नहीं किया उनके घर कोटि जन्म तक लक्ष्मी नहीं आती। जो कार्त्तिक में भगवान के नाम से पूजा करते हैं वे लोग यम को अनादर दे के स्वर्ग में रहते हैं। और जो लोग लाख तुलसी दल भगवान को अर्पण करते हैं वे एक एक पत्ते में मोती समर्पण का फल पाते हैं वा एक एक पत्ते में मुक्ति का फल पाते हैं।

मंत्र

नमस्तुलसि कल्याणि गोविंदचरणप्रिये ।
केशवार्थे विचिन्वामि वरदा भव शोभने ॥ ९२ ॥

यथा प्रयोगरत्नाकरे उड्डामरतंत्रेच

ऊर्जे मासि सितेपक्षे सप्तम्याम्भानुवासरे।
श्रवणार्द्धे व्यतीपाते विष्णोश्चक्रावतारिणः।
दीपदानं प्रकर्त्तव्यं सर्व्वसौख्याविवृद्धये ॥ १६६ ॥

कार्त्तिक सुदी सप्तमी मंगलवार श्रवण नक्षत्र व्यतीपात के दिन विष्णुचक्र के अवतार को दीपदान करना, इस से सब सौख्य बढ़ते हैं। इस प्रकार से दीपदान करके पहर रात तक भगवान का गुण गान करना। जहाँ भक्त लोग कीर्तन करते हैं वहाँ श्रीभगवान आप निवास करते हैं।

यथा पाद्मे कार्त्तिकमाहात्म्ये

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥ १६७ ॥

नारद जी से आप आज्ञा करते हैं कि नारद हम न तो बैकुंठ में रहते हैं और न जोगियों के हृदय में रहते हैं, जहाँ हमारे भक्त गाते हैं हम वहीं बैठते हैं।

यह जो ऊपर लिख आए हैं ये कार्त्तिक के नित्य कर्म हैं। और भी कार्त्तिक की एकादशी से लेकर के पुनवासी तक के पाँच दिन को भीष्म-पंचक कहते हैं इस में इस मंत्र से भीष्मतर्पण करना।

वैयाघ्रपदगोत्राय जलं वीराय वर्म्मणे।
सत्यव्रताय शुचये गाङ्गेयाय महात्मने।
भीष्मायतद्ददाम्यर्घ्यं आबालब्रह्मचारिणे ॥ १६८ ॥

इस प्रकार पाँच दिन भीष्मपंचक में तर्पण और स्नान करना। कार्त्तिक में गर्गसंहिता सुनने का बड़ा माहात्म्य है।

यथा—

यःकार्त्तिकेमासि नृपश्रियायुतो शृणोतिशश्वन्मुनिगर्गसंहिताम्।
स चक्रवर्ती भविता न संशयो नरेन्द्रहस्तोद्धृतपादपादुकः ॥ १६९ ॥
मनोजवैः सिन्धुतुरङ्गमैर्नवैर्द्विपैश्च विन्ध्याचलसम्भवैः परैः।
वैतालिकोद्गीतयशा महीतले निषेवितो वारवधूजनैस्सह ॥ १७० ॥

अथ मधुपर्कः

मध्यान्हचंडार्कभवश्रमापहं सितांगसम्पर्कमनोहरं परं ।
गृहाण विष्णो मधुपर्कमासनं श्रीकृष्णपीताम्बरसात्वतांपते ॥ ९९ ॥

अथ वस्त्रम्

विभो सर्वतो प्रस्फुरत् प्रोज्वलंतं महत् स्वर्णसूत्रांकितं दुर्लभं च ।
स्वतोनिर्म्मितं पद्मकिंजल्कवर्णं गृहाणाम्बरं देव पीताम्बराख्यम् ॥१००॥

अथ भूषणम्

कनकरत्नमयं मयनिर्मितं मदनरुक्कदनं सदनं रुचां ॥
उषसि सर्वसुवर्णविभूषणं सकललोकविभूषण गृह्यताम् ॥ १०१ ॥

अथ यज्ञोपवीतम्

सुवर्णाभमापीतवर्णं सुमंत्रैः वरं प्रोक्षितं वेदवन्निर्म्मितं च ।
शुभं पंचकार्य्येषु नैमित्तिकेषु प्रभो यज्ञ यज्ञोपवीतं गृहाण ॥ १०२ ॥

अथ गंधम्

संध्येन्दुशोभं बहुमंगलं श्री काश्मीरपाटीरकर्षकपंकं ।
स्वमंडनं गंधचयं गृहाण समस्तभूमंडलभारहानिन् ॥ १०३ ॥

अथ अक्षतम्

ब्रह्मावर्त्ते ब्रह्मणा पर्व्वमुक्तं ब्राह्मैस्तोयैः सिंचितं विष्णुना च ।
रुद्रेण रौद्राक्षितो राक्षसेभ्यः साक्षाद्भूमावक्षतं त्वं गृहाण ॥ १०४ ॥

पुष्पम्

मंदारसन्तानकपारिजात कल्पद्रुम श्रीहरिचंदनानां ।
गृहाणपुष्पाणि हरे तुलस्या मिश्राणि साक्षान्नवमंजरीभिः ॥ १०५ ॥

अथ धूपम्

लवंगपाटीरज चूर्णमिश्रं मनुष्य देवासुर सौख्यदं च ।
सद्यः सुगन्धी कृतहर्म्यदेशं द्वारावतीभूप गृहाण धूपम् ॥ १०६ ॥

अथ दीपम्

तमोहारिणं ज्ञानमूर्त्तिं मनोज्ञं लसद्वर्त्तिकर्पूरयुक्तं गवाज्यं ।
जगन्नाथ देवेश ज्योतिस्वरूप स्फुरज्ज्योतिकं दिव्यदीपं गृहाण ॥ १०८ ॥

अथ नैवेद्यम्

सर्व्वैं रसैर्वेदविधिव्यवस्थितं रसै रसान्यं च यशोमतीकृतं ।
गृहाण नैवेद्यमिदं स्वरोचिषं गव्यामृतं सुन्दरनन्दनन्दन ॥ १०८ ॥

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

तुलस्यां सर्व्वतीर्थानि तुलस्यां सर्व्वदेवताः ।
कार्त्तिकेमासि तिष्ठन्ति नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ११७ ॥

कार्त्तिक के महीने में श्रीतुलसी जी में सब देवता और सब तीर्थ निवास करते है ।

तथा पद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये ।

तुलसीकाननं राजन् गृहे यस्यावतिष्ठते ।
तद्गृहं तीर्थरूपंतु न यान्ति यमकिंकराः ॥ ११८ ॥
रोपणात्पालनात्स्पर्शान्नृणाम्पापहरातथा ।
तुलसी दहते पापं वाङ्मनःकायसम्भवम् ॥ ११९ ॥

तुलसी का बन जिस घर में रहता है उस तीर्थ रूप घर को यम के दूत नहीं देखते । वृक्ष लगाने से, पालने से, स्पर्श करने से, तुलसी जी कायिक वाचिक मानसिक तीनों पापों को दूर करती हैं ।

तथा काशीखण्डे दूतान् प्रति यमवाक्यम्

तुलस्यलंकृता ये ये तुलसीनामजापकाः ।
तुलसीवनपाला ये ते त्याज्या दूरतो भटाः ॥ १२० ॥

यमराज दूतों से आज्ञा करते हैं कि हे दूत लोग हमारी बात सुनो, जो तुलसी की कंठी पहिनते हैं, जो लोग तुलसी का नाम जपते हैं, जो लोग तुलसी के बन की रक्षा करते हैं उन को तुम लोग दूर ही से छोड़ देना ।

तथा स्कन्दपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये

तुलसीगन्धमादाय यत्र गच्छति मारुतः ।
दिशा दश च ताः पूताः भूतग्रामं चतुर्विधम् ॥ १२१ ॥

तुलसी जी की सुगंध लेकर जहाँ जहाँ वायु जाता है वहाँ वहाँ की दसो दिशा और वहाँ के चारों प्रकार के जीव पवित्र हो जाते हैं ।

अब तुलसीपूजा के मंत्र लिखते हैं ।

अथ ध्यानम्

ध्यायेच्च तुलसीं देवीं श्यामां कमललोचनां ।
प्रसन्नामलकल्हार वराभय चतुर्भुजाम् ॥ १२२ ॥

[सं० १९२६ में लिखी कार्तिक
कर्म विधि के बाद
लिखी गई।]

अथ दीपम्

अज्ञानतिमिरांधेभ्यो ज्ञानदीपप्रदायिनि ।
दत्तः तुलसि प्रीत्यर्थं दीपोयं प्रतिगृह्यताम् ॥१३३॥

अथ नैवेद्यम्

नमस्ते जगतांनाथे प्राणिनां प्रियदर्शने ।
यथाशक्ति मया दत्तं नैवेद्यं देवि गृह्यताम् ॥१३४॥

अथ जलम

नमो भगवति श्रेष्ठे नारायणि जगन्मये ।
तुलसि त्वरया देवि पानीयं प्रतिगृह्यतांम् ॥१३५॥

अथ ताम्बूलम्

अमृतेऽमृतसम्भूते तुलस्यमृतरूपिणि ।
एलाकर्प्पूरसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥१३६॥

अथ फलम्

इदं फलं मया देवि स्थापितं पुरतस्तव ।
अनेन सफला वाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥१३७॥

अथ प्रदक्षिणा

दक्षिणे दक्षिणकरे त्वद्भक्तानाम्प्रियंकरि ।
करोमि ते सदाभक्त्या विष्णुकान्ते प्रदक्षिणाम् ॥१३८॥

अथ नमस्कार, पुष्पांजलिः

नमोनमो जगद्धात्र्यै जगदाद्यै नमोनमः ।
नमोनमो जगद्भूत्यै नमस्ते परमेश्वरि ॥ १३९ ॥
नमस्तुलसि कल्याणि नमो विष्णुप्रिये शुभे ।
नमो मोक्षप्रदे देवि नमः संपत्प्रदायिनि ॥ १४० ॥
तुलसी पातु मां नित्यं सर्व्वापद्भ्योपि सर्व्वदा ।
कीर्तिता वा स्मृता वापि या पावयति मानुषान् ॥ १४१ ॥
महाप्रसादजननि सर्व्वपापप्रणाशिनि ।
आधिव्याधिहरे देवि तुलसि त्वां नमाम्यहम् ॥ १४२ ॥
या दृष्टा निखिलाघसंघशमनी स्पृष्टा वपुःपावनी ।
रोगाणामभिवन्दिता निरसनी सिक्तान्तकत्रासिनी ॥

विदित हो कि इस दास ने परोपकारार्थ जो कार्त्तिक कर्म विधि लिखी थी, उसे हमारे एक मित्र ने बहुत प्रसन्नतापूर्वक अंगीकार किया। इस हेतु ऐसी इच्छा हुई कि इसी भाँति मार्गशीर्ष की भी विधि लिखी जाय तो बहुत लोकोपकार होगा क्योंकि इस परम पवित्र मास का माहात्म्य बहुत कम लोग जानते हैं और यह अगहन महीना श्री भगवान का स्वरूप है जैसा आपने श्री मत् भगवतगीता और श्री मत् भागवत में आज्ञा किया है। और वृज की कुमारिकागण ने श्री भगवान के प्राप्ति के अर्थ इसी अगहन का स्नान किया था, जिससे उन्हें श्री कृष्ण मिले। इस अगहन का माहात्म्य स्कंदपुराण में लिखा है, जिसमें से नित्य विधि अध्याय क्रम से लिखते हैं। ब्रह्मा भगवान से पूछते हैं कि आपने श्रीमद्गीता वा श्रीभागवत में आज्ञा किया है कि अगहन हमारा स्वरूप है, इस हेतु हम उसका माहात्म्य अच्छी भाँति सुना चाहते हैं।

श्री भगवानुवाच।

अन्यैर्धर्म्मादिभिः कृत्वा गोपितं मार्गशीर्षकं।
मत् प्राप्तेः कारणं मत्वा देवैः स्वर्गनिवासिभिः॥

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि सब धर्मों करके मार्गशीर्ष को स्वर्गनिवासी देवताओं ने हमारे प्राप्ति का कारण जान के छिपाय दिया।

येकेचित्पुण्यकर्माणो ममभक्तिपरायणाः।
तेषामवश्यं कर्तव्यं मार्गशीर्षमघापहं॥

परंतु जो कोई पुण्य कर्मा हमारे भक्त होयँ उनको हमारे स्वरूप अगहन मास का वृत अवश्य करना चाहिए।

उषस्युत्थाय योमर्त्यः स्नानं विधिवदाचरेत्।
तुष्टोहं तस्य यच्छामि आत्मानमपि पुत्रक॥ ४॥

हे पुत्र, अगहन में जो चार घड़ी रात रहे उठ के नहाते हैं उनको हम अपनी आत्मा भी दे देते हैं॥

इत्यादि प्रथमाध्याये।

जाते हैं। कार्त्तिक के महीने में आँवले के बगीचे में भगवान दामोदर की चित्रान्न से पूजा करना इत्यादि बहुत माहात्म्य लिखा है। इस से नित्य आँवला का पूजन करना तथा आँवला के नीचे ब्राह्मण भोजन कराना। इस भाँति आँवला की पूजा कर के फेर श्रीमद्भागवत इत्यादिक भगवान की कथा सुनना और यथाशक्ति दान कर के ब्राह्मण भोजन कराना।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

नृत्यगानादिकार्य्येषु प्रहरं दिवसं नयेत्।
ततः पुराणश्रवणं यामार्द्धं सम्यगाचरेत् ॥ १५० ॥
सम्पूर्णं कार्त्तिकं यस्तु संपूज्यामलकींशुभां।
राधादामोदरप्रीत्यै भोजयेच्चैव दम्पतीन् ॥ १५१ ॥
पश्चात्स्वयं सुभुंजीत न श्रीस्तस्य क्षयं व्रजेत्।
कृत्वामाध्यान्हिकंकर्म्मभुंजीतद्विदलोज्झितम् ॥ १५२ ॥
ब्रह्मांशकसमुद्भूते पलाशे यस्तु भोजनं।
कुर्य्यात्कार्त्तिकमासेसौ विष्णुलोकंप्रयास्यति ॥ १५३ ॥

प्रहर दिन चढ़े तक भगवान के मंदिर में नाचना गाना, फिर आधे पहर कथा सुनना, फिर आँवला के नीचे दंपती ब्राह्मण भोजन कराय के मध्यान्ह संध्या कर के ऊपर जिन वस्तुओं का निषेध लिखा है उन्हें छोड़ के महा प्रसादी अन्न भोजन करना। जो कार्त्तिक में नित्य ऐसा करते हैं उन्हें लक्ष्मी त्याग नहीं करती। ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न भया है ऐसे पलाश के पत्ते में जो भोजन करते हैं वे लोग विष्णुलोक पाते हैं।

इस भाँति दिन का कर्म लिख के अब संध्या का कर्म लिखते हैं। रात्रिकर्म में तीन कर्म मुख्य हैं, एक तो आकाश दीपदान, दूसरा भगवन्मन्दिर वा श्री गंगा जी वा तुलसी के निकट दीपदान, तीसरा नामसंकीर्तन। अब तीनों का फल और विधि लिखते हैं।

यथा ब्रह्मांडे

विष्णुवेश्मनियोदद्यात्तुलायां नभदीपकं।
अग्निष्टोमसहस्रस्य फलमाप्नोति मानवः ॥ १५४ ॥

श्रीभगवान आज्ञा करते हैं कि तुलसी की मृत्तिका वा गोपीचंदन वा प्रसादी कुंकुम चंदनादि से तिलक लगाने का बड़ा पुण्य है और गोपीचंदन से शंख चक्रादिक चिन्ह हृदय बाहुमूल इत्यादिक अंगों में धारण करना।

इत्यादि तृतीयाध्याये।

श्री भगवान कहते हैं कि तुलसी के काठ की माला जो धारण करते हैं वे चाहे भले हों चाहे बुरे हमारे ही होते हैं। तुलसी की काठ की वा आँवले की माला जो लोग पहिनते हैं वे हमारे स्वरूप हैं। इस भाँति तिलक धारण करके, फिर संध्या करके, गुरु को भेंट करके, साष्टांग दंडवत करके, हमारी मानसी पूजा करके फिर विधि पूर्वक षोड़शोपचार पूजा करै।

इत्यादि चतुर्थाध्याये।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमें अगहन में पंचामृत से स्नान कराते हैं वे लोग कोटिन गोदान का फल पाते हैं। जो लोग शंख से हमें स्नान कराते हैं वे जीवनमुक्त हैं। जिनके घर शंख की पूजा होती है वे धन्य हैं।

इत्यादि पंचमाध्याये।

आप कहते हैं कि जो लोग हमारे सामने घंटा बजाते हैं उनकी पूजा का करोड़ गुना फल होता है क्योंकि घंटा पर गरुड़ जी रहते हैं और गरुड़ जी के पक्ष से सामवेद निकलता है, इससे जो पूजा की समय घंटा बजाता है उसको बहुत फल होता है। जो लोग हमारी पूजा में नृत्य गान इत्यादिक करते हैं वे लोग अपने पित्रों के सहित वैकुंठ पाते हैं। जो लोग हमैं तुलसी के काठ का चंदन चढ़ाते हैं वे हमारे प्रिय होते हैं।

तुलसी दमनकं मह्यं दत्वा यस्सेवते पुनः।
मार्गशीर्षे सदा भक्त्या सलभेद्वांञ्छितं फलं ॥ १ ॥

इत्यादि षष्ठाध्याये।

———

यथा सनत्कुमारसंहितायाम्

कार्त्तिकेमासि सम्प्राप्ते गगने स्वच्छतारके ।
रात्रौ लक्ष्मी समायाति द्रष्टुम्भवनकौतुकम् ॥१६०॥
यत्रयत्र च दीपान्सा पश्यत्यब्धिसमुद्भवा ।
तत्रतत्र रतिं कुर्य्यान्नान्धकारे कदाचन ॥१६१॥
देवालये नदातीरे राजमार्गे विशेषतः ।
निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्री सर्व्वतोमुखी ॥१६२॥
कीचकंटकसंकीर्णे विषमे दुर्गमस्थले ।
कुर्य्याद्यो दीपदानानि नरकं स न गच्छति ॥१६३॥

कार्त्तिक महीने की रात को जब स्वच्छ तारे निकले रहते हैं तब लक्ष्मी जी घर का कौतुक देखने को आतीं हैं, सो वह जहाँ जहाँ दिये बलते देखती हैं वहाँ प्रसन्न हो कर निवास करती हैं और जहाँ अंधकार देखती हैं उस स्थान को त्याग करती हैं। देवता के मंदिर में, नदी के तीर पर, राजमार्ग में विशेष कर के और निद्रा की जगह दीया बालनेवाले लोगों को लक्ष्मी जी सर्वतोमुख रहती हैं। कीच में, काँटे की जगह में, ऊची, नीची, सकरी दुर्गम जगह में जो लोग दीपदान करते हैं वे नरक में नहीं जाते।

इस मंत्र से दीपदान करना

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं जपहीन जनार्द्दन ।
व्रतंसम्पूर्णतां यातु कार्त्तिके दीपदानतः ॥१६३॥

और जो विद्यार्थी को पढ़ने के वास्ते तेल देते हैं उन्हें भी बड़ा पुण्य होता है।

तथा तत्रैव

यो वेदाभ्यासिने दद्याद्दीपार्थे तैलमुत्तमं ।
कार्त्तिकेमासि सम्प्राप्तं समुक्तिफलभाग्भवेत् ॥१६५॥

जो कार्त्तिक में पढ़नेवाले विद्यार्थी को दीये का तेल देते हैं वे मुक्तिफल पाते हैं।

और कार्त्तिक सुदी सप्तमी की कामना होय तो कार्तवीर्य के वास्ते दीपदान करना, यह सब कामना का पूर्ण करनेवाला है।

अगहन के महीने में दीपदान का बहुत फल है। यथा—

यः करोति सहोमासे कर्पूरेण च दीपकं।
अश्वमेधमवाप्नोति कुलंचैव समुद्धरेत ॥
घृतेन चाथतैलेन दीपंयोऽत्रालयेन्नरः।
सहोमासे ममाग्रेतु तस्यपुण्यफलं शृणु ॥
विहायसकलंपापं सहस्रादित्यसन्निभः।
ज्योतिष्मता विमानेन ममलोके महायते ॥

जो कोई अगहन में कपूर का दीया बालता है उसको अश्वमेध का फल मिलता है और अपने कुल का उद्धार करता है। घी से अथवा तेल से जो लोग अगहन में हमारे सामने दीया बालते हैं वे लोग सब पापों से छूट के हजार सूर्य समान ज्योति पाते हैं और बड़े ज्योतिमान विमान पर बैठ के हमारे लोक जाते हैं।

इत्यादि अष्टमे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि अगहन में जो लोग हमारी प्रदक्षिणा करते हैं और जो हमें अष्टांग दंडवत करते हैं वे लोग स्वर्ग में निवास करते हैं। यथा।

प्रदक्षिणां दंडपातं यः करोति सदामम।
सहोमासि विशेषेणह्याकलाम्वसतेदिवि ॥
पद्भ्यांकराभ्यांजानुभ्यांउरसाशिरसातथा।
मनसा वचसा दृष्ट्या प्रणामोऽष्टङ्गउच्यते ॥

जो लोग हमको दंडवत और प्रदक्षिणा करते हैं वे लोग कल्प भर स्वर्ग में निवास करते हैं। पैर से १। हाथ से २। जंघा से ३। छाती से ४। शिर से ५। मन से ६। वचन से ७ और दृष्टि से ८। नमस्कार करने को अष्टांग दंडवत कहते हैं अर्थात् आठो अंग झुकें और आठों अंग से नमस्कार करें उसको साष्टांग दंडवत कहते हैं।

इत्यादि नवमे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि एकादशी का व्रत और जागरण जो लोग करते हैं वे हमको अत्यंत प्रिय हैं और जागरण में जो लोग दीपदान इत्यादि करते हैं वे हमारे परम प्यारे हो जाते हैं।

हे लक्ष्मीसंयुक्त नृप, जो कार्त्तिक में गर्गमुनि की संहिता विधिपूर्वक सुनै तो वह ऐसा चक्रवर्ती होय कि राजा लोग उस की खड़ाऊँ उठावैं। हवा के वेग ऐसे सिंधी नए घोड़ों से और ऊँचे और विंध्याचल की तराई के हाथियों से और पृथ्वी के वैतालिकों के गीत रूपी अपने यश से और वारांगनाओं से सदा सेवित रहै। इस प्रकार कार्त्तिक का नित्य कर्म करके पूर्णिमा को यह व्रत समाप्त करै, यथाशक्ति दान दे, ब्राह्मणों का जोड़ा भोजन करावै।

लोकानाम्पापरूपप्रबलतमतमोनाशनायाशु शक्तं।
हन्तुन्तीदणान्त्रितापम्पटुतरमनिशं यः परन्दुःखहेतुः॥
दातुं शक्तं त्रिलोकैरसुलभममृतङ्कार्त्तिकङ्कर्म्मवैधं।
राकाज्योत्स्नास्वरूपम्बिलसतु जगति श्रीहरिश्चन्द्रचन्द्रात्॥

दोहा

जै जै श्रीवल्लभ सदा, श्रीबिट्ठल द्विजराज।
कृपा करत सब भय हरत, तारत पतित-समाज॥१॥
नमो नमो कविमुकुटमणि, पितुपदकमल पुनीत।
जाकी कृपा अपार तें, समुझि परी यह रीत॥२॥
जानि परम उपकार पुनि, देखि शास्त्र को पंथ।
जगहित श्रीहरिचंद किय, कातिक विधि को ग्रंथ॥३॥

॥ इति ॥

—❀—

कदम्बम् पूजयेद्भक्त्या साक्षाच्छ्रीकृष्णदर्शनं ॥
अखंडं दीपकङ्कुर्य्यान्नीपवृक्षे हरिप्रिये ।
सर्वान् कामानवाप्नोति वशीकरणमुत्तमं ॥
मार्गशीर्षेत्रयोदश्यांयोनीपम्पयसाऽर्चयेत् ।
विन्दुनाविन्दुनाचैव अश्वमेध फलं लभेत् ॥
मार्गशीर्षचतुर्दश्यान्दधिनानीपमर्चयेत् ।
इह सन्तान वृद्धिश्च परत्र परमंपदं ॥
मार्गशीर्ष्याम्पौर्णमास्याङ्गुञ्जाहारेणनीपकं ।
वेपृषट्य द्वनमालाभिः कृष्णस्वस्यवशोभवेत् ॥
इदंरहस्यं गोपनीयं पुत्र सर्व्वात्मनामम ॥

अगहन सुदी प्रतिपदा को जो कदम्ब को पूजा करते हैं वे आयुष्य, आरोग्य, ऐश्वर्य पाते हैं। अगहन सुदी अष्टमी को जो कदम्ब के नीचे भोजन करते कराते हैं वे एक एक ग्रास में गोदान का फल पाते हैं। एकादशी का व्रत करके द्वादशी को सवेरे जो कदम्ब की पूजा करता है उसको साक्षात् श्रीकृष्ण का दर्शन होता है। जो कदम्ब के सन्मुख अखंड दीपदान करता है उसको सब कामों का फल होता है। यह हमारा वशीकरण है। अगहन की तेरस को जो कदम्ब को दूध चढ़ाते हैं, उनको एक एक बूंद में अश्वमेध का फल होता है। मार्गशीर्ष की चौदस को जो कदम्ब को दही चढ़ाते हैं, उनको इस लोक में संतान और उस लोक में परम पद मिलता है। अगहन सुदी पुनवासी को जो लोग कदम्ब को गुंजा की माला और वनमाला समर्पण करते हैं, साक्षात् श्रीकृष्ण उनके वश में हो जाते हैं।

अब इससे बढ़ के और क्या फल होगा कि थोड़े साधन में और साक्षात् श्रीकृष्ण वश हो जायँ। ऐसा कौन होगा जो इस छोटे साधन को बड़े फल की इच्छा से न करै। यह केवल श्री भगवान की कृपा है कि हम जीवों के हेतु उसने ऐसे छोटे छोटे साधन बनाए हैं। देखो कदब को एक दिन गुंजा को माला चढ़ाने से आप वश में हो जाते हैं, यह केवल उनकी दीन दयालुता है। अहो, ऐसा कौन मूर्ख होगा जो इस बात को जान के भी श्री कृष्ण को वश करने की इच्छा न करेगा।

मार्गशीर्ष-महिमा

'मासानाम्मार्गशीर्षोहं'

श्रीमद्भगवद्वाक्यं

सं० १९३०

विप्रायवेदविदुषे वैष्णवाय विशेषतः ।
सगच्छेन्मामकेलोके संयुतः कुल कोटिभिः ॥
शालिग्रामशिलांरम्यां मार्गशीर्षेद्विजातये ।
ददाति हेम सहितांदिव्यवस्त्रैश्चवेष्टितां ॥
रत्नपूर्णाम्वसुमतीं सशैल वन काननां ।
दत्वायतफलमाप्नोतितेन तत् फलमाप्नुयात् ॥
शालिग्रामं तथा चक्रं शंखं घंटां तथैव च ।
ददाति तस्य पुण्यस्य संख्याकर्तुंन्नशक्यते ॥

रोली अगर चंदन गुगुल और भी पूजा की सामग्री जो लोग वेदपाठी ब्राह्मणों को और विशेप करके वैष्णव को अगहन में देते हैं, वे लोग अपने करोड़ कुल के सहित हमारे लोक में जाते हैं। जो लोग अगहन में शालिग्राम की रम्य शिला सोना और वस्त्र समेत ब्राह्मण को देता है वह रत्नपूर्ण पृथ्वी पहाड़ वन समेत दान करने का फल पाता है और शालिग्राम, गोमती चक्र, शंख, घंटा जो लोग देते हैं उनके पुण्य की संख्या नहीं कर सकते। इत्यादि

अगहन में स्त्रियों को सोहाग पेटारी दान करना चाहिए।

यथा—

मासिमार्गशिरेतुस्त्री कुंकुमं मौक्तिकानि च ।
सिन्दूर कज्जलं चापिहैमान्याभरणानिच ॥
सुगन्धीन्यपिवस्तूनि ताम्बूलं रंजिताम्बरं ।
प्रयच्छतिद्विजातिभ्यो तस्य पुण्यफलं शृणु ॥
पतिव्रता पुत्रिणी च सुभगा जन्मजन्मनि ।
स्वप्नेपिभर्तृदुःखंसानपश्यतिकदाचन ॥

अगहन में रोली, मोती, सेंदुर, काजल, सोना गहना, चूड़ी, सुगंध, पान, रँगी साड़ी, और भी ऐना, कंघी, टिकुली इत्यादिक सोहाग की वस्तु जो स्त्रीदान करती हैं वह पतिव्रता होती हैं। उनके पुत्र जीते हैं, जन्म जन्म में भाग्यवान होती हैं और वह सपने में भी पति का दुःख नहीं देखतीं। अब मार्गशीर्ष में और अन्य देवताओं के जो वृत हैं वह लिखते हैं।

मार्गशीर्ष महिमा

—(:)—

[श्लोक, प्राचीन]

नूतनजलधररुचये गोपवधूटीदुकूल चौराय ।
तस्मै कृष्णाय नमः संसार महारुहस्य बीजाय ॥

[श्लोक, नवीन]

व्रजजन-सुखकारी । गोपिका-वस्त्रहारी ॥
सकल भुवन भारी । नित्यलीलावतारी ॥
व्रजभुवि-परिचारी । गोप-नारी-विहारी ॥
दनुज-तनु-विदारी । पातुनश्चक्रधारी ॥

सोरठा—प्रातहि अगहन न्हात, तिन्ह गोपिन को चीर लै ।
तरु कदंब चढ़ि जात, चोरि चोरि नित प्रातही ॥

दोहा—रासरसिक फल देन हित, तिनकों करत विहार ।
ऐसे प्रभु के पद-कमल, बिनवत बारंबार ॥

सोरठा—पुनि बंदौं सुखरास, भुक्ति मुक्ति पद सहजहीं ।
जगहित अगहन मास, कृष्ण रूप गोपिन सुखद ॥

अगहन बदी अमावस्या को गौरी तपोव्रत सौभाग्य बढ़ने के हेतु करना चाहिए। यह अंगिरा ने कहा है कि इस व्रत के करने से स्त्री को रूप-सौभाग्य मिलता है। यथा—

आदौमार्गशिरेमासिह्यमावस्यादिने शुभे।
गृह्णीयान्नियमं तत्र दन्तधावन पूर्व्वकं॥

इस दिन सौभाग्य वस्तु दान करना और सुवासिनी को भोजन कराना चाहिए। इत्यादि अंगिरोक्तं गौरीतपोव्रतं।

इसी अगहन की अमावस्या को स्त्रियों को सौभाग्य वृद्धि के हेतु महाव्रत लिखा है। यह हेमाद्रि ग्रंथ में कालिकापुराण की कथा लिखी है। यथा—

ततोमार्गशिरेमासि प्रतिपत्स परेहनि।
उपवसेत् स्वगुरुन् पृष्ठ्य महादेवंस्मरेन्मुहुः॥
एवन्व्रतं महच्चैव अलक्ष्म्यपघमर्षणं।
धनमायुप्रदन्नित्यं रूप सौभाग्यदंपरं॥
इत्यादि कालिका पुराणे।

मार्गशीर्ष सुदी ५ को नाग की पूजा करना, यह बात हेमाद्रि ग्रंथ स्कंद पुराण में लिखी है। यथा—

शुक्लामार्गशिरे या चश्रावणेया च पंचमी।
स्नानैर्दानैर्बहुफला नाग लोकप्रदायिनी॥
इत्यादि स्कान्दे नागपंचमी।

अगहन सुदी ६ स्कंद षष्ठी वा चम्पाषष्ठी है। इसमें सूर्य और स्कंद की पूजा करना। इस मंत्र से कार्तिकेय की पूजा करना।

सेनाविदारकस्कंद महासेन महाबल।
रुद्रोमांगजषडवक्त्रं गङ्गागर्भनमोस्तुमे॥

इत्यादि दिवोदासीये चम्पाषष्ठी।

अगहन सुदी ७ सूर्य तीर्थ में नहाना और सूर्य की पूजा करना और श्रीयमुनाजी में वा पंचगंगा में स्नान करना, यह स्कंद पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य में लिखा है।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं।

अब स्नान की विधि लिखते हैं। बड़े सबेरे उठ के गुरु को नमस्कार करके हमारा ध्यान करै और सहस्रनाम इत्यादि पढ़ के, गाँव के बाहर मल त्याग करके, शौच से शुद्ध होके, आचमन करके, दतुवन करके स्नान करै। तुलसी जी के जड़ की मिट्टी और उनका पत्ता लेकर के मूल मंत्र पढ़ के वा गायत्री पढ़ के शरीर में लगाय के स्नान करे। स्नान की समय इन मंत्रों से श्री गंगाजी का आवाहन करै।

मंत्र

विष्णुपादप्रसूतासि वैष्णवी विष्णु देवता।
त्राहि पापात्समस्तान्माजन्ममरणांतिकात्॥
तिस्रः कोट्योर्ध कोटिश्चतीर्थानां वायुरब्रवीत्।
दिविभुव्यन्तरिक्षे च तानि ते सन्तु जान्हवि॥
नन्दिनीत्येव ते नाम देवेषु नलनीति च।
दक्षापृथ्वी च विहगाविश्वनाथाशिवासती॥
विद्याधरी सु प्रसन्ना तथा लोकप्रसादिनी।
क्षेमावती जान्हवी च शान्ताशान्तिप्रदायिनी॥
एतानि पुण्य नामानि स्नानकाले प्रकीर्तयेत्।
भवेत्सन्निहितातत्र गंगा त्रिपथगामिनी॥

इन मंत्रों को पढ़ के फिर श्री गंगा जी की मृत्तिका इस मंत्र से सिर में लगाना।

मंत्र

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते बसुन्धरे।
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतंकृतं॥
उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना।
नमस्ते सर्व देवानांप्रभवारणि सुव्रते॥

इस मंत्र से मृत्तिका शिर में लगाय के स्नान करै। स्नान करके जल में वस्त्र न निचोड़े। फिर आचमन करके कपड़ा पहन के फिर आचमन करै। फिर संध्या तर्पण आरंभ करै, तिसमें पहले उर्ध्वपुंड्र धारण करके फिर संध्यादिक कर्म करै। इत्यादि द्वितीयाध्याये।

इसी अगहन सुदी १५ को जो कुछ दान पुण्य स्नान बन पड़े करना उचित है। इस पूर्णिमा के समान कोई पर्व नहीं है, यह बात स्कंद-पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य में लिखी है।

यथा—

स्नानं दानं तथा पूजां पूर्णायान्नकरोति यः।
षष्टि वर्ष सहस्राणि रौरवे परिपच्यते ॥ १ ॥
गोदानंभूमिदानं च वस्त्रान्नादि च यद्भवेत्।
मार्गशीर्षे पौर्णमास्यांदानेस्यादक्षयं फलं ॥

अगहन की पुनवासी को जो स्नानदानादिक नहीं करते वह साठ हजार बरस रौरव में वास करते हैं।

अगहन सुदी १५ को जो कुछ दान करता है वह अक्षय होता है।

अगहन में श्रीमद्भागवत सुनने का बड़ा माहात्म्य है। यथा मार्ग-शीर्ष माहात्म्ये।

श्रीमद्भागवतं नामपुराणं ब्रह्म सम्मितं।
श्रृणुयाच्छ्रद्धया युक्तो ममसन्तोषकारणं ॥
यावद्दिनानि हे पुत्रशास्त्रं भागवतं कलौ।
तावत्कुर्वन्ति पितरः स्वर्गेत्वमृत भोजनं ॥
यत्र यत्र चतुर्वक्त्र श्रीमद्भागवतं भवेत्।
गच्छामि तत्रतत्राहं गौर्यथासुतवत्सला ॥

इत्यादि श्रीमद्भागवत माहात्म्यं।

मार्गशीर्ष में गोपी गोविंद तीर्थ की यात्रा और गोविंद नाम स्मरण यही करना चाहिए।

यथा वायु पुराणे लक्ष्मीसंहितायां काशी माहात्म्ये।

गोपी गोविन्द तीर्थं तु गोपी गोविन्दसंज्ञकं।
तत्रमार्गेशिरेमासिमहिमाबहु गीयते ॥

इति मार्गशीर्ष महिमा

———

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमें अगहन में कमल का फूल चढ़ाते हैं वे लोग हमारे वल्लभ होते हैं। हमको बिना सुगंधि के फूल और कीड़े का चाटा फूल नहीं चढ़ाना। सब फूलों में जावी फूल का विशेष माहात्म्य है, इस हेतु आप आज्ञा करते हैं।

यथा—

सर्वासाम्पुष्पजातीनां जातीपुष्पमिहोत्तमं।
जातिपुष्पसहस्राणांयच्छेन्माला सुशोभनां॥
महांयोविधिवद्दद्यात्तस्यपुण्यफलंशृणु।
कल्पकोटि सहस्राणी कल्पकोटिशतानि च॥
मत्पुरेवसते श्रीमान् ममतुल्य पराक्रमः॥
सर्वेषांपत्र पुष्पाणां तुलसी मम वल्लभा।
अन्येषामपिदेवानां न निषिद्धाकदाचन॥ २॥

सब फूलों में जातीफूल की विशेष महिमा है। हजार जाती फूल माला जो हमको समर्पण करता है वह हजार करोड़ कल्प और सौ करोड़ कल्प हमारे लोक में हमारे तुल्य पराक्रम होकर वास करता है। और सब फूलों से तुलसी हमको बहुत प्यारी है दूसरे देवताओं की पूजा में भी तुलसी निषिद्ध नहीं है।

इत्यादि सप्तमे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि तुलसी हमको अत्यंत प्रिय है।

यथा—

श्रीमत्तुलस्यार्चयते सकृद्धिमांपत्रैः सुगन्धैर्विमलैरखंडितैः।
यस्तास्यपार्षदसंस्थितं तदानिरीक्षयित्वा परिमार्जयेद्यमः॥
तुलसीनयेषां ममपूजनार्थं सम्पादितैकादशिपुण्य वासरे।
धिग्यौवनं जीवितमर्थ संततिं तेषाम्मुखनेहचदृश्यते परैः॥

जो कोई श्री तुलसी से हमारी पूजा करता है और उसके विमल और बिना टूटे दल हमको समर्पण करता है उसके हृदय का पाप यमराज दूर कर देते हैं। जिन लोगों ने एकादशी के दिन हमारी तुलसी से पूजा नहीं किया उनके जीवन और काम और उनके संतान धिक्कार योग्य हैं और मुँह देखने के योग्य नहीं है।

तस्माच्च कोटि गुणितं वृश्चिकस्थे दिवाकरे।
मार्गशीर्षेऽधिक तस्मात्सर्वदा मम वल्लभ ॥५॥

आप कहते हैं कि हे गर्भमुक्त ब्रह्मा, हम स्नान, दान, पूजन, होम, विधान इत्यादिक से वश नहीं होते, हम मार्गशीर्ष-स्नान से वश होते हैं। माघ में वैशाख का सौ गुना पुण्य है और वैशाख से हजार गुना पुण्य कार्तिक में है और कार्तिक से करोड़ गुना पुण्य वृश्चिक के सूर्य में, और अगहन में इससे भी अधिक पुण्य है। इस हेतु आप लोगों को इस अगहन के महीने में जो कुछ बन सके स्नान, दान तुलसी-कदंब-पूजन करना चाहिए।

स्कंदपुराणे मार्गशीर्ष माहात्म्ये।

मार्गशीर्षं न कुर्व्वन्ति ये नरा पाप मोहिताः।
पाप रूपाहि ते ज्ञेया कलि काले विशेषतः॥
धन्यास्ते कृतिनो ज्ञेया ये यजन्ति जनार्दनम्।
कर्मणा मनसा वाचा भक्तितश्च भजन्ति ये ॥ ७ ॥
मार्गशीर्षे महापुण्या मथुरा काशिका यथा।
मथुरा स्नातु कामस्तु गच्छतस्तु पदे पदे ॥ ८ ॥
निराशानि व्रजंत्येव पातकानि न संशयः।
गोदानं स्वर्णदानं च वस्त्रान्नादि च यद्भवेत् ॥ ६ ॥
पौर्णमास्यां सहोमासे दाने स्याद्दत्तम् यत्फलम्।
सा पौर्णमासीं लभ्येत गंगायां यदि भाग्यतः॥ १० ॥
स्नानादेव फलं तत्र यज्ञकोटिसमं भवेत्।
पूजयेत् संस्मरेद्यस्तु कदम्बं सर्वकामदम् ॥ ११ ॥
सर्व्वान्कामानवाप्नोति इहामुत्र न संशयः।
कदम्ब मूलसंभूतां मृदं देहे बिभर्त्ति यः॥ १२ ॥
सर्वतीर्थादिकं पुण्यं लभते मानवो भुवि।

जो पाप मोहित लोग मार्गशीर्ष स्नान नहीं करते उन्हें इस कलियुग में विशेष करके पाप रूप जानना। वे सुकृती लोग धन्य हैं जो तन, मन, धन, वाणी और कर्म से श्री भगवान की सेवा करते हैं। अगहन के महीने में मथुरा और काशीमें महाफल होता है। जो लोग मथुरा स्नान

यथा—

यः पुनः कुरुते नृत्यं दीपं गानं च पूजनं ।
न तत् क्रतुशतैः पुण्यंव्रतैर्दानशतैरपि ॥

जो भक्त हमारे सामने नाचते हैं, दीपदान करते हैं, हमारा कीर्तन करते हैं, पूजा करते हैं उनके पुण्य के बराबर न सौ यज्ञ का पुण्य है और न सौ व्रत और दान का पुण्य है। इत्यादि द्वादशे।

अब कौन देवता की पूजा करना चाहिए सो आप आज्ञा करते हैं कि अगहन में कीर्ति और केशव की पूजा करना चाहिए और सपत्नीक ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। यथा—

सहोमासे चवै देवी कीर्तियुक्तोहि केशवः ।
तस्यपूजा प्रकर्तव्यायथापूर्वप्रभापिता ॥
ब्राह्मणं केशवं कुर्य्यात्तत्पत्नीकीर्ति-संज्ञिकाः ।
दंपती विधिवत्पूज्यौ वस्त्राभरणधेनुभिः ॥
दम्पत्योः पूजनेवत्सपूजितोऽहंसदारकं ।
तस्मादवश्यं सम्पज्यौ दम्पती मम तुष्टये ॥

अगहन के महीने मे कीर्ति देवी और केशव देवता की पूजा षोड़शोपचार से करना। ब्राह्मण को केशव मानना और ब्राह्मण पत्नी को कीर्ति समझ के वस्त्र गहना गऊ से दोनों की पूजा करना। दंपती ब्राह्मण के पूजा से हमारी और लक्ष्मी दोनों की पूजा होती है, इस हेतु हमारे तुष्ट होने के अर्थ दंपती की पूजा अवश्य करना।

इत्यादि चतुर्दशे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि अगहन में हमारे प्रिय कदंब वृक्ष की पूजा अवश्य करना। यथा—

मार्ग शुक्ले प्रतिपदिकदम्बंपूजयेत्तु यः ।
आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं पुमान् प्राप्नोत्यसंशयः ॥
मार्गशीर्षे सिताष्टम्यां भोजनं च कदम्बके ।
सिक्थे सिक्थे च गोदानं पुमान्प्राप्नोत्यसंशयः ॥
एकादश्यांव्रतंकुर्य्यात् द्वादश्यामरुणोदये ।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि हे पुत्र इस रहस्य को आत्मा से अधिक गुप्त रखना ।

इत्यादि षोड़शे ।

यह स्कंद पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य का सारांश यहाँ पर लिखा गया है, जिससे सज्जनों को संतोष होगा ।

अब अगहन में किस दान की विशेष महिमा है सो लिखते हैं ।

यथा—

तिलपात्रं तुयोदद्यान्मार्गशीर्षे सकांचनं ।
कुलानां नरकस्थानां तिलसंख्यासमुद्धरेत् ॥

मार्गशीर्ष के महीने में सोना समेत जो तिलपात्र दान करते हैं वे लोग जितने तिलदान करते हैं उतने कुलों का उद्धार करते हैं ।

पुनः यथा—

स्वशक्त्याघृतपात्रं तु सहिरण्यं प्रदापयेत् ।
यमलोकस्य पंथानं स्वप्नेऽपि न स पश्यति ॥

जो लोग अपनी शक्ति के अनुसार सोना समेत घी का पात्र दान करते हैं वे लोग सपने में भी नरक का रास्ता नहीं देखते । इत्यादि ।

अगहन के महीने में कपड़ा और जूता दान करने का बड़ा पुण्य है और अगहन महीने में तुलसी के सामने ब्राह्मण को खीर खिलाने का महाफल है ।

यथा—

तुलसीसन्निधौविप्रान् भोजयेद्यस्तुपायसैः ।
एकेतुभोजितेमार्गे कोटिर्भवतिभोजिता ॥

अगहन के महीने में तुलसी के सन्निधान जो लोग एक ब्राह्मण को खीर खिलाते हैं वे लोग कोटि ब्राह्मण भोजन का फल पाते हैं ।

और भी अगहन में पूजा की सामग्री और शालिग्राम दान करने की आज्ञा है ।

यथा—

कुंकुमंह्यगरूंचैवचंदनं गुग्गुलं तथा ।
पूजाद्रव्यं तथा चान्यं मार्गशीर्षेप्रयच्छति ॥

अगहन बदी तीज को स्त्रियों को सौभाग्य सुंदरी का व्रत सौभाग्य का देनेवाला है। इसकी विशेष विधि व्रतार्क आदि ग्रंथों में लिखी है। इत्यादि।

मार्गशीर्ष कृष्णा ११ को उत्पन्ना एकादशी का व्रत है। मत्स्यपुराण में इसकी कथा है। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा है और श्रीकृष्ण ने आज्ञा किया है कि इस एकादशी को एकादशी का जन्म है और यह बड़ी पुनीत एकादशी है।

इत्यादि मात्स्ये उत्पन्नाव्रतं।

इसी अगहन बदी ११ को वैतरणी व्रत होता है। इसमें गोपूजन और गोदान करना चाहिए। यह कथा भविष्योत्तर पुराण की हेमाद्रि ग्रंथ में लिखी है। राजा युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से पूछा है। उन्होंने उसका विधान और फल कहा है।

एकादशी तिथिः कृष्णामार्गशीर्षगतान्नृप।
तामासाद्यनरः सम्यग्गृह्णीयान्नियमं शुचिः॥
एकादशी तिथिः कृष्णानाम्ना वैतरणी शुभा।
साव्रतेनसदाकार्य्या नक्तावाचोपवासिनी॥
मध्यान्हेतुनरः स्नात्वा नित्यनिर्वर्तित क्रियाः।
रात्रौ सुरभिमानीय कृष्णमेर्चेद्यथाविधि॥

इत्यादि भविष्योत्तरे वैतरणीव्रतं

इसी एकादशी को कृष्णा एकादशी का व्रत होता है। यह व्रत वाराह पुराण में पृथ्वी ने श्री वाराह जी से पूछा है सो आपने आज्ञा किया है कि इस कृष्णा एकादशी को व्रत करना और तिलपात्र दान करना।

समस्तपातकहरं स्वर्गदंसर्व्वकामदं।
न समं कृष्णद्वादश्या किञ्चिदस्तिपरं भुवि॥
मार्गशीर्षे कृष्णपक्षे दशम्यामेकभुक्नरः।
एकादश्यामुपवसेत् कृष्णस्यार्चां समाचरेत्॥
स्नात्वाच कृष्णैस्तु तिलैः प्रभाते दद्याच्चसम्यक् तिलयुक्त पात्रं।
नमोस्तुकृष्णाय पितुश्चमातुः हत्वात्वघं प्रापयतोस्वगत्यै॥

इत्यादि वाराह पुराणे कृष्णाव्रतं।

माघ स्नान का समय ठीक सूर्य उदय होने के पीछे परंतु किसी का मत है कि अरुणोदय में नहाना। जो सारा माघ न नहाया जाय सकै तो तीन दिन नहाना। मकर संक्रांति, रथसप्तमी और माघी पूनम ये तीन दिन। वा माघ बदी तेरस, चौदस, अमावस। वा माघ सुदी दसमी, एकादशी, द्वादशी वा संक्रांति के पीछे तीन दिन। पर मुख्य तीन दिन तेरस से अमावस तक ही है। माघ नहाकर उसी समय आग नहीं तापना। तिल में मीठा मिलाकर दान करना और उसी का होम करना, तिल से तर्पण करना, तिल देना और तिल खाना। अमला, तेल, लकड़ी, कम्मल, एक रत्ती सोना और कपड़े तथा जूतों के जोड़े ब्राह्मणों को देना। जब माघ स्नान समाप्त हो उस दिन घी तिल मीठा का होम कर इस मंत्र से सूर्य्य की प्रार्थना करनी।

दिवाकर जगन्नाथ प्रभाकर नमोस्तुते।
परिपूर्णं कुरुष्वेह माघस्नानमपुः पते॥

माघ में मकर संक्रांति में स्नान करके वस्त्र और तिल धेनु दान करना। माघ की अमावस्या को मौन स्नान करना। इस दिन जो सोमबार वा मंगल हो तो पुण्य विशेष है। अमावस्या यदि रविवार को हो और उस दिन श्रवण वा अश्विनी वा धनिष्ठा वा आर्द्रा वा अश्लेषा वा मृगशिरा नक्षत्र हो तो भी बड़ा फल है। माघ बदी ४ को गणेशपूजन। माघ बदी १४ को यम तर्पण करना। माघ सुदी ४ को ढुंढिराज का व्रत और पूजन करना। माघ सुदी ५ श्री पंचमी है, इस दिन कुंद के फूल से लक्ष्मी की पूजा करनी और नए अंकुर तथा नई बौर से कामदेव की पूजा करनी। माघ सुदी ७ रथसप्तमी है। इसमें अरुणोदय में स्नान का बड़ा पुण्य है। ऊख से जल हिलाकर धतूरे के सात पत्ते सिर पर रखकर इन मंत्रों से नहाना।

यद्यज्जन्मकृतं पापं मया जन्मसुसप्तसु।
तन्मेरोगंचशोकंच माकरी हन्तु सप्तमी॥ १॥
एतज्जन्मकृतं पापम् यच्चजन्मांतरार्ज्जितम्।
मनोवाक्कायजं यच्च ज्ञाताज्ञातेच येपुनः॥ २॥
इतिसप्तविधंपापम् स्नानान्मे सप्त सप्तिके।
सप्तव्याधि समायुक्तम् हर माकरिसप्तमि॥ ३॥

यथा—

मार्गशीर्षेतुयाशुक्ला सप्तमी भानुसंयुता।
कर्तव्यासा प्रयत्नेन सूर्य्यपर्व शताधिका॥
तस्यांदत्तंहुतंजप्तं तपस्तप्तं कृतंचयत्।
अक्षयंतद्विजानीयाद्यमुनायांन संशयः॥

इत्यादि स्कांदे सूर्य सप्तमी

अगहन सुदी ११ मोक्षा एकादशी, हेमाद्रि ग्रंथ में भविष्योत्तर का वाक्य लिखा है। इसमें जागरण और दीपदान का फल विशेष है।

इत्यादि मोक्षाव्रतं

अगहन सुदी १२ को मत्स्य पूजा करना। इस दिन मत्स्य भगवान का उत्सव है। यह बात स्कन्दपुराण के एकादशी माहात्म्य में लिखी है।

यथा—

ततः प्रभात समये कार्य्यं मत्स्योत्सवंबुधैः। इत्यादि।

अगहन सुदी १४ को पिशाच मोचन तीर्थ पर श्राद्ध करना, यह त्रिस्थलीसेतु में लिखा है। इसमें श्राद्ध से पित्रों का मोक्ष होता है।

इत्यादि निर्णयसिन्धौ पिशाचमोचने श्राद्धं।

अगहन सुदी १५ को दत्तात्रेय का जन्म है, यह बात स्कंदपुराण के सह्याद्रि माहात्म्य में लिखी है। इससे दत्तात्रेय की पूजा और उनका दर्शन करना।

यथा—

मार्गशीर्षे तथा मासिदशमेह्निसुनिर्मले।
मार्गशीर्षे पौर्णमास्यां मृगशीर्षयुते बुधे॥
जनयामास देदीप्यमानं पुत्रं सती शुभं।
तन्विष्णुमागतं दृष्ट्वा अत्रिर्नामाकरोत्सवं॥
दत्तवान्स्वस्य पुत्रस्यदत्तात्रेयमितीश्वरम्।

इत्यादि स्कांदे दत्तात्रेयजन्मोत्सवः।

बड़ा पुण्य है। जो मेष के शनैश्चर और गुरु चंद्रमा सिंह के और सूर्य श्रवण नक्षत्र में हो तो महामाघी होती है। इति

प्रानपियारे प्रेमनिधि, प्रेमिन-जीवन-प्रान।
तिनके पद अरपन कियो, माघ नहान विधान॥

द्वादश्यां पुराण निषेधः।

पाद्मे सप्ताह-माहात्म्ये कुमार-नारद-सम्वादः

नित्यायाश्च कथायान्तु पुराणानाम्मुनीश्वरं।
द्वादशीम्वर्जयेत् प्राज्ञस्सूत सूतक संभवात्॥ १॥
श्रीमद्भागवतस्यापि सप्ताहे नैत्यिकेपिच।
न निषेधोस्ति देवर्षे प्राहुरेवम्पुराविदः॥ २॥
श्री भागवत सप्ताहो महायज्ञः स्मृतोबुधैः।
आषाढ़ शुक्लद्वादश्याम्पारणाहनिपार्वति॥ ३॥
पूर्वार्द्ध यामवेलायाम्भावित्वात्कृष्णमायया।
मुग्धोदर्भकरो रामश्चाहरल्लोमहर्षमिति॥

पौराणिकैर्ज्ञेयम्।

मार्गशीर्ष महिमा

—(*)—

चतुर्वर्ग, मोक्षादिक पाने का बहुत सहज उपाय।

हम लोग माघ वैशाख कार्तिकादि नहाने को अति पवित्र जानकर स्नान दानादिक करते हैं परंतु हम लोग नहीं जानते कि एक महीना इन सभों में महा पुनीत और थोड़े साधन में बहुत फल का देनेवाला बच गया है और उसमें हम लोग कुछ स्नानदानादिक नहीं करते और जिसके प्रसिद्धि के वास्ते हम बड़े आनंद से यह इश्तिहार देते हैं।

वह गोप्यमास जिसका माहात्म्य सब शास्त्रों में बड़े आदर से कहा है वह मार्गशीर्ष अर्थात् अगहन का महीना है, जिसका गुन गान करने से महात्मा लोग तृप्त नहीं होते और यह महीना सब महीनों का राजा और भगवान का स्वरूप है।

मासानाम्मार्गशीर्षोऽहं। श्रा कुमारिका गनों ने इसी के स्नान से श्रीकृष्ण को पाया था और स्कंद पुराण में इसकी बड़ी स्तुति लिखी है। यथा स्कांदे ब्रह्माप्रति भगवद्वाक्यम्।

> सर्वयज्ञेषु यत्पुण्यं सर्वतीर्थेषुयत्फलं।
> सहसाप्नोतितत्सर्व्वं मार्गशीर्षे कृते सुत ॥१॥
> यज्ञाध्ययनदानाद्यैस्सर्वतीर्थावगाहनैः।
> सन्यासेन च योगेन नाहम्वश्योभवामिच ॥२॥

यह श्री भगवान ने श्रीमत् भागवत और श्री भगवत् गीता में श्री मुख से आज्ञा किया है कि सब महीने में अगहन हमारा स्वरूप है। और स्कंदपुराण में भी ब्रह्मा से श्री भगवान फिर आज्ञा करते हैं। यथा—

> स्नानेन दानेनच पूजनेन होमे विधाने तपश्रादितश्च।
> वश्यो यथामार्गशिरेस्वमासि तथा न चान्येषुहिगर्भमुक्त ॥३॥
> माघाच्छतगुणं पुण्यं वैशाखे मासि लभ्यते।
> तस्मात् सहस्रगुणितं तुलासंस्थे दिवाकरे ॥४॥

करने जाते हैं, उनके पाप भाग जाते हैं। अगहन की पुनवासी को सब दान अक्षय होते हैं। और भाग्य से यह पुनवासी में जो श्री गंगा स्नान बन जाय तो सैकड़ों करोड़ पुनवासी का फल मिले। जो अगहन में कदम्ब की पूजा करते हैं उनके सब काम सिद्ध होते हैं। जो लोग कदंब के जड़ की मिट्टी का तिलक करते हैं, उनको सब तीर्थ स्नान का फल मिलता है।

सब दिन स्नान न बनै तो पीछे के पाँच दिन हरिपंचक में अवश्य स्नान करै। यथा पाद्मे स्कंदे च।

> हरिपंचक विख्यातं सर्व्वलोकेषु सिद्धिदम्।
> नारीणां च नरादीनां सर्व्वदुःख निबर्हणम्॥

इस अगहन के महीने में आप लोगों से जो कुछ बनै स्नान दानादिक कीजिए।
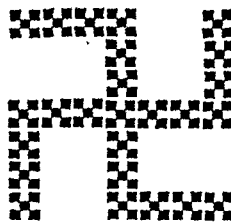
करके आया हूँ, जो आज्ञा हो वह कथा आप लोगों को सुनाऊँ। ऋषियों ने कहा सहज उपाय से भगवत्-प्राप्ति का जो साधन हो वह कहिए। सूतजी बोले—एक दिन भगवान नारद जी चारों ओर घूमते हुए बद्रिकाश्रम में भगवान नारायण के पास गए और यही प्रश्न किया कि भगवन् कलियुग के जीवों को स्वल्प साधन में भगवान की प्राप्ति का उपाय कहिए। यह सुनकर भगवान नारायण ने पुरुषोत्तम मास का माहात्म्य कहा। पांडवों को वन में अत्यंत क्लेशित देखकर उनका दुःख से छूटने के हेतु भगवान श्री कृष्णचंद्र ने पुरुषोत्तम माहात्म्य सुनाया। सब मासों के एक एक देवता नियत हैं, इससे जब पहले मलमास पड़ा तब उसका कोई देवता नहीं था और इस कारण लोग उसकी निन्दा करते थे। मलमास इस बात से अत्यंत दुःखी होकर भगवान के पास गया और भगवान वैकुंठनाथ उसको लेकर गोलोक में गए। पूर्ण पर-ब्रह्म सच्चिदानन्द घन भगवान श्री कृष्णचंद्र मलमास का दुःख सुनकर बोले, मैं पुरुषोत्तम तेरा स्वामी हूँ अतएव तेरा नाम आज से पुरुषोत्तम मास होगा और सब मासों से तेरा फल विशेष होगा। जो साधन लोग कार्तिकादि पुण्य मासों से अनेक वर्ष में भी करके फल न पावेंगे, वह पुरुषोत्तम मास में थोड़े साधन में फल पावेंगे।

भगवान श्री कृष्ण धर्मराज जी से कहते हैं कि पूर्व जन्म में जब द्रौपदी मेधावी ऋषि की कन्या थी तब दुर्वासा ऋषि ने इसे पुरुषोत्तम मास का व्रत करने को कहा था परंतु स्त्री-बुद्धि से इसने पुरुषोत्तम मास का अनादर किया और शिवजी का व्रत करके पाँच बेर पति माँगकर तुम पाँचों को पति पाया, परंतु पुरुषोत्तम के अनादर से बारहवर्ष की विपत्ति भोगनी पड़ी। सो तीन महीने पीछे पुरुषोत्तम मास आनेवाला है, सो इसमें तुम लोग अवश्य व्रत करना।

भगवान श्रीकृष्णचंद्र की आज्ञानुसार पांडवों ने पुरुषोत्तम मास का व्रत किया और विपत्ति से छूटकर भगवान की कृपा से उत्तरोत्तर अनेक शुभ फल पाया।

नारद जी से भगवान नारायण बोले—पूर्व काल में सत्ययुग में हैहय देश का राजा दृढ़धन्वा था। पुष्करावर्त्त नगर उसकी राजधानी थी

माघस्नान-विधि

को राज-काज में मग्न देखकर आपके हित के हेतु सुग्गे के रूप में आपको चितावनी का शुभ वाक्य सुना गया।

वाल्मीकि जी से अपने पूर्व जन्म का चरित्र और पुरुषोत्तम का विचित्र माहात्म्य सुनकर सुधन्वा ने उनसे पुरुषोत्तम मास की विधि पूछी। ऋषि बोले—पुरुषोत्तम मास में ब्राह्म मुहूर्त्त में उठकर शौच करके और दंत धावन करके तीर्थ में स्नान करे फिर गोपी चंदन का ऊर्ध्व पुंड्र और शैव हो तो त्रिपुण्ड्र तिलक लगाकर भुजापर शंख चक्र का चिह्न लगाकर संध्या करे। फिर पवित्र स्थान में चावल का अष्ट दल बनाकर उस पर सोने चाँदी तामे पीतल वा मिट्टी का कलश रक्खे, कलश में इन मंत्रों से जल भरे—

कलशस्य मुखे विष्णुः कंठे रुद्रः समास्थितः।
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः॥
कुक्षौतु सागरः सर्व्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदस्सामवेदो ह्यथर्वणः।
अङ्गैस्तु सहिताः सर्वे कलशं हि समाश्रिताः॥
गंगा गोदावरी चैव कावेरी च सरस्वती।
आयान्तु मम शांत्यर्थम् दुरितक्षयकारकाः॥

इस मंत्र से कलश की प्रतिष्ठा करके, कलश का पूजन करके एक तंदुल पूर्णपात्र कलश के ऊपर रक्खे। उस पर पीला कपड़ा बिछा कर श्री राधिका सहित भगवान की सोने की मूर्त्ति स्थापन करके पुरुषोत्तम बीज और नीचे लिखे हुए मंत्रों से प्राणप्रतिष्ठा करे।

ॐ तद्विश्रीः परमम्पदं सदा पश्यन्ति सूरयः दिवीव चक्षुराततं स्वाहा

ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु अस्यै देवत्व संख्यायै स्वाहा

जो वेद मंत्र का अधिकार न हो तो श्री राधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः स्वाहा—इस मंत्र से प्राणप्रतिष्ठा करके नीचे लिखी हुई विधि से पूजा करे।

माघ स्नान विधि

—:o:—
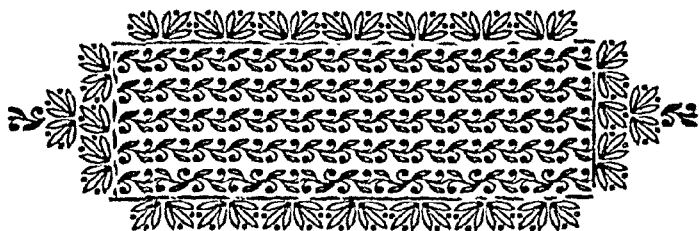
भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥१॥

माघ-स्नान पूस सुदी एकादशी वा पूनम से प्रारंभ करके माघ सुदी द्वादशी वा पूनम को समाप्त करना चाहिए। माघ में मूली नहीं खानी। नहाने की विधि के अनुसार स्नान करना।

माघ स्नान के मंत्र

दुःख दारिद्रय नाशाय श्री विष्णोस्तोषणाय च।
प्रातः स्नान करोम्यद्य माघे पापविनाशनम् ॥२॥
मकरस्थे रवौ माघे गोविन्दाच्युत माधव।
स्नानेनानेन मे देव यथोक्तफलदो भव ॥३॥

सूर्य को अर्घ देने का मंत्र

सवित्रे प्रसवित्रेच परन्धाम जले मम।
स्वत्तेजसा परिभ्रष्टं पापं यातु सहस्रधा ॥

पीतांबर युगं देवसर्वकामार्थसिद्धये ।
मया निवेदितं भक्त्या गृहाण सुरसत्तम ॥ १० ॥

इति वस्त्रं आचमनञ्च

दामोदर नमस्तेस्तु त्राहि मां भवसागरात् ।
ब्रह्मसूत्रं सोत्तरीयं गृहाण पुरुषोत्तम ॥ ११ ॥

उपवीतं आचमनं

श्रीखण्ड चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरं ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यतां ॥ १२ ॥

चन्दनं

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण पुरुषोत्तम ॥ १३ ॥

इत्यक्षतान्

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मया हृतानि पूजार्थं पुष्पाणि प्रतिगृह्यतां ॥ १४ ॥

इति पुष्पाणि । ततोङ्ग पूजा

नन्दात्मजो यशोदायास्तनयः केशिसूदनः ।
भूभारोत्तारकश्चैवह्यनन्तो विष्णुरूपधृक् ॥ १५ ॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च श्रीकंठः सकलाक्ष हृक् ।
वाचस्पतिः केशवश्च सर्वात्मेति च नामतः ॥ १६ ॥
पादौ गुल्फौ तथा जानू जघने च कटी तथा ।
मेढ्रं नाभिं च हृदयं कंठे वाहु मुखं तथा ॥ १७ ॥
नेत्रे शिरश्च सर्वाङ्गं विश्वरूपिणमर्चयेत् ।
पुष्पाण्यादायक्रमशश्चतुर्थ्यंतैर्जगत्पतिं ॥ १८ ॥
प्रत्यंग पूजां कृत्वातु पुनश्च केशवादिभिः ।
चतुर्विंशति मंत्रैश्च चतुर्थ्यंतैश्च नामभिः ॥ १९ ॥
पुष्पमादाय प्रत्येकं पूजयेत् पुरुषोत्तमं ॥ २० ॥
वनस्पति रसो दिव्यो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्व देवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यतां ॥ २१ ॥

इति धूपं

स्नान के समय कुसुम मिला पत्तो का दिया सिर पर ऊँचा करके मंत्र से जल में सूर्य को दे।

> नमस्ते रुद्ररूपाय रसानाम्पतये नमः ।
> वरुणाय नमस्तेस्तु हरिवास नमोस्तुते ॥ ४ ॥

चंदनसे अष्टदल लिखकर बीचमें प्रणव सहित शिव पार्वती लिखकर क्रम से इन नामों स कमल के पत्तां पर सूरज का पूजा करें। रवयेनमः, भानवेनमः, विवस्वतेनमः, भास्करायनमः, सवित्रेनमः, अर्कायनमः, सहस्रकिरणायनमः। साने के सूर्य तिल पात्र में रख कर ब्राह्मण को दे और इस मंत्र स सूर्य अर्घ्य दे।

> सप्त सप्तिवहप्रीत सप्तलोकप्रदीपन ।
> सप्तमी सहितो देव गृहाणार्घ्यं दिवाकर ॥ ५ ॥
> जननी सर्वलोकानां सप्तमीसप्त सप्तिके।
> सप्तव्याहृतिकेदेव नमस्ते सूर्यमंडले ॥ ६ ॥

सोने का कनफूल वा सोने का दिया और सोने का न हो सके तो तिल के आटे का बनाकर तामे के पात्र में तिल गुड़ घी समेत लाल कपड़े में समेट कर इस मत्र से दान करे।

> आदित्यस्य प्रसादेन प्रातः स्नान फलेनच ।
> दुष्टदौर्भाग्यदुःखघ्नं मयादत्तां तुतालकम् ॥ ७ ॥

यही सप्तमी मन्वादि भी है। इसी सप्तमी को रथ दानका बड़ा फल है। माघ सुदी अष्टमी का तिल लेकर भीष्म तर्पण करना। मंत्र—

> भीष्मः शान्तनवो वीरस्सत्यवादी जितेन्द्रियः ।
> आभिरद्भिरवाप्नोतु पुत्र पौत्रोचितांक्रियाम् ॥ ८ ॥
> वैयाघ्रपद गोत्राय सांकृत्यप्रवराय च ।
> अपुत्राय ददाम्येतज्जलम्भीष्मायवर्म्मणे ॥ ९ ॥
> वसूनामवताराय शन्तनोरात्मजायच ।
> अर्घ्यं ददामि भीष्माय आबालब्रह्मचारिणे ॥ १० ॥

यह तर्पण जिसका पिता जीता हो वह भी अपसव्य से करे। माघ सुदी द्वादशी का नाम भीम द्वादशी है। माघ की पूनम को स्नान का

यज्ञेश्वराय देवाय तथा यज्ञोद्भवाय च ।
यज्ञानांपतयेनाथ गोविन्दाय नमोनमः ॥ ३१ ॥
इति मंत्र पुष्पम्

विश्वेश्वराय विश्वाय तथा विशवोद्भवाय च ।
विश्वस्यपतये तुभ्यं गोविन्दाय नमोनमः ॥ ३२ ॥
इति नमस्कारान्

मंत्रहीनेति मन्त्रेण क्षमाप्य पुरुषोत्तमम् ।
स्वाहांतैर्नाम मंत्रैश्च तिल होमो दिनेदिने ॥ ३३ ॥
इति

पूजन करके हविष्यान्न भोजन करे। मांस, मद्य और मादक वस्तु, द्विदल, तैल पक्व बड़ी, उरद, मसूर इत्यादि वस्तु न खाय। भाव-दुष्ट, क्रिया-दुष्ट और शब्द-दुष्ट वस्तु का वर्जन करे। पराये का द्रोह, अन्न, स्त्री और धन से दूर रहे। बिना तीर्थ परदेश न जाय, निंदा न करे, जंभीरी नीबू, बासी अन्न, ब्राह्मण का बेचा हुआ रस, भूमि से उत्पन्न लवण, ताम्रपात्र में रक्खा हुआ गव्य, चमड़े के बर्तन का जल, ये सब मांस के तुल्य हैं। रजस्वला, म्लेच्छ, पतित, व्रात्य और देव-ब्राह्मण-द्रोही से पुरुषोत्तम में संबंध न रक्खे। इनका और कौवे का, सूतकवाले का छूआ हुआ अन्न और दो बेर पकाया हुआ तथा जला हुआ अन्न न खाय। प्याज, लहसुन, मोथा, छत्रांक, गाजर, मूली, सिंगरी इत्यादि भी न खाय। प्रतिपदा से पूर्णिमा तक कूषमांड आदिक का वर्जन करे और जो वस्तु छोड़ै वह वस्तु ब्राह्मण को दान दे। केवल दूध पीकर वा घी पीकर फलाहार करके वा अयाचित खाकर उपवास, एक नक्त वा नक्त व्रत जो बन पड़े और बिना कष्ट निबहै वह करे। शालिग्राम का पूजन करै, श्रीमद्भागवत सुने और सायंकाल को दीपदान करे।

राजा दृढ़धन्वा ने वाल्मीकि ऋषि से दीपदान का माहात्म्य पूछा, इस पर वाल्मीकि जी ने कहा—प्राचीन काल में सौभाग्य नगर में एक चित्रभानु नाम राजा था और चद्रकला नामक उसकी रानी थी। यह राजा धन धान्य सब प्रकार से सुखी था। एक दिन इसके यहाँ अगस्त ऋषि आये और राजा ने अपने पूर्व जन्म का वृत्तांत पूछा। मुनि ने

बृहन्नारदीय पुराण से संगृहीत

पुरुषोत्तममास-विधान

'तत्कर्म हरितोषं यत् सा विद्या तन्मतिर्यया'

सं० १९३०

फिर क्षण भर भगवान का ध्यान करना—

अन्तर्ज्योतिरनन्तरत्नरचिते सिंहासने संस्थितम्।
वंशीनादविमोहितं व्रजवधू वृंदावने सुन्दरम्॥
ध्यायेद्राधिकया सकौस्तुभमणि प्रद्योतितोरस्थलम्।
राजद्रत्नकिरीटकुण्डलधरं प्रत्यग्र पीताम्बरम्॥

फिर पुष्पांजलि देना और प्रणाम करना। मंत्र—

नौमि नव्यघनश्यामं पीतवाससमच्युतम्।
श्रीवत्सभासितोरस्कं राधिकासहितं हरिम्॥

फिर ब्रह्मा को पूर्णपात्र दान करके गोदान करना और घृतपात्र, तिलपात्र, उमा महेश्वर, सोहागपिटारी, वस्त्र, पद इत्यादि दान करना और जो श्रीमद्भागवत् करे तो बड़ा ही पुण्य है। पुरुषोत्तम मास में श्री भागवत दान की समता अन्य दान नहीं कर सकते।

और तीस कांसे की थाली में तीस तीस पूआ रखकर ब्राह्मणों को दान देना। और भी अन्न दानादि जो बन पड़े वह देना। अमावस्या की रात को जागरण करके सबेरे पूजा पीठ और सोने की मूर्त्ति दान देना। मंत्र—

श्रीकृष्ण जगदाधार जगदानन्ददायक।
ऐहिकामुष्मिकान्कामान् निखिलान् पूरयाशु मे॥ १॥
मंत्रहीनम् क्रियाहीनम् विधिहीनम् जनार्दन।
वृतं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादाद्दयानिधे॥ २॥

फिर जो वस्तु का त्याग किया हो, उसका यथाक्रम दान करना। यथा—नक्त व्रत में भोजन, अयाचित में स्वर्णदान, धात्री स्नान में दधि, फल न खाया होय तो फल, तेल छोड़ा होय तो घी, घी छोड़ा होय तो दूध, अन्न छोड़ा होय तो अन्न, भूमि-शयन लिया होय तो सेज, पत्र भोजन किया होय तो घी-चींनी, मौन लिया होय तो घण्टा, तिल और सोना। क्षौर न बनवाया हो तो दर्पण, जूता छोड़ा होय तो जूता, नमक छोड़ा होय तो घी, गुड़, तेल और नमक, दीपदान का नेम लिया होय तो ताँबे का दिया और सोने की बत्ती और एकान्तर उपवास किया होय तो वस्त्र सहित आठ कुंभ दान करे। पुरुषोत्तम मास में एक अन्न भोजन करने का बड़ा पुण्य है।
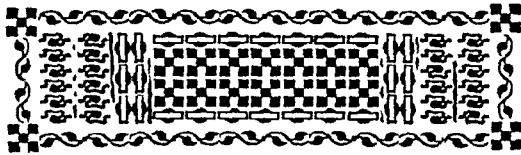
पुरुषोत्तममास विधान

—※—

मृगमद मुद्रित चारु कपोलम् । मृगमद मोचन लोचन लोलम् ॥
मृगमद मेचक सुन्दर रूपम् । नौमि हरिं वृन्दावन भूपम् ॥१॥

दोहा ।

श्री पुरुषोत्तम-राधिका, चरण-शरण रहु आय ।
कटि जैहैं भवभोग भय, रोग कुसोग बलाय ॥ १ ॥
जिन पुरुषोत्तम नाम सुभ, सहस कहे रचि गाय ।
सो पुरुषोत्तम वदन बपु, वल्लभ होहु सहाय ॥ २ ॥
पुरुषोत्तम-पद जुग सुमिरि, धरि हिय परम अनंद ।
पुरुषोत्तम की विधि लिखी, पुरुषाधम हरिचंद ॥ ३ ॥

एक समय अनेक देवर्षि राजर्षि शिष्य प्रशिष्य समेत लोकोपकार-शील स्वयम् तीर्थरूप तीर्थपाद चरणारविन्द मधुव्रत तीर्थ यात्रा के मिस नैमिषक्षेत्र में एकत्र हुए और वहाँ महाभागवत सूत पौराणिक भी आए। सूतजी से ऋषियों ने इस असार संसार के पार जाने का उपाय और श्रीकृष्ण की लीला का प्रश्न किया। सूतजी बोले मैं अनेक तीर्थों में भ्रमण करता हुआ श्रीगंगाजी के किनारे भगवान श्री शुकदेव जी के मुखारविंद से श्री मद्भागवत रूपी मधुर सुधारस का पान

और विदर्भ नगर के राजा की कन्या गुणसुंदरी उसकी रानी थी। चारुमती कन्या और चित्रवाक्, चित्रबाहु, मणिमान् और चित्रकुंडल यह चार पुत्र थे। इस राजा का पुण्य प्रताप ऐश्वर्य सब महान् अखंडित था। एक दिन राजा को अकस्मात् चिंता हुई कि किस पुण्य से हमको ऐसा अखंड ऐश्वर्य मिला। इसी चिंता में राजा शिकार खेलता हुआ एक मृग के पीछे गहन वन में घुस गया और एक वृक्ष के नीचे थककर विश्राम करने लगा, तो वहाँ एक सुग्गे को यह पढ़ते हुए सुना—

पाय जगत मे सकल सुख, करत न तत्व विचार।

असत विषय भूल्यो फिरत, किमि लहिहै भव पार॥ ३ ॥

सुग्गे को मनुष्य की बोली बोलते और परम तत्त्व के पूर्वोक्त वाक्य को पढ़ते सुनकर राजा को अत्यंत आश्चर्य और मोह हुआ। यहाँ तक कि घर आकर काम काज छोड़कर रात दिन उसी सुग्गे का वाक्य सोचने लगा। एक दिन भगवान वाल्मीकि इस राजा के घर पर आए और राजा ने बड़ी नम्रता से सुग्गे के वाक्य का आशय पूछा। वाल्मीकि जी ध्यान करके बोले—पूर्व जन्म में आप ताम्रपर्णी के निकट सुदेव नामक ब्राह्मण थे। अपनी स्त्री गौतमी सहित पुत्र के हेतु आपने भगवान की बड़ी तपस्या किया। यद्यपि सुदेव के सात जन्म में भी पुत्र नहीं लिखा था तथापि भगवान के वाक्य से गरुड़जी ने सुदेव को पुत्र का वरदान दिया। सुदेव ने शुकदेव नामक सर्वगुण संपन्न पुत्र पाया परंतु देवल ऋषि के कहे हुए फल के अनुसार बारह वर्ष की अवस्था में वह बावली में डूब कर मर गया। सुदेव पुत्र-शोक से अत्यंत व्याकुल होकर रोने लगा और यहाँ तक कि संयोग से उस समय आया हुआ पुरुषोत्तम मास उसने बिना अन्न जल के बिता दिया। इस व्रत से भगवान प्रसन्न होकर प्रगट हुए और कहा कि तुमने हठ करके पुत्र का वरदान लिया था, इससे धनुश्शर्मा ब्राह्मण की भाँति अंत में दुख पाया। अब तुम्हारा पुत्र जी जायगा और तुम बारह हजार वर्ष पुत्र सहित इस शरीर में रहकर अंत मे सुधन्वा नामक राजा होगे और चार पुत्र, एक कन्या और राज्य का अखंड ऐश्वर्य पाओगे। सो उसी पुण्य से आपने यह राज्य और ऐश्वर्य पाया है।

वह सुग्गा आपका पूर्व जन्म का शुकदेव नामक पुत्र था, जो आप

हरिश्चंद्र मैगजीन खं० १ पृ० ५-८,
३०-२, ८३-४ तथा ९८-१०२ पर
सन् १८७४ ई० में मूल तथा
अर्थ सहित छपा ।

आगच्छ देवे देवेश श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम ।
राधया सहितश्चात्र गृहाण पूजनं मम ॥ २ ॥

श्रीराधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः आवाहनं समर्पयामि इत्यावाहनं ।

नाना रत्नसमायुक्तं कार्तस्वरविभूषितं ।
आसनं देव देवेश गृहाण पुरुषोत्तम ॥ २ ॥

श्री राधा० आसनं०

गंगादि सर्व तीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाहृतं ।
तोयमेतत्सुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ३ ॥

इति पाद्यं

नंदगोपगृहेजातो गोपिकानन्दहेतवे ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे ॥ ४ ॥

इत्यर्घ्यं

गंगाजलं समानीतं सुवर्णकलशस्थितं ।
आचम्यतां हृषीकेश पुराणपुरुषोत्तम ॥ ५ ॥

इत्याचमनं

कार्य्यं मे सिद्धिमायातु पूजिते त्वयिधातरि ।
पञ्चामृतैर्मया नीतै राधिकासहितो हरे ॥ ६ ॥

इति स्नानं

पयोदधिघृतं गव्यं माक्षिकं शर्करा तथा ।
गृहाणेमानि द्रव्याणि राधिकानन्ददायक ॥ ७ ॥

इति पंचामृत स्नानं

योगेश्वराय देवाय गोवर्द्धनधराय च ।
यज्ञानांपतये नाथ गोविन्दाय नमोनमः ॥ ८ ॥

गंगाजल :समम् शीतं नन्दितीर्थसमुद्भवं ।
स्नानं दत्तं मया कृष्ण गृह्यतां नन्दनन्दन ॥ ९ ॥

इति पुनः स्नानं

त्वं ज्योति सर्वदेवानां तेजसां तेज उत्तमं ।
आत्म ज्योतिः परंधाम दीपोयं प्रतिगृह्यतां ॥ २२ ॥
इति दीपं

नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्ति मे ह्यचलां कुरु ।
ईप्सित मे वरं देहि परत्र च परांगति ॥ २३ ॥
इति नैवेद्य

मध्ये पानीयं उत्तरापोशनं ।
गंगाजलं समानीतं सुवर्णकलशस्थित ।
आचम्यतां हृषीकेश त्रैलोक्यव्याधिनाशन ॥ २४ ॥
इत्याचमनं

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥ २५ ॥
इति श्रीफलं

गंध कर्पूर संयुक्तं कस्तूर्यादि सुवासितं ।
करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर ॥ २६ ॥
इति करोद्वर्तन

पूगीफल समायुक्तं सकर्पूरं मनोहरं ।
भक्त्या दत्तं मया देव तांबूलं प्रतिगृह्यतां ॥ २७ ॥
इति तांबूलं

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ।
अनन्त पुण्यफलद मतः शांति प्रयच्छमे ॥ २८ ॥
इति दक्षिणां

शारदेंदीवरश्यामं त्रिभङ्गललिताकृतिं ।
नीराजयामि देवेशं राधया सहितं हरिं ॥ २९ ॥
इति नीराजनम्

रक्षरक्ष जगन्नाथ रक्ष त्रैलोक्यनायक ।
भक्तानुग्रहकर्त्ता त्वं गृहाणस्मत् प्रदक्षिणां ॥ ३० ॥
इति प्रदक्षिणां

सा परानुरक्तिरीश्वरे ॥ २ ॥

सो भक्ति ईश्वर में पूरे अनुराग को कहते हैं ॥ २ ॥ यहाँ परा शब्द कामनाओं की निवृत्ति के हेतु और अनुरक्ति शब्द हृदय के सच्चे प्रेम के अर्थ दिया है और ईश्वर शब्द माहात्म्य ज्ञान के हेतु है, जैसा श्रीगोपीजन को।

तत्संस्थस्यामृतत्वोपदेशात् ॥ ३ ॥

क्योंकि उसमें जो चित्त लगता है वह अमृत फल पाता है, यह महात्माओं ने कहा है ॥ ३ ॥

ज्ञानमितिचेन्न द्विषतोऽपि ज्ञानस्य तदसंस्थितेः ॥ ४ ॥

वह भक्ति ईश्वर विषयक ज्ञान मात्र है यह संदेह मत करो क्योंकि ज्ञान तो द्वेषियों को भी होता है पर उस ज्ञान से प्रीति नहीं होती ॥४॥ जैसे कोई किसी मनुष्य को जानता है कि वह अमुक है और उस को अमुक अधिकार है पर इतना जानने ही से उस मनुष्य की उस में प्रीति हो यह नियम नहीं।

तयोपक्षयाच्च ॥ ५ ॥

क्योंकि पूरी भक्ति से ज्ञान का क्षय होता है ॥ ५ ॥ जैसे श्रीगोपीजन को माहात्म्य-ज्ञान पूर्ण था तथापि प्रियतम, कितव इत्यादि नाम से भगवान को पुकारती थीं। अथवा भक्ति से ज्ञान अर्थात् मुक्ति वासना क्षय हो जाती है। जैसा आपने श्रीमुख से कहा है कि यद्यपि मैं चारों प्रकार की मुक्ति देता हूँ तथापि मेरे भक्त मेरी सेवा छोड़ कर नहीं लेते।

द्वेषप्रतिपक्षभावाद्रसशब्दाच्च रागः ॥ ६ ॥

द्वेष से प्रतिकूल होने से और रस शब्द प्रतिपाद्य होने से उस भक्ति का नाम अनुराग है ॥ ६ ॥ क्योंकि स्नेह और विरोध दो वस्तु अलग हैं। और भी किसी के द्वेषी से विरोध वही करेगा जिसका उसमें पूर्ण अनुराग होगा और ज्ञान में यह बात नहीं क्योंकि स्वरूपज्ञान द्वेषियों को भी होता ही है और रस परम आनंद रूप है। वह रस जिसको पाकर मनुष्य आनंदी होता है वह भक्ति स्वरूप ही है (इस कहने से पूजाविडंबन को उपेक्षा किया)। चकार से अश्रुपात, रोमांच और वाणीस्तंभादिक भक्ति का स्वरूप कहा।

कहा—तुम बड़े दुष्ट मणिग्रीव नाम शूद्र थे और यह रानी तुम्हारी पति-व्रता स्त्री थी। कुकर्म में सब धन खोकर शिकार खेलकर अपनी जीविका करते थे। एक दिन घोर वन में मार्ग भूले हुए उग्रदेव नामक थके ब्राह्मण की तुम लोगों ने बड़ी सेवा किया और उनसे अपना दुःख निवेदन किया। इससे प्रसन्न होकर ऋषि ने पुरुषोत्तम मास में दीपदान करने का उपदेश किया और मणिग्रीव ने वन में इंगुदी के तेल से दीप-दान किया, जिससे भगवान ने प्रसन्न होकर तुमको वरदान दिया और इस जन्म में तुमको सब सुख मिले।

दीपदान का माहात्म्य सुनकर दृढ़धन्वा ने पुरुषोत्तम के उद्यापन की विधि पूछा। वाल्मीकि जी ने उत्तर दिया कि कृष्णपक्ष की चतुर्दशी वा नौमी वा अष्टमी को उद्यापन करना। तीस सपत्नीक ब्राह्मण को न्यौता देना और पंचधान्य का सर्वतोभद्र बनाकर चारों दिशा में चार कलशों पर वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध का स्थापन करना। बीच में नित्य पूजित श्री राधिका सहित श्री पुरुषोत्तम का स्थापन करना। एक वैष्णव ब्राह्मण को आचार्य और चार ब्राह्मणों को जप की वरणी देकर चारों दिशा में दीपदान करके चतुर्व्यूह का जप करना और भग-वान की पूजा करना। पंचरत्न और फल से भगवान को भक्तिपूर्वक अर्घ्य देना।

अर्घ्य मंत्र—

देवदेव नमस्तुभ्यम्पुराणपुरुषोत्तम।
गृहाणार्घ्यम्मयादत्तं राधया सहितो हरे॥
वन्दे नवघनश्यामं द्विभुजं मुरलीधरम्।
पीताम्बरधरं देवं सराधं पुरुषोत्तमम्॥

फिर तिल से श्री राधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः स्वाहा इस मंत्र से होम करना और तर्पण मार्जन के पीछे भगवान का नीराजन करना।

मंत्र

नीराजयामि देवेशमिन्दीवरदलच्छविम्।
राधिकारमणंप्रेम्णा कोटिकन्दर्पसुन्दरम्॥

होता है तो पहिले ज्ञान को गौण करके भक्ति की मुख्यता वेद ने कही, इस से भक्ति ही परम साधन है।

दृष्टत्वाच्च ॥ १३ ॥

और ऐसा ही देखा भी जाता है ॥ १३ ॥ क्योंकि यदि किसी स्त्री पर कोई मनुष्य रीझकर प्रीत करैगा तो पहिले जब वह जानैगा कि यह स्त्री सुंदर है तब प्रीति करैगा। प्रीति करके न जानेगा अर्थात् जानने का फल प्रीति है, प्रीति का फल जानना नहीं है। इससे अनेक मत जो ईश्वर-विषयक ज्ञान मात्र ही को परम पुरुषार्थ कहते हैं, इसका निराकरण किया।

अतएव तदभावाद्बल्लवीनां ॥ १४ ॥

इसी से ब्रज के श्रीगोपीजनों का विज्ञान के विना भी मुक्ति पाना प्रत्यक्ष है ॥ १४ ॥ इस सूत्र से भक्ति की परम श्रेष्ठता दिखलाई क्योंकि श्रीगोपीजन को यद्यपि ब्रह्मविषयक कुछ भी ज्ञान न था तथापि जो गति केवल प्रेम से श्री गोपीजन को मिली सो किसी को न मिली।

भक्त्या जानातीति चेन्नाभिज्ञप्त्या साहाय्यात् ॥ १५ ॥

जो कहो भक्ति से ज्ञान होता है सो नहीं, क्योंकि ज्ञान तो भक्ति का सहायक है ॥ १५ ॥ क्योंकि जब मनुष्य को ईश्वर-विषयक माहात्म्यज्ञान होगा तभी भक्ति में प्रवृत्ति होगी।

प्रागुक्तंच ॥ १६ ॥

पहिले कहा भी है ॥ १६ ॥ अर्थात् श्री गीताजी में अठारहवें अध्याय के चौवन श्लोक में आप ने श्रीमुख से कहा है कि ब्रह्म भाव पाकर प्रसन्न आत्मा न कुछ सोचता है न कुछ कहता है, सब लोगों को समान दृष्टि से देखता हुआ मेरी भक्ति पाता है।

एतेन विकल्पोऽपि प्रत्युक्तः ॥ १७ ॥

इस से विकल्प भी निरस्त हुआ ॥ १७ ॥ अर्थात् ज्ञान के अंगत्व निर्णय में जो कुछ संदेह था वह ऊपर के भगवत् वाक्य से मिट गया और भक्ति का अंगित्व निश्चय हुआ।

देवभक्तिरितरस्मिन् साहचर्य्यात् ॥ १८ ॥

ईश्वर के अतिरिक्त देवताओं की भक्ति भी उस परा भक्ति के समान

वाल्मीकि जी से पूर्व जन्म का वृत्तांत और पुरुषोत्तम-माहात्म्य सुनकर राजा स्त्री सहित वन में जाकर तपस्या करके अंत में गोलोक में गया।

नारायण नारद जी से कहते हैं कि कंदर्प नामक ब्राह्मण बड़ा पापी था, जन्म भर में केवल एक वैश्य को पुरुषोत्तम की पूजा करते दर्शन किया था और कोई पुण्य नहीं किया था। इसी पाप से एक जन्म में प्रेत और दूसरे में वह बंदर हुआ परंतु पुरुषोत्तम के पूजा के पुण्य से इन्द्रनिर्मित मृगतीर्थ पर उसका निवास हुआ और किसी समय पुरुषोत्तम मास में एक बेर उसने दुःखित होकर तीन दिन तक कुछ न खाया, न पीया और उसी तीर्थ पर प्राण त्याग किया और पुरुषोत्तम के प्रभाव से अंत में गोलोक गया।

नारद जी के प्रश्न पर श्रीनारायण दिनचर्य्या कहते हैं।

प्रातःकाल की क्रिया समाप्त करके पंचभूत देव पितृ बलि देकर अतिथि को भोजन कराकर दो वस्त्र से अकेले एक पात्र में पूर्वा पर आचमन संयुक्त भोजन करना। भोजन के पीछे पान खाकर भगवान के ध्यानपूर्वक भक्तिशास्त्र का विचार करना। तीसरे पहर धर्माविरुद्ध व्यवहार करना। साँझ को तीर्थ पर देहशुद्धि पूर्वक संध्या करके दीपदान करके भगवान का स्मरण करके शयन करना।

इसके पीछे नारायण ने पतिव्रता के धर्म और पुरुषोत्तम की विशेष महिमा कहा। और विधान किया कि—मंत्र—

गोवर्धनधरम् वन्दे गोपालम् गोपरूपिणम्।
गोकुलोत्सवमीशानम् गोविन्दम् गोपिकाप्रियम्॥ १॥

इस मंत्र का पुरुषोत्तम मास में बारंबार जप करना।

दोहा—श्री पुरुषोत्तम पद सुमिरि, धारि हृदय आनन्द।
यह पुरुषोत्तम विधि लिखी, कविवर श्री हरिचंद॥ १॥
प्रेम पियारे प्रेमनिधि, प्रेमिन-जीवन-प्रान।
तिनके पद अरपन कियो, यह मलमास-विधान॥ २॥

इति श्री बृहन्नारदीय पुराण से संगृहीत पुरुषोत्तम माहात्म्य समाप्त हुआ।

नैव श्रद्धा तु साधारण्यात् ॥ २४ ॥

श्रद्धा ही भक्ति नहीं है क्योंकि उस को साधारणता है । २४ ॥ क्योंकि श्रद्धा कर्मादिकों में भी होती है ।

तस्यां तत्त्वे चानवस्थानात् ॥ २५ ॥

क्योंकि श्रद्धा से भक्ति तत्व की एकता करने से अनवस्था होती है ॥ २५ ॥ अर्थात् श्रद्धावान् भजन करता है, ऐसा लोग कहते हैं तो यदि श्रद्धा भक्ति एक ही होती तो अग भाव से प्रयोग न होता ।

ब्रह्मकांडं तु भक्तौतस्यानुज्ञानाय सामान्यात् ॥ २६ ॥

अतएव भक्ति प्रतिपादन के अर्थ उत्तरकांड की संज्ञा ब्रह्मकांड से ज्ञानकांड की सामान्यता है ॥ २६ ॥ अर्थात् जो ज्ञान की मुख्यता होती वो 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' यह न कहते । इस से कंठरव से ज्ञान की अपेक्षा भक्ति की उत्तमता सिद्ध किया । इति २ आ० इति १ अध्याय ॥

बुद्धिहेतुप्रवृत्तिराविशुद्धेरवघातवत् ॥ २७ ॥

बुद्धि के हेतुओं की प्रवृत्ति धान कूटने की भाँति विशुद्धि तक है ॥ २७ ॥ बुद्धि अर्थात् ब्रह्म-साक्षात्कार यद्यपि कृत्यनिष्पाद्य नहीं अर्थात् अपने किए हुए उपायों से बाहर है तो भी उस के हेतु श्रवण मननादिकों का अनुष्ठान आवश्यक है जैसे जब तक सब छिलके बराबर न निकल जाँय, धान शुद्ध न होगा ।

तदङ्गानाञ्च ॥ २८ ॥

उस के अंगों को भी ॥ २८ ॥ अर्थात् जैसे श्रवण-मननादिक की आवश्यकता है वैसे ही गुरु की सेवा आदि उस के उपायों की भी है ।

तामैश्वर्य्यपदां काश्यपः परत्वात् ॥ २९ ॥

उस को काश्यपाचार्य्य ऐश्वर्य्यपदा कहते हैं अलग होने से ॥ २९ ॥ अर्थात् सर्वैश्वर्य्यमय ईश्वर को मान कर उस की सेवा करना यही पुरुषार्थ कहते हैं । इनके मत में जीव और ईश्वर का नित्य भेद प्रगट हुआ ।

आत्मैकपरां वादरायणः ॥ ३० ॥

वादरायण आचार्य इस को आत्मपर कहते हैं ॥ ३० ॥ वेदांत सूत्र मे व्यास जी का मत है कि आत्मज्ञान ही से सिद्धि मिलती है ।

भक्तिसूत्र वैजयन्ती

अर्थात्

श्रीशांडिल्य ऋषि के भक्ति के सौ सूत्रों पर

भाषा भाष्य

कहोगे तो यह असंभव है क्योंकि बुद्धि का अंत नहीं हो सकता। इस हेतु यह कल्पना मात्र है और ऐसा कालही नहीं कि जिसमें सब जीव एक बार मुक्त हो जाँय और महाप्रलय में जो जीव मुक्त होते हैं वे वासना सहित होते हैं।

प्रकृत्यन्तरालादवैकार्यं चित्सत्वेनानुवर्तमानत्वात् ॥३७।

प्रकृत्यन्तराल से और चित्सत्व के अनुवर्तमान होने से (ईश्वर को) अविकारिता है ॥ ३७ ॥ यदि ईश्वर में उत्पत्ति कर्तृत्वादि ऐश्वर्य साहजिक है तो यह भी एक प्रकार का विकार हुआ, उसका निवारण करते हैं कि प्रकृति को ईश्वर विकृत करके उत्पत्ति आदि करता है। जैसे मायावी अपनी माया से अन्य वस्तुओं में विकार कर देता है परंतु आप नहीं विकार पाता अर्थात् ईश्वर दुग्ध के कार्य की भाँति विकृत नहीं होता वरंच सुवर्ण के विकार की भाँति। और उसमें जीव-सत्व जो वर्तमान रहता है वह माया से परे है।

तत्प्रतिष्ठा गृहपीठवत् ॥३८॥

उसकी प्रतिष्ठा का व्यवहार घर में पीढ़े पर प्रतिष्ठा की भाँति है ॥ ३८ ॥ अर्थात् प्रकृति के विकार से जगत माया में प्रतिष्ठित है, यह शंका न हो जैसे किसी के घर पीढ़े पर कोई बैठा हो ऐसा कहने में आवेगा कि अमुक पीढ़े पर बैठा है पर वास्तव में वह पीढ़ा और मनुष्य दोनों घर में हैं; वैसेही माया और संसार दोनों ईश्वर में हैं।

मिथोपेक्षणादुभयं ॥ ३९ ॥

परस्पर की अपेक्षा से दोनों कारण हैं ॥ ३९ ॥ अर्थात् संसार की उत्पत्ति में माया और ईश्वर दोनोंही आवश्यक हैं।

चेत्याचितोर्न तृतीयं ॥ ४० ॥

प्रकृति और ब्रह्म में भेद नहीं है ॥ ४० ॥ अर्थात् इन में तृतीय भाव नहीं है दोनों एक हैं। इससे प्रकृति स्वतंत्र कोई अलग है, इसका निषेध किया।

युक्तौ च संपरायात् ॥ ४१ ॥

वियोग के पूर्व दोनों एक हैं ॥ ४१ ॥ अर्थात् सृष्टि होने के समय ब्रह्म और प्रकृति अलग अलग होते हैं परंतु जड़ाजड़ के भेद से नित्य में इनका अनन्य संबंध है।

प्राणप्यारे !

देखो, आज वसंत-पंचमी है, इस से बहुत लोग आम के मौर वा फूलों के गुच्छे लेकर तुमको मिलने आवैंगे तो मैं भी यह एक फूलों की वैजयन्ती माला बनाकर लाया हूँ, अंगीकार करो; वैजयन्ती माला बनाने का यह हेतु है कि वनमाला होगी तो होली के खेल में अरुझैगी और इसके सिवाय इस वैजयन्ती से निश्चय करके ज्ञानादिक को जय करना है; पर प्यारे ! बहुत सम्हल कर यह माला पहरना, टूट न जाय, क्योंकि सूत कच्चा है और कलियाँ ताजी और कोमल हैं, इससे कुम्हिलाने का भी भय है; जो हो, इस वसंत पंचमी को त्यौहारी मुझे यही दो कि इस सत्यानाशी 'अहं ब्रह्मवाद' को पूर्णरूप से नाश करके और भी सब बातों में इस नव वसंत में भारतवर्ष की सब आपत्तियों का बस अंत करो और अपने भक्तों के चित्त में प्रेम के नव पल्लव फिर से लहलहे करो, जो सदा एकरस रहै।

माघ शु० ५ सं० १९३० }
काशी }

तुम्हारा हरिश्चंद्र

जन्मकर्मविदश्चाजन्मशब्दात् ॥ ४७ ॥

जन्मकर्मों के जानने की सिद्धि भी आजन्म शब्द से है ॥ ४७ ॥ अर्थात् जो उस के जन्म कर्मों को जानता है वह फिर जन्म नहीं पाता किंतु उसको पाता है। यह श्रीगीता के ४ अध्याय के ६ श्लोक में कहा है।

तच्च दिव्यं स्वशक्तिमात्रोद्भवात् ॥ ४८ ॥

उसके जन्म कर्मादिक दिव्य हैं क्योंकि केवल उसकी शक्तिमात्र से अनेक प्रकार के दिखाई पड़े हैं ॥ ४८ ॥ यह ६ श्लोक और इसी अध्याय के छठें श्लोक से सिद्ध है।

मुख्यं तस्यहिकारुण्यं ॥ ४९ ॥

उसके जन्मादिकों में उसी की करुणा मुख्य है ॥ ४९ ॥ अर्थात् ईश्वर बाधित हो के नहीं जन्म लेता केवल अपनी अपार कृपा से जीवों के उद्धार के हेतु अनेक प्रकार के रूप धारण करता है।

प्राणित्वान्नविभूतिषु ॥ ५० ॥

प्राणी होने से ब्राह्मण राजादि भगवद्विभूति में भक्ति सिद्धि देने-वाली नहीं होती ॥ ५० ॥

द्यूतराजसेवयोः प्रतिषेधात् ॥ ५१ ॥

द्यूत और राजसेवा के निषेध से ॥ ५१ ॥ क्योंकि गीता जी में आपने श्रीमुख से राजा और जूए को विभूति कहा है और शास्त्र में उसका निषेध है। इससे विभूतियों में भक्ति नहीं करनी।

वासुदेवेपीतिचेन्न आकारमात्रत्वात् ॥ ५२ ॥

श्रीवासुदेव में भी विभूति की शंका नहीं करनी क्योंकि वहाँ तो चीनी की पुतली की भाँति कर, पाद, मुख, उदर आदि सब आकार आनंदमय हैं ॥ ५२ ॥

प्रत्यभिज्ञानाच्च ॥ ५३ ॥

(श्रीगोपालतापनी, महाभारत, श्रीभागवत आदि पुराण तथा वैष्णवनिबंधों में) भगवान की परब्रह्मता ज्ञापित है ॥ ५३ ॥

वृष्णिपुश्रेष्ठ्येनैतत् ॥ ५४ ॥

विभूति में श्रीवासुदेव का कथन केवल यादवों में श्रेष्ठता के हेतु है ॥ ५४ ॥
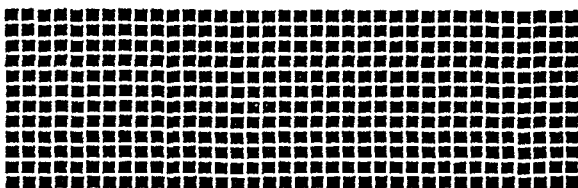
भक्तिसूत्र वैजयन्ती

शाण्डिल्य-शतसूत्री भाषाभाष्य-सहित

ॐ नमश्शाण्डिल्याय तन्मतप्रवर्त्तकाचार्य्येभ्यः

श्रीवल्लभेभ्यश्च नमः

—:※:—

जेहि लहि फिर कछु लहन की, आस न चित में होय।
जयति जगत पावन करन, प्रेम बरन यह दोय॥

ॐ अथातो भक्तिजिज्ञासा ॥ १ ॥

जीवों को कर्म ज्ञानादिक अनेक साधनों से खिन्न होकर भी शांति न पाते देख कर भगवान् शांडिल्य ने भक्तिशास्त्र प्रकट करने की इच्छा से यह भक्ति के सौ सूत्र कहते हुए इस प्रेममार्ग को प्रवर्त्त किया। इस में पहिले पूर्वोक्त सूत्र कहा। अब भक्ति की जिज्ञासा अर्थात् विचार आरंभ करते हैं ॥ १ ॥ यद्यपि ज्ञान-कर्मादिकों की भाँति भक्ति भी स्वसाध्य नहीं है तथापि जो भक्ति मार्ग पर प्रवर्त्त होते हैं उनको भगवान भक्ति देता है इस आशा से भक्ति-मीमांसा आरंभ करते हैं।

श्लोकों में उनका मुख्यता करके नहीं कथन है वरंच गिनती मात्र गिनायी है।

अत्राङ्गप्रयोगानां यथाकालसम्भवो गृहादिवत् ॥ ६२ ॥

यहाँ अंग के प्रयोगों का घर के अंगों की भाँति यथाकाल संभव है ॥ ६२ ॥ अर्थात् जैसे घर में पहिले नेव तब द्वार तब छत इत्यादि अंगों का प्रयोग एक के बनने पर यथाकाल होता है वैसे ही परा भक्तियों की साधन अंग भक्ति का यथासमय प्रयोग होता है क्योंकि पहिले गुण श्रवण करैगा तब श्रद्धा होगी तब भजैगा, सेवैगा इत्यादि अनेक भक्तियों के पीछे परा भक्ति पावेगा।

ईश्वरतुष्टेरेकोपि बली ॥ ६३ ॥

ईश्वर की तुष्टि के हेतु एक साधन करने वाला भी बली है ॥ ६३ ॥ अर्थात् भजन वा कीर्त्तन कोई एक साधन भी दृढ़ करके जो करैगा तो उसकी उस एक साधन पर दृढ़ता ईश्वर के तुष्टि की कारण होगी अर्थात् परा भक्ति की कारण होगी क्योंकि परा भक्ति स्वसाध्या नहीं है केवल ईश्वर के प्रसन्न होने से मिलती है।

अबन्धोऽर्पणस्य मुखम् ॥ ६४ ॥

अर्पण का मुख अबंध है ॥ ६४ ॥ भगवान में शुभाशुभ कर्मों का अर्पण अबंध का द्वार है। यह कीर्त्तनादिक गौणी भक्तियों के अतिरिक्त परा भक्ति सिद्धि का उपायांतर कहते हैं क्योंकि यज्ञादिक में से बहुत काल में अनेक लोकप्राप्ति द्वारा क्रमशः ईश्वर-लोक-प्राप्ति के कष्ट-निवारण के हेतु सब कर्मों का समर्पण सहज उपाय है।

ध्याननियमस्तु दृष्टसौकर्यात् ॥ ६५ ॥

जिस का दर्शन अपने नेत्रों को जँचे उसी भाव से चिंतन करना यही ध्यान का नियम है ॥ ६५ ॥ भक्ति यदि स्वाभाविक होती है तो उत्तमा होती है क्योंकि हठ से की हुई भक्ति चिरकाल में सिद्ध होती है। इसी हेतु कहते हैं कि भगवान के स्वरूप के ध्यान में हठ कर के कोई नियम न मानना, जो स्वरूप अपने नेत्रों को स्वभावतः जँचे उसी का ध्यान करना।

न क्रियाकृत्यनपेक्षणाज्ज्ञानवत् ॥ ७ ॥

और वह भक्ति ज्ञान की भाँति कृपा करनेवाले के आधीन नहीं है ॥ ७ ॥ अर्थात् भक्ति अपने साधन की नहीं है केवल उसकी कृपा से मिलती है इस से भक्ति की बहुमूल्यता दिखाई ।

अतएव फलानन्त्यम् ॥ ८ ॥

इसी से इस के फलों का अंत नहीं है ॥ ८ ॥ क्योंकि मनुष्य के सब साधन क्षीयमाण और ईश्वर की कृपा अक्षया है ।

तद्वतः प्रपत्तिशब्दाच्च न ज्ञानमितरप्रपत्तिवत् ॥ ९ ॥

क्योंकि ज्ञान वालोंको शरणागत है और विना ज्ञान भी इतर प्रपत्ति होती है ॥ ९ ॥ क्योंकि श्रीमुख से कहा है कि बहुत जन्मों के पीछे ज्ञानी मेरे शरण आता है तो इससे ज्ञान का साधन भक्ति फलरूप है यह प्रगट किया और विना ज्ञान भी भक्ति मिलती है इस से उसकी विशेषता दिखाई ।

इति प्रथमाह्निक ।

सा मुख्येतरापेक्षितत्वात् ॥ १० ॥

सो भक्ति मुख्य है क्योंकि इतर ज्ञान योगादिकों में भी इसकी अपेक्षा रहती है ॥ १० ॥ तो इस से कोरे ज्ञान से मोक्ष मिलता है इसका खंडन किया, क्योंकि जब भक्ति की उसमें अपेक्षा रही तो वह स्वतः मुक्तिदाता न ठहरा इस से भक्ति ही मुख्य ठहरी ।

प्रकरणाच्च ॥ ११ ॥

प्रकरण से भी ॥ ११ ॥ अर्थात् भक्ति *अंगी* है और *ज्ञानादिक* अंग हैं तो काम पूरा कोई अंग विशेष नहीं कर सकता और अंग *अंगी* के आधीन है, इस से भक्ति ही अमृत देनेवाली है । ज्ञान उस का साधन मात्र है ।

दर्शनफलमिति चेन्न, तेन व्यवधानात् ॥ १२ ॥

दर्शन मात्र फल रूप है यह नहीं, क्योंकि उस से व्यवधान है ॥१२॥ अर्थात् ज्ञान मात्र ही फल है यह नहीं है क्योंकि छांदोग्य श्रुति में पहिले ज्ञानियों का नाम लेकर फिर कहा है कि वह अर्थात् भक्तिमान् स्वराड्

सुकृतत्त्वात्परहेतुश्च भावाच्च क्रियासु श्रेयस्यः ॥ ७१ ॥

ये भक्तियाँ पराभक्ति की कारण और पुण्यरूप हैं इससे सब क्रियाओं में श्रेयस्कर हैं ॥ ७१ ॥

गौणं त्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्य्यम् ॥ ७२ ॥

(गीताजी के अ० ७ श्लो० ६ में आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी चारो प्रकार के भक्त कहे हैं, उन चारों की समता नहीं) गौणी भक्ति उसमें तीन ही हैं और स्तुति के अर्थ इनको ज्ञानी की भक्ति के साथ लिखा है ॥ ७२ ॥ क्योंकि आर्त की भक्ति अपनी विपत्ति मिटाने के हेतु है, जिज्ञासु की जानने के हेतु और अर्थार्थी की भक्ति अपने काम के हेतु है और ज्ञानी की भक्ति केवल प्रेम से है।

बहिरन्तरस्थमुभयमवेष्टिसववत् ॥ ७३ ॥

(यद्यपि कीर्तनादिक भक्तियाँ परा भक्ति की अंग हैं परंतु यदि कीर्तनादि किसी में विशेष रुचि होय तो उस भक्ति में उस भक्ति की मुख्यता होगी क्योंकि) पराभक्ति के भीतर की भक्ति भी कहीं कहीं बाहर अर्थात् स्वतंत्र गिनी जाती है। जैसे यज्ञ की अवेष्टि यज्ञ के अंतर्गत और बहिर्गत भी है जैसे वाजपेय यज्ञ के अंग में बृहस्पतिसव आजाता है परंतु बृहस्पतिसव की विशेष महिमा वेद में अलग भी लिखी है ॥ ७३ ॥

स्मृतिकीर्त्योः कथादेश्चार्तौ प्रायश्चित्तभावात् ॥ ७४ ॥

कथादिकों का स्मरण और कीर्तन आर्त भजन मे प्रायश्चित्त भाव से है ॥ ७४ ॥ अर्थात् आर्तलोग अपने पाप वा आपत्ति मिटाने के हेतु कीर्तनादि करते हैं, इससे यहाँ कीर्तनादि में विशेषता नहीं है।

भूयसामननुष्ठितिरितिचेदाप्रयाणमुपसंहारान्महत्स्वपि ॥ ७५ ॥

जो कहो कि भक्ति करने वाले बहुत कर्मों का अनुष्ठान नहीं करते सो नहीं, क्योंकि बहुत कर्म करने वालों को भी अंत समय इसी का विधान है ॥ ७५ ॥ अर्थात् चाहे कितना ही कर्म करो जब भगवान की भक्ति बिना गति नहीं तो उस भक्ति के बिना बहुत विधिपूर्वक किए हुए भी अनेक कर्म व्यर्थ ही हैं।

लघ्वपि भक्ताधिकारे महत्क्षेपकमपरसर्वहानात् ॥ ७६ ॥

(क्योंकि) थोड़ा भी भक्ताधिकार बड़े पापों का नाशक होता है

नहीं, क्योंकि जगत में उसके समान और भी भक्तियाँ हैं॥ १८ ॥ जैसा लिखा है, जैसी देवता में भक्ति करनी वैसी गुरु में करनी तो इस सूत्र से अनन्य भक्ति स्थापन किया।

योगस्तूभयार्थमपेक्षणात् प्रयाजवत् ॥ १६ ॥

और योग तो वाजपेय यज्ञ में प्रयाज की भाँति भक्ति और ज्ञान दोनों का अंग है ॥ १६ ॥ इससे योग की अंगांगता दिखलायी।

गौण्या तु समाधिसिद्धिः ॥ २० ॥

गौणी भक्ति से तो समाधि की सिद्धि होती है ॥ २० ॥ इस से परा भक्ति की अपेक्षा इसकी महागौणता सिद्ध हुई।

हेयारागत्वादितिचेन्नोत्तमाग्पदत्वात् सङ्गवत् ॥ २१ ॥

भक्ति राग है इससे (राग को कोई ऋषि दुःख-स्वरूप मानते हैं यह समझकर) त्याग करने के योग्य है, यह नहीं क्योंकि इसका आश्रय उत्तम है संग की भाँति ॥ २१ ॥ जैसा साधारण स्त्री-पुरुष के अनुराग में परस्पर वियोग का और संयोग छूट जाने का दुख होता है वैसा ईश्वर के अनुराग में नहीं होता क्योंकि संग दुखदाई है यह नियम नहीं है। सत्संग से अनेक सुख होते हैं वैसे ही ईश्वर का अनुराग परम सुख-स्वरूप है॥

तदेव कर्मिज्ञानियोगिभ्य आधिक्यशद्वात् ॥ २२ ॥

इससे भक्ति ही मुख्य है क्योंकि कर्मी, ज्ञानी और योगियोंसे उसको अधिक कहा है ॥ २२ ॥ श्री गीता जी के छठवें अध्याय के ४६ और ४७ वें श्लोक में आपने श्रीमुख से कहा है कि तपस्वी, ज्ञानी और कर्मी से योगी अधिक हैं और योगियों में हमारे भक्त अधिक हैं।

प्रश्ननिरूपणाभ्यामाधिक्यसिद्धेः ॥ २३ ॥

यह अधिकता प्रश्नोत्तर से सिद्ध है ॥ २३ ॥ श्रीगीता जी में १२ वें अध्याय में अर्जुन ने पूछा है कि जो अक्षर की उपासना करते हैं और जो आप की भक्ति करते हैं उन में मुख्य कौन है। इसके उत्तर में आप ने कहा है कि जो मेरे भक्त हैं वे अधिक हैं। इस से बिना किसी अर्थ-वाद से भक्ति की परमोत्तमता सिद्ध हुई।

उत्क्रान्तिस्मृतिवाक्यशेषात् ॥ ८१ ॥

क्योंकि भगवद्वाक्य में भक्तों को एक साथ सब क्रमों का उल्लघंन करके सिद्धि मिलना कहा है ॥ ८१ ॥ अर्थात् "सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज" इस वाक्य से भगवान् ने अपने भक्त के अन्य धर्मों की और क्रम प्राप्त उनके गतियों की श्रीमुख से आप ही उपेक्षा की है और ९ अध्याय में अनेक प्रकार के सत्कर्म इत्यादि कह कर भी ३० । ३१ । ३२ । ३३ । ३४ श्लोकों में "हमारा भक्त कैसा भी दुराचारी हो उस को साधु ही समझना" कहा है और अनेक जन्म तथा कर्मादिकों को उल्लंघन करके उस की सद्यःगति की और उस गति के फिर कभी न नाश होने की "क्षिप्र, शश्वत्" इत्यादि शब्द कथनपूर्वक प्रतिज्ञा की है ।

महापातकिनां त्वार्तौ ॥ ८२ ॥

(जो कहो कि जो बड़े बड़े पापी लोग हैं वे भी क्रम को उल्लंघन करके परम पद पावेंगे इस पर कहते हैं कि) महापातकियों की भक्ति तो आर्तों की भक्ति में है ॥ ८२ ॥ अर्थात् पापी लोग अपने पाप की निर्वृत्ति के हेतु भक्ति करते हैं, उन की भक्ति सहजा नहीं । जिनकी भक्ति सहज है उन के पापों के हेतु तो "अपिचेत्सुदुराचारो" इत्यादि वाक्य जागरूक ही हैं ।

सैकान्तभावोगीतार्थप्रत्याभिज्ञानात् ॥ ८३ ॥

परा भक्ति ही का नाम एकांत भाव है क्योंकि गीता में ऐसा ही कहा है ॥ ८३ ॥ यथा "अनन्याश्चिन्तयन्तो मां", "यो मां पश्यति सर्वत्र" ,"मन्मना भव मद्भक्तो", "मत्कर्मकृन्मत्परमोमद्भक्तः", "ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः", "तमेव शरणं गच्छ", "सर्वधर्मान् परित्यज्य" इत्यादि वाक्यों से और उनके उपक्रमोपसंहार से सिद्ध है ।

परां कृत्वैव सर्वेषां तथाह्याह ॥ ८४ ॥

(जो कहो कि गीता जी के वाक्यों की प्रवृत्ति तो ज्ञान, योग, सत्कर्म कीर्तनादि गौणी भक्ति इत्यादि अनेक विषयों पर है इस पर कहते हैं) कि श्रीमद्भगवद्गीता के वाक्यों की प्रवृत्ति तो परा भक्ति ही को मुख्य कर के है ऐसा ही आप ने कहा भी है ॥ ८४ ॥ क्योंकि

उभयपरां शांडिल्यः शब्दोपपत्तिभ्यां ॥ ३१ ॥

शांडिल्याचार्य शब्द और उपपत्ति से उभय पर कहते हैं ॥ ३१ ॥ युक्तियों से और वाक्यों से जीव का ईश्वरांश होना सिद्ध है और ईश्वर में सब सामर्थ्य इत्यादि दिव्यगुण उसकी विलक्षणता भी प्रकाश करते हैं, इससे शांडिल्य दोनों मत मानते हैं अर्थात् अपने को ईश्वरांश मान करके भी उसकी उपासना करना।

वैषम्यादसिद्धमितिचेन्नाभिज्ञानवदवैशिष्ट्यात् ॥ ३२ ॥

वैषम्य से असिद्धि होगी ऐसा नहीं है क्योंकि ज्ञान की भाँति अवैशिष्ट्य है ॥ ३२ ॥ अर्थात् जिस रीति "यह वह है" यह भूत और वर्तमान काल की प्रतीति एक ही समय होती है क्योंकि दोनों काल का विषय (यह और वह शब्दों से प्रतिपाद्य) एक ही है वैसे ही ईश्वर में वैषम्य दोष नहीं आ सकता।

न च क्लिष्टः परःस्यादनन्तरं विशेषात् ॥ ३३ ॥

पर (परमात्मा) को कभी इस वैषम्य से क्लेश नहीं होता क्योंकि (ज्ञान के) अनंतर विशेष होता है ॥ ३३ ॥ अर्थात् जीव और ईश्वर में जो विशेषता है वह ज्ञान से प्रतीत होती है।

ऐश्वर्यं तथेति चेन्न स्वाभाव्यात् ॥ ३४ ॥

ऐश्वर्य भी क्लिष्ट नहीं हो सकता क्योंकि वह स्वाभाविक है ॥ ३४ ॥ ईश्वर का ऐश्वर्य कुछ उपाधिभूत वा उपाधिजन्य नहीं किंतु नैसर्गिक है इसी हेतु इसमें भी क्लेश नहीं हो सकता।

अप्रतिषिद्धं परैश्वर्यं तद्भावाच्च नैवमितरेषाम् ॥ ३५ ॥

(ईश्वर का) परमैश्वर्य कहीं भी प्रतिषिद्ध नहीं होता, वरंच उसका नैसर्गिकपन प्रगट होता है, इतरों का (जीवों का) ऐसा नहीं ॥ ३५ ॥ यह शंका न हो कि ईश्वर का जब ऐश्वर्य ऐसा है तो जीवों का भी ऐसा ही होगा। ईश्वर का यह सर्व स्वाभाविक है और जीवों का नहीं।

सर्वानृतेकिमितिचेन्नैवं बुद्ध्यानन्त्यात् ॥ ३६ ॥

सब के विना (उसका) क्या प्रयोजन है ? ऐसा नहीं क्योंकि बुद्धि का आनन्त्य है ॥३६॥ अर्थात् यदि सब जीव क्रमशः मुक्त होंगे तो ईश्वर का क्या प्रयोजन है तो उसका भी क्यों नहीं लय मानते; ऐसा

जन्य दुःख है, सो भगवान की कृपा से वा उस के भक्तों की कृपा से उस के वियोग का स्मरण आना ही मानो उस के आनंदांश के आवि-र्भाव का कारण है और इसी से उसके एक अंश में स्थित यह सब नित्य सत्य है।

तच्छक्तिर्माया जडसामान्यात् ॥ ८६ ॥

(मिथ्यावादी का निराकरण कर के अब मायावादी का निराकरण करते हैं) कि माया स्वतंत्र कोई वस्त्वंतर नहीं है किंतु भगवान् के शक्ति ही का नाम माया है और वह भी जड़ अर्थात् अपनी सहज चैतन्यता शून्य अन्य चिदंश के समान है ॥ ८६ ॥ इस से मायावादियों का ईश्वर की माया के फंद में फँसना और शाक्तों का स्वतंत्र शक्तिवाद निरस्त हुआ।

व्यापकत्वाद्व्याप्यानाम् ॥ ८७ ॥

(सदंश और चिदंश में आनंदांश व्याप्त है इस से परस्पर इन में व्याप्य व्यापक भाव हुए तो अब संसार की व्याप्य और ईश्वर की व्यापक संज्ञा हुई तो फिर से उस की सत्यता और शुद्धाद्वैतता दिखाने के हेतु कहते हैं) कि व्यापक के सत्य होने से उसका व्याप्य भी सत्य ही है ॥ ८७ ॥

न प्राणिबुद्धिभ्योऽसंभवात् ॥ ८८ ॥

(मायावाद निराकरण करके उस के समान ही नास्तिकवाद का भी निराकरण करते हैं) यह किसी प्राणी की बुद्धि से नहीं बना है, क्योंकि इसकी सूक्ष्मता प्राणियों की बुद्धि के बाहर है इस से यह प्राणियों की बुद्धि से बना है यह बात असंभव है ॥ ८८ ॥

निर्मायोच्चावचं श्रुतीश्च निर्मिमीते पितृवत् ॥ ८९ ॥

यह सब भूत-समूह बना कर वेदों को बनाता है, पिता की भाँति ॥ ८९ ॥ जैसे पिता पुत्रों को उत्पन्न करके फिर उनको शिक्षा देता है वैसे ही भगवान् अपने एकांश से जीवों को प्रगट करके फिर उन की शिक्षा के हेतु वेद कहता है।

मिश्रोपदेशान्नेति चेन्न स्वल्पत्वात् ॥ ९० ॥

जो कहो कि वेद के उपदेश मिश्र हैं अर्थात् अग्निष्टोमादिक यज्ञ में

शक्तित्वान्नानृतं वेद्यं ॥ ४२ ॥

शक्ति के कार्य होने से यह जगत् मिथ्या नहीं है ॥ ४२ ॥ अर्थात् जगत माया का कार्य है तो उसकी शक्ति भी सत्य है। प्रकृति केवल जड़मात्र तो है पर मिथ्या नहीं।

तत्परिशुद्धिश्च गम्या लोकवल्लिंगेभ्यः ॥ ४३ ॥

उस (भक्ति) परिशुद्धि लोक के (प्रेम के) चिन्हों से जानना ॥४३॥ अर्थात् अश्रु, रोमांच, गद्गद् इत्यादि स्थायी भावों से किसको कितना प्रेम है यह प्रगट होता है।

सम्मान बहुमान प्रीति विरहेतरविचिकित्सा महिमख्याति तदर्थप्राणस्थान तदीयतासर्वतद्भावाप्रातिकूल्यादीनि च स्मरणेभ्यो बाहुल्यात् ॥ ४४ ॥

सम्मान, बहुमान, प्रीति, विरह, इतरविचिकित्सा अर्थात् आग्रह पूर्वक दूसरे की अनपेक्षा, महिमा का कथन, प्रियतमही के हेतु प्राण-रक्षण, तदीयता, सब उसके भावों से देखना, अप्रातिकूल्य अर्थात् अनुकूलता इत्यादि प्रीति के लक्षण हैं ॥ ४४ ॥

सम्मान जैसा अर्जुन का, बहुमान इक्ष्वाकु का कि भगवान के नाम वा वर्णों से जिन वस्तुओं में संबंध था उनका भी आदर करता था, प्रीति विदुर की, विरह श्रीगोपीजन का, इतरविचिकित्सा उपमन्यु की और श्वेतद्वीपवासी की तथा चित्रकेतु की, महिमख्याति यम, भीष्म और व्यास की, तदर्थ प्राणस्थिति व्रज के लोग तथा हनुमान जी की, तदीयता बलि की और उपरिचर वसु की, तद्भाव श्रीप्रह्लाद जी का, अप्रातिकूल्य भीष्म तथा धर्मराज का, आदि शब्द से नारद उद्धवादि भक्तों की प्रीति की चेष्टा और लक्षण जानना।

द्वेषादयस्तु नैवं ॥ ४५ ॥

द्वेषादिक से ऐसी नहीं होगी ॥ ४५ ॥ शिशुपाल इत्यादि के प्रकरण में भक्ति से उन को मुक्ति नहीं हुई किंतु भगवान के महिमा बल से भक्तों को तो द्वेषादिक होते ही नहीं।

तद्वाक्यशेषात् प्रादुर्भावेष्वपि सा ॥ ४६ ॥

उसके वाक्य शेष से अवतारों में भी वह है ॥ ४६ ॥ मत्स्यादिक अवतारों में, शिवादि गुण स्वरूपों में, संकर्षणादि व्यूहों में तथा आचार्यादि प्रादुर्भावों में भी परा भक्ति योग्य है।

पृथगिति चेन्न परेणासम्बन्धात्प्रकाशानां ॥ ९४ ॥

अलग कहो सो नहीं, ऐसा कहने से पर अर्थात् भगवान से असंबंध होगा जैसे प्रकाशों का ॥ ९४ ॥ प्रकाशों का अर्थात् सूर्य-मंडल की और नारायण की जैसी एकता है वैसे ही भगवान् से इस से एकता है। इन दोनों का संबंध नहीं हो सकता।

नविकारिणस्तु करणविकारात् ॥ ९५ ॥

ये आत्मा विकारी नहीं हैं क्योंकि ऐसा मानने से उनके कारण अर्थात् भगवान् को भी विकार मानना पड़ेगा।

अनन्यभक्त्या तद्बुद्धिर्बुद्धिलयादत्यन्तं ॥ ९६ ॥

(भजनीय का और भजन करने वाले का स्वरूप दिखा कर उनके वियोग स्मृति का स्मारक फिर से कहते हैं) कि उस परमानंदमय भगवान् में अनन्य भक्ति करते करते भृंगी कीट की भाँति तद्बुद्धि हो जाती है और उस बुद्धि के भी लय होने से अर्थात् वियोग जन्य असह्य दुःख से सब सुख बुध छूट जाने से अत्यंत अर्थात् सब वासनाओं के मोक्ष होने से परमानंद अर्थात् आनंद मात्र कर-पाद-मुखोदरादि भगवान श्रीकृष्णचंद्र से नित्य लीला में संयोग होता है ॥ ९६ ॥

आयुश्चिरमितरेषांतुहानिरनास्पदत्वात् ॥ ९७ ॥

(जो कहो कि संचित प्रारब्ध का भोग तो हुआ ही नहीं आनंद प्राप्ति कैसे हुई इस पर कहते हैं) कि साधारण जीवों की आयु ही प्रारब्ध की भोग कराने वाली है परंतु भगवद्भक्तों को तो उन संचित प्रारब्धों की आप ही हानि हो जाती है क्योंकि उसकी आश्रय आयु का भोग नहीं रहता ॥ ९७ ॥ अर्थात् जिनको भगवद्वियोग स्मरण में एक एक क्षण कोटि कोटि कल्प तुल्य असह्य यंत्रणा सहते हुए बीतते हैं वा संयोगलीला स्मरण से एक एक क्षण लाख लाख बरस तक स्वर्ग के सुख भोग के समान बीतते हैं उनके सब भले बुरे प्रारब्ध इस वियोग संयोग के अनुभव में भस्म हो जाते हैं।

संसृतिरेषाम भक्तिः स्यान्नाज्ञानात्कारणासिद्धेः ॥ ९८ ॥

और जीवों को संसार की कारण अभक्ति है, अज्ञान नहीं, कारण की असिद्धि से ॥ ९८ ॥ अर्थात् संसार के कारण भगवान् में अभक्ति

एवं प्रसिद्धेषु ॥ ५५ ॥

इसी प्रकार श्रीरामादि प्रसिद्ध भगवदवतारों का भी विभूति में कथन केवल उस प्रकार की विभूति में श्रेष्ठता दिखाने के हेतु है। अर्थात् जो प्रसिद्ध भगवत्स्वरूप हैं उनमें विभूति बुद्धि न करनी ॥ ५५ ॥

दूसरे अध्याय का पहिला आन्हिक समाप्त हुआ

भक्त्या भजनोपसंहाराद्गौण्यापरायैतद्धेतुत्वात् ॥ ५६ ॥

भक्ति से यहाँ गौण भक्ति लेनी क्योंकि उसका अर्थ भजन अर्थात् सेवा है और यह भक्ति परा में हेतु है ॥ ५६ ॥ क्योंकि गौण भक्ति से मुख्य भक्ति के साधन के बाधक दूर होते हैं और परा भक्ति सिद्ध होती है।

रागार्थप्रकीर्तिसाहचर्याच्चेतरेषाम् ॥ ५७ ॥

गीता अ० ६ श्लोक १४ में कीर्त्तन के साथ कहे हुए नमस्कारादि कर्मों का फल केवल राग अर्थात् परा भक्ति है क्योंकि "स्थाने हृषीकेश" इस श्लोक में कीर्त्तन का फल अनुराग कहा है और पूर्वोक्त १४ श्लोक में कीर्त्तन के साथ नमनादिक का कथन है इससे नमनादिक का भी वही फल है ॥ ५७ ॥

अन्तराले तु शेषाः स्युरुपास्यादौ च काण्डत्वात् ॥ ५८ ॥

गीता जी के ६ अध्याय में १३ श्लोक से २६ श्लोक तक और जितनी भक्तियाँ कही हैं वह बीच की हैं क्योंकि उपासनादि परा भक्ति की साधक हैं ॥ ५८ ॥

ताभ्यः पावित्र्यमुपक्रमात् ॥ ५६ ॥

इन गौणी भक्तियों से पवित्रता अर्थात् मन की शुद्धता होती है क्योंकि उसी अध्याय के दूसरे श्लोक में इनको पवित्र कहा है ॥ ५६ ॥

तासु प्रधानयोगात् फलाधिक्यमेके ॥ ६० ॥

कोई कोई आचार्य कहते हैं कि इन गौण भक्तियों ही में प्रधानता के कारण फल अधिक है ॥ ६० ॥

नाम्नेति जैमिनिः सम्भवात् ॥ ६१ ॥

जैमिनि आचार्य का मत है कि उन को मुख्यता नहीं है, यहाँ उनका नाममात्र कथन है ॥ ६१ ॥ अर्थात् पूर्वोक्त श्रीगीता जी के

तिषु ३७ धृतराजसेव्रयोः प्रतिषेधाच्च ३८ वासुदेवेपीतिचेन्नाकारमात्रत्वात् ३९ प्रत्यभिज्ञानाच्च ४० वृष्णिषु श्रेष्ठेनतत् ४१ एवं सिद्धेषु च ४२ भक्त्या भजनोपसंहारात् परार्थं हेतुत्वात् ४३ रागार्थम्प्रकीर्त्तितसाहचर्याच्चेतरेषाम् ४४ अन्तराले चशेषाः स्युरुपास्यादौ च कांडत्वात् ४५ ताभ्यः पावित्र्यमुपक्रमात् ४६ तासुप्रधानयोगात् फलाधिक्यमेके ४७ नाम्नेति जैमिनिः सम्भवात् ४८ अंगप्रयोगाणां यथाकालं सम्भवो गृहादिवत् ४९ ईश्वरतुष्टेरेकोपिवली ५० अबन्धोऽर्पणस्य सुखम् ५१ ध्याननियमस्तु दृष्टिसौकर्यात् ५२ उद्यद्भिः पूजायाभेव प्रयुक्तः ५३ पादोदकंतु पाद्यमव्याप्तेः ५४ स्वयमप्यर्पितं ग्राह्यमविशेषात् ५५ निमित्तगुणाव्यपेक्षणादपराधेषु व्यवस्था ५६ पत्रादेर्दानमन्यथाहि वैशिष्ट्यम् ५७ सुकृतजत्वात् परहेतुभावाच्च क्रियासु श्रेयस्यः ५८ गौणत्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्यम् ५९ वहिरंतःस्थमुभयमेवेष्टिसंबंधवत् ६० प्रमादसत्वासत्वाभ्यां विशेषात् ६१ स्मृतिकीर्त्योः कथादेश्चार्त्तौ प्रायश्चित्तभावात् ६२ भूयसामननुष्ठितिरिति चेदाप्रायणमुपसंहारान्महत्स्वपि ६३ लघ्वपि भक्ताधिकारे महत् क्षेपकमपरसर्वहारात् ६४ तत्स्थानत्वदन्यधर्माः खले बालीवत् ६५ आनिंद्य योनिधिक्रियते पारम्पर्यात् सामान्यवत् ६६ अतोह्यविपक्कभावानामपितल्लोके ६७ क्रमैकगत्युपपत्तेस्तु ६८ उत्क्रान्ति वाक्यशेषात् ६९ महापातकिनां त्वार्तौ ७० सैकांत भावो गीतार्थं प्रत्यभिज्ञानात् ७१ परां कृत्यैव सर्वेषां तथा ह्याह ७२ भजनीयमद्वितीय मिदम् कृत्स्नस्य तत्स्वरूपत्वात् ७३ तच्छक्तिर्मायजड़सामान्यात् ७४ व्यापकत्वात्व्याप्यानां ७५ नप्राणिबुद्धिभ्योऽसम्भवात् ७६ निर्मायोच्चावचं श्रुतीश्चनिर्मिमीतेपितृवत् ७७ मिश्रोपदेशान्नेतिचेन्न स्वल्पत्वात् ७८ फलमस्माद् बादरायणो दृष्टत्वात् ७९ व्युत्क्रमादप्ययस्तथा दृष्टं ८० तदैक्यं नानात्वमुपाधितः ८१ पृथगेव चेन्न परेनासंबंधात् ८२ अविकारिणस्तु करणविकारात् ८३ अनन्यभक्त्या तद्बुद्धिलयादत्यन्तं ८४ ग्रामादिवत् विशिष्टतया पुमर्थत्वात् ८५ आयुश्चिरमित्यपरेषां तु हानिरनास्पदत्वात् ८६ संसृतिरेषामभक्तेः स्यान्नाज्ञानात् कारणासिद्धेः ८७ त्रीण्येषां नेत्राणि शब्दलिंगाक्षभेदाद्रुद्रवत् ८८ आविस्तिरोभावा विकाराः क्रियाफलसंयोगात् क्रियाफल संयोगात् ८९ इस क्रम सूत्रों के पाठ ग्रन्थसमाप्ति तक हैं। इति।

तद्यजिः पूजायामितरेषांनैवम् ॥ ६६ ॥

"यान्तिमद्याजिनोपि मां" इस वाक्य में यजन शब्द भगवत्पूजन के अर्थ है, इतर यागादिकों के लिये नहीं ॥ ६६ ॥ अर्थात् यज्ञादिक में कामना और हिंसादि अनेक दोष हैं, इस से भगवान को यजन किसी और कर्म मार्ग के उपायों से न करना किंतु केवल भगवत्स्वरूप की सेवा करनी।

पादोदकं तु पाद्यमव्याप्ते॥ ६७ ॥

भगवन्मूर्तियों के स्नान का जल ही पादोदक है, अव्याप्ति से ॥ ६७॥ अर्थात् साक्षाद्भगवान् वा अन्य किसी अवतार के चरण का जल ही चरणामृत है, यह हठ न करना क्योंकि इस समय उसकी प्राप्ति कहाँ और पादोदक में चरण ही की मुख्यता न माननी क्योंकि श्रीशालिग्राम का स्नानजल भी पादोदक कहावेगा।

स्वयमर्पितं ग्राह्यमाविशेषात् ॥ ६८ ॥

अपनी समर्पण की हुई वस्तु को आप लेना, क्योंकि विशेषता नहीं है ॥ ६८ ॥ अपनी समर्पण की हुई वस्तु है, इस भ्रम से प्रसाद लेने में संकोच न करना क्योंकि वैष्णवों को भगवत्प्रसाद लेने की आज्ञा है और उस समर्पण करने वाले में कोई विशेष नहीं अर्थात् वह भी वैष्णवान्तः पाती है।

निमित्तगुणान्यदपेक्षणादपराधेषु व्यवस्था ॥ ६९ ॥

निमित्त, गुण और अनपेक्षा से अपराधों की व्यवस्था है ॥ ६९ ॥ भगवत्सेवा में जो बत्तीस अपराध कहे हैं वे तीन भाँति के हैं, एक तो वे कि जैसे किसी कारण से हो जाँय, दूसरे वे जिनके करने का नित्य स्वभाव है और तीसरे वे जो भूले से हों। इन तीनों की व्यवस्था अलग है जैसे अनिच्छापराध से निमित्तापराध और निमित्तापराध से नित्यापराध बढ़कर है।

पत्रादेर्दानमन्यथाहि वैशिष्टयम् ॥ ७० ॥

पत्रपुष्पादि का दान सर्व समान (समान फल रूप) है ॥ ७० ॥ क्योंकि भगवान को पत्र का दान और स्वर्ण कोटि का दान दोनों समान संतोष करने वाला है।

क्योंकि भगवान की अपने शरणागतों की वा नामस्मरण करने वालों के सर्व पापहानि की प्रतिज्ञा है ॥ ७६ ॥

तत्स्थानत्वादनन्यधर्मः खले वालीवत् ॥ ७७ ॥

(क्योंकि) भगवदाश्रय होने से (छोटे भी) भगवद्धर्म अनन्य धर्म ही हैं (और उन से सब बड़े पापों का क्षय हो जाता है) जैसा ओखली में वालों का (अर्थात् ओखली में कितनी भी बाल पड़ें सब कुट पिस जाँयगी वैसे ही भगवद्धर्म से कैसे भी पाप हों सब नाश हो जाते हैं) ।

आनिन्द्ययोन्यधिक्रियते पारम्पर्यात्सामान्यवत् ॥ ७८ ॥
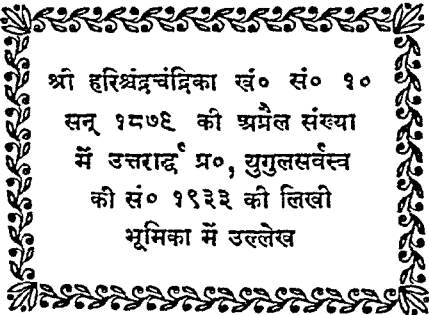
चांडालयोनि को भी भगवद्भक्ति का अधिकार है क्योंकि परंपरा से भक्तों का समानता है ॥ ७८ ॥ और गज, गृध्र, वानर इत्यादि मनुष्य छोड़ कर और योनि के जीवों को भी भक्ति से सिद्धि मिली है तथा एक विशेषता यह भी है कि भारतखंड छोड़ कर खंडांतर-वासियों को तो केवल भक्ति ही का आश्रय है क्योंकि वे कर्मभूमि नहीं हैं कि वहाँ के लोग कर्म से सिद्ध हों ।

अतोह्यविपक्वभावानामपि तल्लोके ॥ ७९ ॥

इसी हेतु परा भक्ति में जो पक्के नहीं हैं वे भी भगवल्लोक में वास करते हैं ॥ ७९ ॥ अर्थात् ब्राह्मण, शूद्र, चंडाल इत्यादि संज्ञा से अपने अपने जाति की पूर्ण क्रिया करो तो भी सिद्धि नहीं, कितना भी पुण्य करो अंत में क्षीण होने पर मृत्युलोक में आना पड़ता है और भक्ति करने वालों का नाश नहीं । जो पक्के नहीं हैं वे श्वेतद्वीप में रह कर भगवद्भक्ति में पक्क होकर अंत में भगवत्पद पाते हैं और भक्तों की कर्मवश से उपजी हुई कामनाओं को भी भक्ति अंत में भस्म कर देती है । इसमें जड़भरत जी का उपाख्यान प्रमाण है ।

क्रमैकगत्युपपत्तेस्तु ॥ ८० ॥

केवल क्रममात्र से गति तो क्रिया की है ॥ ८० ॥ अर्थात् "बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते", "अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिं" इत्यादि वाक्यों में क्रम से जो सिद्धि पानी कही है वह सुकर्म करने वालों को है । भक्तों को तो एक भक्ति ही से सद्यः गति होती है ।

श्री हरिश्चंद्रचंद्रिका खं० सं० १०
सन् १८७६ की अप्रैल संख्या
में उत्तरार्द्ध प्र०, युगुलसर्वस्व
की सं० १९३२ की लिखी
भूमिका में उल्लेख

जब आप ने "मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।। मामेवैष्यसि कौन्तेय प्रतिजाने प्रियोसि मे ।। सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ॥ अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुचः" ये दो वाक्य साधन, सिद्धा परा भक्ति ही के मुख्यता के हेतु कहे तो उस की श्रेष्ठता के हेतु पहिले आग्रहपूर्वक "सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः" इससे अगले दोनों वाक्यों की महिमा कही और लोक में भी प्रसिद्ध है कि मनुष्य किसी को उपदेश करे परंतु अंत में जो निचोड़ कर कहे वही बात मुख्य होती है। परंच गीता जी के कहने का तो फल परा भक्ति ही है, यह आप ने "यद्दद् परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ॥ भक्ति मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्असंशयः" इस वाक्य में कहा है। इस से और "अहं" "त्वां" इन दो पदों के अलग होने से श्रीमद्गीता की प्रवृत्ति केवल भक्ति ही के हेतु है न ज्ञानकर्मादिकों के, यही सिद्ध हुआ।

द्वितीयाध्याय का द्वितीयाह्निक समाप्त हुआ।

—❀—

भजनीयेनाद्वितीयमिदं कृत्स्नस्य तत्स्वरूपत्वात् ॥८५॥

(भक्ति की उत्कर्षता और जीवों के साधन कह कर अब सच्चिदानंदमय परमेश्वर और उस के सदंश से जगत् और चिदंश से जीव और आनन्दमय श्री विग्रह इनका परस्पर संबंध दिखाते हैं) यह सब ईश्वर स्वरूप ही है इस से भजनीय अर्थात् भगवान् से यह अलग नहीं है ॥ ८५ ॥ इस सूत्र से मिथ्यावाद निरस्त करते हैं क्योंकि मिथ्यावादियों के मत से संसार असत्य है परंतु यहाँ पर सूत्रकार भगवान् शाण्डिल्य मुक्त कंठ से जगत् की सत्यता प्रतिपादन करते हैं और इस जगत् का विस्तार इस प्रकार से है कि सच्चिदानंदमय ईश्वर को जब संसार की इच्छा हुई तो अपने सदंश से जड़ प्रपंच किया और चिदंश से चैतन्य प्रपंच (जीव सृष्टि) किया। जीव में आनन्दांश का तिरोभाव है क्योंकि बहुत काल से आनंदराशि भगवान् से इन का वियोग है। उस वियोग का न इनको स्मरण है न वियोग-

रूप प्रेमानंद में मग्न हो अनेक प्रकार से नृत्य किया और कभी उस प्रेममार्ग का प्रकाश न किया। यदि कभी कुछ कहा भी तो भगवान की परामाया श्रीपार्वती से ही कहा क्योंकि युगलस्वरूप के परम गुप्त विहार के अनुभव करने वा कहने सुनने का पुरुष शरीरधारियों में शिव जी को छोड़ कर और कोई अधिकारी नहीं।

३—श्री महादेव जी को इस अवस्था में देखकर नारद जी ने अनेक वार तत्व पूछा परंतु श्री महादेवजी ने न बताया पर जब त्रिपुरासुर के युद्ध में भगवान ने त्रिपुर का नाश किया तब नारदजी ने वड़ी स्तुति किया और जब भगवान ने प्रसन्न होकर कहा कि "वर माँगो" तब नारदजी ने यही वर माँगा कि प्रेममार्ग का तत्व हम को बताइये और भगवान ने प्रेममार्ग के अनेक तत्व इन को बताये और सनकादि सिद्धों तथा आदि ऋषियों को भी भक्ति मार्ग का उपदेश किया। इस से ये नारदजी भक्ति मार्ग के तीसरे आचार्य हुए।

४—श्री नारदजी ने कृपा कर के उस तत्व को शाण्डिल्य, गर्ग, कौण्डिन्य आदि ऋषियों से कहा और अनेक ऋषियों के वाक्यों तथा शास्त्रों की विचित्र प्रवृतियों से व्याकुल श्री व्यासजी को भी अपना तत्वोपदेश किया।

५—व्यासजी ने उस तत्व को श्री शुकदेवजी से कहा।

६—श्री शुकाचार्य इस परंपरा में तृतीय और सप्तम दोनों हैं। तृतीय तो यों हैं कि नित्यलीला से वियुक्त एक शुक संसार में भ्रममाण होकर कहीं शांति न पाता हुआ कैलास में योगवट पर जा बैठा। वहाँ श्री महादेवजी पार्वती जी से परमगुप्त भगवद्रहस्य कहते थे और यह लीला शुक उस नित्य लीला से वियुक्त वह सब चरित्र ज्ञान बल से सुनता था तथा केवल लीला के अधिकारी होने ही के कारण उस रहस्य स्थान में उस का प्रवेश भी हुआ। श्री महादेवजी श्रीपार्वती जी से अंबिकावन में युगल स्वरूप का विहार तत्व कह रहे थे क्योंकि उस अंबिकावन में पुरुष भी जाय तो स्त्री हो जाय क्योंकि पुरुष शरीर उस गुप्त रहस्य सुनने का अधिकारी नहीं। उस लीलास्य शुक ने वे रहस्य चरित्र सुने, उस के नेत्र से प्रेमाश्रु के विंदु गिरे और श्री महादेवजी

हिंसा का विधान है इस से ये वेद ईश्वर के बनाये नहीं, ऐसा नहीं क्योंकि वह भाग उस में बहुत ही थोड़ा अर्थात् उपेक्षित है ॥ ६० ॥

फलमस्माद्बादरायणो दृष्टत्वात् ॥ ६१ ॥

(अब कर्मवादियों का मत निराकरण करते हैं) कि ये कर्म स्वतः फलदाता नहीं, फल देनेवाला ईश्वर ही है, यह व्यास जी कहते हैं क्योंकि ऐसा ही देखा भी जाता है ॥ ६१ ॥ जैसे राजा के तोष के हेतु अनेक कर्म करो परंतु उसका प्रतिफल देना राजा ही के अधिकार में है वैसे ही ईश्वर का प्रसन्न होना कर्म के अधीन नहीं कर्म केवल साधक है ।

व्युत्क्रमादप्ययस्तथादृष्टम् ॥ ६२ ॥

लय उलटी चाल से होता है ऐसा ही देखा गया है ॥ ६२ ॥ जैसे गोरखधंधे की डिबियों का फैलाते जाओ तो कई डिबियाँ हो जाती हैं और जब बंद करो तब सब से छोटी अपनेसे बड़ी डिबिया में और वह अपने से बड़ी में इसी प्रकार अंत वाली बड़ी डिबिया में सब डिबियाँ छिप जाती हैं वैसे ही जिस क्रम से उत्पत्ति होती है (अर्थात् ब्रह्म से प्रकृति, प्रकृति से महत्तत्व इत्यादि एक से एक उत्पन्न होते हैं) वैसे ही लय होने के समय सब भगवान में लय पाते हैं, इस से फिर भी संसार की नित्यता सिद्ध किया ।

तीसरे अध्याय का प्रथमाह्निक समाप्त हुआ ।

तदैक्यं नानात्वैकत्वमुपाधियोगहानादादित्यवत् ॥ ६३ ॥

उसकी एकता है क्योंकि उपाधि के योगों के मिटने से नानात्व का एकत्व हो जाता है आदित्य की भाँति ॥ ६३ ॥ जैसे "ध्येयः सदा सवितृमंडलमध्यवर्ती" इत्यादि वाक्यों से भगवान् का स्वरूप और आदित्य-मंडल यह दो पृथक् प्रतीत होते हैं परन्तु वास्तव पृथक् हैं नहीं क्योंकि जब मंडलरूपी उपाधि को भगवान् अपने में लय कर लेता है तब केवल नारायण संज्ञा रह जाती है वैसे ही जब संसार को अपने में लय कर के उस के संयोग-वियोगात्मक "संसार" इस नाम को भी अपने में लय कर लेता है तब केवल आपही रह जाता है ।

बरस भगवान की आज्ञा से अपना शरीर रक्खा। परंतु यह काशी की यात्रावाला प्रसंग सब चरित्र के ग्रंथों में नहीं मिलता, केवल श्री विष्णुस्वामी चरितामृत नामक ग्रंथ ही में मिलता है। सर्व चरित्र सम्मत मत यह है कि श्री विष्णुस्वामी ने घर में सब विद्या पढ़ी और उनको इस बात का सोच पड़ा कि हम अब किन गुणों कर के अपने पिता से अधिक होंय क्योंकि हमारे राजा से बढ़ कर इस देश में कोई राजा नहीं और हमारे पिता से बढ़ कर राजा के घर में और कोई मानपात्र नहीं तब कुबेर की सेवा करें, तो कुबेर भी इंद्र का अनुयायी है और इंद्रादिक देवता रुद्र के हैं और रुद्र तो ब्रह्मा का पुत्र है, ब्रह्मा भी नारायण के नाभि में से निकला है और नारायण भी अनेक मत्स्यादि अवतार बारंबार लिया करते हैं, इस से परतंत्र ज्ञात होते हैं इस से उपनिषदों में सर्वेश्वर जिसको कहा है हम उस की उपासना करेंगे और जो सर्वेश्वर है उनकी सेवा महाराजोपचार से करने योग्य है ऐसा विचार कर के छत्र, चमर, सिंहासन, शय्या, धूप, दीप, भोग, इत्यादि राज सेवा-सामग्री सिद्ध कर के और भगवान का नाम रूपादि न जान कर के सर्वस्वामी के भाव से सेवा करने लगे। ऐसे ही नित्य सेवा करें पर उसको कोई अंगीकार न करे। जब ऐसे ही बहुत दिन बीते और उन की सेवा अंगीकृत न हुई तब उन्हों ने तो यह प्रण किया कि यदि आज से सर्वेश्वर मेरी सेवा न ग्रहण करेंगे तो मैं भी अन्न ग्रहण न करूँगा और ऐसे ही बिना अन्न जलादि से छः दिन बीत गये तब सातवें दिन नित्य की भाँति भोग धर के प्रतिज्ञा की कि यदि आज भी सेवा का अंगीकार न होगा तो हम अग्नि प्रवेश करेंगे। ऐसी इन की बुद्धि की दृढ़ता देख कर श्री मच्छड्गुणैश्वर्य्य भगवान् आविर्भूत हुए और सब सेवा का अंगीकार किया। जब स्वामी भीतर गए और वहाँ सच्चिदानंद रूप घन साक्षात् परब्रह्म द्विभुज मुरली-भूषित दक्षिण और बाम दोनों भागों में स्वामिनी समेत को देख कर बोले कि आप यहाँ क्यों आए हैं, आप तो पुराण और तंत्रों के प्रतिपाद्य साकार देवता हैं और हम ने तो श्रुतिशिरः प्रतिपाद्य निर्गुण सर्व स्रष्टा सर्वस्वामी की उपासना और सेवा की। यह श्री विष्णु स्वामी का वाक्य सुन भगवान बोले—'यदि हम से बढ़कर कोई ईश्वर है तो उसने तुम्हारी सेवा क्यों

ही बंधन की हेतु होती है क्योंकि बंध मोक्ष का दाता ही जिस से रूठा रहेगा उसे मोक्ष कहाँ।

त्रीण्येषां नेत्राणि शब्दलिंगाक्षभेदाद्रुद्रवत् ॥ ९९ ॥

(जो कहो कि जीव कैसे जाने इस पर कहते हैं) कि इन जीवों को श्रीमहादेव जी की भाँति तीन नेत्र हैं अर्थात् तीन प्रकार से ये जानैं। कुछ तो शब्द अर्थात् वेदादिकों से, कुछ लिंग अर्थात् अनुमान से और कुछ अक्ष अर्थात् प्रत्यक्ष से जानें ॥ ९९ ॥

अविस्तरोभावाविकाराः स्युः क्रियाफलसंयोगात् ॥ १०० ॥

लय और उत्पत्ति क्रियाफल के संयोग से विकार हैं ॥ १०० ॥ अर्थात् वास्तविक निर्विकार भावों में क्रिया फल के संयोग से विकार प्रतीत होता है। भगवत्स्वरूप ज्ञानान्तर भक्ति पाने से मनुष्य वास्तविक स्वरूप जानैगा इस से भक्ति ही मुख्य है ॥ इति ॥

व्याकुल लखि सब जीवगन, ज्ञान करम बहु मानि।
कियो सूत्र शांडिल्य ऋषि, परम भक्ति की खानि ॥ २ ॥
सुमिरि राधिका-प्रानपति, व्रज-जुवती-मन-फन्द।
यह ताको भाषा तिलक, किय तदीय हरिचंद ॥ ३ ॥

शांडिल्य सूत्र और उस का भाषा भाष्य हुआ।

—:*:*:—

अथ पाठांतर

१५ सूत्र, अभिज्ञायाः साहाय्यात् इति श्री उपासना सर्वस्व तथा श्रीकाष्ठजिह्वास्वामिकृत पाठ।

२६ सूत्र, तस्यानुज्ञानाय सामर्थ्यात् इति पूर्वोक्त पाठ।

३० सूत्र, आत्मैकपरां इति पूर्वोक्त पाठ।

३१ सूत्र, उभयपरां इति पूर्वोक्त पाठ।

३२ सूत्र, प्रत्यभिज्ञानवत् इति पूर्वोक्त पाठ।

३४ सूत्र, यहाँ से स्वप्नेश्वर के पाठ से पूर्वोक्त ग्रंथों के पाठ से बड़ा भेद है। यथा जन्मकर्मविदश्चाजन्मने शब्दात् ३४ तच्च दिव्य स्वशक्ति मात्रोद्भावात् ३५ मुख्यं तस्य हि कारुण्यं ३६ प्राणित्वान्नविभू-

पहिले और वर्णन छोड़ के उस घोर काल का वर्णन किया जाता है, जिस में वैदिक धर्म प्रायः उच्छिन्न सा हो गया था। भगवान ने बुद्धावतार ले कर बहुत से उपधर्मों का उपदेश करके सारे भारतवर्ष को उस धर्म से परिपूर्ण कर दिया। उस के कुछ काल पीछे, एक दिन कैलास के शिखर पर सिद्ध वट के नीचे रत्नवेदि पर व्याघ्रचर्म्म के आसन पर बैठ के श्रीपुरुषोत्तम का ध्यान करते रहे। कुछ काल के बाद भगवान् उनकी समाधि से प्रगट हो कर कहने लगे कि "तुम द्वापरादि युगों में मनुष्यादि में अंश से अवतीर्ण हो कर अपने बनाये हुए शास्त्रों में लोगों को मुक्ति से विमुख करो और अपना प्रभाव प्रगट करो"। यह सुन शिवजी ने स्वीकारा। अनन्तर अपने को प्रगट करने की संधि देख रहे थे। उसी समय दक्षिण में द्रविड़ देश में एक महा शिव-भक्त वृद्ध ब्राह्मण था। उस को कोई संतति नहीं थी, इसलिए वह ब्राह्मण कुछ अनुष्ठान करता था। सो एक दिन आप प्रसन्न हो कर "वरं ब्रूहि" यह बोले। यह शिव जी की वाणी सुनते ही ब्राह्मण ने कहा "महाराज! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे पुत्र मिले"। इस पर शिव बोले "निर्गुण मूर्ख पुत्र चाहोगे तो एक सौ पाँच बरस का मिलेगा और दूसरा सर्व-गुण-सम्पन्न बारह वर्ष का मिलेगा।" इस पर ब्राह्मण बोला 'महाराज! तब तक आप ठहरिये जब तक मैं अपनी स्त्री से इसकी सलाह पूछूँ'। महादेव जी का ठहरने का विचार जान के स्त्री से पूछने गया और स्त्री की संमति से शंकर जी से कहा महाराज! सर्वगुणसंपन्न पुत्र मुझे दीजिए। शिवजी ने बहुत अच्छा कह कर अन्य सर्वगुणसंपन्न कोई पुत्र न देखकर स्वयं उसका पुत्र होना स्वीकार किया और गर्भ-काल समाप्त होने पर उस ब्राह्मण के स्त्री से अवतीर्ण हुए। ब्राह्मण ने शिव का प्रसाद जान कर उस पुत्र का नाम शंकर रक्खा और क्रम से उपनयन तक संस्कार किये और साम वेद पढ़ाया। यह जनम से ही महाकवि हुआ, कभी शक्ति, कभी शिव और कभी विष्णु का स्तव करता था, जिस से वे देवता प्रत्यक्ष होकर वर देते थे। अणिमादि सिद्धि तो इस के वश में थीं। कुछ काल के अनंतर किसी ब्राह्मण के घर में अवतीर्ण गौरी से यथाविधि विवाह हुआ। गृहस्थाश्रमी होकर त्रैवर्णिक धर्मका अर्जन किया और लक्ष्मी ऐश्वर्य संतति की इच्छा करने वाले

अथ उपसंहार ।

हम लोगों के आर्य्यशास्त्रों में श्रुतियों के पीछे मूल सूत्रों का बड़ा आदर है । ये सूत्र भिन्न २ ऋषियों ने भिन्न २ शास्त्रों के प्रतिपादन को बनाए हैं और पीछे उन्हीं पर भाष्य व्याख्या टिपनी टीका बना बना कर लोगों ने उन शास्त्रों को चौड़ाया है । यथा जैमिनि ने पूर्वमीमांसा, व्यास ने उत्तरमीमांसा, गौतम ने न्याय, कणाद ने वैशेषिक, कपिल ने सांख्य और पतंजलि ने योगसूत्र बनाए हैं । इन्हीं छः शास्त्रों की संज्ञा षड्दर्शन हैं । इन में पूर्व मीमांसा सब से प्राचीन बोध होता है । इन सूत्रों को छोड़ कर और भी अनेक सूत्र हैं यथा पाणिनि के व्याकरण के सूत्र, वात्स्यायन के कामसूत्र, वामन और भरत के अलंकारशास्त्र पर सूत्र, पिंगल के छन्दःशास्त्र पर और दूसरे दूसरे ऋषियों के अन्य अन्य शास्त्रों पर । वैसे भक्तिशास्त्र पर शांडिल्य ऋषि के और नारद जी के सूत्र हैं । कहते हैं कि संकर्षणसूत्र और उस का प्राचीन भाष्य उपासना पर आगे प्रचलित था किंतु अब उस की पुस्तक स्मरण शेष रह गई है ।

इस शांडिल्य सूत्र के भाष्यकारों ने सूत्रों के आरंभ करने के पूर्व उपासना रहस्य नामक अथर्ववेद की श्रुति का एक प्रकरण लिखा है । उस का आशय यह है कि ब्रह्मा ने श्रीशिव जी से भक्ति का भेद पूछा है उस पर थोड़े से में शिव जी ने ब्रह्मा से भक्तिस्वरूप कथन किया है । ब्रह्मा जी ने वह रहस्य नारद, वशिष्ठ, असित, देवल और शांडिल्य से कहा है ।

इस प्रकार हम आर्य लोगों का मूल शास्त्र वेद त्रिकांड कहलाता है अर्थात् कर्म, ज्ञान और उपासना । पहले शास्त्र जीवों को कर्म का उपदेश करता है, उन कर्मों से शुद्ध अधिकारी जीव को ब्रह्मज्ञान कराता है, फिर जब ज्ञान हो लेता है तो उसको उपासना का उपदेश देता हुआ परम सिद्धि को पहुँचाता है ।

आज कल काल के प्रभाव से उपासनाकांड का प्रचार विरल हो गया है इसी हेतु इस सूत्र का भाषा में अर्थ प्रचार किया गया इस से जगत् का परमोपास्य तुष्ट हो, इति ।

का वृत्त सुनते ही हेमसूरि ने उस की बहुत निंदा की। राजपुत्र हेमसूरि के दुष्ट भाषण सुन घर आया और हेमसूरि को मारने का विचार करते करते शेष रात्रि तक जागा। प्रभात होते ही हेमसूरि ने शिष्य द्वारा राजपुत्र को कहला भेजा कि यह 'स्वप्न बहुत लाभदायक है, आज से सातवें दिन राज्य सर्व तुम्हारे हस्तगत होगा। यदि यह असत्य हो तो हमें दंड देना नहीं हमारी आज्ञा मानना'। राजपुत्र ने हाँ कहा और ऐसा ही हुआ। तब राजपुत्रसे कहकर हेमसूरि ने वैष्णव-शैव-मीमांसक सब को नगर से निकलवा दिया।

उसी काल में सूर्य्यांश देवप्रबोध नामा और जैमिनि के अंश भट्टाचार्य्य नामा पूर्व में दो पंडित हुए। वे लोग जब काशी में आये तब सुना कि गुजरात में जैनों ने वेदमार्ग का नाश किया। ये सुन के वे लोग गुजरात गये और काल पाकर हेमसूर्य्य के विश्वासपात्र शिष्य हुए। एक दिन पद्मावती की अंतरंग आराधना में हेमसूर्य्य ने इन दोनों को मद्य पीने को दिया। देवप्रबोध ने तो मारे डर के पी लिया। भट्टाचार्य्य ने कहा कि थोड़ी देर ठहर के पीयेंगे। अनंतर हेमसूर्य्य ने वेद धर्म की निंदा करना शुरू किया। यह सुन कर भट्टाचार्य्य की आँखों से आँसू गिरने लगा और हेमसूर्य्य ने जाना कि यह कोई छिपा हुआ ब्राह्मण है। हेमसूर्य्य ने उसे अपने ऊपर के कमरे में कैद किया। वहाँ जैनमार्ग की बहुतसी पुस्तकें रक्खी थीं, जिनको पढ़ कर भट्टाचार्य्य ने वह वशीकरण सिद्ध कर लिया जिससे हेमसूर्य ने राजा को वश कर लिया था। उस राजा की एक रानी वैदिक थी और नित्य शालिग्राम का पूजन करके जल पीती थी। उसका महल भट्टाचार्य्य के बँगले से बहुत निकट था। एक दिन उस रानी ने लंबी साँस लेकर यह आधा श्लोक पढ़ा "किंकरोमि क गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति"। यह सुनते ही भट्टाचार्य्य ने उत्तर दिया "माविशीद वरारोहे! भट्टाचार्य्योऽस्तिभूतले" और यह कहके कूद पड़े कि जो वेद प्रमाण हो तो हम न मरें। कहते हैं कि इतने ऊँचे से गिरने से वेद की सत्यता से उनके प्राण तो नहीं गये पर 'जो वेद सत्य हो' इस संदेह के वाक्य कहने से उनकी आँख में चोट आई और वहाँ से निकल कर उस नगर में एकांत में वे छिपे छिपे रहने लगे। एक दिन एक बगीचे में एकांत में एक तुलसी का पेड़ देखा

वैष्णवसर्वस्व

[संप्रदायपरंपरा और स्वल्प पुरावृत्त समेत]

'चतुर्भुजभुजच्छाया समालंबात्सुनिर्भयाः ॥
जयंति संप्रदायास्ते चत्वारो हरिवल्लभाः ॥'

सं० १९३२-६

बात जानकर राजा से कहा कि यह कुंडल है और इसका प्रकाश केवल बारह कोस तक है। राजा ने उसी समय सवार भेजकर जब वृत्त जाना तब दूसरे दिन हेमसूर्य्य को पुस्तकों समेत पृथ्वी में गाड़ दिया। जिस समय हेमसूर्य्य गाड़ा जाता था उस समय बड़ी भीड़ हुई और सब लोगोंने मिलकर हेमसूर्य्य से पूछा कि 'अब तुम धर्मका सच सच तत्व बताओ' तब यह श्लोक पढ़कर उसने प्राण त्याग किया—"हरिर्भागीरथी विप्रा:विप्रा: भागीरथी हरि:। भागीरथी हरि विप्रा: सारमेकं जगत्त्रये"॥ जैनों का बल टूटने से वेद फिर प्रवर्त्त हुये और वैष्णव-शैवमत प्रचार हुआ। भट्टाचार्य्य ने अपना वेदांत मत चलाया और पद्मावती को श्राप दिया कि तू मनुष्य हो। वही सरस्वती नाम से भट्टाचार्य्य ही के कन्या हुई और भट्टाचार्य्य ने उसका विवाह ब्रह्मा के अंश सुरेश्वराचार्य्य नामक अपने शिष्य से कर दिया। सुरेश्वर अपनी स्त्री को लेकर काशी में रहने लगे। जिस समय भट्टाचार्य्य शतायु होकर जैन ग्रंथ पढ़ने के प्रायश्चित्त में तुषानल करके जलने लगे, उस समय शंकराचार्य्य ने आकर इनका हाथ पकड़ा और कहा कि हम से वाद करो। भट्ट ने कहा तुम काशी जाव वहाँ हमारे जामाता से वाद करना, हम तो अब देह त्याग करते हैं। शंकराचार्य्य काशी में आये और सुरेश्वर की स्त्री को मध्यस्थ कर के वाद आरंभ किया। पद्मावती ने पूर्व वैर स्मरण कर के शंकराचार्य्य का पक्ष किया। सातयें दिन सुरेश्वराचार्य्य हारे और शंकराचार्य्य ने उन्हें सन्यासी किया। शंकर दक्षिण में गोकर्ण शिवक्षेत्र में आये और चार शिष्यों को आज्ञा दिया कि चार दिशा में जाकर तुम लोग शिखा सूत्र परित्याग पूर्वक सन्यास मत का प्रचार करो। उन शिष्यों में मध्व नामक एक ब्राह्मण को भगवान श्री रामचंद्रजी ने रात्रि को स्वप्न में आज्ञा दिया कि तुम तो हनुमान के अंश हो और वैष्णव मत फैलाने का तुम्हारा अवतार है, सो उठो और शंकराचार्य्य का मत खंडन करके हमारे तत्व वाद के अनुसार व्यास सूत्र की व्याख्या कर के वैष्णव मत फैलाओ। मध्वाचार्य्य ने भगवदाज्ञानुसार दूसरे दिन से शंकराचार्य्य का मत कंठरव से खंडन करके वैष्णव मत का प्रचार किया।

विल्वमंगल के पीछे और मध्वाचार्य्य के पहले द्रविड़ देश में रामानुज नाम एक ब्राह्मण हुये। लक्ष्मी को तप से प्रसन्न करके उनसे वर

वैष्णवसर्वस्व

(पूर्व्वार्द्ध)
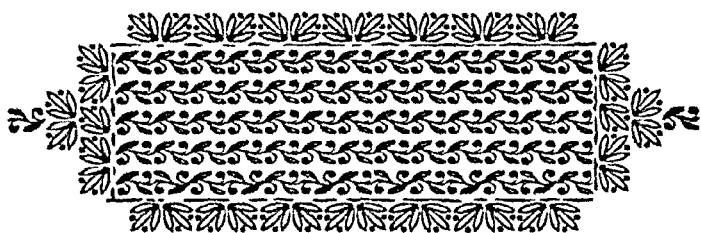
१—क्षर से परे अक्षर ब्रह्म स्वरूप नित्य लीला का गोलोक में धाम है जहाँ श्रीवृंदावन में श्रीयमुनाजी के निकट अनेक कुंजलताओं से वेष्टित एक मणिमय महायोगशिलास्तंभ है। उस भूमि का नाम विहार-भूमि और तीर्थों की नाम-मूल-स्वरूप योगपीठ-शिला से मंडित उस कुट्टिम का नाम खेला तीर्थ है, जहाँ वेद वेदांतादि सर्वशास्त्र वेद्य सच्चिदानंदघन परमात्मा परमानंद-स्वरूप अनेक कोटि नित्यसिद्ध, साधन सिद्ध, भक्त, गोप, गौ और श्री गोपीजनों से वेष्टित उस योग-पीठ पर एकाग्र चिंता से ध्यानावस्थित होकर श्रीव्रजेश्वरी की मानावस्था का ध्यान करते हैं।

२—एक समय सब देवताओं के पूर्वज, सब विद्याके ईशान, सब भूतों के ईश्वर, चराचर के गुरु, मुमुक्षु-शरण, गुण-ब्रह्मस्वरूप श्री शिवजी उस गोकुल मंडप में गये। वहाँ अनेक प्रकार के गान से भगवान को रिझाया और संसार के उद्धार के हेतु प्रेम-मार्ग का सिद्धांत पूछा और भगवान ने प्रेममार्ग का परम गुप्त तत्व और रहस्य सब शिव जी को कहा, जो सुनकर शिव जी ने जगत् के विरुद्ध दिगंबर

(उत्तरार्द्ध)

अथ श्रीविष्णु स्वामी संप्रदाय-परंपरा

श्री पुरुषोत्तम, शिव जी, श्री नारद जी, श्री व्यास जी। व्यासजी के दो शिष्य शुकदेवजी और शांडिल्य। शांडिल्य के शिष्य गर्ग और कौंडिन्य। शुकदेवजी के शिष्य विष्णुस्वामी। विष्णुस्वामी से क्रम से परमानंद मुनि, आनंद मुनि, प्रकाश मुनि, श्रीकृष्ण मुनि, नारायण मुनि, जै मुनि, श्रीमुनि, शंकरभट्ट, पद्मभट्ट, गोपाल भट्ट, श्रीधर भट्ट, श्याम भट्ट, राम भट्ट, सेतु भट्ट, कृष्ण भट्ट, दिवाकर भट्ट, कृपाल भट्ट, विद्याधर भट्ट, दिनकर भट्ट, मधुनिधान भट्ट, ज्ञान देव भट्ट, शुकदेव भट्ट, शिवदेव, शांतिदेव, दयालदेव, क्षमादेव, सन्तोषदेव, धीरजदेव, ध्यानदेव, विज्ञानदेव, महाचार्य्य, तत्त्वाचार्य्य, नृसिंहाचार्य्य, सूवाचार्य्य, सुबुद्धाचार्य्य, प्रबुद्धाचार्य्य, प्रबोधाचार्य्य, असुवाचार्य्य, रुद्राचार्य्य, भगवन्ताचार्य्य, रामेश्वराचार्य्य, ब्रह्मविधिचर्य्याचार्य्य, सुदयाचार्य्य, लक्ष्मनारायणाचार्य्य, ज्ञानदेव, नामदेव, त्रिलोचनदेव इत्यादि बिल्वमंगल जी तक सात सै आचार्य्य हुए हैं, इसी से श्री महाप्रभु जी पहले से गिनने से सात सै सातवें आचार्य्य हैं।

कहते हैं कि विष्णुस्वामीने फिर से जन्म लिया था और व्यास अवतार कहलाते थे।

श्री वल्लभी मत के अतिरिक्त श्री विष्णुस्वामी के संप्रदाय के लोग और कहीं कहीं भी मिलते हैं जैसा कि श्री प्रेमाकर गुसाईं के शिष्य नारायण दास जी सारस्वत, जिनको श्री शुकदेव जी ने दर्शन दिया था। उन के पीछे पुरुषोत्तम जी और वंशीधर जी इस वंश में प्रसिद्ध हुए हैं। नाभा जी ने इन्हीं नारायण दास का भक्तमाल में वर्णन किया है। यह गद्दी नवल गोस्वामी के नाम से अब तक प्रसिद्ध है। ऐसे ही व्रज में और भी कुछ लोग इस संप्रदाय के हैं।

के जंघा पर पड़े। महादेव जी ने यह जान कर कि इस शुक ने हमारा रहस्य सुना, बड़ा क्रोध किया और उस के मारने को अपना त्रिशूल चलाया और वह शुक वहाँ से भागा और व्यासजी की स्त्री के गर्भ में छिपा, इससे ब्राह्मणी और स्त्री को अवध्य जान कर शिवजी का त्रिशूल फिर आया और शुकदेव जी ने व्यासजी के घर में जन्म लिया। तो जो रहस्य शुकदेवजी ने साक्षात् शिवजी से सुने थे वे अपने शिष्य श्री विष्णु स्वामी से कहे, इससे तो ये (शुक) तृतीय हुए। और घर से निकल जाने के पीछे नारदजी से "अहो बकीयं स्तनकालकूट" यह श्लोक गाते हुए सुन के भगवान के चरित्र पूछे तब नारदजी ने कहा कि तुम्हारे पिता ये सब चरित्र भली भाँति जानते हैं उन से जाकर पूछो। यह नारदजी का बाक्य सुन शुकदेवजी घर आए और अपने पिता व्यासजी से सब रहस्यतत्व सीखे, इस रीति से ये षष्ठ हुए।

७—श्री विष्णुस्वामी—महाराज युधिष्ठिर के राज्य समय से किंचित कलियुग बीते द्रविड़ देश में एक राजा हुआ। उस का मंत्री सर्वगुण संपन्न एक ब्राह्मण हुआ, जिस का नाम नारायण भट्ट था। उन के घर में भाद्रपद कृष्ण भौमवार रोहिणी नक्षत्र दो पहर की समय में श्रीविष्णु स्वामी का जन्म हुआ। इनका बालपन का नाम माधव भट्ट था। सातवें बरस में इनके पिता परलोक सिधारे और माता पति के साथ सती हो गई तब श्री विष्णु स्वामी अपने मामा रंगनाथ के साथ विद्याभ्यास के हेतु श्री काशी क्षेत्र में चले। मार्ग में पंढरपुर के राजा मंगलसेन की भेंट कर के काशी में आए और सदाशिव नामक ब्राह्मण से विद्याध्ययन किया और जब गुरुदक्षिणा में गुरु ने यह माँगा कि हम को व्यास सूत्र में कुछ संदेह है सो व्यासजी के मुख से वह अर्थ सुनाय दीजिये। तब योगबल से श्री विष्णु स्वामी ने एक दिव्यरथ मँगाया। उस पर आप आरूढ़ होकर अपने गुरु और उन के अनुज हरिहर भट्ट और पुत्र रंगनाथ भट्ट को साथ लेकर व्यासजी के आश्रम में जाकर व्यासजी के मुख से शुद्धाद्वैत मत के अनुसार मायावाद का खंडन कर के गुरु को सुनवाया और फिर पृथ्वीपर आकर हरिहर भट्ट रंगनाथ को शिष्य किया और सात से

देवता	अंशावतार	पृथ्वीस्थित्यङ्कापुण्यतिथि		स्थल
१४ नैऋतिदेव	रघुत्तम तीर्थ स्वामी	३८ पौष शुक्ल	११	१४ ये चक्रमगर
१५ तुंवुरुदेव	वेदव्यास विधि तीर्थ	२४ चैत्र शुक्ल	२	१५ पण्ढरपुर भीमा तीर
१६ हाहागंधर्व	विद्याधीश तीर्थ	१८ पौष कृष्ण	१४	१६ साँगलि कृष्णा तीर
१७ हू हू गंघर्व	वेदनिधि तीर्थ स्वामी	१७ कार्तिक शुक्ल	१२	१७ निवृत्ति संगम तीर
१८ लोमस ऋषि	सत्यवर्य तीर्थ स्वामी	८ फाल्गुण शुक्ल	६	१८ विलोन नगर
१९ जावालि ऋषि	सत्यनिधि तीर्थ स्वामी	२२ मार्गशीर्ष शुक्ल	४	१९ माचारगुडी कावेरी तीर
२० विश्वामित्र	सत्यनाथ तीर्थ स्वामी	३९ मार्गशीर्ष शुक्ल	११	१० कोलुर
२१ मेधातिथि	सत्याऽभिमान तीर्थ	६९ ज्येष्ठ कृष्ण	१४	२१ आरपी
२२ पराशर ऋषि	सत्यपूर्ण स्वामी	२२ ज्येष्ठ कृष्ण	२	२२ माना मदरी
२३ जामदग्नि ऋषि	सत्य विजय स्वामी	१३ ज्येष्ठ कृष्ण	१२	२३ सावपुर सावणूर
२४ कश्यप ऋषि	सत्यप्रिय स्वामी	९ चैत्र शुक्ल	१३	२४ तुंगभद्रा तीर
२५ मांडव ऋषि	सत्यबोध तीर्थ स्वामी	४० फाल्गुण कृष्ण	१	२५ सांतविवतुर
२६ —	सत्यसंध तीर्थ स्वामी	११ ज्येष्ठ शुक्ल	२	२६ —
२७ —	सत्यवर तीर्थ स्वामी	२ श्रावण शुक्ल	७	२७ —
२८ —	सत्य धर्म तीर्थ स्वामी		—	२८ —
२९ —	सत्य संकल्प तीर्थ स्वामी		—	२९ —

नहीं लिया ? और मैंने यदि चोर भाव से लिया तो उस ने दंड क्यों नहीं दिया ?' तब विष्णुस्वामी ने कहा—'तुम साक्षात् ईश्वर हौ, हम तुम्हारे शरणापन्न हैं, अपना माहात्म्य आप स्थापन कर के हमारा संशय दूर करो'। इस पर भगवान ने अनेक युक्ति और प्रमाणों से अपना स्वरूप प्रतिपादन किया तब विष्णुस्वामी ने कहा कि आप सपरिवार यहीं विराजो और मेरी सेवा का अंगीकार नित्य करो। तब आप ने आज्ञा किया कि हमारी मूर्त्ति की प्रेम से सेवा करो हम सब स्वीकार करेंगे और भगवान ने पंचाक्षर मंत्र का उपदेश कर के गीता और श्री भागवत परम शास्त्र है, हमारी सेवा ही मुख्य धर्म है और प्रेम मात्र साधन है यह उपदेश किया और आप अंतर्हित हुए। भगवान के कहे हुए प्रकार से और जैसी मूर्त्ति का स्वामी ने दर्शन किया था वैसी मूर्त्ति निर्मित करा के स्वामी सेवा करने लगे और लोकोपकार के हेतु आपने शिष्य संग्रह भी किया और किसी लेख के मत से आपने विवाह कर प्रतिरोध किया। किसी के मत से आपने विवाह नहीं किया केवल त्रिदंडी सन्यास कर के सतत श्री हरि सेवन किया। जिस का मत "विवाह किया" यह है उसी का यह भी लेख है कि आपने शरीर सात सौ बरस रक्खा और आप को जो पुत्र हुआ उन का नाम श्रीगोपीनाथ था, जिनका उसी लेख के मतानुसार चैत्र कृष्ण १२ धनिष्ठा नक्षत्र प्रथम प्रहर में जन्म हुआ था और २१ पीढ़ी तक वंश भी रहा और हरिहर, रंगनाथ, जयगोविंद, भट्टाचार्य, मोहनलाल, व्यंकदेश, नरहरि, चिंतामणि, सोमगिरि, पद्मावती, कुलशेखर, चंद्रसेन, हरिजीवी, शंकर, गोविंददास, देवजीव, यज्ञनारायण, नरसिंह, लक्ष्मणगिरि, हरिदास, गोविंददास, दयाराम, जीवनराम, मनसाराम, कृष्णदत्त, वोपदेव, केशव, जयदेव, रत्नपाल, दुर्गावती, नामदेव, बिल्वमंगल इत्यादि शिष्यवर्ग स्वामी ही के काल में हुए हैं। वरंच श्री महाप्रभु जी को भी स्वामी ने आप ही उपदेश कर आचार्य पदवी दे भाष्य करने की आज्ञा दी परंतु यह अप्रमाण है। वास्तव में श्रीगोपीनाथ से ले कर श्री बिल्वमंगल तक सात सै परंपरा-प्राप्त शिष्य हुए और यहाँ जिनका नाम लिखा है वे उन में प्रसिद्ध थे और बहुतों के नाम काल बल से लुप्त हो गए। इसी से यहाँ

अथ श्रीरामानुज संप्रदाय परंपरा

पुरुषोत्तम, लक्ष्मी, विश्वक्सेन, शठकोप, श्रीनाथ, पुंडरीकाक्ष, राममिश्र, यामुनाचार्य, पूर्णाचार्य, रामानुज, गोविंदाचार्य, पराशर, वेदांताचार्य, कलिवैरिदास, श्रीकृष्णप्रसाद, लोकाचार्य, श्रीशैलनाथ, बरबर मुनि, बरदनारायण, श्रीनिवासदास, प्रणतार्तिहराचार्य, बरदाचार्य, वेंकटेश, बरदार्य्य, प्रणतार्तिहर, वेङ्कटार्य, वेङ्कटेश, वरदाचार्य, प्रणतार्तिहर, श्रीनिवास, वेङ्कटाचार्य, कृष्णाचार्य्य, शेषाचार्य्य, श्रीनिवासरंगाचार्य। यह तो वर्तमान वृंदावनस्थ स्वामी रंगाचार्य तक परंपरा लिखी है परंतु रामानुज संप्रदाय में चौहत्तर गद्दी हैं। और देवाचार्य्य से प्रबोधानंद, राघवानंद, रामानंद यह रामानंदी शाखा है। रामानंद से अनंतानंद, कृष्णदास, कालीदास, अग्रदास, नारायणदास, गोविंददास, कान्हरदास तक अग्रदासी शाखा है। और निंबादित्य और रामानुज संप्रदाय से मिलकर श्रीजानकी घाट की और मिथिलापुर की संप्रदाय स्वतंत्र बन गई है। कितने साधु अग्रस्वामी के संप्रदाय के पौहारी बाबा को रामानुज के अंतर्गत मानते हैं पर महाराज विश्वनाथ सिंह ने अपनी गुरु परंपरा में इन लोगों को निंबादित्य के अंतःपाती हितहरिवंश जी के संप्रदाय में माना है।

अथ श्री निंबादित्य संप्रदाय परंपरा

हंस, सनकादिक, नारद, निंबादित्य। निंबादित्य का नाम निंबार्क और नियमानंद भी है। इनकी माता जयंती और पिता अरुण द्राविड़ ब्राह्मण। इसी से इनको आरुणी भी कहते हैं। अंतरंग रूप इनका श्रीललिताजी और रंगदेवी का है। मर्यादा में ये सुदर्शन चक्र का अवतार हैं। शिष्य परंपरा श्रीनिवासाचार्य, विश्वाचार्य, पुरुषोत्तमाचार्य, विलासाचार्य, स्वरूपाचार्य, माधवाचार्य, बलभद्राचार्य, पद्माचार्य, श्यामाचार्य, गोपालाचार्य, कृपाचार्य, देवाचार्य, सुंदर भट्ट, पद्मनाभ, उपेंद्र भट्ट, रामचंद्रभट्ट, वामनभट्ट, कृष्णभट्ट, पद्माकरभट्ट, भूरिभट्ट, माधवभट्ट, श्यामभट्ट, गोपालभट्ट, बलभद्रभट्ट, गोपीनाथभट्ट, केशव-

लोगों के लिये उपासना कांड प्रसिद्ध किया। सर्वजन में इसकी कीर्त्ति होने के कारण सब इसके वाक्य पर विश्वास करने लगे। ऐसे एकादश वर्ष व्यतीत हुए तब शंकराचार्य ने अपने तात से कहा कि पिता अब कुछ अनिष्ट होगा ऐसा ज्ञात होता है इस लिए मेरी मनीषा काशी में जाने की है सो आप की आज्ञा चाहता हूँ। यह सुन पिता ने कहा बहुत अच्छा है परंतु हमको भी काशी को ले चलो। तब शंकराचार्य ने अपने मा बाप को शिविका में बैठाल कर स्त्री समेत काशी में आगमन किया। काशी में आते ही शंकराचार्य को कालज्वर आया और अपनी अंत की वेला जान मणिकर्णिका में स्नान किया और "निमज्जता नाथ भवार्णवान्तश्चिरान्मया पोतइवासि लब्धः" इस श्लोकार्ध से स्तवन करते करते प्राण त्याग किया।

यह पुत्र का अंत देख कर माता पिताने बहुत विलाप किया। अंतर गौर्यंशभूत शंकराचार्य की स्त्री ने अग्रिम आधा श्लोक पढ़ा यथा "त्वयापि लब्धं भगवन्निदानीमनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः"। यह श्लोकार्ध सुनते ही शंकराचार्य्य जीवित होकर स्त्री से बोले कि यद्यपि तुमने हमको जीवित किया तथापि हम सन्यास करेंगे। ऐसा कहकर चतुर्विध कुटीचर, बहूदक, हंस और परमहंसात्मक सन्यास किया। यद्यपि शास्त्र की आज्ञा, यावत् मदिरामत्त के समान ज्ञान से मत्त हुए बिना शिखा सूत्र का त्याग करने के विषय नहीं तथापि इन्हों ने अपना पूर्व श्रीविष्णु का "जमान्मद्विमुखान्कुरु" यह वाक्य स्मरण करके शिखा सूत्रका त्याग किया और काषाय वस्त्र और दंड ग्रहण किया। अनंतर इनके बहुत से शिष्य भी हुए क्योंकि "यद्यदा चरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः। सयत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनु वर्तते"। अनंतर शंकराचार्य ने वही भगवान का वाक्य पूर्ण मनोगत कर के व्याससूत्र का भाष्य मायावाद अर्थात् दैत्य मत के अनुसार किया। कुछ दिन के अनंतर प्रायः इन का मत इस देश में फैल गया।

उसी समय गुजरात देश में एक राजा था। उसका पुत्र कुमारपाल नामक था। यह हेम सूरि नाम किसी श्वेताम्बर जैन से पढ़ाया गया था। किसी समय कुमारपाल ने स्वप्न में राहु से ग्रसा हुआ पूर्ण चंद्र देखा और हेमसूरि से इस का फल पूछने को तत्काल आया। स्वप्न

स्थ वृक्ष पर मंत्र पाया। कृष्णदासी और मनोहरी दो स्त्री और ब्याही। संवत १५८२ कार्तिक सुदी १३ को श्रीराधावल्लभ जी को पाट बैठाया, पाँच भोग सात आरती का नेम रक्खा। इनका संस्कृत ग्रंथ श्रीराधा-सुधानिधि श्लोक २७० भाषा ग्रंथ पद चौरासी। मुख्य शिष्य नरबाहन, नाहरमल्ल, विठ्ठलदास, मोहनदास, छबीलदास, नवलदास, वलीदास, परमानंद रसिक, हठी, हरिदास, खड्गसेन और गंगा, यमुना।

इति श्री वैष्णव सर्वस्व परंपरावर्णने—उत्तरार्द्ध समाप्तः।
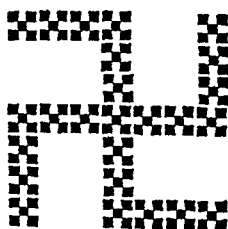
और वहीं बैठे रहे। जब साँझ हुई तब एक माली आया और तुलसी की पुड़िया फूल में छिपाकर ले चला। भट्टाचार्य्य ने माली से बहुत हठ पूर्वक रानी का सब वृत्तांत जाना और "किं करोमि क्वगच्छामि' यह पूरा श्लोक लिखकर मालीको दिया कि वह रानीको देवे। रानी ने एकांत में भट्टाचार्य्य को बुलाया और यह जैन बनकर उसके महल में गए और फिर ब्राह्मण होकर रानी को दर्शन दिया। रानी ने इसकी बड़ी पूजा किया और दोनों ने मिल कर वेद धर्म के लिए बड़ा विलाप किया। रानी ने उनको अपने महल में छिपा कर रक्खा। फिर जैसा वशीकरण का बाजू हेमसूर्य्य ने राजा के हाथ में पहिनाया था वैसा ही दूसरा बाजू भट्टाचर्य ने बनाकर रानी से राजा के हाथ में बँधवा दिया और वह बाजू अपने पास मँगवा लिया। इस अभिचार से राजा को बड़ा ज्वर आया। राजा ने हेमसूर्य से ज्वर की निवृत्ति का उपाय पूछा। उस ने कहा कि ब्राह्मण को काल-पुरुष दान देने से ज्वर छूटेगा। राजा ने एक ब्राह्मण का लड़का खोज कर जनेऊ पहना कर काल-पुरुष को दान दिया और उससे राजा का ज्वर छूट गया। राजा के चित्त में उसी दिन से ब्राह्मणों का महत्व बढ़ा और ब्राह्मणों को राज्य में रहने की आज्ञा मिली। उसी समय देवप्रबोधाचार्य्य भी प्रायश्चित्त करके नरसिंह जी से वर पाकर सिद्ध होकर पालकी पर चढ़ कर बहुत से शिष्यों के साथ उस नगर में आये। भट्टाचार्य्य इनसे आकर मिले। एक दिन जब ये श्राद्ध करते थे तब हेमसूर्य्य ने अपने मंत्र से इनका श्राद्ध नाश करना चाहा और जहाँ पाक होता था वहाँ मद्य बरसाना चाहा। भट्टाचार्य्य ने भी मंत्र से नारियल उड़ाये, जो जैन सिद्धों के सिर पर गिरने लगे, जिससे वे वहाँ से भाग गए। दूसरे दिन सब ब्राह्मण मिल कर राजसभा में गये। राजा ने प्रणामादि से इनका बड़ा सत्कार किया। ज्योतिषी ने पंचांग सुनाया। स्मार्त्त ने कहा आज अमावस्या है, श्राद्ध करना चाहिये। सुनते ही हेमसूर्य्य ने क्रुद्ध कर कहा कि आज अमावस्या नहीं पूर्णमासी है। अंत में यह ठहरी जिसकी बात झूठ हो वह अपने मत की पुस्तक समेत पृथ्वी में गाड़ा जाय। साँझ को हेमसूर्य्य ने अपनी इष्ट देवता पद्मावती से प्रार्थना करके उसका कुंडल चंद्रमा के स्थान पर उदय कराया। देवप्रबोध ने नृसिंह जी के प्रसाद से यह

युगुलसर्वस्व के भादो शुक्ल ८ सं०
१९२३ के उपसंहार में तथा
चंद्रावली नाटिका के प्रथम
संस्करण सं०१९३४ के
मुख पृष्ठ पर उल्लेख

माँगा कि हमसे भवगत् सिद्धांत कहो । लक्ष्मीजी ने गरुड़ जी को आज्ञा दिया और गरुड़ जी ने नारायणीय सिद्धांत रामानुज से कहा, जिसके अनुसार श्रीरामानुजाचार्य्य ने गीता और सूत्र पर भाष्य करके विशिष्टाद्वैत वैष्णव संप्रदाय संसार में फैलाया । इसी संप्रदाय में अगस्त्य और परशुराम के बनाये हरिहरोपासक और लक्ष्मी के उपासक वैष्णव शाखांतर में हुए हैं ।

इस काल से बहुत पूर्व ही पंढरपुर में व्यास और सूर्य्य के अंश से निंबादित्य ब्राह्मण हुये, जिनको श्री विट्ठलनाथ जी ने अपना सिद्धांत कहा और उसके अनुसार उन्होंने द्वैताद्वैत मत प्रवर्त्त किया । जैनों के बल से लुप्त संप्रदाय को श्रीनिवासाचार्य्य ने सूत्र और गीता पर भाष्य करके फिर से प्रवर्त्त किया ।

यह चारो संप्रदाय अर्थात् विष्णुस्वामी, मध्व, रामानुज और निंबादित्य की पूर्व्व व्यवस्था हुई । ये संप्रदाय रुद्र, ब्रह्म, लक्ष्मी और सनकादि के क्रमसे प्रवर्त्त किये हुये वास्तव में एक पर प्रगट अलग-अलग संसार में प्रसिद्ध हैं ।

मध्वाचार्य्य से श्री जगन्नाथजी ने आज्ञा किया था कि 'जो इन चारो संप्रदाय के बाहर है वह हमारा प्यारा नहीं है ।'

इन्हीं संप्रदायों के चार उपसंप्रदाय हैं—विष्णुस्वामी का उपसंप्रदाय चैतन्य, रामानुज का नंद, मध्वाचार्य्य का प्रकाश और निंबादित्य का स्वरूप । इनमें स्वरूप और प्रकाश की संप्रदाय कालबल से विच्छिन्न हो गई । ये चारो उपसंप्रदाय मूल संप्रदाय से अविरुद्ध हैं, केवल आचार्यों के रुचिभेद से नामांतर से प्रसिद्ध हैं ।

चतुर्भुजभुजच्छाया व्यवसायातसुनिर्भयाः ।
जयन्ति स सम्प्रदायाश्चत्वारो हरिवल्लभाः ॥ १ ॥

इनके पुत्र गणपति सोमयागी थे। काशी में पंडितों की सभा में इन्होंने गणेश की भाँति दर्शन दिया और इसी से सभा में इनका प्रथम पूजन होता था। एक वेर सब प्रसिद्ध नगरों में जाकर शास्त्र का दिग्विजय किया था। तीस यज्ञ करके ये देवलोक सिधारे।

इनको तीन स्त्री थीं। इनमें ज्येष्ठ स्त्री के ज्येष्ठ पुत्र वल्लभ भट्ट सायंकाल की समय प्रहर दिन चढ़े के सूर्य की भाँति दर्शन दिया था। पाँच यज्ञ करके ये भी देवलोक गए।

इनके पुत्र लक्ष्मणभट्ट जी बड़े विद्वान साक्षात् अक्षर ब्रह्म शेष जी के अवतार हुए। इनकी छोटी ही अवस्था में इनके पिता का परलोक हुआ था, इससे इनके मातामह ने लालन पालन करके इनको विद्या पढ़ाया था। इनकी स्त्री देवकीजीका अवतार श्रीइल्लमगारू जी थीं। इनके तीन पुत्र हुए। बड़े भाई का नाम नारायणभट्ट उपनाम रामकृष्ण भट्ट। ये कुछ दिन पीछे सन्यासी हो गये, तब केशवपुरी नाम पड़ा। यह ऐसे सिद्ध थे कि खड़ाऊँ पहिने गंगा पर स्थल की भाँति चलते थे। मँझले श्री महाप्रभुजी और छोटे रामचंद्र भट्ट जी। ये महा भारी पंडित थे, वेदांत, मीमांसा, व्याकरण, काव्य और साहित्य बहुत अच्छा जानते थे। लक्ष्मणभट्ट जी के मातुल वशिष्ट गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इन्हें अपने घर ले गए थे। कृष्ण कुतूहल, गोपाल लीला महाकाव्य इत्यादि कई ग्रंथ इन्होंने बनाए हैं। ये श्री महाप्रभु जी के विद्या में शिष्य थे और प्रायः अयोध्या में रहते थे। वादी ऐसे भारी थे कि प्रायः उस काल के सब पंडितों को जीता था। यहाँ तक कि इसी बाद के लाग पर इनको विष दे दिया।

लक्ष्मणभट्ट जी के पूर्व पुरुषों ने पंचानवे सोमयाग किये थे, सो इन्होंने पाँच और करके सौ पूरे किए। अंत के सोमयज्ञ का आरंभ चैत सुदो ६ सोमवार पुष्य नक्षत्र अभिजित योग में सं० १५३२ में किया। जब यज्ञ समाप्त हुआ तो कुंड से यह अलौकिक वाणी सुन पड़ी कि तुम्हारे कुल में पूर्ण पुरुषोत्तम का प्रागट्य होगा। यह वाणी सुनते ही यज्ञ में सबको बड़ा आनंद हुआ और लक्ष्मणभट्ट जी ने उसी समय काशी में सवालक्ष ब्राह्मण-भोजन का संकल्प किया। उसी

अथ श्री मध्व संप्रदाय परंपरा

देवता	अंशावतार	पृथ्वीस्थित्यङ्का	पुण्यतिथि		स्थल
१ वायुदेव	श्री आनंद तीर्थस्वामी	६८	माघ शुक्ल	६	१ स्थलदक्षिणस्थवृन्दावने
२ रुद्रदेव	पद्मनाभतीर्थस्वामी	७	कार्तिक कृष्ण	१४	२ बद्रिकाश्रम
३ मन्मथदेव	नरहर तीर्थस्वामी	८	पौष कृष्ण	७	३ अनीगोंदी
४ गरुड़देव	माधव तीर्थस्वामी	१७	भाद्रपद कृष्ण	१५	४ हंविरूपाक्षी
५ रुद्रदेव	अक्षोभ तीर्थस्वामी		मार्गशीर्ष कृष्ण	१५	५ मेणुर भीमा तीर
६ हंसदेव	जय तीर्थस्वामी	६	आषाढ़ कृष्ण	८	६ मलखेड़ा
७ सूर्यदेव	विद्यानिधि राजतीर्थ	६४	वैशाख शुक्ल	३	७ जगन्नाथ
८ चंद्रदेव	कवींद्र तीर्थस्वामी	७	चैत्र शुक्ल	६	८ पंपा सरोवर
९ यमदेव	वागीश तीर्थस्वामी	४	चैत्र शुक्ल	२	९ आनिगोंदी
१० अग्निदेव	रामचंद्र तीर्थस्वामी	३३	वैशाख शुक्ल	८	१० मलखेडा
११ वरुणदेव	विद्या तीर्थस्वामी	८	कार्तिक कृष्ण	४	११ आनिगोंदी
१२ कुबेरदेव	रघुनाथ तीर्थस्वामी	३६	मार्गशीर्ष कृष्ण	२	१२ कोलुर
१३ प्रवाहदेव	रघुवर्य्य तीर्थस्वामी	८	ज्येष्ठ कृष्ण	३	१३ पेनगोड़ी

गर्भश्राव हुआ, सो माता जी ने केले के पत्ते में वह गर्भ लपेटकर शमी के खोंडरे में रख दिया। यहाँ से ये लोग चौंड़ा नगर में गए और वहाँ सुना कि देशोपद्रव सब शांत हो गया। यहाँ एक रात्रि निवास करके जब लक्ष्मणभट्ट जी फिर काशी की ओर फिरे तो उसी शमी के वृक्ष के नीचे चालीस हाथ के लंबे चौड़े अग्निकुंड में बालक को खेलता देखा। श्री इल्लमगारू जी के स्तन से दूध की धारा उस समय निकली सो महाप्रभु जी के मुखारविंद में पड़ी। तब श्री लक्ष्मणभट्ट जी ने वेदमंत्र से और माता जी ने अपनी भाषा में अग्नि और बरुण की स्तुति किया और अग्नि ने इल्लमगारू जी को मार्ग दिया। माता जी ने बड़े आनंद और वात्सल्य से पुत्र को गोद में उठा लिया। उस समय आकाश से पुष्पवृष्टि हुई और देवताओं ने प्रत्यक्ष होकर जै जै कार किया। सबके चित्त में अकस्मात् नंद महोत्सव के आनंद का आविर्भाव हुआ।

श्री लक्ष्मणभट्ट जी बालक को लेकर काशी फिर आए और श्री ठाकुर जी की आज्ञा प्रमाण कंठी, माला, उपरना और बीड़ा श्री महाप्रभु जी को दिया। तैत्तिरीय शाखा के अनुसार नाम करणादिक सब संस्कार बड़े आनंद से हुए और जब श्री इल्लमगारू जी गंगा पूजने को गईं तब श्री गंगा जी ने माता की गोद ही में श्री महाप्रभु जी का चरण स्पर्श किया और स्त्रियों सहित माता जी के वरदान माँगने पर जल में से शब्द सुन पड़ा कि तुम्हारा पुत्र सब वादियों को जीतेगा।

अथ जन्मपत्री

स्वस्ति श्रीमन्नृपति विक्रमार्क राज्याब्दे १५३५ शाके १४०० वैशाखे मासे कृष्णपक्षे तिथौ १० रविवासरे घ० १६ प० १४ परत्र ११ तिथौ धनिष्ठा नक्षत्रे घ० ३८ प० ४६ शुभयोगे घ० ३८ प० २ ववकर्णे श्री सूर्योदयात् इष्ट घ० ३७ प० ४२ वृश्चिक लग्नोदये श्री लक्ष्मणभट्ट पत्नीपुत्ररत्नमजीजनत्।

अथ श्री चैतन्य संप्रदाय परंपरा

श्रीकृष्ण, ब्रह्मा, नारद, व्यास, मध्व, पद्मनाभ, नृहरि, माधव, अक्षोभ्य, जयतीर्थ, ज्ञानसिंधु, दयानिधि, विद्यानिधि, राजेंद्र, जयधर्म्मा, पुरुषोत्तम, ब्रह्मण्य, व्यासतीर्थ, लक्ष्मीपति, माधवेंद्र। उन के तीन शिष्य ईश्वर १ अद्वैत २ और नित्यानंद ३। ईश्वर के श्रीकृष्ण-चैतन्य, उन के गोपाल-भट्ट, उन के गोस्वामी गोपीनाथ, जिनका वंश अब प्रसिद्ध है। श्रीकृष्ण-चैतन्य के मुख्य चौदह पाषद और चौंसठ महंतों के नाम नीचे लिखे के अनुसार जानो। और श्रीकृष्ण-चैतन्य विद्या में केशवपुरी के शिष्य थे।

अद्वैत १ अभिराम २ नित्यानन्द ३ सुंदर ठक्कुर ४ धनंजय पंडित ५ कमलाकर ६ साहंस पंडित ७ पुरुषोत्तम ८ श्रीधर ९ हलायुध १० गौरीदास ११ उद्धारण १२ परमेश्वर १३ कृष्ण १४।

नीलांबर चक्रवर्ती १ गदाधर पंडित २ गदाधर ठक्कुर ३ नरहरी ४ मुकुंद ५ सदाशिव कविराज ६ जगदानंद पंडित ७ दामोदर ८ वन-माली ९ रघुनाथ भट्ट १० गदाधर भट्ट ११ प्रबोधानंद १२ राघो गोस्वामी १३ भूगर्भ गोस्वामी १४ काशीमिश्र १५ रूप गोस्वामी १६ सनातन गोस्वामी १७ रघुनाथदास १८ रघुनाथ भट्ट १९ गोपाल भट्ट २० लोकनाथ २१ दूसरे गदाधर भट्ट २२ जीव गोस्वामी २३ गोविंद २४ माधव २५ वासू घोष २६ सिवानंद की स्त्री २७ परमानंदपुरी २८ राघौदास २९ शुक्लांबर ब्रह्मचारी ३० जगदीश पंडित ३१ श्रीलाचार्य ३२ गरुड़ ३३ गोपीनाथ सिंह ३४ शंकर ३५ गुणसागर राय ३६ माधव ३७ भास्कर ३८ वनमाली ३९ सार्वभौम ४० सिंहानंद ४१ लोकनाथ कविचंद्र ४२ श्रीनाथ ४३ रामनाथ ४४ काशीमिश्र ४५ रामानंद ४६ प्रतापरुद्र ४७ कालीदास ठक्कुर ४८ माकी स्त्री ४९ गोपीनाथाचार्य ५० शारंगदास ५१ विश्वेश्वर ५२ सत्यराज ५३ रामानंद ५४ गोविंद ५५ गरुड़ ५६ आचार्य्यरत्न ५७ श्रीवल्लभ ५८ वृंदावन ५९ शिवानंद ६० जगन्नाथ पंडित ६१ अनल ६२ हरिदास ६३ हृदयानंद ६४।

करना चाहिए कि आपने कैसा वेष लिया है और क्या इच्छा है। यह विचार कर योगी बनकर एक सोने का बघनहा हाथ में लेकर श्री लक्ष्मणभट्ट जी के द्वार पर आये। श्री महाप्रभु जी उस समय अत्यंत रुदन करने लगे और कोई प्रकार से चुप न हों। तब लक्ष्मणभट्ट जी ने अपने पास बैठे हुए ज्योतिषियों से पूछा कि आज कल बालक के ग्रह कैसे हैं। ब्राह्मणों ने उत्तर दिया कि ग्रह तो अच्छे हैं परंतु एक बघनहा इसके गले में पड़ा रहे तो अच्छा है। श्रीलक्ष्मणभट्टजी ने अपने शिष्यों को आज्ञा दिया कि अभी बघनहा मोल लेकर सोने से मढ़ाकर पोहचा लाओ। शिष्य लोग जैसेही बाहर निकले वैसेही देखा कि एक योगी बघनहा लिए खड़ा है। बड़े हर्ष से शिष्य लोग योगी को भीतर ले गए। श्री महादेव जी ने श्री महाप्रभुजी को कठुला पहना कर पूछा "भगवान कोयं वेषः"॥ श्री महाप्रभु जी ने उसी क्षण उत्तर दिया "सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छातः करिष्यति" यह सुनकर सब लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतने छोटे बालक के मुख से शब्द स्पष्ट और फिर संस्कृत कैसे निकला। किसी ने कहा योगी बड़े सिद्ध हैं, किसी ने कहा नहीं बालक ही बड़ा प्रतापी है। उस पीछे श्री महादेव जी कई बेर योगी के वेष में खिलौना लेकर प्रायः मिलने को आते थे।

सं० १५४० चैत्रवदी ६ अर्थात् श्री रामनवमी रविवार को लक्ष्मण भट्ट जी ने वेदविधि से आप का यज्ञोपवीत किया। सोरों जी नामक प्रसिद्ध वाराहक्षेत्र में केशवानंद नाम के एक बड़े सिद्धयोगी वैष्णव संप्रदाय के थे। सो जब श्री महाप्रभु जी का चंपारण्य में प्रागट्य हुआ, उसी समय उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि इस समय पृथ्वी पर कहीं पुरुषोत्तम का अवतार हुआ है। उनके सेवकों में से कृष्णदास मेघन नामक एक सेवक थे, सो वह गुरु का वचन सुनते ही यह विचार करके घूमने निकले कि जो पुरुषोत्तम का प्रागट्य कहीं हुआ होगा, दर्शन होहींगे और जो हमको नाम लेकर पुकारेगा उसी को हम पुरुषोत्तम जानेंगे। यह कृष्णदास मेघन फिरते फिरते श्री महाप्रभुजी के उपवीत-समय काशी में आये और भीड़ देखकर जो श्री लक्ष्मण

भट्ट, गंगलभट्ट, केशव काश्मीरिभट्ट, श्रीभट्ट, हरिव्यासदेव। हरि-व्यासदेवजी से पाँच शाखा नीचे लिखे हुए के अनुसार यथा।

शोभूराम, कर्णहरदेव, मथुरेश नरहरिदास, प्रह्लाददास इत्यादि।

दूसरी शाखा

कर्णहरि, परमानंददेव, नागजी, मोहनदेव, आत्माराम, नारायण दास, भगवानदास, गिरधारीदास, गोपालदास।

तीसरी शाखा

शोभूराम, मथुरेशदेव, बदरीशदेव, जयरामदेव, कृष्णदेव, धर्म दास जी।

चौथी शाखा

व्यासदेव, परशुराम, हितहरिवंश, नारायणहित, वृंदावनहित, श्री गोविंदहित।

पाँचवीं शाखा

व्यास जी के पहले किसी महात्मा से है यथा श्री आशाधीर जी, श्रीहरिदास स्वामी, विट्ठलविपुलविनोदविहारण, विहारणदास जी, नर-हरदेव जी, रसिकदेव जी, पीतांबरदेव, गोवर्द्धनदेव, नरोत्तमदेव। रसि-कदेव जी के दूसरे शिष्य ललितकिशोरी उनके मौनीदास जी जिनकी श्रीवन में टट्टी है।

शोभूराम जी के भाई आत्माराम उन की दो शिष्य-परंपरा, एक संतदास की, एक माधव दास की।

इसी संप्रदाय में सुमुखन भक्त के पुत्र व्यासजी बड़े प्रसिद्ध हुए हैं, संवत् १६१२ में जन्म, पैंतालीस वर्ष की अवस्था में श्रीवन आए और बारह संप्रदाय चलाई।

श्रीहित हरिवंश जी का निवास देवनगर, गौड़ ब्राह्मण काश्यप गोत्र यजुर्वेद माध्यन्दनी शाखा, पिता व्यास मिश्र माता तारावती, वंशी का अवतार, संवत १५५९ वैशाख सुदी ११ को जन्म। इनके ताऊ नृसिंहा-श्रम प्रसिद्ध भक्त थे। इन को बारह भाई और स्त्री का नाम रुक्मिणी, मोहन जी इत्यादि तीन पुत्र और एक कन्या। श्रीस्वामिनी जी से अश्व-

मित्रभाव था और आपने उनको श्री गोवर्द्धन की कंदरा से लाकर कृष्ण प्रेमामृत ग्रंथ दिया था और ऐसे ही निम्बार्क संप्रदाय के आचार्य केशव काश्मीरी जी से भी आप का बड़ा संग रहता था। विदित हो कि चैतन्य संप्रदाय के ग्रंथ वृहद्गौरगणोद्देशदीपिका ने श्री महाप्रभुजी को चौंसठ महानुभावों की गिनती में अनन्त संहिता के ७५ वें अध्याय के प्रमाण से श्री शुकदेवजी का अवतार लिखा है।

एक समय श्री लक्ष्मणभट जी ने मायावादी संन्यासियों को अपने घर भोजन को बुलाया था सो श्री महाप्रभु जी ने ऐसा शास्त्रार्थ उठाया, जिससे मायावाद का खंडन होय। तब लक्ष्मणभट्ट जी ने कहा जो अपने घर आवे उसका अपमान नहीं करना, इससे आपने उनसे शास्त्रार्थ नहीं किया। पर वैष्णव धर्म-प्रचार की आप को ऐसी उत्कंठा थी कि काशी में जहाँ शास्त्रार्थ होता वहाँ आप जाते और वैष्णव मत का मंडन और अन्य मत का खंडन करते। यहाँ तक कि लक्ष्मणभट्ट जी के पास लोग उरहना देने आते कि आप के पुत्र ने भरी सभा में हमारा अपमान किया। तब लक्ष्मणभट्ट जी आप को निषेध करते। तब जिन पंडितों से आप निषेध करते उन पंडितों से शास्त्रार्थ न करते। उस काल में विश्वनाथ के सभामंडप में पंडितों की सभा नित्य होती थी और वे लोग एक बात पर निर्णय करके तब उठते थे। सो श्री महाप्रभुजी उस सभा-स्थान की भीति पर श्लोक नित्य लिख आते और जब पंडित लोग उसका एक दिन में निर्णय करते तो दूसरे दिन दूसरे श्लोक से उनका सब निर्णय खंडित हो जाता। ऐसे ही तीस दिन तक आपने यह खेल खेला और उसी से पत्रावलंबन ग्रंथ बन गया। एक प्रसंग यह भी है कि आप से बहुत से पंडित शास्त्रार्थ करने को आते थे और समय बहुत थोड़ा था, इस लिए आपने पत्रावलम्बन ग्रंथ करके विश्वेश्वर के द्वार पर भी डुगडुगी फेर दी थी कि जिसको हमसे शास्त्रार्थ करना हो पहले जाकर वह पत्र देख ले। यह सुनकर जो पंडित वह पत्र देखने जाते वह सब अपने प्रश्न का उत्तर पाकर लौट आते और इसी से पत्रावलंबन ग्रंथ बना।

श्री लक्ष्मणभट्ट जी को श्री महाप्रभुजी के इस घोर शास्त्रार्थ करने से बड़ा क्षोभ हुआ और आपने वात्सल्य भाव से यह सोचा कि

श्रीवल्लभीय-सर्वस्व

श्रीश्रीवल्लभाचार्यचरणकमलमिलिंदमरंद

चिंतासंतानहंतारो यत्पादांबुजरेणवः ।
स्वीयानां तान् निजाचार्यान् प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥

सं० १६३२

मित्रभाव था और आपने उनको श्री गोवर्द्धन की कंदरा से लाकर कृष्ण प्रेमामृत ग्रंथ दिया था और ऐसे ही निम्बार्क संप्रदाय के आचार्य केशव काश्मीरी जी से भी आप का बड़ा संग रहता था। विदित हो कि चैतन्य संप्रदाय के ग्रंथ वृहद्गौरगणोद्देशदीपिका ने श्री महाप्रभुजी को चौंसठ महानुभावों की गिनती में अनन्त संहिता के ७५ वें अध्याय के प्रमाण से श्री शुकदेवजी का अवतार लिखा है।

एक समय श्री लक्ष्मणभट जी ने मायावादी संन्यासियों को अपने घर भोजन को बुलाया था सो श्री महाप्रभु जी ने ऐसा शास्त्रार्थ उठाया, जिससे मायावाद का खंडन होय। तब लक्ष्मणभट्ट जी ने कहा जो अपने घर आवे उसका अपमान नहीं करना, इससे आपने उनसे शास्त्रार्थ नहीं किया। पर वैष्णव धर्म-प्रचार की आप को ऐसी उत्कंठा थी कि काशी में जहाँ शास्त्रार्थ होता वहाँ आप जाते और वैष्णव मत का मंडन और अन्य मत का खंडन करते। यहाँ तक कि लक्ष्मणभट्ट जी के पास लोग उरहना देने आते कि आप के पुत्र ने भरी सभा में हमारा अपमान किया। तब लक्ष्मणभट्ट जी आप को निषेध करते। तब जिन पंडितों से आप निषेध करते उन पंडितों से शास्त्रार्थ न करते। उस काल में विश्वनाथ के सभामंडप में पंडितों की सभा नित्य होती थी और वे लोग एक बात पर निर्णय करके तब उठते थे। सो श्री महाप्रभुजी उस सभा-स्थान की भीति पर श्लोक नित्य लिख आते और जब पंडित लोग उसका एक दिन में निर्णय करते तो दूसरे दिन दूसरे श्लोक से उनका सब निर्णय खंडित हो जाता। ऐसे ही तीस दिन तक आपने यह खेल खेला और उसी से पत्रावलंबन ग्रंथ बन गया। एक प्रसंग यह भी है कि आप से बहुत से पंडित शास्त्रार्थ करने को आते थे और समय बहुत थोड़ा था, इस लिए आपने पत्रावलम्बन ग्रंथ करके विश्वेश्वर के द्वार पर भी डुगडुगी फेर दी थी कि जिसको हमसे शास्त्रार्थ करना हो पहले जाकर वह पत्र देख ले। यह सुनकर जो पंडित वह पत्र देखने जाते वह सब अपने प्रश्न का उत्तर पाकर लौट आते और इसी में पत्रावलंबन ग्रंथ बना।

श्री लक्ष्मणभट्ट जी को श्री महाप्रभुजी के इस घोर शास्त्रार्थ करने से बड़ा क्षोभ हुआ और आपने वात्सल्य भाव से यह सोचा कि
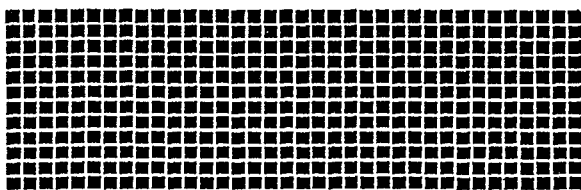
श्री वल्लभीय सर्वस्व

दक्षिण में तैलंग देश में आंध्र प्रांत में आकबीडु जिला में, खम्मम कॉंकरिविल्ल ग्राम में यजुर्वेद तैत्तिरीय शाखा भारद्वाज गोत्र में महादेव पात्र के वंश के ब्राह्मण रहते थे। इसी वंश में रामनारायणभट्ट के पुत्र यज्ञनारायण सोमयागी हुए। वे वेद के अवतार थे। इन पर वेद पुरुष अत्यंत ही प्रसन्न रहते थे। जब इनको वेद में कोई संदेह होता तब स्नान करके वेद पुरुष का ध्यान करते और वेद पुरुष प्रत्यक्ष होकर संदेह-नाश कर देते।

एक वेर मायावादियों ने हँसी से इनसे कहा कि आप वेद के अवतार हो तो बकरेसे वेद पढ़वावो। तब यज्ञनारायण जी ने बकरे की ओर देखकर कहा "भोलुलायत्वं वेदानुच्चारय"। इतना सुनते ही बकरा वह पाठ करने लगा। ऐसे ही दक्षिण में उनने अनेक चमत्कार दिखाए। ये श्री रामानुजाचार्य मत के बड़े पंडित थे।

जब यज्ञनारायण जी ने पहिला सोमयाग किया तब अग्निकुंड में से यह शब्द सुन पड़ा कि ऐसे सौ सोमयाग के पीछे भगवान का अवतार होता है। बत्तीस सोमयाग करके ये देवलोक पधारे।

इनके पुत्र गंगाधरभट्ट सोमयागी साक्षात् शिवजी के अवतार थे, जिन्होंने अवभृथ स्नान करती समय लोगों को प्रत्यक्ष अपने केश में से जलधारा निकलती दिखाई। अट्ठाइस सोमयाग करके ये देवलोक गए।

अवस्था में लक्ष्मणबाला जी का शृंगार करते करते शरीर समेत उनके स्वरूप में लय हो गए। उनके पुत्रों ने लक्ष्मणभट्ट जी के वस्त्र का लौकिक संस्कार बड़ी धूमधाम से किया और महाप्रभु जी ने एक वर्ष तक यथाशास्त्र विहित सब रीति का बर्ताव किया।

काशी में वैष्णव तंत्र, शैव तंत्र, कौमारिल प्रभाकर, मौद्गल इत्यादि मत के ग्रंथ और शैव, पाशुपत, कालामुख, अघोर ये चार शव संप्रदाय और विष्णु स्वामी इत्यादिक चार वैष्णव संप्रदाय के ग्रंथ नहीं मिलते थे। इस हेतु सरस्वती भंडार में जाकर इन ग्रंथों को आपने अवलोकन किया और वेद की ३६ शाखा की संहिता ब्राह्मण इत्यादिक कंठाग्र किया। फिर जब इल्लमगारू जी पति के हेतु विलाप करतीं तब आप को बड़ा दुःख होता, इससे श्री बाला जी ने स्वप्न में इल्लमगारू जी को विलाप करने का निषेध किया।

जब आपको पृथ्वी परिक्रमा की इच्छा हुई तब मातृचरण को मामा के पास पहुँचाने को आप विद्यानगर पधारे और मार्ग में अपने अंतरंग दामोदर दास जी को सेवक किया।

विद्यानगर में राजा कृष्णदेव* के यहाँ आचार्य के मामा रंग-

प्रभु जी से इन्होंने पाई थी कि नहीं, इसमें संदेह है और रामकृष्णभट्ट जी कुछ दिन पीछे संन्यासी होकर केशवपुरी नाम से खड़ाऊँ पहनकर जल पर चलने वाले बड़े सिद्ध विख्यात हुए। इन लोगों के समकाल के प्रसिद्ध पंडित ये थे, मध्वमत में व्यास तीर्थ, निंबार्क मत में केशवभट्ट, रामानुज मत में ताताचार्य और व्यङ्कटाध्वरि, शंकर मत में आनंदगिरि, स्मार्तों में वा अन्य मत में मुकुंदानंद, केवलानंद, माधवानंद, वरदराज के महंत हस्तशृंगार और रंगनाथ जी के महंत आनंदराम।

* राजा कृष्णदेव की वंश परंपरा यों है। पांडु वंश में चंद्रबीज राजा के दो पुत्र थे—बड़ा मेरु छोटा नन्दि। नन्दि को भूतनन्दि, उसको नंदिल। नंदिल के दो पुत्र—शेषनंदि और यशोनंदि। इन दोनों को चौदह पुत्र थे, जिनको अमित्र और दुर्मित्र नामक दो भाई राजाओं ने जीत लिया। इनमें से सात भाई दक्षिण गए, जिनमें से नंदिराज ने नंदपुर वा रंगोला बसाया (१०३० ई०)। उनके वंश में फिर चालुक्य राज (१०७६ ई०) विजयराज जिन्होंने

समय में संयोग से दक्षिण में कुछ यवनों का उपद्रव भी हुआ। इससे लक्ष्मणभट्टजी कुटुंब को लेकर और बहुत सा द्रव्य साथ लेकर काशी की ओर चले।

विदित हो कि श्री लक्ष्मणभट्ट जी सं० १५३२ के चैत्र के अंत में बहुत से विद्यार्थी और ब्राह्मण-भोजन के हेतु बहुत सा द्रव्य लेकर काशी चले और काँकरवल्लि से सात मंजिल पर भृंग-सार्थक तीर्थ में, जहाँ सर्वतोभद्रकुंड में राजा वरुण ने अपने यज्ञ का अवभृत स्नान किया है, तीन दिन तक रहे। वहाँ वैशाख बदी ११ की अर्द्धरात्रि को श्री ठाकुर जी ने श्री स्वामिनी जी सहित दर्शन दिया और आज्ञा किया कि जब तुम काशी से लौटकर चंपारण्य आओगे तब तुम्हारे यहाँ हमारा प्रागट्य होगा। यह आज्ञा करके एक उपरना, एक तुलसी की माला, एक कंठी देकर श्री मुख से कहा कि जब बालक हो तब उसको यह उपरना उढ़ा देना, यह कंठी-माला पहना देना और यह बीड़ा जन्म घोटी में पिला देना। इतना सुनते ही जब लक्ष्मणभट्ट जी नींद से चौंक पड़े तो इन वस्तुओं के सिवा और वहाँ कुछ न देखा।

लक्ष्मणभट्टजी भीमरथी, उज्जैन, पुष्कर इत्यादि तीर्थ होते हुए प्रयाग आये। वहाँ भरद्वाज ऋषि के आश्रम में आकाशवाणी हुई कि तुम हमारे गोत्र में धन्य हो, जिसके घर साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम का प्रागट्य होगा।

प्रयाग से भट्ट जी काशी आये। वहाँ गंगास्नान काशी-विश्वेश्वर का दर्शन करके एक स्थान लेकर उतरे और वेद का पारायण, अग्नि होत्र और ब्राह्मण-भोजन प्रारंभ किया और थोड़े दिनों में सवा लाख ब्राह्मण का भोजन समाप्त किया। इसी समय में दिल्ली के यवन राज्य में मुगलों और पठानों के विरोध के कारण बड़ा उपद्रव उठा और भारतवर्ष के पश्चिमोत्तर प्रांत में चारों ओर हलचल पड़ गई। लोग नगर छोड़कर गाँव में बसने लगे। लक्ष्मण भट्ट जी के जाति के लोग भी काशी छोड़-कर इधर उधर चले गए और लक्ष्मणभट्ट जी भी कुटुंब लेकर दक्षिण की ओर चले, सो जब चम्पारण्य पहुँचे तब शाके १४०० सं० १५३५ वैशाख सुदी ११ रविवार को श्री इल्लमगारू जी का सात महीने का

जोड़कर निवेदन किया कि आज छ महीने से सब मत मतांतर के पंडितों से यहाँ शास्त्रार्थ हो रहा है, सो माया मत वालों को अब तक किसी ने नहीं जीता है। यह सुनकर आपने पंडितों से प्रश्न किया और शास्त्रार्थ प्रारंभ हुआ। चौदह दिन तत्वविचार में, बारहदिन स्थान-वदादेश इस सूत्र से प्रारंभ होकर व्याकरण में और एक दिन जैन बौद्ध विचार में, इस तरह सब मिला कर सत्ताइस दिन शास्त्रार्थ हुआ और जितने वादी सभा में उपस्थित थे सब निरुत्तर हुए। तब राजाने सब पंडितों से जयपत्र लिखवा कर उसपर अपनी मुहर करके इनको दिया और सब पंडितों और मत के आचार्यों ने मिलकर आचार्य पदवी से महाप्रभुजी को पुकारा। राजा कृष्णदेव ने कनकाभिषेक से आप की पूजा किया और सपरिवार शरण आकर सेवक हुआ।[1] इस अभिषेक के सोने को श्रीमहाप्रभु जी ने दीन ब्राह्मणों को बाँट दिया और अनेक ब्राह्मण के लड़कों के यज्ञोपवीत और लड़कियों के विवाह और अनेक का ऋण-शोधन इससे हुआ। इस सुवर्ण के सिवा एक थाली भर कर मुहर राजा ने आप को भेंट किया था, जिसमे से सात मुहर आपने अंगीकार करके उसका श्रीनाथ जी का नूपुर बनाया। फिर राजा को वहाँ के अनेक ब्राह्मणों वृहस्पति सब वाजपेय आदि यज्ञ और अनेक महादान कराया और उससे जो द्रव्य एकत्र हुआ उसका तीन भाग किया। एक भाग से श्री विठ्ठलनाथ

१—विद्यानगर के, कृष्णागढ़ के और नवानगर के राजा लोग इसी काल से इस मत के सेवक होते आते हैं किंतु विद्यानगर का वंश अब नहीं रहा, उस काल में दक्षिण प्रांत के सब राज्य बने हुए थे। विद्यानगर जाने के पूर्व आप हेमाचल गोआ इत्यादि होते हुए चौंड़ा गए थे। चौंड़ा के राजा ने एक म्याना और दो प्यादा साथ देकर आचार्य को विद्यानगर पहुँचवाया था। यहाँ पर एक बात और जानने के योग्य है कि श्री महाप्रभुजी विद्यानगर की सभा में श्री विष्णुस्वामी की गद्दी पर विराजे। इसी समय श्री विल्वमंगल जी ने श्री विष्णुस्वामी के रहस्य और मतभेद सब आप को देकर तिलक किया था। यह भी जनश्रुति है कि श्री महाप्रभु जीने सभा में योग-बल से अपना कमण्डलु फेंका, जो सूर्य का सा सभा में प्रकाश किया। तदनन्तर आप सभा में गए।

सूर्य ०।२।२२।११ लग्न ७।१०।१६।३१ दिन मान ३०।२८ रात्रिमान २६।३२

एक वेर श्री इल्लमगारू जी को व्रजयात्रा की इच्छा हुई और आपने अपने पति से निवेदन किया कि कृपापूर्वक व्रज चलिए परंतु भट्ट जी ने कहा कि पुत्र का यज्ञोपवीत करके चलेंगे। यद्यपि इल्लमगारू जी ने पति की आज्ञा का कुछ उत्तर नहीं दिया तथापि व्रजयात्रा की आपकी बड़ी ही इच्छा थी। यहाँ तक कि एक वेर श्री महाप्रभु जी को गोद में लिए आप बैठी थीं सो व्रज का स्मरण करके उनके नेत्रों में जल भर आया। सर्वान्तरयामी श्री महाप्रभु जी ने माता की इच्छा पूर्ण करने को जम्हाई लिया और मुखारविंद में चौरासी कोस व्रज का दर्शन कराया। श्री इल्लमगारू जी को यह देखकर बड़ा ही आश्चर्य हुआ और आपने लक्ष्मणभट्ट जी से सब वृत्तांत कहा। भट्ट जी ने कहा कि एक वेर हम अग्निशाला में भूमि पर शयन करते थे तब अग्नि ने स्वप्न में हमसे आज्ञा किया कि तुम इस बालक के विषयमें संदेह मत करना सो यह बालक अलौकिक साक्षात् नारायण का स्वरूप है।

एक वेर श्री विश्वनाथ जी ने यह विचार किया कि श्री ठाकुर जी ने हमको तो माया मत फैलाने की आज्ञा दिया है और आप अपने संप्रदाय फैलाने को क्यों प्रगट हुए हुए हैं, इससे एक वेर तो दर्शन

आसन पर आए। तदनंतर श्री आचार्य जी महाप्रभु जी ब्रज की यात्रा करने चले और उसका निर्णय करके अनुक्रम से वर्णन किया है। और जिस जिस स्थल में आपने श्री मद्भागवत का पारायण कर बैठकें नियत की हैं, जो अद्य पर्यंत प्रसिद्ध हैं, उस जगह ऐसा ꙮ चिन्ह किया है।

भट्ट जी के घर में गए तो उनको देखते ही श्री महाप्रभुजी ने आज्ञा किया "कृष्णदास तू आयो"। इन्होंने दंडवत करके उत्तर दिया "जै, मैं आयो" और एक अँगूठी श्री महाप्रभु जी के यज्ञोपवीत भिक्षा में दी और तब ये आजन्म श्री प्रभु जी के साथ ही रहे।

उपवीत धारण करने के पहले और पीछे जब आप खेलते तो ब्राह्मण के लड़कों को शिष्य बनाते और आप गुरु बनकर उपदेश करते।

लक्ष्मणभट्ट जी के घर के पास सगुन दास नामक ढाढ़ी रहते थे। उनको श्री महाप्रभु जी के दर्शन साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम के होय, इससे उनका नेम था कि नित्य आपका दर्शन करके तब जल पीते। तो जब श्री महाप्रभु जी चरणारविंद से चलने लगे तब आप उनके घर पधार कर दर्शन देते। सो एक दिन श्री लक्ष्मणभट्ट जी ने आप से आज्ञा किया, कि शूद्र के घर आप मत पधारा करो। इस पर श्री महाप्रभु जी ने यह वाक्य पढ़ा "स्त्रियो वैश्या तथा शूद्रा तेपियान्ति परांगतिं"। यह सुनकर लक्ष्मणभट्ट जी ने श्री महाप्रभु जी को सगुनदास जी के यहाँ जाने की आज्ञा दिया।

यज्ञोपवीत के पीछे श्री महाप्रभु जी को लक्ष्मणभट्ट जी घर ही में वेद पढ़ाते थे परंतु आप की बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी, इस हेतु असाढ़ सुदी २ पुष्यार्क योग में माध्वानंद स्वामी के यहाँ लक्ष्मणभट्टजी ने आपको पढ़ने को बैठाया। सो चार ही महीने में चारो वेद, छओ शास्त्र पढ़कर सब को बड़ा आश्चर्य उत्पन्न किया। गुरु दक्षिणा में माध्वानंद स्वामी ने श्री ठाकुर जी की सेवा माँगी तब आपने आज्ञा किया कि जब श्रीनाथ जी को प्रगट करेंगे तब आप को सेवा देंगे। ईन्हीं को और ग्रंथों में माधवेंद्रपुरी करके लिखा है और ये मध्व संप्रदाय के आचार्य थे। और विद्याविलास भट्टाचार्य से आपने न्याय, पातंजल और काव्य पढ़ा। श्री महाप्रभु जी की विद्या देख करके लक्ष्मणभट्टजी को फिर संदेह हुआ परंतु ठाकुर जी ने स्वप्न में पुनर्दर्शन देकर वह संदेह निवृत्त कर दिया। यही माधवेंद्रपुरी श्री कृष्ण चैतन्य के मंत्र गुरु हैं और इसी कारण श्री महाप्रभु जी और श्री कृष्ण चैतन्य से

हरिश्चंद्र मैगजीन खं० १ सं० ५
(१५ फरवरी सन् १८७४ ई०)
में नारद सूत्र केवल अर्थ सहित
विना व्याख्या के छपा था ।
सं० १९३३ में पुस्तक
लिखते हुए अर्थ भी ठीक
किया गया है ।

ऐसा न हो कि द्वेष करके जादू से कोई पंडित हमारे पुत्र को मार डाले। यह विचार कर आपने देश जाने का मनोरथ किया क्योंकि बारह वर्ष की काशी में रहने की आप की प्रतिज्ञा भी पूरी हो गई थी। यह सब बात विचार कर आप सकुटुम्ब काशी से दक्षिण चले।

वहाँ से सात मंजिल पर यह सुनकर कि विष्णु स्वामी संप्रदाय के कोई पंडित लक्ष्मणभट्ट जी अपने पुत्र सहित काशी में अनेक पंडितों को जीत कर यहाँ आते हैं, बहुत से पंडित मिलकर एक साथ लक्ष्मण भट्टजी के डेरे पर शास्त्रार्थ करने गए और जब श्री महाप्रभुजी ने उनको शास्त्रार्थ में जीता तब लक्ष्मणभट्जी ने प्रसन्न होकर कहा कि वरदान माँगो। तब आपने दो वरदान माँगे—प्रथम तो यह कि आप हमको शास्त्रार्थ करने जाने से कहीं रोको मत और दूसरे यह कि शास्त्रार्थ में कोई हमारा तेज पराभव न कर सके। लक्ष्मणभट्ट जी ने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक दोनों वरदान दिए।

लक्ष्मणभट्ट जी साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम के धाम अक्षर ब्रह्म शेष जी के स्वरूप हैं, इससे आप को त्रिकाल का ज्ञान है। सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब काँकरवार से बड़े पुत्र रामकृष्ण भट्टजी को बाला जी में बुलाया और वहीं आपने डेरा किया। पुत्रों को अनेक शिक्षा देकर रामकृष्णभट्ट जी को श्री यज्ञनारायण के समय के श्री रामचंद्र जी पधराय दिए और कहा कि देश में जाकर सब गाँव और घर आदि पर अधिकार और वेल्लिनाटि तैलंग जाति की प्रथा और अपने कुल अनुसार सब धर्मपालन करो। ऐसे ही श्री यज्ञनारायणभट्ट के समय के एक शालिग्राम जी और मदनमोहन जी श्री महाप्रभुजी को देकर कहा कि आप आचार्य होकर पृथ्वी में दिग्विजय करके वैष्णव मत प्रचार करो और छोटे पुत्र रामचंद्र जी को, जिनका काशी में जन्म हुआ था, अपने मातामह की सब स्थावर जंगम संपत्ति दिया[१]। और श्री महाप्रभु जी के ग्यारह वर्ष की

१—ये रामचंद्रभट्ट बड़े पंडित थे। गोपाललीलामहाकाव्य, कृष्ण कुतूहल महाकाव्य और शृंगार-वेदांत ये तीन ग्रंथ इनके मिलते हैं। अयोध्या में ये रहते थे और श्री महाप्रभु जी को विद्यागुरु करके मानते थे। वैष्णव दीक्षा श्री महा-

भक्तमात्र के हेतु यह उद्योग है। क्रिस्तान आदि विदेशी धर्मप्रेमी जन समझें कि कृष्ण उनके निर्गुण परमेश्वर का नाम है, वैष्णवों की तो कुछ बात ही नहीं है, शैव कहें कि विष्णु शिव ही का नामांतर है, ब्राह्म समझें कि हरि ब्रह्म ही को कहते हैं, उपासना और आर्यसमाज इसे अपना ही तत्व मानें, सिक्ख इस में गुरु का पथ देखें और ऐसे ही भक्तिमार्ग वाले मात्र सब लोग इस को अपनी निज संपत्ति समझें। इस में कोरे कर्ममार्गी वा बहु-भक्त वा स्वयं-ब्रह्म लोग यदि मुझ को गाली भी देंगे तो मैं अपने को कृतार्थ समझूँगा।

लोगों को उचित है कि इस ग्रंथ को देखें। निश्चय रक्खैं कि परमेश्वर को पाने का पथ केवल प्रेम है। और बातें चाहे धर्म की हों या लोक की, दोनों बड़ी ही है। बिना शुद्ध प्रेम न लोक है न परलोक। जिस संसार में परमेश्वर ने उत्पन्न किया है, जिस जाति वा कुटुंब से तुम्हारा संबंध है और जिस देश में तुम हो उस से सहज सरल प्रेम करो और अपने परम पिता परम गुरु परम पूज्य परमात्मा प्रियतम को केवल प्रेम से ढूँढ़ो। बस और कोई साधन नहीं है।

हरिश्चंद्र

ऐसा न हो कि द्वेष करके जादू से कोई पंडित हमारे पुत्र को मार डाले। यह विचार कर आपने देश जाने का मनोरथ किया क्योंकि बारह वर्ष की काशी में रहने की आप की प्रतिज्ञा भी पूरी हो गई थी। यह सब बात विचार कर आप सकुटुम्ब काशी से दक्षिण चले।

वहाँ से सात मंजिल पर यह सुनकर कि विष्णु स्वामी संप्रदाय के कोई पंडित लक्ष्मणभट्ट जी अपने पुत्र सहित काशी में अनेक पंडितों को जीत कर यहाँ आते हैं, बहुत से पंडित मिलकर एक साथ लक्ष्मण भट्टजी के डेरे पर शास्त्रार्थ करने गए और जब श्री महाप्रभुजी ने उनको शास्त्रार्थ में जीता तब लक्ष्मणभट्जी ने प्रसन्न होकर कहा कि वरदान माँगो। तब आपने दो वरदान माँगे—प्रथम तो यह कि आप हमको शास्त्रार्थ करने जाने से कहीं रोको मत और दूसरे यह कि शास्त्रार्थ में कोई हमारा तेज पराभव न कर सके। लक्ष्मणभट्ट जी ने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक दोनों वरदान दिए।

लक्ष्मणभट्ट जी साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम के धाम अक्षर ब्रह्म शेष जी के स्वरूप हैं, इससे आप को त्रिकाल का ज्ञान है। सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब काँकरवार से बड़े पुत्र रामकृष्ण भट्टजी को बाला जी में बुलाया और वहीं आपने डेरा किया। पुत्रों को अनेक शिक्षा देकर रामकृष्णभट्ट जी को श्री यज्ञनारायण के समय के श्री रामचंद्र जी पधराय दिए और कहा कि देश में जाकर सब गाँव और घर आदि पर अधिकार और वेल्लिनाटि तैलंग जाति की प्रथा और अपने कुल अनुसार सब धर्मपालन करो। ऐसे ही श्री यज्ञनारायणभट्ट के समय के एक शालिग्राम जी और मदनमोहन जी श्री महाप्रभुजी को देकर कहा कि आप आचार्य होकर पृथ्वी में दिग्विजय करके वैष्णव मत प्रचार करो और छोटे पुत्र रामचंद्र जी को, जिनका काशी में जन्म हुआ था, अपने मातामह की सब स्थावर जंगम संपत्ति दिया[1]। और श्री महाप्रभु जी के ग्यारह वर्ष की

१—ये रामचंद्रभट्ट बड़े पंडित थे। गोपाललीलामहाकाव्य, कृष्ण कुतूहल महाकाव्य और शृंगार-वेदांत ये तीन ग्रंथ इनके मिलते हैं। अयोध्या में ये रहते थे और श्री महाप्रभु जी को विद्यागुरु करके मानते थे। वैष्णव दीक्षा श्री महा-

फल तुम्हारा अमृतमय प्रेम है यदि वही नहीं तो फिर यह क्यों ? क्या संसार में कोई ऐसा है जिससे प्रेम करैं । जो फूल आज सुंदर कोमल हैं और जो फल आज सुस्वादु हैं पर कल न इनमें रंग है न रूप न स्वाद, सूखे गले मारे फिरते हैं, भला उनसे अनुराग ही क्या ? प्रेम को तो हम चिरस्थाई किया चाहैं यहाँ प्रेमपात्रही स्थाई नहीं । तो चलो बस हो चुकी फिर इनसे प्रीति का फल ही क्या ? फल शब्द से आप कोई वांछा मत समझिएगा। प्रेम का यह सहज स्वभाव है कि वह प्रत्युत्तर चाहता है सो यहाँ दुर्लभ है । हमने माना कि 'ऐसे भी सत् लोग हैं जो प्रेम का प्रत्युत्तर दें' पर वह भी तो परिणाम दुःख स्वरूप ही हैं । "संयोगा विप्रयोगान्ताः" कहा ही है । तो जिसके परिणाम में दुःख है वह वस्तु किस काम की । फिर उस दुःख में जीवन की कैसी बुरी दशा होगी ? तो ऐसे प्रेम ही से क्या और जीवन ही से क्या ? इसीसे न कहा है "जैसे उड़ि जहाज को पच्छी फिर जहाज पर आवै ।" और जाय कहाँ । देखो संसार में वह कितना उदासीन है जिसको तुम्हारे प्रेम का क्लेश भी है । तो नाथ ! जो फिर उस उत्तम जीव को इस संसार के पंक में फँसाओ तो कैसे बनै । हमने माना कि हमारी करनी वैसी नहीं । हाय ! भला यह मुँह से और कौन कह सकता है कि हम इसके योग्य हैं पर अपनी ओर देखो । नाथ ! अब नहीं सही जाती । कृत्रिमप्रेमपरायण और स्वार्थपर संसार से जी अब बहुत घबड़ाता है । सब तुम्हारे स्नेह के बाधक ही हैं साधक कोई नहीं, और जो स्वार्थपर नहीं हैं वे बेचारे भी क्या हैं कि कुछ संतोष देंगे । हाय ! क्या करैं । हार करके स्नेह करके जैसे हो वैसे तुम्हारेही शरण जाते हैं और वहाँ से भी दुरदुराए जायँ तो फिर क्या करैं । अन्त होगई, नाकों में दम आगई, अब नहीं सही जाती । इस चर्वितचर्वण को कब तक चबायँ । सच कहते हैं अब किसी की बात भी नहीं सुहाती । यद्यपि चित्त परवश होकर दिन दिन उलटा फँसता जाता है और संसार का और अपने जीवन का मोह बढ़ता ही जाता है पर साथही जी भी ऐसा मिचता जाता है जिसका कुछ कहना नहीं । धन के विषय में भी वैसाही कीजिए । सारे संसार को दिखाइए कि हमारे यों डंका देकर इस संसाररूपी शत्रु-दुर्ग से

नाथ विद्याभूषण दानाध्यक्ष थे। श्री महाप्रभु जी अपने मामा के घर उतरे और वहीं यह सुना कि राजा कृष्णदेव की सभा में आजकल नित्त मतमतांतर का वाद होता है। यह सुन के आपने इच्छा किया कि हम भी चलेंगे। दूसरे दिन प्रातःकाल स्नान संध्या होम करके ब्रह्मचारी का भेष कर आप राजा की सभा में पधारे। इनका दर्शन पाते ही सब सभा तेजोहत हो गई और राजा कृष्ण देव रायने बड़े आदर से इनको बैठाया। तब आपने राजा से सभा का वृत्तांत पूछा। राजा ने हाथ

विजयनगर बसाया (१११८), विमलराज (११५८), नरसिंघदेव, जो बड़ा प्रसिद्ध हुआ (११८०), रामदेव (१२४६) और भूपराज (१२७४)। भूपराज अपुत्र था, इससे इसने अपने निकटस्थ गोत्रज वीर बुक्कराय को गोद लिया। वीर बुक्कराय (१३२४) की सभा में सायण के बड़े भाई माधवाचार्य (विद्यारण्य) बड़े पंडित थे और उन्होंने वेदों पर भाष्य किया है और अनेक ग्रंथ बनाए हैं। वीर बुक्कराय की सभा में कई विलायत के लोग आए थे। इनके हरिहरराय (१३६३), उनके देवराज (१३६७) विजयराज (१४१४) और उनके पंडरदेव (१४२८)। पंडरदेव को श्री रङ्गराज ने जीत कर अपने पुत्र रामचंद्रराय को (१४५०) राजा बनाया। इनके नृसिंहराय (१४७३), फिर वीर नृसिंहराय (१४६०), उनके अच्युतराय और उनके कृष्णदेवराय। राजा कृष्णदेवराय ने सं० १५७० तक (१५२४ ई०) राज्य किया और गुजरात जय किया और मुसलमानों से लड़े। राजा कृष्णदेव के सेनापति नाग नायक ने मथुरा जीत कर राज्य स्थापन किया, जो १६ पीढ़ी तक रहा। इनके रामराज हुए, जो निज़ामशाह और इमादुलमुल्क की लड़ाई में मारे गए। उनके पीछे श्री रंगराज, त्रिमल्लराज, वीर संघपतिराज, द्वितीय श्री रंगराज, रामदेवराय, व्यंकटपतिराय, द्वितीय तृमघराय, द्वितीय रामदेवराय और द्वितीय व्यंकटपतिराय हुए। द्वितीय व्यंकट मुगलों से हार कर चंद्रदेवगिरि में बसे। इनके पुत्र रामराय, उनको हरिदास (१६६३), चक्रदास (१७०४), त्रिम्मदास (१७२१), रामराय (१७३४), गोपालराव व्यंकटपति, त्रिमल्लराय, वीर व्यंकटपति और रामदेवराय क्रम से राजा हुए। इस वंश के अंतिम राजा रामदेवराय, जिनको सं० १८७५ (१८२६ ई०) में टीपू सुलतान ने मार कर राज्य नाश कर दिया।

जी की कटिमेखला बनी, दूसरे भाग से पिता का ऋण शोधन किया और तीसरे भाग को करणीय यज्ञ के व्यय निर्वाहार्थ माता को सौंप दिया। और अनेक दिन तक ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, व्रत यज्ञादि इत्यादि धर्म का उपदेश करते आप विद्यानगर में विराजे।

कुछ दिन तक विद्यानगर में निवास करने के उपरांत माता से आज्ञा लेकर पृथ्वी-परिक्रमा करने को सं० १५४८ वैशाख वदी २ को आप नगर से बाहर चले। उस सकय ब्रह्मचर्यव्रत के कारण सीआ हुआ वस्त्र नहीं पहरते थे, इससे धोती उपरना पहनकर दंड कमंडल छत्र और पादुका धारण किए हुए आप चलते थे। इसी ब्रह्मचर्य के दंड धारण पर भ्रम से बहुत मूर्ख आक्षेप करते हैं कि श्री वल्लभाचार्य पहले दंडी थे, फिर गृहस्थ हुए। दामोदरदास और कृष्णदास ये दो सेवक आपके साथ थे। पहले भीमरथी के तट पर पण्ढरपुर में आए, वहाँ सप्ताह परायण करके बैठक स्थापित किया। (आगे जिस तीर्थ के वर्णन में पा० बै० स्था० यह संकेत देखो वहाँ समझो कि परायण करके बैठक स्थापन किया) फिर नासिक, त्र्यंबक, पंचवटी, गोदावरी तीर्थ में आए वहाँ त्र्याह पा० बै० स्था०। वहाँ से उज्जयिनी में आए। वहाँ सिप्रा और अंगपात कुंड (जिसमें भगवान जब सांदीपनी जी के यहाँ पढ़ते थे तब पटिया धोते थे) में स्नान करके महाकालेश्वर का दर्शन करके नगर के बाहर एक पीपल की डाल गाड़ कर उस पर कमण्डलु का जल आपने छिड़का, जिससे वह तत्क्षणात् एक वृक्ष हो गया और उसके नीचे सप्ताह पा० बै० स्था०। यह पीपल का वृक्ष अद्यापि वर्तमान है। वहाँ से पुष्कर जी की यात्रा कर आप व्रज की ८४ कोस की परिक्रमा करने के हेतु सं० १५४८ के भाद्रपद कृष्णाष्टमी अर्थात् जन्माष्टमी के दिन श्री गोकुल में पधारे। तब श्रीनाथ जी को यमुना जल में क्रीड़ा करते देख आप भी उनके समीप जाने लगे। तब तो श्रीनाथ जी गिरिराज ऊपर आए। वहाँ भी आप उनके पीछे पीछे गए, इसी से श्री भगवान ने प्रसन्न हो यह वरदान दिया कि "यावत् यमुना जी में गंगा जल रहेगा तावत् तुम्हारी संप्रदाय अचल रहेगी"। ऐसा कह कर श्रीनाथ जी अंतर्ध्यान हो गए। तब आप जिस मार्ग से पूर्व में गए थे, पूर्व गत मार्ग से आ अपने व्याकुल शिष्यों से मिलकर

सा नाम पूर्वोक्त भक्ति कस्मै नाम सदा प्रश्नार्ह ईश्वर में परमप्रेम-रूपा अर्थात् साधनांतरशून्या है। किं शब्द से ईश्वर का ही बोध होता है क्योंकि ईश्वर में सदा प्रश्न बना ही रहता है। "नैकः सर्वः स वः कः किं" विष्णुसहस्रनाम में भगवान् के नाम हैं क्योंकि वेद ईश्वर के विषय में 'नेतिनेति' बोलते हैं।

३ ॐ अमृतस्वरूपा च।

और अमृतस्वरूप है। ३।

अमृत नाम मधुर है और मोक्षस्वरूप है क्योंकि जो भक्तिरत हैं उनको मोक्षांतर की अपेक्षा नहीं होती।

४ ॐ यल्लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवत्यमृतीभवति तृप्तोभवति।

जिसको पाकर मनुष्य सिद्ध होता है, अमृत होता है और तृप्त होता है। ४।

यत् अर्थात् भक्तिस्वरूप अमृत को पाकर सिद्ध नाम साधनांतर निरपेक्ष और अमृती भवति नाम स्वयमानन्दरूप होता है, मृत्यु से निडर हो जाता है, तृप्त अर्थात् एतद् व्यतिरिक्त इस या परलोकगत सुखविषयक निरिच्छ होता है।

५ ॐ यत्प्राप्य न किंचिद्वांछति न शोचति न द्वेष्टि न रमते नोत्साहीभवति।

जिसको पाकर फिर न कुछ चाहता है न सोचता है, न किसी से द्वेष करता है न कहीं रमता है और न किसी विषय का उत्साह करता है॥ ५॥

क्योंकि पूर्वोक्त वार्ता का मुख्य कारण मन है, परंतु जब वह इसने भक्ति से किसी (परमेश्वर) को अर्पण किया है तो उसके अभाव से ये बातें आप न होंगी क्योंकि कार्य कारण के बिना नहीं हो सकता।

६ ॐ यद्ज्ञानान्मत्तोभवति स्तब्धोभवत्यात्मारामो भवति।

जिसको जानकर पागल, स्तब्ध और आत्माराम हो जाता है॥६॥

भक्ति का स्वरूप कह कर सूत्र में फल कहते हैं कि उस भक्ति का स्वरूप जान करके मनुष्य मत्त अर्थात् पागल हो जाता है 'जडोन्मत्त-पिशाचवत्'। "निशम्य कर्माणि गुणानतुल्यान् वीर्याणि लीलातनुभिः

तदीयसर्वस्व

अर्थात्

श्री नारदकृत भक्तिसूत्र का बृहत् भाष्य

प्रेमी जनों के दासानुदास प्रेमपथ के भिक्षुक

तदीय नामांकित अनन्य वीर वैष्णव

श्रीहरिश्चन्द्र

द्वारा

'केनापि देवेन हृदि स्थितेन'

लिखित

भक्त्य त्वनन्यया लभ्यो हरिरन्यत् विडम्बनम्

सं० १९३३

७ ॐ सा न कामयमाना निरोधरूपात् ।

वह भक्ति कामना के अर्थ नहीं होती, क्योंकि वह निरोधरूपा है ।।७।।

जो कामना के लिए की जाती है वह भक्ति नहीं वह लोकव्यापार है। जब श्री नृसिंह जी ने प्रह्लाद जी को वर माँगने के हेतु कहा तब उन्होंने भी यह उत्तर दिया कि 'हमने आपसे व्यापार नहीं किया, भक्ति किया। जो सेवक होकर सेवा के बदले में सेव्य से कुछ चाहे वह सेवक नहीं किंतु व्यापारकारी बनिया है, और यदि आप वर देना चाहें तो यही दीजिए कि हमारे मन में किसी वर वा राज्यभोगादि बांछा की उत्पत्तिही न हो'। भगवान ने श्रीमुख से भी यही आज्ञा की है "नमय्यावेशितधियां कामः कामाय कल्पते। भर्जिता कथिता धाना भूयो बीजाय नेष्यते" ।। जिन लोगों का चित्त मुझ में शुद्ध रीति से प्रतिष्ठित है उनके काम कामना के अर्थ नहीं होते, क्योंकि भूने और कूटे धान फिर नहीं उगते।

इस सूत्र से विषयजन्य प्रेम का भी निवारण किया, इससे लोग संसार के विषयियों के इंद्रियजन्य सुख वा और किसी इच्छा से की हुई प्रीति को हम किसी पर प्रेम करते हैं यह कह कर इस प्रेमशब्द को लज्जित न करें, क्योंकि प्रेम तो सर्वदा कामनाशून्य है ।।

कामनाही की निवृत्ति के अर्थ कहते हैं कि वह भक्ति निरोधस्वरूपा है, तो जब चित्त निरुद्ध होगा तो उसमें कोई कामना आपही न होगी।

भक्तिमार्गीय परमाचार्य श्रीश्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु ने अपने ग्रंथ निरोधलक्षण में लिखा है, 'अहंनिरुद्धो रोधेन निरोधपदवीं गतः। निरुद्धानां तु रोधाय निरोधं वर्णयामि ते ॥ हरिणा ये विनिर्मुक्तास्ते मग्ना भवसागरे। ये निरुद्धास्तएवात्र मोदमायांत्यहर्निशं' ॥ आप आज्ञा करते हैं—मैं रोध में निरुद्ध हूँ और निरोध की पदवी को प्राप्त हो चुका हूँ तथापि निरोधाधिकारियोंके निरोध के अर्थ निरोध का वर्णन करता हूँ। फिर आप आज्ञा करते हैं कि जिन को भगवान ने छोड़ दिया है वे संसारसागर में डूबे हुए हैं और जिनको उसने निरुद्ध किया है

उपक्रम

हम आर्य लोगों में धर्मतत्व के मूलग्रंथों का भाषा में प्रचार नहीं। यही कारण है कि भिन्नता स्थान स्थान फैली हुई है। अनेक कोटि देवी देवताओं का माहात्म्य, छोटी छोटी बातों में ब्रह्महत्या का पाप और तुच्छ तुच्छ बातों में बड़े बड़े यज्ञों का पुण्य, अहं ब्रह्म का ज्ञान और मूलधर्म छोड़ कर उपधर्मों में आग्रह ने भारतवर्ष से वास्तविक धर्मों का लोप कर दिया। जिस जगत्कर्त्ता ने हम लोगों को उत्पन्न किया, संसार के सुख दिए, बुरे भले का ज्ञान दिया और अपना सत् मार्ग दिखलाया उस से यहाँ की प्रजा विमुख हो कर धर्मांतर में फँस गई। यदि प्रथम *कर्त्तव्य उसकी भक्ति के अनंतर कर्मानुष्ठान में प्रवृत्त होते तो कुछ बाधा* नहीं थी। वह न हो कर गौण कर्म तो मुख्य हो गए और मुख्य वस्तु गौण हो गई। इसीसे सारा भारतवर्ष भगवद्विमुख होकर छिन्न भिन्न हो गया जो कि इसकी अवनति का मूल कारण हुआ। कभी भगवद्विमुख कोई देश या जाति उन्नत हो सकती है? धर्म हमरा ऐसा निर्बल और पतला हो गया है कि केवल स्पर्श से वा एक चुल्लू पानी से मर जाता है। कच्चे गले सड़े सूत वा चिउँटी की दशा हमारे धर्म की हो गई है। हाय!!!

इसी धर्मपथ को समुन्नत करने को एक ईश्वरवादी अनेक आचार्यों ने परिष्कृत और सहज धर्म प्रचलित किए हैं और अनेक लोग इन मार्गों में दीक्षित हैं। किंतु उन लोगों में भी बाह्यवेष बाह्याडंबर आचार विचार वा परनिंदादि आग्रह ऐसे समा गये हैं कि उनका धर्म किसी काम नहीं आता। या तो ईश्वरवादी हिंदूसमाज से संपूर्ण बहिष्कृत हो जायँगे या कर्ममार्ग से ऐसे दब जायँगे कि नाममात्र के भक्त रहैंगे।

इसी विषमता को दूर करने को इस ग्रंथ का आविर्भाव है। इस में मुक्तकंठ से कहा गया है कि केवल प्रेम परमेश्वर का दिव्य मार्ग है। यद्यपि यह ग्रंथ वैष्णवों की शैली पर लिखा गया है, किंतु परमेश्वर के

भजन, चौथा "सख्यभाव निरोध" अर्थात् ईश्वरही को सखा मान कर निरुद्ध होना, पाँचवाँ "वात्सल्यभावनिरोध" अर्थात् श्री नन्दयशोदादिक ब्रज के बड़े गोपियों के वा इनके सदृश और किसी के भाव के समान ईश्वर में पुत्रवत् स्नेह करना, छठा "कान्तभावनिरुद्ध" होना। इन छ निरोधों में पूर्व पूर्व से उत्तर उत्तर अधिक हैं।

८ ॐ निरोधस्तु लोकवेदव्यापारसन्यासः।

निरोध तो लोक वेद व्यापार का त्याग करना है ॥ ८ ॥

इस सूत्र में निरुद्ध होने का स्वरूप कहते हैं। लोक और वेद के व्यापार को छोड़ देना ही निरोध है।

९ ॐ तस्मै अनन्यता तद्विरोधिपूदासीनता च।

और उसमें अनन्यता और उसके विरोधियों पर उदासीनता भी निरोध है अर्थात् विना अनन्यता हुए निरोध की सिद्धि नहीं होती ॥९॥

१० ॐ अन्याश्रयाणां त्यागोऽनन्यता।

अन्य आश्रयों का त्याग करना अनन्यता है।

लोक में यह प्रत्यक्ष है कि स्वामी का सेवक, मित्र को मित्र, पुरुष को स्त्री वड़ी प्रिय होगी। जो अनन्य हो 'अनन्याश्चिन्तयन्तो मामित्यादि श्री महावाक्य भी है, व्याससूत्र में भी 'अनन्याधिपतिः' ईश्वर का गुण लिखा है।

११ ॐ लोकवेदेपु तदनुकूलाचरण तद्विरोधिपूदासीनता।

लोक और वेद में केवल उन्हीं (प्रेमपात्र) के अनुकूल आचरण करने से उस अनन्यता के विरोधी कर्म में उदासीनता आप से आप होती है ॥ ११ ॥

लोक और वेद में श्रीमद्भगवदनुकूलाचरण करना यही 'तद्विरोधिपूदासीनता' है अर्थात् जब हमने उनके अनुकूल हो सब आचरण किए तो तद्विरोधियों में उदासीनता आपही आ गई क्योंकि तदीय होने ही से जिनके सब पुरुषार्थ पूर्ण हो गए हैं और सब मङ्गलामङ्गल नष्ट हो गए हैं उनको कार्यांतर करने की आवश्यकता ही नहीं तो उनके वैदिक वा लौकिक कार्य आपही निवृत्त होगए ॥ ११ ॥

समर्पण।

नाथ !

आज बहुत दिन पर कुछ कहने चले हैं। कुछ कहते कहाँ से, वैसा चित्त रहता तब न कहते ? क्या आप से कुछ छिपी है ? भला आप से क्या, आप तो ००००० हैं, आपके लोगों ही से न छिपैगी। बोल चालही से मालूम पड़ैगी। प्यारे ! ऐसा क्यों ? हम हजार बुरे बुरे बुरे लाख दफे बुरे पर आप तो भले हो न ? फिर क्यों ? क्या हमारी करनी पर गए ? तब तो हो चुकी। भला ध्यान तो कीजिए हमसे वा किसी से भी आप से तुलना क्या ? हाय ! तुलना क्या कुछ बातही नहीं। हरे ! हरे ! *जो आप अपनी बड़ाई देखिए तो हम क्या बड़े बड़े क्या हैं।* पर ऐसी तो नाथ ने आज तक कभी की नहीं यह नई क्यों होती है ? नाथ ! अपनाए की लाज तो हम पामरों को होती है तो बड़ों को क्यौं न हो, और फिर जो जितना बड़ा वैसीही उसकी दयालुता भी बड़ी, तो फिर आप की कृपा का क्या पूछना है। पर हाय ! क्या हमारे अपराध उस दया से भी बड़े निकले। प्यारे ! क्या इसी दशा में रहैं ? नाथ ! क्या वे दिन अब दुर्लभ हो जायंगे ? हाय ! उन पवित्र आँसुओं से क्या अब हृदय नहीं सिंचित होगा ? क्या वे सर्वचिंताविस्मारक प्रियालाप अब कर्णरंध्रों को फिर न पूर्ण करैंगे ? क्या वे दिन अब इस जीवन में निस्संदेह दुर्लभ होगए ? तो फिर ऐसे जीवनही से क्या ? हम जीवन की आशाही क्यों करते हैं ? केवल जनम भर पाप कमाने और आपको और अपने को झूठ बदनाम कहने को ? धिक् ! ऐसे जीवन पर। हम तो इसकी आशा इसी से करते थे कि दिन दिन हमारी चित्तवृत्ति उज्ज्वल होगी और दिन दिन प्रेमानद बढ़ेगा। इस हेतु नहीं कि प्रवाहरज्जु में हम दिन दिन और जकड़ते जायंगे और केवल जीवनभार ढोकर संसार में लिप्त होकर अंतमें आपके कहलाकर भी वैसे ही डूबैंगे जैसे तुम्हारे बिना संसार डूबता है। जीवन का परम

लोक भी तभी तक है किंतु भोजनादि व्यापार तो जब तक शरीर है तब तक है। १४।

इस में कितने लोक ऐसी शंका करते हैं वरञ्च हँसते हैं कि जब खाना पीना आदि व्यवहार छूटता ही नहीं तो कर्म छोड़ देना यह अयुक्त है। परंतु इसी शंका के निवारणार्थ यह सूत्र है, भोजनादि व्यापार शरीररक्षार्थ है और जब तक शरीर है तब तक अवश्य कर्त्तव्य है। इनको जो छोड़ना हो तो विष खाके एक साथही न मर जाना। हाँ तदीयों को उन भोजनादि व्यापार की चिंता करनी अवश्यही नहीं चाहिए और जो कर्मों का कहो तो कर्मों का त्याग अनन्यता की पुष्टि के हेतु है क्योंकि बिना निःसाधन हुए मनुष्य अनन्य नहीं होता। इस से यह सिद्ध हुआ कि जब तक निश्चय न हो तब तक लोक और वेद दोनों मानना परंतु जब निश्चय दृढ़ हो जाय और कामनाओं की निवृत्ति हो जाय तब लोक और वेद दोनों छोड़ कर केवल "कृष्ण एवं गतिर्मम" यह उच्चारण करना। श्री विष्णुस्वामी-मत के बीजधारक श्री विल्वमंगलाचार्य ने भी यही कहा है।

"संध्यावंदन भद्रमस्तु भवते भोस्नान तुभ्यं नमः
भोदेवाः पितरश्च तर्पणविधो नाहं क्षमः क्षम्यतां।
यत्र क्वापि निषद्य यादवकुलोत्तंसस्य कंसद्विपः
स्मारंस्मारमघं हरामि तदलं मन्ये किमन्येन मे"।

दूसरा अनुवाक् समाप्त हुआ।

---

१५ ॐ तल्लक्षणानि वाच्यन्ते नानामतभेदात्।

उस (भक्ति) के लक्षण विविध मतभेद से वर्णन किए जाते हैं।

इस सूत्र में एक शंका है कि सूत्र का लक्षण 'स्वल्पाक्षरमसंदिग्धम्' ऐसा है। सूत्रों में कोई बात व्यर्थ नहीं होनी चाहिए। यहाँ लक्षण तो आपही कहेंगे तो इस सूत्र की क्या अवश्यकता थी। ऐसा नहीं, यह

निकलते हैं और मेरा भी मान रख लीजिए। हे नित्यनूतन घन नित्य नव प्रेम बरसाइए।

हाय! आज हमने आप को कितना कष्ट दिया और कितना बके। जमा भी तो कितने दिन से होरहा था। और फिर बकैं तो किस के आगे। बकनेही से तो कुछ संतोष होता है। जाने दीजिए। देखिए यह आप के लोगों का सर्वस्व है इसे अंगीकार कीजिए। भला कहाँ परम पवित्र अमृतमय प्रेममार्ग, कहाँ हमारी पामर बुद्धि। पर क्या हुआ। ऐसी उत्तम बातैं जो मुँह से निकली हैं यह हमारी करतूत नहीं है, तुमने कही हैं। शिव वा नारद कौन हैं? आपही। यद्यपि जब बुझ जाय तब काठ का काठ है पर जब तक अग्नि के संग से दहकता रहै काठ भी आग ही कहलाता है। शराबी की कोई जाति नहीं होती है। थोड़ी शराब पियै तो शराबी, बहुत पियै तो शराबी। इसी नाते इतना बके हैं। इसे सुन कर प्रसन्न होना, सुधारना, इसका प्रचार करना यह सब तुम्हारा और तुम्हारे जनों का काम है, हमारी तो कर्त्तव्यता इतनीही थी कि निवेदन कर दिया।

चैत्रशुद्ध ५ — आपका

सं० १९३३ — हरिश्चंद्र

—:०:—

प्रेमलक्षणाभक्ति में अन्यमनस्क होने से भेद पड़ जायगा। इससे जिस भाव से निरोध हुआ हो उसी भाव से प्रेम में प्रवृत्त होना ही नारद का मत है। यदि हमारा यह भाव है कि ईश्वर एक है, आनंदमय है, हम उसके दासानुदास हैं, हमसे उससे कोई संबंध नहीं तो उसी भाव से भक्ति करनी और जो सर्वभाव हो तो सर्व भाव से भक्ति करनी, द्वैता-द्वैत भाव पर चित्त आरूढ़ हो तो उसी भाव से उपासना करनी। अर्थात् जीव ईश्वर के भेदा-भेद के झगड़े में बुद्धि फँसा कर प्रेम में बाधा नहीं डालनी, वही बात अगले सूत्र से सिद्ध करते हैं

१९ ॐ नारदस्तु तदर्पिताखिलाचारता तद्विस्मरणे परमव्याकुल-तेति॥

नारद जी तो सर्व कर्म श्री हरि में अर्पण करना और श्री हरि की विस्मृति होने में परम व्याकुल होना यही भक्ति का लक्षण कहते हैं।

कर्म दो प्रकार के हैं, लौकिक और पारलौकिक। प्रेमियों के दोनों कर्म यहाँ लिखते हैं। पारलौकिक में भक्तों को एतावन्मात्र कर्तव्य है कि अपने सब आचरणों को भगवान में अर्पण करना और लौकिक में इतना कर्तव्य है कि जब भगवद्वियोग-जनित परमानन्द का हृदय से तनिक भी विस्मरण हो तब परमव्याकुलता होनी। तो अलौकिक कर्म ता तत्समर्पण से निवृत्त हुए; लौकिक में जब व्याकुलता का उदय होगा तो आपही सब काम छुट जायंगे। इस से लौकिक और पारलौकिक दोनों कर्मों की प्रवृत्ति से अलग होकर अनवच्छिन्न तैलधारावत् सर्वक्षण भग-दवृत्ति में मग्न रहना, सर्वदा लीलाका अनुभव करना, सर्वदा वियोग का अनुभव करना, किसी काम में लगे हों परन्तु चित्त उधरही रखना, जो वह ध्यान तनिक भी भूले तो एक संग व्याकुल हो जाना वही भक्ति का लक्षण है।

२० ॐ अस्त्येवमेवं।

ठीक ऐसाही है।

पूर्वकथित भक्तिलक्षण को इस सूत्र से अन्यस्थान में स्वकथित वा परकथित अनेक विधियों के निरासपूर्वक मुक्त कंठ से प्रतिज्ञा स्वरूप स्थापन करते हैं। लोक में भी चालू है कि जो बात दो बेर कहते हैं उस
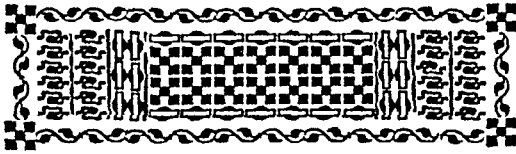
श्री तदीयसर्व्वस्व

नारदीय

भक्तिसूत्र का बृहत् भाष्य

दोहा

भरित नेह नव नीर नित बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ लखि नाचत मन मोर॥
करि करुना लखि जग विमुख कियो प्रेमपथ चारु।
जय वल्लभ व्रजगोपिका प्रीति कृष्ण अवतारु॥
जिहि लहि फिर कछु लहनकी आस न चित में होय।
जयति जगत पावन करन कृष्ण बरन यह दोय॥

१ ॐ अथातोभक्तिं व्याख्यास्यामः।

अब हम यहाँ से भक्ति की व्याख्या करते हैं।१।

अथ शब्द मंगलवाचक है। अतः शब्द से नारद जी अपनी कही हुई पूर्वोक्त वार्त्ता का व्यावर्तन करते हैं और इन सूत्रों के द्वारा प्रतिज्ञापूर्वक भक्तिशास्त्र का व्याख्यान आरंभ करते हैं।

२ ॐ सा कस्मै परमप्रेमरूपा।

वह ईश्वर में परमप्रेमरूपा है।२।

नामरूपे ॥ ब्रह्मा ने भी कहा है "षष्ठिवर्षसहस्राणि तपस्तप्तं मया पुरा। नन्दगोपव्रजस्त्रीणां पादरेणूपलब्धये ॥ अहोभाग्यमहोभाग्यं नन्दगोप व्रजौकसां। यन्मित्रं परमानन्दं पूर्णं ब्रह्म सनातनं"। जब उद्धव जी को भगवान् व्रज विदा करने लगे हैं तब वहाँ भी श्री गोपीजन का स्वरूप अपने श्रीमुख से उद्धव जी को समझाया है। "ता मन्मनस्का मत्प्राणाः मदर्थे त्यक्तदैहिकाः। ये त्यक्त लोकधर्माश्च मदर्थे तान्विभर्म्यहं ॥ मयि ताः प्रेयसां प्रेष्ठे दूरस्थे गोकुलस्त्रियः। स्मरंत्यो न विमुह्यन्ति विरहोत्कंठ्यविह्वलाः ॥ प्रधारयंति कृच्छ्रेण प्रायः प्राणान्कथंचन। प्रत्यागमनसंदेशैर्वल्लभो मे मदात्मिकाः"। हे उद्धव उन गोपीजन ने मुझ में मन लगाया है, मैं ही उनका प्राण हूँ, मेरे हेतु उनने सब देह के व्यवहार छोड़ दिये हैं और जो लोग मेरे अर्थ लोक और धर्म को छोड़ देते हैं उनको मैं धारण करता हूँ। वे गोपियाँ उन के परम प्यारों से प्यारे मेरे दूर रहने से जब मेरा स्मरण करती हैं तो विरह की उत्कंठा से व्याकुल होकर अपने शरीर की सुध भी भूल जाती हैं। बड़ी कठिनता से और बड़े दुःख से मेरे बिना किसी रीति प्राण धारण करती हैं मेरे आने के संदेसे सुन कर जीती हैं, उन गोपियों की आत्मा मैं हूँ और वे मेरी हैं, इत्यादि। जिन श्री गोपीजन से परम भागवत उद्धव जी ने भी कहा—"अहोयूयं स्म पूर्णार्था भवत्यो लोकपूजिताः। वासुदेवे भगवति यासामत्यर्पितं मनः ॥ दानव्रततपोथोगजपस्वाध्यायसंयमैः। श्रेयोभिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते ॥ भगवत्युत्तमश्लोके भवतीभिरनुत्तमा। भक्तिः प्रवर्तिता दिष्ट्या मुनीनामपि दुर्लभा ॥ दिष्ट्या पुत्रान्पतीन्देहान् स्वजनान् भवनानि च। हित्वा वृणीयुर्यूयं यत्कृष्णाख्यं परमंपदम् ॥ सर्वात्मभावोऽधिकृतो भवतीनाम धोक्षजे। विरहेण महाभागा महान्मेनुग्रहः कृतः ॥' इत्यादि। और जब श्री उद्धव जी ने अपने ज्ञान कथनांतर श्रीगोपीजन का स्वरूप जाना है तब यही माँगा है कि हम श्रीवृन्दावन में गुल्मलता हों, यथा "नायं श्रियोंगउनितांतरतेः प्रसादः स्वर्योषितां नलिनगंधरुचां कुतोन्यः। रासोत्सवेऽस्यभुजदंडगृहीतकण्ठलब्धाशिषां य उदगाद्व्रजवल्लवीनाम् ॥ आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां वृंदावने किमपि गुल्मलतौषधीनां। या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्यां ॥

कृतानि। यदातिहर्षोत्पुलकाश्रुगद्गदं प्रोत्कण्ठ उद्गायति रौति नृत्यति॥ यदा ग्रहग्रस्त इव क्वचिद्धसत्याक्रंदते ध्यायति वंदते जनं। मुहुश्श्वसन् वक्ति हरे जगत् पते नारायणेत्यात्मगतिर्गतत्रपः॥ तदा पुमान्मुक्तसमस्तबंधनस्तद्भावभावानुकृताशयाकृतिः। निदग्धबीजानुशयो महीयसा भक्तिप्रयोगेण समेत्यधोक्षजम्॥" श्रीमद्भागवत में परम भागवत श्रीप्रल्हाद जी ने दैत्यपुत्रों को उपदेश करती समय भक्तों के वर्णन में ये तीन श्लोक कहे हैं। (यहाँ यह भी बात समझनो चाहिए कि ये असुरबालक उपदेशपात्र नहीं थे, तथापि भक्तजनों के चित्त में जो प्रेम की उमंग आती है तो पात्रापात्र का विचार नहीं करते) भक्त जन भगवान के अनेक लीलार्थ धारण किए गए स्वरूपों के कर्म और अतुल्य गुण और वीर्यों को सुनकर जब अत्यंत हर्ष से रोमांचित अश्रु से गद्गद कंठ हो जाते हैं तब बड़े ऊँचे स्वर से गाते रोते नाचते हैं, कभी भूत लगे हुए मनुष्यों के समान हँसते हैं और चिल्लाते हैं, कभी बारंबार लंबी साँस लेते है, कभी तादात्म्य गति से 'हे हरे, नारायण, जगत्पते' आदि नाम कीर्तन लज्जा छोड़ के करते है। जब ऐसी गति हो जाती है तब मनुष्य सब बंधनों से छूट कर भगवद्भाव हीके भाव, वही अनुकरण, वही चेष्टा, वही आशय, वैसी ही आकृत्यादि करने लगता है और अपने प्रेम से सुकर्म दुष्कर्मों के बीजों को जला कर अपनी परम भक्ति से भगवान को प्राप्त होता है।

तो परम भक्ति प्राप्त होने का यही लक्षण है कि मनुष्य पागल हो जाता है और स्तब्ध हो जाता है अर्थात् फिर उसको लोक और वेद भूत प्रेत देवता इत्यादि किसी को मानना वा किसी को नमस्कार वा किसी का किसी रीति आदर करने की आवाश्यकता नहीं रहती और आत्माराम हो जाता है अर्थात् संसार के विषयों में प्रीति छोड़ आत्माराम अर्थात् ईश्वर ही में सदा रमण करता है।

पहिला अनुवाक समाप्त हुआ

स्वरूप का ज्ञान नहीं था, यह शंका नहीं हो सकती। "अस्त्वेवमेतदुपदेशपदे त्वयीशे प्रेष्ठो भवाँस्तनुभृतां किल बंधुरात्मा" ॥ 'व्यक्तंभवान् व्रजभयार्तिहरोभिजातो" 'न खलु गोपिकानंदनो भवानखिलदेहिनामंतरात्मदृक् ॥ इत्यादि श्री गोपीजन के वाक्यों से उनका माहात्म्यज्ञान सिद्ध है।

२३ ॐ तद्विहीनं जाराणामिव।

उसके बिना जारों के समान है।

अर्थात् जहाँ माहात्म्यज्ञान नहीं है वहाँ की प्रीति जारों की सी होती है। यद्यपि भगवान में ज्ञान वा अज्ञान मे की हुई प्रीति निष्फल नहीं जाती तथापि यह लीला जहाँ पूर्ण प्रादुर्भाव है वहीं है परंतु माहात्म्य ज्ञानपूर्वक भक्ति में यह विशेषता है कि एक प्रस्तर में भी ईश्वर बुद्ध्यया सत्य प्रेम करने से फलदायिनी होती है।

२४ ॐ नास्त्येव तस्मिंस्तत्सुखसुखित्वं।

उस से प्यारे के सुख से सुखी होना नहीं ही है।

क्योंकि जारों की प्रीति अपनी कामना के अर्थ है तो उस में तत्सुखसुखित्व कहाँ से आवेगा।

तीसरा अनुवाक् समाप्त हुआ।

---

२५ ॐ सा तु कर्मज्ञानयोगेभ्योप्यधिकतरा।

वह (भक्ति) तो कर्म्म, ज्ञान और योग से भी अधिक है।

"तपस्विभ्योऽधिका योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः ॥ कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥ योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनांतरात्मना। श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः" ॥ इन वाक्यों से भगवान श्रीमुख से ज्ञान और कर्म से योग को अधिक कह कर अपने भक्त को उससे भी अधिक कहते हैं और भक्ति ऐसी है कि भगवान मुक्ति देते हैं परंतु भक्ति नहीं। तथाहि "मुक्तिददाति कर्हिचित्स्म न भक्तियोगं।" तथा "न साधयति मां योगी न सांख्यं धर्म उद्धव। न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता ॥ भक्त्याहमेकया ग्राह्यःश्रद्धयात्माप्रियः सताम्। भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि

वही अहर्निश परमानंद प्राप्त करते हैं। इस वाक्य से यह दिखाया कि निरुद्ध होना स्वसाध्य नहीं है, जिनको वह (ईश्वर) चाहता है, निरुद्ध करता है, नहीं तो उसे छोड़ देता है। मनुष्य का बल केवल उस मार्ग पर प्रवृत्त होना है, परंतु इससे निराश न होना चाहिए कि जब अंगीकार करना वा न करना उसी के आधीन है तो हम क्यौं प्रयत्न करैं। हमारे क्लेश करने पर भी वह अंगीकार करे वा न करे ऐसी शंका कदापि न करना। क्योंकि आचार्य आज्ञा करते हैं कि "क्लिश्यमानान्जनान्दृष्ट्वा कृपायुक्तो यदा भवेत्। तदा सर्वं सदानन्दं हृदिस्थं निर्गतं वहिः॥ सर्वानन्दमयस्यापि कृपानन्दः सुदुर्लभः। हृद्गतः स्वगुणान् श्रुत्वा पूर्णः प्लावयते जनान्॥ तस्मात्सर्वं परित्यज्य निरुद्धैः सर्वदा गुणाः। सदानन्दपरैर्गेयाः सच्चिदानन्दता स्वतः।" जनों को क्लेशित देख करके जब वह कृपायुक्त होता है तब सर्व सदानंद रूप बाहर और अंतः प्रगट कर देता है। सर्वानंदमय को भी उसके कृपा का आनंद दुर्लभ है परंतु हृदय में बैठा हुआ जब अपने गुणों को सुनता है तो अपने कृपानंद से लोगों को भिजो देता है। इस हेतु और सब बखेड़ा छोड़ कर सदानंद पर निरुद्ध लोगों को उसका गुण सदा गाना चाहिए। उससे सच्चिदानंद का आप से आप प्रागट्य होता है। अर्थात् नियम है कि जो सब परित्याग करके उसका भजन करेंगे उसको वह निरुद्ध करके परमानंद दान करेहीगा। यही उस की प्रतिज्ञा भी है "कौंतेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति। तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्"॥ इस से उसके वाक्य पर विश्वास रख कर निरुद्ध होना चाहिए।

निरोध छः प्रकार का है अर्थात् छः प्रकार की भावना ईश्वर में करने से मनुष्य निरुद्ध होता है; यथा प्रथम 'भीतिभाव निरोध' अर्थात् संसार के दुःखों से भयभीत होकर ईश्वर में अवलंब करना, दूसरा "स्वामिभावनिरोध" अर्थात् ईश्वर को संसार का स्वामी मान कर दासभाव से निरुद्ध होना, तीसरा "सर्वभावनिरोध" अर्थात् ईश्वर को 'वासुदेवःसर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः' इस वाक्य के अनुसार छोटे बड़े चेतन सब को ईश्वर मान कर नमस्कार करना और सब स्थान पर उसी को देखना वा स्वामी माता पिता मित्र सब भाव से ईश्वरही का

के पचड़े में मग्न हूं पापों से लदा हुआ हूँ और परम दीन हूँ अतएव हे नाथ ! हमारी तो तुमहीं गति हो।" क्योंकि और किसी के सामने मुँह दिखाने के योग्य नहीं रहा, वेद को कैसे मुँह दिखाऊँ, उनके वाक्यानुसार सर्वकर्मानर्ह और पतित हो रहा हूँ, लोक को भी नहीं मुँह दिखा सकता क्योंकि लोक में सब से मुख्य रक्षणीय लज्जा का त्याग कर चुका हूँ और लोक के साधनों से विहीन हूँ हमारी तो और कोई शरण नहीं, महा निरवलम्ब हूँ, कोई हाथ पकड़ने वाला नहीं, अथाह समुद्र में डूबता हूँ अब इस समय तुम्हारे सिवाय और कोई गति नहीं, मेरी तो तुमही गति हो इत्यादि । तभी वह तुम्हारी ओर ध्यान करेगा, ऐसा श्रीमुख से भी कहा है "सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज । अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुचः" ॥ सब धर्मों को छोड़ कर एक मेरी शरण आ, मैं तुझे सब पातकों से दूर करूँगा, शोच मत कर और यह वाक्य भी कब कहा है जब गीता का उपदेश कर चुके हैं तब; इसको ठीक देने की भाँति कहा है ।

और आप अपने मुखसे इस वाक्य का आग्रह दिखाते हैं "सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः॥ इष्टोसि मे दृढ़मतिस्ततो वक्ष्यामि ते हितम्" । और भी उद्धव जी प्रति श्री भगवद्वाक्य है "अकिंचनस्य दान्तस्य शांतस्य समचेतसः । मया संतुष्टमनसः सर्वाःसुखमया दिशः ॥ आज्ञायैव गुणान् दोषान् मयादिष्टानपि स्वकान् । धर्मान् संत्यज्य यः सर्वान् मां भजेत स सत्तमः ॥ तस्मात् त्वमुद्धवोत्सृज्य चोदना प्रतिचोदनां । प्रवृत्तं च निवृत्तं च श्रोतव्यं श्रुतमेव च ॥ मामेकमेव शरणमात्मानं सर्वदेहिनां । याहि सर्वात्मभावेन मया स्याःह्यकुतोभयः (?)। न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव । न स्वाध्यायष्यतपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता ॥ भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सताम् । भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकमपि संभवात् ॥ धर्मः सत्यदयोपेतो विद्या वा तपसान्विता । मद्भक्त्या येतमात्मानः (?) न सम्यक्प्रपुनातिहि ॥ कथं विना रोमहर्षं द्रवता चेतसा विना । विनानन्दाश्रुकलया शुध्येद्भक्त्या विनाशयः ॥ वाग्गद्गदा द्रवते यस्य चित्तं रुदत्यभीक्ष्णं हसति क्वचिद्वा ॥ विलज्ज उद्गायति नृत्यते च मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति" ।

१२ ॐ भवतु निश्चयदाढ्यार्दूर्द्ध्वं शास्त्ररक्षणं।

निश्चय के दृढ़ होने के पहिले शास्त्र रक्षण होय ॥ १२ ॥

क्योंकि श्रीमुख से आप ने आज्ञा की है "त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन। निर्द्वंद्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥ यावानर्थ उदपाने सर्वतःसम्प्लुतोदके। तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥ कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ॥" हे अर्जुन वेद त्रिगुण विषय हैं तू तो तीनों गुणों की प्रवृत्ति से अलग होकर निर्द्वन्द्व और अपने स्वरूप में स्थित हो और अपने योगक्षेम की चिंता मत कर। परंतु जब तक तेरे हृदय में अर्थों की तरंगें उठती हैं तब तक तेरा सब वेदों में ब्राह्मण के कहे अनुसार कर्म में अधिकार है वहाँ भी कर्म के फल में तेरा अधिकार नहीं, इससे न तो तू फलों की इच्छा कर और न अकर्मी हो। तो जब तक कामना की तरंगें चित्त में उठती हैं और जब तक अनन्या भक्ति दृढ़ नहीं हुई है तब तक वेद माने, फिर छोड़ दे।

१३ ॐ अन्यथा पातित्याशंका।

अन्यथा पतित होने की शंका है। १३।

अर्थात् जो सिद्ध होने के पहिले कर्मों को छोड़ दे और न यह सिद्ध हो न वह तो व्यर्थ पतित हो जाता है, परंतु भगवत्कर्म करता हुआ अन्य कर्मों से च्युत जो सिद्ध न होगा तो भी उस जीव का नाश नहीं है और जीव का कल्याण है। जड़भरत जी का उदाहरण इसमें प्रमाण है, क्योंकि उन्होंने अपने मुख से कहा है, "अहं पुरा भरतो नाम राजा विमुक्तदृष्टश्रुतसंगबंधः। आराधनं भगवत ईहमानो मृगोभवं मृगसंगाद्धतार्थः ॥ सा मां स्मृतिर्मृगदेहेपि वीर कृष्णार्चनप्रभवा नो जहाति। अतो ह्यहं जनसंगादसंगो विशंकमानो विवृतश्चरामि"। श्री मुख से भी आप ने आज्ञा की है "पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते। नहि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति" इत्यादि।

१४ ॐ लोकोपि तावदेव किंतु भोजनादिव्यापारस्त्वाशरीरधारणावधि।

राजा का स्वरूपज्ञान बहुत अच्छा है पर इससे क्या? क्या वह राजा विना अपनी भक्ति किए ही उसे कुछ देगा वा कुछ भोजन रक्खा है? हमको उसके स्वरूप का पूर्ण ज्ञान है कि इसमें पूरी है और वह आटा, घी, जल और अग्नि के संयोग से बनी है पर क्या इस ज्ञान ही से भूख मिट जायगी? क़दापि नहीं। वैसा ही भगवान को केवल जानकर कभी सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि वह अपने स्वरूपों पर किस नाते दत्तचित्त होगा? अतएव अगले सूत्र में फिर से आग्रह दिखाते हैं।

३३ ॐ तस्मात्सैव ग्राह्या मुमुक्षुभिः।

इस कारण मोक्ष की इच्छा करने वाले उसी (भक्ति) का ग्रहण करें।

जो अपना कल्याण चाहे तो इस सूत्र को कान खोलकर सुने और विश्वास करे।

चौथा अनुवाक समाप्त हुआ।

---

३४ ॐ तस्यास्साधनानि गायन्त्याचार्याः।

उस (भक्ति) के साधन आचार्य्य कहते हैं।

पूर्वोक्त सूत्रों में भक्ति ही मुख्य है ऐसा कह अब उसके साधन दिखाते हैं।

३५ ॐ तत्तु विषयत्यागात्सङ्गत्यागाच्च।

वह (भक्तिसाधन) तो विषयत्याग और संगत्याग से होता है।

जो कहो कि हम विषय और संग में लगे हुए भी सिद्ध हो जायँगे तो यह नहीं हो सकता, क्योंकि श्री महाप्रभु जी ने अपने ग्रंथ वालबोध में "जीवाः स्वभावतो दुष्टाः" इस वाक्य से जीव को स्वभावतः दुष्ट कहा है, तो जीव को आसुरावेश होने में कुछ विलंब नहीं लगता। श्रीहरिराय जी ने अपने ग्रंथ कामदोषनिरूपण में इस विषय की कैसी निंदा की है, आप लिखते हैं "दोषेषु प्रथमः कामो विविच्य विनिरूप्यते

सूत्र इस अर्थ का प्रतिपादक नहीं है कि हम आगे उस के लक्षण कहेंगे, वरन् ऐसी प्रतिज्ञा है कि संसार में इस प्रेम को लोग अनेक मत से मानते हैं परंतु वास्तव में वह प्रेम नहीं है। प्रेम वही है जो शास्त्र में कहा जायगा, जैसा स्त्री पुरुष का कामनार्थ प्रेम वा अन्य किसी प्रकार की त्रिगुणात्मिका देवभक्ति प्रेम नहीं है, यद्यपि संसार में वह प्रेम कही जाती है और उनके अनेक प्रकार लोग लक्षण कहते हैं। यही बात अग्रिम सूत्रों में सिद्ध करेंगे।

१६ ॐ पूजादिष्वनुराग इति पाराशर्य्यः।

भगवत्पूजादिक में अनुराग रूप भक्ति यह श्री व्यासदेव का मत है।

क्योंकि अनेक पुराणों में तथा जैमिनिसूत्र के भाष्य में बहुत कर्म-विधान की प्रशंसा की है और पूजनादि केवल प्रेम के साधनस्वरूप हैं फलरूप नहीं। श्रीमहाप्रभु जी ने भी सेवानिर्णय में आज्ञा की है 'कृष्ण-सेवा सदा कार्या मानसी सा परा मता' इत्यादि। जीवों के आसुरावेश-निवृत्यर्थ और मानसी-सेवा-सिद्ध्यर्थ बाह्य सेवा (पूजादि) हैं, परंतु जब परम प्रेमावेश होता है तब मानसी सेवा भी छूट जाती है।

१७ ॐ कथादिष्विति गर्गः।

कथादि में अनुराग गर्गाचार्य का मत है।

अर्थात् भगवत्कथाश्रवण को मुख्य मान कर कथा में अनुराग करना यह नारद जी का मत नहीं है, प्रेम की उत्कंठा में जो भगवत्कथा से अनुराग हो वह ठीक है।

१८ ॐ आत्मरत्यविरोधेनेति शाण्डिल्यः।

आत्मरति के अविरोध से अनुराग शांडिल्य का मत है।

शांडिल्य भक्तिसूत्र के तृतीयाह्निक के तृतीय सूत्र में मत दिखाते हैं 'तामैश्वर्यपदां काश्यपः परत्वात्', 'आत्मैकपदां बादरायणः', 'उभयपदां शांडिल्यः शब्दोपपत्तिभ्यां'। कश्यप का द्वैत और बादरायण का अद्वैत दिखाकर आप द्वैताद्वैत अवलंबन करते हैं परंतु द्वैत वा अद्वैत वा द्वैता-द्वैत मत का अवलंबन करके भक्ति को अपने पूर्वमत के आग्रह से अपनी दीक्षा वा संप्रदाय के अनुसार बलत्कार से भक्ति चलाना नारद का मत नहीं। जब मतमतांतर के वाद में बुद्धि अभिनिविष्ट हो जायगी तो तीव्र

शरणं मम । वदद्भिरेव सततं स्थातव्यमिति मे मतिः" ॥ अपने भक्ति-वर्द्धिनी ग्रंथ में भी श्रीआचार्य जी ने "आव्यावृतो भजेत् कृष्णं पूजया श्रवणादिभिः" इत्यादि लिखा है, भोजनादिक व्यवहार की रीति कुछ नित्य भजन भी कर लेना वा जहाँ सब काम करते हैं वहाँ एक घंटा भर यह भी सही इत्यादि । उपेक्षा वा साधारण व्यवहार पूर्वक भजन का निषेध इस सूत्र से किया । जो कहो कि संसार के और कोई काम न करें सो यह नहीं कहते वरंच जब तुम आवश्यक कार्यों से छूटो तब और कोई व्यर्थ काम करने के बदले निरंतर भजन करो, जैसा जितने क्षण खाते हो उतनी देर तो निःसंदेह तुम कुछ नहीं कह सकते पर जैसेही मुँह धो चुको भगवन्नामोच्चारण प्रारंभ करो ।

३७ ॐ लोकेपि भगवतगुणश्रवणकीर्तनात् ।

लोक में भी भगवान के गुणों के श्रवण और कीर्तन से । "लोकेपि" अर्थात् जब तक अव्यावृत भजन की सिद्धि न हो और लोक के व्यवहार में चित्त निरा मग्न हो तब तक भगवान् के गुण कीर्तन करके और श्रवण करके निरंतर भजन का अभ्यास करे क्योंकि कोरे नामोच्चारण से वा ध्यान करने से भजन सुनने या गाने में सर्वसाधारण का चित्त विशेप लग सकता है । श्रीमहाप्रभुजी लिखते हैं "यथा भक्तिः प्रवृद्धा स्यात्तथोपायो निरूप्यते । बीजभावे दृढ़ेतु स्यात्त्यागाच्छ्रवणकीर्तनात् ॥ बीजदार्ढ्यप्रकारस्तु गृहे स्थित्वा स्वधर्मतः । अव्यावृतो भजेत् कृष्णं पूजया श्रवणादिभिः ॥ व्यावृत्तोपि हरौ चित्तं श्रवणादौ यतेत्सदा । ततःप्रेम तथासक्तिर्व्यसनंच यदा भवेत्" अर्थात् जो चित्त भक्ति में न रँगा हो तो श्रवणादिक में लगावे और जब उसमें कुछ प्रेम और आसक्ति होगी और श्रवणादिक का व्यसन हो जायगा तब आपही भक्ति का बीज दृढ़ हो जायगा । यद्यपि भक्ति के अधिकारी सब लोग नहीं हैं पर श्रवणकीर्तनादिक के अभ्यास से सब हो जाते हैं, क्योंकि श्रवणकीर्तन के अधिकारी मुक्त, मुमुक्षु और विषयी तीनों हैं । यही श्रीपरमभागवत श्रवणाधिकारी राजा परीक्षित ने कहा है "निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद्भवौपधाच्छ्रोत्रमनोभिरामात् । क उत्तमश्लोकगुणानुवादात् पुमान्विरज्येत विना पशुघ्नात् ॥"

पर अपनी पूर्ण दृढ़ता दिखाते हैं इस भाव से यहाँ भी यह सूत्र कहा है अर्थात् अब इसमें किसी शंका का अवकाश नहीं।

२१ ॐ यथा व्रजगोपिकानां।

जैसा व्रज की गोपियों का (प्रेम है)।

लक्षण कहके उदाहरण में सब प्रेमियों की शिरोमणि-स्वरूप श्री गोपीजन का नाम लेते हैं अर्थात् प्रेम का उदाहरण जैसा श्री गोपीजन ने दिखाया वैसा और कौन दिखावेगा ? हुई है, लोक वेद की कठिन लोहशृंखला को कच्चे सूतसी कौन तोड़ सकता है ? जिनके भगवान भी सर्वदा ऋणी हैं उनकी महिमा कौन कह सकता है ? श्री मुख से कहा है 'न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः। या मां भजन् दुर्जरगेहशृङ्खलां संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना"। भगवान् श्री गोपीजन से गले में पीतांबर डाल कर और हाथ जोड़ कर निवेदन करते हैं हे श्रीव्रजदेवियो ! मैं जो देवताओं की आयुष्य धारण करूँ और उस अनेक कल्प की आयुष्य से आप लोगों में से एक का भी प्रत्युपकार किया चाहूँ तो न कर सकूँगा। क्योंकि महादुर्जर घर की शृङ्खला आप लोगों के सिवाय और कौन तोड़ सकता है ? अतएव मैं आप लोगों का सदा ऋणी हूँ। तो भगवान का यह श्रीमुखवाक्य उन श्रीगोपीजन के प्रति जिनने भगवान के श्रीमुख से कहे हुए रासप्रसंग के दश श्लोकात्मक मर्यादास्थापन के वाक्यों को तृण सा भी नहीं माना, कुछ आश्चर्य नहीं है। एक तो साधारण शास्त्र के वाक्य माननीय हैं, दूसरे उस में भी भगद्वाक्य, तीसरे जब भगवान् प्रत्यक्ष अपने मुखार-विंद से आज्ञा करैं तो ऐसा कौन होगा जो न मानेगा। पर ऐसे श्री गोपीजनही हैं कि प्रेममार्ग के विरुद्ध भगवद्वाक्य को भी न माना।

भगवान ने जब परमभागवत उद्धवजी को भक्ति का उपदेश किया है वहाँ कहा है "रामेण सार्धं मथुरां प्रणीते श्वाफल्किना मय्यनुरक्त-चित्ताः। विगाढ़भावेन नमे वियोगतीव्राधयोन्यं ददृशुः सुखाय॥ तास्ताः क्षपाः प्रेष्ठतमेन नीता मयैव वृन्दावनगोचरेण। क्षणार्द्धवृत्ताः पुनरंग तासां हीना मया कल्पसमा बभूवुः॥ ता नाविदन्मय्यनुषंगबद्धधियः-स्वमात्मानमदस्तथेदं, यथा समाधौ मुनयोऽब्धितोये न च प्रविष्टा इव

न्मुक्तो भवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ एकादशीविहीनश्च संध्याहीनोऽतिनास्तिकः । नरघाती भवेत् पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ असिजीवी मसीजीवी पाचकोग्रामयाचकः । वृषवाहो भवेत् पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ विश्वासघाती मित्रघ्नो मिथ्यासाक्ष्यस्य दायकः । स्थाप्यहारी भवेत् पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ अत्युग्रवाग्दूषकश्च जारकः पुंश्चलीपतिः । पूतश्च पुंश्चलीपुत्रो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ शूद्राणां सूपकारश्च देवलो ग्रामयाचकः । अदीक्षितोभवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ पितरं मातरम्भार्यां भ्रातरं तनयं सुतां । गुरोः कुलञ्च भगिनीं चक्षुर्हीनञ्च बान्धवं ॥ श्वश्रूश्च श्वशुरञ्चापि यो न पुष्णाति सुन्दरि । स महापातकी पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ अश्वत्थनाशकश्चैव मद्भक्तनिन्दकस्तथा । शूद्रान्नभोजी विप्रश्च पूतो मद्भक्तदर्शनात् ॥ देवद्रव्यापहारी च विप्रद्रव्यापहारकः । लाक्षालोहरसानां च विक्रेता दुहितुस्तथा ॥ महापातकिनश्चैव शूद्राणां शवदाहकः । भवेयुरेते पूताश्च मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥" तथा देवी का वाक्य "पुनन्ति सर्वतीर्थानि येषां स्नानावगाहनात् । येषां च पादरजसा पूतो पादोदकान्मही ॥ येषां संदर्शनं स्पर्शं ये वा वांछन्ति भारते । सर्वेषां परमो लाभो वैष्णवानां समागमः ॥ नह्यम्मयानि तीर्थाणि न देवा मृच्छिलामयाः । ते पुनंत्युरुकालेन विष्णुभक्ताः क्षणादहो" । फिर भगवद्वाक्य "पुरुषाणां शतं पूर्वं तथा तज्जन्ममात्रतः । स्वर्गस्थं नरकस्थं वा मुक्तिमाप्नोति तत्क्षणात् ॥ यैःकैश्चित्त्र वा जन्म लब्धं येषु च जन्तुषु । जीवन्मुक्तास्तु ते पूता यान्ति काले हरेः पदं ॥ मद्भक्तियुक्तो मर्त्यश्च स मुक्तो मद्गुणान्वितः । मद्गुणाधीनवृत्तिर्यः कथाविष्टश्च सन्ततं ॥ मद्गुणश्रुतिमात्रेण सानन्दः पुलकान्वितः । सगद्गदः साश्रुनेत्रः स्वात्मविस्मृत एवच ॥ न वाञ्छन्ति सुखं मुक्तिं सालोक्यादिचतुष्टयं । ब्रह्मत्वममरत्वंवा तद्वाञ्छा मम सेवने ॥ इंद्रत्वं च मनुत्वं च ब्रह्मत्वं च सुदुर्लभं । स्वर्गराज्यादिभोगांश्च स्वप्नेऽपि न वाञ्छति ॥ भ्रमन्ति भारते भक्तास्तादृग् जन्म सुदुर्लभं । मद्गुणश्रवणश्राव्यगानैर्नित्यं मुदांचिताः ॥ ते यांति च मही पूत्वा नराः शीघ्रं ममालयं । इत्येवं कथितं सर्वं पद्मे कुरु यथोचितं ॥ तदाज्ञया तास्तचक्रु र्हरिस्तस्थौ सुखासने ॥ तथाच सारसंग्रह में पराशरस्मृति "सहस्रवार्षिकी पूजा विष्णोर्भगवतो हरेः । सकृद्भागवताचार्याः कलां नार्हति षोड्शीं ॥" इत्यादि । बृहन्नारदीयपुराण में "पूजना-

या वै श्रियार्चितमजादिभिराप्तकामैर्योगेश्वरैरपि यदात्मनि रासगोष्ठ्यां ॥ कृष्णस्य तद्भगवतश्चरणारविंदं न्यस्तं स्तनेषु विजहुः परिरभ्य तापं ॥" श्रीमहाप्रभु जी ने संन्यासनिर्णय ग्रंथ में आज्ञा की है कि श्री गोपीजन प्रेममार्ग की गुरु हैं तथाच निरोधलक्षण ग्रंथ में आप ने श्रीगोपीजन तथा व्रज के गोपों का विरहानुभव प्राप्त होने की उत्कंठा दिखायी है। "यच्च दुःखं यशोदाया नन्दादीनां च गोकुले। गोपिकानां तु यद्दुखं तद्दुःखं स्यान्मम क्वचित् ॥ गोकुले गोपिकानां च सर्वेषां व्रजवासिनाम्। यत्सुखं समभूत्तन्मे भगवान् किं विधास्यति ॥ उद्धवागमने जात उत्सवः सुमहान्यथा। वृन्दावने गोकुले वा तथा मे मनसि क्वचित् ॥ इत्यादि। और "गोपी प्रेम की ध्वजा। जिन घनस्याम किए अपने बस उर धरि स्याम-भुजा" "गोपीपदपंकजपराग कीजै महाराज रज कीजै आपुनेई गोकुला-नगर को।" "ये हरिरसओपी गोपी सब तियतें न्यारी। कमलनयन गोविन्दचंदकी प्राणपियारी ॥ निर्मत्सर जे सन्त तिनकी चूड़ामनि गोपी जे ऐसे मर्याद मेटि मोहनगुन गावैं। क्यों नहिं परमानन्द प्रेमभक्ति सुखपावैं ॥" "अहो विधिना तोपै अँचरा पसारि माँगौ जनम जनम दीजो याही व्रज वसिवो। अहीर की जाति समीप नंदघर घरी घरी घनश्याम हेरिहेरि हँसिवो ॥" "वलि गुरु तज्यौ कंत व्रजवनितन भइ जगमंगलकारी ॥" इत्यादि श्रीसूरदासादिक परम अनुरागियों ने भाषा में भी श्रीगोपीजन का पवित्र यश वर्णन किया है। परम अंतरंग श्री नागरीदास जी भी गाते हैं ॥ जयति ललितादिदेवीय व्रज श्रुति ऋचा कृष्णपियकेलिआधीरअंगी। युगुलरसमत्त आनन्दमय रूपनिधि सकलसुखसमयकी छाँहसंगी ॥ गौरमुखहिमकिरणकी जु किरणावली श्रवत मधुगान हिय पियतरंगी। नागरीसकलसकेतआकारिणी गनत गुनगननि मति होति पगी ॥ भवतु! इन श्रीगोपीजन के अगणनीय गुण कहाँ तक लिखैं। रसिक लोग स्वतः अनुभव करेंगे।

२२ॐ न तत्रापि माहात्म्यज्ञानविस्मृत्यपवादः।

यहाँ भी माहात्म्यज्ञानविस्मृति का अपवाद नहीं।

जहाँ प्रेम है वहाँ माहात्म्यज्ञान नहीं, जहाँ माहात्म्यज्ञान है वहाँ प्रेम नहीं; परंतु श्री गोपीजन में दोनों बातें थीं, क्योंकि उनको भगवत

श्रुति भी है। "यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरावित्यादि"। "न मे भागवतानां च भुक्तिभेदोस्ति कर्हिचित्" इत्यादि श्री मुख से कहा है। तथाच श्री गोपीजन को "ता मन्मनस्का मत्प्राणा वल्लव्यो मे मदात्मिकाः" इत्यादि। श्री महादेव जी को "यस्त्वां द्वेष्टि स मां द्वेष्टि यस्त्वामनु स मामनु। त्वदुपासा जगन्नाथ सैवास्तु मम गोपते" तथा उद्योगपर्व में दुर्योधन से पांडवों के हेतु भी कहा है "यस्तान् द्वेष्टि स मां द्वेष्टि यस्ताननु स मामनु। ऐकात्म्यं मां गतं विद्धि पांडवै धर्म्मचारिभिः ॥" इत्यादि। तथा श्री प्रह्लादादिक भक्तों से भगवान् ने वही कहा है "जिसने तुमसे द्वेष किया उसने मुझ से द्वेष किया"। इसका उदाहरण अंबरीष को प्रकरण प्रत्यक्ष है और वहाँ भी श्रीमुख से कहा है "अहंभक्तपराधीनो ह्यस्वतंत्र इव द्विजं। साधुभिग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः ॥" महाभारत में भी कहा है 'तुलसीदलमात्रेण जलस्य चुलुकेन च। विक्रीणीते स्वमात्मानं भक्तेभ्यो भक्तवत्सलः ॥" उद्धव जी से भी ऐसाही कहा है। *'न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शङ्करः। नचसङ्कर्षणो न श्रीर्नैवात्मा च यथा भवान्' (?)। 'निरपेक्षं मुनिं शातं निर्वैरं समदर्शिनं। अनुव्रजाम्यहं नित्यंपूजयेदङ्घ्रिरेणुभिः (?) ॥ इत्यादि श्रीमुख से अपने भक्तों से अपनी एकता स्वाधीनता इत्यादि वर्णन किया, तो इस से भगवान और उनके भक्तों की एकात्मता ही सिद्ध हुई। "त्रिधाप्येकं सदागम्यं गम्यं भेदप्रभेदकैः। प्रेम प्रेमी प्रेमपात्रत्रितयं प्रणतोस्म्यहं" ॥

४२ ॐ तदेव साध्यतां तदेव साध्यताम्।

उसी का साधन करो, उसी का साधन करो। हम लोग भी मुक्त कंठ से यही कहते हैं।

पंचम अनुवाक समाप्त।

—::ꕥ::—

* चारो नाम चार संप्रदाय के आचार्यों ही के लिये; ब्रह्मा माधव, महादेव विष्णुस्वामी, संकर्षण निम्बार्क और श्री रामानुज इन मर्य्यादामार्ग के भक्तों की उत्कर्षता के हेतु उद्धव को सबसे बड़ा कहा।

संभवात् ॥" और भक्ति में यह विशेष है कि कर्म, ज्ञान और योग इनमें अधिकारी अनधिकारी का बड़ा विचार रहता है परंतु इसमें किसी अधिकार का काम नहीं। श्रीमुखवाक्य प्रमाण है "केवलेन हि भावेन गोप्यो गावः खगा मृगाः। येऽन्ये मूढधियो नागाः सिद्धा मामीयुरंजसा ॥"

२६ ॐ फलरूपत्वात्।

क्योंकि फलरूपा है।

ज्ञानाभिमानी लोग कहते हैं कि भक्ति का फल ज्ञान है, ऐसा नहीं। क्योंकि श्री भगवद्गीता में कहा है "अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहं। विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति। समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते परां" ॥ हई है, संसार के सब प्रकार के साधन का फल केवल भगवत्कृपा है और वह बिना भक्ति सिद्ध न होगी तो दोनों प्रकार से भक्ति के बिना अन्य साधन व्यर्थ ही हुए।

२७ ॐ ईश्वरस्याप्यभिमानद्वेषित्वाद्दैन्यप्रियत्वाच्च ॥

ईश्वर को भी अभिमान से द्वेषित्व है और दैन्य से प्रियत्व है।

अर्थात् कर्म ज्ञान और योग में उनके साधकों को अपने अपने साधन का अभिमान होता है तो उन से भगवान प्रसन्न नहीं रहता। हई है, वह तो निराश्रयों का आश्रय, निःसाधनों का साधन, दीनों का बंधु, पतितों का प्यारा और सर्व प्रकार से हीनों का सर्वस्व है। जिन लोगों को अपने साधनों का बल है उनको क्यों वह पूछेगा। सच है, जो स्त्री अपने सौंदर्य्य के और जारों के बल से धन कमा लेती है उसे पति क्यों पूछेगा, जो बालक आप धनोपार्जन में समर्थ है उसे माता पिता क्यों भोजन देंगे, जो सेवक अपने गुण से अपना योग क्षेम चला लेता है उसके स्वामी को क्या शोच है, विशेष कर ईश्वर से स्वामी को, जिसको सर्वदा दीन प्यारा है। उसके सामने तो जब अनन्य होकर सब साधन छोड़कर उससे कहोगे "सर्वसाधनहीनस्य पराधीनस्य सर्वथा। पापापीनस्य दीनस्य कृष्णएव गतिर्मम" ॥ हे नाथ! मैं सब साधन से हीन हूँ और ससार

कामक्रोधादिक की तरंगें आती भी हैं तो वे उतने ही काल रहती हैं जब तक कि वे अपना स्वरूप भूले रहते हैं तथापि यदि वेही सज्जन दुःसंग में पड़ जायँ तो ये ही काम क्रोध उनको डुबा दें।

४६ ॐ कस्तरति कस्तरति मायां ? यः संगांस्त्यजति यो महानुभावं सेवते यो निर्ममो भवति।

कौन तरता है ? माया को कौन तरता है ? जो संगों को छोड़ता है, जो महानुभाव की सेवा करता है, जो निर्मोह होता है।

यद्यपि महात्माओं की कृपा और संगत्याग मुख्य साधन हैं तथापि कुटुंबादिक का मोह भी एक बड़ी भारी बेड़ी है इससे इस का त्याग भी मुख्य ही है।

४७ ॐ यो विविक्तस्थानं सेवते यो लोकबंधमुन्मूलयति निस्त्रैगुण्यो भवति योगक्षेमं त्यजति।

जो एकांत स्थान सेवन करता है, जो लोकबंध की जड़ निकाल देता है, निस्त्रैगुण्य होता है और योग क्षेम छोड़ देता है।

क्रमशः उसके साधन कहते हैं। यदि जन समाज में रहेगा तो पहले तो उसके अनवच्छिन्न भगवच्चितन में कोलाहलादि से अनेक बाधा पड़ेगी, दूसरे अनेक प्रकार के लोगों से मिलने से उनके व्यवहार में व्याप्त होने और उनके संग में पड़ जाने का डर है अतएव श्रीमुख से कहा है "विविक्तजनसेवित्वमरतिर्जनसंसदि"। और महात्माओं की भी आज्ञा है "विमुक्तबन्धा विचरेदसंगः।" इत्यादि तथा लोक का बंधन छोड़ना भी एक बड़ा कठिन साधन है। कोई हँसे न, कोई नाम न धरे, 'धोती इतनी नीचे पहिने कि एड़ी न दिखाय', नहीं निर्लज्ज कहावेंगे, मार्ग में जिस चाल से निकलते हैं वैसे ही निकलना चाहिए, इत्यादि लोककल्पित व्यवहार और भी महाबंधन के कारण होते हैं। इस हेतु सब लोकबंधन की मूल लज्जा को चौपट कर डालना "एकां लज्जां परित्यज्य त्रैलोक्यविजयी भवेत्"। क्योंकि भक्ति के साधन में श्री मुख से आप ने आज्ञा की है "विलज्ज उद्गायति रौति नृत्यति मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति", तो सबके सामने कौन गावेगा कौन रोवैगा कौन नाचैगा ? जो मेरा सा निपट बेहया होगा तथा जब लोक

तथा—"नाहं वेदैर्न तपसान दानेन न चेज्यया। शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ भक्त्याहमेकया ग्राह्य अहमेवंविधोऽर्जुन। ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वेन प्रवेष्टुं च परंतप।" इत्यादि ॥ इन वाक्यों को छोड़ कर भक्तों के दोनों लोक साधन के लिए उसकी दृढ़ प्रतिज्ञा है "कौंतेय प्रतिजानीहि न मेभक्तः प्रणश्यति", "नरकादुद्धराम्यहं", "तान्विभर्म्यहं", "सोयं मे व्रत आहितः" "योगक्षेमं वहाम्यहं", "तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्" इत्यादि।

२८ ॐ तस्या ज्ञानमेव साधनमित्येके।

उस (भक्ति) का साधन ज्ञानही है यह किसी का मत है।

ऐसा नहीं हो सकता। गृध्र, अजामिल, गजेंद्र इत्यादि को किसने ज्ञान दिया है "केवलेनहिभावेन गोप्यो गावः खगा मृगाः। येऽन्ये मूढ़धियो नागाः सिद्धा मामीयुरञ्जसा" ॥ भक्ति का साधन तो अपने चित्त का अंकुर और उनकी कृपा ही है, ज्ञान बेचारा क्या साधेगा ?

२९ ॐ अन्योन्याश्रयत्वमित्यन्ये।

दूसरों का मत है कि भक्ति और ज्ञान से परस्पर आश्रयत्व है।

यह भी नहीं हो सकता, जब मनुष्य किसी की भक्ति वा प्रीति कर लेगा तब उसके ज्ञान में क्या प्रवृत्त होगा ? पानी पीके जात नहीं पूछी जाती।

३० ॐ स्वयंफलरूपतेति ब्रह्मकुमाराः।

सनत्कुमारादिक और नारद जी का मत है कि भक्ति स्वयं फलरूपा है।

इइ है पहले भी कह आए हैं।

३१ ॐ राजगृहभोजनादिषु दृष्टत्वात्।

राजा का घर और भोजनादि के केवल देखने में ऐसा ही देखा गया है।

पूर्वकथित फलरूपता का उदाहरण दिखाते हैं।

३२ ॐ न तेन राजपरितोषो क्षुधाशान्तिर्वा।

न उससे राजा का परितोष होगा, न क्षुधा मिटेगी।

ज्ञान के फलरूप होने में दोष दिखाते हैं कि एक मनुष्य को किसी

नारद जी अपनी प्रतिज्ञा दृढ़ करने के हेतु दो बार कहते हैं और निश्चय कराते हैं। वरंच यह कहते हैं कि वह आपही नहीं तरता किंतु संसार को तारता है, "पुनाति भुवनत्रयं", "तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तस्थेन गदाभृता", "ते पुनन्त्युरुकालेन", "मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति", "स्वयं समुत्तीर्य सुदुस्तरं" इत्यादि वाक्यों से इनका संसार में पवित्र कर के तारना सिद्ध है।

षष्ट अनुवाक समाप्त।

५१ ॐ अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपं।

प्रेम का स्वरूप कहा जा नहीं सकता।

तो हम लोग क्या कहें।

५२ ॐ मूकास्वादनवत्।

गूँगे के स्वाद की भाँति।

अर्थात् केवल अनुभव सिद्ध है क्योंकि मीठे और सलोने में जो भेद वा स्वाद है वह कहा नहीं जा सकता। इतना ही कह सकते हैं कि खाके अनुभव कर लो। उसमें भी गूँगे के स्वाद का क्या पूछना है। यहाँ वही कहावत है "बिना अपने मरे स्वर्ग नहीं सूझता।"

५३ ॐ प्रकाश्यते क्वापि पात्रे।*

(तथापि) कभी किसी पात्र (अधिकारी) से प्रकाश किया जाता है।

"ब्रूयुः स्निग्धस्य शिष्यस्य गुरवो गुह्यमप्युत" इत्यादि वाक्य से सिद्ध है। तो इस में यह शंका हुई कि श्री नारद जी ने संसार में कोई पात्र पाए बिनाही इन सूत्रों का प्रकाश क्यों किया? इसके उत्तर में हम इतना ही कहा चाहते हैं कि यह किसी पात्र को उद्देश्य करके नहीं

* जिस पुस्तक में "प्रकाशते" ऐसा पाठ है वहाँ अर्थ है कि प्रेम स्वरूप कभी किसी पात्र (अधिकारी) में स्वयं प्रकाश पाता है।

यस्मिन्नुत्पद्यते तस्य नाशकः सर्वथा मतः ॥ विषयावेशहेतुत्वाद्विक्षेपोत्पत्तिकारणं। रजोगुणसमुत्पन्नो रजः प्रक्षेपको मुखे ॥ ब्रह्मावेशविरोधी च सद्बुद्धेर्बाधको मतः। सत्कर्मनाशक सर्वप्राकृतासक्तिसाधकः॥ चित्ताशुद्धि निदानत्वाच्चिदुत्पत्तौ च बाधकः। भक्तिमार्गमहाद्वेष्टा वैराग्याभावसाधनात्॥ सर्वत्रापरितोषश्चानेन लोभसमुद्भवात्। यथाकथंचित्सौमुख्येंद्रियवैमुख्यकारकः॥ कामलोभौ हरिप्राप्तिप्रतिबंधकपर्वतौ। तावुल्लंघ्य न शक्नोति गन्तुं कृष्णांतिकं जनः॥ संसारमोहहेतुत्वान्मनोदूषणसाधनम्। अतः सेवाविरोधी च यतः सा मानसी मता॥ निरोधस्य महाञ्छत्रुरन्यत्स्फूर्तिकरो यतः। गुणगानसपत्नोपि न रोचंते गुणा यतः। वैराग्यबाधकाः सर्वे कामिनस्ते कथं प्रियाः। अतएव हि दृश्यन्ते गुणश्रवणवैरिणः॥ क्रोधः स्वकार्यकरणाल्लोभः ऽप्त्यापि शाम्यति। घृतहोमे वन्हिरिव कामो भोगेन वर्द्धते॥ कामेन नाशितमतिः प्रतिषिद्धे प्रवर्तते। अगम्यागमने चौर्य्ये तथैवाभक्ष्यभक्षणे॥ यतउत्पद्यते क्रोधो महद्दोहसमुद्भवः। लोभोपि जायते तस्मात्सचार्थविषये भवेत्॥ सोर्थः पञ्चदशानर्थमूलं तत्र प्रवर्तते। कामैनैवहि कार्पण्यं कामिनीषु सतां मतं। प्रार्थयन्ति यतस्तुच्छां प्रवेश्य वदने कर" इत्यादि कामदोष पर आपने एक ग्रंथ ही बनाया है। तो काम मुख्य दोष है इसमें कोई संदेह नहीं, वरञ्च श्री गीता जी में काम ही के छुड़ाने के आग्रह से सुखपूर्वक भोजनादि का भी निषेध किया है। श्रीमुखवाक्य 'इन्द्रियाण्यनुशुष्यन्ति निराहारस्य देहिनः। रसवर्जं रसोप्यस्य परं दृष्ट्वानिवर्तते'। इससे भक्ति के सब साधनों मे मुख्य विषयों का त्याग है। संगत्याग के दोष ४३। ४४। ४५ सूत्रों में दिखावेंगे।

३६ ॐ अव्यावृतभजनात्।

सतत भजन से।

निरंतर शब्द यहाँ इस हेतु दिया है कि क्षण क्षण में जीव को आसुरावेश होता है और रजोगुण सतोगुण की तरंगें उठा करती हैं तो उसकी निवृत्ति के हेतु निरंतर भजन करै। जिस क्षण में नामोच्चारण का व्यवधान होगा उसी क्षण में आसुरावेश होगा अतएव भगवान श्री श्रीवल्लभाचार्य ने आज्ञा की है "तस्मात्सर्वात्मना नित्यं श्रीकृष्णः

देह का स्पर्श न किया। बोधा ने भाषा कवित्त में कहा है "अति छीन मृनाल के तारहु ते तेहि ऊपर पाँव दै आवनो है। सुचिवेध ते नाको सकीर्न तहाँ परतीत को टाँड़ो लदावनो है॥ कवि बोधा अनी घनी नेजहु ते चढ़ि तापै न चित्त डगावनो है। यह प्रेम को पंथ कराल महा तरवार की धार पै धावनो है॥"

५५ ॐ तंप्राप्य तदेवावलोकयति तदेव शृणोति तदेव भाषयति तदेव चिन्तयदि।

इसको पाकर उसी को देखता है, उसी को सुनता है, उसी को बोलता है और उसी का चिन्तन करता है।

क्योंकि फिर इसको कहने, सुनने और देखने को अवशिष्ट नहीं रहता और जहाँ "तं प्राप्य तमेव अवलोकयति" इत्यादि पाठ है वहाँ यह अर्थ है कि उसको अर्थात् भगवान को प्रेम द्वारा पाकर उसी को देखता है क्योंकि उस अनिर्वचनीय रूप को देखकर और देखने की इच्छा नहीं होती।

५६ ॐ गौणी त्रिधा गुणभेदादार्तादिभेदाद्वा।

गौणी (भक्ति) तीन प्रकार की, गुणभेद वा आर्तादि भेद से।

मुख्याभक्ति का स्वरूप दिखाकर गौणी का स्वरूप कहते हैं—सत्व, रज, तम गुणों के भेद से सात्विकी, राजसी, तामसी तीन प्रकार की भक्ति वा श्रद्धा होती है। गुणत्रयविभाग वर्णन में श्रीभगवान ने इसका विस्तार कहा है वा आर्त, जिज्ञासु और अर्थार्थी इन तीनों के भजन के भेद से भी गौणी भक्ति तीन प्रकार की हो जाती है॥

५७ ॐ उत्तरस्मादुत्तरस्मात्पूर्वपूर्वो श्रेयान् भवति।

पिछले पिछले (भेद) से पहला कल्याण हेतु होता है।

अर्थात् तमोगुणी से रजोगुणी और रजोगुणी से सत्वगुणी अच्छी होती है, वैसेही अर्थार्थी से जिज्ञासु और जिज्ञासु से आर्त अच्छा होता है क्योंकि सतोगुणी भक्ति से वा आर्त के भजन से शुद्ध भक्ति मिलने की संभावना है।

सप्तम अनुवाक समाप्त।

—:o:—

३८ ॐ मुख्यतस्तु महत्कृपयैव भगवत्कृपालेशाद्वा।

(उस भक्ति का) मुख्य साधन तो महानुभावों की कृपा है वा भगवान की कृपा का लेश।

ऐसाही है, परम भागवत जड़भरतजी ने रहूगण को उपदेश किया है "रहूगणैतत्तपसा न याति न चेज्यया निर्वपणाद्गृहाद्वा। न छन्दसा नैव जलाग्निसूर्यैर्विना महत्पादरजोभिषेकात्॥" हे रहूगण, यह (सिद्धि) तप से नहीं होती और न यागादि कर्मों से, न घर छोड़ के योगी बनने से, न वेदों से, न जल से अर्थात् स्नान संध्या तर्पणादि से, न अग्नि से अर्थात् पञ्चाग्नि साधन वा अग्निहोत्र से, न सूर्य से अर्थात् सूर्योपस्थान वा ग्रीष्मताप सेवनादि से। विना महानुभावों के पदरज में नहाये और किसी से यह नहीं हो सकता। यही श्रीमुख से भी कहा है "नह्यम्मयानि तीर्थाणि न देवा मृच्छिलामयाः। ते पुनंत्युरुकालेन दर्शनादेव साधवः॥" हे अक्रूर! जिस को जलमय तीर्थ (गङ्गादि) और मृण्मय और शिलामय देव पवित्र नहीं करते वा बहुत काल से करते हैं उसको साधु लोग दर्शनही से तत्काल पुनीत करते हैं।

वरंच श्रीमद्भागवत पंचमस्कंध में श्रीमत्परम भागवत प्रह्लादजी ने कहा है "मागारदारात्मजवित्तवंधुषु संगो यदि स्याद्भगवत्प्रियेषु नः। यः प्राणवृत्त्या परितुष्ट आत्मवान् सिद्ध्यत्यदूरान्न तथेन्द्रियप्रियः॥ यत्संगलब्धं निजवीर्यवैभवं तीर्थं मुहुःसंस्पृशतां हि मानसं। हरत्यजोंतः-श्रुतिभिर्गतोंगजं को वै न सेवेत मुकुन्दविक्रमं" ॥*

देवीपुराण नवमस्कंध के षष्ठाध्याय में गंगा जी से भगवान् का वाक्य है "मन्मंत्रोपासकानां च सतां स्नानावगाहनात्। युष्माकं मोक्षणं पापात् दर्शनात् स्पर्शनात्तथा॥ पृथिव्यां यानि तीर्थानि सत्यसंख्यानि सुन्दरि। भविष्यन्ति च पूतानि मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्॥ मन्मन्त्रोपासका भक्ता विश्रमन्ति च भारते। पूतां कर्तुंतारितुञ्च सुपवित्रां वसुन्धरां॥ मद्भक्ता यत्र तिष्ठन्ति पादं प्रक्षालयन्ति च। तत्स्थानन्तु महातीर्थं सुपवित्रं भवेद्ध्रुवं॥ स्त्रीघ्नो गोघ्नः कृतघ्नश्च ब्रह्मघ्नो गुरुतल्पगः। जीव-

* देवीपुराणही को देवीभागवत कहते हैं क्योंकि पुराणों में जहाँ कहीं उपपुराणों को गिना है वहाँ "देवी भागवत" वा "देवीपुराण" ऐसा शब्द है।

बिना जीव के ताप की निवृत्ति नहीं होती। और वेदांतियों ने ज्ञान का फल आनंद कहा है, ज्ञान को स्वतः आनंदस्वरूप नहीं कहा है। और भक्ति का स्वरूप आनंद तो सूत्र में कहतेही हैं।

अब जो जीव को शंका हो कि हम ने तुम्हारे कहने अनुसार योगक्षेमादिक सब छोड़ा परंतु उस लोक की गति क्या होगी इस शंका के मिटाने के हेतु कहते हैं।

६१ ॐ लोकहानौ चिंता न कार्य्या निवेदितात्मलोकवेदशील-त्वात्।

लोकहानि में चिंता नहीं करना, क्योंकि (भक्तों ने) आत्मा, लोक वेद, शील सब ईश्वर में अर्पण किया है।

अर्थात् जो वस्तु कोई किसी को दे देता है फिर उसकी हानि का सोच देने वाले को नहीं होता, जिसको देता है उसी को होता है। हम लोगों को लोकादि हानि का सोच क्यों करना चाहिए, उसका सोच वह (भगवान्) आप करेगा अतएव श्री महाप्रभु जी ने आज्ञा की है "चिंता कापि न कार्या निवेदितात्मभिः कदापि भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिं। निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वदा तादृशैर्जनैः॥ सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छातः करिष्यति। सर्वेषां प्रभु सम्बन्धो न प्रत्येकमितिस्थितिः॥ अतोन्यविनियोगेपि चिन्ता का स्वस्य सोऽपि चेत्। अज्ञानादथवा ज्ञानात्कृतमात्मनिवेदनं॥ यैः कृष्णस्तत्कृतप्राणै-स्तेषां का परिवेदना" इत्यादि अथवा चतुः श्लोकी में फिर आप आज्ञा करते हैं कि * "एवं सदा स्व कर्तव्यं स्वयमेव करिष्यति। प्रभुः सर्वसम-र्थोहि ततोनिश्चिन्ततां व्रजेत्॥ यदि श्री गोकुलाधीशो धृतः सर्वात्मना हृदि। ततः किमपरं ब्रूहि लौकिकैर्वैदिकैरपि॥"

अब जो वसा दृढ़ नियम न सिद्ध हुआ तो क्या करना इसका साधन लिखते हैं—

६२ ॐ न तदसिद्धौ लोकव्यवहारो हेयः किन्तु फलत्यागस्तत्साधनं च कार्यमेव।

---

* एवं सर्वैः स्म कर्तव्यमिति पाठ भेद।

द्विष्णुभक्तानां पुरुपार्थोस्ति नेतरः। तेपु तद्द्वेपतः किंचिन्नास्ति नाशनमात्मनः ॥" पद्मपुराण में श्री महादेव जी का वाक्य "आराधनानां सर्वेषां विष्णोराराधनं परं। तस्मात्परतरं देवि तदीयानां च पूजनं ॥" श्रीमद्भागवत मे श्री महादेव जी का वाक्य "न मे भागवतानां च प्रेयानन्योस्ति कर्हिचित्" इत्यादि। पूर्वोक्तश्लोकों में तदीय जनों का माहात्म्य सिद्ध हुआ तो ऐसे तदीयों की कृपा से भक्ति मिले इसमें क्या आश्चर्य है वा भगवान ही की कृपा से होय। क्योंकि आप कभी-कभी भक्तिदान देते हैं "ददामि बुद्धियोगं त येन मामुपयांति ते"। परतु भगवान की कृपा से भक्तों की कृपा सुलभ है क्योंकि भगवान भक्तिदान विशेष नहीं करते "मुक्तिं ददामि कर्हिचित् स्म न भक्तियोगं ॥" इत्यादि अतएव इस सूत्र में महत्कृपा का मुख्य करके भगवत्कृपा को गौण किया है।

३९ ॐ महत्सङ्गस्तु दुर्लभोऽगम्योऽमोघश्च।

और महत्सङ्ग दुर्लभ, अगम्य और अमोघ (सफल) है।

ऐसा ही है, "तृणार्द्धेनापि तुलये न स्वर्गं नापुनर्भवं। भगवत्सङ्गिसंगस्य मर्त्यानां किमुताशिषः" इत्यादि। श्रीमद्भागवत में श्रीमहादेव जी का वाक्य है। "अमोघं सिद्धदर्शनं" इत्यादि स्मृति तथा श्रीमुखवाक्य 'न रोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म एवच। न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तं न दक्षिणा ॥ व्रतानि यज्ञच्छन्दांसि तीर्थानि नियमा यमाः। यथावरुध्येत्सत्सङ्गः सर्वसंगापहोहि मां ॥" और लोक में भी प्रसिद्ध है "सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसां" इत्यादि।

४० ॐ लभ्यतेपि तत्कृपयैव।

महत्सङ्ग उसकी कृपा से ही मिलता है।

"यस्य भागवताः प्रीतास्तस्य प्रीतो हरिः स्वयं।" इत्यादि वाक्यों से सिद्ध है। तथा श्री महादेव जी ने भी कहा है "अथानघांघ्रेस्तव कीर्तितीर्थे योन्तर्बहिः स्नाति विधूतपाप्मना। भूतेष्वनुक्रोशसुसत्वशीलिनां स्यात्सङ्गमोनुग्रह एवमस्तु च" ॥

४१ ॐ तस्मिंस्तज्जने भेदाभावात्।

उसके और उसके जन में भेद के अभाव से।

६६ ॐ त्रिरूपभंगपूर्वक नित्यदासनित्यकान्ता भजनात्मकं वा प्रेम एव कार्य्यं प्रेम एव कार्यमिति।

तीनों रूपभंग पूर्वक (भगवान का) नित्य दास्य और नित्यकान्ता की भाँति भजन रूपी प्रेमही करना, प्रेमही करना।

त्रिरूप शब्द का क्या अभिप्राय है यह कौन जाने। यदि हम स्मार्त होते तो ब्रह्मा विष्णु शिव को एक करते वा वेदान्ती होते तो त्रिपुटी-भंग वा जीव, ईश्वर और ब्रह्म की एकता करते परंतु यह भक्तिशास्त्र है यहाँ इनका प्रयोजन नहीं। यहाँ तीनों गुणों को मिटा कर वा भक्ति-स्वरूप आनंदांश के आविर्भाव से तीनों (सत्, चित् और आनंद) का परस्पर पृथक्त्व भंग करना वा गुरु ईश्वर और उसके भक्तों के भेद का भंग इत्यादि। अब हम अपना सिद्धांत दिखाते हैं। युगल स्वरूप में और उनको पृथक् मानना अर्थात् यह वह और यह दोनों अलग हैं यह जो तीन प्रकार की भावना है इसका भंग वा प्रेमी, प्रेम और प्रेमपात्र इनके भेद के भंग पूर्वक दासभाव से वा कांताभाव से प्रेम ही करना, प्रेम ही करना। इति शब्द से इन साधनों के कहने के पीछे और कुछ शेष वक्तव्य नहीं यह बोधन किया।

अष्टम अनुवाक समाप्त।

---

६७ ॐ भक्ता एकान्तिनो मुख्याः।

भक्त एकांती (अभ्यंतरचारी) (और सब से) मुख्य होते हैं।

पहिले सूत्रों में साधारण भक्तों की महिमा दिखाकर अब एकांती भक्तों की महिमा दिखाते हैं। भक्तों में भी अनन्य और एकांती (अपनी भक्ति को गूढ़ रखने वाले) मुख्य हैं। इस एकांती शब्द से भक्ति भी सब संसार के दिखावे की भाँति एक संसारी आचरण है, इस का निषेध किया।

६८ ॐ कण्ठावरोधरोमांचाश्रुभिः परस्परं लपमानाः पावयन्ति कुलानि पृथिवीं च।

४३ ॐ दुःसंगस्सर्वथैव त्याज्यः ।

दुःसंग का सब रीति से त्याग करना । उसके त्याग में कारण कहते हैं—

४४ ॐ कामक्रोधमोहस्मृतिभ्रंशबुद्धिनाशसर्वनाशकारणत्वात् ।

(क्योंकि वह) काम, क्रोध, मोह, स्मृतिभ्रंश, बुद्धिनाश तथा सर्वनाश का कारण है ।

ऐसाही श्रीमुख से भी कहा है "ध्यायतो विषयान्पुन्सःसंगस्तेपूपजायते । संगात्संजायते कामः कामात् क्रोधोभिजायते ॥ क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात् स्मृतिविभ्रमः । स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति ॥" विषयों के सुख सोचते सोचते विषयसंग होता है और विषयसंग से अनेक प्रकार की कामना उत्पन्न होती है, और जब उस कामना के पूर्ण होने में कोई बाधक होता है तब क्रोध उत्पन्न होता है और जब उस क्रोध से अनिवार्य बाधकों का प्रत्यय नहीं कर सकता तब मोह हो जाता है और निराश होके रोने लगता है । फिर इस दुःख से सब स्मृति भूल जाती है और जब स्मृति भूल जाती है तब इस की बुद्धि ठिकाने नहीं रहती और अन्यथा करने पर प्रवृत्त हुआ तहाँ उस का लोक परलोक सब नाश होता है" । इस से यह दिखाया कि सब बिगाड़ का कारण विषय और उसका संगही है ।

४५ ॐ तरङ्गायितापीमे सङ्गात्समुद्रायन्ति ।

ये (काम क्रोधादिक) तरंगों की भाँति होकर भी संग से समुद्र से हो जाते हैं ।

दुःसंग में और भी दोष दिखाते हैं । यद्यपि जो लोग सन्मार्ग पर प्रवृत्त हैं उनको अहर्निश भगवदाराधन करते-करते काम क्रोधादिक की केवल तरंग आती है, जैसे नित्य विषयियों को सुरतान्त, तीर्थगमन, कथाश्रवण वा स्मशानदर्शन से ज्ञान की तरंग आती है । जितनी देर स्मशान पर बैठते हैं संसार नश्वर है, पुत्रादिकों में मोह अच्छा नहीं इत्यादि ज्ञान छाँटते हैं पर जहाँ घर आये तहाँ फिर संसारी काम में मग्न हो गये । वैसे ही अच्छे लोगों को प्रारब्धवशात् संग में जो कुछ

जटाकलापः। भस्मावगुण्ठामलरुक्मदेहो देवस्त्रिभिः पश्यति देवरस्ते॥ नयस्यलोके स्वजनः परोवा नात्यादृतो नोतकश्चिद्विगर्ह्यः। वयं व्रतैर्यच्चरणा-पविद्धामाशास्महेऽजांव्रत भुक्तभोगां॥ यस्यानवद्याचरितं मनीषिणो गृणन्त्यविद्यापटलं विभरसवः। निरस्तसाम्यातिशयोपि यत्स्वयं पिशाच चर्यामचरद्गतिस्सतां॥ हसन्ति यस्याचरितंहिदुर्भगास्स्वात्मनरतस्या-विदुषस्समीहितं। यैर्वस्त्रमाल्याभरणानुलेपनैः श्वभोजनं स्वात्मतयोपला-लितं॥ ब्रह्मादयो यत्कृतसेतुपाला यत्कारणं विश्वमिदं च माया। आज्ञा-करी तस्य पिशाचचर्य्या अहोविभूम्नश्चरितं विडम्बनम्"॥

अहा जब भगवान् शिवजी ने जोकि इस मार्ग के परम गुरु और परम रहस्यवेत्ता "ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वदेहिनां। ब्रह्माधि-पतिर्ब्रह्मणोधिपतिः" "अहं कलानां ऋषभो" "विद्याकामस्तु गिरिशं" "यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधिपो रुद्रोमहर्षिः" "हिरण्यगर्भं पश्यत जायमानं सनो देवः शुभया स्मृता संयुनक्तु" "कस्तञ्चराचरगुरुन्निर्वैरं शान्तविग्रह। आत्मारामं कथं द्वेष्टि जगतो दैवतं महत्॥" "त्र्यम्बकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्द्धनं। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मा मृतात्॥" "तस्मिन्महायोगमये मुमुक्षुशरणं सुराः। ददृशुः शिवमासीनं त्यक्तामर्षमिवांतकं"॥ "विद्यातपोयोगपथमास्थितं जगदीश्वरं। चरंतं विश्वसुहृदं वात्सल्याल्लोकमंगलं॥ उपविष्टं दर्भमय्यां वृस्यां ब्रह्म सनातनं। नारदाय प्रवोचंतं पृच्छते शृण्वतां सतां॥ कृत्वोरौ दक्षिणे सव्ये पाद-पद्मञ्च जानुनी। वाहुप्रकोष्ठेऽक्षं माला मासीनं योगमुद्रया॥ तं ब्रह्म-निर्वाणसमाधिमास्थितं व्युपाश्रितं गिरिशं योगकर्त्तां। सलोकपाला मुनयो मनूनामाद्यं मनुं प्रांजलयः प्रणेमुः॥" इत्यादि श्रुतिपुराणादि वाक्यों से प्रतिपाद्य श्रीमहादेव जी ने यह मत्तचर्या अवलम्बन किया तब और भक्तों का क्या पूछना है। ऐसेही ऋषभदेव जी की भी चर्या है यथा "जडान्धमूकवधिरपिशाचोन्मादकवदवधूतवेषोऽभिभाष्यमाणो-ऽपि जनानां गृहीतमौनव्रतस्तूष्णींबभूव॥" तथा जड़भरत जी की भी ऐसी ही चर्या है "तयेत्थमविरतपुरुषपरिचर्यया भगवते प्रवर्द्धमाना-नुरागभरद्रुतहृदयशैथिल्यः प्रहर्षवेगेनात्मन्यवधीयमानरोमपुलककुलक-औत्कण्ठ्यप्रवृत्तप्रणयवाष्पनिरुद्धावलोकनयन एवंनिजरमणारुणचरणा-

छुटा तव उससे भी बड़ा बंधन वेद बचा, उसके मिटाने के हेतु कहते हैं "निस्त्रैगुण्यो भवति" अर्थात् सत्व, रज, तम इन तीनों गुणों की प्रवृत्ति से अलग हो जाता है। श्री मुख से भी कहा है "त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन॥"

परंतु जो कहो कि लोक वेद छोड़ के केवल अपना भला करना तो चार्वाक का मत है तो इसका खंडन करते हुए कहते हैं "योगक्षेमं त्यजति" अर्थात् केवल लोक वेद नहीं छोड़ता वरंच अपने भी खाने पीने पहिरने रहने ओढ़ने बिछाने सोने इत्यादि का शोक छोड़ देता है "भोजनाच्छादने चिन्तां वृथा कुर्वन्ति वैष्णवाः। विश्वम्भरो गुरुर्येषां किं दासान् समुपेक्षते" और उसकी प्रतिज्ञा भी है "अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाःपर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानं योगक्षेमं वहाम्यहं" इत्यादि। क्योंकि जब सब छोड़ा फिर अपनी हाय हाय न छूटी तो उस छोड़ने पर धिक्कार है।

४८ ॐ यः कर्मफलं त्यजते कर्माणि संन्यसति ततो निर्द्वन्द्वो भवति॥

जो कर्मफल छोड़ता हैं, कर्मों का त्याग कर के निर्द्वन्द्व होता है।

निस्त्रैगुण्य होने का क्रमशः साधन कहते हैं, जब तक चित्त में अर्थों की तरंगे उठें तब तक कर्मों को नहीं छोड़ना, उसका फल छोड़ना और जब कामनाओं की निवृत्ति हो जाय तब उन कर्मों को भी छोड़ के निर्द्वन्द्व हो जाना, क्योंकि श्रीमुख से भी कहा है "निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्।" "यावानर्थ उदपाने" इत्यादि ऊपर लिख आए हैं।

४९ ॐ वेदानपि संन्यसति केवलमविच्छिन्नानुरागं लभते।

वेदों को भी छोड़ देता है और केवल अविछिन्न अनुराग (प्रीति) को पाता है।

अब साधन दिखा कर उसकी सिद्ध दशा लिखते हैं। जब सिद्ध हो जाता है तब वेदों का त्याग कर देता है और केवल अविच्छिन्न प्रेम पाता है।

५० ॐ स तरति स तरति स लोकान्तारयतीति।

वह तरता है, वह तरता है, वह लोकों को तारता है।

यो मङ्गलानां च मङ्गलं" इत्यादि वाक्य से संसार में जो कुछ पवित्रता है भगवान की है तो तन्मय जो भक्त हैं उन के दर्शन-स्पर्श से क्यों न पवित्र होंगे। "तीर्थपाद" भगवान का नाम है और उनके भक्त उनका चरित्र सर्वदा गान करते हैं और भगवान के चरित्र ही से तीर्थ, कर्म और शास्त्र इन सब को सत्तीर्थता, सत्कर्मता और सच्छास्त्रता होती है, यह क्रम से दिखाते हैं। "तत्रैव गङ्गा यमुना च तत्र गोदावरी सिन्धु-सरस्वती च। सर्वाणि तीर्थानि वसंति तत्र यत्राच्युतोदारकथाप्रसंगः" इत्यादि वाक्यों से तीर्थों का "तत्कर्म हरितोषं यत् सा विद्या तन्मति-र्यया।" "धर्मः स्वनुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेनकथासु यः। नोत्पादयेद्यदि रतिं श्रम एवहि केवलम्" ॥ "दानव्रततपोहोमजपस्वाध्यायसंयमैः। श्रेयो-भिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते" ॥ "धिग्जन्मनस्त्रिवृद्विद्यां धिग्व्रतं धिग्बहुज्ञतां। धिक्कुलं धिक्क्रियादाक्ष्यं विमुखा ये त्वधोक्षजे" ॥ "देशः कालः पृथग्द्रव्यं मन्त्रतन्त्रर्त्विजोऽग्नयः। देवता यजमानश्च क्रतुर्ध-र्मश्च यन्मयः ॥" "नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जितं न शोभते ज्ञानमलं निरंजनं। कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे न चार्पितं कर्म यदप्यकारम् ॥" इत्यादि से भगवान का कर्म को भी पवित्र करना और एकादश स्कंध के ५ अध्याय में "कर्मण्यकोविदाः स्तब्धा" इत्यादि परम भागवत चमस जी के वाक्य में भगवत्तोष विना कर्मांतर की प्रवृत्ति की निंदा में कर्मों का सुकर्म होना तथा "न यद्वचश्चित्रपदं हरेर्यशो जगत्पवित्रं प्रगृणीय कर्हिचित्। तद्वायसं तीर्थमुशंति मानसा न यत्र हंसा निरमंत्यु-शिक्षयाः ॥ तद्वाग्विसर्गो जनताघविप्लवो यस्मिन् प्रतिश्लोकमबद्धवत्यपि। नामान्यनंतस्य यशोंकितानि यच्छृण्वन्ति गायन्ति गृणंति साधवः ॥" इत्यादि से शास्त्रों का सच्छास्त्र करना सिद्ध है तो तन्मय, तत्स्वरूप, तत्समानादरणीय परमभक्त जन तीर्थादिकों को तीर्थ बनावेंगे इसमें कौन आश्चर्य है।

७१ ॐ मोदंति पितरो नृत्यंति देवताः सनाथा चेयं भूर्भवति।

(जिनके चरित्र देख) पितर आनन्दयुत होते हैं, देवता लोग नाचते हैं और यह पृथ्वी सनाथ होती है।

"कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा भागवती च धन्या। स्वर्गेपि

कहा वरंच स्वतः मुँह से प्रेम के आवेश से निकल गया क्योंकि पात्र भर जाता है तब आप से आप ऊपर वह- निकलता है। उस समय यह विचार नहीं रहता कि नीचे पात्रान्तर आधारभूत है या नहीं, वही दशा इस की भी है। जब उस परमानंद का उच्छ्वास होता है तब यहाँ भी पात्रापात्र-विचार नहीं होता, पागल की भाँति गूढ़ तत्व भी अपने आप बकने लगता है।

५४ ॐ गुणरहितं कामनारहितं प्रतिक्षणवर्द्धमानमविच्छिन्नं सूक्ष्मतरमनुभवरूपम्।

(प्रेमस्वरूप) गुणों से रहित, कामनाओं से रहित, प्रतिक्षण में वृद्धिङ्गत, अविच्छिन्न, सूक्ष्मतर केवल अनुभवरूप है।

कामनारहित, क्योंकि कामना से यह भक्ति व्यवहार हो जायगी, इससे स्वर्गादि कामना के अर्थ यजनस्वरूपा भक्ति वा कामपूरणार्थ दंपति के प्रेम का नाम प्रेम है, इस का निराकरण किया। श्रीमुख से भी कहा है, "न मय्यावेशितधियां कामः कामाय कल्पते। भर्जिता क्वथिता धाना भूयो बीजाय नेष्यते" इत्यादि और सांसारिक प्रेम से इस शुद्ध प्रेम में आधिक्य दिखाने के हेतु "प्रतिक्षण वर्द्धमान" यह कहा, क्योंकि संसार में प्रेम पहले तो बड़े चाव से होता है फिर प्रतिदिन अवस्था बल वा रूप गुण धन के घटने से वह प्रेम दिन दिन घटता जाता है और उस अशेषगुणसम्पन्न नित्यनव किशोर असीम-गुणमंडित अतुलबलसीम परमानन्दमय में जो प्रेम होगा वह प्रतिक्षण बढ़ता जायगा क्योंकि उत्तम सौंदर्य और गुण का धर्म है कि जितना उसको देखते वा विचारते जाओगे उतनी ही उत्तम सूक्ष्मता प्रगट होती जायगी और जैसा इस प्रेम को संसार के दुःखादि बाधा कर देते हैं वैसी उसमें कोई बाधा नहीं होती क्योंकि भगद्वियोग के महादुःखसागर में ये सब संसार क्षुद्र दुःख डूब जाते हैं। "सर्वपदं हस्तिपदे निमग्न" और सूक्ष्म इतना है कि उसका उदाहरण नहीं दिया जा सकता, इसी हेतु अनुभवरूप कहा है। पुराणांतर में कथा है कि सती ने किसी कल्प में श्रीजानकी जी का वेष धर के भगवान् की परीक्षा की थी इससे हम सब प्रेमियों के शिरोरत्न श्री महादेव जी ने फिर सती के उस

तधन्वनुरंतिदेवदेवव्रतो बलिरमूर्तरयो दिलीपः ॥ सौभयुतंकशिविदेवल-पिप्पलादसारस्वतोद्धवपराशरभूरिषेणाः । येन्ये विभीषण हनूमदुपेन्द्र-दत्तपार्थार्ष्टिषेणविदुरश्रुतदेववर्याः ॥ ते वै विदंत्यतितरंति च देवमायां स्त्रीशूद्रहूणशबरा अपि पापजीवाः । यद्यद्गुणक्रमपरायणशी-लशिक्षास्तिर्यग्जना अपि किमु श्रुतधारणा ये ॥" इत्यादि वाक्यों से तदीयों की समता स्पष्ट है और वैष्णवे जातिबुद्धि अर्थात् वैष्णव में जातिभेद करना यह ६४ महा अपराधों * में से एक गिना

* (१) भगवान् में देवविशेष या तत्वविशेषबुद्धि (२) शास्त्रों में ग्रंथ अर्थात् पौरुपेय-बुद्धि (३) वैष्णव में जाति-बुद्धि (४) गुरु में साधारण मनुष्य-बुद्धि (५) प्रतिमा में शिलाबुद्धि (६) प्रसाद में खाद्यबुद्धि (७) चरणोदक में जलबुद्धि (८) तुलसी में वृक्षसाधारण बुद्धि (९) गऊ में पशुसाधारण बुद्धि (१०) भागवत और गीता में ग्रंथसाधारण बुद्धि (११) भगवल्लीला में मनुष्यकृत्य बुद्धि (१२) सांसारिक प्रेम वा स्त्रीसुख में लीला गान वा स्मरण (१३) श्रीगोपीजन में परकीया-भावना (१४) रासलीला में कामबुद्धि (१५) महोत्सव में स्पर्शास्पर्शबुद्धि (१६) नास्तिक-वादावलंबन (१७) संदेहपूर्वक धर्माचरण (१८) अश्रद्धापूर्वक धर्माचरण वा धर्म में आलस्य करना (१९) वैष्णव का वाह्य चरित्र देखना (२०) महात्माओं के चरित्र पर गुण दोष विचारना (२१) अपने को उत्तम समझना (२२) किसी देवता या शास्त्र की निंदा (२३) भगवद् विग्रह के सामने पीठ लगाकर बैठना (२४) जूता पहने, (२५) माला पहने, (२६) छड़ी लिए, (२७) नील वस्त्र पहने (रेशम में नील शुद्ध है) (२८) विना दंतधावन किए, (२९) मलत्याग मैथुनादि के पीछे विना वस्त्र बदले मंदिर में जाना, (३०) भगवद्विग्रह के सामने हाथ पैर हिलाना (३१) ताम्बूलादि खाना, (३२) ऊँचे हँसना, (३३) कुचेष्टा करना, (३४) स्त्री को घूरना, (३५) क्रोध करना (३६) दूसरे को आदर के हेतु अभिवादन करना, (३७) दुर्गंध वस्तु खाकर तथा पहनकर, विना गंध दूर भए वा अजीर्ण भए पर जाना, (३८) मत्त होना अर्थात् नशा सेवन करके जाना, (३९) किसी का अपमान करना वा मारना, (४०) काम क्रोधादि चेष्टा करना (४१) घर आए मनुष्य को विशेष करके संत की अभ्यर्थना न करना (४२) सेवा वा धर्म वा पांडित्य

५८ ॐ अन्यस्मात्सौलभ्यं भक्तौ ।

अन्य से भक्ति में सुलभता है ।

पूर्व में भक्ति का अनिर्वचनीय स्वरूप कहा है तो इस से जीवों को शंका हो कि ऐसी सूक्ष्म वस्तु के अधिकारी हम कैसे होंगे तो इस शंका के मिटाने के हेतु और जीवों को उस मार्ग पर आरूढ़ करने के हेतु कहते हैं कि और जितने साधन हैं सब से भक्ति (साधन) सुलभ है क्योंकि न इसमें विद्या का काम है न धन का, न वेद का, न आचार का, न उत्तमता का, न वर्ण का, क्योंकि गणिका को क्या विद्या थी, शबरी को क्या धन था, श्री गोपीजन ने कौन वेद पढ़ा था, गृध्र का कौन आचार था, गज की क्या उत्तमता थी और केवट का कौन वर्ण था। और सबसे बड़ी सुलभता यह है कि इस में कोई वाद विवाद नहीं रहता, क्योंकि—

५९ ॐ प्रमाणान्तरस्यानपेक्षत्वात् स्वयंप्रमाणत्वात् ।

(यहाँ) अन्य प्रमाण की अपेक्षा नहीं, स्वयमेव प्रमाण है ।

क्योंकि वाद की और प्रमाण की इस में आवश्यकता नहीं, जब अपने चित्त में प्रेम का उदय हुआ तब उससे बढ़ कर और प्रमाण क्या चाहिए । प्रमाणान्तर को अनपेक्षता दिखाकर भक्ति में और भी उत्तमता दिखाते हैं—

६० ॐ शान्तिरूपात्परमानन्दरूपाच्च ।

शान्ति रूप और परमानन्द रूप है ।

अर्थात् इस के शान्ति रूप होने से रजोमय तमोमय नानाप्रकार के वाद और विकल्प चित्त में आप ही नहीं होते और परम शांतिरूप है इसी से परमानन्द रूप है क्योंकि परमानन्द वहाँ ही है जहाँ वादादि से प्रतिबंध नहीं और "परमानन्द" शब्द कहने से भगवान की और भक्ति की एकता दिखाई क्योंकि ईश्वर का भी परमानन्द स्वरूप है— "आनन्दमयोऽभ्यासात्", "आनन्दमात्रकरपादमुखोदरादि", "आनन्दं ब्रह्म", "आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्" इत्यादि श्रुति से भगवान् का आनंद स्वरूप सिद्ध है और जीव में आनंद का तिरोभाव है तो पुनः आनंद उद्दीपन के साधन ज्ञानादि कर के परमानंदमयी भक्ति के आविर्भाव

हुए और जब सब विद्या, जाति, क्रिया इत्यादिकों का मूल पवित्र करने-वाला भगवान इन के हृदय में बैठा है तो वे आपही सर्वोत्तमोत्तम हो गए।

नवम अनुवाक समाप्त।

---

७४ ॐ वादो नावलम्ब्यः।

श्रीमुख से निषेध किया है "वादवादांस्त्यजेत्तर्कान् पक्षं कञ्चन नाश्रयेत्। वेदवादरतो न स्यान्नपाखण्डी न हैतुकः॥" इत्यादि क्योंकि वाद से मनुष्य के चित्त में आग्रह की गाँठ पड़ जाती है और जहाँ आग्रह होता है वहाँ तत्व नहीं प्रगट होता और बहुत वाद करने से तमोगुण उदय होने की भी संभावना है। अब उसमें हेतु देते हैं—

७५ ॐ बाहुल्यावकाशत्वादनियतत्वात्।

(क्योंकि वाद में) बहुत अवकाश है और अनियत है।

व्यास जी ने भी कहा है "तर्काप्रतिष्ठानात्" तथा श्रुति भी है "नैषामतिरापनेया दुष्प्रतर्क्यैः"। क्योंकि जितने वाद हैं वे भगवान् का तत्व जानने के हेतु हैं सो वादों से कभी नहीं जाना जायगा, क्योंकि वहाँ तक बुद्धि जाती नहीं "यतो वाचो निवर्तंते अप्राप्य मनसा सह" "यद्वाचा नाभ्युदितं"। सनत्सुजात में भी "न तं विदुर्वेदविदो न वेदाः", "नेदं यदिदमुपासते", "वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहं", "शब्दब्रह्म सुदुर्बोधं प्राणेन्द्रियमनोमयं। अनन्तपारगम्भीरं दुर्विगाह्यंसमुद्रवत्", "नैतन्मनो विशति वागपि चक्षुरात्मा प्राणेन्द्रियाणि च।" इत्यादि से ईश्वर की वादों से दूरता स्पष्ट है और वेद भी उसके विषय में नेति नेति कहते हैं तब व्यर्थ वाद क्यों करना क्योंकि उस की प्रतिज्ञा है "भक्त्याहमेकया ग्राह्यः"। इससे वादों को छोड़ कर केवल उस पर विश्वास करना।

७६ ॐ भक्तिशास्त्राणि मननीयानि तदुद्बोधककर्म्माण्यपि करणीयानि।

उस (निश्चय) की असिद्धि में लोकव्यवहार को नहीं छोड़ना, किन्तु फल छोड़ना, वरंच उस (फल) का साधन अवश्य ही करना।

क्योंकि विश्वास दृढ़ भए विना लोक-व्यवहार छोड़ने में वही कहावत होगी "न घर के हुए न घाट के" परंतु उसका फल छोड़ देना अर्थात् लोकव्यवहार को असार समझना और विश्वास की सिद्धि के साधन में प्रवृत्त होना। उसके कौन कौन साधन हैं सो आगे दिखाते हैं—

६३ ॐ स्त्रीधननास्तिकवैरिचरित्रं न श्रवणीयम्।

स्त्री, धन, नास्तिक और वैरी का चरित्र नहीं सुनना।

स्त्रियों के चरित्र सुनने से विषयों में वासना होती है, धन का चरित्र सुनने से लोभ की वृद्धि होती है, नास्तिकों का चरित्र सुनने से विश्वास में हानि होती है तथा वैरियों का चरित्र सुनने से उन पर क्रोध की वृद्धि होती है तो ये सब तमोगुणादिक के कारण हैं इस से इनको सुननाही नहीं।

६४ ॐ अभिमानदंभादिकं त्याज्यम्।

अभिमान, दम्भ आदि को छोड़ना।

भक्तिमार्ग के मुख्य विरोधी येही दो हैं, क्योंकि भक्ति सिद्ध हो जाने पर भी इनके फिर उदय होने का भय रहता है, हम बड़े भक्त हैं, हम लोगों के उपदेष्टा हैं इत्यादिक अभिमान और बाह्याचरण में वा पूजा के आडंबर में भेद न पड़े यह दंभ और आदि शब्द से काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर इत्यादि लिये जाते हैं। जो कहो कि दुस्त्यज हैं तो कहते हैं—

६५ ॐ तदर्पिताखिलाचारस्सन् कामक्रोधाभिमानादिकं तस्मिन्नेव करणीयम्।

सब आचार उसी (भगवान) को अर्पण कर काम क्रोध अभिमान आदि सब उसी पर करना।

अर्थात् काम करना तो यही कि वह परमश्रेष्ठ हमें मिले, क्रोध करना तो उसी पर कि क्यों नहीं मिलता ? अभिमान भी उसी का कि हमारा स्वामी सर्वेश्वर है हमारा प्यारा सब से सुंदर है इत्यादि।

८० ॐ स कीर्त्यमानश्शीघ्रमेवाविर्भवत्यनुभावयति भक्तान् ।

वह गाए जाने से शीघ्र ही प्रगट होता है और अपने भक्तों को अनुभव कराता है।

सो तो उसकी प्रतिज्ञा ही है "नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च। मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद।" और नारद जी ने भी कहा है "प्रगायतःस्ववीर्याणि तीर्थपादः प्रियश्रवाः। आहूत इव मे शीघ्र दर्शनं याति चेतसि।।" श्रीमहाप्रभु जी ने भी कहा है "क्रियमानान्जनान्दृष्ट्वा कृपायुक्तोवदाभवेत्। तदा सर्वं सदानन्दं हृदिस्थं निर्गतं वहिः॥ सदानन्दमयस्यापि कृपानन्दःसुदुर्लभः। हृद्गतःस्वगुणान् श्रुत्वा पूर्णः प्लावयते जनान् ॥" और श्री महाप्रभु जी का "स्वयशोगानसंहृष्ट-हृदयाम्भोजविष्टरः। यशःपीयूषलहरीप्लावितोन्यरसः परः ॥"

८१ ॐ त्रिसत्यस्य भक्तिरेव गरीयसी भक्तिरेव गरीयसी ।

त्रि (कालमें) सत्य [भगवान] की भक्ति ही सब में [साधनों में] बड़ी है, भक्तिही बड़ी है।

"भक्त्यैव तुष्टिमभ्येति विष्णुर्नान्येन केनचित्। प्रीयतेमलया भक्त्या हरिरन्यद्विडम्बनं ॥" "भक्त्या तुतोष भगवान् गजयूथपाय", "भक्त्याहमेकया ग्राह्यः" "भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा", "भक्त्या मामभिजानाति", "भक्त्यैकलभ्यो पुरुषोत्तमोहि", "भक्तिमान् यः स मे प्रियः", "भक्तियोगेन सेवते", "भक्त्यैकलभ्ये पुरुषे पुराणे मुक्त्यै, किमर्थं क्रियते प्रयत्नः", "धर्मार्थकामैः किं तस्य मुक्तिस्तस्य करे स्थिता। समस्तजगतां मूले यस्य भक्तिः स्थिरा करे ।।" "ब्रह्मसंस्थोमृतत्वमेति", "मयि भक्तिर्हि भूतानाममृतत्वाय कल्पते", "तन्निष्ठस्य मोक्षोपदेशात्", "तत्संस्थस्यामृतोपदेशात्", "सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति प्रयाचते। अभयंसर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं मम ॥" "भक्त्या त्वनन्यया शक्यः", "भक्त्यालभ्यस्त्वनन्यया", "श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः", "भक्तिप्रियोमाधवः", "मयि संजायते भक्तिः कोन्योस्यार्थोवशिष्यते", "योमे भक्त्या प्रयच्छति ॥ तदहंभक्त्युपहृतं", "अण्वप्युपहृतं भक्त्यैः प्रेम्णा भूर्येव मे भवेत्", "श्रेयोभिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते," "अपि यः सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्", "अहं भक्त-

(जो भक्त लोग) कंठ का अवरोध, रोमांच और अश्रु आदि से युक्त होकर परस्पर भाषण करते हुए कुल और पृथिवी को पवित्र करते हैं।

स्मरन्तः स्मारयन्तश्च मिथोऽघौघहरं हरिं। भक्त्या सञ्जातया भक्त्या बिभ्रत्युत्पुलकां तनुं॥ क्वचिद्रुदन्त्यच्युतचिन्तया क्वचित् हसन्ति नन्दन्ति वदन्त्यलौकिकाः। नृत्यन्ति गायन्त्यनुशीलयन्त्यजं भवन्ति तूष्णीम्परमेत्य निर्वृताः॥ इत्यादि प्रबुद्ध का वाक्य है॥

परम भागवत प्रल्हाद जी ने कहा है "निशम्य कर्माणि गुणानतुल्यान्वीर्याणि लीलातनुभिः कृतानि। यदातिहर्षोत्पुलकाश्रुगद्गदं प्रोत्कण्ठ उद्गायति रौति नृत्यति॥ यदा ग्रहग्रस्त इव क्वचिद्धसत्याक्रन्दते ध्यायति वन्दते जनं। मुहुः श्वसन् वक्ति हरे जगत्पते नारायणेत्यात्मगतिर्गतत्रपः॥" श्रीमुखवाक्य भी है "एवं हरौभगवति प्रति लब्धभावो भक्त्या द्रवद्धृदय उत्पुलकः प्रमोदात्। औत्कण्ठ्यबाष्पकलया मुहुरर्द्यमानस्तच्चापि चित्तबडिशं शनकैर्वियुंक्ते॥" एकादश में भी "शृण्वन् सुभद्राणिरथांगपाणेर्जन्मानि कर्माणि च यानि लोके। गीतानि नामानि तदर्थकानि गायन्विलज्जो विचरेदसंगः॥ एवंव्रतःस्वप्रियनामकीर्त्या जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः। हसत्यथो रोदिति रौति गायत्युन्मादवन्नृत्यति लोकबाह्यः"॥ तृतीय में "देहञ्च तत्वपरमः स्थितमुत्थितं वा सिद्धो विपश्यति यतोऽध्यगमत्स्वरूपं। दैवादुपेतमथ दैववशादुपेत वासो यथा परिकृतं मदिरामदान्धः॥" इत्यादि और सब भक्तों का आचरण ऐसाही सुनने में आया है, यथा श्री गोपीजन का "विचिक्युरुन्मत्तकवद्वनाद्वनं" "रुरुदुः सुस्वरं राजन्" "कृष्णोऽहं पश्य तं गतिं" "ललितामिति तन्मनाः" "विक्षिप्तमनसो नृप" इत्यादि और श्री महादेव जी की जड़ोन्मत्तपिशाचचर्या लोक में प्रसिद्ध ही है "स्मशानेष्वाक्रीड़ा स्मरहर पिशाचाः सहचराः। चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकिरोटीपरिकरः अमङ्गल्यं शीलं भवतु तव नामैवमखिलं। तथापि स्मर्तॄणां वरद परमं मङ्गलमसि॥" * श्मशानचक्रानिलधूलिधूम्रो विकीर्णविद्योत-

* दिति से कश्यप जी का वाक्य तृतीय स्कन्ध में अध्याय १४ श्लोक २४—८।

है। इनमें तन्मयतासक्ति तथा परम विरहासक्ति वियोगी भक्तों को सिद्ध है, शेष आसक्तियाँ संयोगी और वियोगी दोनों को सिद्ध हैं। और किसी किसी भक्त को एक एक आसक्ति सिद्ध है, परंतु किसी को दो तीन भी सिद्ध हैं और श्री गोपीजन को तो सभी सिद्ध हैं।

१ "गुणमाहात्म्यासक्ति"—जैसा परीक्षित को, नारद को तथा हनुमान जी को और श्रीपृथुराजा को, जिसने केवल हरिगुण-श्रवण के अर्थ दस हजार कान माँगे थे। परीक्षित ने कहा है "नैषातिदुःसहा क्षुन्मां त्यक्तोदमपि बाधते। पिबंतं त्वन्मुखांभोजच्युतं हरिकथामृतम्" ॥ नारद जी का वाक्य "देवदत्तामिमां वीणां स्वरब्रह्मविभूषितां। मूर्छयित्वा हरिकथां गायमानश्चराम्यहम्", "प्रगायतः स्ववीर्याणि तीर्थपादः पृथुश्रवाः। आहूत इव मे शीघ्रं दर्शनं याति चेतसि" ॥ हनुमान जी का तो ध्यान ही है "यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकांजलिं। बाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसांतकं।" तथा अपने मुँह से [रामायण उत्तरकाण्ड १०७ सर्ग ३१ श्लोक] "यावत्तव कथा लोके विचरिष्यति पावनी। तावत् स्थास्यामि मेदिन्यां तवाज्ञामनुपालयन्।" । तथा [श्रीमद्भागवत पंचम स्कन्ध १९ अध्याय ८ श्लोक] सुरोऽसुरो वाप्यथवा नरोऽनरः सर्वात्मना यः सुकृतज्ञमुत्तमं। भजेत रामं मनुजाकृतिं हरिं य उत्तराननयत् कोशलान्दिवं" ।

२ रूपासक्ति दो प्रकार की होती है—एक किशोररूप में एक बालरूप में। बाल रूप से श्री मातृचरण श्री नन्दोपनन्दादिक वृद्ध व्रजवासियों को तथा किशोर रूप में व्रज की स्त्री पुरुष पशु पक्षिमात्र को। जैसा "अहो अमी देववरामरार्चितं" इत्यादि श्लोकों में श्रीमुख से भी कहा है और "अक्षण्वतां फलमिदं न परं विदामः" इत्यादि वेणुगीत के श्लोकों में तथा "वामबाहुकृतवामकपोलो" इत्यादि युगलगीत के श्लोकों से सिद्ध है।

३ "पूजासक्ति" महाराज पृथु को, जैसा उन्होंने कहा है "यत्पादसेवाभिरुचिस्तपस्विनामशेषजन्मोपचितं मलं धियः। सद्यः क्षिणोत्यन्वहमेधती सती यथा पदांगुष्ठविनिःसृता सरित ॥" इत्यादि।

रविंदानुध्यानपरिचितभक्तियोगेन परिप्लुतः परमाल्हादगम्भीरहृदय-ह्रदावगाढधिषणस्तामपि क्रियमाणां भगवत्सपर्यां न सस्मार ॥" उद्धव जी ने भी ऐसाही किया है "मुक्तकण्ठो रुरोद ह" । श्रुतदेवजी ने भी ऐसाही किया "धुन्वन्वासो ननर्त ह" । राजा चित्रकेतु की भी यही दशा है " स उत्तमश्लोकपदाब्जविष्टरं प्रेमाश्रुवर्षैरुपमेहयन्मुहुः ॥ प्रेमोपरुद्धाखिलवर्णनिर्गमो नैवाशकत्तं प्रसमीक्षितुं चिरम् । (श्रीमद्भागवत) ध्रुवजी का भी ऐसाही चरित्र है । यत्तद्विष्णुपदमाहुः यत्र ह वाव वीरव्रत औत्तानपादिः परमभागवतो अस्मत्कुलदेवताचरणारविंदोदकमिति यामनुसवनमुत्कृष्यमाणभगवद्भक्तियोगेन दृढं क्लिद्यमानांतर्हृदय-औत्कण्ठ्यविवशामीलितलोचनयुगलकुड्मलविगलितामलवाष्पकलयाभिव्यज्यमानरोमपुलकोऽधुनापि परमादरेण शिरसा विभर्त्ति, इत्यादि । श्रीअक्रूर की भी ऐसी दशा हुई "तद्दर्शनाह्लादविवृद्धसंभ्रमप्रेम्णोर्द्ध्वरोमाश्रुकलाकुलेक्षणः । रथादवस्कंद्य स तेष्वचेष्टत प्रभोरमून्यंघ्रिरजांस्यहो इति ॥" इत्यादि कहाँ तक कहें सब भक्तों के ऐसेही चरित्र हैं क्योंकि प्रेम भी एक मदिरा है, जो पीएगा आपही नाचेगा, रोएगा, हँसेगा, बकेगा । श्रीमहाप्रभु जी का भी 'तत्कथाक्षिप्तचित्तास्तत् विस्मृतान्यो व्रजप्रियः' नाम है ॥

६९ ॐ तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि सुकर्मी कर्माणि सच्छास्त्री शास्त्राणि ।

जो तीर्थों को तीर्थ करते हैं, कर्मों को सुकर्म करते हैं, शास्त्रों को सच्छास्त्र करते हैं ।

"तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि" "तीर्थं पुनाना मुनयोभियन्ति" "स्वयंहि तीर्थानि पुनंति संतः" इत्यादि वाक्यों से तथा श्रीगङ्गाजी के प्रति भगवान् के वाक्यों से सिद्ध है और संत का कर्मों को सुकर्म करना राजा युधिष्ठिर के यज्ञ के प्रसङ्ग से और व्यास जी के संवाद से सिद्ध है । संतों की महिमा विशेष कर के ३६ । ३९ । ४० । ४१ । सूत्रों में लिख आए हैं ।

७० ॐ तन्मयाः ।

(क्योंकि वे) तन्मय हैं ।

तीर्थादि के पवित्र करने में कारण देते हैं कि "पवित्राणां पवित्रं

बोध:। पृच्छेः प्रभो मुग्ध इवाप्रमत्तस्तन्नो मनो मोहयतीव देव" ॥ कुवेर की श्रीशिवजी में यथा मनुजी का वाक्य "हेलनं गिरिशभ्रातुर्धनदस्य त्वया कृतं" तथा श्रीशुकदेव जी का वाक्य "उपास्यमानं सख्या च भर्त्रा गुह्यकरक्षसां।" कोश में भी "कुवेरः त्र्यम्बकसखा" इत्यादि। सुबलश्रीदामादि की यथा "श्रीदामा नाम गोपालो रामकेशवयोः सखा। सुबलस्तोककृष्णाद्या गोपाः प्रेम्णेदमब्रुवन्। एवं सुहृद्वचः श्रुत्वा सुहृत्प्रियचिकीर्षया" इत्यादि। दशम के १८ अध्याय में सब इन्हीं लोगों के सख्यत्व की सीमा लिखी है। श्रीसुदामा जी की यथा "कृष्णस्यासीत्सखा कश्चिद् ब्राह्मणो यो ब्रह्मवित्तमः। ननु ब्रह्मन् भगवतः सखा साक्षाच्छ्रियःपतेः" ॥ जिसका भगवान ने ऐसा आदर किया "तं विलोक्याच्युतो दूरात्प्रियापर्यंकमास्थितः। सहसोत्थाय चाभ्येत्य दोर्भ्यां पर्यग्रहीन्मुदा ॥ सख्युः प्रियस्य विप्रर्षे रंगसंगातिनिर्वृतः। प्रीतो व्यमुंचदब्बिन्दून्नेत्राभ्यां पुष्करेक्षणः ॥ अथोपवेश्य पर्यंके स्वयं सख्युः समर्हणं। उपहृत्यावनिज्यास्य पादौपादावनेजनीः ॥ अग्रहीच्छिरसा राजन् भगवांल्लोकपावनः। कुचैलं मलिनं क्षामं द्विजं धमनिसंततं ॥ देवी पर्यचरच्छैब्या चामरव्यजनेन वै ॥ योसौ त्रिलोकगुरुणा श्रीनिवासेन संभृतः। पर्यंकस्थां श्रियं हित्वा परिष्वक्तोऽग्रजो यथा ॥" जिसके चावल भगवान ने आप ही छीन कर खाए और "सख्युः प्रियचिकीर्षया", "परमप्रीणनं सखेः", "पर्यंके भ्रातरौ यथा", "दाशार्हकाणामृषभः सखा मे", "सुहृत्कृतं फल्ग्वपि भूरिकारि", "तस्यैव मे सौहृदसख्यमैत्री", "एवं स विप्रो भगवत्सुहृत्तदा" इत्यादि। गरुड़ की जैसी "भगवान् भगवत्प्रियः", "विनतासुतांसेविन्यस्तहस्तमपरेण धुनानमब्जं।" तथा हनुमान जी की "न जन्म नूनं महतो न सौभगं नवाग् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः। तैर्यद्विसृष्टानपि नोवनौकसश्चकार सख्ये वत लक्ष्मणाग्रजः ॥" तथा सुग्रीव की (वाल्मीकि रा० किष्किन्धा षष्ठ सर्ग श्लोक १२) "तमब्रवीत्ततो रामः सुग्रीवं प्रियवादिनं। आनयस्व सखे शीघ्रं किमर्थं प्रविलम्बसे ॥" तथा सुग्रीव का वाक्य (७ सर्ग श्लोक १३) "हितं वयस्यभावेन ब्रुवे नोपदिशामि ते। वयस्यतां पूजयन्मे न त्वं शोचितुमर्हसि" तथा श्रीरामजी का वाक्य (७ सर्ग श्लोक १६) "कर्तव्यं यद्वयस्येन स्निग्धेन च हितेन च। अनुरूपं च युक्तञ्च कृतं सुग्रीव

तेषां पितरश्च धन्या येषां कुले वैष्णवनामधेयम्" ॥ "स वै पुण्यतमो देशः सत्पात्रं यत्र लभ्यते ॥" "सङ्कीर्तनध्वनिं श्रुत्वा येच नृत्यंति वैष्णवाः । तेषां पादरजःस्पर्शात्सद्यः पूता वसुन्धरा ॥ तद्दिनं सफलं धन्यं यशस्यं सर्वमंगलं । श्रीकृष्णकीर्तनं यत्र यत्र नैवायुषो व्ययः ॥ तत्कीर्तनं भवेद्यत्र कृष्णस्य परमात्मनः । स्थानं तच्च भवेत्तीर्थं मृतानां तत्र मुक्तिदम् ॥ नात्र पापानि तिष्ठंति पुण्यानि सुस्थिराणि च । तपस्विनाञ्च व्रतिनां व्रतानां तपसां फलम् ॥" इत्यादि शास्त्र में महिमा कही है तथा श्रीमुख से भी आज्ञा करते हैं (वाराहपुराण) "जान्हव्यादीनि तीर्थानि पापनिष्कृतिहेतवे । कांक्षंति हरिदासानां दर्शनं हरिदासवत् ॥ मद्भक्तजनसम्मर्दपादपांसुविसर्जनात् । चतुःसागरपर्यंतं पावनं स्याद्वसुन्धरे ॥" तथा प्रह्लाद जी से भी भगवान ने कहा है "त्रिःसप्तभिः पिता पूतः पितृभिः सह तेऽनघ । यत्साधोऽस्य गृहे जातो भवान्वै कुलपावनः । यत्र यत्र च मद्भक्ताः प्रशांताः समदर्शिनः । साधवः समुदाचारास्ते पूयंत्यपि कीकटाः ॥" इत्यादि ।

७२ ॐ नास्ति तेषु जातिविद्यारूपकुलधनक्रियादिभेदः ।

उन (भक्तों) में जाति, विद्या, रूप, कुल, धन और क्रिया आदि का भेद नहीं ।

"नालं द्विजत्वं देवत्वं ऋषित्वं वा सुरात्मजाः । प्रीणनाय मुकुन्दस्य न दत्तं न बहुज्ञता ॥" "विप्राद् द्विषड्गुणयुतादरविंदनाभपादारविंदविमुखाच्छ्वपचं वरिष्ठम् । मन्ये" "अहोबत श्वपचोतो गरीयान्यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यं ॥" "ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा यदि वेतरः । विष्णुभक्तिसमायुक्तो ज्ञेयः सर्वोत्तमोत्तमः ॥" "दैतेया यक्षरक्षांसि स्त्रियः शूद्रा व्रजौकसः ।" "विद्याधरा मनुष्येषु वैश्याः शूद्राः स्त्रियोन्त्यजाः । सर्वेंधिकारिणोह्यत्र विष्णुभक्तो यथा नृप ॥" "किरातहूणांध्रपुलिंदपुष्कसाआभीरकंका यवनाः खसादयः । येऽन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ॥" पञ्चम स्कन्ध में श्रीहनुमद्वाक्य "न जन्म नूनं महतो न सौभगं न वाङ् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः । तैर्यद्विशिष्टानपि नो वनौकसां चकार सख्ये बत लक्ष्मणाग्रजः" "इक्ष्वाकुरैलमुचुकुन्दविदेहगाधीरघ्वम्बरीषसगरा गयनाहुषाद्याः । मांधात्रलर्कश-

सक्ति" "कृष्णोहं" इत्यादि वाक्यों में। ११ "परमविरहासक्ति" "त्रुटिं युगशतमिव" इत्यादि से। और इन श्री गोपीजन को नित्य लीला में श्री मुख का दर्शन होते भी केवल पलक की ओट में जिनका परम-वियोग होता है और कहती हैं कि हे निर्दई विधना इस मुखचन्द्र देखने के हेतु तुझको रोम रोम में आँखें बनानी थीं उसके बदले यह उलटा अँधेर किया कि बिना बात की पलक बना दी। तो जिनका प्रेम और विरह इतना सीमा के बाहर है उनकी ये सब आसक्तियाँ सिद्ध हों इसमें क्या आश्चर्य है। जिनकी चरणार-विन्द की रेणु के प्रसाद से लोग प्रेम पथ के अधिकारी हो सकते हैं उनके प्रेम का क्या पूछना है। भक्तिमार्ग के उद्धारकर्ता श्रीआचार्य्य जी ने जिनकी स्पृहा की है यथा 'गोपिकानां च यद्दुःखं तद्दुःखं स्यान्मम क्वचित्' ॥ और जिनको अपने मार्ग का गुरु लिखा है यथा "गोपिका प्रोक्ता गुरवः साधने मता" तो अब इस से बढ़ कर उनके आदर के हेतु वा प्रमाण के हेतु हम क्या लिखें वा क्या कहें।

ये प्रेम के ग्यारह अलग अलग भेद नहीं हैं किंतु स्वरूप हैं क्योंकि जो अलग होती तो जिसको एक सिद्ध हो उसको दूसरी न होती और यदि दो सिद्ध होंगी तो एक से जिस को दो सिद्ध हो उस की विशेषता होगी और प्रेमियों में कोई छोटा बड़ा नहीं इससे भक्ति एकही है केवल प्रेमियों की रुचि भेद से अलग दिखाती है।

८३ ओं इत्येवं वदन्ति जनजल्पनिर्भया एकमताः कुमारव्यासशुक-शाण्डिल्यगर्गविष्णुकौण्डिन्यशेषोद्धवारुणिबलिहनुमद्विभीषणादयो भ-क्त्याचार्याः।

कुमार (सनकादिक), व्यासजी, शुकदेवजी, शाण्डिल्य, गर्गाचार्य, विष्णु, कौण्डिन्य, शेष, उद्धवजी, आरुणि, बलि, हनुमानजी, विभीषण आदि भक्ति के आचार्य लोक के उपहास से निर्भय होकर पूर्वोक्त मार्ग कहते हैं॥

कुमार—सनकादिक, इनका प्रेममार्ग निम्बार्कमत के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान ने इन लोगों से अपना तत्व हंस का स्वरूप लेकर कहा है और इनकी वंशपरंपरा मन्वन्तर वर्णन में श्रीमद्भागवत में लिखी

है और भागवतों के लक्षण में भी कहा है "न यस्य जन्मकर्माभ्यां न वर्णाश्रमजातिभिः। सज्जतेस्मिन्नहंभावो देहे वै स हरेः प्रियः"। और श्री हरिराय जी ने अपने ग्रंथ शिक्षापत्र में भी ऐसा ही लिखा है। इसी से वैष्णवों को परस्पर जाति, विद्या, रूप, कुल, धन और क्रिया आदि का भेद कदापि नहीं करना क्योंकि जिस समय वह तदीय हुआ उसी समय सब गुण पूर्ण हो गया। "यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्यकिंचना सर्वैर्गुणैस्तत्र समासते सुराः" इत्यादि वाक्यों से सिद्ध है।

७३ ॐ यतस्तदीयाः।

क्योंकि (ये) उसके हैं।

पूर्वोक्त अभेद मानने का हेतु देते हैं कि जब तुम तदीय हो और वे भी तदीय हैं तब परस्पर न्यूनाधिक भेद कहाँ रहा, सब एक से भाई

अपने में मानना वा सुकृत को अपना किया समझना (४३) नास्तिकों का, लंपटों का, हिंसकों का, लोभियों का, मिथ्याचारियों का संग करना (४४) विपत्ति परमेश्वर ने दिया यह बुद्धि करना (४५) धर्म के बल पाप करना (४६) किसी को तृण मात्र भी कष्ट देकर अपने को धार्मिक समझना (४७) स्त्री पुत्र भृत्य परिवार आश्रित दीन संत की उपेक्षा (४८) वस्तु को अपने उपयोगी समझकर सेवा में देना वा असमर्पित वस्तु ग्रहण करना (४९) इष्टदेव की शपथ खाना (५०) भगवान्, धर्म वा नाम बेंचकर द्रव्य कमाना (५१) अन्य देवता से आशा करना (५२) धर्मशास्त्र की मर्यादा का उल्लंघन (५३) वह दशा भए विना ज्ञान हाँकना वा वैसा आचरण करना (५४) देवचरित्र की भाँति आचरण करना (५५) संप्रदायभेद से वैष्णवों को ऊँचा नीचा समझना (५६) अवतार की तारतम्यदृष्टि से निंदा करना (५७) हँसी में भी किसी को तुम परमेश्वर हो यह कहना (५८) परमेश्वर को कदापि किसी कारण से भी अणुमात्र भी परतंत्र समझना (५९) लोभ से किसी को चरणामृत वा प्रसाद देना (६०) भगवान् के चित्र मूर्ति नाम आदि की अवज्ञा करना या कहना (६१) किसी जीव को किसी प्रकार भी ताप देना वा उद्वेजन करना (६२) तर्कवितर्क से आस्तिकता से मान डिगाना (६३) भगवदवतार में जन्म कर्म मानना (६४) जुगल स्वरूप में भेदबुद्धि।

थने हरेः ॥ इत्यादि"। क्यों न कहें? वेद जिनको मुक्त लिखता है "शुको मुक्तो वामदेवो वा" और भगवान की माया जिनको कभी व्यापी ही नहीं, जिनको देख कर स्त्रियों ने भी लज्जा न की, जिन्होंने पिता को वृक्षों में से उत्तर दिया और प्रेम मार्ग का सिद्धांत स्वरूप श्रीमद्भागवत प्रगट करके राजा परीक्षित को मोक्ष दिया तथा सप्ताह में भी बीच बीच में जब लीला स्मरण आती थी तब बेसुध हो जाते थे, उन के प्रेम का निरूपण यहाँ क्या हो सकता है।

शाण्डिल्य—शाण्डिल्य जी ने तो स्वतंत्र भक्तिशास्त्र ही रचा है, जिसमें ज्ञान, योगादि से भक्तिसाधन ही उत्तम कहा है।

गर्ग—गर्गाचार्य अपनी गर्गसंहिता में अनेक प्रकार के भक्ति के रहस्य तथा यादव आदि के नष्ट होने पर जब भगवत्तत्व का जानने वाला कोई नहीं रहा तब वज्रनाभ ने अनेक प्रकार का रहस्य, जो वृज में तथा उद्धव नारदादिकों के मुख से सुना था, कहकर फिर से भक्तिमार्ग का स्थापन किया। इनको वात्सल्य और दास्य दोनों भक्ति सिद्ध थी।

विष्णु—लोक में जिनका नाम विष्णुस्वामी प्रसिद्ध है। विशेष वर्णन परंपरा में देखो।

कौण्डिन्य—कौण्डिन्य के विषय में हम इतना ही जानते हैं कि हमारे आचार्य ने अपनी गुरुपरंपरा में श्रीगोपीजन के समान इनको भी माना है यथा "कौण्डिन्यो गोपिकाः प्रोक्ता गुरवः" इति और जिनको तन्मयतासक्ति थी। जिनको इस आसक्ति से वृक्षों में भी सर्वत्र श्रीअनंत का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ था।

शेष—शेषजी ने केवल दास्य भक्ति की शिक्षा के हेतु श्री लक्ष्मण जी का स्वरूप लेकर संसार को दिखाया कि दास्य इसका नाम है और इस रीति करना होता है और आप ने भी पंचवटी में अपने सब गुप्त सिद्धांत उपदेश किए तथा श्री लक्ष्मी जी और गरुड़ जी से नारायणीय सिद्धांत पाकर उन्होंने चित्रकेतु इत्यादि को उपदेश किया, जो मत अब तक रामानुजीय नाम से प्रसिद्ध है और जिसमें यामुन, शठकोप इत्यादि महात्मा और अग्रस्वामी इत्यादि प्रेमी हुए।

भक्ति शास्त्रों को मनन करना और उस (भक्ति) को बढ़ाने वाले कर्मों को करना।

वाद छोड़कर केवल सिद्धान्त स्वरूप भक्तिशास्त्रों को देखना और उनका चिन्तन करना आचार्यों और भगवज्जनों और सिद्धान्तों के रहस्य को जानना और भक्ति बढ़ाने वाले उत्सव, सत्संग, तीर्थाटन, कथा-श्रवण, तदीयों से आलाप, भगवत्सेवा और गुरु-शुश्रूषा इत्यादि कर्म करना इससे भक्ति प्रतिक्षण वर्द्धमान रहेगी।

७७ ॐ सुखदुःखेच्छालाभादित्यक्ते काले प्रतीक्ष्यमाणे क्षणार्द्धमपि व्यर्थं न नेयं।

सुख, दुःख, इच्छा, लाभादि [का अभिमान] छोड़ कर काल की प्रतीक्षा करते हुए भी आधा क्षण भी व्यर्थ न बिताना।

यद्यपि इच्छादि के परित्याग से पूर्ण काम हो गए हैं और कुछ कर्तव्य है नहीं तथापि भगवद्भजन बिना क्षण भर भी नहीं बिताना क्योंकि यह तो नित्य कार्य है। देखो मरने के समय करोड़ उपाय करो क्षण भर भी विशेष मनुष्य नहीं रह सकता ऐसे अनमोल क्षण को व्यर्थ बिताना मूर्खता की बात है।

७८ ॐ अहिंसासत्यशौचदयाऽस्तिक्यतादिचारित्र्याणि पालनीयानि ॥

अहिंसा, सचाई, शुद्धि, दया, आस्तिकता आदि सब चारित्र्यों का पालन करना।

क्योंकि सत्व गुण के ये सब कृत्य हैं। इनके न करने से वा विरुद्ध करने से तमोगुण की प्रवृत्ति होती है और भक्ति में बाधा होती है।

७९ ॐ सर्वदा सर्वभावेन निश्चिन्तैर्भगवानेन भजनीयः।

सर्वदा सब प्रकार से निश्चिंत होकर भगवानही का भजन करना।

साधारण शिक्षा देकर सिद्धांत की शिक्षा देते हैं कि सर्वदा सब काल में दुःख में सुख में अनेक कर्मों में प्रवृत्त रहने के समय भी सर्व भाव से अर्थात् उसको अपना सर्वस्व मान कर केवल उसी का भजन करना और भजन भी निश्चिंत होकर करना, क्योंकि जो किसी प्रकार खटका रहता है तब भजन भली भाँति नहीं होता।

हनुमान्—श्रीहनुमान् जी की दास्यभक्ति का वर्णन ऊपर दास्य-भक्तिनिरूपण में कह आये हैं और क्या कहैं, केवल भगवान की कथा-श्रवण के हेतु जिनका जीवधारण है, उनके प्रेम का माहात्म्य कौन कह सकता है ? क्योंकि उन्होंने भगवान से यही वर माँगा है कि "यावत्तव कथा लोके विचरिष्यति पावनी। तावत्स्थास्यामि मेदिन्यां तवाज्ञामनुपालयन्।" और जिनका मत अद्यापि श्रीभगवान के मुखारविंद से सुने हुए विष्णुतत्व के अनुसार "मध्वमत" नाम से प्रसिद्ध है।

विभीषण—इन्होंने कुसंगति में रह कर भी भगवद्भक्ति लोगों को सिखाई, वरञ्च "सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते। अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं मम ॥" यह जगदुपकारिणी प्रतिज्ञा इन्हीं के हेतु हुई है।

८४ ॐ य इदं नारदप्रोक्तं शिवानुशासनं विश्वसति श्रद्धधते स भक्तिमान् भवति स प्रेष्ठं लभते स प्रेष्ठं लभते इति।

इस नारद जी के कहे हुए शिवानुशासन पर जो विश्वास और श्रद्धा करता है वह भक्तिमान् होता है, वह प्यारे को पाता है, वह प्यारे को पाता है ॥ ८४ ॥

उपदेश करके उसका फल कहते हैं। विशेष करके प्रेष्ठ शब्द से यह दिखाया कि भगवान इत्यादि को ब्रह्म, विष्णु, नारायण, भगवान इत्यादि भावों से तो और लोग भी पावेंगे परंतु प्रियतम भाव से वही पावेगा जो इस प्रेमसूत्र पर विश्वास करेगा और प्रेममार्ग पर चलेगा।

इति नारदीये भक्तिशास्त्रे दशमोऽनुवाकः ॥

यह श्रीनारद जी का कहा हुआ भक्तिशास्त्र दश अनुवाक में "तदीयसर्वस्व" नामक तदीयनामांकित अनन्यवीर वैष्णव हरिश्चन्द्र कृत भाषाभाष्यसहित समाप्त हुआ ॥

॥ इति ॥

पराधीनो" इत्यादि वेद, उपनिषत्, श्रीमुखवाक्य, रामायण, भारत, स्मृति, व्याससूत्र, शांडिल्यसूत्र, पुराण और तन्त्रों से सिद्ध है कि सब साधनों में मुख्य साधन केवल भक्तिही है। विस्तरभयात् विशेष प्रमाण नहीं दिया।

८२ ॐ गुणमाहात्म्यासक्ति १ रूपासक्ति २ पूजासक्ति ३ स्मरणासक्ति ४ दास्यासक्ति ५ सख्यासक्ति ६ कान्तासक्ति ७ वात्सल्यासक्ति ८ आत्मनिवेदनासक्ति ९ तन्मयतासक्ति १० परमविरहासक्ति ११ रूपा एकधाप्येकादशधा भवति।

(यह भक्ति) एक रूपही होकर गुणमाहात्म्यासक्ति, रूपासक्ति, पूजासक्ति, स्मरणासक्ति, दास्यासक्ति, सख्यासक्ति, कान्तासक्ति, वात्सल्यासक्ति, आत्मनिवेदनासक्ति, तन्मयतासक्ति और परमविरहासक्ति रूप से एकादश प्रकार की होती है।

इससे श्रवणादिक नवधा भक्ति गौण हैं, इसका निषेध किया क्योंकि नारद जी का मत है कि भक्तिवीज के हृदय में उत्पन्न होने के पूर्व जो श्रवणादिक हैं उनको श्रवणभक्ति नहीं कह सकते और यह पूर्वोक्त जो श्रवणादिक हैं वे शुद्धा भक्ति से भिन्न नहीं हैं अतएव प्रति शब्द के साथ आसक्ति का शब्द दिया है। जो यह शंका करो कि जिनको प्रेम सिद्ध है उनको तो पूर्वोक्त आसक्तियाँ होंगी सो, नहीं यह विशेष आसक्ति परत्व है। जैसे प्रेमियों को अपने प्रेम पात्र का सबही अंग सुन्दर लगता है तथापि प्रति प्रेमी को अपने प्रेमपात्रों मे कोई अंग वा चेष्टा विशेष मोहके विषय होते हैं, वैसेही पूर्ण प्रेमियों को यद्यपि सबही आसक्तियाँ सिद्ध हैं तथापि किसीको किसी में विशेष रुचि है किसी को किसी में है। श्रवणादिकों को गौणी भक्ति मानने में एक बड़ा दोष यह है कि जैसे अर्जुन सख्य के वा श्री हनुमान जी दास्य के अधिकारी हैं तो जिसके मत में यह भक्तियाँ गौणी हैं उन के मत से ये भक्त भी गौण हुए। तो इस सूत्र से शुक, प्रह्लाद, हनुमान, अर्जुन, बलि, विभीषण आदि एक एक भक्ति के विशेष अधिकारी महानुभावों को गौण भक्त कहने वालों का मत परास्त हुआ और सिद्ध हुआ कि प्रेम एकही वस्तु है जो केवल रुचि की विचित्रता से अलग अलग छलावे दिखाता

४ "स्मरणासक्ति" परम भागवत प्रह्लाद को, जैसा "सोऽहं प्रियस्य सुहृद:परदेवताया लीलाकथास्तवनृसिंहविरंच्यगीता: । अंजस्तितर्म्यनुगृणन् गुणविप्रमुक्तो दुर्गाणि ते पदयुगालयहंससंग: ॥" इत्यादि ।

५ "दास्यासक्ति" परमभागवत प्रह्लाद और हनुमान आदि को, जैसा प्रह्लाद जी का वाक्य "आयु: श्रियं विभवमैंद्रियमाविरिंच्यात् नेच्छामि ते विलुलितानुरुविक्रमेण । कालात्मनोपनय मां निजभृत्यपार्श्वं ॥" तथा हनुमानजी का वाक्य "दासोऽहं कोशलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मण: ।" इत्यादि और यथा अक्रूर जी का वाक्य "अहं हि नारायणदासदासो दासानुदासस्य च दासदास:" ॥ विदुर जी का वाक्य "वासुदेवस्य ये भक्ताश्शान्तास्तद्गतमानसा: । तेषां दासस्य दासोऽहं भवेयं जन्मजन्मनि ॥" इत्यादि । तथा उद्धव जी और युधिष्ठिर को तो हरिदास नाम ही मिला है ।

६ "सख्यासक्ति" जैसा अर्जुन, सुग्रीव, उद्धव, कुवेर, सुदामा, देव, सुबल, श्रीदामादि, गरुड़ इत्यादि और कभी कभी हनुमान जी को भी हो सकती है । अर्जुन को श्रीमुख से कहा है "भक्तोसि मे सखा चेति" तथा अर्जुन का वाक्य "सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हेकृष्ण हेयादव हेसखेति" तथा श्रीमद्भागवत "नर्माण्युदाररुचिरस्मितशोभितानि हेपार्थ हेऽर्जुन सखे कुरुनन्दनेति । संजल्पितानि नरदेवहृदिस्पृशानि स्मर्तुर्लुठन्ति हृदयंमम माधवस्य ॥ शय्यासनाटनविकत्थनभोजनादिष्वैक्याद्वयस्य कृतवानिति विप्रलब्ध: । सख्यु: सखेव पितृवत्तनयस्य सर्वं सोहेमहान्महितयान्कुमतेरघ मे ॥"

तथा "या प्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपायिनी । त्वामनुस्मरत: सा मे हृदयान्मापसर्पतु ॥" उद्धव जी की "वृष्णीनां प्रवरो मंत्री कृष्णस्य दयित: सखा ॥" "श्रीमुखवाक्य भी "नोद्धवोण्वपि मन्न्यूनो यद्गुणैर्नार्दित: प्रभु:" "न तथा मे प्रियतमो आत्मयोनिर्न शंकर: । न च संकर्षणो न श्रीनवात्मा च यथा भवान्" । उद्धवजी का वाक्य "शय्यासनाटनस्थानस्नानक्रीडाशनादिषु । कथं त्वां प्रियमात्मानं वयं भक्तास्त्यजेमहि ॥" तथा "मंत्रेषु मां वा उपहूय यत्त्वमकुण्ठिताखण्डसदात्म-

हे अंतरंगी जन !
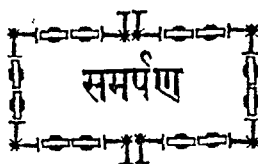
आज तक जो पुस्तकें प्रकाशित हुईं वह दूसरे को समर्पित हुईं थीं परंतु यह युगुलसर्वस्व तुम को समर्पित है, माथे चढ़ा कर अंगीकार करो। इस को अनधिकारी के हाथ खबरदार खबरदार मत देना और इस से परमानंद लाभ कर के मेरा परिश्रम सफल करना।

भाद्रपद कृष्णा ६ सं० १६३३	आप लोगों के चरणरज
श्रीनंदमहोत्सव	का वांछक
	हरिश्चंद्र

तत्त्वया ॥ एष च प्रकृतिस्थोहमनुनीतस्तया सखे। दुर्लभोहीदृशो बंधुरस्मिन् काले विशेषतः ॥" इत्यादि।

७ "कान्तासक्ति"—यथा श्री गोपीजन को। यद्यपि श्री गोपीजन को सभी आसक्तियाँ सिद्ध हैं यह पहले लिख आए हैं और विरहासक्ति में निरूपण भी करेंगे तथापि श्री गोपीजन की आसक्तियों में कान्तासक्ति अङ्गीभाव से है जो "कृष्णं विदुः परं कान्तं" इत्यादि वाक्यों से सर्वत्र सिद्ध है।

८ "वात्सल्यासक्ति"—श्रीनन्द, यशोदा, कौशल्या, दशरथ, सुमित्रा, कश्यप, अदिति, धनिष्ठा, श्री वृषभानु, कीर्तिदा, पूर्णमासी इत्यादि को।

६ "आत्मनिवेदनासक्ति"—यथा बलि को "सर्व्वस्वात्मनिवेदने बलिरभूत्।"

१० "तन्मयासक्ति"—यथा श्री शिव जी को, जिनका अभेद पुराणों से सिद्ध है।

११ "परमविरहासक्ति"—यथा श्री उद्धवादि को "योगेन कस्तद्विरहं सहेत" इत्यादि।

तथा श्रीगोपीजन को

अथ श्रीगोपीजन में सभी आसक्तियाँ सिद्ध हैं यह दिखाते हैं।

१ "गुणमाहात्म्यासक्ति" श्री गोपीगीत, वेणुगीत, युगलगीत, भ्रमरगीत आदि से सिद्ध है ॥ २ "रूपासक्ति" गोपीनां परमानन्द आसीद्गोविन्ददर्शने। क्षणं युगशतमिव यासां येन विनाभवत् ॥ अपरानिमिषत्दृग्भ्यां जुषाणा तन्मुखांबुजं। आपीतमपि नातृप्यत्सन्तस्तच्चरणं यथा ॥" इत्यादि से। ३ "पूजासक्ति" फल फूलादि दान से ४ "स्मरणासक्ति" "स्मरंत्यः कृष्णचेष्टितं" इत्यादि से। ५ "दासासक्ति" "भवाम दास्यः श्यामसुन्दर ते दास्यः" "शिरस्सु च किंकरीणां" इत्यादि से। ६ "सख्यासक्ति" "सखउदेयिवान्० भजसखेभवत्० कितवयोषितः० इत्यादि से। ७ " कान्तासक्ति" "कान्तकामदं", "प्रेष्ठोभवान्", "दयितदृश्यतां", "सुरतनाथते" इत्यादि वाक्यों से। ८ वात्सल्यासक्ति—"गोप्यः सुमृष्टमणिकुण्डल" से, दामोदरलीला आदि में स्पष्ट। ६ आत्मनिवेदनासक्ति" 'यः पत्यपत्य' इत्यादि श्लोकों से। १० "तन्मयता-

बड़ काका उपनंदजू, अरु अभिनंद प्रनाम।
नंदन अरु सनंद ये, काका छोटे जान ॥ ८ ॥
तुंगा, अतुला, पीवरी, कुवला पुनि रसधाम।
उलटे क्रम सों जानिये, काकिन के ये नाम ॥ ९ ॥
मामा जसवरधन, जसोधर जसदेव सुदेव।
मौसी विदित जसस्विनी, मौसा मल्ल सुदेव ॥ १० ॥

तड्डुल पुरट कुवेर ये, सगरे ददा समान।
गोष्ठ कलोल करुण्ड ये, मातामह सम जान ॥ ११ ॥
शीला भेरी अरु शिखा, पितामही सी होय।
पूरनमासी भगवती, सिद्ध विधाइनि सोय ॥ १२ ॥
जटिला भेला घरघरा, सुखरा भोरा जान।
करवालिका करालिका, मातामही समान ॥ १३ ॥
मंगल पिंगल रंगपिठ, पट्टिस माटर पिंग।
नेह करत पितु से सबै, संगर संकर भृंग ॥ १४ ॥

तरलाछिनी तरालिका, शुभदा कुशला नारि।
मालिकांगदा वत्सला, ताली आदि विचारि ॥ १५ ॥
और हु वृद्धा मेदुरा, भरी नेह चित चाय।
हरि पै वत्सलता करत, जैसे जसुमति माय ॥ १६ ॥
परम नेहवारी अहै, नाम धनिष्ठा धाय।
तथा तिलिम्बा अम्बिका, ताको जुगल सहाय ॥ १७ ॥
वेदगर्भ भागुरि महायज्वा, द्विज निरधारि।
सुलभा गौतमि भारगी, चंडिलादि द्विज नारि ॥ १८ ॥
भाई श्री बलदेव से, भक्तन के अवलंब।
छनमहँ जिन हति लंब किय, खल कुल लंब प्रलंब ॥ १९ ॥

है "महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा। मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः" ॥ और प्रामाणिक स्मार्तों के निबंधों में भी एकादशी के प्रसङ्ग में ४५ दंड का वेध मानने वालों का इनका मत "कपालवेधमित्याहुराचार्या ये हरिप्रियः" "निम्बार्को भगवान्येषामित्याहुः सनकादयः ॥" इत्यादि वाक्यों से प्रमाण करके लिखते हैं और निम्बार्काचार्य ने अपना परमाचार्य इन्हीं लोगों को माना भी है जैसा उन्होंने दशश्लोकी में कहा है "उपासनीयं नितरां जनैः सदा प्रहाणयेऽज्ञानतमोनिवृत्तये। सनंदनाद्यैर्मुनिभिर्यथोक्तं श्रीनारदायाखिलतत्वसाक्षिणे ॥" इत्यादि। और लोग तो भक्तिसाधनार्थ ही प्रगट हुए हैं क्योंकि यद्यपि उन्होंने अपना शिष्यरूपी वंश तो स्थापन किया, पर पिता की आज्ञा भी न मानकर मोह करनेवाली और सृष्टि न की, यथा "ते नैच्छन्मोक्षधर्माणो वासुदेवपरायणाः" इत्यादि। वरंच भक्तिस्थापनार्थ यह भगवान् ही का अवतार है "तप्तुन्तपो विविधलोकसिसृक्षया मे वादौ सनात स्वतपसः स चतुःसनोऽभूत्। प्राक्कल्पसंप्लवविनष्टमिहात्मतत्वं सम्यग् जगाद मुनयो यदचक्षतात्मन् ॥" इति।

व्यास—व्यासजी ने तो मुक्तकंठ होकर कहा ही है कि "आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः। इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा ॥" इत्यादि। जो कहो कि अनेक पुराणों में व्यास जी ने अनेक मत और उपासना कही है तो उसमें भक्ति की विशेषता कहाँ आई तो यह शंका मत करना क्योंकि व्यास जी की तो दृढ़ प्रतिज्ञा है "वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा। आदावन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते ॥" इत्यादि इन को भक्ति मिलने का विशेष वर्णन भक्तवंशपरंपरा में मिलेगा।

शुकदेवजी—शुकदेवजी ने राजा से पहिले ही सिद्धांत स्वरूप कहा है "देहापत्यकलत्रादिष्वात्मसैन्येष्वसत्स्वपि। तेषां प्रमत्तो निधनं पश्यन्नपि न पश्यति ॥ तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवान्हरिरीश्वरः। श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयं ॥ एतावान् सांख्ययोगाभ्यां स्वधर्मपरिनिष्ठया। जन्मलाभः परः पुंसामंते नारायणस्मृतिः ॥ प्रायेण मुनयो राजन् निवृत्ता विधिनिषेधतः। नैर्गुण्यस्था रमन्तेस्म गुणानुक-

भृंगुर, भृंगार, संधिक और ग्रहल आदि चेटक हैं, तथा रक्तक, पत्रक, पत्री, मधुकंठ मधुव्रत, सालिक, तांडिक, माली, मालू और मालाधर आदि दास हैं ॥ ३१ ॥

पल्लव, मंगल और फुल्ल कोमल और कपिल आदि छोटे बालक नाचि नाचिके विचित्र चेष्टा करिके प्रभु को हँसावैं हैं ॥ ३२ ॥

सुविलास, विशालाक्ष, रसांक, रसशाली और जंबुक इत्यादि पान खवाइवेवारे हैं ॥ ३३ ॥

पयोद और वारिद नाम के पानी पियावे को काम करैं, तथा सारंग बकुल आदि वस्त्र धरावैं हैं ॥ ३४ ॥

प्रेमकंद नाम को अतर लगावै और मधुकंदला सैरंध्री केसादिक सँवारै हैं ॥ ३५ ॥

मकरंदादिक सदा शृंगार करै हैं, तथा सुमना, कुसुमोल्लास, पुष्पहासहर इत्यादि चंदन और मालादिक को काम करै हैं ॥ ३६ ॥

दक्ष, सुगंध, कर्पूर और सुगंधकुसुम आदि नाई हैं; केश को काम करैं, तेल लगावैं, पाँव दावैं और दर्पण दिखावैं हैं ॥ ३७ ॥

स्वच्छ, शीतल और प्रगुण आदि धन संबंधी काम करैं हैं, अरु कमल, विमल आदि पीढ़ा, खड़ाऊँ, छाता लिये साथ चलै हैं ॥ ३८ ॥

धनिष्ठा, चंदनकला, गुणमाला, तडित्प्रभा, भरणी, इंदुप्रभा, शोभा और रंभा इत्यादि दासी हैं, और तिनमें धनिष्ठा मुख्य धाय मातृतुल्या है ॥ ३९ ॥

कुरंगी, भृंगारी, सुलंबा और लंबिका इत्यादि दासी दधिमंथन, मार्जन तथा और घर के काम करै हैं ॥ ४० ॥

विशारद, तुंग, नीतिसार, मनोरम और वावदूक इत्यादि दूत निकुंज विहार के उपयोगी हैं ॥ ४१ ॥

दोहा।

वृंदा, मेला, मुरलिका, वृंदारिका सुजान।
दूती सबै निकुंज की, वृंदा तासु प्रधान ॥ ४२ ॥
दूजी वीरा नाम की, दूती परम प्रसिद्ध।
जासों नहिं कोऊ बची, करत सबै जो सिद्ध ॥ ४३ ॥

उद्धव—उद्धव जी का क्या पूछना है जिनको प्रेमपात्र और प्रेमी अर्थात् श्रीभगवान तथा श्री गोपीजन ने आप अपने मुख से प्रेममार्ग का उपदेश किया है, उनकी क्या बात है। ये वही उद्धव जी हैं जिनको छोटेपन से खेलही में भगवत्पूजा का व्यसन था और जिनको भगवान ने अपना तत्व संसार में स्थापन करने के हेतु ब्रह्मशाप उल्लंघन करके पृथ्वी में छोड़ा, उन का क्या पूछना है।

आरुणि—इनही का नामांतर निम्बार्क है और ये सनकादिकों के मत के प्रवर्तक हैं और इन के दश श्लोक जो मिलते हैं उनमें युगल स्वरूप की भक्ति का सिद्धांत किया है।

व्यूहांगिनं ब्रह्मपरं वरेण्यं ध्यायेम कृष्णं कमलेक्षणं हरिं। अंगेतु वामे वृषभानुजां मुदा विराजमानामनुरूपसौभगां ॥ सखीसहस्त्रैः परिसेवितां सदा स्मरेम देवीं सकलेष्टकामदाम्। ये बड़े प्राचीन हैं क्योंकि श्रीमद्भागवत मे वेदस्तुति में इनका मत कहा है और जहाँ परीक्षित राजा से मिलने के हेतु ऋषिगण आये हैं वहाँ भी इनका नाम है यथा "राजर्षिवर्या अरुणादयश्च"। ये श्री स्वामिनी जी के कंकण के पूर्णावतार हैं अतएव इनको लोग सुदर्शनतत्व कहते हैं। किसी समय इन्होंने यतियों का निमंत्रण किया था। उनके आने में विलंब हुआ और जब भोजन करने बैठे तब साँझ हो गई, इस से उन यतियों ने कहा कि अब हम नहीं खायेंगे; तब इन्होंने कहा कि आप लोग खाइये अभी सूर्य हैं और आप नीम पर चढ़कर सूर्य बन के दर्शन दिया, अतएव निम्बार्क नाम पड़ा। इन के सेव्य श्री स्वरूप श्रीगोपीजनवल्लभजी और शालग्राम सर्वेश्वर जी अभी विद्यमान हैं तथा श्रीनिवासाचार्य, पुरुषोत्तमाचार्य इत्यादि धुरंधर पंडित और हरिवंश जी, व्यासजी, स्वामी हरिदास जी इत्यादि प्रेमी इन्हीं के संप्रदाय में हुए हैं।

बलि—इनको सर्वस्वात्मनिवेदन भक्ति सिद्ध थी। अपने पितामह साक्षात् प्रह्लाद जी से उपदेष्टा और भगवान् से पात्र पावें तो फिर इनका क्या पूछना है। कहते हैं कि यतीन्द्र, बलि, अंबरीप और विश्वक्सेन नाम के किसी काल में प्राचीन चार वैष्णव संप्रदाय थे, परंतु अब सब लुप्त हुए।

क्रीडा गिरि गिरिराज है, नीलमंडपक घाट।
गुफा बनी मणिकन्दली, केलिकुंज रस ठाट ॥ ५६ ॥

गद्य

केलिसरोवर को नाम मानसी गंगा है और वाके मुख्य घाट को नाम पारंग है और वामैं सुविलास नाम की नाव है ॥ ५७ ॥

नंदीश्वर नामा पर्वत पै इंदिरालय नामा सुंदर मंदिर है, जहाँ अनेक प्रकार की संगमरमर पत्थर की आमोदवर्द्धन नाम्नी सुगंध सों भरी बैठक है। जाके आगे पावन नामक सुंदर कुंड है, जापै मंदार नामक मणि को फरस है और कुंज और अकामनामक महातीर्थ है; जिनके चित्त में काम की वासना को लेश है वे या तीर्थ को दर्शन नहीं पावै हैं। और वहाँ की पृथ्वी को नाम अनंगरंग है और श्रीजमुना जी के घाट को नाम खेलातीर्थ है और पुलिन को नाम लीलापुलिन है जहाँ कदंबराज नामक बड़ो कदंब को वृक्ष और भांडीरवट नामक बड़ को वृक्ष है, जहाँ नित्य जुगल स्वरूप को विहार है ॥ ५८ ॥

आपके दर्पन को नाम शरदिन्दु है और पंखा को नाम मधुमारुत है और स्मेर नाम को नित्य लीलाकमल श्री हस्त में धारन करै हैं और गेंदा को नाम चित्रकोरक है ॥ ५६ ॥

उज्वल नाम आप को बाण है, विलासकार्मुक नाम धनुष और मणिबद्ध नाम वाकी डोरी है और अनेक रत्न सों जड़ी बड़े सुंदर मूठ की तुष्टिदा नाम की छुरी है ॥ ६० ॥

शृंग को नाम मंजुघोष और श्रीराधाचित्ताहारिणी, महानंदा तथा भुवनमोहिनी ये तीन बंसी हैं, और मुरली को नाम सरला है, और मदनहुंकृत, बंधुर और षड्रध्र ये तीन वेणु हैं, और काकली को नाम मूकितपिका है, जाको श्रवन करि कै कोइल मूक होइ जाय हैं, और गौरी और गूजरी टोडी ये दोऊ राग अत्यंत प्यारे हैं। और बीणा को नाम नादवरांगिणी है ॥ ६१ ॥

श्रीयुगलसर्वस्व

सं० १९३३

अथ युगल सर्वस्व को दूसरो प्रकरण लिखियत है।

—:◊:—

सोरठा—मंगल माधव नाम, मंगल ब्रज वृंदा विपिन।
मंगल राधा वाम, मंगल सब ब्रज गोपिका॥

अथ श्री पूर्ण पुरुषोत्तम को मंगल समय कहत हैं। श्रीशुभ सम्वति ईश्वरे नाम्नि द्वापरार्द्धे ८६३८७४ शेष १२५ श्रीसूर्ये दक्षिणायने वर्षा-ऋतौ भाद्रपदे मासि कृष्णे पक्षे अष्टम्यां घटी ५६ पल ४५ बुधवासरे कृत्तिकानक्षत्रे घटी २८ पल० हर्षणयोगे घटी ४१ पल ३७ कौलव करणे इष्टं ४६ घटी १४ पल एतत्समये चन्द्रवंशांतःपाति वैश्यवंशावतंस गुरुगोब्राह्मणसेवापरायणं श्री मत्पर्जन्यात्मजश्रीमन्नन्दराजगृहे श्रीयशोदा-कुक्षौ पुत्ररत्नमजीजनत्।
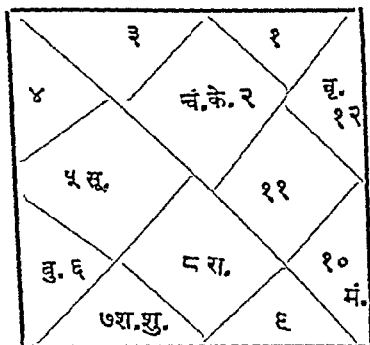
१९५५८८७७८७५ सृष्टिमारंभतो गताब्दाः।
१९७२९४३८७५ वाराहकल्पप्रवेशप्रारंभगताब्दाः॥

श्रीयुगलसर्वस्व

(श्री नित्यलीला के निकुंज सखा सखी सहचरी
सेवक परिवार आदि का नाम रूप वर्ण
स्वभावादि वर्णन)

श्री भागवत, उसकी टीका, पद्मपुराण, नारदपुराण, कृष्ण जन्मखंड,
बाराहपुराण, आदिपुराण, रहस्यपुराण, ब्रह्मांडपुराण, नारद-
पंचरात्र, गौतमीतंत्र, रासोल्लासतंत्र, वृंदावनपटल, लघु-
राधा-बृहद्राधातंत्र, हयग्रीव-पंचरात्र तथा श्रीहरि-
रायजी, श्रीगोकुलनाथजी की भावना,
श्रीद्वारकेशजी, श्रीव्रजाधीशजी, श्री
गोपिकेशजी की रहस्य भावना
और उज्ज्वलनीलमणि तथा
गणोद्देशदीपिका आदिक
ग्रंथों से संग्रह किया।

—:❀:—

अथ उपनंद जी को वर्णन । उपनंद जी श्री नंदराय जी के सब भाइन में बड़े हैं। गाँव में इन को बड़ो मान है। गाँव में जो कुछ काहू को धर्म वा साइत वा औषधी पूछनी होय तो इन सों आय के पूछैं। इन्हें भगवद्वात्सल्य सिद्ध है और ब्रज के सब गाँव की देव पितर की रीति जो कोई करै सो इन सों पूछि कै करै। केशी दैत्य के भय सों वृन्दावन छोड़ि कै ये महा वन में सब भाइन के साथ बास करै हैं। इनकी स्त्री को नाम तुंगी है। इन को वर्ण गौर, दाढ़ी श्वेत और नाभि तक लंबी है और हरे रंग को वस्त्र पहिने हैं और नव लाख गऊ और लाखन हाथी घोड़े इन के पास हैं।

अथ अभिनंद जी को वर्णन । इन को वर्ण गौर है, शरीर पुष्ट और बलवान, केश सब श्वेत हो गये हैं, पर दाँत नहीं टूटे, गालन पै सुंदर गलमुच्छा है और आठ लाख गऊ हैं औ लाल वस्त्र पहिने हैं।

अथ नंद जी को वर्णन । श्री नंदराय जी को वर्ण गौर है; केश कछु श्याम और श्वेत मिलुवाँ हैं। तोंद बड़ी है, छाती ऊँची है, वस्त्र नीलो पहिरे हैं, इनकी स्त्री को नाम श्री यशोदा है, जिन को अंग कछु स्थूल है और रंग साँवरो है। फूलन सों वेनी सदा गूँथी रहै और वस्त्र पीरो पहनै। और इन को नैहर को नाम देवकी है। श्री नंदराय जी के ७२०००००० बहत्तर करोड़ गऊ हैं और भैंस बकरी बहुत हैं। भाइन के हिस्सा में श्रीनंदराय जी को नव लाख गऊ मिली हैं सो अब वे गऊ मोहना नामक ग्वारिश्रान के सरदार के पास हैं। उपनंद जी और अभिनंद जी ने आप राज्य नहीं लियो तासों नंदराय जी ब्रज के राजा भये। इनके कुलदेवता नारायण हैं, इन के कुल को वेद साम और शाखा कौथुमी है; पर जबसों ब्रज के राजा भये तब सों यजुर्वेद और माध्यंदिनी शाखा भई। इनके कुलपुरोहित शाण्डिल्य हैं। इनके राज्य में तीन प्रकार के गोप बसे हैं, प्रथम वे जो व्यापार और गोरक्षण करै हैं, दूसरे वे जो गाय भैंस रखैं और खेती करै हैं, और तीसरे वे जो बकरी इत्यादि छोटे जीव पालैं। श्री नंद रायजी को मुख्य मंदिर उत्तराभिमुख है और दरवाजे के बाहर दोऊ ओर बड़े सिंह बने हैं, भीतर बड़ो चौक है वहाँ एक ऊँचो
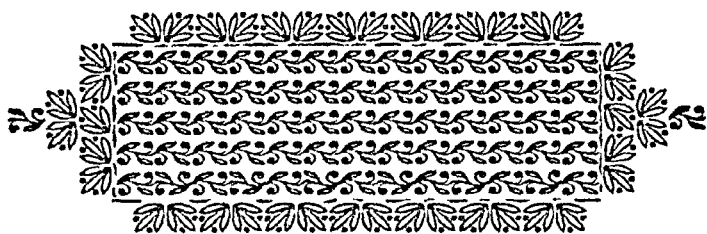
युगल-सर्वस्व

दोहा

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥ १ ॥
तन्नमामि निज परम गुरु, श्रीवल्लभ द्विज-भूप।
जाकी कृपा अपार लहि, उबरयौ हौं भवकूप ॥ २ ॥
श्री वृंदावन राज है, जुगल केलि रस धाम।
तहँ के परिकर आदि को, बरनत या थल नाम ॥ ३ ॥
वंस, सखी, परिचारिका, पशु पच्छी नर वृंद।
इन सब को बरनन करत, निज अनुभव हरिचंद ॥ ४ ॥
प्रेमवारि परजन्य जो, जिन सम धन्य न अन्य।
सोइ श्याम परजन्य के, दादा श्री परजन्य ॥ ५ ॥
दादी नाम वरीयसी, नाना सुमुख बखान।
नानी देवी पाटला, जासी और न आन ॥ ६ ॥
बड़ी मात श्री रोहनी, पिता नंद सरदार।
माता जसुदाजू अहैं, जा हित यह अवतार ॥ ७ ॥

भयो तब उपनंद जी के गोद में दे दियो, तासों भगवान को नाम नंद जी उपनंद जी दोउन को वंशपरंपरा में आवै है) और इनकी एक बेटी या को नाम कामा और प्रसिद्ध नाम शामदेवी है। जाको रंग साँवरो है और रूप में सब कृष्ण को उन्हार है।

अभिनंद जी के पुत्र को नाम सुबाहु है; या को रंग गोरो और वस्त्र हरो है। यह श्रीकृष्ण के साथ रक्षा के हेतु सदा लकुट लिये रहैं, क्योंकि श्रीकृष्ण को बड़ो भाई है तासों याके सख्य में वात्सल्य मिलो है।

सुनंद जी के पुत्र को नाम सुबल है, याको रंग लाल और वस्त्र कारो है और श्रीकृष्ण को बड़ो प्यारो मित्र है, क्योंकि याकी और भगवान की अवस्था एक ही है।

नंदन जू के पुत्र को नाम तोक कृष्ण है (कोऊ को मत है कि या को रंग श्याम और वस्त्र पीत है। याके पुकारबे को नाम तोक है और या को चलन बोलन सब श्रीकृष्ण की सी है और यह श्रीकृष्ण को अत्यंत प्यारो है क्योंकि आप को नेम है कि जो थोड़ी हू वस्तु अरोगें तो अपने हाथ सों पहिलो कवर या के मुख में देत हैं।

अब जन्म समय को भाव लिखत हैं। तहाँ श्री पूर्ण पुरुषोत्तम ने विश्वावसु नाम संवत् में जन्म लियो है ताको भाव यह है—जो विश्वावसु गंधर्वन का राजा है ताके संवत में आपने जन्म लियो तासों यह जतायो कि हम गानविद्या की प्रवृत्ति करेंगे। और दक्षिणायन में जन्म लियो ताको भाव यह है कि आप अनेक नायकागण को दक्षिण होयँगे और भक्तजन सों हू दक्षिण रहेंगे, और यज्ञअवतार में स्त्री को नाम हू दक्षिणा है तासूँ दक्षिणअयन में जन्म लियो। और वर्षा ऋतु में जन्म लियो ताको भाव यह है कि वर्षा ऋतु सब जगत को जीवन है और सब ऋतुन की अपेक्षा आनंददायक है याही सों सब अन्न आदि उत्पन्न होय है तासों यह जनायो कि हम जगत् के हेतु हैं और सब को आनंद देंगे। अरु सब महीना छोड़िकै भाद्रपद में जन्म लियो ताको यह हेतु है कि भद्र अर्थात् कल्याण वही भाद्र वाको पद नाम घर अर्थात् कल्याण को घर तासों आप ने सब मास छोड़िके भाद्रपद

भाबी श्रीमति रेवती, जाको हरि पै चाव।
सख्य तथा बात्सल्य मिलि, जाको अनुपम भाव ॥ २० ॥
मंडल दंडी कुंडली, भद्रकृष्ण से भ्रात।
बहिन नंदिरा मंदिरा, नंदी नंदा सात ॥ २१ ॥
धाय अंबिका को सुअन, बिजय नाम को जौन।
हरि तन रच्छत सर्बदा असि लै सँग रहि तौन ॥ २२ ॥
दिव्य सक्ति कुलबीर पुनि, महाभीम रनभीम।
रणधिर रणथिर सरप्रभ, सूर सभा बलसीम ॥ २३ ॥
इन आदिक हरि जेठ जे, गोप - बाल - सरदार।
पितु आयसु नित्त संग एहि, रच्छत सदा कुमार ॥ २४ ॥
बीरभद्र भद्रांग भट, गोभट यच्छ सुरेस।
भद्रमंडली भद्रबर धन से सुहृद हमेस ॥ २५ ॥

गद्य

विशाल, वृषभ, ओजस्वी, देवप्रस्थ, बरूथप, मिलिंद, कुसुमापीड़, मणिबंध, करंधम, मरंद, चंदन, कुंद, कलिंद और कुलिक इत्यादि कनिष्ठ सखा हैं, ये सेवा करै हैं ॥ २६ ॥

दामा, सुदामा, किंकिणी, तोककृष्ण, अंश, भद्रसेन, बिलासी, पुंडरीक, विटंकाक्ष, कलंबिका, प्रियंकर और श्री दाम आदि समान सखा हैं; तिनमें श्रीदामा मुख्य है, पीठमर्द है बड़ो धृष्ट है ॥ २७ ॥

सब सखा की सेना को भद्रसेन सेनापति है, अरु तोककृष्ण तो श्रीकृष्ण की दूसरी प्रतिमूर्ति है, और यह श्री कृष्ण को बहुत ही प्यारो है ॥ २८ ॥

सुबल, अर्जुन, गंधर्व, बसंत, उज्वल, कोकिल, सनंदन और विदग्द आदि प्रिय नर्मसखा हैं; इन सों कोई रहस्य छिप्यौ नहीं है ॥ २९ ॥

मधुमंगल, पुष्पांक और हंस आदि विदूषक हैं और कडार, भारती, गंधबंध और वेध आदि श्रीकृष्ण के विट हैं ॥ ३० ॥

है तासों वंश को पक्षपात जनायो। वा "विष्णु चंद्रसुते" यासों बुध के दिन आप अवतीर्ण भए। काहू पुराण को मत सोमवार के हूँ जन्म-दिन मानवे को है सो याहू में पूर्वोक्त भाव जानने। इत्यादि अनेक भाव हैं कहाँ ताईं लिखिये।

अथ चरण चिन्ह वर्णन

छप्पै

स्वस्तिक स्यंदन संख सक्ति सिंहासन सुंदर।
अंकुस ऊरधरेख अब्ज अठकोन अमलतर॥
बाजी बारन वेनु बारिचर वज्र बिमलवर।
कुंत कुमुद कलधौत कुंभ कोदंड कलाधर॥
असि गदा छत्र नवकोन जव तिल त्रिकोन तरु तारग्रह।
हरिचरन चिन्ह बत्तिस * लखे अग्निकुंड अहि सैल सह॥ १॥
छत्र चक्र ध्वज लता पुष्प कंकन अंबुज पुनि।
अंकुस ऊरधरेख अर्धससि,जव बाएँ गुनि॥
पास गदा रथ जग्यवेदि अरु कुंडल जानो।
बहुरि मत्स्य गिरिराज संख दहिने पुनि मानो॥
श्रीकृष्ण प्रानप्रिय राधिका चरन-चिन्ह उन्नीस बर।
'हरिचंद' सीस राजत सदा कलिमलहर कल्यानकर॥ २॥

अन्य मत सों

केतु छत्र स्यंदन कमल ऊरध रेखा चक्र।
अर्ध चंद्र कुस बिंदु गिरि संख सक्ति अलि वक्र॥
लोनी लता लवंग की गदा बिंदु द्वै जान।
सिंहासन पाठीन पुनि सोहत चरन बिमान॥

---

* श्री चरण चिन्ह के विशेष भाव भक्ति सर्वस्व नाम ग्रंथ में लिखे हैं वहाँ देखो।

सोभन दीपक नाम के, द्वै मसालची खास।
मधुरराव सुविचित्ररव, ये जुग वंदी पास ॥ ४४ ॥
चंद्रहास, सिव, चंद्रमुख, नचवैया ये तीन।
सुखद, सुधाकर बहुरि, सारंग मृदंग प्रवीन ॥ ४५ ॥
सुधाकंठ, कलकंठ इन, आदि गान रस लीन।
सबै कलारत अति सुघर, गाय बजावैं बीन ॥ ४६ ॥
सारँग, रसद, विलास ये, नाटक नट अभिराम।
सब अभिनय जानहिं निपुन, करहिं सदा नट काम ॥ ४७ ॥
दरजी रौचिक नाम को, गणअंगण सुसुनार।
चित्र विचित्र चितेर दोउ, कमठ पवन कुहाँर ॥ ४८ ॥
वर्द्धमान अरु वर्द्धको, द्वै बढ़ई सुखरास।
पोटी, मन्थन, दाम, अरु, कंठार आदि फरास ॥ ४९ ॥
कुमुल, कुंड, कंडोल अरु, कारँड करँड अनेक।
सेवक सेना में रहत, धरे दासपन टेक ॥ ५० ॥
हंसी, वंसी, पिंगला, गंगा, रंगा नाम।
प्रिया, पिशंगी, धूमला, मणि, सारनी ललाम ॥ ५१ ॥
इन आदिक जे नैचिकी, तिन सों हरि को हेत।
तिन में धवली मुख्य अति, निज कर जेहि तृन देत ॥ ५२ ॥
वलीवर्द्द हैं अति भले, उत्पलगंध, पिशंग।
कपि सुन्दर दधिलोल है, नाम सुरंग कुरंग ॥ ५३ ॥
स्वान व्याघ्र भ्रमरक दोऊ, विदित कलस्वन हंस।
शिखी तांडविक शुक जुगल, बोलत परम प्रशंस ॥ ५४ ॥
नित्य बाग वृंदाविपिन, जहाँ जुगल रस केलि।
करहि नित्य, को लखि सकै, बाहु बाहु पर मेलि ॥ ५५ ॥

पाछे श्री वृषभानजू के घर प्रगट होत हैं। याही सो एक एक आवरण की सेवा के हेत एक एक सखी को प्रादुर्भाव है। और श्री चंद्रावलीजी युगल स्वरूप के प्रेम की मूर्ति हैं, रासलीला में विशेष रसपोषकता अर्थात् परकीया विभाग सुख प्राप्ति की कारण है और स्वामिनीजू के मान के कारण इनको प्रागट्य है याही सों एकादश सखा की भाँति सात सखी मुख्य हैं और याही सों वेणु में सप्तरंध्र तथा गुसांई जी के घरहू सात बालकन को प्रादुर्भाव है। कोक महात्मा को मत है कि श्री स्वामिनीजी और श्री चंद्रावलीजी को स्वामिन्यात्मक स्वरूप के अतिरिक्त एक एक सख्यात्मक स्वरूपहू है। यथा श्री स्वामिनीजी को राधा सहचरी वा रंगदेवात्मक और श्रीचंद्रावली जी को इंदुमुख्यात्मक।

अथ अन्य मत सों अष्ट सखिन के नाम

ललिता, विशाखा, तुंगविद्या, रंगदेवी, इंदुरेखा, चंद्रभागा, और चंपकलता। एक के मत सों ललिता, विशाखा, चंद्रभागा, संध्यावली, तुंगभद्रा, श्यामा, भामा और तुलसा। एक के मत सों श्रीचंद्रावली, ललिता, विशाखा, पद्मा, भद्रा, धन्या, रंगदेवी और श्यामा हैं।

एक के मत सों ललिता, विशाखा, चंद्राभागा, श्यामा, भामा, कुसुमा, तुलसी और माधवी।

एक मत में ललिता, विशाखा, चंद्रभागा, चंपकलता, चित्रा, स्वर्णलेखा, इंदुमती और संध्यावली।

इति श्री युगलसर्वस्व उत्तरार्द्ध को प्रथम अध्याय संपूर्ण।

अथ स्फुट वर्णन। श्रीगोपीजन के यूथ अनगिनित हैं, इन की कोऊ संख्या नाहीं करि सकत।

इन की यूथनि में एक पुराण के मत सों ये मुख्य यूथाधिकारिणी हैं और इनके यूथ में इतनी सखी हैं। यथा चंद्रावली १६०००, सुशीला १६०००, शशिकला १४०००, चंद्रमुखी १३०००, माधवी ११०००, कदंबमाला १२०००, कुंती १००००, जमुना १४०००,

वेत्र को नाम मंडल है और लट्ठ को नाम पशुवशीकर है और दोहिनी को नाम अमृतदोहिनी है ॥ ६२ ॥

श्री मातृचरण ने नवरत्न की भुजा पै रक्षा बाँधी है और रंगद नाम के बाजू और चंकन नाम के कंकण और रत्नमुखी नाम की अंगूठी है और निगमशोभन नाम को पीतांबर है, और कलझंकार नाम की किंकिनी है और नूपुरन को नाम हंसगंजन है, जाके शब्द सुनतही श्री व्रजदेविन के चित्त चलायमान होत हैं ॥ ६३ ॥

हार को नाम तारमणि है और माला को नाम तडित्प्रभा है और कंठा को नाम कौस्तुभ है, जाके नीचे भुजंगमणि को पदक है। रति और राग के अधिदेवता मकराकृत कुंडल हैं और रत्नपार नाम को मुकुट है और अमरडामर नाम को सीसफूल है और मोर के चंद्रक को नवरत्नविडंबक नाम है और गुंजा को माला को नाम रागवल्ली और तिलक को नाम दृष्टिमोहन है और पल्लव, पत्र पुष्प और मोर के पच्छ तथा कमल इत्यादि सों गुथी श्री चरणारबिंद तक बनमाला शोभित है और जो पंचरंगे फूलन सों गुथी कटि के नीचे तक सुंदर माला है वाको नाम बैजयंती है ॥ ६४ ॥

श्री युगलसर्वस्व को प्रथम प्रकरण समाप्त भयो।

श्री चंद्रभागा जी।	बाजा स्वरोदय	राग केदार।
श्री चंपकलता जी।	बाजा रबाब	राग कान्हरा।
श्री भामा जी।	बाजा चंग	राग कल्यान।
श्री संध्यावली जी।	बाजा सारंगी	राग सोरठ।
श्री इंदुलेखा जी।	बाजा ताल	राग विहाग।
श्री चित्रा जी।	बाजा सितार	राग संकरा।

अन्य मत सों बाजन के वर्णन

श्री ललिता जी मृदंग। श्री जमुना जी सहनाई। श्री विशाखा जी सुरमंडल। श्री श्यामला जी दुधारा। श्रीचंपकलता जी सारंगी। श्री भामा जी करताल। श्री कामा जी तुरही अरु सहचरी किन्नरी।

अथ अन्य मत सों प्रियाजी के हस्त को चिह्न

जव, माला, कमल, बाटिका, भ्रमर, व्यजन, छत्र, अर्द्धचंद्र, कर्णफूल, मड़वा अरु जलपात्र।

अथ वामहस्त के चिह्न

लक्ष्मी, सीप, वृक्ष, वेदी, आसन, कुसुमलता अरु चामर।

अथ श्री ठाकुर जी के दक्षिण हस्त के चिह्न।

हाथी, अंकुश, घोड़ा, वृक्ष, बाण, गऊ, पंखा, मँडवा, बंशी, चक्र, माला और कमल।

अथ श्रीठाकुरजी के वाम हस्त के चिह्न

मँड़वा, कमल, तरवार, थापा, धनु, परिघ, बिल्ववृक्ष, मीन, बाण अरु नंदावर्त्त।

अथ श्री ठाकुरजी के उत्सव। भादों सुदी २ को दसूठन, भादों सुदी ५ को श्री चंद्रावलीजू को जन्म, कारबदी ८ को महीना को चौक, पौष सुदी ८ को अन्नप्राशन, माघ बदी ६ को नामकरण, बैशाख सुदी ६ को व्याह और असाढ़ सुदी ३ को गौना। पूस सुदी ८ को श्री नंदजू को जन्म, माघ सुदी ६ को यशोदाजू को जन्म और

वंशवृक्ष
महाबाहु
पद्मनाभ
चित्र
देवमीढ़
सुजन्य
पर्जन्य
अर्जन्य
राजन्य
नन्दिनी
उपनन्द
अभिनन्द
नन्द
सुनन्द
नन्दन
सुनन्दा
सुबाहु
श्रीकृष्ण
सुबल
तोककृष्ण
श्यामादेवी
श्रीकृष्ण
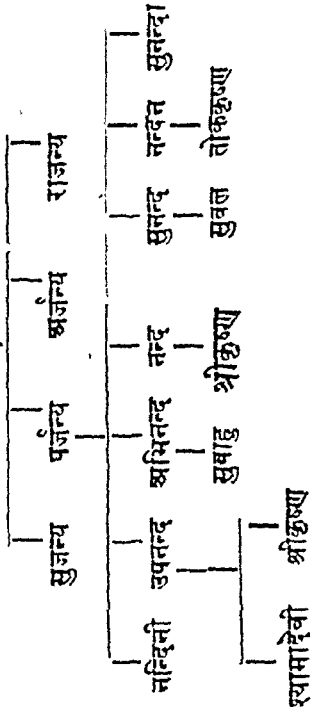
कोशलपुरी, पुलिंदी, श्वेतद्वीप की, मिथला की, ऊर्द्धवैकुंठ की, भूमिगालोक की, अजितपद की, दिव्या, विष्णुलोक की, अदिव्या, समुद्रकन्या, अप्सरा, पुरंध्री, लता, गोपी, वर्हिष्मती, नागकन्या, सुतलनिवासिनी और श्रीरामावतार की मानवी इतनी जूथन को मनोरथ पूर्ण पुरुषोत्तम ने पूर्ण कीनो है।

इन में जालंधरी तो रंगजीत नामक गोप की कन्या भई हैं और मत्स्य अवतार के वरदान की बहिर्मती अप्सरा नागकन्या और सुतलवासिनीन ने वृज के पास वर्हिपल नगर में जन्म लीने हैं। रिषीरूपा वंग देश में मंगल गोप के घर पाँच हजार उत्पन्न भई हैं। और श्री नंदरायजी ने इन को वंगाले सो लाय कै महल में रक्खी हैं। कोशल की स्त्री नव उपनंद की पत्नी हैं। मालव को राजा दिवस्पति गोप व्रज में वसत है सो देवतान की स्त्री वा की कन्या गोपी भई हैं। सिंधु देश को राजा विमल वाके यहाँ अवध और मिथिलापुर की स्त्री एक करोड़ प्रगटी हैं। ये पहले कामवन में रहीं, फेर द्वारका गईं, जामों इनको राज्यलीला प्रिय है। दक्षिण में उशीर नगर के गोप पानी न वरिसवे सों व्रज में आय वसे हैं तिन की वेटी यज्ञजानकी और पुलिंदी भई हैं। दिव्य वाहु, गोपेष्ट, पतंग, भार्गव, शुक्र और नीतिविद ये छः लघु वृषभान हैं। इनके घर ऊर्द्ध विष्णुपदवासिनी, रमासखी, जलकन्या, श्वेत द्वीप की स्त्री लोकाचलवासिनी और अजितपद की स्त्री प्रगटी हैं। वीतिहोत्र, श्रुत, अग्निभुक्, गोपति, श्रीकर, शांत, पावन, शांभ और व्रजेश ये नव लघु उपनंद हैं। त्रिगुणा और दिव्याऽदिव्या के यूथ को इनके घर प्रागट्य हैं।

और अवतारन में स्वकीया छोड़ के और स्त्री सों रमण करें तो धर्म की मर्यादा जाय वाही सों जब पूर्ण पुरुपोत्तम प्रगटे हैं तब इन सबन को मनोर्थ पूर्ण भयो है।

विशेष कर के श्री रामावतार की स्त्रीन को व्रज में प्रागट्य है जासों श्रीरामजू साक्षात् वासुदेव स्वरूप और मर्यादा पुरुषोत्तम हैं और अत्यंत ही सुंदर हैं, देखतमात्र स्त्रीजन को चित्त हरन करते हैं सो मर्यादा पुरुपोत्तम में आसक्त होइ कें पुष्टि पुरुपोत्ताम सों रमण की

चौतरा है जा पै साँझ को सब व्रज के लोग आयके बैठें हैं, ताके पीछे जो दरवज्जा है वाके दोऊ ओर बड़े बड़े हाथी बने हैं और वाहू के भीतर दरवज्जा जो है वाके दोऊ ओर चंद्रमा और सूर्य बने हैं। वाके भीतरी अनेक चौक हैं, जिन में सर्वतोभद्र, कमलचौक और मणिचौक ये तीन मुख्य चौक हैं, ताके आगे श्री व्रजरानीको मंदिर है और भीतर बाहर ताईं अनेक दर दालान और मंदिर हैं और इनके बीच में कहूँ कहूँ बड़े बड़े वृक्ष लगे हैं और कहीं तुलसी को थावरो है। इनकी या पार की राजथानी को नाम गोकुल और वा पार की राजधानी को नाम नंदीश्वर है। गोकुल के देवता चिंतामणि माधव और मथुरानाथ जी हैं और नंदगाँव के ग्रामदेवता नंदीश्वर शिव हैं, और शैलासन और पाँडु नाम की दो अथाई हैं।

अथ सुनंद जी को वर्णन। सुनंद जी को शरीर बड़ो ही पुष्ट है और अवस्थाहू वृद्ध नहीं भई है, केश सब श्याम हैं और व्रज की सेना को सब प्रबंध करैं हैं और सृंग और तरवार सदा हाथ में लिये रहैं, वस्त्र पीरे पहरैं हैं। इनकी स्त्री को नाम कुवला और गऊ नौ लाख हैं।

अथ नंदन को वर्णन। ये सबसों छोटे हैं, रंग गेहुआँ और केश बड़े लंबे लंबे हैं। वस्त्र सफेद पहिरैं और स्त्री को नाम अलता है, जाको रंग गौर है और श्याम रंग को वस्त्र पहिरैं। इन की निज की गऊ सात लाख हैं।

श्री नंद जी की माता को नाम वरीयसी है। इन को अंग नाटो और केश सब श्वेत होय गये और वस्त्र हरे हैं।

अर्जन्य की स्त्री को नाम नटी और राजन्यकी स्त्री को सूरा है। नंदराय जी के फूफा को नाम गुरुवीर है और ये वृषभानु जी के मामा लगै हैं। और नंद राय जी के दोऊ बहिन के पतिन को नाम लीन और काम है।

उपनंद जी के पुत्र को नाम कृष्ण (कोऊ कोऊ को मत है कि उपनंद जी को पुत्र नहीं भयो सो जब नंद राय जी को पुत्र

३ अध्याय

अब प्रसंगवशात् अन्य अन्य रहस्य निरूपण करत हैं। १। रसिक जन और महात्मान के निकुंजादि वर्णन में अनेक मत हैं, तिन कों परस्पर विरुद्ध देखि कै शंका न करनी काहे सों कि यह तो निकुंजलीला भाव सिद्ध है जैसो जाको भाव को अधिकार है वैसो वाहि दर्शन होत है। २। रहस्य पुराण में तिरानवे कोटि रासलीला लिखी हैं। ३। तिरानवे कोटि कुंजहू हैं। ४। धाम एक भूमंडल पर श्रीवृंदावन, एक गोलोक को नित्य वृंदावन। ५। सब कुंजन में ८४ कुंज मुख्य हैं। याही सों ८४ सेवक हू श्री महाप्रभु जी ने अंगीकार किए हैं। ६। श्रीठाकुरजी के गुणमय नौ स्वरूप उन की भार्य्या १ अजा २ अरूपा ३ निर्गुणा ४ निराकारा ५ सनातनी ६ निरीहा ७ परब्रह्मभूता ८ अविनाशिनी और ९ निरंजना। सो इन नओ स्त्रीन सों श्रवणादिक प्रेम भक्ति उत्पन्न होत भई। ७। और निर्गुण स्वरूप श्री ठाकुरजी को एक सच्चिदानंदघन, ताकी स्त्री अलौकिकी, तासों प्रेम लक्षणा उत्पन्न भई, ताके सहज, सुहित और सुहृत तीन पुत्र भए। ८। श्रवणादिक प्रेमन को एक एक कों नौ नौ पुत्र भए तेही ८१ और तीन प्रेमलक्षणा के पुत्रन के पुत्र सब मिलि कै चौरासी प्रकार प्रेम तेई निकुंज होत भए। ९। श्रवण की भार्या श्रुति ताके नौ पुत्र सूक्ष्मकुंज, उनकी संज्ञा, उनके नाम यथा प्रीतिकुंज, प्रेमकुंज, कंदर्पकुंज, लीलाकुंज, मज्जनकुंज, विहारकुंज, उत्कंठकुंज, मोहनकुंज, युगुलकुंज। १०। कीर्त्तन की स्त्री नर्त्तकी ताके नौ देहकुंज पुत्र भए यथा हावकुंज, भावकुंज, कटाक्षकुंज, अलककुंज, मुक्ताकुंज, भ्रूकुंज, वेनीकुंज, रोमराजीकुंज, नीवीकुंज। ११। अर्चन की भार्या पूजा ताके नौ पुत्र विहारकुंज यथा कटिक्षीणकुंज, मानकुंज, भ्रमनकुंज, लिप्तनकुंज, संगीतकुंज, आलस्यकुंज कलकूजितकुंज, विविधाकारकुंज, दुकूलकुंज, कुचकुंज। १२। पाद सेवन की स्त्री पादोदका ताके नौ शृंगारकुंज यथा नेत्रकुंज, कुंडलकुंज, हारकुंज, तांबूलकुंज, आड़कुंज, लावन्यकुंज, हास्यकुंज, उत्साहकुंज, उग्रताकुंज। १३। स्मरण की स्त्री स्मृति ताके नौ महाकेलिकुंज यथा कोकिलालापकुंज,

ही में जन्म लियो। अब वर्षा ऋतु के २० दिन को एक ऐसे तीन पाद हैं तामैं मध्य पाद में जन्म लिया। ताको भाव यह कि प्रथम पाद में उष्णता विशेष है और तृतीय में शीतता तासों मध्य के पाद में जन्म लियो, और ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीन देवता हैं तामें मध्म में विष्णु हैं ताको हेत यह जो प्रधान मध्य में रहे हैं तासों मध्य पाद में जन्म लियो सो जाननो। अब कृष्ण पक्ष में जन्म लियो ताको कारण यह है कि आपको अपने नाम को पक्ष है तासों यह जनायो कि हम अपनो पक्ष थापेंगे और अष्टमी तिथि को कारण यह है कि अष्टमी शिवतिथि है, कल्याण रूप है, यद्वा श्रीमहादेव जी परम वैष्णव हैं तिनकी तिथि है, यद्वा पंद्रहो तिथि के मध्य में अष्टमी है, सो प्रधान मध्य में रहै है तासों, यद्वा अष्टमी जयतिथि है सो हम असुरन को जय करेंगे यह जनायो। वा यह श्री बसुदेव जी की जन्मतिथि है। और रात को जन्म लियो ताको हेत यह है कि हम चंद्रवंशी हैं सो चद्रमा रात्रि को राजा है तासों हम को दिन सों प्रयोजन नहीं। और अर्द्धरात्र को जन्म लियो ताको हेत यह है कि वा समय में कोई कार्य नहीं कियो जाय है, स्वस्थ वेला है, तासों जा समय मेरे भक्त स्वस्थ रहैं वा समय जन्म लियो चाहिए। और चंद्रमा के उदय होत जन्म लियो ताको हेत यह है कि जैसे चंद्रमा जगत को आह्लाद करै है तैसी आह्लाद हम करेंगे यह जनायो, यद्वा हम चंद्रवंशी हैं सो अपने वंशस्थ के उदय संग अपनो उदय कियो। और भगवान के जन्म समय आकाश में मेघ छाये याको हेत यह है जैसो मेघ सबकों आनंद देत है तैसो हम आनंद देंगे, यद्वा मेघ प्रसन्न भये कि हमारा नाम घनश्याम श्रीठाकुर जी को होयगो, हमारी उपमा ब्रह्म को दी जायगी तासों प्रसन्न भये, यद्वा जल को नाम जीवन है सो जीवन जगत को हम करेंगे यह जनायो। और रोहिणी नक्षत्र पर जन्म लियो ताको भाव यह कि जैसे चंद्रमा को अनेक नक्षत्र हैं तैसेही यद्यपि आप को अनेक सखी सेवन करैं तथापि मुख्य श्री प्रियाजी ही हैं। और रोहिणी में जन्म ग्रहण करके आपने श्री बलदेव जी से सहोदरता सूचन कराई। बुधवार में आपने जन्म लियो ताको हेत यह है कि सब ग्रहन में बुध अत्यंत सुंदर है तासों आप अलौकिक सौंदर्य प्रगट करैंगे और बुध आप के वंश को पूज्य हू

यहां प्रकटे। सो जब कीरतिजी अपुने घर सों श्री स्वामिनी जी कों लाईं तब श्री ठाकुर जी माता की गोद मों किनके और इमें वाही समें इन दोऊ रसात्मक स्वरूपन को उन पंचाधरणात्मक स्वरूप में स्थापन कीनों ॥ ५ ॥ जब कछु आवरण मों मथुरा पधारे तब वियोगरसात्मक मुख्य स्वरूप श्रीस्वामिनीजी के हृदय में विराजे ॥ ६ ॥ श्रीस्वामिनीजी को मनोरथात्मक जो स्वरूप हैं ताही में अन्य के प्रभु सों रमण करिबे के मनोरथ तथा वरदान आदि नों जे स्वामिनी प्रकटत हैं ते मिलि रहत हैं और स्वामिन्यात्मक स्वरूप में प्रति कुंज प्रति मंडल प्रति जूथ में जो स्वामिनी जी के अंश स्वरूप रहत हैं तिनकी एकता है ॥ ७ ॥

अथ श्रीस्वामिनी-जन्म-समय

अथ ब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्धे श्वेत वाराह कल्पे द्वापरांते विश्वावसु संवत्सरे भाद्रपदेशुक्लाष्टम्यां गुरु वासरे अरुणोदये विशाखायां सिहल-मोदये प्राङ्मुहूर्त्तद्वयान्विते श्रीश्रीस्वामिन्या जन्म ॥ ८ ॥

अष्टादस श्री चिन्ह श्री राधापद मैं जान।
जा कहँ गावत रैन दिन अष्टादसो पुरान ॥
जग्य स्रुवा को चिन्ह है काहू के पद सोइ।
पुनि लक्ष्मी को चिन्ह हू मानत हरि पद कोइ ॥
श्री राधापद मोर को चिन्ह कहत कोउ संत।
द्वै फल की बरछी कोऊ मानत कुस के अंत ॥

अथ हस्त चिन्ह वर्णन

जव खुर तोरन कमल लता वंसी त्रिकोन ध्वज।
वृत्त शंख घट अग्निकुण्ड अंकुश गृह रथ गज।
सफरी ऊरधरेख कलस फल सब मन भाये।
छत्र गदा धनु सर सुचक्र अरु बिजन सुहाये।
बर पानपात्र गो सींप तिल स्वस्तिक श्रीश्री कृष्णकर।
'हरिचंद्र' चिन्ह बत्तीस ये सोहत नित जन-सीस पर ॥ २ ॥
इति श्रीयुगलसर्वस्व के पूर्वार्द्ध को दूसरो प्रकरण।

अथ अष्ट सखिन के नाम।

अपने मत सों—श्रीचंद्रावली जी, श्रीललिता जी, श्री विशाखा जी, श्रीचंपकलता जी, श्रीचंद्रभागा जी, श्रीराधासहचरी, श्रीश्यामा जी और श्रीभामा जी। इनमें श्रीचंद्रावली जी को स्वामिनीत्व है और सबन कों सखित्व है *याही सों* पंचाध्याई में अंतर्ध्यान और आविर्भाव और महारास तीनिहूँ समै में काचित् काचित् करिकै सात ही गिनाई हैं। और सप्तावरणात्मक, श्रीस्वामिनीजी तथा श्रीठाकुरजी को स्वरूपहू है। यथा चतुर्व्यूहात्मक, कालात्मक, संयोगात्मक और वियोगात्मक श्रीठाकुरजी को स्वरूप है। वियोगात्मक स्वरूप बृज में प्रगटे हैं और बृज ही में विराजत हैं, मथुरा द्वारका नाहीं जात। तथा श्री स्वामिनीजी शक्तित्रयात्मक-स्वामिन्यात्मक, संयोगात्मक, वियोगात्मक हैं, तिन मैं वियोगात्मक स्वरूप द्वै वर्ष पहले सेवाकुंज में प्रादुर्भाव भए हैं और संयोगात्मक स्वरूप पूर्णपुरुषोत्तम के साथ श्री यसोदा जी के यहाँ प्रगटे हैं और पंचावरणात्मक स्वरूप पंद्रह दिन

नव वृषभानों का चक्र

नाम	स्त्री नाम	संतति	वर्ण	चाल वस्त्र	गुण	वय	गऊ
चंद्रभानु	चंद्रकला	श्रीचंद्रावलीजी श्रीचंपकलताजी	गौर केश कृष्ण किंचित्श्वेत	हरित	कला	५४	१७०००००
वरभानु	बरकला	श्रीइंदुलेखाजी	लाल, केश काले	पहलवानी धानी	गानविद्या	५२	१६०००००
उदधिभानु	कमला	श्रीसुदेवीजी	पक्का	केश काले श्वेत	व्यायाम पशुपरी-क्षण	५०	१५०००००
श्रीवृषभानुजी	कार्त्तिजी	श्रीदामा श्रीराधिकाजी	लाल	केश काले	राजविद्या	४५	१००००००

युगलसर्वस्व के उत्तरार्द्ध को तीसरो प्रकरण समाप्त भयो ।

जान्हवी ६०००, सावित्री १५०००, सुधामुखी १४०००, शुभा १४०००, पद्मा १४०००, गौरी १४०००, सर्व्वमंगला १६०००, सरस्वती १३०००, भारती १००००, अपर्णा १४०००, रति १००००, गंगा १४०००, अंबिका १६०००, सती १३०००, नंदिनी १००००, सुंदरी १२०००, कृष्णप्रिया १६०००, मधुमती १४०००, चम्पा १३००० और चंदना १४००० ।

काहू मत सों श्रीनंदराय जी की परंपरा यह है ।

आभीरभानु के चंद्रसुरभि, तिन के मीलुक, मीलुक कों महावाह, तिन के कंजनाभ, तिन के बीरभानु, तिन के धर्म्मधीर, तिन के धर्म्मश्रवा, तिन के काननेंदु, तिन के जयबल, तिन के जयकीर्ति, तिन के यशोधन, तिन के कंठभानु, तिन के महाबुद्धि, तिन के मानमेरु, तिन के मनोरथ, तिन के वरांगद, तिन के चित्रसेन, तिन के सुनंद, तिन के उपनंद, तिन के महानंद, तिनके नंदन, तिन के कुलनंद, तिन के बंधुनंद, तिन के केलिनंद, तिन के प्राणनंद, तिन के नंद हैं ।

एक मत सों चित्रा जी को वर्णन । श्रीकुंड के पूर्व आनंद सुखद नाम इन को निकुंज है, इन की वय तेरह वर्ष आठ महीना की, वर्ण गौर, वस्त्र जाती पुष्प तुल्य और सेवा चित्र की है ।

श्यामली जी दोऊ स्वरूप की संबंधिनी हैं, श्रीठाकुर जी के काका की वेटी हैं, साँवलो रंग है । श्रीठाकुर जी की उनहार बहुत मिलत है । कोऊ को मत है कि श्री ठाकुर जी के काके की वेटी को नाम श्यामदेवी है, श्यामली जी श्री ठाकुरानी जी के काका की वेटी हैं परंतु श्री ठाकुर जी की पक्षपातिनी हैं ।

अथ अष्ट सखिन के राग तथा बाजन को वर्णन

तहाँ श्री स्वामिनी जी संयोग में विपंची जाति की बीन और वियोग में वंशी बजावत हैं । राग केदार और कान्हरो रात में तथा दिन में सारंग और मालकोस, वर्षा में मेघ और मल्लार ।

श्री चंद्रावली जी । बाजा अमृत कुंडली राग सोरठ और जलतरंग ।
श्री ललिता जी । बाजा बीन राग भैरव कलिंगड़ा ।
श्री विशाखा जी । बाजा मृदंग राग सारंग ।

इन में विशाखा, ललिता, श्यामा, पद्मा सखी और शेष यूथपति हैं।

अथ यूथपति अपर

चंद्रावली और सुशीला १६०००, शशिकला १४०००, चंद्रमुखी १३०००, माधवी ११०००, कदंबमाला १३०००, कुंती १००००, यमुना १४०००, जाह्नवी ६०००, पद्ममुखी ६०००, सावित्री १५०००, सुधामुखी १४०००, शुभा १४०००, पद्मा १४०००, गौरी १४०००, सर्वमंगला १६०००, सरस्वती १३०००, भारती १००००, अपर्णा १४०००, रति १००००, गंगा १४०००, अंबिका १६०००, सती १६०००, नंदिनी १००००, सुंदरी ११०००, कृष्णप्रिया १६०००, मधुमती १४०००, चंपा १३०००, चंदना १४०००।

श्रीस्वामिनीजी के १६ नाम

राधा १ रासेश्वरी २ रासवासिनी ३ रसिकेश्वरी ४ कृष्णप्राणाधिका ५ कृष्णप्रिया ६ कृष्णस्वरूपिणी ७ कृष्णवामांगसंभूता ८ परमानंदरूपिणी ९ कृष्णा १० वृंदावनी ११ वृंदा १२ वृंदावनविनोदिनी १३ चंद्रावली १४ चंद्रकांता १५ शतचंद्रनिभानना १६॥

—:※:—

सावन वदी ५ अठवासा तथा अगहन सुदी २ को श्री ठाकुरजी कूल में पधारे हैं। कार्तिक सुदी १५ को यज्ञपत्नी को अंगीकार।

आधिदैविक उद्धव, आधिदैविकी सुभद्रा, आधिदैविक अर्जुन, आधिदैविकी रुक्मिणी और आधिदैविकी सत्यभामा को व्रज की लीला में अंगीकार हैं तैसेही आधिदैविक बलदेवजी और रेवतीजी सदा वृज में बिराजत हैं और मर्यादा श्रुतिरूपा गोपी इन को यूथ है।

श्रीठाकुरजी के बूआ को नाम मैना है और धरानंद अर्थात् सुनंदजी की बेटी सुभद्रा श्री ठाकुरजी की प्यारी बहन है। श्रीवृषभानु-जी विवेक और श्रीकीर्ति जी भक्ति को स्वरूप हैं तथा देवतान की आदिजननी महामाया देवकी जी को स्वरूप है और धर्म को स्वरूप बसुदेवजी को है। इन दोउन कों व्रज में कबहूँ कबहूँ बाललीला के दर्शन होत हैं।

गोलोक में श्रीगोवर्द्धन को विस्तार बारह हजार कोस है और भगवान के आनद सों उन की उत्पत्ति है। श्री स्वामिनीजी के सात्विक भाव सों रास की उत्पत्ति है। तिरानवे कोटि रासलीला और उतने ही कुंज हैं, तिनहूँ में चौरासी मुख्य हैं। निज निकुंज में श्रीठाकुर जी कबहूँ गौर विराजत हैं कबहूँ श्याम। सात्विक कुंज फूलन के हैं, राजस मणि काँच इत्यादि के और तामस धातु पाषाणादि के हैं। निर्गुण कुंज इच्छामय षट ऋतु संपन्न हैं। कुंज मंडल में पहलो निकुंज श्री यमुनाजी को, दूसरो अग्निकुमारिका को, तीसरो श्रुतिरूपा की मुखिया श्री चंद्रावली जी को और चौथो निज निकुंज है। ऐसे हीं अंतरंग कुंज में इन स्वरूपन के आधिदैविक स्वरूप क्रम सों श्री यमुनाजी, श्री राधा सहचरी, श्री चंद्रावलीजी और जुगल स्वरूप विराजत हैं और वे स्वरूप अलौकिक मनुष्य के ज्ञान के बाहर के हैं। जिन स्वामिनी और सखिन को जगत भजन करत है वे गुणमई हैं।

श्री चंद्रावलीजी को गाँव वृज में रिठौरा है। नवधा भक्ति वात्सल्य में तो श्री नवनंद के स्वरूप में और शृंगार में सखी स्वरूप में रहत हैं। वृज में अनेक अवतारन के वरदान सों श्रुतिरूपा, ऋषिरूपा, यज्ञसीता, रमासहचरी, लोकालोकबारी, रजोगुण की, तमोगुण की, सतोगुण की,

अधिकारिणी होत हैं। ताहू मैं अग्निकुमार दंडकारण्य के पाँच हजार ऋषी को मुख्य नित्य लीला में अंगीकार है क्योंकि पुरुष होइ के प्रभु में इन ने स्त्रीभाव कीन्हो है, सो कुमारिकान को यूथ जा की मुखिया श्री राधा सहचरी जू हैं, इन्हीं दंडकारण्य के ऋषिन को है।

सुजस गोप की स्त्री जसा सों कीर्ति जी को प्रागट्य है। सुनैनाजी इन की अंश हैं। चंद्र वंश में कुरंग नामक राजा और वा की स्त्री विशालाक्षी सों सुनैना जू की उत्पत्ति है।

श्री जानकी जू इनहीं के गृह प्रगटी हैं और मंदोदरी, पृथ्वी, पार्वती और सुनयना इन सबन सों आप सों मातृ संबंध है। जब ऋषिन को ब्रह्मतेज एक घड़ा में बंद होय के रावन के पास आयो तब मंदोदरी ने वाकों अपने गर्भ में धारण कियो सो नारद जी के कहिबे सों रावण ने वा गर्भ कों पीड़ित करि वा घड़ा में भरि कै जनकपुर के पास गड़वाय दियो। ताही सों श्रीजानकी जी प्रगटी हैं। और श्री लक्ष्मन जी सब ब्रह्मान के, भरथ जी सब विष्णुन के और शत्रुघ्न जी सब शिवन के आधिदैविक स्वरूप हैं।

आल्हादिनी, चारुशीला, अतिशीला, सुशीला, हेमा, लक्ष्मना ये श्री जानकी जी की कुंजन की, शोभना, सुभद्रा, शांता, संतोषा, शुभदा, सत्यवती, सुस्मिता, चार्वंगी, लोचना, हेमांगी, क्षेमा, क्षेमदात्री, सुधात्री, धीरा, धरा और चारुरूपा, ये सोरह सिंगार की, माधवी, मनोजवा, हरिप्रिया, वागीशा, विद्या, सुविद्या, नित्या और वैसा ये आठ अंग की मुख्य सखी हैं।

इति श्रीयुगलसर्वस्व के उत्तरार्द्ध को द्वितीय अध्याय स्फुट प्रकरण समाप्त भयो।

—:*:—

३ श्यामला	स्वर्ण वर्ण	श्याम वस्त्र	मृदंगसेवा
४ चित्ररेखा	,,	शुक्लांबर	डफ की सेवा
५ श्रीमती	,,	रक्त वर्ण	दासी की सेवा
६ चंद्रा	,,	नील वस्त्र	रबाब
७ हरिप्रिया	,,	लाल वस्त्र	उपंग
८ मदनसुंदरी	,,	श्वेत वस्त्र	रबाब और गाना
९ विशाखा	,,	पीत वस्त्र	वंशी
१० प्रिया	,,	श्वेत वस्त्र	वंशी
११ शैव्या	,,	श्याम वस्त्र	गाना
१२ मधुमती	,,	शुद्ध वस्त्र	चरन सेवा
१३ पद्मा	,,	लाल वस्त्र	सारंगी
१४ शशिरेखा	,,	नील वस्त्र	यंत्र
१५ भद्रा	,,	रेशमी लाल वस्त्र	सुरमंडल
१५ रसप्रिया	,,	चीन शुक्ल वस्त्र	ठुमरी

एक एक की सात सात सखी

१ ललिता की इंदुमुखी १ रसज्ञा २ शुभदा ३ सुमुखी ४ वल्लभी ५ चंद्रिका ६ चतुरा ७।

२ चंद्रावती की चंचला १ मधुरा २ हस्तकमला ३ मधुरभाविनी ४ विलासिनी ५ रसवती ६ खंजनलोचना ७।

३ श्यामला की सुखदा १ चंपकलिका २ रसदा ३ रसमंजरी ४ सुमंजरी ५ शीला ६ चारुमती ७।

४ चित्ररेखा की चंद्रप्रभावती १ वासंती २ मालती ३ जाती ४ चंद्रकांती ५ सुकुंतला ६ रंभा ७।

५ श्रीमती की भ्रमरगंभीरा १ सुशीला २ सुवेशिनी ३ आमलिकी ४ सुधाकंठी ५ श्रेया ६ रतिप्रिया ७।

ग्रीवकुंज, आलिंगनकुंज, चुंबनकुंज, अधरपानकुंज, दर्शनकुंज, दर्पनकुंज, प्रलापकुंज, उन्मादकुंज। १४। वंदन की स्त्री नति ताके नौ एकांतकुंज यथा दर्पकुंज, उत्सादनकुंज, उत्कर्षकुंज, दीनकुंज, अधीनकुंज, सुरतकुंज, आकर्षणकुंज, उच्चाटनकुंज, मूर्छाकुंज, । १५। दास्य की स्त्री विनया ताके नौ गोप्यकुंज यथा वशाकरणकुंज, स्तंभनकुंज, प्रियास्कंधारोहणकुंज, आवेशकुंज, व्यात्तालापकुंज, पर्यंकशयनकुंज, प्रियाचरणताड़नकुंज, नखक्षतकुंज, दंतक्षतकुंज। १६। सख्य की स्त्री मैत्री तासों नौ भावकुंज यथा क्षपितरंगकुंज, विगताभरणकुंज, भूषणकुंज, कंपकुंज, रतिप्रलापकुंज, तुत्तुलगिरिकुंज, प्रियावासभवनकुंज, मदनगुह्यकुंज, आसक्तकुंजकुंज,। १७। निवेदन की स्त्री आत्मसमर्पिणी ताके नौ परमरसकुंज यथा पीड़ावादीकुंज, सुरतश्रमनिषेधकुंज, ठुनुककुंज, वाग्विभ्रमकुंज, व्यस्तभावकुंज, कामटंककुंज, किंकिनिरवकुंज वीरविपरीतकुंज, सुरतांतकुंज । १८। सुहृत् की स्त्री सुहृदा तासों कलिकाकौतुककुंज और सुहित की स्त्री हितकारिणी तासों सुरतकुंज तथा सहज की स्त्री सहजा तासों सहज प्रेमकुंज येई चौरासी कुंज भए। १९। इन कुंजन में एक एक में सब कुंज अंतरभाव सों रहत हैं कहूँ प्रच्छन्न रहत हैं और कहूँ प्रकाशित होत हैं। २०।

अब और स्फुट रहस्य वर्णन करत हैं। व्रज में सप्तावरण स्वरूप श्रीठाकुर जी को तथा श्रीस्वामिनीजी को विराजत है ॥ २ ॥ वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, कालेश्वर, संयोगरसात्मक और वियोगरसात्मक यह सात स्वरूप मिलि कै पूर्ण होत हैं सो इन में अन्य कलपन में कहूँ एक कहूँ दोय ऐसे स्वरूप प्रकट होत हैं ॥ ३ ॥ जब पूर्ण प्राकट्य भयो तब छ स्वरूप मथुराजी में प्रगटे, वियोगात्मक स्वरूप वृज ही में प्रगटे ॥ ४ ॥ श्रीशक्ति, भूशक्ति, लीलाशक्ति, मनोरथात्मक, स्वामिन्यात्मक, वियोगात्मक, संयोगरसात्मक यह सात स्वरूप श्री स्वामिनी जी के हैं तिन में अन्य युगन मैं कोउ एक स्वरूप प्रकटत हैं। जब पुर्ण प्रागट्य भयो तब पाँच स्वरूप कीर्त्ति जी के यहाँ प्रगटे और जब श्रीठाकुर जी प्रकटे तिन के साथ मायावृत संयोग-वियोग रसात्मक दोय स्वरूप

नव वृषभानों का चक्र

नाम	स्त्री नाम	संतति	वर्ण	चाल वस्त्र	गुण	वय	गऊ
सत्यभानु	सत्यकला	श्रीललिताजी	गौर मूँछ श्वेत	शरीर ठिगना चित्त गंभीर वस्त्र काले	औदार्य	७५	२२०००००
गुणभानु	गुणकला	श्रीविशाखाजी	गुलाबी, केश श्वेत	रंग शहाना	विद्या	६७	२१०००००
धर्मभानु	धर्मकला	श्रीरंगदेवी	साँवला, केश श्वेत	वस्त्र लाल शरीर लंबा	धर्म	६४	२००००००
रुचिभानु	रुचिरकला	श्रीचित्राजी	पीन शरीर लंबा चौड़ा केश, अधकचरे	लीला	ज्योतिष	६०	१६०००००
सुभानु	सुष्ठुकला	श्रीतुंगविद्याजी	साँवला, केश अधकचरे	डाढ़ी पीत प्रसन्न वदन	रोचकता	५७	१८०००००

	चातुर्य	उन की सखियों के नाम	भाव
श्री ललिता जी अनुराधा जी	मध्या मुख्य स्नेहवर्द्धन	रत्नप्रभा, रतिकला, निपुणा, कलहंसी, कलापिनी, सुमुखी, मन्मथमोदा, सौरभा	सख्य
श्री विशाखा जी	सदा साथ रहना	माधवी, मालती, कुंजरी, हरिनी, चपला, गंधरेखा, शुभानना, सौरभी	सख्य
श्री चम्पकलता जी श्री इन्दुलेखा	यथारुचि सिद्ध करना	कुरंगाची, मिहिर कुंडला, चंद्रिका, सुचरित्रा, मंडिनी, चंद्रलता, रसऐनी, सुमंदिरा	इन पर श्रीप्रिया जीका वात्सल्य है
श्री तुंगविद्या	कोक	चित्रलेखा, मेदिनी, मंदालसा, रसतुंगा, भद्रतुंगा, गानकला, सुमंगला, चित्रांगी	परमांतरंग
नान्दीमुखी	वाद्यादि कला	मंजुमेधा, सुमेधिका, गुणचूड़ा, मधुरा, मधुस्यंदा, मधुरेक्षणा, तनुमध्या, वारुणी	मुसाहिब
श्री रंगदेवी	शृंगार माल्यनिर्माण	कलकंठी, शशिकला, कमला, सुंदरी, कंदर्पा, प्रेममंजरी, कामलता, मधुविंदा	सेवासख्य
श्री सुदेवी	शुकपाठ तिलक आदि	कावेरी, मनोहरा, मंजुकेशी, केशिका, हीरा, चारुकुमारी, हीरकंठा, महाहीरा	मुसाहिब
श्री चित्रा	रुचि अवलोकन	रसालिका, तिलकिनी, सुगंधिका, सौरसेनी, नागरी, रामिलिका, नागवेनिका, अरुना	सेवासाख्य

अथ चतुर्थ अध्याय

६४ गुण श्रीभगवान के

सुरम्यांग १ सर्वसल्लक्षणान्वित २ रुचिर ३ तेजोयुक्त ४ बली ५ वयोयुक्त ६ विविधाद्भुतभाषावित् ७ सत्यवाक्य ८ प्रियंवद ९ वावदूक १० पंडित ११ बुद्धिमान १२ प्रतिभान्वित १३ विदग्ध १४ चतुर १५ दक्ष १६ कृतज्ञ १७ दृढ़व्रत १८ देशकालपात्रज्ञ १९ शास्त्रचक्षु २० पवित्र २० वशी २२ स्थिर २३ दांत २४ क्षमाशील २५ गंभीर २६ धृतिमान् २७ सम २८ वदान्य २९ धार्मिक ३० शूर ३१ करुण ३२ मानदायक ३३ दक्षिण ३४ विनयी ३५ लज्जावान ३६ शरणागतपालक ३७ सुखी ३८ भक्तसुहृत् ३९ प्रेमवश्य ४० सर्वशुभंकर ४१ प्रतापी ४२ कीर्त्तिमान ४२ लोकप्रिय ४४ साधुसमाश्रय ४० नारीमनोहर ४६ सर्वाराध्य ४७ समृद्धिमान् ४८ श्रेष्ठ ४९ ईश्वर ५० नित्य सुंदर ५१ सर्वज्ञ ५२ सच्चिदानंदघन ५३ सर्वसिद्धिसंयुक्त ५४ अविचिन्त्य ५५ महाशक्ति ५६ अनेककोटि ब्रह्माण्डविग्रह ५७ अवतारावलीवीज ५८ हतारिगतिदायक ५९ आत्माराम गुणाकर्षी ६० अत्यंत अद्भुत और चमत्कार लीला कल्लोल के समुद्र ६१ अतुल्य मधुर प्रेमप्रिय मंडल सों मंडित ६२ मुरली वादन सों सर्वमानसाकर्षी ६३ अत्यंत अलौकिक उज्ज्वल अद्भुत तथा उद्धत रूपश्री सों चराचर को मोहन ॥ ६४ ॥

प्रथम पचास सहज गुण। ६० तक १० अद्भुत। और चार असाधारण गुण।

२४ नित्य प्रिया सहचरी

चंद्रावली १ विशाखा २ ललिता ३ श्यामा ४ पद्मा ५ शैव्या ६ भद्रिका ७ तारा ८ विचित्रा ९ गोपाली १९ धनिष्ठा ११ पालिका १२ खंजनाक्षी १३ मनोरमा १४ मंगला १५ विमला १६ शीला १७ कृष्णा १८ सारिका २९ विशारदा २० तारावली २१ चकोराक्षी २२ शंकरी २३ कुंकुमा २४।

अथ अन्य मत सों सखीन को वर्णन चक्र

नाम	रंग	कौन की सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दल	स्थान
श्रीललिता	चद्रमा	श्रीस्वामिनीजीकी	पीला	...	...	पीला	पश्चिम
चंद्रावती (ली)	सोना	श्रीललिताजीकी	श्वेत	...	...	सफेद	उसके बाएँ
श्यामला	सोना	श्रीस्वामिनीजीकी	काला	मृदंग	...	काला	वायव्य
चित्रलेखा	तपाया सोना	श्रीठाकुरजीकी	श्वेत	डफ	गाना	सफेद	उसके बाएँ
श्रीमती	सोना	श्रीठाकुरजीकी	लाल	...	दास	लाल	उत्तर
चंद्रा		श्रीठाकुरजीकी	लीला	रबाब	गाना	नील	उसके बाएँ
हरिप्रिया	सोना	...	पीला	उपंग	...	लाल	ईशान
मदनसुंदरी	चंद्र	...	सफेद	रबाब	गाना	धूम्र	उसके बाएँ
विशाखा	गौर	श्रीस्वामिनिजीकी	पीत	वंशी	...	पीत	पूर्व
श्रीप्रिया	सोना	विशाखाजी की	सफेद	वंशी	...	शुक्ल	उसके बाएँ
शैव्या	सोना	श्रीकृष्णकी	काला	मंजुसुखयंत्र	...	श्याम	अग्नि कोण
मधुमती	सोना	युगल स्वरूप की	सफेद	...	गाना	शुक्ल	उसके बाएँ
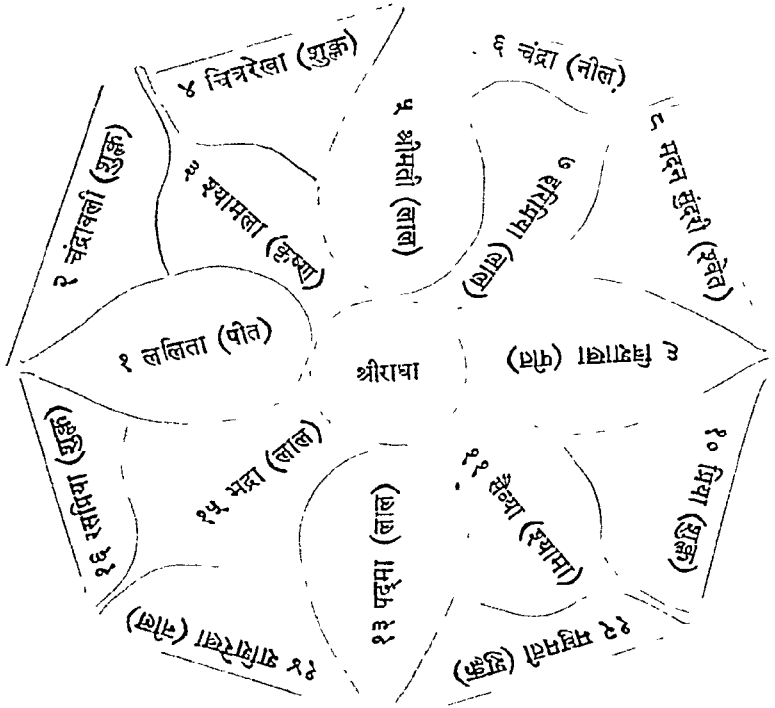
उत्तर
४ चित्ररेखा (शुक्ल)
६ चंद्रा (नील)
५ श्रीमती (लाल)
७ हरिप्रिया (लाल)
२ चंद्रावली (शुक्ल)
३ श्यामला (कृष्ण)
८ मदन सुंदरी (श्वेत)
१ ललिता (पीत)
श्रीराधा
९ विशाखा (पीत)
१५ भद्रा (लाल)
१० प्रिया (शुक्ल)
१६ रसप्रिया (शुक्ल)
१३ पद्मा (लाल)
११ शैव्या (श्यामा)
१४ कामरेखा (नील)
१२ मधुमती (शुक्ल)
दक्षिण

श्री रामचन्द्र के दक्षिण चरण के २४ चिन्ह
क्रम सों

एड़ी में स्वस्ति चिन्ह । १ पीत-रंग मध्य तरवा में ऊर्द्ध रेखा । २ लाल रंग । ऊर्द्ध रेखा के बायें तरफ अष्टकोण ३ स्वेत अरुण । श्री । ४ । बालार्क सन्निभ ।

हल । ५
मुसल । ६ } स्वेत धूम्र ।

सर्प । ७ । सित ।

बाण । ८ । स्वेत । पीत अरुण हरित ।

आकाश । ९ । नील ।

अष्टदल कमल । १० । अरुण
स्यंदन । ११ । विचित्र वर्ण जिसमें चारि घोड़े स्वेत ।
वज्र । १२ । बिजुरी वर्ण ।

अँगूठे में जव । १३ । स्वेत रक्त ।

उर्द्ध रेखा के दक्षिण ओर कल्प वृक्ष । १४ । हरिद्वर्ण । अंकुश । १५ । श्याम ।
ध्वज । १६ । लोहित चित्रित ।
मुकुट । १७ । तप्त कांचन वर्ण ।
चक्र । १८ ।
सिंहासन । १९ । रत्नमय ।
कालदंड । २० । कंसावत ।
चामर । २१ । अत्यंत धवल ।
छत्र । २२ । सित लाल ।

नृ । २३ ।
जपमाला (२४ चिन्ह) स्वेत, पीत, अरुण, हरित अरु वज्र-वत ।

अथ उत्सवन पर रागन को अंगीकार

जन्मोत्सव	सारंग
दान	टोडी
साँझी	गौरी
विजयदशमी	मारू
रास	केदार, कान्हरा तथा सर्व
कार्तिक	भैरो, ईमन कल्यान
मार्गशीर्ष	पंचम
पूस	आसावरी
माघ	मालकोस, वसंत
फागुन	धनाश्री, विहाग आदि सब राग
डोल	हम्मीर सारंग
चैत	पूर्वी
वैशाख	मधु सारंग, केदार
ज्येष्ठ	सारंग शुद्ध
आषाढ़	सामंतसारंग, गौड़, सोरठ
श्रावण	मलार
जागने को समय	भैरव पंचम
शृंगार करती समय	रामकली
अरोगती समय	यथाऋतु
दिन	टोड़ी, आसावरी, सारंग, धनाश्री
तीसरे पहर	गौरी, पूर्वी, धनाश्री
जन्मोत्सव	सारंग
सैन आरती वा कुंजविहार	केदार, कान्हरा, ईमन
एकांत विहार	विहार, सोरठ, परज, कलिंगड़ा

अथ तंत्र मत सों सखीन को वर्णन

१ ललिता	स्वर्णवर्ण	रत्नाभरण	पीतांबर
२ चंद्रावती	,,	श्वेत वस्त्र	मंजीर की सेवा

६ चंद्रा की शुकप्रिया १ मधुकरी २ सुवेशा ३ अमृतोद्भवा ४ मुरली ५ वल्लभी ६ वृंदा ७।

७ हरिप्रिया की पारिजातप्रिया १ शुभा २ पंचस्वरा ३ रत्नमाला ४ मदिरा ५ रासवल्लवी ६ मातंगगमनी ७।

८ मदनसुंदरी की तारावती १ कुंडलधारनी २ केशरी ३ मित्रवृंदा ४ लक्षणा ५ अच्युतमालिका ६ चंद्रा ७।

९ विशाखा की मायावती १ कौशिकी २ कोमलांगी ३ सुचंदनी ४ पीयूषभाषिणी ५ सत्यवती ६ कुंजवासिनी ७।

१० प्रिया की कपोतमालिका १ लोपामुद्रा २ किंशुकप्रिया ३ इलावती ४ कुंकुमा ५ कमला ६ मदालसा ७।

११ शैव्या की सावित्री १ बहुला २ प्रियवादिनी ३ मुक्तावली ४ चित्ररेखा ५ सुमित्रा ६ लोलकुंडला ७।

१२ मधुमती की अरुंधती १ चित्रवती १ श्रीरक्षा ३ पद्मगंधिनी ४ मेनका ५ कलिका ३ रंगकेतकी ७।

१३ पद्मा की काममूर्छिनी १ कुमुदप्रिया २ तानप्रिया ३ नित्य विलासिनी ४ हीरावती ५ हारकंठा ६ सिंहमध्या ७।

१४ शशिरेखा की सुलोचना १ नंदव्या २ आनंदकलिका ३ सुनंदा ४ आनंददायिनी ५ कुरंगाक्षी ६ सुश्रोणी ७।

१५ भद्रा की केलिलोला १ प्रियंवदा २ श्यामराधा ३ श्यामासेव्या ४ कस्तूरी ५ मानभंजनी ६ विचित्रवासना ७।

१६ रसप्रिया की मंजुकिंकिनी १ पिकस्वरा २ भृंगगाना ३ रासविहारिणी ४ रसमंजीरा ५ तिलोत्तमा ६ चारुमती ७।

अथ अन्य प्रमाण के अनुसार अष्ट सखी को चक्र
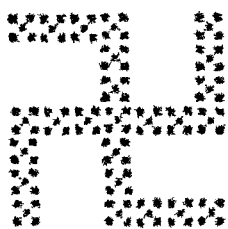
	पितानाम	मातानाम	रंग	वस्त्र रंग	मुख्यसेवा
श्री ललिता जी अनुराधा जी	सत्यभानु	सत्यकला	गोरोचनप्रभा	मयूरपिच्छ	पानबीड़ी
श्री विशाखा जी	गुणभानु	गुणकला	दामिनीप्रभा	चौंदतारा	वस्त्रादि
श्री चम्पकलता जी श्री इन्दुलेखा	चंद्रभानु	चंद्रकला	चंपकप्रभा	नील	व्यंजनादि
श्री तुंगविद्या	वरभानु	वरकला	हरतालप्रभा	अनार के फूल	शय्या कहानी
नान्दीमुखी	सुभानु	सुकुकला	गौर	पीला	गान
श्री रंगदेवी	धर्मभानु	धर्मकला	कमलकेसर प्रभा	उड़हुल के फूल	आभरण
श्री सुदेवी	उदधिभानु	कमला	सलोना	सूहा	केशप्रसारचनादि आरसी
श्री चित्रा	शुचिभानु	रुचिरकला	कुंकुमप्रभा	सुनहला	जलादि पान की

अथ अन्य मत सों अष्ट सखीन को वर्णन

नाम	रंग	वस्त्र	माता	पिता	पति	चातुर्य	सेवा
ललिता सुंदरी	गोरोचन	मयूरपिच्छ	शारदा	विशोक	बांलीक	मध्या वाक्य	तांबूल
विशाखा	बिजली	चाँदतारा	सुदक्षिणा	पावन	बल्लभ	सामादि भेद-काव्य	वस्त्र
चंपकलता	चंपा	नीला	वाटिका	राम	चंडाक्ष	दौत्य	पाक वस्तु
चित्रा	कुंकुम	काला	चर्चिका	चतुर	पिठर	आगमज्योतिष, पशुविद्या, जलपान	सँवारना जल केश
तुंगविद्या	केसर	पीले	मेधा	पौष्कर	वालिस	संगीत साहित्य मेलन	वीणा
इंदु लेखा	हरिताल	लाल	सागर	वेला	दुर्बल	कोक वशीकरणदैन्य	चंदन
रंगदेवी	पद्म किंजल्क	सफेद	करुणा	रंगसार	चक्रेशण	शृंगार	...
सहचरी	गौर	नील	सुदेवी	देवबंधु	कोपन खलंदु	अंजन अभ्यंग-चरण-सेवा	पीकदान

अन्य मत सों अष्ट सखीन को चक्र

नाम	रंग	किसकी सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दल	स्थान
पद्मा	फूल	...	लाल	सारंगी	...	लाल	दक्षिण
इंदुलेखा वा शशिरेखा	चंद्रमा	श्रीठाकुरजीकी	पट्ट	मृदंग	गाना	नील	उसके बाएँ
भद्रा	सोना	श्रीयुगल	लाल	स्वरमंडल	...	लाल	नैर्ऋत
रसप्रिया	सोना	युगल	लाल	...	...	शुक्ल	उसके बाएँ
वृन्दा (वनप्रिया)	हरदी	...	सफेद साटन	तंबूरा	...	...	...
श्रीचंद्रावली	लाल सोना	...	चुनरी	...	जाहीके फूलकी माला	...	...

६. आपने सम्पूर्ण वेद देखा है।

७. जो कहिये कि वेद बहुत है और लुप्त प्राय है इस से सब नहीं देखा है तो वेद में अमुक वस्तु नहीं यह कहना व्यर्थ हो जाता है।

८. जो आप वेद जानते हैं तो उन के भेद कहिये।

९. बारहो उपनिषत् किन किन ब्राह्मणों वा संहिता के अंत भाग है।

१०. जो कहिये कि अमुक के हैं तो वे सब वेद के भीतर हैं या बाहर। जो भीतर हैं तो अश्वमेध प्रकरण में जब एक बेर सब वेदों को गिनाय गये तो फिर वेद के बाहरवाली कौन ब्रह्मविद्या थी जिसे पुराण के नाम से चर्व्वित चव्वर्ण किया।

११. अश्वमेध प्रकरण में पुराण शब्द का अर्थ ब्रह्मविद्या है इस में कौन सा प्रमाण है और वसुरुद्रादि शब्द का अर्थ परमेश्वर ही है लिंगधारी देवता नहीं इस में क्या प्रमाण और वेद में जहाँ सहस्रनयन वज्रपाणि इत्यादि विशेषण दिये वहाँ क्या व्यवस्था और जो व्यवस्था आप करें वही ठीक इस में क्या प्रमाण।

१२. और भी कई स्थान पर पुराण का अर्थ प्राचीन और इतिहास ही है इस का प्रमाण।

१३. ऋग्वेद के कै विभाग हैं और इसमें कितनी शाखा और कितनी संहिता और कितने उपनिषत् और कितने ब्राह्मण इत्यादि हैं कहिये।

१४. और इन सब के आदि अंत के मंत्र सूचना के हेतु कहिये और इन की पुस्तकें कहा लब्ध होंगी और आपने इन सबों को किससे अधीत किया है।

१५. इसी भाँति यजुर्वेद का सब वृतांत कहिये।

१६. ऐसेही सामदेव का कहिये।

१६. इसी प्रकार ब्यौरेवार अथर्वेद का संपूर्ण वृतांत कहिये।

१८. जो कहियेगा कि एक मनुष्य सब नहीं जान सकता इससे हम सब नहीं जानते तो ७ वें प्रश्न का दोष आप के माथे पड़ेगा।

श्रीराघव के वायें पदाब्ज के २४ चिन्ह क्रम सों

पद मध्य में दक्षिण पद लौं ऊर्द्ध रेख की जगह पै सरयू । १ । सित ।

एड़ी में गो पद ।२। सित रक्त ।

सरयू के दक्षिण ओर भूमि । ३ । पीतरक्त सित ।

कुंभ ।४। स्वर्ण वर्ण कुछ स्वेत ।

पताका । ५ । चित्रवर्ण ।

जंबू फल । ६ । श्याम ।

अर्द्ध चंद्र । ७ । धवल ।

दर । ८ । सित कछु लाल ।

षट्कोण । ९ । महास्वेत ।

त्रिकोण । १० अरुण ।

गदा । ११ श्यामल ।

जीवात्मा । १२ । दीप्तिरूप ।

अंगुष्ठ में विंदु । १३ । पीत ।

गोपद की बाईं ओर । शक्ति । १४ । रक्त श्याम सित ।

सुधाकुंड । १५ । सित रक्त ।

त्रिवली । १६ । त्रिवेणीवत् ।

मछरी । १७ । रुपेवत ।

पूर्णसिंधु । १८ । धवल ।

वीणा । १९ । पीत रक्त सित ।

वंशी । २० । चित्र विचित्र ।

धनु । २१ । हरित पीत अरुण ।

त्रोण । २२ । चित्र विचित्र ।

मराल ।२३। चरण चांचु लाल । सित ।

चांद्रिका । २४ । सित पीत अरुण विचित्र रंग ।

जो चिन्ह श्री रामजी के दक्षिण पद में हैं सोई चिन्ह श्री जानकी जी के वाम पद में हैं और जो श्री राघव के वाम पद में सोई श्री लाडिली जी के दच्छिन पद में ।

---

३६. कल्प जो प्रचलित है सोई आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये और कल्प के कौन ग्रंथ मिलते हैं कहिये !

३७. अष्टाध्याई आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण कहिये।

३८. महाभाष्य प्रमाण है इस में श्रुति प्रमाण कहिये।

३९. निरुक्त कौन ग्रंथ प्रचलित है और वही आर्ष भी इसमें युक्ति और प्रमाण दीजिये।

४०. छंद के कौन ग्रंथ आर्ष हैं और उनके आर्ष होने में क्या प्रमाण और उनके स्वरूप बदले नहीं इसमें श्रुति प्रमाण दीजिये।

४१. भृगुसंहिता आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये और प्रचलित भृगुसंहिता वही प्राचीन भृगुसंहिता है इस में युक्ति कहिये।

४२. ये बारह उपनिषत् वेदांत शास्त्र हैं यह बात कहाँ लिखी है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

४३. शारीरिक सूत्र आर्ष हैं इसमें प्रमाण दीजिये और यह वही सूत्र है जो व्यास ने कहा इस में युक्ति कहिये।

४४. कात्यायन आदि सूत्र आर्ष हैं इन में प्रमाण कहिये और आदिपद से आप और किसे लेते हैं।

४५. योगभाष्य आर्ष है इसमें श्रुति प्रमाण दीजिये।

४६. मनुस्मृति यह वही है जो मनु ने कहा है कालबल से बदली नहीं इस में युक्ति और श्रुति प्रमाण दीजिये।

४७. मनुस्मृति में जिन वाक्यों को आप नहीं मानते वे कल्पित हैं इस में प्रबल युक्ति और श्रुति प्रमाण दीजिये।

४८. यही महाभारत महाभारत है इसमें क्या प्रमाण और कौन सी युक्ति है।

४९. महाभारत में जिन श्लोकों को आप कल्पित मानते हैं उनके कल्पित और बाकी आर्ष होने में कौन प्रमाण और कौन सी युक्ति है।

५०. श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीभगवान ने जो "मे" मत् "मां" इन शब्दों से अपनी भक्ति यही परम धर्म है यह कहा है यह प्रमाण है या नहीं।

५१. जो कहो कि "मे" इत्यादि शब्दों का अर्थ आत्मा है तो और सौ स्थान पर जहाँ ये शब्द आये हैं वहाँ इनका आत्मा अर्थ क्यों नहीं

उपसंहार

यह पूर्वोक्त श्री युगुलसर्वस्व अनेक प्रामाणिक ग्रंथों से संग्रह करके छापा गया। इसके छपने से अनन्य लोग रुष्ट न हों क्योंकि यह बजार बजार बेचने और घर घर बाँटने को नहीं छापा गया है केवल अनन्य अधिकारी लोगों के हेतु थोड़ी सी पुस्तकें गुप्त रीति से छाप ली गई है।

यह भी विदित रहे कि एक्ट २५ सन् १८६७ ई० की रीति के अनुसार रजिस्ट्री किया है और छापे के अन्य अन्य एक्ट के अनुसार इसका सब स्वत्व हमने केवल अपने हस्तगत रखा है इस्से भूलकर भी कोई इसी भाषा और इसी लिपि में वा किसी अन्य भाषा और अन्य लिपि में वा कुछ घटा बढ़ाकर वा कुछ हेर फेर कर भी छापने का उद्योग न करे नहीं तो वह कानून के अनुसार दंडनीय होगा।

विदित हो कि सर्व्वसदार्यशिरोधार्यचरण आचार्यवर्य श्री महाप्रभु जी ने युगल स्वरूप की सेवा और भावना ही अपने संप्रदाय में मुख्य मानी है तथापि प्रचार बालसेवा और बालभाव का किया है। इस का कारण यही है कि संसार के स्वभावदुष्ट जीव इस उत्तम रस के अधिकारी नहीं हैं। उन की प्रवृत्ति सहज ही नीच है और चित्त सांसारिक विषयों से कलुषित है तो वे लोग यदि यह रहस्य कहैं सुनै तो उलटे अपराधी हों। यह तो जलकमल की भाँति जो भक्त संसार में रहते हैं उन्हीं के कहने सुनने के योग्य है, क्योंकि सिंगार भावना सिंहनी का दूध है, जो या तो सिंह के बच्चो के मुँह में ठहरे या स्वर्ण के पात्र में। और पात्र में रक्खो तो फट जाय वैसे ही यह उत्तम रस पात्र बिना नहीं ठहरता। और बाल भाव तो गऊ का दूध है अनेक प्रकार के सत् पात्र में ठहर सकता है यद्यपि नास्तिक इत्यादि खटाई और बहिर्मुख से पीतल के पात्र में इस को भी विकार होता है तथापि सर्व साधारण में इस के कहने सुनने वालों का सुनना तो मानों अपने माता पिता का रहस्य उद्घाटन करना है। इस के तो जो अधिकारी हों उन्हीं से कहना सुनना योग्य है। इस मेरे लिखने का तात्पर्य यह कि जिन के पास यह ग्रंथ रहे वह इस को किसी साधारण स्थान में वा साधारण लोगों के हाथ में न फेंक दें वरंच इस को बहुत यत्नपूर्वक रखें।

५६. सब वेद की पुस्तकें और उनके सब मन्त्र वेही हैं जो ईश्वर से निकले और इतने काल तक उनका स्वरूप कुछ नहीं बदला और ये सब वेही आर्ष अक्षर हैं इस में किसी ने कपोल कल्पित मन्त्र नहीं मिलाये इस में क्या प्रमाण और क्या युक्ति है कहिये।

६०. जो कहिये कि परंपरा प्राप्त हैं तो परंपरा प्राप्तता से वेद का तो निश्चय होय और परंपरा प्राप्त मूर्तिपूजन न माना जाय इसमें क्या प्रमाण और जो आप कहिए कि हम अपनी बुद्धि से समझते हैं कि ये वेद वेही हैं तो आप की बुद्धि ठीक है इसमें क्या प्रमाण और कौन सी युक्ति है।

६१. बात सौ पण्डित लोगों की मानें कि एक आप की।

६२. जो कहिये कि ऐसा लिखा है कि एक पंडित सौ मूर्ख इतना होता है तो यह सब अज्ञ हैं हम पंडित हैं हमारी बात मानो तो इस में क्या प्रमाण है और क्या युक्ति है कि आपही पंडित हैं और ये सब अज्ञ हैं।

६३. वेद की पुस्तक पर जो कोई लात रखदे तो आप उसको दोष भागी कहेंगे तो वह दोष भागी कैसे होगा क्योंकि मूर्तियों में तो आप कहते हैं वहाँ क्या है पत्थर है तो उस वेद की पुस्तक में क्या है कागज और सियाही है जो हमारे हाथ की बनाई है और हमारे हाथ का लिखा है और अक्षर है सो एक प्रकार का संकेत है तो ऐसी जड़ वस्तु के अनादर से क्या दोष है। जो कहिए उन से वेही मन्त्र समझे जाते हैं जो हमारे धर्म्म स्वरूप हैं इस से आदर के योग्य हैं तो वे मूर्त्तियाँ जिन से हमारे पूज्य देवता के आकार का स्मरण होता है क्यों नहीं मानने के योग्य हैं।

६४. आप के पिता या किसी पुरुषा का मृत देह या उनके चित्र जिससे उनके स्वरूप का ज्ञान हो या कागज पर उनका नाम लिख के इन सब का अनादर करें और इन पर बुरी वस्तु डालें तो आप को बुरा लगेगा कि नहीं क्योंकि ये सब तो पृथ्वी तत्व के अंश और जड़ वस्तु हैं।

दयानन्द जी ने ४ प्रश्न किए थे इस हेतु उन के चार को चार बेर चौगुन करके चौसठ प्रश्न किए हैं। इन का उत्तर उन को अक्षरशः देना उचित है।

—:o:—

सन् १८७१ ई० में बनारस लाइट
प्रेस से प्रकाशित हुआ।

श्री श्रीवल्लभोविजयते ।

भूमिका

अथ दयानंदनामी क्या जाने कौन जाति वा किस आश्रम के कोई नम्र पुरुष सब देशों में भ्रमण करते हुए सनातन सधर्म्म रूपी सूर्य्य को राहु की भाँति ग्रास करते हुए मूर्खों और आलस्य से भरे हुए जीवों के हृदय-वस्त्र को अपने रंग में रंगते हुए इसी बहाने अपना नाम लोगों में विदित करते हुए और अपने वाक्य बना के आडम्बर से साधु लोगों का हृदय दहन करते हुए काशी में आये और दुर्गाकुण्ड निवासियों के सहवासी हुए और उनने जो व्यर्थ उपद्रव किये वह सब पर विदित हैं अब उनने एक छोटी सी पुस्तक छपवाकर लोगों पर यह विदित करना चाहा है कि मैं हारा नहीं इस से मैंने ऐसा विचार किया कि ऐसे मनुष्य से सम्भाषण करना उचित नहीं और पत्रद्वारा शास्त्रार्थ करना जिसमें सब लोगों पर सदसत् का प्रकाश और हारने जीतने का निश्चय हो जाय इस हेतु यह दूषणमालिका उनके गले में पहिनाई जाती है। उनको उचित है कि इन सब प्रश्नों का प्रति पद उत्तर दें और इसी प्रकार से बराबर पत्रद्वारा शास्त्रार्थ होय और इतने प्रश्नों का एक जीतने के इश्तिहार की भाँति उत्तर न दिया जाय क्योंकि इन शब्दों के प्रति शब्द का उत्तर न देने से परास्त समझे जाँयगे और प्रश्नोत्तर करते करते जो थक जाय और जिसकी बुद्धि में उत्तर की युक्ति न आवै वह हारा समझा जायगा।

१८७० ई०
काशी

हरिश्चंद्र

महात्म देखे इतना परिश्रम क्यों व्यर्थ किया भला प्रत्यक्ष नहीं तो सपने में तो देख लेते। हाय मुझे इनके इस व्यर्थ परिश्रम का सोच होता है और सुनिये इस व्यवस्था के नीचे लिखा है कि 'गवर्नमेंट को इसमें सहायता देनी उचित है, छिः छिः गवर्नमेंट को क्या पड़ी है कि इसके बीच में कूदेगी। यह दशा तो जितने पृथ्वी पर मंदिर हैं सब में है। जब गवर्नमेंट सब पर हाथ लगावेगी तब इधर भी देखेगी, यह भी हुआ। इसके नीचे श्री काशी धर्म सभासद पं० बस्ती राम जी की सम्मति है। अब मैं फिर पंडित जी से पूछता हूँ कि संसार में जितनी सभा हैं उनकी यह रीति है कि लेखाध्यक्ष वा सभापति का अंत में हस्ताक्षर होता है सो यह धर्म सभा के किस नियम में लिखा है कि एक सभासद भी सम्मति कर सकता है और किस सभा में आपने इस व्यवस्था पर सभासदों से सम्मति ली थी। जो कहिए कि मैंने आप ही लिखा है तो बताइए कि धर्म सभा के प्रत्येक सभासद को कितनी व्यवस्था देने का अधिकार है और आप की धर्म सभा के कितने सभासद हैं। वाह वाहरे धर्म सभा जिसके ऐसे मनमाने नियम, इसको भी जाने दीजिये। इसके आगे एक दूसरी संस्कृत व्यवस्था है जिसमें दो प्रश्नों के उत्तर हैं—पहिला जो कोई औद्धत्य से किसी देव मूर्त्ति को उखाड़ दे तो उसको क्या दोष है। इसका उत्तर देने के पहिले मैं पूछता हूँ कि वह देव मूर्त्ति स्थापित थी इसमें कौन प्रमाण या बिना बात ही कहना कि विश्वनाथ जी के सिर पर एक गरुड़ की मूर्ति थी। उसको शैवों ने तोड़ के फेंक दिया हम फिर बैठावेंगे। जो कहो कि प्राचीन काल से न थी तो किसी को उसका उखाड़ना भी तो अयोग्य है। मैं कहता हूँ कि पहिले तो किसी की स्थापना ही में प्रमाण नहीं और जो किसी ने स्थापना किया तो वह योग्य है वा अयोग्य। जैसा किसी शिव जी से बड़े देवता के ऊपर किसी क्षुद्र देवता या किसी विष्णु गण की मूर्ति बल से बैठा दे तो वह योग्य होगी वा अयोग्य। मैं कहता हूँ अयोग्य ही होगी। इसमें प्रमाण यही है कि किसी बड़े देवता के सिर पर या परम निकट किसी क्षुद्र देवता की मूर्ति अंगी भाव से देखने में नहीं आती। जाने दीजिये इस संस्कृत व्यवस्था का विचार मत कीजिये क्योंकि इस पर बड़े बड़े लोगों के हस्ताक्षर हैं और आगे

दूषणमालिका
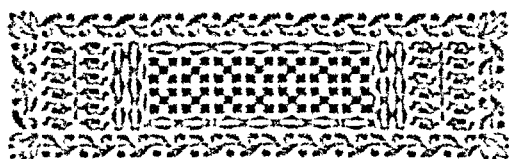
१. आपने जो पुस्तक छपवाई है उसमें वेद के मंत्र हैं सो वेद के मंत्र शूद्रों तथा म्लेच्छादिकों के हाथ में देने से आप को दोष हुआ कि नहीं।

२. आप कौन आश्रम और किस जाति के हैं और किस धर्म को मानते हैं जो कहिये कि हम वेदधर्म को मानते हैं तो वेदधर्म को मानना इस में क्या प्रमाण और बौद्ध और मुहम्मदी मत को न मानना इसमें क्या प्रमाण। जो कहिये कि हम उसी कुल में उत्पन्न हैं इससे यही धर्म मानना योग्य है तो आप मूर्त्ति पूजक के वंश में हो कि नहीं।

३. जो आप कहैं कि हम अमुक जाति के थे अब योगी हुए हैं तो आप के पिता पुरुषा सब उसी जाति में उत्पन्न हुए इसको किसने देखा है और उस में क्या प्रमाण है।

४. जो कहिये कि शिष्टाचार प्रमाण है और हम सुनते आते हैं कि हम अमुक वंशीय हैं तो इसी भाँति मूर्त्ति पूजनादि शिष्टाचार क्यों नहीं मानते।

५. जो कहो कि वेद नहीं है तो दयानंद स्वामी अमुक वंश में भये यह वेद में कहाँ है।

गया तब महाराज मानसिंह ने जीर्णोद्धार किया। उसी को आचारियों ने तोड़ा। इस दफे में सांप्रत काल के श्री महाराज सवाई रामसिंह की स्तुति भी है।

अब मैं इसका विचार करता हूँ, सुनिये। पहिले तो विष्णु के समान कोई देवता बैठ ही नहीं सकता। क्योंकि विष्णु के समान अन्य देव तुलना करने से बड़ा दोष होता है जैसा वशिष्ठ—श्री महाविष्णुमन्येन हीनदेवनदुर्मतिः। साधारणं सकृद्ब्रूते सोंत्यजोनांत्यजोंत्यजः। और भी वासुदेवं परित्यज्य योन्यदेवमुपासते। तृषितो जान्हवीतीरे कूपङ्खनति दुर्मतिः।

दूसरे कहीं भैरव और विष्णु को एक संग बिठाने की विधि नहीं है। तीसरे शैव पुराणों से ज्ञात हुआ कि भैरव विष्णु का अवतार है इससे जब साक्षात् विष्णु विराजते हैं तब भैरव का क्या काम है। चौथे जगन्नाथ माहात्म्य के देखने से जाना गया कि जगन्नाथ जी नृसिंह के स्वरूप हैं और नृसिंह से भैरवादिक डरते हैं जैसा इस वाक्य से स्पष्ट है। डाकिनी शाकिनीभूत प्रेतविघ्नपभैरवा। नृहरेर्गर्ज्जनंश्रुत्वा पलायन्तेपराङ्मुखाः।

पाँचवे तामस देवताओं की पूजा का निपेध है इससे भैरव सात्विकों के पूजने योग्य नहीं जैसा श्री मद्भागवत में लिखते हैं। मुमुक्षवोघोर रूपान् हित्वाभूतपतीनथ। नारायण कलाश्शान्ता भजन्तिह्यनुसूयवः।

छठें पंचायतन बिना केवल दो देवता की विधि किसी शास्त्र में देखने में नहीं आती।

सातवें विष्णु के आवरण में जहाँ भैरव की पूजा का विधान है वहाँ भैरव को बराबर बिठाना नहीं लिखा है। दुर्गा और भैरव की पूजा नीचे करनी लिखी है।

आठवें जो आवरण पूजा में भैरव वहाँ हैं तो दुर्गा गरुड़ विष्वक्सेन नारदादिक क्यौं नहीं हैं।

नवें बहुभक्त होना यह बड़ा दोष है। एकोदेवः केशवोवा शिवोवा। अत्रिस्मृति श्लोक ३३८। बहुभक्तोदीनमुखो मत्सरीक्रूर बुद्धिमान्। एतेषांनैवदातव्यः कदाचिच्च परिग्रहः।

१९. इन चारों वेदों को कौन स्वर से पढ़ना चाहिये और उन के स्वर की रीति वेद में किस स्थान पर लिखी है

२०. वे सब स्वर जो आर्ष रीति के हैं सोई हैं या कुछ पलट गये। जो कुछ पलट गये तो इन के पलट जाने में क्या प्रमाण और जो वेही हैं तो उन के वे ही होने में और न पलट जाने में क्या प्रमाण।

२१. वेदों के या मंत्रों के आप जो अर्थ करें सोई अर्थ है दूसरा अर्थ नहीं इस में क्या प्रमाण।

२२. आपने ११ ग्रंथ आर्ष माने उनके अतिरिक्त ग्रंथ अप्रमाण हैं इसमें क्या प्रमाण।

२३. ऋग्वेद का उपवेद आयुर्वेद है इसमें क्या प्रमाण और जो आयुर्वेद प्रचलित है वही प्राचीन है इसमें निश्चायक क्या।

२४. जो कहिये कि उसका प्रमाण उसी में है तो सब पुराणों में भी पुराणों की प्रशंसा है इस हेतु इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

२५. चरक आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

२६. सुश्रुत आर्ण है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

२७. धनुर्वेद ही यजुर्वेद का उपवेद है इस में प्रमाण।

२८. धनुर्वेद का अब कौन ग्रंथ मिलता है बताइये और जो मिलता है तो वही आर्ण है इस में प्रमाण दिखलाइये।

२९. जो कहिये कि धनुर्वेद के ग्रंथ लुप्त होगये तो आप इस विषय के अज्ञ ठहरे तो फिर ७ प्रश्न का दोष पड़ा।

३०. सामवेद का उपवेद गान है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

३१. गान विद्या के कौन ग्रंथ आर्ष इस में भी श्रुति पूर्वक कहो।

३२. अथर्ववेद का उपवेद शिल्प है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

३३. शिल्प विद्या में कौन-कौन ग्रंथ मिलते हैं और वे श्रुति संमत भी हैं इस में प्रमाण कहिये।

३४. चारो उपवेद जो आप न जानते होंगे तो उस विषय के अज्ञ होने से ७ प्रश्न का दोष पड़ैगा।

३५. शिक्षा का कौन ग्रंथ है और उसके आर्ष होने में श्रुति प्रमाण दीजिये।

के संग पूजा करना कहाँ हो सकता है जैसा श्रीमद्भागवत में। मुमुक्षवो घोररूपान् हित्वा भूतपतीनथ। नारायण कलाश्शान्ता भजन्तिह्यनुसूयवः ॥ २५ ॥ रजस्तमः प्रकृतयस्समशीलाभजन्तिवै। पितृभूतप्रजेशादीन् श्रियैश्वर्य्य प्रजेप्सवः ॥ २६ ॥ तथा सार संग्रह में वशिष्टस्मृति। रजस्वलांसूतिकाञ्च श्वानङ्काकञ्चगर्द्दभं। कुक्कुटञ्चिडवरा-हञ्च पूपपाखंडिनन्तथा। वहिर्देवालकं स्पृष्ट्वा सवासाजलमाविशेत्। गणेशंभैरवं दुर्गा रुद्रादीनुग्रदेवतान्। योर्चयेद्भक्तिमान्विप्रो सर्वदेवा लकस्मृतः। और भैरवादिकों के पूजन से वैसी ही गति मिलती है परम पद नहीं मिलता है जैसा श्रीमुख से आज्ञा करते हैं। ७ अध्याय में। कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्य देवता। तंतंनियममास्थाय प्रकृत्यानियताः स्वया ॥ २० ॥ योयो यांयांतनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमि-च्छति। तस्यतस्याचलीं श्रद्धां तामेवविदधाम्यहं ॥ २१ ॥ सतयाश्रद्धया-युक्तस्तस्याराधनमीहते। लभतेच ततः कामान् मयैव, विहितान्हितान् ॥ २२ ॥ अंतवत्तुफलंतेषां तद्भवत्यल्पमेधसः। देवानदेवयजोयान्ति मद्भक्तायान्तिमामपि ॥ २३ ॥ इससे मोक्ष की कामनावाले को दूसरे देवता की पूजा सर्वथा अयोग्य ही है और मोक्ष दान शक्ति केवल भग-वान् ही को है जैसा आचार प्रकाश से मत्स्यपुराण का वचन। आरोग्यं भास्करादिच्छेत् धनमिच्छेत् हुताशनात्। ज्ञानम्महेश्वरादिच्छेन्मोक्ष मिच्छेज्जनार्द्दनात् ॥ दक्ष स्मृति में भी अंत दशा में। योगमभ्यसमा-नस्य ध्रुवंकश्चिदुद्रुपद्रवः। विद्यावायदिवाविद्या शरणन्तु जनार्द्दनं। श्रुति भी कहती है यो ब्रम्हाणं विदधाति पूर्व्वं योवै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै तंहदेवमात्म बुद्धि प्रकाशं मुमुक्षुर्वैशरणमहम्प्रपद्ये। इससे एकांत चित्त होकर भगवत्सेवा ही मुख्य है। बिना अनन्यता के फल नहीं होता जैसा श्री मुख से गाते है। ९ वें अध्याय में। महात्मनस्तुमाम्पार्थ दैवीं-प्रकृतिमाश्रिताः। भजन्त्यनन्य मनसो ज्ञात्वाभूतादिमव्ययं ॥ १३ ॥ अन-न्याश्चिन्तयन्तो मां येजनाः पर्य्युपासते। तेषान्नित्याभियुक्तानां योग-क्षेमंवहाम्यहं ॥ २ ॥ अपिचेत्सु दुराचारो भजतेमामनन्यभाक्। साधु-रेव समन्तव्यस्सम्यग्व्यवहितोहिसः ॥ ३० ॥ क्षिप्रंभवति धर्मात्मा शश्व-च्छान्तिंनिगच्छति। कौन्तेयप्रतिजानीहि नमेभक्तः प्रणश्यति ॥ ३१ ॥ तो इन बातों से यह निश्चय है कि जो लोग मोक्ष चाहने वाले हैं सर्व्व

होता और दूसरे स्थान पर इन शब्दों का अर्थ अपना मुझे होय श्रीमद्भगवद्गीता ही में आत्मा अर्थ होय इसमें प्रमाण और प्रबल युक्ति दीजिये।

५२. इन ऊपर के लिखे हुए ग्रंथों को आप सब भाँति से जानते हैं कि नहीं। जो सब को न जानियेगा तो सर्वज्ञ न ठहरियेगा और जो सर्व्वज्ञता बिना कोई बात कहियेगा तो ७ प्रश्न का दोष पड़ेगा।

(इन ऊपर लिखे ग्रंथों को दयानंद प्रमाण मानते हैं)

५३. शिष्टाचार प्रमाण है कि नहीं।

५४. जो कहिये कि जो अविरुद्ध अर्थात् वेद में लिखा है वह प्रमाण बाकी अप्रमाण तो आप नित्य उठ के सब वेद में लिखी हुई बातें करते हैं तो इन सब बातों को वेद से सिद्ध कीजिये कि आप मट्टी लगाते हैं सो वेद में कहाँ लिखा है, आप कौपीन धारण करते हैं यह कहाँ लिखा है, मैं एक दिन आप के दर्शन को गया था उस दिन आप बाजार के लड्डू और गुलाबजामुन खाते थे यह कहाँ लिखा है और उस दिन आप पीतल की लोटिया में जल पीते थे यह वेद में कहाँ लिखा है, आप मूर्ति पूजन और पुराणों का निषेध करते हैं यह कहाँ लिखा है।

५५. जो कहिये यह तो मनुष्य की परंपरा प्राप्त ही है तो मूर्त्तिपूजन भी परंपरा प्राप्त है और शिष्टाचार अवश्य माननीय है और भी इसमें यह बात है कि मूर्त्ति पूजन का यद्यपि इस लोकमें कुछ फल न हो तथापि यदि परलोक में इसका फल सत्य हुआ तो आप फिर महापाप के भागी हुए और जो न सत्य हुआ तो हम लोगों की कुछ हानि नहीं बल्कि शिष्टाचार मानने से हमारी, प्रशंसाही होगी।

५६. ये यथा माम्प्रपद्यन्ते तां स्तथैव भजाम्यहं। इस भगवत् प्रतिज्ञा का क्या आशय है और यथा शब्द के अंतर देवतादिक और मूर्त्ति आदिक नहीं है इसमें प्रमाण पूर्व्वक नियम कहिये।

५७. कालाग्निरुद्रोपनिषत् और तापनीयादिक श्रुति को आप क्यों नहीं मानते इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

५८. सब त्रैवर्ण के वंश वेही हैं इस में क्या प्रमाण युक्ति पूर्व्वक कहिये।

स्कीलालधाराज्वले । रच्योनः पुरुषोपहार बलिभिर्देवो महाभैरवः ॥१॥
इस हेतु सतोमय श्रीकृष्ण की उपासना करो और वह आग्रह छोड़ो।

तेरहवें जो भैरव रत्नसिंहासन पर बैठेगा तो फिर श्रीकृष्णातिरिक्त और देवता का विशेष करके रुद्र का प्रसाद निर्माल्य ग्रहण का निषेध है। जैसा नारायण भट्ट कृत धर्म प्रवृत्ति में। पवित्रन्विष्णुनैवेद्यं सुरसिद्धर्षिभिस्मृतं। अन्यदेवस्य नैवेद्यम्भुक्त्वाचान्द्रायणं चरेत्। तथा स्कंदपुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य में भगवद् वाक्य। अन्येषान्देवतानाञ्च न गृह्णीयाद्यभक्षितं। अभक्तानांचपक्वन्न भुक्त्वा वैनरकं व्रजेत्। फिर स्मृत्यर्थ सार में और धर्मसिंधु के तीसरे परिच्छेद में। शैव सौर निर्माल्य भक्षणेचान्द्रायणी। प्रायश्चित्तेन्दु शेखर में भी। रुद्रनिर्म्माल्यस्पर्श सचैलस्नानं शैव सौर निर्म्माल्य भक्षणे चान्द्र'। इत्यादि। स्मृत्यर्थ सार में भी तथा श्राद्ध हेमाद्रि में स्कंदपुराण का वाक्य। स्पृष्ट्वारुद्रस्य निर्म्माल्यं वाससाआप्लुतश्शुचिः। प्रायश्चित्त मयूख में भी कालिका पुराण का यही वाक्य यों है। स्पृष्ट्वारुद्रस्यनिर्म्माल्यं सवासाआप्लुतश्शुचिः। शिवपुराण में भी शिव जी का वाक्य। अनर्हम्मभनैवेद्यम्पत्रम्पुष्पम्फलञ्जलं। इत्यादि वाक्यों से स्पष्ट है कि जो भैरव रत्न सिंहासन पर बैठेगा तो फिर महा प्रसाद कोई न लेगा और फिर भैरव की तृप्ति भी इन अन्नों से नहीं होती है उसकी तो मदिरा और मांस से होती है बिना वह दिये भैरव कभी न तृप्त होगा और जो मांस मदिरा दोगे तो भगवान विष्णु वहाँ न रहेंगे। देखो भैरव का मांस प्रिय होना कुल धर्म सार धृतमहामेरु तंत्र के वाक्य से स्पष्ट है। किं वेदैः किं पुराणैश्च किम्मन्त्रैश्चैवतर्पितः। चतुःषष्ट्युपचारैः किं कितवास्तवनादिभिः। विनाकुलोक्तविधिना रुद्रोभूतगणेश्वरः। न प्रीयते महादेवो भैरवः कुल कैरवः। शोणशोणितधारेण विमलेनपलेन च। प्रस्वदमेदपंकेन तथास्थिनिचयेन च। छिंधिभिंधीतिवाक्येन खड्गानांचालनेनच। मुण्डानांकर्त्तनेनैव रुण्डानांनर्त्तनेनहि। चटाचटेतिशब्देन अंगानाङ्कुंदुकेनच। मदिराग्रप्रवाहेन मधुकुंडेनवैतथा। वारुणीसरितयाचैव मासवेनाधरस्यच। श्यामानांदर्शनेचैव विलोमभगचुम्बने। मैथुनेमानिनीनां च कन्यानां कुचमर्द्दने। मुद्राणां भक्षणेचैव मत्स्यानाम्भोजनेनहि। गायकानान्तुगानेन नर्त्तकीनर्त्तनेन च। मृदंगवेणुढक्कानां वाद्येनतुमुलेन

तहक़ीक़ात-पुरी की तहकीकात

सं० १८२८

और जो आप कहते हैं कि पूजा शाक्त मत से होनी चाहिए यह तो केवल आप की तोतली बोली है नहीं तो विष्णु पूजा शाक्त रीति से आप न कहते और जगन्नाथ जी में वैष्णवी विधि तो उक्त महात्म्य के इस वाक्य से सिद्ध हैं। यत्सर्व्वम्वैष्णवङ्कर्म्म प्रतिमारिक कल्पनं। फिर। तेतुवैष्णवमार्ग्गोक्ताः महाभोगोपृथग्विधा इत्यादि और भैरवी विधि और भैरव देवता तो चांडालों के अंत्यजों के हैं इस बात को सुन के क्रोध मत कीजिए। ये कृत्य कल्पतरु नामक प्रसिद्ध स्मार्त्त ग्रंथ के धरे हुए देवी पुराण के वाक्य को सुनिए। वर्णाश्रमविभेदेन देवा-स्थाप्य तु नान्यथा। ब्रह्मातुब्रह्मणैस्थाप्यो गायत्री सहितः प्रभुः। चतुवर्णै-स्तथा विष्णुः प्रतिष्ठाप्यस्सुखार्थिभिः। भैरवोपियथावर्णैरन्त्यजानान्तथा-मतं॥ इत्यादि।

महाप्रसाद को सब लोग छूते हैं कुछ विचार नहीं करते यह सोचना तो केवल कूपमंडूकता है क्योंकि दक्षिण मे वरदराज शेषशायी इत्यादि जितने वैष्णव तीर्थ हैं सबमें क्षेत्र के भीतर स्पर्शास्पर्श नहीं मानते तो कहिये अब कहाँ आप भैरवी क्षेत्र बनाइएगा। थोड़ा सा द्रव्य व्यय करके दक्षिण की यात्रा कीजिए तो महाप्रसाद की महिमा प्रगट हो और प्रसाद की ऐसी महिमा तो शास्त्र सिद्ध ही है इसमें कौन सा संदेह हो सकता है जैसा सार संग्रह में पद्मपुराण का वाक्य। विष्णोर्न्निवेदितान्नं यो नश्नातिस्पर्शशंकया। वायसोविड्वराहश्च विष्ठा-यांजायतेक्रमिः॥ तथा नारायणभट्ट कृत धर्मप्रवृत्ति में—पवित्रान्विष्णु-नैवेद्यं सुर सिद्धर्षिभिः कृतं। नैवेद्य भक्षण विचार ग्रंथ में पद्मपुराण का वाक्य। रमाब्रह्मादयो देवास्सनकाद्याशुकादयः। श्री नृसिंह प्रसादोयं सर्व्वेगृह्णन्तु देवता॥ उत्कल खंड के माहात्म्य के ३८ वें अध्याय में। पाकसंस्कारकर्तॄणां संपर्काच्चनदुष्यति। पद्मायास्सन्निधानेन सर्व्वेतेशुचयस्मृताः॥ सार संग्रह में वाराह पुराण। नैवेद्यं जगदीशस्य चान्नपानादिकंतुयत्। भक्ष्याभक्ष्यविचारस्तु नास्तितद्भोजनेद्विजाः। ब्रह्मवन्निर्विकारं हि यथाविष्णुस्तथैवसः। विचार येप्रकुर्वन्ति तेनश्यन्ति-नराधमाः। उत्कल खंड के माहात्म्य के ३१ अध्याय में। चिरस्थमपि-संशुद्धं नीतंचदूर देशतः। नीलाद्रिमहोदय के माहात्म्य के अध्याय में। किमुक्तेनाचवहुनाचाण्डालस्पृष्टमेवहि। कुक्कुरस्यमुखाद्भ्रष्ट तग्राह्यन्दैव-

तहकीकात पुरी की तहकीकात
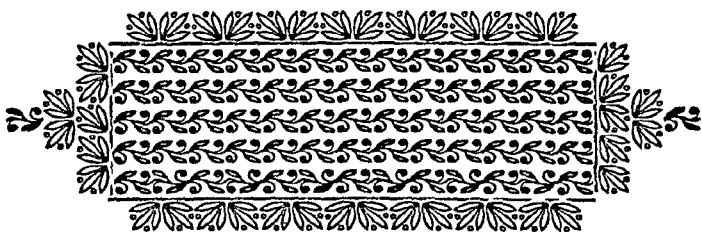
इसके पूर्व में कि मैं 'तहकीकात पुरी' पर कुछ अपनी अनुमति प्रकट करूँ, मैं उसी तहकीकात पर कुछ विचार करता हूँ जिसे देख के लोग उसका संपूर्ण वृत्तांत जान जायँ और धोखा न खायँ।

अब पहिले ही से विचार कीजिए इसका नाम 'तहकीकात पुरी' है धर्म विचार की तो पुस्तक और सबके पहिले फारसी शब्द 'बिस्मिल्ला गलत'। इसको जाने दीजिए पुस्तक से आरंभ कीजिए।

इस पुस्तक में पहिले ही लिखा है 'काशी धर्म सभा निर्णयः' अब कहिये किस मिती की धर्म सभा में निर्णय हुआ है कुछ दिन मिती भी है कि यों ही धर्म सभा का ध्यान करके निर्णय किया गया है। जो हो। आगे उसमें लिखा है, यथा नियमितं भोगराग वितरण संरक्षणाय श्री जगन्नाथ मंदिरे श्री जगन्नाथ समकाल स्थापित भैरवोत्पाटनं-कैश्चिद्विद्वेषिभिः कृतन्तत्स्थापनाय यत्र श्री मोहनलाल शर्मा पुरींगत्वा इत्यादि। वाह वाह क्या सुंदर संस्कृत वैयाकरण लोगों के देखने योग्य है क्या कहूँ स्थान थोड़ा है नहीं तो प्रति पद उद्धृत करके दिखा देता। इसका अर्थ यह है कि भैरव की मूर्त्ति श्री जगन्नाथ जी के समकाल से स्थापित थी सो अब उच्छिन्न हो गई। पंडित जी ने बिना जगन्नाथ

विचार कीजिये। इस तहकीकात की हिंदी के पूर्व दो श्लोक लिखे हैं जिनमें पहिलेका यह अर्थ है। हम लोग अद्वैतवादी विष्णु, शिवके ईश्वरता का विचार नहीं करते पर जो लोग शिव जी से द्वेष करते हैं उसकी हम दुरुक्ति काटते है। इसमें कोई विष्णु द्वेषकी शंका न करै। महाराज अद्वैतवादी जो आप पक्के नहीं हैं अभी कच्चे अद्वैतवादी हैं क्योंकि आप अभी साहेब लोगों के संग नहीं खाते। हाँ और यह तो कहिये कि जब आप अद्वैतवादी हैं तब आप को दुरुक्ति और उसका काटना और विष्णु द्वेष की शंका की डर कहाँ से आई क्योंकि-का विधिः को निषेधः। स्मरण कीजिये आप जैसे हों उससे मुझे कुछ काम नहीं परंतु पंडितों की तो समान दृष्टि चाहिए। शुनिचैवश्वपाके च पण्डितास्समदर्शिनः आप तो समान दृष्टि वाले हैं आप से और दुरुक्ति छेदन से क्या काम और फेर यह तो कहिये कि आप श्री जगन्नाथ जी के भोग का प्रबंध करते हैं कि शिव विष्णुका भेदाभेद करते हैं। यहाँ शिव का द्वेषी कौन है जिसकी दुरुक्ति काटने को आप प्रवर्त्त भए हैं। जो कहिये कि महंत और पंडे तो आप उनकी दुरुक्ति काटते हैं कि उनकी जीविका काटते हैं, यह केवल उन की मनोवृत्ति इसी बहाने प्रकट हो गई।

जो हो अब मैं आगे इस पुस्तक की भाषा पर विचार करता हूँ। पर इससे कोई यह न समझै कि मैं केवल द्वेष बुद्धि से लेखनी लिए हूँ। ऐसा कदापि नहीं क्योंकि जो विषय कि मे इस स्थान पर नहीं खंडन करता उनसे समझिये कि मेरी संमति है मुझे केवल इस पुस्तक के सब दफ़ों मे से केवल २, ३ और ६ दफे में कुछ कहना है। और शेष पर मैं पूर्ण रीति से संमति करता हूँ क्योंकि पुरी के और सब अन्याय उसमें ठीक ठीक लिखे हैं। जैसा दूसरे दफे में लिखते है कि 'श्री जगन्नाथ जी के मंदिर में रत्न सिंहासन पर प्राचीन काल से ५ मूर्ति स्थापित थीं जैसा श्री जगन्नाथ १ बलभद्र २ सुभद्रा ३ सुदर्शन ४ भैरव ५। और उस मूर्ति को वैष्णवों ने बंगला सन् १२०८ में उखाड़ के फेंक दिया।'

तीसरे दफा में फिर लिखते हैं कि पं० बस्तीराम जी के बयान से जाना गया कि मूर्ति पहिले से थी पर किसी भाँति उसका अंग भंग हो

श्रीहरिश्चंद्र चंद्रिका खं० २ सं०
८-१२ सन्० १८७५ ई० में
प्रकाशित

दसवें एक भगवान सर्व व्यापी है उसी की पूजा में सबकी पूजा हो जाती है जैसा—श्रुति । एकोदेवस्सर्व्वभूतेषु गूढ़ः सर्व व्यापी भूतान्तरात्मा । कर्माध्यक्षस्सर्वभूताधिवासस्साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ।

अनेक नाम उसी के हैं जैसा श्रुति । सुपर्णं विप्राः कवयोवचोभिरेकं संतं बहुधा कल्पयन्ति । जैसा दूसरी श्रुति में । इंद्रं मित्रम्वरुणमग्निमाहुरथा दिव्यः ससुपर्णो गरुत्मान । और यह एक देव भगवान नारायण ही हैं जैसा श्रुति स्मृति कहती हैं । एको हवै नारायणो आस । सर्वे वेदायत्पद मा मनन्ति । वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः । मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्ति धनंजय इत्यादि वाक्यों से स्पष्ट है तो अलग भैरव की पूजा अप्रयोजन है । उसी की पूजा में सबकी पूजा आ गई । जैसा पुराण में लिखते हैं—यथाहि स्कन्द शाखानान्तरोमूलावसेचनं । विष्णोराधनं तद्वत्सर्वेषामात्मनश्चहि । इत्यादि ।

ग्यारहवें भैरव शिव के स्वरूप हैं इनकी पूजा विना भस्म त्रिपुंड के नहीं जैसा विना भस्म त्रिपुंड्रेण विना रुद्राक्ष मालया । पूजितोपि महादेवो नस्यात् पुन्य फल प्रदः इत्यादि और विष्णु पूजन में त्रिपुंड का निषेध है जैसा आचार माधव के दूसरे अध्याय में बौधायन । ब्राह्मणानामयन्धर्मो यद्विष्णोर्लिंग धारणं । मदन पारिजात में ब्रह्मपुराण का वाक्य है उर्द्ध पुण्ड्रन्द्विजः कुर्यात् । ब्रह्मरात्र का वाक्य—धारयेत्क्षत्रियाद्योपिविष्णुभक्तोभवेद्यदि । निर्णय सिंधु मदन पारिजात । पृथ्वी चंद्रोदय में भी—उद्र्ध्वंञ्चतिलकंकुर्य्यान्नकुर्य्याद्वै तृपुंड्रकं ! आचारार्क कमलाकरान्हिक में भी उद्र्ध्वोपुंड्रविहीनस्य स्मशान सदृशम्मुखं । सार संग्रह में । ब्रह्मरात्र में भगवान का वाक्य योनधारयते मर्त्यो मामकं चिन्हमीदृशं । तंत्यजामि दुरात्मानंमदीयाज्ञाऽतिलंघिनं । तो इन वाक्यों से वैष्णवों को और विष्णुपूजन में ऊर्ध्वपुंड्र अवश्य आया 'भस्मी भवति तत्सर्व्वमूर्ध्वपुंड्रविनाकृते' और भैरव के पूजन में त्रिपुंड्र की नित्यता तो अब कहिये एक कालावच्छिन्न पूजा कैसे कीजियेगा और एक स्थान पर भैरव विष्णु की मूर्ति कैसे बैठाते हो ।

बारहवें भैरवादिक उग्र देवता की पूजा तो सब लोगों को करनी ही अयोग्य है फिर इनको रत्न सिंहासन पर बिठाना और जगन्नाथ जी

देव मय सर्वाराध्य मुमुक्षु शरण श्रीकृष्णचंद्र ही की पूजा उपासना करैं और आग्रह कलुष से कलंकित चित्त को इन वाक्यों से स्वच्छ करैं और जो किसी प्रकार की कामनादिक हो तो अपने घर में चाहैं जिसकी पूजा करैं। श्री जगन्नाथ जी के रत्न सिंहासन पर तो भैरव बैठाने का मनोर्थ चित्त से दूर करैं क्योंकि उपास्य एक भगवान कृष्ण चंद्र ही हैं दूसरा सवथा नहीं है जो इतने पर भी मेरी बात न मानै तो इन वाक्यों के समूह को कान खोल के सुनै। सार संग्रह में प्रजापति स्मृति। नारायणं परित्यज्य हृदिस्थं प्रभुमीश्वरं। योन्यमर्च्चयतेदेवः परबुध्यासपापभाक्॥ वशिष्ट भी। नारायणः परं ब्रह्म ब्राह्मणानांहिदैवत। भारत में भी। ब्रह्माणंशितिकण्ठच याश्चान्याः देवतास्मृताः। प्रतिबुद्धान सेवन्ते यस्मात्परिमितम्फलं। पद्मपुराण में भी नारायणः परं ब्रह्म विप्राणां दैवतं हरिः। सएवपूज्योविप्रानां पुरुषर्षभनेतरः। नान्यंदेवंनिरीक्षेत नान्यंदेवञ्चपूजयेत्। न चान्यंप्रणमेद्विप्रो नान्यदायतनम्विशेत्। वाराह पुराण में—यत्सत्वंसहरिर्देवो हरिस्तत्परमंपदं। सत्वं रजस्तमञ्चेति तृतयंचैतदुच्यते। और कहाँ तक लिंगपुराण में भी प्रसिद्ध वाक्य देख लीजिये। उसका प्रसाद कौन लेगा क्योंकि वह तो रुद्रांश है और रण्यगर्भोरसजा तमसा शंकर स्वयं। सत्वेनसर्वगोविष्णुस्सर्व्वात्मा सदसन्मयः। सात्विकैस्सेव्यतेविष्णुस्तामसैरेव शङ्करः। राजसैस्सेव्यते ब्रह्मा संकीर्णैश्च सरस्वती। इस वाक्य को दोनों कानों से सुनिए। बौद्धोरुद्रस्तथावायुर्दुर्गागणपभैरवाः। यमस्कन्दौनैऋतश्च तामसा देवता स्मृताः। फिर पद्म पुराण में। यक्षराक्षसभूताद्या कूष्माण्डागणभैरवाः। नार्चनीयासदादेवि विष्णु लोकमभीप्सभिः। रजस्तमोभिभूताना-मर्च्चनं प्रतिषिध्यते। रौरवन्नरकं यान्तियक्षभूतगणार्च्चनात्। और भैरव तो कापालिकों के देवता हैं उसका पूजन तो वैष्णव स्मार्त सब को निषिद्ध है जैसा महामेरुतंत्र में संप्रदाय देवता प्रसंग में। कुलाचार्य्यं स्तुवामानां सिद्धानाम्मुण्डमालिनी। तथा कापालिकानाञ्च देवता भैरव स्वयं। और कापालिकों के देवता भैरव हैं यह प्राचीन काव्यों में भी प्रसिद्ध है जैसा प्रबोध चंद्रोदय नाटक में तीसरे अंक में कापालिक का वाक्य। मस्तिष्कान्त्रबसाभिधारित महामांसाहुतिर्जुह्वतां। वन्हौ ब्रह्म कपाल कल्पित सुरापानेननः पारणा। सद्यः कृत्त कठोर कण्ठ विगल-

भोजन कराने से चंद्र सूर्य स्थिति काल पर्यंत ब्रह्मलोक में स्थिति होती है एवं संयत होकर यह पुराण श्रवण वा पाठ करने से सकल धर्मफल लभ्य होता है।

द्वितीय पद्मपुराण

पाँच खंड में ५५००० पचपन सहस्र श्लोक। पंच खंड, यथा १. सृष्टि खंड २. भूमि खंड ३ स्वर्ग खंड ४. पाताल खंड ५. उत्तर खंड।

प्रथम सृष्टिखंड—पुलस्त्य-भीष्म संवाद से सृष्ट्यादि का उपक्रम एवं नाना धर्म आख्यान और इतिहास कथन। इस खंड में १. पुष्कर माहात्म्य विस्तार २. ब्रह्मयज्ञ विधि ३. वेदपाठादि लक्षण ४. दान विवरण ५. पृथक् पृथक् व्रत कथन ६. शैल जाया विवरण ७. तार-काख्यान ८. गोमाहात्म्य ९. कालकेयादि दैत्य वध १०. ग्रहों की पूजा एवं दान विवरण है।

द्वितीय भूमि खंड—सूत-शौनक संवाद। १. पितृमातृ पूजा कथन २. शिवशर्मा कथा ३. सुव्रत चरित्र ४. वृत्रासुर वध ५. पृथक् वर्ण आख्यान ६. धर्म कथा ७. पितृशुश्रूषण कथन ८. नहुष कथा ९. ययाति चरित्र १०. गुरुतीर्थ निरूपण ११. राजा के सहित जैमिनि के संवाद में बहुत सी आश्चर्य कथा १२. अशोक सुंदरी की कथा १३. हुण्डदैत्य वध १४. कामदाख्यान १५. विहुण्ड वध १६. च्यवन-कुंजल का संवाद १७. सिद्धाख्यान १८. ग्रंथ की फल श्रुति।

तृतीय स्वर्ग खंड—ऋषि लोगों से सौति का कथा-प्रसंग १. ब्रह्मां-डोत्पत्ति कथन २. भूमिलोक संस्थान ३. तीर्थ आख्यान ४. नर्मदा की उत्पत्ति ५. नर्मदास्थ तीर्थ उपाख्यान ६. कुरुक्षेत्रादि तीर्थ कथन ७. कालिंदी की पुण्य कथा ८. काशी माहात्म्य ९. गया माहात्म्य १०. प्रयाग माहात्म्य ११. वर्णाश्रम धर्म एवं योग निरूपण १२. व्यास-जैमिनि संवाद की पुण्य कथा १३. समुद्र मंथन १४. व्रत कथन १५. श्रेष्ठ माहात्म्य स्तोत्र।

च। जय भैरव घोषेण प्रीतस्याच्चण्डिकापतिः। विनापञ्चमकारेण कुलस्यविधिनाविना। सर्व्वतः पूजितश्चापि नस्यात्तस्यफलप्रदः। तस्मात्सर्व्व प्रयत्नेन मांसमुद्रादिभिश्शिवं। नित्यं मां पूजयेद्वेत्रि भैरवं भय नाशनं। इति।

अब हम इन बातों को छोड़ के शुद्ध जगन्नाथमाहात्म्य से इस व्याख्या का विचार करते हैं। श्री जगन्नाथ माहात्म्य दो प्रचलित हैं एक तो छोटा लीलादि महोदय धृत सूत संहिता का दूसरा स्कंदपुराण के उत्कल खंड का। अब इन दोनों में तो कहीं रत्न सिंहासन पर भैरव का नाम नहीं है। इसके अतिरिक्त मनोरथ ग्रंथ धृत मिथ्या पुराण के आग्रह खंड के भैरव माहात्म्य में कहीं लिखा हो तो लिखा हो। अब इस स्थान पर मैं उन वाक्यों को लिखता हूँ सुनिये। सूत संहिता के माहात्म्य में तो रत्न सिंहासन पर सात मूर्ति लिखी हैं जैसा बलभद्र १ सुभद्रा २ श्री जगन्नाथ ३ चक्र ४ माधव ५ लक्ष्मी ६ सत्यभामा ७ 'एवं सप्तविधामूर्ति ब्रह्मणः करयोगतः' 'अयंसप्तविधामूर्तिविधायभगवान् प्रभुः। अवतीर्णसस्वयंवेद वेदश्चचतुर्भुजः' इत्यादि वाक्य प्रसिद्ध है और उसके पाँचवें अध्याय के अंत भाग में और छठे अध्याय के पूर्व में लिखे हैं पुस्तक लेके देख लीजिए। अब उत्कल खंड के माहात्म्य का वाक्य सुनिये। ५ अध्याय। एकदारुसमुत्पन्नाचतुर्द्धासम्भविष्यति। फिर उसी अध्याय में। नीलाचलगुहासंस्थै त्रिभ्रद्दारुमयम्बपुः। आस्तलोकोपकाराय वलेन च सुभद्रया। सुदर्शनेन चक्रेण दारुनानिर्म्मितेन च। फिर सातवें अध्याय में। तदादेशाद्दारुमयं प्रभोलिङ्गचतुष्टयं। फिर अठारहवें अध्याय में। चतुर्मूर्तिस्सभगवान् यथापूर्वमयोदितः। फिर भी। ऋकवेदरूपीहलधृक् सामरूपोनृकेशरी। यजुस्सृष्टिस्त्वियम्भद्राचक्रमाथर्व्वनस्मृतं। भेदेचतुर्द्धा भेष्टो यमेकराशिरभेदतः। इत्यादि इस इतने बड़े माहात्म्य में पुस्तक भर में भैरव का नाम कहीं नहीं है केवल एक स्थान पर पूजाङ्ग में क्षेत्रपालादि को बलिदान लिखा है दूसरे तीसवें अध्याय में मार्कंडेय की यात्रा में मार्कंडेय के मंत्र में भैरव शब्द पड़ा है और कहीं नहीं है फिर रत्नसिंहासन पर भैरव बैठना कहाँ रहा।

तृतीय विष्णु पुराण *

आदि एवं अंत दो भाग में २३००० तेईस सहस्र श्लोक, उसमें आदि भाग ६ अंश में विभक्त। मैत्रेय-पराशर संवाद वराह कल्पोपाख्यान प्रथमभाग प्रथम अंश १. सृष्टि का आदि कारण एवं सृष्टिवर्णन

*विष्णु पुराण २३ हजार श्लोक है परंतु भूलकर सुखसागर के बारहवें स्कंध में तीस हजार लिख दिया। यही नहीं वरंच चंद कवि ने भी रायसा में २३ हजार चार सौ लिख दिया परंतु रायसा के कई एक पुस्तकों में २३४०० और रामरत्न गीता में असी हजार लिख दिया परंतु तुलसी सदार्थ में तेईस हजार लिखा। मेरी राय से जिन जिन पुस्तकों में अंतर है उन सबको यहाँ लिख देता हूँ पाठकगण स्वयं विचार कर लें।

सुखसागर में मक्खनलाल ने लिखा है। ब्रह्मपुराण दश हजार वो पद्म पुराण पचपन हजार वो विष्णु पुराण तीस हजार वो शिवपुराण चौबीस हजार वो श्रीमद्भागवत पुराण अठारह हजार वो नारद पुराण पचीस हजार वो मार्कंडेय पुराण नौ हजार वो अग्नि पुराण पंद्रह हजार चार सौ वो लिंग पुराण ग्यारह हजार वो वाराह पुराण चौबीस हजार वो स्कंद पुराण इक्यासी हजार एक सौ वो वामन पुराण दश हजार वो कूर्म पुराण सत्रह हजार व मत्स्य पुराण चौदह हजार वो गरुड़ पुराण उन्नीस हजार वो ब्रह्मांण्ड पुराण बारह हजार श्लोक हैं।

पृथ्वीराज रासो में लिखा है—

पद्धरी—ब्रह्मन्यदेव सम वासुदेव। अष्टादस पुरान तिन कहे समेव ॥
तिन कहों नाम परिमान ग्रन्थि। जिन सुनत सुद्ध भव हो तन्नन्थि ॥
ब्रह्मह पुरान दस सहस सुद्धि। जिहि पढत सुनत तन तप्प छुद्धि ॥
पंचास पंचह हज्जार गन्नि। पद्मह पुरान तिन कह्यौ बन्नि ॥
तेईस सहस सै चारि जानि। विष्णू पुराण विष्णू समानि ॥
चौबीस सहस कहि शिवपुरान। तिहि पढ़त सुनत सम अमियपान ॥
अठार सहस भागवत भेव। करि पार परिष्यत सुक्कदेव ॥
नारद पुरान कहि पाव लाख। तहाँ मुक्ति मोद आनंद भाख ॥
मारकंड नाम तेईस हजार। पौरान पवित्र सो दुख हजार ॥
पंद्रह हजार संख्या सपूर। अग्नि पुरान पढ़ि पाप पूर ॥

तैरपि। तस्मात्तदन्नं सहसा प्राप्तमात्रतदाग्नियात्। विचारस्यनकर्तव्यान कर्तव्याकथञ्चन। जगन्नाथानमेतन्दैशुष्कं कृत्वाथभक्तितः। देशान्तरे जनोयस्तु भचेत्प्रतिदिनंद्विजा। सर्वपापविनिर्मुक्तस्सगच्छेतृपरमंपदं॥ इत्यादि अनेक प्रज्वलित वाक्यों से आग्रहियों का हृदयान्धकार नाश होय और साधु लोगों को आनंद होय और सर्व्वात्मा भगवान संसार की रक्षा करै।

सज्जन लोग इसमें की दुरुक्तियों को क्षमा करें क्योंकि यह तो प्रति उत्तर है स्वयं कथन नहीं है।

हरि ॐ शांतिः शांतिः शांतिः।

सब पुरान ऽश्लोक को, कही व्यास मर्याद ॥ ६ ॥
उपपुराण नाम—सनतकुमारहि जान पुनि, नरसिंह अरकन्व ।
दुर्वासा आश्चर्य गनि, नारद. कपिल प्रबन्ध ॥ १० ॥
मानव अरु ब्रह्मांड कहि, भार्गव गरुड़ बखान ।
माहेश्वर पुनि कालिका, सांबरु सूर्य पुरान ॥११॥
विष्णुपुरान परासरी पुनि, संचय सर्वार्थ ।
देवि भागवत मिलि भये, अष्टादस सब सार्थ ॥१२॥

श्री भागवत के १२ वें स्कंध के १३ वें अध्याय में लिखा है ।

ब्राह्मंदशसहस्राणिपाद्मंपंचोनषष्ठि च श्रीवैष्णवंत्रयोविंशच्चतुर्विंशति शैवकम् ॥४॥
दशाष्टौ श्री भागवतं नारदंपंचविंशति मारकंडेयंनववाह्नंतुदशपंच चतुः शतम् ॥५॥
चतुर्दशभविष्यंस्यात्तथापंचशतानि च दशाष्टौब्रह्मवैवर्तंलिंगमेकादशैवतु ॥ ६ ॥
चतुर्विंशतिवाराहमेकाशीतिसहस्रकम् स्कांदंशतंतथाचैकंवामनंदश कीर्तितम् ॥ ७ ॥
कौर्मंसप्तदशाख्यातंमात्स्यंतत्तुचतुर्दश एकोनविंशत्सौवर्णं ब्रह्माडंद्वादशैवतु ॥ ८ ॥
एवंपुराणसंदोहश्चतुर्लक्षउदाहृतः तत्राष्टदशसाहस्रं श्री भागवतमिष्टते ॥ ६ ॥

पुराणोंके नामों में भी कई एक लोगोंने पृथक् पृथक् लिखा है । यथा शब्द कोष में लिखा है—पुराण । (पुरा पुराना; पुर आगे जाना—अर्थात् जिसमें पुराने समय की बातें हों, अथवा जो पुराने समय में बने हों) पुराण वे ग्रंथ जिनमें से बहुतों को व्यास जी ने बनाए अथवा इकट्ठे किये । पुराण सब पद्य में लिखे हुए हैं और उनको हिंदू पवित्र मानते हैं । हर एक पुराण में विशेष करके इन पाँच बातों का वर्णन है । जैसे—सर्गश्च प्रति सर्गश्च वंशो· मनवन्तराणि च । वंशानु चरितं चैव पुराणं पंच लक्षणम् ॥

अर्थात् १ संसार की उत्पत्ति; २ प्रलय और प्रलय के पीछे फिर संसार की उत्पत्ति; ३ देवता और शूरवीरों की वंशावली ४ मनुष्यों का राज और ५ उनके वंश के लोगों का व्यवहार और चलन । पुराण अठारह हैं १ ब्रह्म पुराण २ पद्म पुराण ३ ब्रह्मांड पुराण ४ अग्नि पुराण ५ विष्णु पुराण ६ गरुड़ पुराण ७ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण ८ शिव पुराण ६ लिंग पुराण १० नारद पुराण ११ स्कंद पुराण १२ मार्कंडेय पुराण १३ भविष्यत् पुराण १४ मत्स्य पुराण १५ वाराह पुराण १६ कूर्म्म पुराण १७ वामन पुराण, श्रीमद्भागवत पुराण । इन सब पुराणों में चार लाख श्लोक गिने गए हैं और अठारह उपपुराण भी हैं । पुराण० पुराना; पहले का; सबसे पहला ।

अष्टादश पुराण की
उपक्रमणिका

सं० १६३२

वर्ष निरूपण ३. पाताल कथन ४. नरक कथन ५. सप्तस्वर्ग निरूपण ६. सूर्यादि संचार ७. भरत चरित्र ८. मुक्तिमार्ग निरूपण ९. निदाघादि ऋतु संवाद।

प्रथम भाग तृतीय अंश—१. मन्वन्तर कथा २. वेदव्यास अवतार ३. नरक उद्धार और कर्म ४. सगर एवं और्व संवाद में सर्व धर्म निरूपण ५. वर्णाश्रम निरूपण ६. श्राद्ध कल्प ७. सदाचार कथन ८. मायामोह की कथा।

प्रथम भाग चतुर्थ अंश—१. सूर्यवंश कथा २. सोमवंश कथा।

प्रथम भाग पंचम अंश—१. नाना राजा लोगों की कथा २. श्री कृष्णावतार प्रश्न ३. गोकुल कथा ४. श्रीकृष्ण बाल्य लीला पूतनादि वध ५. कौमार अघासुरादि वध ६. कैशोर कंस वधादि मथुरा लीला ७. यौवन द्वारावती लीला दैत्य वध एवं विवाह ८. भूभार हरण ९. अष्टावक्र उपाख्यान।

प्रथम भाग षष्ट अंश—१. कलिजात चरित्र २. चतुर्विध लय कथा ३. ब्रह्मज्ञान कथा ४. केशिध्वज कर्तृक खाण्डिक्य निरूपण।

द्वितीय भाग—सूत्र-शौनक संवाद—१. विष्णु धर्म कथन २. नाना धर्म कथन ३. पुण्य व्रत नियम एवं यम कथन ४. धर्म शास्त्र ५. अर्थ शास्त्र ६. वेदांत शास्त्र ७. ज्योतिः शास्त्र ८. वंश आख्यान ९. स्तव कथन १०. मनु सकल की कथा।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर आषाढ़ मास में घृत धेनु के साथ पौराणिक ब्राह्मण को दान करने से सूर्य के रथ पर आरोहण करके विष्णु धाम में गमन एवं भक्ति युक्त पाठ किंवा श्रवण करने से विष्णु लोक में वास औ दिव्य भोग प्राप्ति होती है इसकी अनुक्रमणिका पाठ वा श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण फल होता है।

—:o:—

भूमिका

व्यास जी के बनाए अठारह पुराण लोक में प्रसिद्ध हैं। काव्य वाल्मीकीय रामायण, इतिहास महाभारत, अठारह पुराण, अठारह उप पुराण, पाँच पंचरात्र और पाँच संहिता इनकी समष्टि की संज्ञा पुराण है। अठारह उपपुराण, यथा १. आदि पुराण (सनत्कुमारोक्त) २. नरसिंह पुराण ३. स्कंदपुराण ४. शिव धर्म (नंदीशप्रोक्त) ५. आश्चर्य पुराण (दुर्वासा का कहा) ६. नारदपुराण ७. कपिल पुराण ८. वामन पुराण ९. वरुण पुराण १०. शाम्ब पुराण ११. सौर पुराण १२. पराशर पुराण १३. भार्गव पुराण १४. मारीच पुराण १५. कालिका पुराण १६. देवी पुराण १७. माहेश्वर पुराण १८. पद्मपुराण। भास्कर, नंदिकेश्वर, रहस्य, उशना और ब्रह्मांड ये पाँच नाम उप पुराणों के और भी मिलते हैं।

१. वशिष्ट पंचरात्र २. नारदीय पंचरात्र ३. कपिल पंचरात्र ४. गौतमीय पंचरात्र और ५. सनत्कुमारीय पंचरात्र और ब्रह्म, शिव, गौतम, प्रह्लाद और सनत्कुमार ये पाँच संहिता हैं। हमारे गाहकों में बहुत से लोगों की इच्छा होगी कि परिश्रम भी न करें और जान भी लें कि अठारहो पुराणों में क्या है। हम उनकी इच्छा पूर्ण करने को पुराणों की यह उपक्रमणिका प्रकाश करते हैं, जिससे बहुत सहज में लोग जान जायगे कि चार लाख श्लोक समूह के अठारह टुकड़ों में क्या क्या विषय सन्निवेशित है।

षष्ठ स्कंध—१. अजामिल चरित्र २. दक्ष सृष्टि निरूपण ३. वृत्रासुर आख्यान ४. मरुत जन्म कथन।

सप्तम स्कंध—१. प्रह्लाद चरित्र २. वर्णाश्रम निरूपण ३. वासना कर्म इत्यादि कीर्तन।

अष्टम स्कंध—१. गजेंद्र मोक्षण २. मन्वन्तर निरूपण ३. समुद्र-मंथन ४. बलि वैभव एवं बंधन ५. मत्स्यावतार चरित्र।

नवम स्कंध—१. सूर्यवंश कथन २. रामायण ३. सोमवंश निरूपण।

दशमस्कंध—१. श्री कृष्ण बाल चरित्र २. कौमार चरित्र ३. व्रज स्थिति ४. कैशोर लीला ५. मथुरावास ६. यौवन ७. द्वारकास्थिति ८. भूभार-हरण।

एकादश स्कंध—१. वसुदेव-नारद संवाद २. यदु-दत्तात्रेय संवाद ३. श्रीकृष्ण-उद्धव संवाद ४. यादव मुक्ति कथन।

द्वादशस्कंध—१. भविष्य एवं कलि कथा २. परीक्षित मोक्ष ३. वेदशाखा कथन ४. मार्कंडेय तपस्या ५. सौरी विभूति कथन ६. पुराण संख्या कथन।

फलश्रुति—यह पुराण हेम सिंहासनस्थ करके भादो पूर्णिमा को प्रीति पूर्वक ब्राह्मण को वस्त्र एवं स्वर्ण सहित दान करने से भगवद्भक्ति लाभ होता है और श्रवण करने से अथवा श्रवण कराने से भक्ति और मुक्ति लाभ होता है और इसकी अनुक्रमणिका श्रवण करने किंवा कराने से संपूर्ण भागवत श्रवण फल लभ्य होता है।

षष्ठ नारद पुराण

पूर्व एवं उत्तर दो भाग में २५००० पचीस सहस्र श्लोक। पूर्व भाग चार पाद में विभक्त पूर्व भाग का प्रथम पाद—सूत-शौनक संवाद—१. सृष्टि संक्षेप वर्णन एवं नाना धर्म कथा।
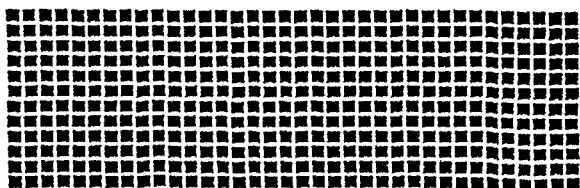
अष्टादशपुराणोपक्रमणिका

प्रथम ब्रह्मपुराण

यह पुराण पूर्व एवं उत्तर दो भाग में विभक्त है। अत्रस्थ श्लोक संख्या १०००० दस सहस्र। सूत-शौनक संवाद में नाना प्रसंग एवं विविध इतिहास वर्णित हैं।

पूर्व भाग—१. देवता एवं असुर गणों की उत्पत्ति वर्णन २. दक्षादि प्रजापति की उत्पत्ति वर्णन ३. सूर्यवंश वर्णन एवं तन्मध्य में श्रीराम का चतुर्व्यूह कथन ४. सोमवंश वर्णन तत् प्रसंग से श्रीकृष्ण चरित्र कथन ५. द्वीप कथन ६. वर्ष कथन ७. पाताल कथन ८. स्वर्ग कथन ९. नरक कथन १०. सूर्य स्तुति ११. पार्वती जन्म एवं विवाह कथन १२. दक्ष आख्यान १३. एकाम्र क्षेत्र कथन।

उत्तर भाग—१. पुरुषोत्तम वर्णन २. तीर्थयात्रा विस्तार कथन ३. यमलोक कथन ४. पितृश्राद्ध विधि ५. वर्णाश्रमाचार धर्मनिरूपण ६. विष्णु धर्म कथन ७. युगाख्यान ८. प्रलय कथन ९. योग कथन १०. सांख्य कथन ११. ब्रह्मवाद कथन १२. पुराणांश कथन।

फल श्रुति—यह पुराण लिखाकर वैशाख मास में स्वर्णयुक्त जल धेनु सहित पौराणिक ब्राह्मण को अर्चना पूर्वक दान करने एवं ब्राह्मण

सप्तम मार्कण्डेय पुराण

६००० नौ सहस्र श्लोक

१. मार्कंडेय कर्तृक जैमिनि का पक्षियों के निकट प्रेरण २. धर्म पक्षि सकल का जन्म निरूपण ३. इनकी पूर्व जन्म कथा ४. सूर्य क्रिया कथन ५. वलदेव तीर्थ यात्रा ६. द्रौपदेय कथा ७. हरिश्चंद्रपुण्य कथा ८. आडीवक नामक युद्ध कथा ६. पिता पुत्र कथा १०. दत्तात्रेय कथा ११. हैहय चरित्र एवं माहात्म्य १२. मदालसा कथा १३. अलर्क चरित्र १४. पष्टी संकीर्तन १५. नवप्रकार पुण्य कथा १६. कतिपय अंतकाल निर्देश १७. पक्षिसृष्टि निरूपण १८. रुद्रादि सृष्टि १६. द्वीप एवं वर्ष कथा २०. मनु कथा और अष्टम मन्वन्तर में देवी माहात्म्य कथा २१. प्रणवोत्पत्ति कथा वेद एवं तेज जन्म २२. मार्कंडेय जन्म और माहात्म्य २३. वैवस्वत चरित्र सहित वत्समीर चरित्र २४. खनित्र पुण्य कथा २५. अवचृत चरित्र २६. किमिच्छव्रत २७. अविनाश चरित्र २८. इक्ष्वाकु चरित्र २६. तुलसा चरित्र ३०. रामचंद्र कथा ३१. कुशवंश आख्यान ३२. सोमवंश की कथा ३३. नहुप की अद्भुत कथा ३४. ययाति चरित्र ३५. यदुवश कीर्तन ३६. श्रीकृष्ण बाल चरित्र ३७. मथुरा में श्रीकृष्ण चरित्र ३८. द्वारका चरित्र ३६. सकल अवतार कथा ४०. सांख्ययोग उद्देश ४१. प्रपच एव असत्य कीर्तन ४२. मार्कंडेय चरित्र ४३. पुराण श्रवण फल।

फल श्रुति—यह पुराण लिखाकर सुवर्ण संयुक्त ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मपद मिलता है एव भक्ति पूर्वक श्रवण करने से किंवा श्रवण कराने से मार्कंडेय तुल्य गति प्राप्ति और वांछित फल लाभ होता है।

—:※:—

चतुर्थ पातालखंड—१. श्रीराम का अश्वमेध एवं राज्याभिषेक कथन २. अगस्त्यादि का आगमन ३. पौलस्ति का उपाख्यान ४. अश्वमेघ करणाः देश ५. अश्वमेधीय घोटकगमन ६. नाना राज कथन ७. जगन्नाथ देव का वृत्तांत ८. वृंदावन का माहात्म्य ९. लीलावतारी की नित्य लीलानुकथन १०. वैशाख स्नान दान एवं अर्चन ११. धरा-वराह संवाद १२. यम एवं ब्राह्मण की कथा १३. राजा का आचरण १४. श्रीकृष्ण का स्तोत्र १५. शिवशंभु मिलन १६. दधीचि का आख्यान १७. भस्मधारण माहात्म्य १८. शिव माहात्म्य १९. इंद्रपुत्र का आख्यान २०. पुराणवित्‌जन की प्रशंसा २१. गौतम का आख्यान २२. गीता २३. भारद्वाज के आश्रम में श्रीरामचंद्र का कल्पांतरीय इतिहास कथन।

पंचम उत्तर खंड—शिव-पार्वती संवाद। १. पर्वत का आख्यान २. जालंधर की कथा ३. श्री शैलादि का विवरण ४. सगर का उपाख्यान ५. गंगा, प्रयाग, काशी एवं गया की पुण्यकथा ६. आम्रादि दानमाहात्म्य ७. महा द्वादशी व्रत कथन ८ चतुर्विंशति एकादशी माहात्म्य ९. विष्णुधर्म कथन १०. विष्णु सहस्रनाम ११. कार्तिक व्रत फल १२. माघस्नान फल १३. जंबूद्वीप के तीर्थ सकल का माहात्म्य १४. साभ्रमती महिमा १५. नृसिंहोत्पत्ति कथन १६. देवशर्मा का आख्यान १७. गीता माहात्म्य १८. भक्ति कामाहात्म्य १९. श्री भागवत माहात्म्य २०. इंद्रप्रस्थ की महिमा २१. नाना तीर्थ कथा २२, मंत्ररत्न की कथा २३. त्रिपाद विभूति का कथन २४. मत्स्यादि अवतार कथन २५. श्रीराम का शतनाम एवं तन्माहात्म्य २६. भृगु की विष्णु विभव परीक्षा।

फलश्रुति—यह पुराण लिखाकर स्वर्णयुक्त पुराणवित् ब्राह्मण को दान करने से अथवा श्रवण करने से वैष्णवधाम की प्राप्ति होती है एवं इसकी अनुक्रमणिका श्रवण करने से समुदाय पुराण-श्रवण का फल लाभ होता है।

—:*:—

स्वर्ग लाभ होता है एवं यह पुराण श्रद्धा करके श्रवण करने किंवा श्रवण कराने से सकल पाप क्षय होता है। और भक्ति युक्त होकर इस पुराण अनुक्रमणिका पाठ करने से सकल पुराण पाठ का फल लभ्य होता है।

—:❀:—

नवम भविष्य पुराण

पंच पर्व १४००० चौदह सहस्र श्लोक। अघोरकल्प वृत्तांत। नाना आश्चर्य कथा। प्रथम पर्व ब्राह्मण पर्व और द्वितीय तृतीय चतुर्थ एवं पचम पर्व एकत्र हैं।

प्रथम पर्व सूत शौनक संवाद—१. पुराण प्रश्न २. नाना आख्यान युक्त सूर्य चरित्र वर्णन ३. सृष्ट्यादि लक्षण ४. पुस्तक लेखक एवं लिखने का लक्षण ५. सकल प्रकार संस्थान लक्षण ६. प्रतिपदादि तिथि एवं सप्त कल्प कथन ७. विष्णु विषय अष्टम्यादि शेष कल्प कथा ८. शैव विषय इच्छाधीन भिन्न भिन्न कल्प कथन ९. सौर विषय शेष कथा १०. नाना आख्यान युक्त प्रतिसृष्टि नाम वर्णन ११. पुराण उपसंहार एवं पंच पर्व कथन। इस पर्व मे धर्म विषय में ब्रह्मा की महिमा का आधिक्य कथन है।

द्वितीय पर्व—भोग विषय में शिवमाहात्म्य कथन।

तृतीय पर्व—मोक्ष विषय में विष्णु का माहात्म्य कथन।

चतुर्थ विषय—चतुर्वर्ग विषय में सूर्य माहात्म्य कथन।

पचम पर्व—सर्व कथा युक्त प्रति सर्ग वर्णन। इस पुराण में अद्वितीय ब्रह्म का गुण तारतम्य रूप भेद से सकल देव की समता वर्णित है।

फल श्रुति—यह पुराण लिख कर पोषी पौर्णिमा को गुड़ धेनु स्वर्ण वस्त्र माल्य सहित पुराण पाठक ब्राह्मण को दान करने से एवं श्रवण किंवा पाठ करने से सकल घोर पाप से विमुक्ति एवं ब्रह्मपद प्राप्ति होती है और पुराण की अनुक्रमणिका पाठ किंवा श्रवण करने से भक्ति मुक्ति मिलती है।

—:❀:—

चवदै हजार सैं पाँच पट्ठि। भवपित पुरान सो पाप जड्डि ॥
ब्रह्मवैव्रत सहसं अठार। केवल गिनान कथि भक्ति सार ॥
रुद्रह हजार लिंगह पुरान। आनन्द अर्थ आगम गुरान ॥
चौबीस सहस बाराह भक्ति। पौरख पुरान तिन अमित सक्ति ॥
हजार इक्यासी कहि विवेक। स्कंद पुरान भव भक्ति एक ॥
इग्यारह सहस बावन सु अछ। पौरान सुनत सुधि अग्ग पछ ॥
सत्रह हजार कूरंम पुरान। भाषा विनोद प्राक्रम गुरान ॥
विया हजार मित मछ देव। विधि संख उद्धरे सेव भेव।
उनईस सहस गरुडह पुरान। श्रोतान वक्त भक्ति डरान।
ब्रह्मांड पुरान बारह सहंस। करि व्यास भक्ति प्रभु कंस नंस ॥
पंद्रह हजार अरु च्यारि लाख। सम ब्रह्म व्यास कहि चंद भाख ॥

तुलसी शब्दार्थ में लिखा है। अष्टादश पुराण—

दोहा—ब्रह्म ब्रह्मांड बावन सरस, ब्रह्मवैवर्त सुजान।
मार्कण्ड अस भविष्य ये, राजस कहँ पुरान ॥ १ ॥
नारद विष्णु बराह अरु, गरुड़ पद्म सुखसार।
भगवत रूपी भागवत, ये सात्विक निरधार ॥ २ ॥
मीन कूर्म अरु लिंग शिव, स्कंधरु अग्नि विचार।
तामस सिव के अंग ए, सुनतहि मिटै खमार ॥ ३ ॥
बावन ब्रह्म दस दस सहस, द्वादस है ब्रह्मण्ड।
ब्रह्मवैवर्त दस सहस पुनि, पचपन पद्म अखण्ड ॥ ४ ॥
पन्द्रह सहस सुचारि सत, मार्कण्डे सु पुरान।
साढ़े चौदह भविष्य है, तेइस विष्णु बखान ॥ ५ ॥
पंचविंस नारद कहत, सूकर चौबिस जान।
उनइस गरुड़ बखानिय, अठारह भगवत मान ॥ ६ ॥
मत्स सु चौदह सहस है, कूरम सत्रह होइ।
लिंग इकादस कहत है, चौबिस रुद्र जु सोइ ॥ ७ ॥
पावक पंद्रह सहस पुनि, चारि सैकरा आन।
स्कन्ध इक्यासी सहस अरु, इकसत करत बखान ॥ ८ ॥
तीन लाख अट्ठानवे, सहस वेद सत आद।

एकादश लिंग पुराण

पूर्व एवं उत्तर दो भाग ११००० ग्यारह सहस्र श्लोक। शिव माहात्म्य प्रकाशक अग्नि कल्प कथा।

पूर्व भाग—१. पुराणांत में सृष्टि विषयक संक्षेप प्रश्न २. योगाख्यान ३. कल्पाख्यान ४. लिंगउद्भव एवं पूजा ५. सनत्कुमार और शैलादि का संवाद ६. दधीचि चरित्र ७. युग धर्म निरूपण ८. कोष कथन ९. सूर्य वंश एवं सोम वंश वर्णन १०. सृष्टि वर्णन एवं त्रिपुर आख्यान ११. लिंग प्रतिष्ठा कथन १२. पशुपाश विमोक्षण १३. शिव व्रत १४. सदाचार निरूपण १५. प्रायश्चित्त कथन १६. श्रीशैल वर्णन १७. अंधक आख्यान १८. वाराह चरित्र १९. नृसिंह चरित्र २०. जलंधर-वध २१. शिव सहस्र नाम २२. दक्षयज्ञ विनाश २३. कामदेव दहन २४. गिरिजा सह शिव विवाह २५. विनायक आख्यान २६. शिवनृत्य २७. उपमन्यु कथा।

उत्तर भाग—१. विष्णु माहात्म्य २. अंबरीष कथा ३. सनत्कुमार-नन्दि संवाद ४. शिव माहात्म्य ५. स्नान यागादिक वर्णन ६. सूर्य पूजा विधि ७. शिव पूजा ८. बहुविध दानादि विधि ९. श्राद्धप्रकरण १०. मूर्ति प्रतिष्ठा प्रकरण ११. घोरतम कथा १२. व्रजेश्वरी महाविद्या गायत्री महिमा वर्णन १३. त्र्यम्बक माहात्म्य १४. पुराण श्रवण माहात्म्य।

फल श्रुति—यह पुराण लिखाकर फाल्गुनी पूर्णिमा को तिल धेनु सहित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से जरा मरण वर्जित हो कर शिव सायुज्य प्राप्त होती है और पुराण पाठ वा श्रवण करने से नाना भोग करके अंत में शिव लोक में गमन होता है और अनुक्रमणिका श्रवण किंवा पाठ करने से श्रोता एवं पाठक उभय शिवभक्त होते हैं एवं बहुकाल स्वर्ग भोग करते हैं।

—:※:—

द्वादश वाराह पुराण

पूर्व एवं उत्तर भाग २४००० चौबीस सहस्र श्लोक विष्णु माहात्म्य वर्णन भूमि-वराह संवाद मानवकल्प प्रसंग।

२. देवादि की उत्पत्ति ३. समुद्र मंथन ४. दक्षादि वर्णन ५. ध्रुव चरित्र ६. पृथु चरित्र ७. प्रचेता आख्यान ८. प्रह्लाद उपाख्यान ९. प्रह्लाद राज्य का पृथक् आख्यान।

प्रथम भाग द्वितीय अंश—१. प्रियव्रत उपाख्यान २. द्वीप और

संस्कृत कोष में लिखा है—पुराण पुं० पण अर्थात् व्यवहार दांव मुख्य धन धूतव्यवहार अर्थात् जुए का खेल विष्णु चिरंजीवी दीर्घायुः प्राण जीव के बनाए हुए अठारह पुराण तथा च प्रमाणम्। श्लोकमद्वयं द्वयं चैव भत्रयंवचतुष्टयम्। अनापलिंगकूस्कानि पुराणानि पृथक् पृथक्॥ मार्कंडेय पुराण १ मत्स्य पुराण २ भविष्योत्तर पुराण ३ भागवत पुराण ४ ब्रह्मांड पुराण ५ ब्रह्मवैवर्त पुराण ६ ब्रह्मोत्तर पुराण ७ वाराह पुराण ८ वामन पुराण ९ वायुपुराण १० विष्णु पुराण ११ अग्नि पुराण १२ नारद पुराण १३ पद्मपुराण १४ लिंगपुराण १५ गरुड़ पुराण १६ कूर्मपुराण १७ स्कंद पुराण १८

शिवपुराण के उलथा में शिवसिंह ने यों लिखा है। पुराण अठारह हैं और उपपुराण भी अठारह हैं जिनके नाम यह हैं पद्म १ स्कंद २ गरुड ३ मत्स्य ४ वायु ५ ब्रह्मांड ६ लिंग ७ अग्नि ८ कूर्म ९ वामन १० नारदीय ११ विष्णु १२ भविष्योत्तर १३ मार्कंडेय १४ वाराह १५ भारत १६ ब्रह्मवैवर्तक १७ भागवत १८। उपपुराण—काली १ शाम्ब २ सनत्कुमार ३ वरुण ४ मारीच ५ नंदी ६ शिव ७ दुर्वासा ८ मुनि ९ नारदीय १० कपिल ११ सौरि १२ माहेश्वरी १३ शुक्र १४ भार्गव १५ नृसिंह १६ धर्म १७ पाराशर १८।

अथ श्लोक अष्टादश पुराणे।

पद्म स्कंद विहंग मत्स्य पवनं ब्रह्मांडलिंगाग्नयः।
कूर्मोवामन नारदीयसहितं विष्णुं भविष्योत्तरं॥
मार्कण्डेय वराह भारतयुतः श्री ब्रह्म वैवर्त्तकः।
श्रीमद्भागवतं दिशंतु परमं श्रेयः पुराणानिवै॥ १॥

यथा अष्टादश उपपुराणे।

काली सांब सनत्कुमारवरुणं मारीचनंदीशिवं।
दुर्वासांमुनिनारदीय कपिलं शौरिं च माहेश्वरी॥
शुक्रं भार्गवकंनृसिंहपरमं धर्म्मं च पाराशरं।
कुर्वन्त्युपपुराणकानिसततेसम्मीलितेऽष्टादश ॥ २॥

कासुर युद्ध ६. पाशुपत आख्यान १०. चंडाख्यान ११. दूत प्रवर्तन १२. नारद समागम १३. कुमार माहात्म्य १४. पंचतीर्थ कथा १५. धर्म नृपाख्यान १६. नदी एवं सागर कीर्त्तन १७. इंद्रद्युम्न कथा १८. नाड़ी जंघ कथा १६. पृथ्वी प्रादुर्भाव २०. दमनक कथा २१. महीसागर संयोग २२. कुमार कथा २३. नाना आख्यान युक्त तारक युद्ध २४. तारकवध २५. पंचलिंग निवेश २६. द्वीपाख्यान २७. उर्द्धलोक स्थिति २८. ब्रह्मांड स्थिति एवं परिमाण २६. बर्करेश कथा ३०. महाकाल समुद्भव एवं अद्भुत कथा ३१. वासुदेव माहात्म्य ३२. करितीर्थ पर्वान ३३. नाना तीर्थ कथा ३४. गुप्तक्षेत्र कथा ३५. पांडवों का पुण्य कथा ३६. महाविद्या प्रसाधन ३७. तीर्थयात्रा समाप्ति ३८. अरुणाचल माहात्म्य ३६. सनक एवं ब्रह्मा की कथा ४०. गौरी तपस्या एवं तीर्थ निरूपण ४१. महिषासुर के पुत्र का आख्यान एवं उसका अद्भुत वध ४२. शोनाचल में भगवती का नित्य अवस्थान कथन।

द्वितीय वैष्णव खंड—१. भूमि वराह आख्यान रोचक कुद्ध माहात्म्य २. कमला कथा ३. श्री निवास स्थिति ४. कुलाल आख्यान ५. सुवर्ण मुख कथा ६. नानाख्यान युक्त भारद्वाज कथा १०. अंबरीप कथा ११. इंद्रद्युम्न आख्यान १२. विद्युनति कथा १३. जैमिनी कथा १४. नारद कथा १५. नीलकंठ आख्यान १६. नृसिंह वर्णन १७. राजा की अश्वमेध कथा एवं ब्रह्मलोक गति १८. रथयात्रा विधि एवं जन्म और स्नान यात्रा विधि १६. दक्षिणामूर्ति आख्यान २० गुंडिचा आख्यान २१. रथ रक्षा विधान २२. शयनोत्सव वर्णन २३. मंत्रोक्त श्वेतोपाख्यान २४. शक्रोत्सव २५. दोलोत्सव २६. भगवान का सांवत्सरिक वृत कथन २७. विष्णु पूजा २८. मोक्ष साधन मंत्रोक्त नाना योग निरूपण २६. दशावतार कथा ३०. स्नानादि कीर्तन ३१. बदरिका माहात्म्य ३२. वैनतेय शिला जात अग्न्यादि तीर्थ माहात्म्य ३३. भगवान के वास का कारण कपालमोचन तीर्थ कथा ३४. पंचधारा तीर्थ कथा ३५. मेरु संस्थापन ३६. कार्तिक माहात्म्य में मदालसा माहात्म्य ३७. धूम्रकोश आख्यान ३८. कार्तिक मास का दिन कृत्य ३६. भीष्म पंचक वृत आख्यान ४०. तीर्थ माहात्म्य प्रसंग से स्नान विधान ४१. पुत्रादि कीर्तन एवं मालाधार

चतुर्थ वायुपुराण

पूर्व और उत्तर दो खंड २४००० चौबीस सहस्र श्लोक वायु ने श्वेत कल्प प्रसंग से सकल धर्म कहा है।

पूर्व भाग—१. स्वर्गादि लक्षण विस्तार कथन २. सकल मन्वन्तर के राजगण का वंश कथन ३. गयासुर वध ४. मास गणों की महिमा एवं माघ मास की विशेष महिमा ५. दान धर्म एवं राज धर्म विस्तार कथन ६. भूचर, पातालचर, दिक्चर एवं आकाशचर विवरण ७. व्रत विवरण।

उत्तर भाग १. नर्मदा तीर्थ कथन २. शिव संहिता कथन।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर गुड़ धेनु के साथ गृहस्थ ब्राह्मण को श्रावण मास में दान करने से चतुर्दश इंद्र परिमित काल रुद्रलोक में वास नियम एव हविष्य से पुराण श्रवण करने से वा श्रवण कराने से रुद्र तुल्यता प्राप्ति। पुराण की अनुक्रमणिका सुनने से समुदाय पुराण श्रवण फल प्राप्त होता है।

—:※:—

पंचम श्रीभागवत

द्वादशस्कंध १८००० अठारह सहस्र श्लोक सारस्वत कल्पीय कथा।

प्रथमस्कंध—१. सूत और ऋषियों का मिलन २. व्यासदेव का पुण्य चरित्र ३. पांडव का चरित्र ४. परीक्षित का उपाख्यान।

द्वितीयस्कंध—१. परीक्षित शुक संवाद से सृष्टिद्वयनिरूपण २. ब्रह्मा नारद सवाद से अवतार कथन ३. पुराण लक्षण ४. सृष्टि प्रकरण कथन।

तृतीय स्कंध—१. विदुर चरित्र एवं मैत्रेय मिलन २. ब्रह्मा सृष्टि प्रकरण ३. कपिल सांख्य कथन।

चतुर्थ स्कंध—१. सती चरित्र २. ध्रुव चरित्र ३. पृथुचरित्र. ४. प्राचीनवर्हि आख्यान।

पंचम स्कंध—१. प्रियव्रतचरित्र एवं उनका वंश कथन २. ब्रह्मांडान्तर्गत लोक सकल का वृत्तांत ३. नरक स्थिति कथन।

निरूपण ३१. लोहासुर आख्यान ३२. गंगाकूप निरूपण ३३. श्रीराम चरित्र ३४. सत्यमंदिर वर्णन ३५. जीर्णमंदिरादि उद्धार कथा ३६. शासन प्रतिपादन ३७. जाति भेद कथन ३८. स्मृति धर्म निरूपण ३९. नानाख्यान से वैष्णव धर्म निरूपण ४०. चातुर्मास्य सकल धर्म निरूपण ४१. दानवृत महिमा ४२. तपस्या पूजा एवं सच्छत्र कथन ४३. प्रकृति आख्यान ४४. शालिग्राम निरूपण ४५. तारकासुर वध उपाय ४६. लक्ष्मी अर्चन एवं महिमा ४७. विष्णु की शाप से वृक्षत्व प्राप्ति एवं पार्वती का अनुनय ४८. महादेव का तांडवनृत्य रामनाम निरूपण ४९. हरलिंग पतन ५०. जवन कथा ५१. पार्वती जन्म और चरित्र ५२. तारक वध ५३. प्रणव ऐश्वर्य कथन ५४. तारक चरित्र ५५. दक्ष यज्ञ समाप्ति ५६. द्वादश अक्षर निरूपण ५७. ज्ञान योग आख्यान ५८. द्वादश आदित्य महिमा ५९. श्रावणादि पुण्य कथा।

तृतीय ब्रह्म खंड उत्तर भाग—१. शिव का अद्भुत माहात्म्य २. पंचाक्षर महिमा ३. गोकर्ण महिमा ४. शिवरात्रि महिमा ५. प्रदोष व्रत कीर्तन ६. सोमवार व्रत ७. सीमंतिनी कथा ८. भद्रायु उत्पत्ति कथन ९. सदाचार १०. शिव धर्म कथा ११. भद्रायु विवाह एवं महिमा १२. भस्म माहात्म्य १३. शवराख्यान १४. उमा माहेश्वर वृत १५. रुद्राक्ष माहात्म्य १६. रुद्राध्याय माहात्म्य श्रवणादि पुण्य कथन।

चतुर्थ काशी खंड विंध्य नारद संवाद—१. सत्य लोक प्रभाव २. अगस्त्याश्रम में देवता सकल का आगमन ३. पतिव्रता चरित्र ४. तीर्थ यात्रा प्रशंसा ५. सप्तपुरी आख्यान ६. यमपुरी निरूपण ७. शिव शर्मा की भुवलोक इंद्रलोक अग्नि लोक प्राप्ति ८. अग्नि उद्भव ९. क्रव्याद वरुण संभव १०. गंधवती अलका पुरी एवं ईश्वरी का उद्भव और चंद्र मंगल बुध एवं रवि आदि लोक का उद्भव ११. सप्त ऋषि एवं ध्रुव लोक का वर्णन १२. ध्रुवलोक की पुण्य कथा १३. सत्य लोक निरूपण १४. स्कंध और अगस्त्य का अलाप १५ मणिकर्णिका का उद्भव १६. गंगा का प्रभाव एवं सहस्र नाम १७. वारानसी प्रशंसा १८. भैरव आविर्भाव १९. दंडपाणि एवं ज्ञान रवि का उद्भव २०. कलावती आख्यान २१. सदाचार निरूपण २२. ब्रह्मचारि कथा २३. स्त्री लक्षण कथन २४. कृत्याकृत्य निर्देश २५. अविमुक्तेश्वर वर्णन २७. गृहस्थ एवं

पूर्व भाग द्वितीय पाद—१. मोक्ष धर्म कथन मोक्षोपाय निरूपण २. वेदांग कथन ३. सनन्दन कर्तृक नारद प्रति शुकोत्पत्ति कथन ४. महातंत्र से पशुपाश विमोचन ५. मंत्रशोधन ६. दीक्षा ७. मंत्रोद्धार पूजा प्रयोग कवच विष्णु सहस्रनाम एवं स्तोत्र ८. गणेश सूर्य विष्णु शिव एवं शक्ति का क्रम से उपाख्यान कथन।

पूर्व भाग तृतीय पाद—१. नारद और सनत्कुमार सवाद २. पुराण लक्षण प्रमाण एवं दान काल कथन ३. चैत्रादि मास की प्रतिपदादि तिथि व्रत विस्तार कथन।

पूर्वभाग चतुर्थ पाद—१. सनातन कर्तृक नारद प्रति बृहदाख्यान कथन।

उत्तर भाग—१. एकादशी व्रत विषयक प्रश्न २. वशिष्ट एवं मांधाता का संवाद ३. रुक्मांगद की कथा ४. मोहिनी की उत्पत्ति एवं संवाद ५. मोहिनी प्रति वसु का शाप एवं उद्धार ६. गंगा की पुण्य कथा ७. गया यात्रा ८. काशी माहात्म्य ९. पुरुषोत्तम वर्णन १०. क्षेत्रयात्रा एवं अन्यान्य बहु कथा ११. प्रयाग माहात्म्य १२. कुरुक्षेत्र माहात्म्य १३. हरिद्वार माहात्म्य १४. कामोदा आख्यान १५. बदरी तीर्थ माहात्म्य १६. कामाख्या माहात्म्य १७. प्रभास माहात्म्य १८. पुराण आख्यान १९. गौतमाख्यान २०. वेदपादस्तव २१. गोकर्ण क्षेत्र माहात्म्य २२. लक्षण आख्यान २३. सेतु माहात्म्य २४. नर्मदा माहात्म्य २५. अवंती माहात्म्य २६. मथुरा माहात्म्य २७. वृंदावन माहात्म्य २८. ब्रह्मा के निकट वसु का गमन २९. मोहिनी चरित्र कथन।

फल श्रुति—यह पुराण श्रवण करने किंवा श्रवण कराने से ब्रह्म धाम प्राप्ति होती है और अनुक्रमणिका श्रवण करने से किंवा श्रवण कराने से स्वर्ग लाभ होता है और यह पुराण आश्विनी पूर्णिमा को सप्त धेनु युक्त उत्तम ब्राह्मण को दान करने से मोक्ष प्राप्ति होती है।

—:※:—
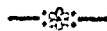
यिनी ३७. पद्मावती ३८. कूर्मद्वती ३९. रमावती नामक तीर्थ उपाख्यान ४०. विशाला एवं प्रतिकल्प ४१. ज्वर शांतिक तीर्थ कथन ४२. शिप्रा-स्नानादि फल ४३. नाग कृत शिव स्तुति ४४. हिरण्याक्ष वधाख्यान ४५. सुंदरकुंड ४६. नील गंगा ४७. पुष्कर ४८. विंध्यवासनी ४९. पुरुषोत्तम ५०. अविनाश ५१. अघ नाशन ५२. गोमती ५३. वामन एवं कुंड तीर्थ वर्णन ५४. विष्णु सहस्र नाम ५५. काल भैरव तीर्थ वीरेश्वर सरोवर आख्यान ५६. नाग पंचमी में नृसिंह महिमा वर्णन ५७. जयंतिका कुठारेश्वर यात्रा ५८. देवसाधक ५९. कर्कराज ६०. विघ्नेशादि सुरोहण तीर्थ विवरण ६१. रुद्रकुंडादि बहुतीर्थ निरूपण ६२. अष्ट-तीर्थ निरूपण ६३. रेवा माहात्म्य ६४. धर्म पुत्र का वैराग्य वशतः मार्कंडेय संगम ६५. प्रागलय उपाख्यान ६६. अमृता कीर्तन ६७. प्रति कल्प में नर्मदा वर्णन ६८. आर्यस्तव ६९. नर्मदास्तव ७०. कालरात्रि कथा ७१. महादेव स्तुति ७२. पृथक् पृथक् कल्प की अद्भुत कथा ७३. विशल्याख्यान ७४. जालेश्वर कथा ७५. गौरीव्रत ७६. त्रिपुर दहन कथा ७७. देहपात विधान ७८. कावेरी संगम ७९. दारुतीर्थ ब्रह्माभिन्न ईश्वर कथा ८०. अग्नि ८१. रवि ८२. मेघनाद ८३. द्विदारुक ८४. देव ८५. नर्मदेश्वर ८६. कपिलाख्य ८७. करंजक ८८. कुंडलेश्वर ८९. पिप्पलाद ९०. विमलेश्वरादि तीर्थ कथन ९१. शचीहरण आख्यान ९२. मंदक वध ९३. शूलभेद उद्भव ९४. पृथक् दान धर्म कथन ९५. दीर्घ तापस आख्यान ९६. ऋष्य शृंग कथा ९७. चित्रसेन कथा ९८. काशीराज मोक्षण ९९. देवशिला आख्यान १००. शबरी चरित्र १०१. व्याधाख्यान १०२. पुष्करिण्यर्क १०३. तापितेश्वर १०४. शक्र १०५. करोटीक १०६. कुमारेश १०७. अगस्त्येश १०८. मातृज १०९. लोकेश ११०. धनदेश १११. मंगलेश ११२. कामज ११३. नागेश ११४. गोपार ११५. गौतम ११६. शंखचूडज ११७. नारदेश ११८. नंदिकेश ११९. वरुणेश्वर १२०. दधि स्कंद १२१. हनुमंतेश्वर १२२. रामेश्वर १२३. सोमेश १२४. पिंगलेश्वर १२५. ऋणमोक्ष १२६. कपिलेश्वर १२७. पूतिकेश्वर १२८. जलेशाय १२९. चांडार्क १३०. यम १३१. कलहडीश १३२. नादिक १३३. नारायण १३४. कोटीश्वर १३५. व्यास १३६. प्रभासिका १३७. नागेश्वर १३८. संकर्षण १३९. मन्मथेश्वर १४०. एरंडी संगम १४१. सुवर्णशील

अष्टम अग्निपुराण

१५००० पंद्रह सहस्र श्लोक ईशानकल्प कथा वशिष्ठ नल उपाख्यान।

१. पुराण प्रश्न २. सर्व अवतार कथा ३. सृष्टि प्रकरण कथन ४. विष्णु पूजादि विधि ५. अग्नि पूजा मंत्र और मुद्रादि लक्षण ६. दीक्षा विधान ७. अभिषेक कथन ८. मंडल करण लक्षण ९. कुशा-मार्जन १० पवित्रारोपण विधि ११. देवालयकरण विधि १२. शाल-ग्राम पूजा एवं लक्षण कथन १३. प्रतिष्ठा प्रकरण १४. न्यासादि विधि १५. विनायक दीक्षा विधि १६. अन्यान्य कथन १७. देवप्रतिष्ठा विधि १८. ब्रह्मांड निरूपण १९. गंगादि तीर्थ माहात्म्य २०. द्वीप वर्णन २१. उर्द्ध एव अधोलोक रचना २२. ज्योतिषचक्र निरूपण २३. ज्योतिष शास्त्र वर्णन २४. युद्ध जयकरण शास्त्र २५. षट्कर्म कथा २६. मंत्रयत्र औषध प्रकरण २७. कुब्जिकादि कथन २८. छः प्रकार के न्यास की विधि २९. कोटि होम विधान एवं विस्तार निरूपण ३० ब्रह्मचर्य धर्म ३१. श्राद्धकल्प विधि ३२. ग्रहयज्ञ ३३. वेदोक्त एवं स्मृत्युक्त कर्म ३४. प्रायश्चित्त कथन ३५. तिथि व्रतादि कथन ३६. वार व्रत ३७. नक्षत्र व्रत ३८. मास वृत ३९. दीपदान विधि ४०. नूतन व्यूहार्चन प्रकरण ४१. नरक निरूपण ४२. वृत एवं दान निरूपण ४३. नाड़ी चक्रवर्णन ४४. संध्या विधि ४५. गायत्री अर्थ ४६. शिवलिंग स्तोत्र ५०. शकु-न्यादि शुभाशुभ दृष्टि निरूपण ५१. मडलादि निर्देश ५२. रणदीक्षा विधि ५३. श्री रामोक्तनीति ५४. रत्नलक्षण ५५. धनुर्विद्या ५६. व्यव-हार निरूपण ५७. देवासुर विवर्धन आख्यान ५८. आयुर्वेद निरूपण ५९. गजादि की रोग चिकित्सा एव आरोग्य कथन ६०. गो अश्वादि की चिकित्सा ६१. नाना पूजा प्रकरण ६२. विविध शांति ६३. छंद शास्त्र ६४. साहित्य शास्त्र ६५. एकार्णवादि शास्त्रसमाख्यान ६६. प्रसिद्ध शिष्टानुशासन ६७. धनागार एवं सृष्ट्यादि वर्ग ६८. प्रलय लक्षण ६९. शारीरक निरूपण ७०. नरक वर्णन ७१. योग शास्त्र ७२. ब्रह्मज्ञान ७३. पुराण श्रवण माहात्म्य।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर अग्रहायण मास में सुवर्ण कमल सहित अथवा तिल धेनु सहित पुराणवित् ब्राह्मण को दान करने से

३. विश्वामित्र माहात्म्य ४. त्रिशंकु स्वर्ग गति ५. हाटकेश्वर माहात्म्य ६. वृत्रासुर वध ७. नागबिल्व ८. शंखतीर्थ कथा ६. अचलेश्वर वर्णन १०. चमत्कार पुराख्यान ११. गयशीर्ष १२. बालसख्य १३. बालमंड १४. मृगाह्वय १५. विष्णुपाद १६. गोकर्ण १७. युगरूप १८. समाश्रय १६. सिद्धेश्वर २०. नागसरोवर २१. सप्तार्षेय २२. अगस्त्य २३. भ्रूण-गर्तनेश २४. भैष्म औ इन्दुवैर और अर्क २५. सार्मिष्ट २६. शोभनार्थ २७. दौगर्भमान सजकेश्वर तीर्थ वर्णन २८. जमदग्नि उपाख्यान २६. नैः क्षत्रिय कथा ३०. रामह्रद ३१. नागपुर ३२. षड्लिंग ३३. यज्ञभू ३४. मुंडिरादि ३५. त्रिकार्क ३६. सती परिणयेश ३७. यागेश वालि-खिल्य ३८. गारुड़ तीर्थ कथन ३६. लक्ष्मी सप्तविंशति शाप कथन ४०. सोमप्रसाद कथन ४१. अम्बावृद्ध ४२. पादुकाख्य ४३. आग्नेय ४४. ब्रह्मकुंड ४५. गोमुख ४६. लोह पष्टयाख्य ४७. अाजावालेश्वरी ४८. शालेश्वर ४६. राजवापी ५०. रामेश्वर ५१. लक्ष्मणेश्वर ५२. कुशेश्वर ५३. लवेश्वर तीर्थ वर्णन ५४. लिंग उपाख्यान ५५. अष्ट-षष्टि समाख्यान ५६. दमयंती एवं त्रिजातक उपाख्यान ५७. रेवती ५८. भट्टिका तीर्थ ५६. क्षेमंकरी ६०. केदार ६१. शुक्ल ६२. सुखारक ६३. सत्य संधेश्वर तीर्थ आख्यान ६४. कर्णोत्पला नदी कथा ६५. अटेश्वर ६६. याज्ञवल्क्य ६७. गौरी ६८. गणेश तीर्थ कथा ६६. वास्तुपदा आख्यान ७०. अजाग्रह कथा ७१. सौभाग्यादि कथा ७२. शूलेश्वर कथा ७३. धर्मराज कथा ७४. मिष्टान्नदेश्वर आख्यान ७५. गाणपत्य त्रय कथा ७६. जावालि चरित्र ७७. मकरेश्वर कथा ७८. कालेश्वरी ७६. अंधकोपाख्यान ८०. अप्सरा कुंड उपाख्यान ८१. पुष्पादित्य उपाख्यान ८२. रोहिताश्व उपाख्यान ८३. नागरोत्पत्ति कीर्तन ८४. भार्गव चरित्र ८५. विश्वामित्र ८६. सारस्वत चरित्र ८७. पैप्पलाद ८८. कंसारीश एवं ८६. पौण्ड तीर्थ वर्णन ६०. सावित्र्याख्यान सहित ब्रह्मा यज्ञ चरित्र एवं रैवत भर्तृ यज्ञाख्यान कथा ६१. मुख्य तीर्थ निरीक्षण ६२. कौरव क्षेत्र ६३. हाटकेश क्षेत्र ६४. प्रभास क्षेत्र उपाख्यान ६५. पौष्कर क्षेत्र ६६. नैमिष क्षेत्र ६७. धर्म अरण्य क्षेत्र ६८. वारानसी ६६. द्वारका १००. अवंती पुरी कथन १०१. वृंदावन १०२. खाण्डवा-रण्य १०३. अद्वैताख्य पुरी कथन १०४. कल्प १०५. शालग्राम एवं

दशम ब्रह्मवैवर्तपुराण

चार खंड १८००० अठारह सहस्र श्लोक। १. ब्रह्म खंड २. प्रकृति खंड ३. गणेश खंड ४. श्रीकृष्णजन्म खंड।

सूत-ऋषि संवाद प्रथम ब्रह्मखंड—१. सृष्टि प्रकरण २. नारद और ब्रह्मा विवाद एवं शापान्त ३. नारद का शिवलोक गमन एवं गान शिक्षा ४. शिवादेश से मरीचि के सहित नारद का सावर्णि प्रबोधार्थ सिद्धाश्रम में गमन।

द्वितीय प्रकृति खंड—१. सावर्णि-नारद संवाद २. श्रीकृष्ण माहात्म्य युक्त नानाख्यान ३. प्रकृति की अंश और कलाओं का माहात्म्य वर्णन ४. उनका गंगादि विस्तार और माहात्म्य वर्णन।

तृतीय गणेशखंड—१. गणेशजन्म प्रश्न २. पुण्यव्रत कथन ३. पार्वती कार्तिक एव गणेश जन्म ४. कार्त्तवीर्य चरित्र ५. परशुराम विवरण ६. जमदग्नि एवं गणेश का आश्चर्य विवाद।

चतुर्थ श्रीकृष्ण जन्म खंड—१. श्रीकृष्ण जन्म प्रश्न एवं जन्मकथा २. गोकुल गमन ३. पूतनादि वध ४. बाल्य-कौमार विविध लीला वर्णन ५. शरत्काल में गोपी सहित रास क्रीड़ा ६. श्री राधिका सहित निर्जन क्रीड़ा विस्तार वर्णन ७. अक्रूर सहित हरि मथुरा गमन ८. कंस वध ९. द्विज संस्कार १०. सांदीपनी गुरु निकट विद्योपार्जन ११. कालयवन वध १२ द्वारिका गमन १३. नरकादि वध वर्णन।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर माघ मास में धेनु सहित ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्त होती है एवं अज्ञान बंधन से मुक्ति होती है और पाठ किंवा श्रवण करने से संसार बंधन क्षय होता है तथा इसी पुराण की अनुक्रमणिका पाठ करने से श्रीकृष्ण के प्रसाद से वांछित फल लाभ होता है।

—:❀:—

६४. नंदार्क तीर्थ ६५. त्रितयकूप कीर्तन ६६. शशपान ६७. पर्णार्क ६८. अंशुमती की अद्भुत कथा ६९. वाराह ७०. स्वामि वृत्तांत ७१. छाया-लिंगाख्य ७२. गुल्फ कथा ७३. कनक नन्दा ७४. कुंती एवं ७५. गणेश कथा ७६. चमसोद्भेद ७७. विदुर ७८. त्रिलोकेश कथा ७९. मंचनेश ८०. त्रैपुरेश ८१. षण्ड तीर्थ कथा ८२. सूर्यप्राची ८३. त्र्यक्षर ८४. उमानाथ कथा ८५. भूंगार ८६. मूल स्थल ८७. च्यवनाकेश कथा ८८. अजपालेश ८९. बालार्क ९०. कुबेर स्थल कथा ९१. ऋषितोया कथा ९२. संगालेश्वर कीर्तन ९३. नारदादित्य कथन ९४. नारायणनिरूपण ९५. तप्तकुंड माहात्म्य ९६. मूलचंडीश वर्णन ९७. चतुर्वक्त्र गणाध्यक्ष ९८. कलम्बेश्वर कथा ९९. गोपाल स्वामि १००. बकुल स्वामि १०१. मारुती कथा १०२. क्षेमार्क १०३. उन्नत १०४. विघ्नेश १०५. जलस्वामि कथा १०६. कालमेघ १०७. रुक्मिणी १०८. दुर्वासेश्वर १०९. भद्रा कथा ११०. शंखावर्त १११. रत्नतीर्थ ११२. गोष्पद एवं अच्युत गृह कथा ११३. जालेश्वर ११४. हुंकार कूप ११५. चंडीश कथा ११६. आशापुर विघ्नेश एवं ११७. कलाकुंड कथा ११८. कपिलेश्वर कथा ११९. जरद्गव शिव कथा १२०. नल १२१. कर्कोट १२२. हाटकेश्वर कथा १२३. नारदेश १२४. यंत्रभूषा एवं दुर्गाकूट एवं गणेश कथा १२५. सुवर्णलाक्ष्य १२६. भैरवी १२७. भल्लतीर्थ कथा १२८. कर्दमाल कीर्तन १२९. गुप्त सोमेश्वर कीर्तन १३०. बहु स्वर्णेश १३१. शृंगेश १३२. कोटीश्वर कथा १३३ मार्कण्डेश्वर १३४. कोटीश्वर एवं १३५. दामोदर गृह कथा १३६. स्वर्ण रेखा १३७. ब्रह्मकुंड १३८. कुंभीश्वर १३९. भीमेश्वर १४०. ब्रह्मचर्य क्षेत्र मृगाकुंड १४१. सर्वस्व कथा १४२. विघ्नेश १४३. गंगेश १४४. रैवत कथा १४५. अर्बुदेश्वर कथा १४६. अचलेश्वर १४७. नागतीर्थ कथा १४८. वशिष्टाश्रम वर्ण १४९. भद्र वर्ण माहात्म्य १५०. त्रिनेत्र माहात्म्य १५१. केदार माहात्म्य १५२. तीर्थागमन कीर्तन १५३. कोटीश्वर १५४. रूप तीर्थ १५५. हृषीकेश कथा १५६. सिद्धेश १५७. शुक्रेश्वर १५८. मणिकर्णिकेश कीर्तन १५९. पंगु १६०. यम एवं १६१. वराह तीर्थ वर्णन १६२. चंद्र प्रभास १६३. पिंडोद १६४. श्रीमाता १६५. शुक्ल १६६. कात्यायनी तीर्थ माहात्म्य १६७. पिंडारक माहात्म्य १६८. कनखल १६९. चक्र एवं १७०. मानुष तीर्थ माहात्म्य १७१. कपिलाग्नि

पूर्व भाग—१. आदिकृत वृत्तांत रंभा चरित्र कथन २. दुर्जय प्रति श्राद्ध कल्प कथा ३. महातपस्या आख्यान ४. गौरी उत्पत्ति कथन ५. विनायक कथा ६. नाग कथा ७. सेनानी एवं आदित्य कथा ८. देवगण कथा ६. कुवेरगण सकल कथा १०. वृष कथा ११. सत्यतप कथा १२. व्रत आख्यान १३ अगस्त्य गीता १४. रुद्रगीता १५. महिषासुर वध में ब्रह्मा विष्णु एवं शिव की शक्ति एवं माहात्म्य कथन १६. पर्वाध्याय १७. श्वेत उपाख्यान १८. गोदान कथा १६. भगवद्धर्म्म २०. व्रत एवं तीर्थ कथा २१. अत्रि अपराध कथा २२. शारीरिक प्रायश्चित्त २३. सकल तीर्थ महिमा २४. मथुरा माहात्म्य विशेष वर्णन २५. ऋषि पुत्र प्रसंगाधीन यमलोक वर्णन २६. कर्मविपाक २७. विष्णुव्रत निरूपण २८. गोकर्ण माहात्म्य।

उत्तर भाग—१. पुलस्त्य कुरुराज संवाद सकल तीर्थ माहात्म्य पृथक् पृथक् विस्तारित रूप वर्णन २. अशेष धर्माख्यान ३. पौष्कर पुण्य कथा।

फलश्रुति—यह पुस्तक लिख कर चैत्री पूर्णिमा को कांचन गरुड़ एवं तिल धेनु समन्वित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से वैष्णव धाम प्राप्ति एवं देवता और ऋषि गण द्वारा वंदित होता है और पुराण पाठ करने किंवा श्रवण करने से संस्कार नाशिनी विष्णु भक्ति लभ्य होती है।

त्रयोदश स्कंदपुराण

सप्त खंड ८१००० इक्यासी सहस्र श्लोक। १. माहेश्वर खंड २. वैष्णव खंड ३. ब्रह्म खंड ४. काशी खंड ५. अवंती खंड ६. नागर खंड ७. प्रभास खंड। इस पुराण में कार्तिकेय ने माहेश्वर धर्म कहा है।

प्रथम माहेश्वर खंड, प्रायः १२००० बारह सहस्र श्लोक—१. केदार माहात्म्य २. दक्ष यज्ञ कथा ३. शिवलिंग अर्चन फल ४. समुद्र मंथन ५. देवेंद्र चरित्र ६. पार्वती उपाख्यान एवं विवाह ७. कार्तिकेय उत्पत्ति ८. तार-

प्रथम पूर्ण भाग—१. पुराण प्रश्न २. ब्रह्म शिरच्छेद कथा ३. कपाल मोचन आख्यान ४. दक्ष यज्ञ विनाश ५. महादेव का काल-रूप धारण ६. कामदेव दहन ७. प्रह्लाद नारायण का युद्ध एवं देवता असुर का युद्ध एवं सूर्य की कथा ८. भुवनकोश वर्णन १०. काम्यव्रत आख्यान ११. दुर्गा चरित्र १२. तपती चरित्र १३. कुरुक्षेत्र वर्णन १४. सरोवर माहात्म्य १५. पार्वती जन्म तपस्या एवं विवाह कथन १६. गौरी उपाख्यान १७. कौशिकी उपाख्यान १८. कुमार चरित्र १९. अंधक वध उपाख्यान २०. साध्य उपाख्यान २१. जाबालि चरित्र २२. अरजा कथा २३. अंधक युद्ध एवं गण कथन २४. मरुत जन्म कथा २५. बलि चरित्र २६. लक्ष्मी चरित्र २७. त्रिविक्रम चरित्र २८. प्रह्लाद की पूर्व में तीर्थ यात्रा २९. धुन्धु चरित्र ३०. प्रेतउपाख्यान ३१. नक्षत्र पुरुष आख्यान ३२. श्रीदाम चरित्र ३३. त्रिविक्रम चरित्र ३४. ब्रह्मउक्तस्तव ३५. प्रह्लाद एवं बलि संवाद ३६. सुतल में हरि प्रशंसा कथन

द्वितीय उत्तर भाग—१. माहेश्वरी संहिता श्री कृष्ण के भक्ति का कीर्तन २. भागवती संहिता अवतार कथा ३. सौरी संहिता सूर्य महिमा कथन ४. गाणेश्वरी संहिता गणेश महिमादि कथन। यह संहिता चतुष्टय के प्रत्येक संहिता में एक सहस्र श्लोक।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर कार्तिकी संक्राति को घृत धेनु के साथ वेदज्ञ ब्राह्मण को दान करने से नरक भोग से मुक्ति और स्वर्ग लाभ होता है एवं भोगादिक और देहांत में विष्णु के परम पद की प्राप्ति होती है। यह पुराण पाठ किंवा श्रवण करने से परमगति प्राप्त होती है।

—:※:—

पंचदश कर्मपुराण

पूर्व एवं उत्तर दो भाग १७००० सत्रह सहस्र श्लोक। उत्तर भाग पंचपाद में विभक्त। लक्ष्मी कल्पचरित्र। इसी कल्प में हरि ने कूर्म रूप धारण किया है एवं इंद्रद्युम्न प्रसंग से धर्मार्थ काम मोक्ष का माहात्म्य कहा है।

कथा और पंचामृत स्नान एवं घंटा वादनादि फल ४२. नाना पुष्प द्वारा अर्चन फल ४३. तुलसीदल से अर्चन फल ४४. नैवेद्य माहात्म्य ४५. हरिवास वर्णन ४६. एकादशी एवं जागरण माहात्म्य ४७. मत्स्योत्सव विधान ४८. नाम माहात्म्य ४९. ध्यानादिपुण्य कथा ५०. मथुरा तीर्थ माहात्म्य ५१. द्वादश वन माहात्म्य ५२. श्री मद्भागवत माहात्म्य ५३. वज्र शांडिल्य संवाद ५४. अंतर्लीला कथन और श्रीनाथ केशवदेवादि विग्रह स्थापन ५५. माघ में स्नान दान जप माहात्म्य और नानाख्यान ५६. वैशाख माहात्म्य ५७. शय्या दान फल ५८. जल दान फल ५९. कामाख्या वर्णन ६०. श्रुतदेव चरित्र ६१. व्याध उपाख्यान ६२. अक्षय तृतीयादि विशेष पुण्य कीर्तन ६३. अयोध्या माहात्म्य चक्र ब्रह्मतीर्थ प्रसंग ऋण प्रति विमोक्ष कथा आधार सहस्र एवं स्वर्ग द्वार चंद्र हरि और धर्म हरि वर्णन ६४. स्वर्णवृष्टि आख्यान ६५. तिलद्वार सहित सरयू मिलन कथा ६६. सीताकुंड कथा ६७. गुप्त हरि कथा ६८. सरयू और घर्घरा आख्यान ६९. गो प्रभाव ७०. दुग्धोदकथा ७१. गुरु कुंडादि पंचतीर्थ कथा ७२. घोषार्कादि त्रयोदश तीर्थ वर्णन ७३. गया कूप माहात्म्य ७४. मांडव्य आश्रम और पूर्व तीर्थ वर्णन ७५. अजितादि मानसादि असंख्य तीर्थ वर्णन।

तृतीय ब्रह्मखंड—१. सेतु माहात्म्य प्रसंग से स्नान एवं दर्शनजन्य फलकथन २. गालव तपस्या ३. राक्षसाख्यान ४. चक्रतीर्थ माहात्म्य ५. देवी पतन कथा ६. वेतालतीर्थ माहात्म्य ७. पाप नाशादि तीर्थ कथन ८. मंगलादि तीर्थ माहात्म्य ९. ब्रह्मकुंड वर्णन १०. हनुमत कुंड महिमा ११. अगस्त्य तीर्थ फल १२. रामतीर्थ कथन १३. लक्ष्मीतीर्थ निरूपण १४. शंखादि तीर्थ महिमा १५. साध्यमृत् तीर्थ महिमा १६. धनुष्कोट्यादि तीर्थ महिमा १७. क्षीर कुंडादि माहात्म्य १८. गायत्र्यादि तीर्थ माहात्म्य १९. रामनाथ महिमा एवं तत्वज्ञानोपदेश २०. सेतु यात्राभिधान २१. धर्मारण्य माहात्म्य एवं ततस्थान संभूति और पुण्य कथा २२. कर्म सिद्धि आख्यान २३. ऋषिवंश २४. अप्सरा तीर्थ माहात्म्य २५. वर्ण एवं आश्रम धर्म और तत्व निरूपण २६. देवस्थान विभाग २७. बकुलार्क कथा २८. छत्रानंदा शांता श्री माता एवं मतंगिनी देवी की अवस्थिति २९. इंद्रेश्वरादि माहात्म्य ३०. द्वारकादि

वंश कीर्तन १७. ययाति चरित्र १८. कार्तवीर्य चरित्र १९. सृष्ट वंश कीर्तन २०. भृगुशाप २१. विष्णु का दश मूर्ति धारण २२. पुरुवंश कथा २३. हुताशनवंश कथन २४. क्रिया योग कथन २५. पुराण कीर्तन २६. नक्षत्र पुरुष कथन एवं व्रत २७. मार्कंडेय शयन २८. कृष्णाष्टमी व्रत २९. तडाग विधि माहात्म्य ३०. पादुकोत्सर्ग ३१. सौभाग्य शयन वर्णन ३२. अगस्त्य व्रत कथन ३३. अनंत तृतीया ३४. रस कल्यानी व्रत कथा ३५. आनंद कर व्रत ३६. सारस्वत व्रत ३७. उपराग अभिषेक ३८. सप्तमास स्वपन व्रत कथा ३९. भीम द्वादशी व्रत ४०. अनंग शयन व्रत ४१. अशून्य शयन व्रत ४२. अंगारक व्रत ४३. सप्तमी सप्तक व्रत ४४. विशोक द्वादशी व्रत ४५. दशधा मेरुप्रदान व्रत ४६. ग्रहशांति ४७. ग्रह स्वरूप कथन ४८. शिव चतुर्दशी व्रत ४९. सर्व फल त्याग व्रत ५०. सूर्यवार व्रत ५१. संक्रांति स्नान ५२. विभूति द्वादशी व्रत ५३. षष्टि व्रत माहात्म्य ५४. स्नान विधि कथन ५५. प्रयाग माहात्म्य ५५. द्वीप एवं लोकानुवर्णन ५७. अंतरिक्ष और दिशा कथन ५८. ध्रुव माहात्म्य ५९. इंद्रभवन वर्णन ६०. त्रिपुर घातन ६१. पितृ प्रवर माहात्म्य ६२. मन्वंतर निर्णय ६३. चतुर्युग संभूति युगधर्म निरूपण ६४. वज्रांग-संभूति ६५. तारकासुरोत्पत्ति एवं माहात्म्य ६६. महादेव अनुकीर्तन ६७. पार्वती संभव ६८. शिव तपोवन वर्णन ६९. अनंगदेह दाह ७०. रति विलाप ७१. गौरी तपोवन ७२. शिव प्रसादन ७३. पार्वती ऋषि संवाद एवं विवाह ७४. कार्तिकेय जन्म औ विजय ७५. तारकवध ७६. नरसिंह वर्णन ७७. पद्म कल्प कथा ७८. अंधकासुर घातन ७९. वारानसी माहात्म्य ८०. नर्मदा माहात्म्य ८१. प्रवरानुक्रम ८२. पितृगाथा कीर्तन ८३. उभयमुखीदान ८४. कृष्णाजिन दान ८५. सावित्र्युपाख्यान ८६. राजधर्म ८७. विविधोत्पात कथन ८८. ग्रह शांति कथन ८९. यात्रा निमित्त कथन ९० स्वप्न मंगल कीर्तन ९१. वामन माहात्म्य ९२. वराह माहात्म्य ९३. समुद्र मंथन ९४. कालकूट अभिशान्तन ९५. देवासुर विमर्द्दन ९६. वास्तुविद्या ९७. प्रतिमा लक्षण ९८. देवता स्थापन ९९. प्रासाद लक्षण १००. देव मंडप लक्षण १०१. भविष्य राजा का उद्देश कथन १०२. महादान कथन १०३. कल्प कथा।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक विपुव संक्रांति

योगि धर्म २७. काल ज्ञान २८. दिवोदास कथा २६. काशी वर्णन ३०. योगिचर्या लोलार्क ३१. शाम्बार्क कथा ३२. द्रुपदार्क एवं तार्क्ष तीर्थकथा ३३. अरुणार्क का उदय ३४. दशाश्वमेध आख्यान ३५. मंदराचल से गणपति की माया प्रकाश ३६. पिशाचमोचन आख्यान ३७. गणेश प्रेषण ३८. गणपति का आगमन और माया प्रकाश ३६. पृथ्वी से माया का प्रादुर्भाव ४०. विष्णु माया का विस्तार ४१. दिवोदास विमोचन ४२. पंच नदोत्पत्ति ४३. विंदुमाधव संभव ४४. वैष्णव तीर्थ आख्यान ४५. महादेव का काशी में आगमन ४६. जैगायव्य के सहित महेश का आख्यान ४७. शिवक्षेत्र आख्यान ४८. कंदुकेश्वर एवं व्याघ्रेश्वर का उद्भव ४६. शैलेश्वर एवं कृत्तिवास का उद्भव ५०. देवता सकल का अधिष्ठान ५१. दुर्गासुर का पराक्रम ५२. दुर्गाविजय ५३. ओंकारेश्वर वर्णन ५४. ओङ्कार माहात्म्य ५५. त्रिलोचन समुद्भव ५६. केदार आख्यान ५७. धर्मेश्वर कथा ५८. वीरेश्वर आख्यान ५६. गंगा माहात्म्य कीर्तन ६२. विश्वकर्मेश्वर महिमा ६१. दक्ष यज्ञोद्भव ६२. सतीश्वर एवं अमृतेश्वर उपाख्यान ६३. पराशर भुजस्तम्भ ६४. क्षेत्र तीर्थ समूह वर्णन ६५. मुक्ति मंडप कथा ६६. विश्वेश्वर विभव ६७. यात्रा परिक्रम।

पंचम अवंती खंड—१. महंकाल यवन का आख्यान २. ब्रह्मशीर्षच्छेद ३. प्रायश्चित्त विधि ४. अग्नि उत्पत्ति एवं आगमन ५. देवदत्त ६. नाना पाप नाशन शिव स्तोत्र ७. कपाल मोचन आख्यान एवं महाकाल वनस्थिति ८. कर्णखलेश तीर्थ आख्यान ६. अप्सरा कुंड कथा १०. स्वर्ग में रुद्रकुंड उपाख्यान १२. कुंडुड्वेश एवं मर्कटेश्वर तीर्थ वर्णन १२. स्वर्गद्वार चतुः सिंधु शंकरांक गंधवती एवं दशाश्वमेध कालांश तीर्थ वर्णन १३. पिशाचकादि यात्रा १४. हनुमान एवं यमेश्वर वर्णन १५. महाकालेश्वर यात्रा १६. वाल्मीकेश्वर तीर्थ १७. भेषजाख्य शुक्र तीर्थ कुशस्थली प्रदक्षिणा १८. अक्रूर मंदाकिनी कपाल चंद्रार्क वैभव करभेश लड्डुकेशादि तीर्थ वर्णन १६. मार्कंडेश्वर २०. यज्ञवापी २१. सोमेश २१. नरकांतक २३. केदारेश्वर २४. रामेश्वर २५. सौभाग्येश्वर २६. नरार्क २७. केशार्क २८. शक्ति भेद २६. स्वर्णाक्षर मुख ३०. ओंकारेश्वरादि तीर्थ वर्णन ३१. अंधक स्तुति कीर्तन ३२. कालारण्य लिंग संख्या ३३. स्वर्ण शृंग ३४. कुशस्थली ३५. अवंत्याख्य ३६. उज्ज-

७६. संध्या ७७. पार्वण कर्म ७८. नित्य श्राद्ध ७९. सपिंड श्राद्ध ८०. धर्मसार निष्कृति ८१. प्रतिसंक्रम ८२. युगधर्म कृत फल ८३. योगशास्त्र ८४. विष्णु भक्ति ८५. भगवत्प्रणाम फल ८६. वैष्णव माहात्म्य ८७. नरसिंह स्तव ८८. ज्ञानामृत ८९. गुह्याष्टक स्तव ९०. विष्णु अर्चना ९१. वेदांत सार सांख्य और सिद्धांत शास्त्र ९२. ब्रह्मज्ञान ९३. आत्म ज्ञान ९४. गीता सार एवं फल कथन।

द्वितीय उत्तर खंड प्रेत कल्प कथा—१. धर्म प्रकटित करण २. पूर्व योनि गति कारण ३. दानादिफल ४. ऊर्द्ध दैहिक क्रिया ५. यमलोक मार्ग वर्णन ६. षोडश श्राद्ध फल ७. यममार्ग से निष्कृति कथन ८. धर्मराज वैभव ९. प्रेत पीड़ा निर्णय १०. प्रेत चिन्ह निरूपण ११. प्रेत चरित्र १२. प्रेत कारण १३. प्रेत कृत्य विचार १४. सपिंडीकरण १५. प्रेतत्व मोक्षण आख्यान १६. विमुक्ति कारण दान १७. प्रेत आवश्यक दान १८. शारीरिक विनिर्देश १९. यमलोक वर्णन २०. प्रेतत्व उद्धार कथन २१. कर्म कर्त्ता निर्णय २२. मृत्यु की पूर्व क्रिया कथन एवं पश्चात कर्म निरूपण २३. षोडश श्राद्ध कथन २४. स्वर्ग प्राप्ति क्रिया २५. सूतक संख्या २६. नारायण बलि कर्म २७. वृषोत्सर्ग माहात्म्य २८. निषिद्ध त्याग २९. अपमृत्यु क्रिया ३०. मनुष्य कर्म विपाक ३१. कृत्याकृत्य विचार ३२. मुक्ति कारण विष्णु ध्यान ३३. स्वर्ग गमन विहित आख्यान ३४. स्वर्ग सुख निरूपण ३५. भूर्लोक वर्णन ३६. सप्तलोक वर्णन ३७. पंच ऊर्द्ध लोक कथन ३८. ब्रह्मांड स्थिति कीर्तन ३९. ब्रह्मांड अनेक चरित्र कथन ४०. ब्रह्मजीव निरूपण ४१. आत्यन्तिक लय कथन ४२. फल श्रुति निरूपण।

फल श्रुति—यह पुराण पाठ करने किंवा श्रवण करने से पाप शमन होता है और लिखकर विष्णु संक्रांति को सुवर्ण हंस द्वय युक्त ब्राह्मण को दान करने से स्वर्ग लाभ होता है।

—:※:—

१४२. करज १४३. कामद १४४. मांडोर १४५. वाहिनीभव १४६. चक्र १४७. धौतपाप १४८. स्कान्द १४९. आंगिरस १५०. कोटि १५१. अयोनि १५२. अंगार १५३. त्रिलोचन १५४. इंद्रेश १५५. जंबुकेश १५६. सोमेश १५७. कोहनांशक १५८. नार्मद १५९. आर्क १६०. आग्नेय १६१. भार्गवेश्वर १६२. ब्राह्म १६३. देव १६४. भागेश १६५. आदि वाराह १६६. रामेश १६७. सिद्धेश १६८. आहल्य १६९. कंटकेश्वर १७०. शाक्र १७१. सौम्य १७२. नान्देश १७३. तापेश १७४. रुक्मिणीभव १७५. योजनेश १७६. वराहेश १७७. द्वादशी तीर्थ १७८. शिव १७९. सिद्धेश १८०. मंगलेश्वर १८१. लिंग वराह १८२. कुंडेश १८३. श्वेतवाराह १८४. भार्गवेश १८५. रवीश्वर १८६. शुक्लादि १८७. हुंकारस्वामि १८८. संगमेश १८९. नरकेश १९०. मोक्ष १९१. सार्प १९२. गोपक. १९३. नाग १९४. शाव १९५. सिद्धेश १९६. मार्कंड १९७. अक्रूर १९८. कामोद १९९. शूलागोप २००. मांडव्य २०१. गोपकेश्वर २०२. कपिलेश २०३. पिंगलेश २०४. भूतेश २०५. गांग २०६. गौतम २०७. आश्वमेध २०८. मृदुकच्छ १०९. केदारेश्वर २१०. कणखलेश २११. जालेश्वर २१२. शालग्राम २१३. वराह २१४. चंद्रप्रभास २१५. आदित्य २१६. श्रीपति २१७. हंसक २१८. मूलस्थान २१९. शूलेश २२०. आग्नेय एवं चित्रदैवक २२१. शिखीश्वर २२२. कोटि २२३. दशाकन्य २२४. सुवर्णाक २२५. ऋणमोक्ष २२६. भारभूति. २२७. पुङ्ख २२८. मुंडिम २२९. आमलेश्वर २३०. कपालेश्वर २३१. शृंगेरण्डीभव २३२. कोटी २३३. लोटनेश्वर तीर्थ विवरण २३४. फलश्रुति कथन २३५. द्रुमिजंगल माहात्म्य रोहिताश्व कथा २३६. धुन्धुमार उपाख्यान २३७. धुंधुमार वधोपाय २३८. धुंधुमार वध कथन २३९. चित्रवह उद्भव एवं २४०. महिमा कथन २४१. चंडीश प्रभाव २४२. रतीश्वर वर्णन और केदारेश्वर वर्णन २४३. लक्ष तीर्थ कथन २४४. विष्णुपदी उद्भव २४५. सुखार २४६. च्यवनान्ध २४७. ब्रह्म सरोवर २४८. चक्र २४९. ललिता २५०. बहुगोमख २५१. रुद्रावर्त २५२. मार्कंड २५३. रावणेश्वर २५४. शुद्धपट २५५. देवान्धु २५६. प्रेत २५७. जिह्वाद २५८. सम्भूति २५९. शिवोद भेद तीर्थ वर्णन २६०. फलश्रुति।

षष्ठ नागर खंड—१. लिंगोत्पत्ति आख्यान २. हरिश्चन्द्र कथा

अतभाग उपसंहार पाद—१. वैवस्वत मन्वन्तर का संक्षेप विवरण २. भविष्य मनु का कर्म चरित्र ३. कल्प प्रलय निर्देश ४. काल परिमाण विवरण ५. परिमाण और लक्षण सहित चतुर्दश लोक विवरण ६. नरक एवं विकर्म वर्णन ७. मनोमयपुर आख्यान ८. प्राकृतिक लय विवरण ९. शैवपुर वर्णन १०. सत्त्वादि गुण संबंध से जीव की गति विवरण ११. अनिर्देश्य ब्रह्म वर्णन।

फल श्रुति—यह पुराण श्रवण किंवा पाठ करै उसका पाप मोचन होय एवं देवलोक में गति होय। यह पुराण लिख कर * स्वर्ण-

---

* इतिहास तिमिर नाशक तीसरा खंड में यह सिद्ध किया गया है कि पहले आर्य लोग लिखना न जानते थे किंतु यह भ्रम है। पुराणों में प्रायः लिखने का अनेक स्थानों में वर्णन आया है जो इस अनुक्रमणिका से मालूम हुआ होगा और इसका अनेक मैंने कई एक स्थलों में संग्रह किया है। इतिहास तिमिरनाशक का भ्रम मूल लेख नीचे लिखा है। अब हम लोग मेक्समूलर साहब के लेखों को मानें या पुराण को। यथार्थ में मेक्समूलर को भ्रम हुआ है और उसी को मूल मान कर राजा जी चले हैं तब वह क्यों न भूलें।

"इसका कुछ प्रमाण नहीं मिलता कि इनको लिखना भी आता हो वेद श्रुति स्मृति शास्त्र दर्शन सूक्त ऋच साम वर्ग अध्याय अध्यापक उपाध्याय ग्रंथ पाठ पाठक पठन मनन घोषण इत्यादि सब शब्द जब उनके अर्थ पर ध्यान करो यही गवाही देते हैं कि वेदों के जमाने में लिखना किसी को नहीं आता था। वेद वा ब्राह्मण वा सूत्रों में इसका कहीं कुछ ज़िक्र नहीं है। कोई शब्द ऐसा नहीं कि जिससे इसका इशारा पाया जाय। उणादि सूत्र में जो अति प्राचीन व्याकरण है और जिसका जिक्र पाणिनी ने किया है यदि कोई शब्द ऐसा मिल भी जाता है तो वह पीछे से मिलाया हुआ मालूम होता है [इसी तरह उणादि सूत्र में दीनारः जिनः तिरीटम् स्तूपः इत्यादि शब्द पीछे से लिख दिये गए हैं। दीनारः (Denarious) रूमी शब्द है और जि धातु को जिससे जिन निकला है। सायन ने जहाँ उणादि से लिखा छोड़ दिया है नृसिंह ने भी अपनी स्वर मंजरी में जि धातु को छोड़ दिया है। यह धातु किसी प्रामाणिक ग्रंथ में नहीं मिलता है] जैसा अरबी शब्द किताब (पुस्तक) जिसका अर्थ ही लिखना है अथवा यूनानी शब्द पेपर (कागज़) जिसका अर्थ ही पेपरिस वृक्ष की छाल

१०६. नन्दग्राम का उपाख्यान १०७. असि १०८. शुक्ल १०९. पितृ-संज्ञ तीन तीर्थ का वर्णन ११०. श्च्यबुंद १११. रैवत ११२. शैव इन तीन पर्वतों का उपाख्यान ११३. गंगा ११४. नर्मदा ११५. सरस्वती इन तीन नदियों का उपाख्यान ११६. कुपिका औ शंख ११७. अमरक एवं बालमंडन इन चार तीर्थ का हाटकेश्वर तीर्थ क्षेत्र के समान फल कथन ११८. सांबादित्य ११९. श्राद्धकल्प १२०. युधिष्ठिर १२१. आंधक १२२. जलशायि १२३. चातुर्मास्य १२४. अशून्य शयन व्रत कथन १२५. मंगलेश १२६. शिवरात्रि १२७. तुला पुरुष दान १२८. पृथ्वी दान कथन १२९. बालकेश्वर १३०. कपालमोचनेश्वर १३१. पाप पीड़ १३२. सप्त-लिंग वर्णन १३३. युगपरिमाणादि कथन १३४. निंवेशशाक १३५. भार्या-ख्या कथन १३६. एकादश रुद्र कथन १३७. दान माहात्म्य १३८. द्वादश आदित्य उपाख्यान।

सप्तम प्रभास खंड—१. सोमेश वर्णन २. विश्वेश वर्णन ३. अर्क-स्थल वर्णन ४. सिद्धेश्वरादि का पृथक् उपाख्यान ५. अग्नितीर्थ ६. कपर्दीश तीर्थ वर्णन ७. भीम ८. भैरव ९. चंडीश १०. भास्कर ११. अंगारकेश्वर १२. बुध बृहस्पति मंगल चंद्र शनि १३. राहु केतु १४. शिव स्वरूप मूर्ति वर्णन १५. सिद्धेश्वरादि पंचरुद्र अवस्थिति वर्णन १६. वरा-रोहा १७. अजापाला १८. मगला १९. ललिता एवं ईश्वरी २०. लक्ष्मीश २१. वाडवेश २२. अर्घीश २३. कामेश्वर २४. गौरीश्वर २५. वरुणेश्वर २६. उशीष २७. गणेश्वर २८. कुमारेश २९. शाकल्य ३०. शाकल एवं उतंक ३१. गौतम ३२. दैत्यघ्नेश ३३. चक्रतीर्थ संनिहितार्थ कथन ३४. भूतेशादि लिंग कथन ३५. आदि नारायण कथन ३६. चक्र-धराख्यान ३७. सांबादित्य कथा ३८. कंटक शोधिनी कथा ३९. महि-षघ्नी कथा ४०. कपालीश्वर कथा ४१. कोटीश कथा ४२. बालब्रह्म कथा ४३. नरकेश ४४. सम्वर्तेश ४५. निधीश्वर कथा ४६. बलभद्र कथा ४७. गंगा कथा एवं गणेश्वर कथा ४८. जांबवती कथा ४९. पांडुकूप सत्कथा ५०. शतमेध लक्षमेध एवं कोटिमेध कथा ५१. दुर्वासार्क ५२. यदुस्थान ५३. हिरण्यारगम कथा ५४. नगरार्क ५५. श्रीकृष्ण ५६. संकर्षण एवं समुद्र कथा ५७. कुमारी क्षेत्रपाल ५८. ब्रह्मेश की पृथक् कथा ५९. पिंगल ६०. संगमेश्वर ६१. शंकरार्क ६२. घटेश की कथा ६३. ऋषितीर्थ

१७२. रक्तानुबंध तीर्थ कथा १७३. गणेश १७४. पार्थेश्वरयात्रा १७५. मुद्गल यात्रा कथन १७६. चंडीस्थान १७७. नागोद्भव शिव कुंड १७८. महेश कथा १७९. कामेश्वर १८० मार्कंडेय उत्पत्ति कथा १८१. उद्दालकेश १८२. सिद्धेश गत तीर्थ कथा १८३. श्री देवमाता उत्पत्ति १८४. व्यास १८५. गौतम तीर्थ कथा १८६. कुलसान्ता माहात्म्य १८७. राम एव कोटि तीर्थ कथा १८८. चंद्रोद्भव १८९. ईशानशृंग १९०. ब्रह्मस्थानोद्भव १९१. त्रिपुष्कर १९२. रुद्र ह्रद १९३. गुहेश्वर कथा १९४. अविमुक्त माहात्म्य १९५. उमा माहेश्वर माहात्म्य १९६. महौजस प्रभाव १९७. जंबुतीर्थ वर्णन १९८. गंगाधर एवं मिश्र कथा १९९. फलश्रुति २००. द्वारका माहात्म्य प्रसंग चंद्र शर्म कथा २०१. एकादशी जागरणादि व्रत २०२. महा द्वादशीकथा २०३. प्रह्लाद एवं ऋषि समागम २०४. दुर्वासा उपाख्यान २०५. यात्रा उपक्रम कीर्तन २०६. गोमती उत्पत्ति कथन २०७. गोमती स्नानादि फल २०८. चक्रतीर्थ माहात्म्य २०९. गोमती समुद्र संगम २१०. दुःसनकादि ह्रदाख्यान २११. नृगतीर्थ कथा २१२. गोप्रचार कथा २१३. गोपी द्वारका गमन २१४. गोपीसरोवर आख्यान २१५. ब्रह्मतीर्थादि कीर्तन २१६. नानाख्यान युक्त पंचनदी आख्यान २१७. शिवलिंग २१८. महातीर्थ २१९. कृष्णपूजादि कीर्तन २२०. त्रिविक्रममूर्ति कथा २२१. दुर्वासा एवं श्रीकृष्णकथन २२२. कुशदैत्य वधोपाख्यान २२३. प्रतिमा आख्यान २२४, विशेष पूजाफल २२५. गोमती एवं द्वारिका में तीर्थ आगमन कीर्तन २२६. कृष्ण मंदिर दर्शन फल २२७. द्वारावती अभिषेक २२८. द्वारका तीर्थ वास कथा २२९. द्वारकापुर कीर्तन ।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर हेमशूल युक्त ब्राह्मण को दान करने से शिवलोक प्राप्ति होती है ।

—:॰:—

चतुर्दश वामनपुराण

पूर्व, उत्तर दो भाग १०००० दस सहस्र श्लोक । उत्तर भाग वृहत् वामन संज्ञक इस पुराण में त्रिविक्रम चरित्र बहुविध वर्णित है कूर्म्म कल्प का आख्यान ।

प्रथम पूर्व भाग—१. पुराण उपक्रम कथन २. लक्ष्मी इंद्रद्युम्न संवाद ३. कूर्म ऋषिगण कथा ४. वर्णाश्रमाचार कथा ५. जगदुत्पत्ति कथा ६. काल संख्या एवं लयान्त में विभुस्तव ७ सर्गसंक्षेप कथा ८. शंकर चरित्र ६. पार्वती सहस्रनाम १०. योग निरूपण ११. भृगुवंश आख्यान १२. स्वायम्भुवकथा १३. देवतादि उत्पत्ति १४. दक्ष यज्ञ नाश १५. वृक्ष सृष्टि कथा १६. कश्यप वंश कथन १७. आत्रेय वंश कथन १८. कृष्ण चरित्र १६. मार्कंडेय कृष्ण संवाद २०. व्यास पांडव की कथा २१. युगधर्म कथा २२. व्यास जैमिनि की कथा २३. वाराणसी माहात्म्य २४. प्रयाग माहात्म्य २५. त्रिलोक वर्णन २६. वेदशाखा निरूपण ।

द्वितीय उत्तर भाग—१. ऐश्वरी गीता २. नानाधर्म प्रकाशिका व्यास गीता ३. नानाविध तीर्थ का पृथक् माहात्म्य ४. ब्राह्मी संहिता ५. भागवती संहिता । इसमें सकल वर्णन से पृथक् वृत्ति निरूपण है ।

उत्तर भाग में प्रथम पाद में ब्राह्मण की सदाचारात्मिका व्यवस्थिति कथन । द्वितीय पाद में क्षत्रिय की वृत्ति निरूपण । तृतीय पाद में वैश्य जाति की चार प्रकार की वृत्ति निरूपण । चतुर्थ पाद में शूद्र की वृत्ति कथन । पंचम पाद में वर्ण शंकर की वृत्ति कथन ।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर भक्ति पूर्वक हेम कूर्म युक्त ब्राह्मण को दान करने से परम गति होती है और श्रवण किंवा पाठ करने से सर्वोत्कृष्ट गति मिलती है ।

—:※:—

षोडश मत्स्य पुराण

१४००० चौदह सहस्र श्लोक सत्य कल्प कथा । १. व्यास कर्तृक नरसिंह वर्णन २. मनु एवं मत्स्य संवाद ३. ब्रह्मांड वर्णन ४. ब्रह्मदेव एवं असुर उत्पत्ति कथन ५ मारुत उत्पत्ति ६. मदन द्वादशी कथा ७. लोकपाल पूजा ८. मन्वन्तर कथन ६. वैश्य राज्याभि वर्णन १०. सूर्य एवं वैवस्वत की उत्पत्ति ११. बुध का संगम १२. पितृवंशानु कथन १३. श्राद्ध काल निरूपण १४. पितृतीर्थ प्रचार १५. सोमोत्पत्ति १६. सोम-

वैशाख शुक्ल पक्ष

तृतीया—अक्षयतृतीया। निकुंज में प्रथम स्नेह का उत्सव। केसरी किनारा रंगा हलका वस्त्र, मोती पोत के आभरण। गर्मी की सेवा आज से चली। खसखाना, पंखा, मट्टी की झारी, छिरकाव, फुहारा, जो बन जाय। परशुराम-अवतार।

सप्तमी—श्री रामराज्य।

नवमी—श्री जानकी-जन्म-दिन, श्री स्वामिनी जी से विवाहोत्सव, सेहरे का शृंगार।

एकादशी—श्री हरिवंश जी का जन्म।

चतुर्दशी—नृसिंह जयंती, गर्मी की जो सेवा बाकी हो सो सब और भी इस दिन से चलै, केसरिया वस्त्र, संध्या को पंचामृत-स्नान।

पूर्णिमा—श्री राधारमण जी का प्राकट्य।

ज्येष्ठ कृष्णपक्ष

पंचमी—कूर्मावतार।

ज्येष्ठ शुक्लपक्ष

दशमी—दशहरा, जमुनाजी-गंगाजी का पूजन।

एकादशी—जल विहार, पानी भरकर उसमें सिंहासन रखकर श्री ठाकुरजी को पधरावना।

चतुर्दशी—स्नान यात्रा के हेतु जल ले आना। जल में फूल की कली, चंदन, कपूर इत्यादि ठंढी वस्तु मिलाकर ओस में ढँककर रखना वा विधिपूर्वक मंत्र से अधिवासन करना।

पूर्णिमा—स्नान यात्रा, ज्येष्ठा नक्षत्र में पहले दिन के लाये पानी से सवेरे श्री ठाकुरजी को स्नान कराना। मूंग भींगी, फल इत्यादि ठंढी वस्तु भोग लगाना।

आषाढ़ शुक्ल पक्ष

द्वितीया—पुष्य नक्षत्र में रथ यात्रा। सफेद गोंटे का वागा। जड़ाऊ आभरण, कुलह, चंद्रिका।

तृतीया—श्री ठाकुरजी का गौना।

को ब्राह्मण को दान करने से परम पद मिलता है और इस पुराण के पाठ किंवा श्रवण करने से आयु कीर्ति कल्याण की वृद्धि एवं हरि भवन प्राप्ति होती है।

—:❀:—

सप्तदश गरुड़पुराण

पूर्व एवं उत्तर दो खंड में। १६००० उन्नीस सहस्र श्लोक गरुड़ प्रति भगवान ने कहा है। इस पुराण में तार्क्ष कल्प की कथा है।

प्रथम पूर्व खंड—१. पुराण उपक्रम वर्णन २. संक्षेप स्वर्ग वर्णन ३. सूर्यादि पूजा विधि ४. दीक्षा विधि ५. लक्ष्मी पूजा प्रकरण ६. नवव्यूह अर्चन ७. विष्णु पूजा विधान ८. वैष्णव पंजर ९. योगाध्याय १०. विष्णु सहस्रनाम ११. सूर्य पूजा १३. मृत्युंजयार्च्चन १४. नाना-मंत्र १५. शिव पूजा १६. गण पूजा १७. गोपालपूजा १८. त्रैलोक्य मोहन श्री रामार्चन १९. विष्णु पूजा एवं पंचतत्व पूजा २०. चक्रा-र्चन २१. देवपूजा २२. न्यासादि कथन २३. संध्यादि उपासना २४. दुर्गार्चन २५. सुरार्चन २६. माहेश्वर पूजा २७. पवित्रा रोपणार्चन २८. मूर्तिध्यान २९. वास्तु प्रमाण ३०. प्रासाद लक्षण ३१. सकल देवता पृथक पूजा ३३. अष्टांग योग ३४. दान धर्म ३५. प्रायश्चित्त विधि क्रम ३६. द्वीप ईश्वर और नरक वर्णन ३७. सूर्य व्यूह कथन ३८. ज्योतिष श्राद्ध वर्णन ३९. सामुद्रिक स्वर ज्ञान ४०. नवरत्न परीक्षा ४१. तीर्थ माहात्म्य ४२. गया माहात्म्य ४३. मन्वन्तर पृथक् पृथक् आख्यान ४४. पित्राख्यान ४५. वर्णधर्म ४६. द्रव्यशुद्धि ४७. द्रव्य समर्पण ४८. श्राद्ध-कथा ४९. विनायक पूजा ५०. ग्रहयज्ञ ५१. आश्रम कथा ५२. मन-नाख्यान एवं प्रशौच ५३. नीतिसार ५४. व्रतोक्ति ५५. सूर्य वंश ५६. सोमवंश ५७. हरि अवतार कथन ५८. रामायण ५९. हरिवंश ६०. भारताख्यान ६१. आयुर्वेद ६२. निदान ६३. चिकित्सा ६४. द्रव्यगुण ६५. रोगघ्न विष्णु कवच ६६. गरुड़ कवच ६७. त्रिपुर आख्यान ६८. प्रश्न चूड़ामणि ६९. अश्वायुर्वेद ७०. ओषधीनाम कथन ७१. व्याकरण शास्त्र ७२. छंदशास्त्र ७३. सदाचार ७४. स्नान विधि ७५. वैश्वदेव तर्पण

भारी तयारी करना। शृंगार करके तिलक करना, भेंट धरना। चंदन-वार थापा केले का खंभा लगाना। अष्टमी के दिन को श्री ठाकुर जी के जनम गाँठ के उत्सव की भावना करना और रात को जन्मोत्सव की भावना। संध्या से रोशनी करना। अर्द्धरात्रि को एक छोटे स्वरूप को पंचामृत स्नान कराना। घंटा शंख नौबतखाना बजाना। ब्रज भयो महर के पूत, यह पद गाना। जन्म पीछे श्री ठाकुरजी को नई फूल की माला तिलक पीतांबर समर्पण करना। फिर यथा शक्ति महाभोग धरना। पंजीरी भोग। सवेरे नवमी को श्रीठाकुरजी को पालने पर झुलाना। दही से नंद महोत्सव करना, पालना के भोग में मेवा मिठाई मक्खन रखना, भेंट आरती करना।

भाद्रपद शुक्ल पक्ष

द्वितीया—दधिठन का उत्सव।

पंचमी—श्रीबलदेव जी का जन्म, श्रीचंद्रावली जी का जन्म। जहाँ दो स्वामिनी जी बिराजती हों वहाँ दक्षिण भाग की स्वामिनी जी को दूध का स्नान, तिलक।

अष्टमी—श्री राधाष्टमी, शृंगार जन्माष्टमी का, श्री स्वामिनी जी को दूध से स्नान कराना, तिलक भोग आरती तोरण आदि जन्माष्टमी की भाँति सब करना।

एकादशी—दान एकादशी, मकुट काछनी का शृंगार वस्त्र लाल, दही दूध छोटी छोटी कुल्हिया में भोग रखना, ब्रज भक्त (सखी) हों तो उनके सिर पर दही दूध रखकर सामने खड़ी करना।

द्वादशी—वामनजयंती, केसरिया वस्त्र, धोती उपरना, कुलह, दोपहर को पंचामृत।

पूर्णिमा—साँझी के उत्सव का आरंभ, साँझ को ठाकुर जी के सामने फूल की वा रंग की साँझी बनाना।

आश्विन कृष्ण पक्ष

अष्टमी—महीना का चौक।

द्वादशी—श्री गो० गोपीनाथ जी का उत्सव।

अष्टादश ब्रह्मांड पुराण

४ पाद तीन भाग १२००० बारह सहस्र श्लोक । प्रथम भाग में—
१. प्रक्रिया पाद २. अनुषंग पाद ३. उपोद्घात पाद मध्य भाग ४. उप-
संहार पाद शेष भाग । इस पुराण में भविष्य कल्प की कथा है ।

प्रथम भाग प्रक्रिया पाद आरंभ—१. कृत्य समुद्देश २. नैमिषा-
ख्यान ३. हिरण्य गर्भोत्पत्ति ४. लोक कल्पना कथा ।

द्वितीय अनुषङ्ग पाद—१. कल्पमन्वंतराख्यान कथा २. लोक ज्ञान
कथन ३. मानसिक सृष्टि विवरण ४. रुद्र प्रभाव विवरण ५. महादेव
विभूति वर्णन ६. ऋषि सर्ग वर्णन ७. अग्नि उत्पत्ति विवरण ८. काल सद्भाव
वर्णन ९. प्रियव्रत समूह उद्देश १०. पृथिवी 'आयाम एवं विस्तार वर्णन
११. भारतवर्ष वर्णन १२. अन्य वर्ष वर्णन १३. जंब्वादि सप्तद्वीप
वर्णन १४. अधः एवं उर्द्ध लोक विवरण १५. ग्रहाचार १६. आदित्य
व्यूह विवरण १७. देवग्रह वर्णन १८. नीलकंठाख्यान १९. महादेव
वैभव २०. अमावस्या कथा २१. युग तत्व निरूपण २२. यज्ञ प्रवर्तन
२३. मध्य एवं अन्त्य युग की क्रिया एवं सत्ययुग की प्रजा का लक्षण
२४. ऋषि प्रवर वर्णन २५. वेद आख्यान २६. स्वायम्भुव निरूपण २७.
शेष मन्वन्तराख्यान २८. पृथिवी दोहन ।

मध्यभाग उपोद्घात पाद—१. सप्तऋषि कथा २. प्रजापति उपा-
ख्यान ३. देवादि उद्भव ४. जय एवं क्रीड़ा ५. मरुत उत्पत्ति कीर्तन
६. काश्यप विवरण ७. ऋषि वंश निरूपण ८. पितृकल्प कथा ९. श्राद्ध
कल्प कथा १०. वैवस्वतोत्पत्ति ११. वैवस्वत सृष्टि विवरण १२. मनुपुत्र
निर्णय १३. गंधर्व निरूपण १४. इक्ष्वाकुवंश विवरण १५. अत्रिवंश
विवरण १६. अमावसु अर्चन १७. रजि चरित्र १८. ययाति चरित्र
१९. यदुवंश निरूपण २०. कार्तवीर्य चरित्र २१. जमदग्नि विवरण २२.
वृष्णिवंश विषय २३. सागर उपाख्यान २४. भार्गव चरित्र २५. गय वध
२६. समर विवरण २७. पुनर्वार भार्गव विषय २८. देवासुर युद्ध में
कृष्ण का आविर्भाव वर्णन २९. शुक्र कर्तृक इलस्तव ३०. विष्णु
माहात्म्य विवरण ३१. इलिवंश निरूपण ३२. कलियुग के भविष्य राजा
गण का चरित्र ।

एकादशी—प्रबोधिनी, अच्छे समय में ऊख के मंडप में पधराय कर जगाना, नया जाड़े का कपड़ा समर्पण करना, अँगीठी आदि जाड़े का उपचार रखना।

द्वादशी—श्री गिरिधर जी का और श्री रघुनाथ जी का उत्सव।

त्रयोदशी—श्री राधावल्लभ जी का पाटोत्सव।

पूर्णिमा—यज्ञपत्नी अंगीकार।

कार्तिक में अगस्त के फूल की माला, दीप दान, रंग से स्वस्तिकादि लिखना, तुलसी समर्पण और सामग्री भोग रखना।

मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष

तृतीया—बुध अवतार।

षष्ठी—श्री गोविंदराय जी का उत्सव।

त्रयोदशी—श्री घनश्याम जी का उत्सव।

मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष

द्वितीया—कूख में पधारे।

पंचमी—श्री रुक्मिणी जी तथा श्री सीता जी का विवाहोत्सव।

सप्तमी—श्री गोकुलनाथ जी का उत्सव।

पौष कृष्ण पक्ष

नवमी—प्रभु श्री गो० विट्ठलनाथ जी का उत्सव।

पौष शुक्ल पक्ष

अष्टमी—अन्नप्राशन, इसी दिन श्री नंदराय जी का जन्म।

माघ कृष्ण पक्ष

षष्ठी—श्री ठाकुर जी का नामकरण।

मकर संक्रांति जिस दिन हो उस दिन छींट के नए रूई के बागा धराना और तिल का लड्डू भोग धरना।

माघ शुक्ल पक्ष

पंचमी—बसंतोत्सव, खेल आरंभ, सफेद बागा, इसी दिन से अबीर बुका केसर चोआ से नित्य खिलाना, सामने बसंत रखना, बसंत राग माघ की पूर्णिमा तक गाना। श्री अद्वैत प्रभु का उत्सव।

सिंहासनस्थ करके ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्म लोक प्राप्ति होती है।

छोड़ि अनेकन साधन को मन मान कह्यौ न करै चित चाही।
नन्द के लाल सों नेह करै किन भूलत दौरे वृथा जिय दाही॥
आजु लौं नीचन सों हरिचन्द से कौन ने बोलि तौ प्रीत निबाही।
हैं गनिका सबरी गज गीध अजामिल आदिक याकी गवाही॥

—:※:—

से बनाया हुआ है कोई भी हाथ नहीं लगता। संस्कृत में सूत्रों की रचना ऐसी है कि जुबानी याद रक्खे जाँय। सूत्रकारों ने उन्हें लिखने के लिए कदापि नहीं रचा। मनुजी ने जहाँ पढ़ने पढ़ाने का बहुत विस्तारपूर्वक नियम बाँधा है [ब्रह्मारम्भेवसाने च पादौग्राह्यौ गुरोस्सदा। संहत्यहस्तावध्येयं सहि ब्रह्माञ्जलिः स्मृतः॥ अध्येष्यमाणन्तु गुरुर्नित्य कालमतन्द्रितः। अधीष्व भो इति ब्रूयाद्विरामोसित्वति चारमेत्।] पुस्तक कलम दवात कागज़ का नाम भी नहीं लिखा, लिखने का कहीं किसी प्रकार से कुछ चर्चा ही नहीं किया और देखो अब तो लिखना पढ़ना ये दोनों ऐसे द्वंद्व हो गए हैं कि पर्यायी से जान पड़ते हैं। एक के स्मरण के साथ ही दूसरे का स्मरण भी हो आता है। निदान लिखने की विद्या इस देश में पीछे से फैली (यदि पहले होती तो महाभारत में जहाँ कौरव पांडव के दूतों का हाल लिखा है उनके साथ पत्र जाने का भी हाल लिखा होता।) पत्र लेखनी मसी ये सब शब्द पीछे से काम में आये। उत्तर में पहले भोजपत्र और दक्षिण में पहले तालपत्र पर लिखा होगा इसी से जिस पर लिखें उसका नाम पत्र रह गया और तालपत्र पर लीकों के खींचने अर्थात् खोदने से यह काम ही लिखना ठहरा। लिप लीपना है जब पत्रों पर सियाही लगाई होगी यह शब्द काम में आया। यदि पाणिनी के समय में भी लिखना किसी को मालूम होता वह अवश्य इसके लिए कोई शब्द बनाता। इसने जो वर्ण अक्षर और विराम लिखा है वर्ण का अर्थ आवाज का रंग है, अक्षर का अर्थ अविनाशी है, विराम का अर्थ आवाज का बंद होना है। यदि वह लिखना जानता होता अनुस्वार विसर्ग जिह्वामूलीय और उपध्मानीय का नाम बोपदेव की तरह बिंदु द्विबिंदु बज्राकृति और गजकुंभाकृति रखता।"

लाना, श्रद्धा सौकर्य हो तो शृंगार भोग रखकर फिर दूध भोग लगाकर तब राजभोग धरना। न सौकर्य हो तो शृंगार पीछे एक ही भोग रखना। आचमन मुख वस्त्र करके बीड़ी समर्पण करके चौपड़ खिलौना आदि सामने धर के आरती करना। फिर सज्जा साज करके किवाड़ बंद कर देना। संध्या को फिर घंटानाद करके जगा कर दिन का पानी आदि बदल कर यथा शक्ति फल भोग रखना सौकर्य हो तो साँझ को भी दो भोग और रखना नहीं तो एक ही बेर सही। फल भोग के पीछे शृंगार उतार कर शयन भोग रखना और दूध रखना। फिर आरती करके शयन कराना। गर्मी हो तो पतली चद्दर, जाड़ा हो तो रजाई उढ़ाना। स्वामिनी जी को साड़ी और खड़े सरूप हों तो तनियाँ रात को भी रहै। बालसरूप हो तो नंगे ही पौढ़ैं। मणि विग्रह हों तो नित्य स्नान नहीं कराना। व्रत के दिन भी ठाकुर जी को नित्य की भाँति अन्न आदि समर्पण करना। गर्मी सर्दी का सेवा में बहुत ध्यान रखना।

—:o:—

अथ संक्षिप्त निर्णय

एकादशी के व्रत का मोटा निर्णय यह है कि पहले दिन पचपन घड़ी से पल भर भी दशमी विशेष हो तो व्रत नहीं करना, द्वादशी को व्रत करना। किंतु निंवार्क संप्रदाय वाले ४५ घड़ी से अधिक दशमी हो तो व्रत नहीं करते। द्वादशी दो हों तो पहिली द्वादशी को व्रत करना। दो एकादशी हों तो दूसरी एकादशी को व्रत करना। पत्रा न मिलै और दशमी के समय में कुछ भी संदेह हो तो द्वादशी को व्रत करना। जन्माष्टमी, रामनवमी और नृसिंह जयंती उदयात् लेना और वामन द्वादशी मध्यान्हव्यापिनी, विजय दशमी सायंकाल व्यापिनी। और उत्सव सब संसार में जिस दिन तिथि मानी जाय उस दिन। रास पूर्णिमा जिस दिन चंद्रमा की कला विशेष मिलै उस दिन करना।

—:o:—

श्रीहरि

उत्सवावली

[वर्ष भर के उत्सवों की तालिका और संक्षेप सेवा शृंगार वर्णन]

" तत्कर्म हरितोषं यत् "
" कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा "
" कृष्ण सेवा सदा कार्या "

—:&:—

सं० १९३२ ?
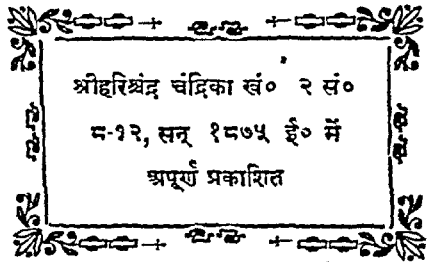
श्रीहरिश्चंद्र चंद्रिका खं० २ सं०
८-१२, सन् १८७५ ई० में
अपूर्ण प्रकाशित
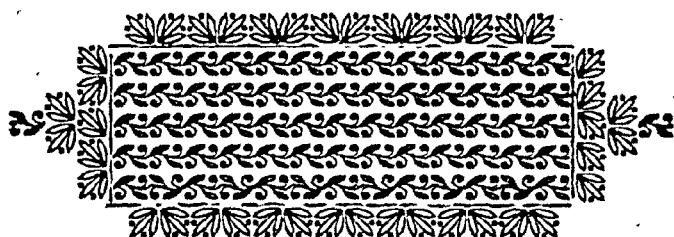
उत्सवावली

चैत्र शुक्ल पक्ष

प्रतिपदा—नवरात्रारंभ, अभ्यंग, शृंगार भारी, हो सके तो गुलाब की फूल मंडली।

पंचमी—श्री रामानुजस्वामी का जन्मोत्सव।

षष्ठी—श्री यदुनाथ जी का जन्मोत्सव।

नवमी—श्री रामनवमी, केसरिया वस्त्र, उत्सव का शृंगार, पंचामृत (दोपहर को)।

एकादशी—मुकुट का शृंगार।

द्वादशी—दमनक (दौना) समर्पण करना।

पूर्णिमा—महारास की समाप्ति का उत्सव, मुकुट का शृंगार।

किसी के मत से चैत्र शुक्ल द्वितीया को श्री जानकी-जन्म। जिस दिन मेष संक्रांति पड़े उस दिन सतुआ के लड्डू भोग धरना।

वैशाख कृष्ण पक्ष

एकादशी—श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु का जन्म, केसरिया बागा।

यही लोग अपने परमेश्वर की शिक्षा पर चलनेवाले और यही लोग मुक्ति पाने वाले हैं। और निश्चय जो लोग बहिर्मुख हैं उन्हें चाहे तू कितना भी डरावै या न डरावै वे विश्वास न करैंगे। कृपा की ईश्वर ने इनके चित्त कान और आँखों पर और उन पर परदा है और उनको बड़ा पाप है। मनुष्यों में कोई कहते हैं कि ईश्वर पर विश्वास लाए हम और पिछले दिनों पर निश्चय किया और कोई विश्वास नहीं लाते। वे ईश्वर से और उसके विश्वासियों से छल करते हैं पर यह नहीं समझते कि उन्होंने अपनी आत्मा से छल किया। इनके चित्त में व्याधि है और ईश्वर ने बढ़ाई है इनकी व्याधि, और वे पाप के और दुःख के भागी हैं क्योंकि वे झूठ बोलनेवाले थे, जब उनसे कहा जाता है कि पृथ्वी पर उपद्रव मत करो वे कहते हैं कि हम योग्य करते हैं, निश्चय रक्खो कि वे पाखंडी हैं और अज्ञानी हैं, जब उनसे कहा जाता है कि तुम भी विश्वास करो जैसे औरों का विश्वास है तो वे कहते हैं, कि विश्वास हम कैसे करैं विश्वास करनेवाले तो मूर्ख हैं पर निश्चय रखो कि वे ही मूर्ख हैं पर वे अपने को जानते नहीं। वे जब धर्मियों से मिलते हैं तब कहते हैं कि हम भी उस पर विश्वास रखते हैं पर जब अपने (पाखंडी) वर्ग के मुखियों से मिलते हैं तो कहते हैं कि हम निस्संदेह तुम्हारे साथ हैं हँसी नहीं करते, (परंतु) ईश्वर उनसे हँसी करता है और उनको अपने विरुद्ध प्रेरणा करता है, यही लोग हैं जिन्होंने शिक्षा के बदले कुमार्ग मोल लिया इससे इनके व्यौपार में न तो कुछ लाभ हुआ और न इनको मार्ग मिला, इन लोगों की उपमा उस मनुष्य की है जिसने आप आग लगाई और अपने पास की वस्तु जला दी इसी से ईश्वर ने उनका प्रकाश हरण कर लिया और उनको अंधकार में डाल दिया इसी से वे नहीं देखते। वे बहिरे अंधे और गूँगे हैं क्योंकि उनकी गति नहीं। वा मेघ की आकाश में अंधेरी और गरज और चमक से वे कानों में उंगली करते हैं पर मृत्यु की कड़क (बिजली) से डरो और (निश्चय रखो कि) भगवान दुष्टों को आच्छादन करने वाला है। निकट है कि वह बिजली उनकी दृष्टि हरण कर ले जाय क्योंकि वह जब उनको प्रकाश देती है तब वे उस मार्ग पर चलते हैं और वह जब अंधकार करती है तब वे खड़े रह जाते हैं और यदि

षष्ठी—पांडुरंग षष्ठी, श्री विट्ठलनाथजी (दक्षिणवाले) का पाटोत्सव है और इसी दिन से रंगीन वस्त्र धारण कराना आरंभ होता है।

एकादशी—हरिशयनी।

पूर्णिमा—असाढ़ी जोग, चुनरी का बागा, मुकुट, मोर की पिछवाई।

श्रावण कृष्ण पक्ष

प्रतिपदा वा द्वितीया—जिस दिन चंद्रमा अच्छा हो हिंडोला आरंभ, लाल बागा, पाग, मोरशिखा।

पंचमी—अठवाँसा का उत्सव।

श्रावण शुक्ल पक्ष

तृतीया—श्री ठकुरानी तीज, चुनरी का बागा, श्री स्वामिनी जी का शृंगार भारी। हिंडोले का मुख्य उत्सव।

पंचमी—श्याम बागा, मुकुट का शृंगार।

अष्टमी—लाल बागा, मुकुट का शृंगार, बगीचे में हिंडोला।

एकादशी—पवित्रा, श्री ठाकुरजी को पवित्रा यथाशक्ति समर्पण करना।

द्वादशी—गुरु को और श्री ठाकुरजी को पवित्रा समर्पण करना।

त्रयोदशी—चतुरा नागा का उत्सव।

पूर्णिमा—रक्षाबंधन।

पूर्णिमा पीछे हिंडोला विसर्जन अच्छे मुहूर्त में करना।

भाद्रपद कृष्णपक्ष

सप्तमी—श्री विष्णु स्वामी का जन्मोत्सव, किसी किसी मत से पूतना-वध के कारण छठें दिन छठी नहीं हुई थी, इसी कारण इस सप्तमी को हुई।

अष्टमी—महामहोत्सव जन्माष्टमी पहिले दिन से सब तैयारी कर रखना। उत्सव के दिन बड़े सवेरे उठना। घर में जितने स्वरूप ठाकुर जी के छोटे बड़े हों सबको पंचामृत स्नान कराकर अभ्यंग कराके उत्तम केसरिया वस्त्र शृंगार भारी कुलह चंद्रिका आदिक जहाँ तक हो सकै

(गुणद) संबंध स्थिर किया और वही सर्वज्ञ है। जब उसने देवताओं से कहा कि मुझको पृथ्वी पर एक आश्चर्य (ईश्वर का दूत और स्थानापन्न) रखना है तो देवताओं ने कहा कि क्या आप ऐसा मनुष्य भेजा चाहते हैं जो उपद्रव करै और पृथ्वी पर बहुत जीवों का वध करै। हम लोग सदा आप का गुणगान करते हैं और आप की पवित्र मूर्ति का ध्यान करते हैं (अर्थात् हम पृथ्वी पर भेजे जाने के योग्य हैं) ईश्वर ने कहा तुम सब अल्पज्ञ हौ सर्वज्ञ केवल मैं हूँ फिर आदिम को उसने अपनी सृष्टि के स्थावर जंगमों के नाम बताए और उन वस्तुओं को देवताओं को दिखाकर उनका नाम पूछा। उन लोगों ने कहा प्रभु तू सबसे निराला है हम सब केवल उतना ही जानते हैं जितना ज्ञान तूने हमें दिया है और निस्संदेह सर्वज्ञ केवल तू है। तब ईश्वर ने आदिम से कहा कि तू इनके नाम बता तब उसने सब नाम बतलाए तब ईश्वर ने कहा कि देखो पृथ्वी और स्वर्ग का त्रिकाल ज्ञान हमको है और हम तुम्हारे प्रगट और प्रच्छन्न कर्मों को जानते हैं, आज्ञा दिया कि सब देवता इसकी वंदना करो और सबने वंदना की परंतु अबलीश (इबलीस) ने वंदना न की आज्ञा से फिर गया क्योंकि वह दुष्ट था। मैंने आज्ञा दी कि ए आदिम तुम और तुम्हारी स्त्री वैकुंठ में रहो और सावधानी से इन अमृत फलों को खाओ और चाहो जहाँ फिरो परंतु इस वृक्ष के पास मत जाना नहीं तो पापी होगे परंतु उनको स्तेन (शैतान) ने बहकाया और उनको उस परम सुख से च्युत किया। तब मैंने कहा कि तुम नीचे उतरो, तुम्हारे में परस्पर वैर है और बहुत काल तक तुमको पृथ्वी पर रहना है और बड़े काम करने हैं फिर आदिम ने अपने ईश्वर से बहुत से धर्म सीखे और ईश्वर उनपर दयालु हुआ क्योंकि वह सच्चा दयालु और क्षमावान है। फिर मैंने कहा कि तुम सब नीचे उतरो और जब कभी कोई हमारा अनुशासन मिलै तो उसको मानो क्योंकि जो हमारी आज्ञा मानते हैं उनको न भय है न शोक पर जो उस आज्ञा का उल्लंघन करते हैं और हमारे अनुभवों को झूठा करते हैं वे नारकी हैं और सदा नर्क में रहैंगे। हे इसराईल (ईश्वरायिल) की संतान हमारे अनुग्रहों को स्मरण करो जो हमने तुम्हारे ऊपर किए और तुम अपने वचनों को पूरा करो तो मैं

त्रयोदशी—श्रीबाल कृष्ण जी का उत्सव।

चतुर्दशी—कोट की आरती।

पूर्णिमा—साँझी की समाप्ति।

आश्विन शुक्ल पक्ष

प्रतिपदा—नवरात्रारंभ, कुलह चंद्रिका।

नवमी—नवरात्र की समाप्ति, कुलह चंद्रिका, सफेद छापे का बागा, सामग्री

दशमी—विजयदशमी, सफेद जरी का बागा, पाग चंद्रिका, संध्या को जवार की कलगी धराना, तिलक, खंजर कमर में धराना, रावण बध के कीर्तन गाना।

एकादशी—मुकुट।

पूर्णिमा—महारास, सफेद ताश का बागा, मुकुट, आभरण सफेद रात को चाँदनी में श्री ठाकुर जी विराजें, सफेद वस्तु भोग लगाना, रास के कीर्तन गाना।

कार्तिक कृष्ण पक्ष

दशमी वा एकादशी से हटरी दीपमालिका आरंभ।

त्रयोदशी—धन तेरस, हरी जरी का बागा।

चतुर्दशी—रूप चतुर्दशी, बागा लाल जरी का।

अमावस्या—दीपावली, सफेद ताश का बागा, कुलह चंद्रिका, रात को हटरी में बैठाना, सामने दीपावली, चौपड़, भँड़ेहर, खिलौना आदि रखना।

कार्तिक शुक्ल पक्ष

प्रतिपदा—अन्नकूट, शृंगार दीवाली का रहेगा। गोबर्धन की पूजा करके अन्नकूट का भोग रखना, जहाँ तक बन पड़े सामग्री समर्पण करना।

द्वितीया—भाई दूइज, तिलक।

अष्टमी—गोपाष्टमी।

नवमी—अक्षयनवमी, गोविंदाभिषेकोत्सव, परिक्रमा करना।

तुम्हारी ओर फिर दृष्टि फेरी क्योंकि वह क्षमावान और दयावान है परंतु तुमने फिर यही कहा ए मूसा जब तक हम लोग परमेश्वर को अपने सामने न देखैंगे कभी विश्वास न करैंगे। इस बात पर तुम्हारे सामने बिजली ने फिर तुमको घात किया परंतु हमने मरने पीछे फिर तुमको इस वास्ते जिलाया कि तुम अब भी विश्वास लाओ। और हमने दिन भर तुम पर मेघ की छाया की और मन* और सलवी† उतार कर कहा कि उत्तम वस्तुओं को मैंने तुम्हें दिया तुम इन्हें खाओ। तुमने मुझसे विमुख होकर अपनी ही हानि की कुछ मेरी हानि नहीं की है। फिर मैंने तुमसे कहा कि इस नगर में बसो और यथा सुख निर्भय इन उत्तम खाद्य वस्तुओं को खाते फिरो और मेरा धन्यवाद करके द्वार में प्रवेश करो और कहो कि हमैं क्षमा कर तो मैं तुम्हारे अपराधों को क्षमा करूँ। विशेष कर मैं उनकी क्षमा करूँगा जो विश्वासी हैं। परंतु दुष्टात्मा लोगों ने फिर मुझसे मुख फेर लिया इस हेतु मैंने आकाश से फिर उन अन्यायियों पर क्रोध उतारा। फिर जब मूसा ने अपने शिष्यों के हेतु पानी माँगा मैंने कहा तुम अपनी छड़ी पत्थर पर मारो। फिर उससे बारह सोते वह निकले और सब ने अपनी अपनी जीविका पहिचान ली। फिर मैंने आज्ञा दी कि ईश्वरदत्त जीविका से निर्बाह करो और देश में उपद्रव उठाते मत फिरो। फिर तुमने कहा कि ए मूसा हम एक प्रकार के भोजन पर संतोष न करैंगे इससे तू पुकार अपने ईश्वर को कि हमारे हेतु पृथ्वी से साग, लकड़ी, गेहूँ, मसूर और प्याज उत्पन्न करै। उसने कहा तुम एक उत्तम वस्तु के बदले बुरी वस्तु चाहते हो।

किसी नगर में उतरो तो जो तुम माँगते हौ तुमको मिलै। तब उन पर विपत्ति और दैन्य पड़ा और ईश्वर का कोप हुआ क्योंकि वह ईश्वर की आज्ञा नहीं मानते थे और आचार्यों को व्यर्थ मार डालते थे और वह आज्ञा के विरुद्ध थे और उन्होंने सीमा उल्लंघन

---

* मन एक मीठा दाना धनिया का सा था जो ईश्वर ने जीवों पर क्षमा करके बरसाया था।

† सलवी बटेर की सी एक चिड़िया थी जिन्हें परमेश्वर ने उनके लिए भेजा था।

षष्ठी—श्री यशोदा जी का जन्म।
अष्टमी—श्री मध्वाचार्योत्सव।
त्रयोदशी—श्री नित्यानंद प्रभु का उत्सव।
पूर्णिमा—होली डाँड़ा।

फाल्गुण कृष्ण पक्ष

सप्तमी—श्रीनाथ जी का पाटोत्सव।

फाल्गुण शुक्ल पक्ष

एकादशी—कुंज एकादशी, फूल का मुकुट धरावना, कुंज में खिलाना।

पूर्णिमा—होलिकोत्सव, सफेद बागा, पाग, मोर चंद्रिका, खेल। श्री चैतन्य प्रभु का उत्सव।

चैत्र कृष्ण पक्ष

प्रतिपदा—दोलोत्सव, सफेद बागा, पाग मोर चंद्रिका, आम के मौर की डोल बाँध कर ठाकुर जी को झुलाना, चार भोग चार खेल होय।

पंचमी—मत्स्यावतार।
त्रयोदशी—बाराहावतार।

—:*:—

संक्षिप्त नित्य सेवा पद्धति

सेवा का मूल यह है कि स्नेह पूर्वक जैसे निज देह वा बालक वा स्वामी की गर्मी सर्दी आदि ऋतु के अनुसार भोजन वस्त्र से रक्षा की जाती है वैसे ही सर्व स्वामी परिपूर्ण परमेश्वर की मूर्ति की भी सेवा करना। नित्य सबेरे प्रातः कृत्य से निवृत्त होकर तिलक संध्या करके मंदिर में जाकर पहिले दण्डवत करके मार्जनी करना, रात के बरतन धोकर वस्त्रादि जो बदलना हो सब ठीक करके घंटानाद पूर्वक ठाकुर जी को जगाना और मंगल भोग रखकर मंगला आरती करना, फिर स्नान कराकर यथा शक्ति शृंगार करना, फूल की माला पहराना, चरण पर तुलसी समर्पण करके खड़ी मूर्ति हो तो वेणु धराकर दर्पण दिख-

गायों में संदेह हो गया है और ईश्वर ने चाहा तो हम सन्मार्ग पर आवैंगे। उसने कहा कि ईश्वर कहता है कि वह परिश्रम करनेवाली गाय नहीं है जो पृथ्वी जोतै खेत सींचै, * न उसके शरीर पर रोम है तब उन लोगों ने कहा कि अब तुमने सच्ची बात कही और फिर उसका बलि दिया परंतु उससे दूर रहे। फिर तुमने एक मनुष्य को मार डाला पर उसका कलंक एक दूसरे को देते थे और ईश्वर की इच्छा थी कि जो तुम छिपाते हो वह प्रगट हो, फिर हमने कहा कि इस मुरदे पर बलि दी हुई गाय के शरीर का टुकड़ा मारो जिससे परमेश्वर उस मृतक को जिलावैगा और तब तुमको उस पर विश्वास आवैगा। फिर भी तुम लोगों के चित्त पत्थर की भाँति वरञ्च उससे भी कठोर हो गए और पत्थर में तो ऐसे भी होते हैं जिनसे नहरैं निकलती हैं और ऐसे भी होते हैं जो फट जाते हैं और उनके नीचे से पानी निकलता है और ऐसे भी होते हैं जो ईश्वर के भय से गिर पड़ते हैं, और ईश्वर तुम्हारे सब कर्मों का ज्ञाता है। तो हे विश्वासी गण क्या तुमको आशा है कि यहूदी लोग तुम्हारी बात सुनैंगे ? इन्हीं लोगों ने ईश्वर के वाक्य† पहिले सुने और उससे फिर गए, ये लोग जब विश्वासियों से मिलते हैं कहते हैं कि हम भी विश्वास लाए पर जब एकांत में एक दूसरे से मिलते हैं तो कहते हैं कि तुम पर जो परमेश्वर ने प्रगट किया है वह उनसे (अर्थात् मुसलमानों से) क्यौं कहते हो‡ क्योंकि इससे वे ईश्वर के सामने तुम्हीं को झूठा बनावैंगे, परंतु यह नहीं जानते और इतनी बुद्धि तुमको नहीं है कि ईश्वर जो तुम छिपाया चाहते हो और जो प्रगट किया चाहते हो सब जानता है और कितने उनमें ऐसे हैं जो धर्म पुस्तक पढ़ते हैं परंतु उनको ज्ञान नहीं है और

* इससे यह ध्वनि निकली कि जो पशु खेती बारी के काम आवें और दूध दें उनकी बलि नहीं देना।

† तौरेत।

‡ उस समय में यहूदी लोग मुसलमानों के सामने जो तौरेत में से अंतिम ईश्वर दूत (म० मुहम्मद) की महिमा सुनावें तो पीछे विरोधी लोग उनसे रुष्ट होते थे कि क्यों ऐसा करते हो।

हिंदी कुरानशरीफ़

सं० १९३२

छोड़ा है सो ऐसे लोगों का पाप न हलका होगा न उन पर दया होगी। और हमने मूसा (मोक्त) को धर्म पुस्तक दी और उसके पीछे बराबर धर्मदूत भेजे और मरियम के पुत्र ईसा (ईश) को अनेक चमत्कार शक्ति दीं और पवित्रात्मा (जिबरील=गरुड़)* के द्वारा अनेक बल दिए किंतु किसी धर्मदूत ने तुम लोगों से कोई बात ऐसी कही जो तुम्हारी रुचि के अनुसार नहीं था तो तुम अभिमान करते थे और कुछ लोगों को बहकाया और अनेकों को मार डाला। और कहते कि हमारे चित्त पर आवरण† पड़ा है इससे ईश्वर ने उनको (धर्मदूतों से) विमुख होने पर धिक्कृत किया। और जब उनको धर्मपुस्तक ईश्वरकी ओर से मिली तो अपने पासवाली (धर्म पुस्तक) को सच्ची बतलाने लगे, सो यद्यपि पहिले ये अधर्मी लोगों को जीतने चाहते थे‡ परंतु जब उनको वह वस्तु भेजी गई जिसका उनको ज्ञान था और उससे भी फिर गए तो विमुख होनेवालों को ईश्वर ने धिक्कार किया। ऐसे लोगों ने प्राण के बदले बुरी वस्तु मोल ली कि उन वाक्यों से जो ईश्वर ने उनके हेतु उतारा फिर गए सो भी केवल ईर्षा से और अपनी दया से वह अपने दासों में से चाहे जिसके द्वारा अपने वाक्य उतारे अतएव (विरोधी) उन पर कोप पर कोप हुआ और ऐसे फिर जानेवालों को पाप और दुर्दशा है। और जो उनसे कहो कि जो वाक्य ईश्वर ने उतारा है उसको मानो तो वे कहते हैं कि हम पर जो पूर्व में उतरा है वही मानते हैं जो अब उतरा है उसको नहीं मानते और यद्यपि यह सत्य है पर उन से पूछो कि जो तुम धार्मिक हो तो ईश्वर के दूतों को क्यों दुःख देते हो। यद्यपि मूसा प्रत्यक्ष में आश्चर्य सिद्धि लेकर तुम्हारे पास आया परंतु उसके पीछे तुमने फिर बछड़ा बना लिया और तुम उपद्रवी हो। (अपूर्ण)

* कहते हैं कि जिबरील (गरुड़) सदा ईसा के साथ रहते हैं।

† यहूदियों का विश्वास है कि उनके चित्त पर ईश्वर ने एक आवरण बनाया है जिससे दूर धर्म का उनको व्यर्थ संस्कार न हो।

‡ अर्थात् जब यहूदियों पर अधर्मी लोग उपद्रव करते तब वे (म० मुहमम्मद) अंतिम धर्म दूत के उत्पन्न होने की प्रार्थना करते पर जब वह उत्पन्न हुए तो यहूदी लोग उनसे फिर गए।
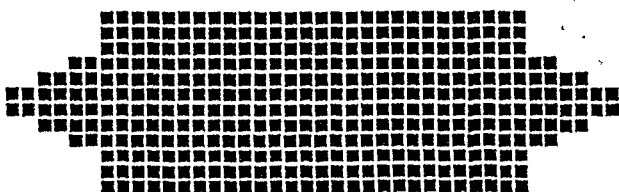
हिंदी कुरानशरीफ

मुहम्मदीय मत प्रयुक्त ईश्वर के पवित्र और आदरणीय वाक्य आरंभ करता हूँ क्षमा करने वाले और दयालु ईश्वर के नाम के साथ।

सब स्तुति उसी की है जो लोकों का भर्त्ता है। हम तेरी ही वंदना करते और तुझी से सहायता चाहते हैं। मुझको सीधा मार्ग दिखा। जो मार्ग उनका है जिन पर तूने कृपा की है न कि उनका जिन पर तूने क्रोध किया है और जो भूले हैं।

१ म० खण्ड समाप्त हुआ।

—:*:—

आरंभ करता हूँ क्षमा करनेवाले और दयालु ईश्वर के नाम के साथ।

निस्संदेह यह पुस्तक धर्मियों को उसका मार्ग दिखाती है। जो बिन देखे विश्वास करते हैं और वंदना का नियम रखते हैं और उस पर संतोष रखते हैं जो मैंने उन्हें दिया है। और जो लोग कि उस पर विश्वास लाते हैं जो तुम्हारे लिए उतारा गया और जो तुम्हारे पूर्व उतारा गया और जो अंत के दिन का स्मरण रखते हैं।

कदापि किसी भाँति से नहीं है अर्थात् कर्ममार्ग प्रवर्तकः इस नाम से कोई यज्ञादिकों को ही मुख्य धर्म मान कर इसे छोड़ उसमें प्रवृत्त होकर भ्रांत न हो जायँ इस हेतु आप मुक्त कंठ से कहते हैं कि हमारे लोगों का तो मुख्य धर्म यही है कि सर्वदा सर्व भाव से केवल श्रीकृष्ण ही का भजन करना।

एवं सर्वस्वकर्तव्यं स्वयमेव करिष्यति।
प्रभुस्सर्वसमर्थोहि ततो निश्चिततां व्रजेत्॥ २॥

अब जो कोई शंका करे कि हम सब छोड़ कर एक श्रीकृष्ण ही को भजें तो हमारा योग-क्षेम पितृ देव कर्मादिक सब कैसे सिद्ध होगा, इस शंका के निवारण के हेतु आप आज्ञा करते हैं कि इन सब बातों की चिंता छोड़ कर जैसा पूर्व में कहा है वैसा ही करो फिर तुम्हारा जो कुछ कतव्य है वह सब आप कर लेगा करने न करने अन्यथा करने में और भी सब में वह निश्चय करके समर्थ है इससे आप निश्चित हो जाना, जब हमने उसके भरोसे सब छोड़ा है तो वह अंतर्यामी है आप जानता है सब कर लेगा। गीता में उसकी प्रतिज्ञा है कि जो लोग अनन्य होकर मुझे भजते हैं उनका योगक्षेम मैं वहन करता हूँ इससे लोक वेद दोनों से निश्चित होकर केवल भजन ही करना।

यदि श्रीगोकुलाधीशो धृतस्सर्वात्मना हृदि।
ततः किमपर ब्रहि लौकिकैर्वैदिकैरपि॥ ३॥

जो यह शंका करो कि हम लौकिक वैदिक कर्म छोड़ दें तो पतित न हो जायँगे उस पर आप आज्ञा करते हैं कि जो श्रीगोकुलाधीश्वर सर्वभाव से एकचित्तता से हृदय में धारण किए गए हैं तो बताओ फिर और किसी लौकिक और वैदिक कर्मों से क्या? क्योंकि ये तो दोनों रीति से व्यर्थ पड़ते हैं जो श्रीकृष्ण की भक्ति नहीं है तो ये कर्म किस काम के क्योंकि ये परमानंदमय श्रीकृष्ण वियोगदान में समर्थ नहीं हैं और जो श्रीकृष्ण की भक्ति है तब ये किस काम के क्योंकि उसको फिर और कोई कर्म अवशिष्ट नहीं हैं इससे सर्व प्रकार से अनन्य होकर सर्वांतरयामी एक श्रीकृष्ण ही का भजन करना।

ईश्वर चाहै तो उनका कान और आँख हरण कर ले क्योंकि निश्चय ईश्वर वस्तु मात्र का प्रभु है। हे लोगो ! अपने परमेश्वर की बंदना करो जिसने तुमको और तुम्हारे पर्वजों जो उत्पन्न किया तो बचोगे। जिसने तुम्हारे हेतु पृथ्वी का बिछौना बनाया और आकाश की छत और आकाश से पानी उतार कर फल उत्पन्न करके तुम्हारा भोज्य बनाया इससे उसकी किसी की समता मत दो यह तुम जानते हो। यदि तुमको इस विषय में संदेह हो तो जो वस्तु हमने अपने दासों के हेतु बनाई हैं इसमें से (एक भी) वस्तु वैसी ही लाओ और अपने साक्षियों से पूछो कि ईश्वर को छोड़ कर तुम (कैसे) सच्चे हो तुम वैसा नहीं कर सकते निश्चय तुम वैसा नहीं कर सकते इससे उस अग्नि से डरो जिसका मनुष्य ईंधन है और पत्थर (भी उन) पाखंडियों के हेतु बनाये गए हैं, और लोगों को यह समाचार शुभ है जिन्होंने उस पर विश्वास किया है और अच्छी करनी की है क्योंकि उनके लिए वे स्वर्ग बने हैं जिनके नीचे नहरैं बहती हैं और उनको (उत्तम) फलों का भोजन मिलैगा तब वे कहैंगे कि यह वह वस्तु है जो हमैं पहिले ही से मिली हैं जो एक दूसरे के समान हैं और ये अवर्णनीय और पवित्र हैं और वे उसमें सर्वदा रहने वाले हैं।

निश्चय भगवान को इसमें लज्जा नहीं है कि कोई मच्छड़ की उपमा दे या कोई और उपमा दे जो लोग विश्वास रखते हैं वे भली भाँति जानते हैं कि निश्चय यह उनके ईश्वर का कहा है पर जो अविश्वासी हैं वे कहते हैं कि ईश्वर को ऐसी उपमा देने की क्या आवश्यकता थी। इसी से वह बहुतों को सन्मार्ग दिखाता है और बहुतों को वह भुलाता है क्योंकि वे उसकी आज्ञा उल्लंघन करते हैं। जो दुष्ट लोग शपथ किये पीछे ईश्वर के साथ के नियमों को तोड़ते हैं और जिन बातों को उसने जोड़ने की आज्ञा दी है उनको भी तोड़ते हैं और सारे देश में उपद्रव उठाते हैं वे निश्चय हानि वाले हैं। जिसने मृत से तुमको जीवनदान दिया और जीवित से मृत करैगा और फिर जिलाऐगा और अपने पास बुलाऐगा उस ईश्वर पर तुम क्यों नहीं विश्वास करते। उसी ने पृथ्वी पर की सब वस्तु तुम्हारे हेतु उत्पन्न की और साती आकाश की ओर दृष्टि फेर कर पृथ्वी से उसका

भी अपने वचनों को पूरा करूंगा और केवल मेरा ही भय रखो। और मानो जो कुछ हमने तुम्हारे हेतु उतारा क्योंकि सच माननेवाला तुम्हारे पास है और मेरी आज्ञाओं को बहुमूल्य समझो और मुझसे भय करो। सत्य में असत्य मत मिलाओ और सबको जान बूझकर मत छिपाओ। और वंदना करो (नमाज खड़ी करो) और दान(जकात) दो और वंदना में झुकनेवालों के साथ झुको।

लोगों को सन्मार्ग पर चलने का उपदेश करते हो पर तुम आप वैसा आचरण नहीं करते। धर्म पुस्तकों को पढ़ते हो पर समझते नहीं। धैर्य से प्रार्थना करो और निश्चय रखकर वंदना करो यद्यपि यह कठिन है परंतु दीन भक्तों को सदा लभ्य है क्योंकि उनको अपने सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर से मिलने और अंत में उसके पास जाने का निश्चय है। हे इसराईल की संतान हमारे उन अनुग्रहों को जो हमने तुम पर किए हैं स्मरण रखो। हमने तुमको संसार के जीवमात्र से श्रेष्ठ किया है। और उस दिन का भय रखो जिस दिन कोई किसी के कुछ भी काम नहीं आता और न किसी की सिफारश सुनी जाती है न कोई कुछ बदला देकर बच सकता है और न किसी की कोई सहायता कर सकता है। उसको स्मरण करो जो हमने तुमको फरऊनके गणों से बचाया जो तुमको बड़ा दुःख देते और तुम्हारे संतान का वध करते तथा तुम्हारी स्त्रियों को (दासी बनाने को) जीती रखते। ईश्वर ने इस कार्य में तुम्हारी बड़ी सहायता की है। तुम देखते थे कि (नील) नदी को दो भाग करके हमने तुम्हें बचा लिया और फ़रऊन के गण को डुबा कर नाश कर दिया। मूसा से हमने चालीस रात्रि में सब आपत्तियों से छुड़ाने का प्रण किया था पर फिर तुम सब मुझसे फिर गए और बछड़े की पूजा की अतएव तुम बहिर्मुख हो। तब भी हमने तुमको क्षमा किया कि तुम अब भी हमारे गुण मानों और इसी हेतु मूसा को हमने धर्म पुस्तक और उपदेश दिए कि तुम उनके द्वारा सत्यमार्ग पहिचानो। और जब मूसा ने अपनी जाति से कहा कि तुम लोगों ने इस बछड़े की पूजा करके अपनी बड़ी हानि किया इससे अब तुम इसकी घृणा करो और इसके प्रायश्चित्त में अपने जीव की बलि दो क्योंकि इसी में तुम्हारे परमेश्वर की प्रसन्नता है। यों उसने

२. निरुक्तकार का अर्थ

यह श्रुति यज्ञ का प्रतिपादन करती है; चार वेद इसके चार सींग हैं; तीन सवन अर्थात् नीच, मध्य और उच्च स्वर ये तीन पैर हैं; प्रायणीय और उदयनीय ये दो सिर हैं; सात गायत्र्यादि छंद इसके हाथ हैं; मंत्र, ब्राह्मण और कल्प तीनों से बँधा हुआ यज्ञ वृषभ शब्द करता है, तेज का देवता मनुष्यों में इनके कल्याण के हेतु प्रवेश करता है।

३. महाभाष्यकार का अर्थ

यह श्रुति शब्दरूपी वृषभ के वर्णन में है यथा संज्ञा, क्रिया, उपसर्ग और निपात ये चार इसके सींग हैं; और भूत भविष्यत् और वर्त्तमान ये काल तीन पैर हैं; नित्य और कार्य ये दो सिर हैं; सात विभक्तियाँ हाथ हैं, हृदय, कंठ और सिर तीन स्थानों में बँधा है, वर्षण में इसकी वृषभ संज्ञा है, शब्द करनेवाला महान् देव (शब्द स्वरूप) मरण धर्म-वाले मनुष्यों में प्रविष्ट होता है।

४. श्रीरामानुज का अर्थ

यह श्रुति ईश्वर के वर्णन में है, चारों वेद चार सींग हैं; नित्य, बद्ध और मुक्त तीनों प्रकार के जीव तीन पाद हैं; शुद्ध सत्व और गुणात्मक सत्व इसके दो सिर हैं अर्थात् शिरःस्थान में हैं, महत्तत्वादि, सात प्रकृति और विकृति इसके सात हाथ हैं, ऐसा महादेव श्रेष्ठ वृषभ वासुदेव अपने संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध इन तीनों रूपों से मनुष्यों में बँधता नाम प्रकट होता हुआ सब वस्तुओं को रोरवीति अर्थात् नाम-रूपवत् करता है और मर्त्य नाम चेतनाऽचेतन पदार्थों को अंतरात्मा होकर प्रवेश करता है।

५. श्री विद्यारण्य का अर्थ

यह श्रुति प्रणव पर है, अकार, उकार, मकार और नाद ये इसके चार सींग हैं, अध्यात्म, विश्व और तैजस ये तीन पाद हैं, चित् और अचित् ये दो शक्तियाँ शिरस्थान में हैं, भूरादि सात लोक सात हाथ हैं, विराट् हिरण्यगर्भ और व्याकृत इन तीन प्रकारों से बँधा हुआ वृषभ प्रणव ब्रह्म तेजोमयत्व का प्रतिपादन करता है।

की थी। जो लोग मुसलमान* या यहूदी† या क्रिस्तान‡ या साबईन§ जो कोई ईश्वर पर और प्रलयकाल पर विश्वास करता है और अच्छा काम करता है, तो वह ईश्वर से अपनी कमाई पाता है और न उसको डर है, और न वह दुःख भोगता है। जब हमने पर्वत॥ ऊंचा किया और तुमसे वाक्य लिया और कहा कि जो हमने तुमको दिया उसको बल से पकड़ो जिसमें तुमको भय हो फिर इसके पीछे तुम फिर गए सो इस अवसर पर जो ईश्वर की उदारता और दया तुमपर न होता तो तुम नाश हो जाते और तुम जानते हो कि तुम लोगों में से जिसने अतवार के दिन उपद्रव किया उनको हमने शाप दिया कि बंदर हो जाओ और इस कथा को जो उस जात के लोग हैं वा होंगे उनके हेतु हमने विभीषिका रखा कि इससे उनको भय और उपदेश हो। और जब मूसा ने अपनी जाति को कहा कि एक बछड़ी बलि दो तो उन्होंने कहा कि तुम हँसी करते हो। मूसा ने कहा कि मैं इन मूर्खों की मंडली में ईश्वर से शरण माँगता हूँ तब वह बोले कि अपने ईश्वर को पुकार कि वह हमसे वर्णन करे कि वह गाय कैसी है। उसने कहा वह न बूढ़ी है न बिन ब्याई और इन सभों में डील की छोटी है सो अब जो ईश्वर ने आज्ञा किया है करो। फिर उन्होंने कहा अपने ईश्वर को पुकार कि वह उसका रंग बतलावे। मूसा ने कहा कि वह एक गहिरे पीले रंग की गाय है जिसके देखने से नेत्रों को आनंद होता है। वे बोले हमारे वास्ते अपने ईश्वर को पुकार कि वह वर्णन करे कि वह किस जात की गाय है क्योंकि हमको

---

* म० मुहम्मद का मत मानने वाले।

† म० मूसा का मत मानने वाले।

‡ म० ईसा का मत मानने वाले।

§ म० इब्राहीम का मत माननेवाले। इस मत के लोग अब नहीं देख पड़ते।

॥ तूर पर्वत० जब तौरेत उतरी तब लोगों ने कहा कि यह सब आज्ञा हमसे न मानी जायँगी इस हेतु उनको भय दिखाने को ईश्वर ने तूर पर्वत ऊँचा किया कि उनके ऊपर गिर पड़े।

व्यर्थ के मनोरथ किया करते हैं इससे उनके पास सेवाय तर्क वितर्कों के और कुछ नहीं है। और वे लोग अपराधी हैं जो पुस्तक अपने हाथ से लिखते हैं और कहते हैं कि यह ईश्वर के यहाँ से आई है और उससे लाभ उठाते हैं सो उनके इस हाथ के लिखने और लाभ उठाने पर धिक्कार है। कितने कहते हैं कि हमको नर्क का भय नहीं केवल कुछ दिन नर्क भोगना होगा*। तो कहो कि क्या ईश्वर से उन लोगों ने ऐसा वचन ले लिया है यदि ऐसा वचन ले लिया है तो अवश्य ईश्वर उसके विरुद्ध न करेगा परंतु उसके विषय में व्यर्थ झूठ क्यों कहते हो। जिन लोगों ने पाप कमाया है उनको पाप ने आच्छादन कर लिया है और वे नर्क के भागी हैं और सदा नर्क ही में रहेंगे। और जिन लोगों ने धर्म विश्वास किया और पुण्य कर्म किए वे स्वर्ग के भागी हैं और सदा स्वर्ग में रहेंगे। हमने इसराईल की संतान से शपथ लिया था कि ईश्वर को छोड़ और किसी की पूजा मत करो, माता, पिता, संबंधी, अनाथ और दीनों का उपकार करो, लोगों से अच्छे वचन बोलो, वंदना नित्य करो और दान दो किंतु तुम लोगों में से कुछ लोग फिर गए। फिर तुम लोगों से हमने शपथ लिया कि आपस में मार काट न करो और न अपने जातिवालों को देश से निकालो और तुमने भी यह प्रतिज्ञा की और उस पर आरूढ़ रहे। परंतु फिर तुम वैसे ही मार काट करते हो, अपने जाति के लोगों को देश से निकाल देते हो, उन पर पाप और अन्याय से चढ़ाई करते हो, और वही लोग जब तुम्हारे सामने बंधुए होकर आते हैं तो उनको छुड़ाने को भी प्रस्तुत होते हो, यद्यपि उनका निकाल देना ही पाप है, तो क्यों धर्म पुस्तक का एक वाक्य मानते हो एक नहीं मानते, तो ऐसे लोगों को क्या दंड है, यही कि संसार जीवन में तो निन्दा और प्रलय के दिन कठिन से कठिन नर्क दंड, क्योंकि ईश्वर तुम्हारे सब कर्मों का ज्ञाता है। ऐसे ही लोगों ने तुच्छ संसार के बदले (चिरसुख) स्वर्ग

* यहूदियों के एक संप्रदाय का विश्वास था कि केवल थोड़ी सी पाप की यातना भोगने के बाद यहूदी मात्र स्वर्ग जायँगे। जैसा कि काशी वासियों का भैरवी यातना के विषय में विश्वास है।

यह सब जाने दीजिये सृष्टि के आरंभ से चलिये। भगवान मनु लिखते हैं कि प्रथम सब जगत सुपुप्त था। फिर सर्वनियंता जगदीश्वर ने स्वशक्ति से प्रवेश पूर्वक उसको चैतन्य किया। यही यूनानियों के ऋषि केयस ने भी लिखा है। फिर परमात्मा ने अपनी प्रकृति रूपी परिणत शरीर से प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा से चिंता किया कि 'कैसे सब होगा' और यह चिंता करके पहिले जल होय यह कह कर आकाशादि क्रम से जल सृष्टि किया। ओल्ड सिस्टेम (बाइबिल) के जिनिसिस के प्रथम अध्याय को इस से, वहाँ भी यही है। फिर परमात्मा ने जल से ब्रह्मा उत्पन्न किया उसने आकाश पृथ्वी स्वर्गादि निर्माण किया और महत्तत्व अहंकार गुण आदि की क्रम से सृष्टि हुई और उससे मनुष्य पशु पक्षी स्थावरादि उत्पन्न हुए। फिर प्राणविशिष्ट इंद्रादि देवगण और कम हेतुक पाषाणमय देवगण और साध्य नामक सूक्ष्म देवगण अग्निष्टोमादि यज्ञ बनाये गए। *

अँगरेजी और यूनानी फिलासिफी में इस बात की छाया देख लीजिये। फिर वेद क्रिया काल ग्रह उन्नत अवनत स्थान तप संतोष इच्छा आदि की सृष्टि हुई फिर कर्तव्य अकर्तव्य कर्म के विभाग के हेतु धर्म अधर्म की सृष्टि हुई। धर्म का फल सुख और अधर्म का दुःख (अब महाभारत के आदि पर्व में धर्म अधर्म की सृष्टि वर्णन इस मनु कथित सृष्टि की तुलना करके उससे मिल्टन के मृत्यु विषयक प्रस्ताव मिला कर पढ़ो।) फिर पंच महाभूतों के सूक्ष्म अंश और स्थूल अंश से जगत की सृष्टि हुई। (मिल्टन की ५ वीं पुस्तक में स्वर्गच्युति के गल्प से इसे मिलाओ।) फिर मानव सृष्टि हुई और आत्मा को उसके देहों में प्रवेश का अधिकार दिया गया और एक को छोड़ कर दूसरे में गमन का भी (इससे सिद्ध होता है कि Transmigration of soul के प्रगट कर्ता भी मनु ही हैं।)

ऐसे ही संसार के सब देवता भी भारतवर्ष ही के देवगण की छाया हैं। मिनर्वा नाम्नी यूरोप की प्राचीन देवी हम लोगों की भगवती दुर्गा हैं। मिनर्वा इंद्र के कंधों से प्रगटी है यहाँ भी दुर्गा देवताओं

* See Plato's Theology Concerning spiritual nature.
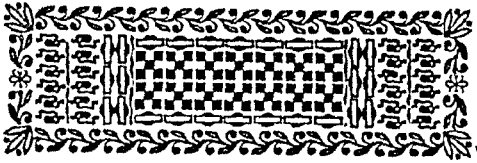
श्रीवल्लभाचार्य कृत चतुश्श्लोकी

नमः प्रेमपथप्रवर्तकेभ्यः

—:※:—

सर्वदा सर्वभावेन भजनीयो व्रजाधिपः।
स्वस्यायमेव धर्मोहि नान्यः क्वापि कथं च न ॥ १ ॥

संसार के जीवों को कर्मजाल में बधे देखकर आप परम कारुणिक श्रीमहाप्रभुजी अन्य साधनों की निवृत्ति के हेतु परम अमृत स्वरूप वाक्य श्रीमुख से आज्ञा करते हैं, सर्वदेति। सब समय में दुःख सुख में खाते पीते उठते बैठते सब क्षण में सर्व भाव से व्रजाधिप श्रीराधारमण ही का भजन करना क्योंकि भजनीय वही है, और कोई प्रेम का बदला नहीं दे सकता और भजन भी सर्व भाव से करना अर्थात् संसार में जितने भाव हैं ईश्वर भाव, गुरु भाव, मित्र भाव, पतिभाव इत्यादि पृथक् भाव जिसमें जिससे हो सब को समेटकर सब भाव से उन्हीं का भजन करना, रीझाना भी उन्हीं पर खीझना तो उन्हीं पर, माँगना तो उन्हीं से लड़ना तो उन्हीं से, जिसमें फिर कहीं और कोई भाव न रह जाय केवल एक अवलंब श्रीकृष्ण ही हों इस पर आप आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमारे हैं उनका निश्चय एक यही धर्म है दूसरा कोई धर्म

केवल यूरोप के मूर्तिपूजकों पर ही नहीं नये संप्रदाय वालों की भी यही दशा है। गेब्रिल (जिवरईल) गरुड़ का अपभ्रंश है और गरुड़ जैसे परमेश्वर के सबसे उत्तम पार्षदों में है वैसे ही जिवरईल उत्तम फरिश्तों में। वरंच फरिश्ता शब्द ही पार्षद का अपभ्रंश है। जिवरईल का ईश्वर की आज्ञा ला कर मत-प्रवर्त्तक होने का उदाहरण भी रामानुज संप्रदाय में देख लीजिये। क्रिस्तानों में एक आचार्य जोसफेट करनेल हैं और यह महात्मा शाक्यसिंह की प्रतिमूर्ति हैं। दोनों के पिता राजा, दोनो के जन्म के पूर्व ज्योतिषियों ने कहा था कि यह या तो बड़ा प्रतापी राजा होगा या धार्मिक। दोनों के पिता ने चेष्टा किया कि जिसमें पुत्र सन्यासी न हो और उनको रम्य उद्यान में रखा किंतु संसार की असारता जान कर दोनों ही संन्यासी हो गये और दोनों ने अपने पिता को नये धर्म से दीक्षित किया। सबसे ऊपर आनंद की बात यह है जान, जो मनुष्य जोज़फेट का माहात्म प्रचारक है, लिखता है कि जोजफेट भारवर्ष में हुआ और हिंदुस्थान से आये विश्वस्त लोगों से हमने उसका चरित्र सुना। अब बतलाइये जोजफेट शाक्यसिंह ही का नामान्तर है कि नहीं*।

धर्म ही पर नहीं नीति संबंधी भी यावत् गल्प मात्र इसी भारत-वर्ष से फैलकर और स्थानों में गई हैं। विलसन साहब लिखते हैं— केपस नगर के घोड़ा का उपाख्यान भारतवर्ष में भी प्रचलित है किंतु भेद इतना है कि भारतवर्ष में घोड़ा हाथी के स्वरूप में है। उर्दू किताबों का यह किस्सा अत्यंत प्रसिद्ध है कि टके की मुर्गी लेंगे, तब उसको अंडे बच्चे होंगे तो उनको बेंच कर बकरी लेंगे, उसको बच्चे होंगे तो उनको बेंच कर घोड़ी लेंगे, उसको बच्चे होंगे तो उससे रोजगार करेंगे, रुपया पैदा होगा तब बादशाह की बेटी से शादी

व देवेंद्र और यूनान में दिवस वा जियस। दोनों वज्रपाणि वारिदाता दांभिक पर्वत वासी और विलाससुखभोगी और एक वृत्रदानवहन्ता दूसरे टाइटस-दान-व हन्ता।

* See Professor Max Muller's Sanskrit Literature

तस्मात् सर्वात्मना नित्यं गोकुलेश्वर पादयोः।
स्मरणं कीर्तनं चापि न त्याज्यमिति मे मतिः॥ ४॥

इससे सर्व भाव से आत्मा मन बुद्धि प्राण देह और इंद्रिय सब से नित्य प्रतिक्षण श्रीगोकुलेश्वर जुगल चरणारविंद का स्मरण और कीर्तन कभी नहीं छोड़ना यह श्री महाप्रभु जी आज्ञा करते हैं कि हमारी मति है अर्थात् जो श्रीमहाप्रभु जी के मतावलंबिगन हैं उनको तो सब साधन छोड़ कर एक श्रीकृष्ण ही भजनीय हैं। यह आपने अपना मत दिखाया।

श्रीवल्लभाचार्य विरचिता चतुश्श्लोकी समाप्ता।*

*श्री हरिश्चंद मेगजीन जिल्द १ संख्या ३ दिसंबर १५ सन् १८७३ ई० में प्रकाशित।

संसार के और और मानवोपकारियों की भाँति विस्मृति देवी के अपार उदर में यह भी शयन करते हैं। यदि दो सहस्र वर्ष पूर्व कोई भारत वर्ष में जाता तो ये महात्मा लोग मिलते। अब केवल हम यही कह सकते हैं कि यह अति चातुर्य उन्हीं लोगों का है जिनको अब कोई कोई निगरो पुकारते हैं।" *

—:⁂:—

* श्रीहरिश्चंद्र चंद्रिका खंड ६ संख्या ७ जनवरी सन् १८७९ पर प्रकाशित और इसके अंत में 'क्रमशः' छपा है अतः अधूरा है।
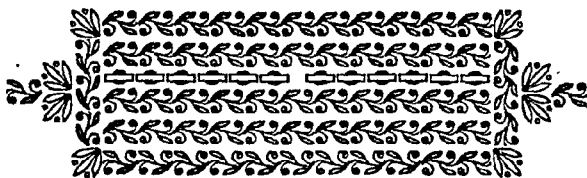
श्रुति रहस्य

[नमः श्रीवल्लभाय श्रुतिवाक्यैस्तत्स्वरूपप्रदर्शकाय श्रीगिरिधराय च]

वेद के अक्षर कामधेनु हैं और इसी कारण सब मतों के आचार्य लोग उनके जितने अर्थ करते हैं सब मान्य होते हैं। यदि उनमें एक भी न माना जाय तो पूर्वाचार्यों पर आक्षेप होने से न माननेवाले नास्तिक गिने जाते हैं। जैसे 'चत्वारिश्रृंगा' इस श्रुति का निरुक्तकार, महाभाष्यकार, रामानुजाचार्य, विद्यारण्य इत्यादि ने अनेक प्रकार का अर्थ किया है और ये सब अर्थकार ऐसे हैं कि उनमें से एक के भी मानने बिना काम नहीं चलता तो सिद्धांत यह हुआ कि श्रुति से जितने अर्थ निकलेंगे वे कोई अप्रमाण न होंगे । जैसा चत्वारिश्रृंगा के यहाँ सब अर्थ दिखाते हैं।

चत्वारिश्रृंगात्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य ।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवो मर्त्या आविवेश ॥

१. अक्षरार्थ

उसको चार सींग हैं, तीन पैर हैं, दो सिर हैं, सात हाथ हैं, तीन प्रकार से बँधा हुआ बैल चिल्लाता है, तेज देवता मरनेवालों में घुसा है।

अब यह केवल रूपक की भाँति कूट हुआ इसको स्पष्ट करने को

थीं, आधिदैविक सूर्य की विष्णुमूर्ति के वर्णन में व्याख्यात हुईं। चाहे जिस रूप से हो वेदों ने प्राचीनकाल में विष्णुमहिमा गाई। इस के पीछे इस सूर्य की एक प्रतिमूर्ति पृथ्वी पर मानी गई, अर्थात् अग्नि। आर्यों का दूसरा देवता अग्नि है। अग्नि रुद्र है और 'यज्ञो वै विष्णुः' यज्ञ ही से रुद्र देवता माने गये। आर्यों के एक छोड़ कर दो देवता हुए। फिर तीन और तीन से ग्यारह को त्रिगुण करने से तैंतीस और इसी तैंतीस से तैंतीस करोड़ देवता हुए। इस विषय का विशेष वर्णन अन्य प्रसंग में करेंगे। यहाँ केवल इस बात को दिखलाते हैं कि वर्तमान समय में भी भारतवर्ष से और वैष्णवता से कितना घनिष्ठ संबंध है। किंतु योरप के पूर्वविद्या जाननेवाले विद्वानों का मत है कि रुद्र आदि आर्यों के देवता नहीं हैं * वह अनार्यों (Non-Aryan or Tamalian) के देवता हैं। इस के वे लोग आठ कारण देते हैं। प्रथम वेदों में लिंगपूजा का निषेध है। यथा वशिष्ठ इंद्र से विनती करते हैं कि हमारी वस्तुओं को 'शिश्नदेवा' (लिंगपूजक) से बचाओ इत्यादि†। ऋग्वेद और अन्यान्य ग्रंथों में भी शिश्नदेवालोगों को असुर, दस्यु इत्यादि कहा है और मंत्रों में भी रुद्र की स्तुति भयंकर भाव से की है। दूसरी युक्ति यह है कि स्मृतियों में लिंगपूजा का निषेध है।‡ प्रोफेसर मैक्समूलर ने वशिष्ठस्मृति के अनुवाद के स्थल में यह विषय बहुत स्पष्ट लिखा है। तीसरी युक्ति वे यह कहते हैं कि लिंगपूजक और दुर्गाभैरवादिकों के पूजक ब्राह्मण को पंक्ति से बाहर करना लिखा है। (मिताक्षराधृत ब्रह्मांडपुराण के वाक्य, चतुर्विंशतिमत पराशर व्याख्या में माधव श्लोक २६, आपस्तम्ब, भागवत चतुर्थस्कंध द्वितीयाध्याय २८ श्लोक और धर्माब्धिसार के तीसरे परिच्छेद का पूर्वार्द्ध देखो।) चौथी युक्ति यह कहते हैं कि लिंग का तथा दुर्गा भैरवादि का निर्माल्य

* ऐंटिक्विटीज अव उड़ीसा १ जिल्द १३६ पेज देखो।

† Rigveda, IV., P. 6 and Dr. Wilson's Vedic Comments

‡ Professor Max Muller's Ancient Sanskrit Literature, P. 55

६. श्री वल्लभाचार्य जी के मतानुयायी का अर्थ

यह श्रुति श्री पुष्टि लीलास्थ पूर्ण पुरुषोत्तम ही का प्रतिपादन करती है, उन श्री पुरुषोत्तम के चार नित्य सिद्धादि यूथ शृंग अर्थात् उत्तम स्थान में हैं और उनके तीन पाद अर्थात् प्राप्ति होने के साधन तनुजा, वित्तजा और मानसी यह तीन प्रकार की सेवा हैं; सख्य और आत्मनिवेदन ये दो भक्तियाँ शिर अर्थात् सिद्ध स्थान में हैं; श्रवणादिक सात भक्तियाँ हाथ अर्थात् साधन स्थान में हैं; श्रीपुरुषोत्तम की पूर्वोक्त नौ प्रकार के भक्ति से युक्त जीव अलौकिक सामर्थ्य, सायुज्य और सेवा में उपयोगी देह धारण, इन तीन प्रकार से बँधा है; और उनकी लीला के प्रवेश के अर्थ धर्म-स्वरूप वर्षा करनेवाले और शोभा करनेवाले वृषभ अर्थात् श्रीआचार्य रोरवीति नाम भक्तों को मंत्र और ग्रंथ द्वारा उपदेश करते हैं जिससे वर्ण धर्मा जीव अर्थात् सेवामार्गी जीव जब अधिकारी होते हैं तब महोदेव लीलास्थ पूर्ण पुरुषोत्तम उनमें आवेश करके लीला का अनुभव कराते हैं।

७. श्रीवेणु पर अर्थ

यह श्रुति श्रीवेणु का प्रतिपादन करती है; गान में चार रीति की बानी चार सींग हैं; कोमलादि तीन स्वर पाद हैं; मुख्य छिद्र वा लय और स्वर दो सिर हैं; सात रंध्र सात हाथ हैं; अधर दो हस्तों से बँधा हैं; ऐसा 'रुद्रो वै वेणुः' इस श्रुति से साक्षाद्रुद्रस्वरूप वेणु 'श्रीगोपालमुपास्महे श्रुतिशिरोवंशीरवैर्दर्शितं', इससे वेणु रूप ही धर्म मनुष्यों में प्रवेश करता है।

८. श्री संगीत पर अर्थ

यह श्रुति संगीत का भी प्रतिपादन करती है, इसके तत, वितत, घन और धमन चार सींग हैं, तीन ग्राम तीन पाद हैं, लय और स्वर दो सिर हैं; सात स्वर वा त्रिमूर्छना सप्तक सात हाथ हैं; कंठ, नाभि और मुख इन तीन स्थलों से बँधा हुआ संगीत रूपी वृषभ अर्थात् गान ब्रह्म मनुष्यों को तन्मय कर देता है।

९. साहित्य पर अर्थ

यह श्रुति साहित्य का भी प्रतिपादन करती है; इसके आरभट्यादि

इसी कारण शास्त्रों में शिव का, भृगु और दक्ष आदि का विवाद कई स्थल पर लिखा है और रुद्रभाग इसी हेतु यज्ञ के बाहर है। यद्यपि ये पूर्वोक्त युक्तियाँ योरोपीय विद्वानों की हैं, हमलोगों से कोई संबंध नहीं किंतु इस विषय में बाहरवाले क्या कहते हैं, केवल यह दिखलाने को यहाँ लिखी गई हैं।

पाश्चिमात्य विद्वानों का मत है कि आर्य लोग (Aryans) जब मध्य एशिया (Central Asia) में थे तभी से लोग विष्णु का नाम जानते हैं। ज़ोरौस्ट्रियन (Zorastrian) ग्रंथ जो ईरानी और आर्य शाखाओं के भिन्न होने के पूर्व के लिखे हैं उन में भी विष्णु का वर्णन है। वेदों के आरंभकाल से पुराणों के समय तक तो विष्णुमहिमा आर्यग्रंथों में पूर्ण है। वरंच तंत्र और आधुनिक भाषा ग्रंथों में उसी भाँति एकछत्र विष्णुमहिमा का राज्य है।

पंडितवर बाबू राजेन्द्रलाल मित्र ने वैष्णवता के काल को पाँच भाग में विभक्त किया है। यथा १ वेदों के आदि समय की वैष्णवता, २ ब्राह्मण के समय की वैष्णवता, ३ पाणिनि के और इतिहासों के समय की वैष्णवता, ४ पुराणों के समय की वैष्णवता, ५ आधुनिक समय की वैष्णवता।

वेदों के आदि समय से विष्णु की ईश्वरता कही गई है। ऋग्वेद संहिता में विष्णु की बहुत सी स्तुति है। विष्णु को किसी विशेष स्थान का नायक या किसी विशेष तत्त्व वा कर्म का स्वामी नहीं कहा है, वरंच सर्वेश्वर की भाँति स्तुति किया है। यथा विष्णु पृथ्वी के सातों तहों पर फैला है। विष्णु ने जगत् को अपने तीन पैर के भीतर किया। जगत् उसी के रज में लिपटा है। विष्णु के कर्मों को देखो जो कि इंद्र का सखा है। ऋषियो! विष्णु के ऊँचे पद को देखो, जो एक आँख की भाँति आकाश में स्थिर है। पंडितो! स्तुति गाकर विष्णु के ऊँचे पद को खोजो। इत्यादि। ब्राह्मणों ने इन्हीं मंत्रों का बड़ा विस्तार किया है और अब तक यज्ञ, होम, श्राद्ध आदि सभी कर्मों में ये मंत्र पढ़े जाते हैं। ऐसे ही और स्थानों में विष्णु को जगत् का रक्षक, स्वर्ग और पृथ्वी का बनानेवाला, सूर्य और अँधेरे का उत्पन्न
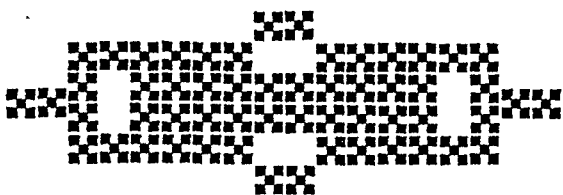
इशुखृष्ट और ईशकृष्ण

पाठक गण को स्मरण होगा कि भारत भिक्षा में "भारत भुज बल लहि जग रच्छित, भारत सिच्छा लहि जग सिच्छित" लिखा है, आज उसी का हम प्रमाण देना चाहते हैं। न्यायप्रियगण देखें कि जैसा भारत भिक्षा में कहा गया वह उचित है कि नहीं।

समाज की उन्नति का मूल धर्म है। जहाँ का धर्म परिष्कृत नहीं वहाँ कभी समाज उन्नत नहीं। धर्म पर सब लोगों को ऐसा आग्रह रहता है, कि उसको साक्षात् परमेश्वर से उत्पन्न मानते हैं अतएव अन्य विषयों को छोड़ कर केवल धर्म पर हम विचार किया चाहते हैं और मुक्त कंठ होकर कहते हैं कि संसार के धर्माचार्य मात्र ने भारतवर्ष की छाया से अपने अपने ईश्वर, देवता, धर्म पुस्तक, धर्म नीति और निज चरित्र निर्माण किया है। जितने धर्म प्रचलित हैं या प्रचलित थे वह सब या तो वैदिकों का अनुगमन हैं या बौद्धों का। यहाँ तक कि प्रसिद्ध ईश्वरवाची शब्द भी इसी से निकले हैं। अंगरेजों में परमेश्वर को गाड (God) कहते हैं। यह गौतम का नामांतर है। उत्तर के देशों में गौतम को गोडमा कहते हैं, इसी से यह गाड शब्द बना। फारसी में मूर्तियों को बुत कहते हैं यह शब्द बुद्ध से निकला है। हरम हर्म्य से, सनम शंभु से, दैर देवल से, देव देवता से और ऐसे ही देवतावाचक अनेक शब्द दूसरे दूसरों से।

ही से सिद्ध है कि उस समय के अति पूर्व कृष्णावतार की कथा भारतवर्ष में फैल गई थी। यूनानियों के उदय के पूर्व पाणिनि का समय सभी मानते हैं। विद्वानों का मत है कि क्रम से पूजा के नियम भी बदले यथा पूर्व में यज्ञाहुति, फिर बलि और अष्टांग पूजा आदि हुई और देवविषयक ज्ञान की वृद्धि के अंत में सब पूजन आदि से उस की भक्ति श्रेष्ठ मानी गई।

पुराणों के समय में तो विधिपूर्वक वैष्णव मत फैला हुआ था, यह सब पर विदित ही है। वैष्णव पुराणों की कौन कहे, शाक्त और शैव पुराणों में भी उन देवताओं की स्तुति उन को विष्णु से संपूर्ण भिन्न कर के नहीं कर सके हैं। अब जैसा वैष्णव मत माना जाता है उस के बहुत से नियम पुराणों के समय से और फिर तंत्रों के समय से चले हैं। दो हज़ार वर्ष की पुरानी मूर्त्तियाँ वाराह, राम, लक्ष्मण और वासुदेव की मिली हैं और उन पर भी खुदा हुआ है कि उन मूर्त्तियों की स्थापना करनेवालों का वंश भागवत अर्थात् वैष्णव था। राजतरंगिणी के ही देखने से राम, केशव आदि मूर्त्तियों की पूजा यहाँ बहुत दिन से प्रचलित है, यह स्पष्ट हो जाता है। इस से इस की नवीनता या प्राचीनता का झगड़ा न करके यहाँ थोड़ा सा इस अदल बदल का कारण निरूपण करते हैं।

मनुष्य के स्वभाव ही में यह बात है कि जब वह किसी बात पर प्रवृत्त होता है तो क्रमशः उस की उन्नति करता जाता है और उस विषय को जब तक वह एक अंत तक नहीं पहुँचा लेता संतुष्ट नहीं होता। सूर्य के मानने की ओर जब मनुष्यों की प्रवृत्ति हुई तो इस विषय को भी वे लोग ऐसी ही सूक्ष्म दृष्टि से देखते गये।

प्रथमतः कर्म मार्ग में फँसकर लोग अनेक देवी देवों को पूजते हैं, किंतु बुद्धि का यह प्रकृत धर्म है कि यह ज्यों ज्यों समुज्ज्वल होती है अपने विषय मात्र को उज्ज्वल करती जाती है। थोड़ी बुद्धि बढ़ने ही से यह विचार चित्त में उत्पन्न होता है कि इतने देवी देव इस अनंत सृष्टि के नियामक नहीं हो सकते, इन का कर्त्ता स्वतंत्र कोई

के अंश (अंश कंधे को भी कहते हैं) से प्रादुर्भूत हुई हैं। मिनर्वा भी सब शास्त्रों के लिए जन्मी हैं और दुर्गा भी, मिनर्वा युद्ध की देवी है दुर्गा भी। मिनर्वा शनिश्चर से लड़ी है दुर्गा महिषासुर से (महिषासुर और शनैश्चर में सादृश्य यह है कि शनैश्चर महिषवाहन है और महिषासुर महिष रूप) मिनर्वा और दुर्गा दोनों सिंहवाहिनी हैं मिनर्वा के एक हाथ में भाला और दूसरे में मडुस का सिर है (यह मडुस शब्द मधु वा महिष से निकला होगा) और दुर्गा का भी यही ध्यान है। मिनर्वा का दूसरा ध्यान कटे सिर का मुकुट पहिने और सर्प लपेटे है और दुर्गा का भी। मिनर्वा को मुर्गे प्यारे हैं यहाँ देवी को भी कुक्कुट बलि दिया जाता है।

अब अपेल्लो को लीजिए। यह हिंदुओं के श्रीकृष्ण का चित्र है। इसका सूर्य में निवास है और यहाँ भी नारायण का सूर्य में निवास है। इस नाम के चार देवता थे और यहाँ भी श्रीकृष्ण के चार व्यूह हैं। उसने पाइथन नामक सर्प को मारा और यहाँ भी कालिया दमन हुआ। वहाँ वह शिल्प, औषध, गान, काव्य, और रस का देवता है और यहाँ भी। उसका ध्यान सुंदर युवा, लंबे केश और हाथ में कभी धनुष कभी वंशी लिये है और यहाँ भी। वह पर्वत पर नव मित्रों के साथ विहार करता था यहाँ गिरिराज पर नव गोपियों के साथ विहार है।

वैसे ही जुपिटर* इंद्र है। और इन दोनों को देवराजत्व प्राप्त है। यहाँ इस को अपने भाई टिटन्स का डर था वहाँ हिरण्य कशिपु का। इंद्र भी बड़ा लंपट है और जुपिटर भी। जुपिटर का ध्यान सोने के सिंहासन पर बिजली हाथ में लिये हुये मेघों में शासन करते हुए है, और यहाँ भी वज्रहस्त है। किंतु जुपिटर के चरित्र में श्रीकृष्ण के बहुत से चरित्र मिला दिये हैं।

---

* यद्यपि यूरोप वालों ने हमारे देवताओं के चरित्र का बहुत अनुकरण किया है तथापि उसके देवताओं के वेश में बड़ा गड़बड़ है इससे वंश परंपरा को मिलान न कर के केवल चरित्र मात्र का यहाँ उदाहरण दिया है।

† दिव धातु से देववाची शब्द संसार में प्रसिद्ध है। भारत के इंद्र देव

नवीन काल के वैष्णवाचार्यों के खान - पान, रहन - सहन, उपासना - रीति, वाह्य चिह्न आदि में कितना अंतर पड़ा है, किंतु इतना ही कहा जा सकता है कि विष्णु-उपासना का मूल सूत्र अति प्राचीनकाल से अनवच्छिन्न चला आता है। ध्रुव, प्रह्लादादि वैष्णव तो थे, किंतु अब के वैष्णवों की भाँति कंठी, तिलक, मुद्रा लगाते थे और मांस आदि नहीं खाते थे, इन बातों का विश्वस्त प्रमाण नहीं मिलता। ऐसे ही भारतवर्ष में जैसी धर्मरुचि अब है उस से स्पष्ट होता है कि आगे चल कर वैष्णवमत में खाने पीने का विचार छूट कर बहुत सा अदल बदल अवश्य होगा। यद्यपि अनेक आचार्यों ने इसी आशा से मत प्रवृत्त किया कि इसमें सब मनुष्य समानता लाभ कर और परस्पर खानपानादि से लोगों में ऐक्य बढ़े और किसी जाति, वर्ण, देश का मनुष्य क्यों न हो वैष्णवपक्ति में आ सकै, किंतु उन लोगों की यह उदार इच्छा भली भाँति पूरी नहीं हुई, क्योंकि स्मार्त मत की और ब्राह्मणों की विशेष हानि के कारण इस मत के लोगों ने उस समुन्नत भाव से उन्नति को रोक दिया, जिस से अब वैष्णवों में छुआछूत सब से बढ़ गया। बहुदेवोपासकों की घृणा देने के अर्थ वैष्णवातिरिक्त और किसी का स्पर्श बचाते वहाँ तक एक बात थी, किंतु अब तो वैष्णवों ही में ऐसा उपद्रव फैला है कि एक संप्रदाय के वैष्णव दूसरे संप्रदाय वाले को अपने मंदिर में और अपने खान पान में नहीं लेते और 'सात कनौजिया नौ चूल्हे' वाली मसल हो गई है। किंतु काल की वर्तमान गति के अनुसार यह लक्षण उनकी अवनति के हैं। इस काल में तो इस की तभी उन्नति होगी जब इस के वाह्यव्यवहार और आडंबर में न्यूनता होगी और एकता बढ़ाई जायगी और आंतरिक उपासना की उन्नति की जायगी। यह काल ऐसा है कि लोग उसी मत को विशेष मानेंगे जिस में वाह्य देह-कष्ट न्यून हो। यद्यपि वैष्णवधर्म भारतवर्ष का प्रकृत धर्म है इस हेतु उस की ओर लोगों की रुचि होगी, किंतु उसमें अनेक संस्कारों की अतिशय आवश्यकता है। प्रथम तो गोस्वामीगण अपना रजोगुणी-तमोगुणी स्वभाव छोड़ेंगे तब काम चलैगा। गुरु लोगों में एक तो विद्या ही नहीं होती, जिसके न होने से शील, नम्रता आदि उनमें कुछ नहीं होते। दूसरे या तो वे अति रूखे

करेंगे जब वह शर्बत पिलाने आवेगी और खड़ी होकर विनती करके कहेगी कि मेरे प्यारे दूध पीओ तो हम एक लात मारेंगे, यह कह कर लात जो चलाया तो बरतन फूट गए। इसी से मसल निकली है कि तुम्हारा तो बर्तन फूटा हमारी गृहस्थी ही खराब हो गई। अंग्रेजी में इस गल्प को और तरह से कहते हैं। फरासीस में लाफेन्टन कवि ने इसको पेरट गोपिर्ना के नाम से लिखा है जिसने पूर्व की भाँति सोचते सोचते अपना दधिभाजन फोड़ डाला। संसार की और भाषाओं में भी रूपांतर से यह गल्प प्रसिद्ध है।

परंतु इसका मूल कहाँ है? भारतवर्ष में। पंचतंत्र देखिये उसमें यह किस्सा स्वभाव कृपण नामक ब्राह्मण के नाम से प्रसिद्ध है, और हितोपदेश में देवशर्मा के नाम से। एक विद्वान ने लिखा है कि ब्राह्मण से एक साधारण चर्म विक्रेता वा कुंभकार इत्यादि नाम हुआ। अंत में जयसुरसिक लाफेण्टन ने इस गल्प को लिखा तो इस शुष्क ब्राह्मण के स्थान पर नवयौवना ग्वालिनि को पुस्तक में स्थान दिया। अब कहिये कि कैसे संस्कृत वेश त्याग कर यह सब किस्से और भाषा में हुए और इतनी दूर पहुँचे। इस छोटे छोटे किस्सों में एक ऐसी संजीवनी शक्ति है कि राज्य और धर्म का हेर फेर हो जाय और भाषा का परिवर्तन हो जाय परंतु यह सब छोटी छोटी गल्प बालकों और मुग्ध स्त्रियों के मुख द्वारा एक ही रूप से अनेक सहस्र कोस तक प्रचलित रहेंगे। महात्मा मोक्षमूलर लिखते हैं 'उन्नीसवीं शताब्दी में इस ख्रीष्ट धर्म प्रधान देश में हम लोग अपने बालकों को जो ऐहिक और पारलौकिक ज्ञान की गल्पों में शिक्षा देते हैं वह धर्म विरोधी ब्राह्मणों और बौद्धों की पौत्तलिक धर्म की पुस्तकों से संग्रहीत हैं। अब इस बात को कोई न मानेगा किंतु हजार दो हजार बरस पहले भारतवर्ष के किसी निर्जन वन और क्षुद्र पल्लियों में भ्रमण करने ही से यह सभ्य बीज प्राप्त होता, जो अब समस्त पृथ्वी में विस्तृत है और सरस बालकों के हृत क्षेत्र में सदा लहलहाता रहेगा। बड़े बड़े विद्वान भी किसी अपनी नीति को इस सुरीति पर सर्व हृदयग्राही और चिरस्थायी नहीं कर सके हैं जैसा कि इन गल्प रचयिताओं ने सहज हृदयग्राही रचना की है। किंतु ये बुद्धिमान लोग कौन थे यह ज्ञात नहीं और

प्रशाखायें हैं और सारा भारतवर्ष इन पंथों से छाया हुआ है। (२) अवतार और किसी देव का नहीं, क्योंकि इतना उपकार ही [दस्यु दलन आदि] और किसी से नहीं साधित हुआ है। (३) नामों को लीजिए तो क्या स्त्री, क्या पुरुष, आधे नाम भारतवर्ष के विष्णुसंबंधी हैं और आधे में जगत् है। कृष्णभट्ट, रामसिंह, गोपालदास, हरिदास, रामगोपाल, राधा, लक्ष्मी, रुक्मिन, गोपी, जानकी आदि। विश्वास न हो कलेक्टरी के दफ्तर से मर्दुमशुमारी के कागज निकाल कर देख लीजिए वा एक दिन डाँकघर में बैठकर चिट्ठियों के लिफाफों की सैर कीजिए। (४) ग्रंथ, काव्य, नाटक आदि के, संस्कृत या भाषा के, जो प्रचलित हैं उन को देखिए। रघुवंश, माघ, रामायण आदि ग्रंथ विष्णुचरित्र के ही बहुत हैं। (५) पुराण में भारत, भागवत, वाल्मीकि-रामायण यही बहुत प्रसिद्ध हैं और यह तीनों वैष्णवग्रंथ हैं। (६)व्रतों में सब से मुख्य एकादशी है वह वैष्णव व्रत है और भी जितने व्रत हैं उन में आधे वैष्णव हैं। (७) भारतवर्ष में जितने मेले हैं उन में आधे से विशेष विष्णुलीला, विष्णुपर्व या विष्णुतीर्थों के कारण हैं। (८) तिहवारों की भी यही दशा है। वरंच होली आदि साधारण तिहवारों में भी विष्णुचरित्र ही गाया जाता है। (९) गीत, छंद चौदह आना विष्णुपरत्व हैं, दो आना और देवताओं के। किसी का व्याह हो, रामजानकी के व्याह के गीत सुन लीजिए। किसी के बेटा हो नंद वधाई गाई जायगी। (१०) तीर्थों में भी विष्णुसंबंधी ही बहुत हैं। अयोध्या, हरिद्वार, मथुरा, वृंदावन, जगन्नाथ, रामनाथ, रंगनाथ, द्वारका, बदरीनाथ आदि भली भाँति याद कर के देख लीजिए। (११) नदियों में गंगा, यमुना मुख्य हैं, सो इन का माहात्म्य केवल विष्णुसंबंध से है। (१२) गया में हिंदू मात्र को पिंडदान करना होता है, वहाँ भी विष्णुपद है। (१३) मरने के पीछे 'रामरामसत्य है' इसी की पुकार होती है और अंत में शुद्ध श्राद्ध तक 'प्रेतमुक्ति प्रदोभव' आदि वाक्य से केवल जनार्दन ही पूजे जाते हैं। यहाँ तक कि पितृरूपी जनार्दन ही कहलाते हैं। (१४) नाटकों और तमाशों में रामलीला, रास ही अति प्रचलित हैं। (१५) सब वेद पुस्तकों के आदि और अंत में लिखा रहता है 'हरिः ॐ'।
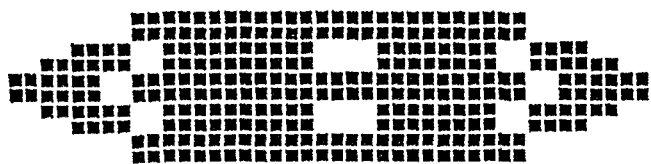
वैष्णवता और भारतवर्ष

यदि विचार करके देखा जायगा तो स्पष्ट प्रकट होगा कि भारतवर्ष का सबसे प्राचीन मत वैष्णव है। हमारे आर्य लोगों ने सबसे प्राचीनकाल में सभ्यता का अवलंबन किया और इसी हेतु क्या धर्म क्या नीति सब विषय के संसार मात्र के ये दीक्षागुरु हैं। आर्यों ने आदिकाल से सूर्य ही को अपने जगत् का सब से उपकारी और प्राणदाता समझ कर ब्रह्म माना और इन का मूल मंत्र गायत्री इसी से इन्हीं सूर्य नारायण की उपासना में कहा गया है। सूर्य की किरणें 'आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः' जलोंमें और मनुष्योंमें व्याप्त रहती हैं और इस द्वारा ही जीवन प्राप्त होता है इसी से सूर्य का नाम नारायण है। हम लोगों के जगत् के ग्रह मात्र, जो सब प्रत्येक ब्रह्माण्ड हैं, इन्हीं की आकर्षण शक्ति से स्थिर हैं, इसी से नारायण का नाम अनंत कोटिब्रह्मांडनायक है। इसी सूर्य का वेद में नाम विष्णु है, क्योंकि इन्हीं की व्यापकता से जगत् स्थित है। इसी से आर्यों में सबसे प्राचीन एक ही देवता थे और इसी से उस कालके भी आर्य वैष्णव थे। कालांतर में सूर्य में चतुर्भुज देव की कल्पना हुई। 'ध्येयः सदा सवितृ मंडल मध्यवर्ती नारायणःसरसिजासनसंनिविष्ट'', 'तद्विष्णोः परमं पदम्', 'विष्णोः कर्माणि पश्यत', 'यत्र गावो भूरिशृंगाः', 'इदंविष्णुर्विचक्रमे' इत्यादि श्रुति जो सूर्यनारायण के आधिभौतिक ऐश्वर्य की प्रतिपादक

गोविंदगढ़, रघुनाथपुर, गोपालपुर * आदि ही विशेष हैं। (२६) मिठाई में गोविंदबड़ी, मोहनभोग आदि नाम हैं, अन्य देवतों का कहीं कुछ नाम नहीं है। (३०) सूर्यचंद्रवंशी क्षत्री लोग श्रीराम कृष्ण के वंश में होने का अब तक अभिमान करते हैं। (३१) ब्राह्मणगण ब्रह्मण्य देव कह कर अब तक कहते हैं 'ब्राह्मणो मामकीतनुः'। (३२) औषधियों में भी रामबाण, नारायणचूर्ण आदि नाम मिलते हैं। (३३) कार्तिकस्नान, राधा दामोदर की पूजा, देखिए, भारतवर्ष में कैसी है। (३४) तारकमंत्र लोग श्रीरामनाम ही को कहते हैं। (३५) किसी हौस में चले जाइए तूल के थान निकलवा कर देखिए उस पर जितने चित्र विष्णुलीला संबंधी मिलेंगे अन्य नहीं। (३६) बारहो महीने के देवता विष्णु हैं। ऐसी ही अनेक अनेक बातें हैं। विष्णुसंबंधी नाम बहुत वस्तुओं के हैं, कहाँ तक लिखे जायँ। विष्णुपद (आकाश), विष्णुरात (परीक्षित), रामदाना, रामधेनु, रामजी की गैया, रामधनु (आकाश धनु), रामफल, सीताफल, रामतरोई, श्रीफल, हरिगीती, रामकली, रामकपूर, रामगिरी, रामचंदन, रामगंगा, हरिचंदन, हरिसिंगार, हरिकेला, हरिनेत्र, (कमल), हरिकेली (बंगला देश), हरिप्रिय (सफेदचंदन), हरिवासर (एकादशी), हरिबीज (बग़ानीबू), हरिवर्णखंड, कृष्णकली, कृष्णकंद, कृष्णकांता, विष्णुकांता (फूल), सीतामऊ, सीतावलदी, सीताकुण्ड, सीता-

उत्तर बसा है। दरयाबाद सीतापुर के वायु कोन। सदर मुकाम दरयाबाद लखनऊ से ४५ मील वायुकोन उत्तर को झुकता हुआ है।

* एक गाँव असनीगोपालपुर है। वहाँ के नरहरि कवि ने अपने परिचय में कहा है:—

कवित्त—नाम नरहरि है प्रशंसा सब लोग करैं हंसहू से उज्वल जगु व्यापे हैं। गंगा के तीर ग्राम असनीगोपालपुर मंदिरगोपाल जी को करत मंत्र जापे हैं। कवि बादशाही मौज पावै बादशाही वो जगावै बादशाही जाते अरिगन कांपे हैं। जब्बर गनीमन के तोरिबे को गब्बर हुमायूं के बब्बर अकब्बर के थापे हैं॥ १॥

खाने में पाप लिखा है। कमलाकरान्हिक, निर्णयसिंधु (आचारमाधवादि ग्रंथों में सैकड़ों वाक्य हैं, देख लो)। पाँचवें शास्त्रों में शिवमंदिर और भैरवादिकों के मंदिर को नगर के बाहर बनाना लिखा है। * छठवें वे लोग कहते हैं कि शैवबीजमंत्र से दीक्षित और शिव को छोड़ कर और देवता को न माननेवाले ऐसे शुद्ध शैव भारतवर्ष में बहुत ही थोड़े हैं। या तो शिवोपासक स्मार्त्त हैं या शाक्त हैं। शाक्त भी शिव को पार्वती के पति समझकर विशेष आदर देते हैं, कुछ सर्वेश्वर समझ कर नहीं। जंगमादिक दक्षिण में जो दीक्षित शैव हैं वे बहुत ही थोड़े हैं। शाक्त तो जो दीक्षित होते हैं वे प्रायः कौलही हो जाते हैं। सौर गाणपत्य की तो कुछ गिनती हो नहीं। किंतु वैष्णवों में मध्व और रामानुज को छोड़कर और इन में भी जो निरे आग्रही हैं वे ही तो साधारण स्मार्तों से कुछ भिन्न हैं, नहीं तो दीक्षित वैष्णव भी साधारण जनसमाज से कुछ भिन्न नहीं और एक प्रकार के अदीक्षित वैष्णव तो सभी हैं। सातवीं युक्ति इन लोगों की यह है कि जो अनार्यलोग प्राचीन काल में भारतवर्ष में रहते थे और जिन को आर्यलोगों ने जीता था वही शिल्पविद्या नहीं जानते थे और इसी हेतु लिंग, ढोंका सिद्धपीठ इत्यादि पूजा उन्हीं लोगों की है जो अनार्य हैं। आठवें शिव, काली, भैरव इत्यादि के वस्त्र, निवास, आभूषण आदिक सभी आर्यों से भिन्न हैं। स्मशान में वास, अस्थि की माला आदि जैसी इन लोगों की वेषभूषा शास्त्रों में लिखी है वह आर्योचित नहीं है।

* भागवत के पहले स्कंध के दूसरे अध्याय का २५ श्लोक। "व्यवहाराध्याय दिव्य प्रकरण कोष विधान १८ श्लोक, वशिष्ठस्मृति, गीतासप्तमाध्याय २० श्लोक, गौतमकृताचारसूत्र १२ खंड, आचारप्रकाश में मत्स्यपुराण का वाक्य और काशीखंड का वाक्य देखो। इस विषय की पुष्टता के हेतु प्रोफेसर मैक्समूलर लिखते हैं कि जिस ऋचा के वशिष्ठ ऋषि हैं उसी में शिश्नदेवालोगों की निंदा है अतएव इस विषय में वशिष्ट की स्मृति भी प्रमाण के योग्य है। बहुत लोग यह भी कहते हैं कि शाक्तमत नास्तिकों की प्रकृति ही से जगत् माननेवाले (Naturalists) की नेचरियों की शाखा है, क्रम पा कर उसी प्रकृति को वे लोग देवी के आकार में मानने लगे।

है उन पर मुसल्मान आदि विधर्मी भरती होते जाते हैं। आमदनी वाणिज्य की थी ही नहीं, केवल नौकरी की थी सो भी धीरे धीरे खसकी। तो अब कैसे काम चलेगा। कदाचित् ब्राह्मण और गोसाईं लोग कहैं कि हमको तो मुफ्त का मिलता है, हम को क्या? इस पर हम कहते हैं कि विशेष उन्हीं को रोना है। जो करालकाल चला आता है उस को आँख खोल कर देखो। कुछ दिन पीछे आप लोगों के माननेवाले बहुत ही थोड़े रहेंगे, अब सब लोग एकत्र हो। हिंदूनाम-धारी वेद से ले कर तंत्र, वरंच भाषाग्रंथ माननेवाले तक सब एक होकर अब अपना परमधर्म यह रक्खो कि आर्यजाति में एका हो। इसी में धर्म की रक्षा है। भीतर तुम्हारे चाहे जो भाव और जैसी उपासना हो ऊपर से सब आर्यमात्र एक रहो। धर्म संबंधी उपाधियों को छोड़ कर प्रकृत धर्म की उन्नति करो।*
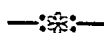
* इस लेख का उल्लेख 'रामायण का समय' में किया गया है, जो सं–१९४१ की रचना है अतः यह उसके पहिले लिखा गया होगा।

करनेवाला इत्यादि लिखा है। इन मंत्रों में विष्णु के विषय में रूप का परिचय इतना ही मिलता है कि उस ने अपने तीन पदों से जगत् को व्याप्त कर रखा है। यास्क ने निरुक्त में अपने से पूर्व के दो ऋषियों का मत इस के अर्थ मे लिखा है। यथा शाक्यमुनि लिखते हैं कि ईश्वर का पृथ्वी पर रूप अग्नि है, घन में विद्युत् है और आकाश में सूर्य है। सूर्य की पूजा किसी समय समस्त पृथ्वी में होती थी यह अनुमान होता है। सब भाषाओं में अद्यापि यह कहावत प्रसिद्ध है कि 'उठते हुए सूर्य को सब पूजता है।' (अरुणभाव सूर्य के उदय, मध्य और अस्त की अवस्था का तीन पद मानते हैं।) दुर्गाचार्य अपनी टीका में उसी मत को पुष्ट करते हैं। सायणाचार्य विष्णु के बावन-अवतार पर इस मंत्र को लगाते हैं। किंतु यज्ञ और आदित्य ही विष्णु हैं, इस बात को बहुत लोगों ने एक मत होकर माना है। अस्तु, विष्णु उस समय आदित्य ही को नामांतर से पुकारा है कि स्वयं विष्णु देवता आदित्य से भिन्न थे, इस का झगड़ा हम यहाँ नहीं करते। यहाँ यह सब लिखने से हमारा केवल यह आशय है कि अति प्राचीनकाल से विष्णु हमारे देवता हैं। अग्नि, वायु और सूर्य यह तीनों रूप विष्णु के हैं; इन्हीं से ब्रह्मा, शिव और विष्णु यह तीन मूर्तिमान् देव हुए हैं।

ब्राह्मणों के समय में विष्णु की महिमा सूर्य से भिन्न कह कर विस्तर रूप से वर्णित है और शतपथ, ऐतरेय और तैत्तिरीय ब्राह्मण में देवताओं का द्वारपाल, देवताओं के हेतु जगत् का राज्य बचानेवाला इत्यादि कह कर लिखा है।

इतिहासों में रामायण और भारत में विष्णु की महिमा स्पष्ट है, वरंच इतिहासों के समयमें विष्णु के अवतारोंका पृथ्वी पर माना जाना भी प्रकट है। पाणिनि के समय के बहुत पूर्व कृष्णावतार, कृष्ण पूजा और कृष्णभक्ति प्रचलित थी, यह उन के सूत्र ही से स्पष्ट है। यथा, जीविकार्थे चापण्ये वासुदेवेः ॥ ५ ॥३॥९९॥ ० कृष्णं नमेच्चेतसुखं यायात्। ३। ३। १५ इ० वासुदेवे भक्तिरस्य वासुदेवकः ॥४ ॥ ३॥९८॥ ० और प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और सुभद्रा नाम इत्यादि के पाणिनि के लिखने

विशेष शक्तिसंपन्न ईश्वर है। तब उस का स्वरूप जानने की इच्छा होती है, अर्थात् मनुष्य कर्मकांडसे ज्ञानकांड में आता है। ज्ञानकांड में सोचते सोचते संगति और रुचि के अनुसार या तो मनुष्य फिर निरीश्वरवादी हो जाता है या उपासना में प्रवृत्त होता है। उस उपासना की भी विचित्र गति है। यद्यपि ज्ञानवृद्धि के कारण प्रथम मनुष्य साकार उपासना छोड़कर निराकार की ओर रुचि करता है, किंतु उपासना करते करते जहाँ भक्ति का प्राबल्य हुआ वहीं अपने उस निराकार उपास्य को भक्त फिर साकार कहने लगता है। बड़े बड़े निराकारवादियों ने भी "प्रभो दर्श दो ! अपने चरणकमलों को हमारे सिर पर स्थान दो, अपनी सुधामयी वाणी श्रवण कराओ" इत्यादि प्रयोग किया है। वैसे ही प्रथम सूर्य पृथ्वीवासियों को सब से विशेष आश्चर्य और गुणकारी वस्तु बोध हुई, उस से फिर उन में देवबुद्धि हुई। देवबुद्धि होने ही से आधिभौतिक सूर्य मंडल के भीतर एक आधिदैविक नारायण माने गये। फिर अंत में यह कहा गया कि नारायण एक सूर्य ही में नहीं, सर्वत्र हैं, और अनंत कोटि सूर्य, चंद्र, तारा उन्हीं के प्रकाश से प्रकाशित हैं। अर्थात् आध्यात्मिक नारायण की उपासना में लोगों की प्रवृत्ति हुई।

इन्हीं कारणों से वैष्णवमत की प्रवृत्ति भारतवर्ष में स्वाभाविकी है। जगत् में उपासनामार्ग ही मुख्य धर्ममार्ग समझा जाता है। कृस्तान, मुसलमान, ब्राह्म, बौद्ध उपासना सब के यहाँ मुख्य है। किंतु बौद्धों में अनेक सिद्धों की उपासना और तप आदि शुभ कर्मों के प्राधान्य से वह मत हम लोगों के स्मार्त्त मत के सदृश है और कृस्तान, ब्राह्म, मुसलमान आदि के धर्म में भक्ति की प्रधानता से ये सब वैष्णवों के सदृश हैं। इंजील में वैष्णवों के ग्रंथों से बहुत सा विषय लिया है और ईसा के चरित्र में श्री कृष्ण के चरित्र का सादृश्य बहुत है, यह विषय सविस्तर भिन्न प्रबंध में लिखा गया है। तो जब ईसाइयों के मत को ही हम वैष्णवों का अनुगामी सिद्ध कर सके हैं, फिर मुसलमान जो कृस्तानों के अनुगामी हैं वे हमारे अन्वनुगामी हो चुके।

यद्यपि यह निर्णय करना अब अति कठिन है कि अतिप्राचीन के ध्रुव, प्रह्लाद आदि, मध्यावस्था के ऊद्धव, आरुणि, परीक्षितादिक और

ऐसा कौन काम है जो आदमी न कर सके। किसी प्रकार भी तुम लोग मित्र का प्रति उपकार कर सको तो मैं अपने को ऋण से छूटा समझूं।' नाग पुत्र बोले 'उस मित्र के पिता के पास उसकी जवानी में गालव नाम का ब्राह्मण एक बहुत बढ़िया घोड़ा लेकर आया और बोला कि महाराज एक राक्षस हम लोगों को बहुत दुःख देता है, नित्य तप में विघ्न कर करके उसने हमारी नाकों में दम कर रक्खा है और हम लोगों ने बड़े कष्ट से तप किया है इससे उसको शाप देकर तप नहीं न्यून किया चाहते। एक दिन बड़े दुःखी हो कर जो मैंने एक लम्बी ठंढी साँस भरी तो देखता हूँ कि यह घोड़ा आसमान से उतरा चला आता है, साथ ही आकाश वाणी भी सुनी कि इस घोड़े की गति पृथ्वी और आकाश पाताल सब जगह है। और ऐसा घोड़ा पृथ्वी पर दूसरा नहीं है। चाल में हवा को भी यह पीछे छोड़ता हुआ संसारियों के मन की भाँति उड़ा चलता है। इसका नाम कुवलय है, इसे राजा शत्रुजित को दो और उसका पुत्र इस घोड़े पर सवार होकर उस राक्षस को मारे। इससे उस राजा की बड़ी कीर्ति होगी। सो अब मैं आप के पास आया हूँ। राजा ने कुमार को उसी समय सज सजा कर असीस दी और ब्राह्मण के साथ बिदा किया। राज कुमार गालव के आश्रम में रहने लगा। एक दिन वह राक्षस जंगली सूअर बन कर आया और जब कुँअर ने उसके पीछे धनुष तान कर घोड़ा दौड़ाया तो वह एक घने जंगल में भागा। भागते भागते वह बहुत दूर जाकर एक गड़हे में गिर पड़ा तो कुँअर भी साथ ही कूदा। अँधेरे में कुँअर को कुछ भी नहीं देखाता था पर घोड़ा फेंके चला जाता था। जब उँजेला आया तो वह सुअर न दिखाई पड़ा, सिर्फ एक बड़ा रत्नों से जड़ा घर सामने खड़ा था। उसके दरवाजे की सीढ़ी पर एक जवान सुंदर स्त्री चढ़ी जाती थी। कुँअर भी दरवाजे पर घोड़ा बाँध बेधड़क उस मकान में घुसा और एक बड़ी सजी सजाई जड़ाऊ दालान में हिंडोला खाट पर उसे एक कन्या दिखाई पड़ी और जो स्त्री उसे सीढ़ी पर चढ़ती मिली थी, वह भी उसके पास बैठी थी। कुँअर को देखते ही वह कन्या बेहोश हो गई। उस स्त्री और कुँअर ने

क्रोधी होते हैं या अति विलासलालस होकर स्त्रियों की भाँति सदा दर्पण ही देखा करते हैं। अब वह सब स्वभाव उनको छोड़ देना चाहिए, क्योंकि इस उन्नीसवीं शताब्दी में वह श्रद्धाजाड्य अब नहीं बाकी है। अब कुकर्मी गुरु का भी चरणामृत लिया जाय वह दिन छप्पर पर गए। जितने बूढ़े लोग अभी तक जीते हैं उन्हीं के शील संकोच से प्राचीनधर्म इतना भी चल रहा है, बीस पचीस बरस पीछे फिर कुछ नहीं है। अब तो गुरु गोसाईं का चरित्र ऐसा होना चाहिए कि जिस को देख सुन कर लोगों में श्रद्धा से स्वयं चित्त आकृष्ट हों। स्त्रीजनों का मंदिरों से सहवास निवृत्त किया जाय। केवल इतना ही नहीं, भगवान श्री कृष्णचन्द्र की केलिकथा जो अतिरहस्य होने पर भी बहुत परिमाण से जगत् में प्रचलित है वह केवल अंतरंग उपासकों पर छोड़ दी जाय, उनके माहात्म्य मत विशद चरित्र का महत्व यथार्थ रूप से व्याख्या कर के सब को समझाया जाय। रास क्या है, गोपी कौन हैं, यह सब रूपक अलंकार स्पष्ट कर के श्रुतिसम्मत उनका ज्ञान वैराग्य भक्तिबोधक अर्थ किया जाय। यह भी दबी जीभ से हम डरते २ कहते हैं कि व्रत, स्नान आदि भी वहीं तक रहैं जहाँ तक शरीर को अति कष्ट न हो। जिस उत्तम उदाहरण के द्वारा स्थापक आचार्यगण ने आत्मसुख विसर्जन कर के भक्ति सुधा से लोगों को प्लावित कर दिया था उसी उदाहरण से अब भी गुरु लोग धर्म प्रचार करैं। वाह्य आग्रहों को छोड़ कर केवल आंतरिक उन्नत प्रेममयी भक्ति का प्रचार करें, देखैं कि दिग्दिगंत से हरिनाम की कैसी ध्वनि उठती है और विधर्मीगण भी इसको सिर झुकाते हैं कि नहीं और सिक्ख, कबीरपंथी आदि अनेक दल के हिंदूगण भी सब आप से आप बैर छोड़ कर इस उन्नतसमाज में मिल जाते हैं कि नहीं।

जो कोई कहै कि यह तुम कैसे कहते हो कि वैष्णवमत ही भारतवर्ष का प्रकृत मत है तो उस के उत्तर में हम स्पष्ट कहैंगे कि वैष्णव मत ही भारतवर्ष का मत है और वह भारतवर्ष की हड्डी लहू में मिल गया है। इस के अनेक प्रमाण हैं, क्रम से सुनिए (१) पहले तो कबीर, दादू, सिक्ख, बाउल आदि जितने पंथ हैं सब वैष्णवों की शाखा

पातालकेतु राक्षस का भाई तालकेतु कपटी मुनि बन कर बैठा था। कुँअर को देखते ही पुराना वैर याद करके वह बोला कि कुँअर तुम अपने गहिने हमको दो और जब तक हम पानी में जाकर वरुण की पूजा करके न फिरैं तब तक तुम हमारे आश्रम की चौकी दो। राजपुत्र ने सब गहना उतार दिया और उस कुटीचर की कुटी का पहरा देने लगा। वह दुष्ट गहना लेकर जल में डूबकर माया से कुँअर के महलों में गया और मदालसा से बोला कि हमारे आश्रम में ऋतध्वज को एक राक्षस ने मार डाला और हिनहिनाते हुए उस बिचारे घोड़े को भी घसीट ले गया। शूद्र तपसियों से क्रिया कराके उसका गहना लेकर मैं तुमको देने आया हूँ, यह लो। इतना कहकर आभूषण सब फेंक दिये और आप चलता हुआ। मदालसा ने उसी समय पति के दुःख से प्राण त्याग किये। महल में हाहाकार मच गया, जिधर देखो उधर कुहराम पड़ा हुआ था और दर दीवार से हाय कुँअर हाय बहू की आवाज आती थी। राजा शत्रुजित धीरज रखकर बोला कि इतना क्यों रोते हो? मुनियों की रक्षा में हमारा पुत्र यश कमाकर मारा गया, इसका क्या सोच है। उसकी माँ भी बोली कि बड़ों का यश बढ़ाकर जो क्षत्री युद्ध में मरै उसका क्या रोना और ऐसी बहू का भी क्या सोच जो पति के सब सुख भोगकर अन्त में पति लोक उसके साथ ही गई, उठो क्रिया करो और सोच दूर करो। राजा ने नगर के बाहर सब लोक रीति किया और बेटे बहू को पानी देकर घर फिरा। इधर कपटी मुनि भी कुँअर से आकर बोला कि मेरा काम हो गया, आपका कल्याण हो, अब घर सिधारिये। कुँअर जब नगर में आया तो सबको उदास पाया। कुँअर को देखते ही बधाई बधाई का चारों ओर से शोर मच गया। कुँअर बहुत चकपकाया कि यह मामला क्या है? अन्त में घर पर गया और सब हाल सुनकर बहुत ही घबड़ाया। माँ बाप के डर से रो तो न सका पर अपनी पतिव्रता प्रान प्यारी के बिछुड़ने से बहुत ही उदास हो गया और यह प्रतिज्ञा कर ली कि मैं प्रान तो नहीं देता पर अब किसी दूसरी स्त्री से जन्म भर न मिलूँगा। तब से इस सुख से वंचित है और यदि संसार में उसका

(१६) संकल्प कीजिए तो विष्णुः विष्णुः। (१७) आचमन में विष्णु विष्णु। (१८) शुद्ध होना हो वो यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं। (१६) सुग्गे को भी राम ही राम पढ़ाते हैं। (२०) जो कोई वृत्तांत कहै तो उस को राम कहानी कहते हैं। (२१) लड़कों को बाल गोपाल कहते हैं। (२२) छपने में जितने भागवत, रामायण, प्रेमसागर, व्रजविलास छापी जाती है और देवताओं के चरित्र उतने नहीं छपते। (२३) आर्यलोगों के शिष्टाचार में रामराम, जयश्रीकृष्ण, जयगोपाल ही प्रचलित हैं। (२४) ब्राह्मणों के पीछे वैरागी ही को हाथ जोड़ते हैं और भोजन कराते हैं। (२५) विष्णु के साला होने के कारण चंद्रमा को सभी चंदामामा कहते हैं। (२६) गृहस्थ के घर घर तुलसी का थाला, ठाकुर की मूर्ति, रसोई भोग लगाने को रहती है। (२७) कथा घाट बाट में भागवत ही रामायण की होती है। (२८) नगरोंके नाममें भी रामपुर,*

---

* विष्णु संबंधी अनेक गाँव हैं, कई एक यहाँ पर लिखे जाते हैं। जिला गया के जहानाबाद थाना के इलाके में बिसुनगंज गाँव है। जिला गया के नबीनगर थाना के इलाके में किसुनपुर बटाने के किनारे पर है, यहाँ मेला लगता है। जिला गया के दाऊदनगर थाना के इलाके में गोपालपुर गाँव है। जिला गया के शहरघाटी थाना के इलाके में नारायणपुर गाँव है।

बरेव से तीन कोस पूरब सकरी नदी के बायें किनारे गोविंदपुर बैजनाथ जी की कच्ची सड़क पर भारी बाजार है। यहाँ लकड़ी और बहुत सी जंगली चीज बिकती हैं। यहाँ से दो कोस नैऋत्यकोन में एक तारा गाँव से आध कोस दक्खिन महभर पहाड़ में ककीलत बड़ा भारी और प्रसिद्ध झरना है, इस में सदा पानी मोटी धार से गिरा करता है। पानी गिरते गिरते नीचे एक अथाह कुंड बन गया है। पानी इस झरने का बहुत निर्मल और ठंढा रहता है। यह स्थान परम रम्य और मनोहर लगता है। मेष की संक्रांति में (बिसुआ) बड़ा मेला लगता है। गोविंदपुर के आस पास बिसुनपुर, सुघडी और पहाड़ के पार सिऊर रपऊ आदि बड़े बड़े गाँव हैं। सिऊर में दो बड़े तालाब हैं और एक पुराने राजगृह का चिन्ह देख पड़ता है।

सीतापुर मुल्लापुर के पश्चिम सदर मुकाम सीतापुर लखनऊ से ५३ मील

थी वह पूरी हुई, कहो कुछ हम भी तुम्हारा उपकार कर सकते हैं।' कुँअर ने हाथ जोड़ कर कहा 'आप की कृपा से मेरे सब काम पूर्ण हैं, यदि वर दिया ही चाहते हैं तो इतना ही दीजिए कि मेरी मति सदा सुपथ पर चले। नाग राज ने कहा 'तुम्हारी मति तो आप ही सुपथ पर है, कोई दूसरा वर माँगो।' कुँअर नहीं माँगता था। गरज इसी संवाद में अवसर पाकर नाग नंदन बोले 'पितः इनको तो केवल एक मात्र दुःख है, जो मैंने आप से पूर्व में कहा था'। कंवलानुज उसी समय महल में से मदालसा को ले आये और कुमार का हाथ पकड़ा दिया। उस समय कुमार को जो अलौकिक आनंद हुआ वह कौन वर्णन कर सकता है। यदि ऐसे ही मरा हुआ कोई प्राणप्रिय मित्र मिले तो उसका अनुभव किया जाय। पन्नगाधिपति ने पाताल में बड़ा उत्सव करके उन दोनों का फिर से पाणिग्रहण कराया। नाग नंदनों ने भी बड़ा आनंद किया और बड़े धूम धाम से कुँवर की दावतें हुईं। सारा नाग लोक उमड़ पड़ा था और कुँवर को सब बधाई देते थे। कुंडला जो तप के बल से अब विद्याधरी हो गई थी, मदालसा के गले से लगी और बधाई देकर बोली 'बहिन, मेरे धन्य भाग हैं कि तुझे जीती जागती भली चंगी अपने पति के साथ देखती हूँ भगवान करे तू सीली सपूती ठंढी सुहागिन हो और धन जन पूत लक्ष्मी से सदा से सदा सुखी रहै'। अश्वतर का भाई कंबल और और भी बड़े बड़े नाग लोग इस उत्सव में आये थे और कुँवर से मिलकर सब प्रसन्न हुए।

मणिधर मुकुट मणि अश्वतर ने कुवलायश्व को बहुत से मणि दिव्य वस्त्र चंदन इत्यादि देकर बड़ी प्रीति से धूम धाम से विदा किया और एक सज्जन मित्र का उपकार करके अपने को कृतकृत्य समझा और कुँअर से बहुत तरह से विनती करके कहा कि सदा आना जाना बनाए रहना और पिता से हमारा बहुत प्रणाम कहना—तुम्हारे स्नेह ने हमें विना सैन्य जीत लिया है। नाग पत्नी नाग कन्याओं ने बहुत सा गहना कपड़ा दे उसका सिंगार किया और असीस देकर आँखों में आँसू भर के अपनी निज बेटी की भाँति विदा किया। कुँअर हँसी खुशी गाजे बाजे से उसी धूम धाम के साथ घर पहुँचा। माँ बाप का बहू

मढ़ी, सीता की रसोई, हरिपर्वत, हरि का पत्तन, रामगढ़, रामबाग, रामशिला, रामजी की घोड़ी, हरिपदा (आकाशगंगा), नारायणी, कन्हैया आदि नगर नद नदी पर्वत फ़लफूल के सैकड़ों नाम हैं। (जले विष्णु: स्थले विष्णुः) सब स्थान पर विष्णु के नाम ही का संबंध विशेष है। आग्रह छोड़ कर तनिक ध्यान देकर देखिए कि विष्णु से भारतवर्ष से क्या संबंध है, फिर हमारी बात स्वयं प्रमाणित होती है कि नहीं कि भारतवर्ष का प्रकृत मत वैष्णव ही है।

अब वैष्णवों से यह निवेदन है कि आप लोगों का मत कैसी दृढ़ भित्ति पर स्थापित है और कैसे सार्वजनीन उदारभाव से परिपूर्ण है, यह कुछ कुछ हम आपलोगों को समझा चुके। उसी भाव से आपलोग भी उस में स्थिर रहिये, यही कहना है। जिस भाव से हिंदूमत अब चलता है उस भाव से आगे नहीं चलैगा। अब हमलोगों के शरीर का बल न्यून हो गया, विदेशी शिक्षाओं से मनोवृत्ति बदल गई, जीविका और धन उपार्जन के हेतु अब हमलोगों को पाँच पाँच छ छ पहर पसीना चुआना पड़ेगा, रेल पर इधर से उधर कलकत्ते से लाहौर और बंबई से शिमला दौड़ना पड़ैगा, सिविल सर्विस का, बैरिस्टरी का, इंजिनियरी का इम्तिहान देने को विलायत जाना होगा, बिना यह सब किए काम नहीं चलैगा, क्योंकि देखिए, कृस्तान, मुसल्मान, पारसी यही हाकिम हुए जाते हैं, हमलोगों की दशा दिन दिन हीन हुई जाती है। जब पेट भर खाने ही को न मिलैगा तो धर्म कहाँ बाकी रहैगा, इस से जीवमात्र के 'सहज धर्म उदरपूरण पर अब ध्यान दीजिये। परस्पर का बैर छोड़िए। शैव, शाक्त, सिक्ख जो हो, सब से मिलो। उपासना एक हृदय की रत्न वस्तु है उस को आर्यक्षेत्र में फैलाने की कोई आवश्यकता नहीं। वैष्णव, शैव, ब्राह्म, आर्यसमाजी सब अलग अलग पतली पतली डोरी हो रहे हैं, इसी से ऐश्वर्य रूपी मस्तहाथी उन से नहीं बँधता। इन सब डोरी को एक में बाँध कर मोटा रस्सा बनाओ, तब यह हाथी दिगदिगंत भागने से रुकैगा। अर्थात् अब वह काल नहीं है कि हमलोग भिन्न २ अपनी-अपनी खिचड़ी अलग पकाया करें। अब महाघोर काल उपस्थित है। चारो ओर आग लगी हुई है। दरिद्रता केमारे देश जला जाता है। अँगरेजों से जो नौकरी बच जाती

को छोड़कर वन में चला गया। और उसके पीछे दो लड़के और भी हुए और वे भी बालकपन ही से ज्ञान का उपदेश सुनते सुनते जब बड़े हुए तो संसार से उदास होकर घर छोड़ गए। क्योंकि कच्चे कलेजे में जो बात सिखाई जाती है बड़े होने पर उसका असर चित्त पर बहुत रहता है। राजा मदालसा के इस कृत्य से बहुत उदास रहता था। जब चौथा लड़का हुआ और उसका नामकरण करने लगा तो मदालसा से बोला कि देवी, अब की तुम्हीं इसका नाम रक्खो क्योंकि उन तीनों के हमारे नाम रखने से तुम हँसती थीं। मदालसा ने उस लड़के का नाम अलर्क रक्खा। राजा ने पूछा 'अलर्क शब्द का तो कुछ अर्थ ही नहीं ऐसा नाम क्यों?' मदालसा ने कहा 'पुकारने के वास्ते कोई संज्ञा रखनी चाहिए, इसमें सार्थक और निरर्थक क्या?' एक दिन राजा ने देखा कि उसको भी वही सब कह कह कर खिला रही है, तो राजा को बड़ा ही क्षोभ हुआ। हाथ जोड़कर बोला 'चंडिके, यह बालक हमें दान कर दो, तीन को तुम मिट्टी में मिला चुकीं यही एक बाकी रहा है।' पति की इच्छा नुसार मदालसा ने उसे ज्ञानोपदेश न करके उसके बदले अनेक प्रकार की नीति और धर्म पढ़ाया, जिसके प्रताप से किसी समय अलर्क बड़ा प्रतापी हुआ क्योंकि माता की शिक्षा सब शिक्षा से बढ़ कर है। राजा रानी ने अलर्क को समर्थ देखकर राज का बोझ सौंप दिया और आप तप करने वन में चले गए। यहाँ अलर्क जब राज काज में भूल कर संसार में फँस गया था तो मदालसा के दिए हुए यंत्र को (जिस पर लिखा था "संपत्ति में औदार्य, विपत्ति में धैर्य, संग्राम में शौर्य और सब समय में जिसे ज्ञान नहीं, उसका संसार में जन्म व्यर्थ है। संग, काम, क्रोध, लोभ, मोह ये पाँचों दुस्त्यज हैं, इससे इनको १ सत् २ स्वकीया ३ अपनी अकृतज्ञता ४ सिद्धांत ५ भगवान की ओर प्रयुक्त करै) पढ़कर और अपने बड़े भाई सुबाहु की कृपा और दत्तात्रेय जी के उपदेश से बड़ा ज्ञानी गुणी प्रतापी और प्रसिद्ध राजा हुआ है।

—:※:—

मदालसोपाख्यान

(मार्कंडेय पुराण से संगृहीत)

जिसे

बाबू हरिश्चंद्र ने

अपनी पत्रिका बालाबोधिनी से लेकर

युवराज

श्रीयुत प्रिंस आव वेल्स बहादुर

के

शुभागमन के आनंद के अवसर में

बालिकाओं को

वितरण के अर्थ अलग छपवाया

जिस लड़की को यह पुस्तक दी जाय उससे अध्यापक लोग
५ बेर कहला लें "राजपुत्र चिरंजीव"।

Benares Light Press

बनारस लाइट छापाखाना में मुद्रित हुआ।

था, आपसा पंडित मैंने नहीं देखा, कोई पैगाम देता था चमेली जान आप पर मरती हैं, आपके देखे बिना तड़प रही हैं, कोई बोला हाय! आपका फलाना कवित्त पढ़कर रात भर रोते रहे, दूसरे ने कहा आपकी फलानी गजल लाला रामदास की सैर में जिस वक्त प्यारी ने गाई सारी मजलिस लोट-पोट हो गयी, तीसरा ठंढी साँस भरकर बोला धन्य है आप भी गनीमत हैं बस क्या कहें कोई जी से पूछे, चौथा बोला आपकी अंगूठीका पन्ना क्या है काँचका टुकड़ा है या कोई ताजी तोड़ी हुई पत्ती है, एक मीर साहब चिड़ियावालेने चोंच खोली, बेपर की उड़ायी बोले कि आपके कबूतर किससे कम हैं वल्लाह कबूतर नहीं परीजाद हैं, खिलौने हैं, तसवीर हैं। हुमा पर साया पड़े तो उसे शहबाज बना दें, ऐसे ही खूबसूरत जानवरों में ईसाई लोग खुदा का नूर उतरना मानते हैं, इनको उड़ते देखकर किसके होश नहीं उड़ते,कसम कलामुल्लाह शरीफ की मटियाबुर्जवालों ने ऐसे जानवर ख्वाब में नहीं देखे। एक दलाल घोड़े की तारीफ कर उठा, जौहरी ने खच्चरों की तरफ बाग मोड़ी, बजाज बाग की स्तुति में फूल बूटे कतरने लगा, सिद्धान्त यह कि मैं बिचारा अकेला और वाह वाहें इतनी कि चारों ओर से मुझे दबाए लेती थीं और मेरे ऊपर गिरी क्या फिसली पड़ती थीं।

यह तो दीवानखाने का हाल हुआ अब सीढ़ी का तमाशा देखिये। चार पाँच हिंदू, चार पाँच मुसलमान सिपाही, एक जमादार, दो तीन उम्मेदवार और दस बीस उठल्लू के चूल्हे, कोई खड़ा है, कोई बैठा है, हाय रुपया हाय रुपया सबके जबान पर, पर इसमें सब ऐसे ही नहीं कोई-कोई सच्चा स्वामिभक्त भी है। कोई रंडी के भड़ुए से लड़ता है, रुपये में दो आना न दोगे तो सरकार से ऐसी बुराई करेंगे कि फिर बीबी का इस दरबार में दरशन भी दुर्लभ हो जायगा, कोई बजाज से कहता है कि वह काली बनात हमें न ओढ़ाओगे तो बरसों पड़े झूलोगे रुपये के नाम खाक भी न मिलेगी, कोई दलाल से अलग सट्टा बट्टा लगा रहा है, कोई इस बात पर चूर है कि मालिक का हमसे बढ़कर कोई भेदी नहीं जो रुपया कर्ज आता है हमारी मारफत आता है, दूसरा कहता है बचा हमारे आगे तुम क्या पूचल चर हो औरतों का भुगतान सब मैं ही करता हूँ।
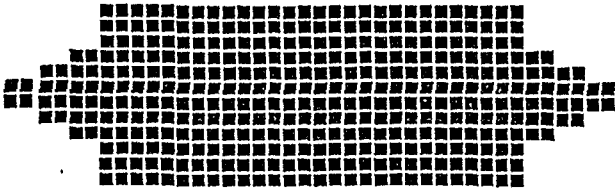
मदालसा

(उपाख्यान मार्कण्डेयपुराण से)

पुराने जमाने में शत्रुजित नाम का एक राजा था और उसको अरिविदारण कृतध्वज नाम एक लड़का था। अश्वतर नाग के दो लड़के ब्राह्मण बनकर उसके साथ खेलने आते थे। राजकुमार से उनसे ऐसी प्रीति हो गई थी कि वे रात दिन नाग लोक छोड़कर यहीं भूले रहते थे। एक दिन नागों के राजा अश्वतर ने अपने लड़कों से पूछा 'प्यारे लड़को, आज काल तुम लोग नाग लोक छोड़कर मृत्यु लोक ही में क्यों रमे रहते हो?' वे बोले 'पिता, शत्रुजित राजा के कुमार कृतध्वज ने शिष्टाचार और प्रीति से हमारा मन ऐसा मोहा है कि पाताल उसके बिना गर्म और उसके मिलने से सूर्य ठंढा मालूम पड़ता है।' पिता ने कहा 'निस्संदेह वह पुरुष धन्य है जिसको ऐसा मित्रों को सुखदाई पुत्र हुआ है, भला ऐसे सच्चे सुहृत् का तुम लोगों ने कुछ उपकार भी किया?' लड़ने कहने लगे 'भला हम लोग उसका क्या उपकार करेंगे, धन, जन विद्या सबमें वह हमसे बढ़ चढ़ के हैं और जो उसका एक काम है उसको ब्रह्मादिक ईश्वर के सिवा कोई कर नहीं सकता।' नागराज ने कहा 'भला हम सुनें तो सही,

किसी तरह उसको सावधान किया। तव कुँअर उस सखी से उन लोगों का नाँव गाँव और वेहोशीका कारण पूछने लगा। स्त्री बोली यह गंधर्वों के राजा विश्वावसु की कन्या है। इसको पातालकेतु नामका दैत्य माया से उठा लाया है। अगली तेरस को वह दुष्ट इससे ब्याह करने को था और जब इस दुख से यह प्राण देने लगी तो आकाशवाणी हुई कि प्राण मत दे। गालव के आश्रम में जिस राज कुँअर से यह मारा जायगा वही तेरा हाथ पीला करेगा। मैं इसकी सखी विंध्यवान् की पुत्री कुंडला हूँ। मेरे पति पुष्कर माली को जब शम्भू दैत्य ने वध कर डाला तब से धर्म में लगी हूँ। इसके मूर्च्छा का कारन यह है कि आज मैं खबर ले आई हूँ कि गालव के आश्रम में किसी ने उस सुअर बने हुए दैत्य को वान से मारा है। अब वही इसका पति होगा पर यह तुम्हारे रूप से मोह गई है और यह सोचती है कि हाय जिसको मैं चाहती हूँ उससे न व्याही जाऊँगी। अब आप कौन हैं, कहिए ? राजकुमार ने सब हाल कहा और अपना राक्षस का मारना वर्णन किया। सुनते ही उस कन्या ने घूंघट कर लिया और वहुत प्रसन्न होकर कुंडला से वोली सखी, सुरभी का कहना क्या झूठ हो सकता है। कुंडला ने उसी समय तुंबरू गंधर्व का ध्यान किया। उसने आते ही प्रसन्नता से अग्नि को साक्षी देकर दोनों का हाथ दोनों को पकड़ा दिया और आप तप करने चला गया। कुंडला भी अपनी सखी को गले लगाकर दुलहा दुलहिन दोनों को कुछ हित की वातें सिखाकर तप करने गई। कुँअर उस कन्या (मदालसा) को घोड़े पर विठाकर उस पाताल की गुफा से बाहर निकलने लगा पर उसी क्षण राक्षसों की फौज ने चोर चोर कर आन घेरा और मदालसा को उससे छुड़ाना चाहा। कुँअर ने वहादुरी से उन सबों को वात की वात में मार गिराया और आप राजी खुशी अपने घर आया। पिता के पैरों पर पड़कर सब हाल कह सुनाया। राजा-रानी बहू-बेटा पाकर बड़े प्रसन्न हुए और सब लोग सुख से रहने लगे। राजा ने कुँवर को आज्ञा दे दी थी कि तुम नित्य घोड़े पर चढ़कर मुनियों की रखवाली किया करो। कुँअर घोड़े पर चढ़ा एक दिन यमुना किनारे के मुनियों की रखवाली कर रहा था कि एक आश्रम देखा। इस आश्रम में उस

कोई हित है तो इतना ही है कि मदालसा उसको फिर मिले पर यह सिवा ईश्वर के कौन कर सकता है?' नागराज ने कहा 'पुत्र ईश्वर की दया और मनुष्य के परिश्रम के आगे कोई बात कठिन नहीं।'

उसी दिन से अश्वतर ने हिमालय पर्वत पर सरस्वती की आराधना करनी प्रारंभ कर दी। जब सरस्वती प्रसन्न हुईं, कहा 'वर-माँगो' तो नागराज ने यह वर लिया कि उन्हें और उनके भाई कंबल को संगीत विद्या संपूर्ण रीति से आजाय। वर पाकर कंबल अश्वतर दोनों कैलाश को गए और गाकर श्री भोलानाथ सदाशिव को ऐसा रिझाया कि महादेव पार्वती साथ ही बोले "माँगो क्या चाहते हो"। दोनों ने हाथ जोड़कर कहा "नाथ! कुवलयाश्व की स्त्री मदालसा उसी रूप और अवस्था से हमारे घर में फिर जन्म ले"। "एवमस्तु" त्रिनयन जी ने कहा और यह भी आज्ञा दिया कि तुम्हारी साँस से आज के तीसरे दिन मदालसा उत्पन्न होगी। तीसरे दिन मदालसा का जब जन्म हुआ तो नागाधिप ने सबसे छिपाकर उसको निज के जनाने में रक्खा। एक दिम बातों बात में अश्वतर ने कहा 'बेटा भला हम भी तुम्हारे मित्र को देखें'। नाग कुमार उसी समय कुवलयाश्व के पास आए और बोले 'हम आप से कुछ जाँचते हैं'। कृतध्वज बोला 'मित्र, हमारे धन्य भाग, इतने दिन तक आप लोग मेरे साथ रहे, कभी कुछ न कहा, आज भला इतना कहा तो, मैं राज्य और प्राण भी देने को प्रस्तुत हूँ।' कुमारों ने कहा 'मेरे पिता जी आप को देखा चाहते हैं'। राजकुमार उन ब्राह्मण बने हुए नागकुमारों के साथ चला और वे दोनों उसका हाथ पकड़ कर यमुना में कूद पड़े। जब पैर तल पर लगे और कुँअर ने आँख खोली तो देखा कि एक रत्नमय नगरी में खड़े हैं। नागपुत्र कुमार को लेकर नागेश्वर के सामने गए। कुमार नाग लोगों का वैभव देख कर चकित हो गया। उसके नगर के जौहरी जितनी बड़ी मनियों का ध्यान भी नहीं कर सकते, वैसी वहाँ अनेक देखने में आईं। नाग सम्राट को तीनों कुमारों ने साष्टाङ्ग दण्डवत किया। अश्वतर ने राजकुँअर का सिर सूँघा और गोद में बैठाकर बोले 'पुत्र, तुम धन्य हो, आज तक तुम्हारे गुणों को अपने पुत्रों के मुख से सर्वदा सुनने से तुम्हें देखने की जो मेरी लालसा

ढाल है इस से ये दंड रोक लेते हैं। चमार में तीन अक्षर हैं 'च' चारो वेद 'म' महाभारत 'र' रामायण जो इन तीनों को पढ़ावैं वह चमार। पद्मपुराण में लिखा है इन चर्म्मकारों ने एक बेर बड़ा यज्ञ किया था, उसी यज्ञ में से चर्मण्वती निकली है। अब कर्म भ्रष्ट होने से अन्त्यज हो गए हैं नहीं तो हैं असिल में ब्राह्मण, देखो रैदास इन में कैसे भक्त हुए हैं लाओ दक्षिणा लाओ। 'सर्वे०'

क्ष०—और डोम।

पं०—डोम तो ब्राह्मण क्षत्रिय दोनों कुल के हैं, विश्वामित्र-वशिष्ट वंश के ब्राह्मण डोम हैं और हरिश्चंद्र और वेणु वंश के क्षत्रिय हैं। इस में क्या पूछना है लाओ दक्षिणा 'सर्वे जा०'

क्ष०—और कृपा निधान! मुसलमान।

पं०—मीयाँ तो चारो वर्णों में हैं। वाल्मीकि रामायण में लिखा है जो वर्ण रामायण पढ़ै मीयाँ हो जाय।

पठन् द्विजो वाग् ऋषभत्वमीयात्।
स्यात् क्षत्रियो भूमिपतित्वमीयात्॥

अल्लहोपनिषत् में इनकी बड़ी महिमा लिखी है। द्वारका में दो भाँति के ब्राह्मण थे जिनको बलदेव जी (मुशली) मानते थे। उन का नाम मुशलिमान्य हुआ और जिन्हें श्रीकृष्ण मानते उनका नाम कृष्णमान्य हुआ। अब इन दोनों शब्दों का अपभ्रंश मुसलमान और कृस्तान हो गया।

क्ष०—तो क्या आप के मत से कृस्तान भी ब्राह्मण हैं?

पं०—हई हैं इस में क्या पूछना है—ईशावास उपनिषत् में लिखा है कि सब जगत ईसाई है।

क्ष०—और जैनी?

पं०—बड़े भारी ब्राह्मण हैं। 'अर्हन्नित्यपि जैनशासनरताः' जैन इनका नाम तब से पड़ा जब से राजा अलर्क की सभा में इन्हें कोई जै न कर सका!

क्ष०—और बौद्ध?

पं०—बुद्धिवाले अर्थात् ब्राह्मण।

बेटे को देख कर ऐसा कलेजा ठंढा हुआ जैसे किसी को खोई हुई संपत्ति मिले। राजा के सारे राज्य में आनंद फैल गया और घर घर बधाइयाँ होने लगीं। कुँअर को राज का बोझ सुपुर्द करके राजा भी सुचित हुआ और कुँअर भी मदालसा के साथ सुख से काल बिताने लगा। काल पाकर राजा रानी परलोक को सिधारे और कुवलायश्व राजा और मदालसा रानी हुई। राज का प्रबंध कुवलायश्व ने बहुत अच्छा किया। प्रजा सब सुखी और चोर और शत्रु दुखी। कुवलायश्व मदालसा के साथ महल-बगीचे वन पहाड़ों और नदियों सुंदर स्थानों में सुख से काल बिताता था। समय से मदालसा को एक पुत्र हुआ। नाम करण के दिन राजा ने जब उसका सुबाहु नाम रक्खा तो मदालसा हँसी। राजा ने पूछा 'ऐसे अवसर में तुम हँसती क्यों हो?' मदालसा ने कहा 'सुबाहु किसकी संज्ञा है इस जीव की कि इस देह की? देह की कहो तो हो नहीं सकती क्योंकि यह मेरा हाथ, यह मेरा देह, यह सब लोग कहते हैं इससे देह का कोई दूसरा अभिमानी अलग मालूम होता है और जो कहो जीव की है तो जीव को तो बाहु हुई नहीं, वह तो निर्लेप है। फिर इसकी सुबाहु संज्ञा क्यों? मेरे जान यह नामकरण इसका व्यर्थ है।' राजा को ऐसे नामकरण के आनंद के अवसर में उसका यह ज्ञान छाँटना जरा बुरा मालूम हुआ पर चुप कर रहा। मदालसा जब बालक को खिलाने लगती तो यह कह कर खिलाती।

बैत—अरे जीव तू आतमा शुद्ध है। निरंजन है तू और तू बुद्ध है॥
फँसा है तू आकर के भौजाल में। निराला है तू इनसे पर चाल में॥
न माया में इनके अरे कुछ भी भूल। न सपने की संपत पै इतना तू फूल॥
तेरा कोई दुनिया में साथी नहीं। तेरा राज घोड़ा व हाथी नहीं॥

चौपाई—पुत्र भूल तू जग में आया। माया ने तुझको भरमाया॥
तू है अलख निरंजन बेटा। जग माया ने तुझे लपेटा॥
है तू इस शरीर से न्यारा। परमातमा शुद्ध अविकारा॥
वही जतन तू कर सुत मेरे। जिस्से छूटें बन्धन तेरे॥

छोटेपन ही से ज्ञान के संस्कार से बड़ा होते ही वह लड़का संसार

पं०—ऊँच नीच क्या, सब ब्रह्म हैं, आप दक्षिणा दिए चलिए सब कुछ होता चलैगा। सबै०

च०—दक्षिणा मैं दूँगा, आप इस विषय में भी कुछ परीक्षा दीजिए।

पं०—पूछिए मैं अवश्य कहूँगा।

च०—कहिए अगरवाले और खत्री।

पं०—दोनों बढ़ई हैं, जो बढ़ियाँ अगर चंदन का काम बनाते थे उनकी संज्ञा अगरवाले हुई और जो खाट बीनते थे वे खत्री हुए वा खेत अगोरने वाले खत्री कहलाए।

च०—और महाराज नागर गुजराती।

पं०—सँपेरे और तेली, नाग पकड़ने से नागर और गुल जलाने से गुजराती।

च०—और महाराज भुँइहार और भाटिये और रोड़े।

पं०—तीनों शूद्र, भूजा से भुइँहार, भट्ठी रखने वाले भाटिये, रोड़ा ढोने वाले रोड़े।

च०—(हाथ जोड़कर) महाराज आप धन्य हौ लक्ष्मी वा सरस्वती जो चाहैं सो करैं चलिए दक्षिणा लीजिये।

पं०—चलो इस सब का फल तो यही था।

(दोनों गए)*

—:o:—

वसंत पूजा

[यजमान और सर्व्वभट्ट और मुर्द्र भट्ट आते हैं]

यज०—महाराज इसका नाम वसंत पूजा क्यों है?

स० भ०—महाराज इसमें बसंतों की बसंत ही में पूजा करते हैं विशेषतः हमलोग पूरे वसंतनंदन हैं क्योंकि तौकी बाई को बाईस रुपये मिलैं, मियाँ खिलौना को पंद्रह, लाट साहब को नजर भी पंद्रही की

* हरिश्चंद्र मैगजीन जि० १ सं० ६ नवंबर १४ सन् १८७३।
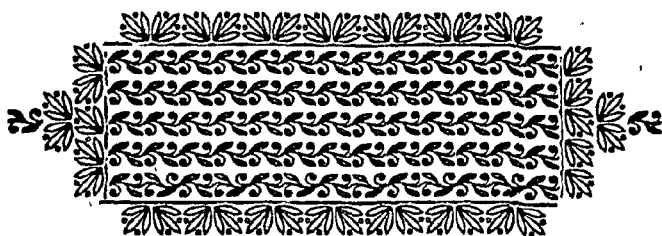
एक कहानी कुछ आप बीती कुछ जग बीती

प्रथम खेल

जमीने चमन गुल खिलाती है क्या क्या ?
बदलता है रंग आसमाँ कैसे कैसे ॥

हम कौन हैं और किस कुल में उत्पन्न हैं आप लोग पीछे जानेंगे। आप लोगों को क्या, किसी का रोना हो पढ़े चलिए, जी बहलाने से काम है। अभी मैं इतना ही कहता हूँ कि मेरा जन्म जिस तिथि को हुआ वह जैन और वैदिक दोनों में बड़ा पवित्र दिन है। सं० १९३० में मैं जब तेईस बरस का था, एक दिन खिड़की पर बैठा था, बसन्त ऋतु, हवा ठंढी चलती थी ? साँझ फूली हुई, आकाश में एक ओर चन्द्रमा दूसरी ओर सूर्य पर दोनों लाल लाल, अजब समा बँधा हुआ, कसेरू, गंडेरी और फूल बेचनेवाले सड़क पर पुकार रहे थे। मैं भी जवानी की उमंगों में चूर, जमाने के ऊँच नीच से बेखबर, अपनी रसिकाई के नशे में मस्त, दुनिया के मुफ्तखोरे सिफारशियों से घिरा हुआ अपनी तारीफ सुन रहा था, पर इस छोटी अवस्था में भी प्रेम को भली भाँति पहचानता था।

कोई कहता था आप से सुंदर संसार में नहीं, कोई कसमें खाता

मु० भ०—लाटो देवता जज्जो देवता मजिस्टरो देवता पुलिस देवता डाक्टरो देवता।

स० भ०—बंगला देवता सड़को देवता रेलो देवता तारो देवता धूआँकसो देवता।

मु० भ०—कोतवालो देवता थानेदारो देवता नाजिरो देवता कांस्टिबलो देवता देव ताकत का हौआ:।

स० भ०—ईशावासमिदं सर्व्वं यत्किंचित् जगत्यां जगत्।

मु० भ०—मधुव्वाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः माध्वीर्नस्सन्त्वोषधीः। मधुम्ह्यणजे मद्य।

स० भ०—सलामश्चते बंदगीचते घूसश्चते चंदाचते अड्रेसश्चते बालश्चते बलश्चते राज्यंचते पाटंचते कलाकौशल्यंचते स्वच्छ विहारश्चते लक्ष्मीचते विद्याचते।

मु०भ०—रिसेप्शनश्चते—इल्युमिनेशनश्चते—टैक्शचते—चुंगीचते जमाचते जुर्मानाचते।

स० भ०—बैतुलमालश्चते रसूमश्चते स्टाम्पश्चते नजरश्चते डालीचते इनामश्चते।

मु०भ०—रेलतार का किराया च ते अंगरेज़ी सौदे का दामश्चते रुईचते अन्नंचते।

स०भ०—एकाचते बलंचते तनमनधन सर्व्वस्वंचते भवतु।

मु०भ०—मर्खताचमे कायरत्वञ्चमे धक्काचमे गरदनियाचमे हँसीचमे।

स०भ०—भ्रष्टताचमे आज़ादीचमे इङ्गलिसाइज्डत्वचमे बीएचमे एमएचमे।

मु०भ०—गर्व्वंचमे कमेटीचमे चुंगी कमिश्नरीचमे आनरेरी मैजिस्ट्रेटीचमे।

स०भ०—खानाचमे टिकट्चमे मद्यंचमे होटलंचमे लेक्चरंचमे।

मु०भ०—स्टारअवइंडियाचमे कौंसिलमेंबरत्वंचमे उपाधिचमे।

स०भ०—दर्बार में कुरसीचमे मुलाकातमे आनरचमे प्रतिष्ठाचमे।

मु०भ०—फूल्सकेपचमे हाफसिविलाइजेडत्वंचमे जितत्त्वमन्धत्वंचमे बूटचमे शिफारशेन कल्पन्ताम्।

इन सबों में से एक मनुष्य को आपलोग पहचान रखिए, इससे बहुत काम पड़ेगा। यह नाटा खोटा अच्छे हाथ पैर का साँवले रंग का आदमी है, बड़ी मोंछ, छोटी आँखें, कछाड़ा कसे, लाल पगड़ी बाँधे, हरा दुपट्टा कमर में लपेटे, सफेद दुपट्टा ओढ़े, जात का कुनबी है। इसका नाम होली है। होली आजकल मेरे बहुत मुँह लग रहा है, इसीसे जो बात किसी को मुझ तक पहुँचानी होती है वह लोग उससे कहते हैं। रेवड़ी के वास्ते मसजिद गिरानी इसीका काम है।*
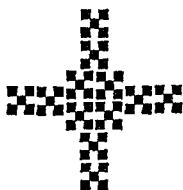
* यह अंश कविवचन सुधा भाग ८ सं० २२ वैशाख कृष्ण ४ सं० १६३३ में प्रकाशित हुआ था।

"मैंने कलिपुराण का आकाश खंड और निघंट पुराण का पाताल खंड देखा तो मुझे अत्यंत खेद भया कि यह हमारे यजमान खासे अच्छे क्षत्री अब कालवशात् शूद्र कहलाते हैं। अब देखिए इन के नामार्थ ही से क्षत्रियत्व पाया जाता है। गढ़ारि अर्थात् गढ़ जो किला है इस के अरि तोड़ने वाले, यह काम सिवाय क्षत्री के दूसरे का नहीं है। यदि इसे गूढ़ारि का अपभ्रंश समझें तो यह शब्द भी क्षत्रियत्व का सूचक है। गूढ़ मत्स्य का नाम है तिन का अरि अर्थ लें तो यह भी ठीक है क्योंकि जल स्थल सब का आखेट करना क्षत्रियों का काम है। सब अर्थ अनुमान मात्र है मुख्य इन का नाम गरुड़ार्य अर्थात् गरुड़ के वंशी वा गरुड़ के भाई जो अरुण हैं उन के वंश में उत्पन्न। ईर्षा से जो पंडित लोग इन का नाम गरलारि अनुमान करते हैं सो भी ठीक है क्योंकि गरलारि जो मरकत अथवा गरुड़ मणि है सो गरुड़ जी की कृपा से पूर्वकाल में इन के यहाँ बहुत थे और इन को सर्प नहीं काटता था और ये सर्प विष निवारण में बड़े कुशल थे इसी से ये गरुड़ार्य्य कहलाते थे, अब गड़रिया कहलाने लगे हैं।

"इन की पूर्व कालिक प्रशस्तता और कुलीनता का वृत्तांत तो आकाश खंड ही कहे देता है कि इन का मूल पुरुष उत्तम क्षत्री वर्ण था। यद्यपि इस अवस्था में सब प्रकार से हीन दीन हो गए हैं तथापि बहुत से क्षत्रियत्व के चिन्ह इन में पाए जाते हैं। पहिले जब इन के पुरखे लोग समर भूमि में जुड़ते थे और लड़ने के लिये व्यूह रचना करते थे तो अपने योद्धाओं के चेतने और सावधान करने के लिए संस्कृत में यह बोली बोलते थे। मत्तोहि मत्तोहि दृढं दृढं। अर्थात् मतवाले हो गए हो सँभलो चौकस रहो सो इस वाक्य के अपभ्रंश का लेश अब भी इन लोगों में पाया जाता है। देखो जब वे भेड़ी और बकरियों को डाँटने लगते हैं तो "द्रहि द्रहि मतवाही मतवाही" कहने लगते हैं तो इन के क्षत्री होने में भला कौन संदेह कर सकता है। क्षत्री का परम धर्म वीरता, शूरता, निर्भयता और प्रजा पालन है सो इन में सहज ही प्राप्त है। सावन भादों की अंधेरी रात में जंगलों के बीच सिंह के समान गरजते हैं और अपनी प्रजा भेड़ी बकरी को बड़े भारी शत्रु वृक से बचाते हैं। शिकारी ऐसे होते हैं कि शशप्रभृति बन जंतुओं

प्रहसन-पंचक

४०

ऋषियों ने इन गरुड़ वंशी क्षत्रियों को सौंपा तौ इन्होंने राक्षसों को जीत कर यज्ञ पशुओं की रक्षा की तभी से छागमेष की रक्षा इनके कुल में चली आती है।

"मैं अति प्रसन्न हुआ कि आप सब ने सम्मति से एकता कर के मेरी बात रखली और तंत्र के इन प्रामाणिक वचनों को सच्चा किया।

मेषचारणसंसक्ताः छागपालनतत्पराः।
बभूवुःक्षत्रियादेवि स्वाचारप्रतिवर्जनात्॥
कलौपंचसहस्राब्दे किंचिदूनेगतेसति।
क्षत्रियत्वंगमिष्यंति,ब्राह्मणानांव्यवस्थया॥

(तदनंतर गरुड़ वंशियों के सम्मुख होकर)

हे गरुड़वंशियों आज इस सभा के ब्राह्मणों ने तुम्हारे पुनः अपने क्षत्रिय पद के ग्रहण और धारण करने की अभिलाषा को पूर्ण किया। अब सब दक्षिणा लाओ हम सब पंडित जन आपस में बाँट लें और तुम्हारे क्षत्री बनने के कागद पर दस्तखत कर दें॥"

(कलऊ गड़ेरिया दक्षिणा देता है पंडित लोग लेते हैं)

कलऊ—सब महरजवन से मोरी इहै विनती हौ कि जवन किछु किहा कराना हो तवन पक्का पोढ़ा कर दिहः। हाँ महरज्जा जिहमाँ कोऊ दोषै न

बिपिनराम—दोखै का सारे?

कलऊ—अरे इहै कि धरम सास्तरवा में होइ तौने एहिमा लिखिहः।

विपिनराम—अरे सरवा धरमसास्तर फास्तर का नाम मत लेइ ताइ तोप के काम चलाउ सास्तर का परमान ढूँढ़ें सरऊ तौ तोहार कतहूँ पता न लागी। अरे फिर आज काल धरमसास्तर को पूछत को है।

कलऊ—अरे महरज्जा पोथी पुरान के अश्लोक फश्लोक लिख दीहा इहै और का महरज्जा तोहार परजा हौं।

विपिनराम—अरे सरवा परजा का नाँव मत लेइ। अस कहु कि हम क्षत्री हई।
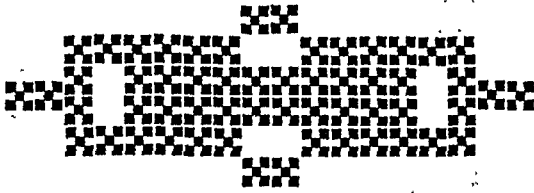
प्रहसन-पंचक

सबै जात गोपाल की

—:०:—

[एक पंडित जी और एक क्षत्री आते हैं]

क्षत्री—महाराज देखिए बड़ा अंधेर हो गया कि ब्राह्मणों ने व्यवस्था दे दी कि कायस्थ भी क्षत्री हैं। कहिए अब कैसे कैसे काम चलैगा।

पंडित—क्यों, इस में दोष क्या हुआ? "सबै जात गोपाल की" और फिर यह तो हिंदुओं का शास्त्र पनसारी की दूकान है और अक्षर कल्प वृक्ष हैं इस में तो सब जात की उत्तमता निकल सकती है पर दक्षिणा आप को बाएँ हाथ से रख देनी पड़ैगी फिर क्या है फिर तो "सबै जात गोपाल की।"

क्ष०—भला महाराज जो चमार कुछ बनना चाहै तो उसको भी आप बना दीजिएगा।

पं०—क्या बनना चाहै?

क्ष०—कहिए ब्राह्मण।

पं०—हाँ, चमार तो ब्राह्मण हई हैं इस में क्या संदेह है, ईश्वर के चर्म्म से इनकी उत्पत्ति है, इन को यम दंड नहीं होता। चर्म का अर्थ

सं०—आस्यतां स्थीयतांच ।

भं०—हं हं हं हं, भवानेव तिष्ठतु ।

सं०—नायं कालो व्यर्थशिष्टाचारस्य, तत् स्थीयतां, इदमासनं ।

भं०—इदमासनमास्ये ।

[उभावुपविशतः]

सं०—किमर्थं निर्गतोसि ?

भं०—कुतः जननीजठरकुहर पिठरात्, गृहाद्वा ।

सं०—पूर्वतस्तु निर्गत एव विभासि, परतः पृच्छामि ।

भं०—होलिका रमणार्थं ।

सं०—हहा ! अस्मिन् घोरतरसमयेपि भवादृशा होलिका रमणमनुमोदयंति न जानासि नायं समयो होलिकारमणस्य ? भारतवर्षधने विदेशगते, क्षुत् चामपीडितेच जनपदे, किं होलिकारमणेन ?

भं०—अस्मादृशां गृहे सर्वदैव होलिका, नाहं लोकरोदनं शृणोमि । लोकास्तु सर्वदैव रोदनशीलाः ।

सं०—तर्हि भवान् ढुंढावंशजातः ।

भं०—नाहं ढुंढिराजः ।

सं०—नहि भो, मया उच्यते तर्हितु भवान् ढुंढावंशजातः ?

भं०—नाहं जयपुरी ।

सं०—कःकथयति भवान् जयपुरी, दिल्लीपुरी, गोरक्ष पुरी, गिरिभीरतीति ?

भं०—तर्हि न बुद्धो मया ढुंढाशब्दार्थः ।

सं०—ढुंढानाम्न्या राक्षस्या एव होलिकापर्वं ।

भं०—आः ! पुनरपि मामाक्षिपसि राक्षसवंशकलंकेन ! मधुनंदनः मेवोक्तं नाहं मधुवंशीय, माधवनंदनोहं ।

सं०—भवतु, केन साकं रंस्यसे होलिकाक्रीड़ः ।

भं०—यो मिलिष्यति—उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकं ।

सं०—कया सामग्र्या भवान् रिरंसुः ?

भं०—धवलधूलिरक्तपौडरश्यामपंकपीतागरुजादिद्रव्यैः । अंतरंच गुलालश्च चोवा चंदनमेव च । अबीरः पिचकारी चेति वाक्यात् ।

च०—और धोबी।

पं०—अच्छे खासे ब्राह्मण जयदेव के जमाने तक धोबी ब्राह्मण होते थे। 'धोई कविः क्ष्मापतिः'। ये शीतला के रज से हुए हैं इससे इनका नाम रजक पड़ा।

च०—और कलवार।

पं०—क्षत्री हैं, शुद्ध शब्द कुलवर है, भट्टी कवि इसी जाति में था।

च०—और महाराज जी कुहाँर।

पं०—ब्राह्मण, घटखर्प्पर कवि था।

च०—और हाँ हाँ वेश्या।

पं०—क्षत्रियानी—रामजनी, और कुछ बनियानी अर्थात् वेश्या।

च०—अहीर।

पं०—वैश्य—नंदादिकों के बालकों का द्विजाति संस्कार होता था। 'कुरु द्विजाति संस्कारं स्वस्तिवाचनपूर्वकं' भागवत में लिखा है।

च०—भुँइहार।

प०—ब्राह्मण।

दा०—दूसर।

पं०—ब्राह्मण, भृगुवंश के, ज्वालाप्रसाद पंडित का शास्त्रार्थ पढ़ लीजिए।

च०—जाठ।

पं०—जाठर क्षत्रिय।

च०—और कोल।

पं०—कोल ब्राह्मण।

च०—धरिकार।

पं०—क्षत्रिय शुद्ध शब्द धैर्य्यकार है।

च०—और कुनबी और भर और पासी।

पं०—तीनों ब्राह्मण वंश में हैं, भरद्वाज से भर, कन्व से कुनबी, पराशर से पासी।

च०—भला महाराज नीचों को तो आप ने उत्तम बना दिया अब कहिए उत्तमों को भी नीच बना सकते हैं?

नेन न किमपि भविता, भारतंतु होलिकाया मेव गंता। अत्रतु जमघटो धूलिखेल एवावशिष्यति, तन्मारम्य अनंतांगलराजधानीशिखरोपरि पोलिटिकलचिंतासमूहं।

सं०—मित्र, परमयमुत्साहः किंमूलः इति जानासि वा त्वं?

भं०—नहि, लोके तु शिष्टाचार एव सर्वकर्मप्रधानो मन्यते, अतः सएव मूलं भविता अथवा पश्यचाधुनिकं विद्यार्थिनं।

सं०—भवतु तथैव करोमि।*

—:*:—

स्वर्ग में विचार सभाका अधिवेशन

—:०:—

स्वामी दयानंद सरस्वती और बाबू केशवचंद्रसेन के स्वर्ग में जाने से वहाँ एक वेर बड़ा आंदोलन हो गया। स्वर्गवासी लोगों में बहुतेरे तो इनसे घृणा करके धिक्कार करने लगे और बहुतेरे इनको अच्छा कहने लगे। स्वर्ग में भी 'कंसरवेटिव' और 'लिबरल' दो दल हैं। जो पुराने जमाने के ऋषि मुनि यज्ञ कर करके या तपस्या करके अपने अपने शरीर को सुखा सुखा कर और पच पच कर मरके स्वर्ग गए हैं उन के आत्मा का दल 'कंसरवेटिव' है, और जो अपनी आत्माही की उन्नति से वा और किसी अन्य सार्वजनीन उच्च भाव संपादन करने से या परमेश्वर की भक्ति से स्वर्ग में गए हैं वे 'लिबरल' दल भक्त हैं। वैष्णव दोनों दल के क्या दोनों से खारिज थे, क्योंकि इनके स्थापकगण तो लिबरल दल के थे किंतु अब ये लोग 'रेडिकल्स' क्या महा महा रेडिकल्स हो गए हैं। विचारे बूढ़े व्यासदेव को दोनों दल के लोग पकड़ पकड़ कर लेजाते और अपनी अपनी सभा का 'चेयरमैन' बनाते थे, और बेचारे व्यासजी भी अपने प्राचीन अन्यवस्थित स्वभाव और शील के कारण जिस की सभा में जाते थे वैसी ही वक्तृता कर देते थे। कंसरवेटिवों का दल प्रबल था; इसका मुख्य कारण यह था कि स्वर्ग के जमींदार इन्द्र, गणेश प्रभृति भी उनके साथ योग देते थे, क्योंकि बंगाल के जमीं-

* विद्यार्थी खं० १ सं० ८ फाल्गुन सं० १९३५।

असरफी, बड़े डाक्तर और वकीलों को फीस भी इतनाही, बीनकारों को दस, कवियों को पाँच, चपरासियों को दो, कथा पर एक, पंडितों को ईमान बिगड़वाई आठ आना पर हम को दुअन्नी, कठसरैया की माला और बेलकठा, सेती के चंदन घस मोरे ललुआ।

मु० भ०—सत्यं सत्यं हम चिल्लाने में किसी से कम नहीं, शास्त्र भी हमारा सर्वोपरि वेद उस पर यह दशा।

य०—अच्छा आज कोई इस समय के अनुसार संहिता पढ़िये तो हम विशेष दक्षिणा दें।

स० भ०—तर आरंभ करा मुद्रं भट्ट।

मु० भ०—हँआं मी ह्मणतो सहस्र शीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः।

स० भ०—अं आं सहताक्षः नेत्र कुत्रास्ति।

मु० भ०—स्वकार्य्यदर्शने—मा भवतु प्रजा दर्शने=सहस्रपात्—(रेलादिना) सभूमिं सर्व्वतो वृत्त्वा—अत्यतिष्ठद्दशांगुलं।

स० भ०—हां हां अत्यतिष्ठत्साद्ध त्रिहस्तं वासप्रवितस्तकं।

मु० भ०—पुरीषः एवेदं सर्व्वं यद्भूतंयच्च भाव्यं।

स० भ०—उतमद्यत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।

य०—सहस्र शीर्षा का अध्याय तो हमें भी याद है यह मत पढ़िये दूसरा चरखा निकालिये।

मु० भ०—तरते नमः म्हणा।

स० भ०—हां—राज्ञेनमः वणिजेनम गौरायचनमस्ताम्रायचनमः हूणायचनमः कपर्दिने नमोनमः।

मु० भ०—नमश्श्वभ्यश्श्वपतिभ्यश्चयोनमोनमः।

य०—हमें यह नमोनमो नहीं सुहाती।

स० भ०—तर देवता म्हणा—गौरी देवता हनूमान् देवता जाम्बुवान् देवता चंद्रमा देवता।

मु० भ०—पूषा देवता मूशा देवता ईसा देवता मूठा देवता मीठा देवता गोदेवता के भक्षको देवता।

स० भ०—अकाल देवता स्वार्थो देवता धोखा देवता जोषा देवता कोरा देवता शिष्टाचारो देवता।

लिबरल लोगों की सभा भी बड़ी धूमधाम से जमती थी। किंतु इस सभा में दो दल हो गए थे, एक जो केशव की विशेष स्तुति करते, दूसरे वे जो दयानंद को विशेष आदर देते थे। कोई कहता, अहा धन्य दयानंद, जिसने आर्यावर्त के निंदित आलसी मूर्खों की मोह निद्रा भंग कर दी। हज़ारों मूर्खों को ब्राह्मणों के (जो कंसरवेटिवों के पादरी और व्यर्थ प्रजा का द्रव्य खाने वाले हैं) फंदे से छुड़ाया। बहुतों को उद्योगी और उत्साही कर दिया। वेद में रेल, तार, कमेटी, कचहरी दिखाकर आर्यों की कटती हुई नाक बचा ली। कोई कहता धन्य केशव! तुम साक्षात् दूसरे केशव हो। तुम ने वंग देश की मनुष्य-नदी के उस वेग को, जो कृश्चन समुद्र में मिल जाने को उच्छलित हो रहा था, रोक दिया। ज्ञान कर्म का निरादर कर के परमेश्वर का निर्मल भक्ति मार्ग तुम ने प्रचलित किया।

कंसरवेटिव् पार्टी में देवताओं के अतिरिक्त बहुत लोग थे जिन में, याज्ञवल्क्य प्रभृति कुछ तो पुराने ऋषि थे और कुछ नारायणभट्ट, रघुनंदनभट्टाचार्य्य, मंडनमिश्र प्रभृति, स्मृति ग्रंथकार थे। सुना है कि विदेशी स्वर्ग के कुछ 'शीआ' लोगों ने भी इनके साथ योग दिया है।

लिबरल दल में चैतन्य प्रभृति आचार्य, दादू, नानक, कबीर प्रभृति भक्त और ज्ञानी लोग थे। अद्वैतवादी भाष्यकार आचार्य्य पंचदशीकार प्रभृति पहले दलभुक्त नहीं होने पाए। मिस्टर ब्रेडला की भाँति इन लोगों पर कंसरवेटिवों ने बड़ा आक्षेप किया किंतु अंत में लिबरलों की उदारता से उन के समाज में इनको स्थान मिला था।

दोनों दलों के मेमोरियल तयार कर स्वाक्षरित होकर परमेश्वर के पास भेजे गए।—एक में इस बात पर युक्ति और आग्रह प्रगट किया था कि केशव और दयानंद कभी स्वर्ग में स्थान न पावैं और दूसरे में इसका वर्णन था कि स्वर्ग में इनको सर्वोत्तम स्थान दिया जाय।

ईश्वर ने दोनों दलों के डेप्यूटेशन को बुलाकर कहा "बाबा अब तो तुम लोगों की 'सैल्फगवर्नमेंट' है। अब कौन हम को पूछता है, जो जिसके जी में आता है करता है। अब चाहे वेद क्या संस्कृत का

य०—लीजिए महाराज दक्षिणा, कान की मैल सब निकल गई अब नींद आती है घर घता।

दोनों०—अहाहा इस गला फाड़ने का फल तो यही था लाइये लाइये।

सब जाते हैं। *

—:ঃ:—

ज्ञाति विवेकिनी सभा

[विपिन राम शास्त्री सभा के सब पंडितों से बोले]

"हे सभा के विराजमान पंडितो, आज हम ने आप सब को इस लिये बुलाया है कि आप सब महात्मा हमारी इस विनती को सुनो और उस पर ध्यान दो। वह हमारी विनती यह है कि हमारे पुरतैनी यजमान गड़ेरिये लोग जो परम सुशील और सत्कर्म लवलीन हैं इन्हें किसी वर्ण में दाखिल करें। अरे भाइयो यह बड़े सोच की बात है कि हमारे जीते जी यह हमारे जन्म के यजमान जो सब प्रकार से हम को मानते दानते हैं नीच के नीच बने रहें तो हमारी जिंदगी को धिक्कार है। कोई वर्ष ऐसा नहीं होता कि इन विचारों से दस बीस भेड़ा बकरा और कमरी आसनादि वस्त्र और सीधा पैसा न मिलता होय। बिचारे बड़े भक्तिमान और ब्रह्मण्य होते हैं। इस लिये हम ने इन के मूल पुरुष का निर्णय और वर्ण व्यवस्था लिखी है। हम को आशा है कि आप सब हमारी संमति से मेल करेंगे। क्योंकि आज की हमारी कल की तुम्हारी। अभी चार दिन ही की बात है कि नियासीराम कायस्थ की गद्दंत पर कैसा लंबा चौड़ा दस्तखत हम ने कर दिया है। और हम क्या आप सब ने ही कर दिया है। रह गई पांडित्य सो उसे आज कल्ह कौन पूछता है गिनती में नाम अधिक होने चाहिएँ।

* हरिश्चंद्र मैगजीन जि० १ सं० ७-८ अप्रैल-मई सन् १८७४।

इस में साक्षी ली गई। अंत में कमेटी या कमीशन ने जो रिपोर्ट किया उसकी मर्म बात यह थी कि :—

"हम लोगों की इच्छा न रहने पर भी प्रभु की आज्ञानुसार हम लोगों ने इस मुकदमे के सब कागज पत्र देखे। हम लोगों ने इन दोनों मनुष्यों के विषय में जहाँ तक समझा और सोचा है निवेदन करते हैं। हम लोगों की सम्मति में इन दोनों पुरुषों ने प्रभु की मंगलमयी सृष्टि का कुछ विघ्न नहीं किया वरंच उस में सुख और संतति अधिक हो इसी में परिश्रम किया। जिस चंडाल रूपी आग्रह और कुरीति के कारण मनमाना पुरुष धर्मपूर्वक न पाकर लाखों स्त्री कुमार्ग गामिनी हो जाती हैं, लाखों विवाह होने पर भी जन्म भर सुख नहीं भोगने पातीं, लाखों गर्भ नाश होते और लाखों ही बाल हत्या होती है, उस पापमयी परम नृशंस रीति को इन लोगों ने उठा देने में अपने शक्यभर परिश्रम किया। जन्मपत्री की विधि के अनुग्रह से जब तक स्त्री पुरुष जीएँ एक तीर घाट एक मीर घाट रहैं, बीच में इस वैमनस्य और असंतोप के कारण स्त्री व्यभिचारिणी पुरुष विषयी हो जायँ, परस्पर नित्य कलह हो, शांति स्वप्न में भी न मिलै, वंश न चलै, यह उपद्रव इन लोगों से नहीं सहे गये। विधवा गर्भ गिरावैं, पंडित जी या बाबू साहब यह सह लेंगे, वरंच चुपचाप उपाय भी करा देंगे, पाप को नित्य छिपावेंगे, अंततोगत्वा निकलही जायँ तो संतोष करेंगे, पर विधवा का विधिपूर्वक विवाह न हो, फूटी सहेंगे, आँजी न सहेंगे, इस दोष को इन दोनों ने निःसंदेह दूर करना चाहा। सवर्ण पात्र न मिलने से कन्या को वर मूर्ख अंधा वरंच नपुंसक मिले तथा वरको काली कर्कशा कन्या मिले जिसके आगे बहुत बुरे परिणाम हों, इस दुराग्रह को इन लोगों ने दूर किया। चाहे पढ़े हों चाहे मूर्ख, सुपात्र हो कि कुपात्र, चाहे प्रत्यक्ष व्यभिचार करें या कोई भी बुरा कर्म करें, पर गुरू जी हैं, पंडित जी हैं, इनका दोष मत कहो, कहोगे तो पतित होगे, इनको दो, इनको राजी रक्खो; इस सत्यानाश संस्कार को इन्होंने दूर किया। आर्य जाति दिन दिन ह्रास हो, लोग स्त्री के कारण, धन के वा नौकरी व्यापार आदि के लोभ से,

को दंडों से पीट लेते हैं। बड़े बड़े वेगवान आखेटकारी श्वान इन की सेवा करते और इन की छाग मेषमयी सेना की रक्षा में उद्यत रहते हैं। और दुःख सुख की सहनशीलता इन्हीं के बाँटे पड़ी है। जेठ की धूप और सावन भादों की वर्षा और पूस माघ की तुषार के दुःख को सहकर न खेदित होना इन्हीं का काम है। जैसे इन के पुरखे लोग पूर्वकाल में बाणों से विद्ध होने पर भी रण में पीछे को पाँव नहीं देते थे ऐसे ही जब इन के पाँव में भदई कुश का डाभा तीव्र चुभ जाता है तो ये उस असह्य व्यथा को सह कर आगे ही को बढ़ते हैं। और धरती को सुधारने में तो इन की प्रत्यक्ष महिमा है कि जिस खेत में दो तीन रात ये गरुड़वंशी नृपति छागमयी सेना को लेकर निवास करते हैं उस खेत के किसान को ऋद्धि सिद्धि से पूर्ण कर देते हैं। फिर वह भूमि सबल और विकार रहित हो जाती है और मोटे नाजों की कौन कहे उस में गोधूम और इक्षुदंड अपरिमित उत्पन्न होता है तो इनसे बढ़कर भूमिपाल और प्रजारक्षक कौन होगा। और यज्ञ करना क्षत्रियों का मुख्य धर्म है सो इनमें भली भाँति पाया जाता है। शरत्कालीन और चैत्र मासिक नवरात्र में अच्छे हृष्ट पुष्ट छाग मेषों के बलि प्रदानसे भद्रकाली और योगिनीगणको तृप्त करते हैं। और जब इनके यहाँ लोम कर्तनोत्सव होता है तो उस समय सब भाई बिरादर इकट्ठे होकर खान पान के साथ परम आनन्द मनाते हैं। व्यवहार कुशल ऐसे होते हैं कि इनकी सेना की कोई वस्तु व्यर्थ नहीं जाती। यहाँ तक कि मल मूत्र मांस चाम लोम उचित मूल्य से सब बिकता है। और वैरीहंता ऐसे हैं कि सबसे बड़े भारी शत्रु को पहिले ही इन्होंने मार डाला है जैसे कहावत प्रसिद्ध है कि गड़रिया अपनी रिस को मनही में मार डालता है यदि ऐसा न करते तो इनकी प्रजा की ऐसी वृद्धि काहे को होती। ये ऐसे नीतिज्ञ होते हैं कि मेष छाग की शक्ति के अनुसार हलकी लकड़ी से उनकी ताड़ना करते हैं। वृक्ष और नदी से बढ़कर परोपकारी साधू कोई नहीं होता सो वहीं इनका रात दिन निवास रहता है इस लिए ये गरुड़ार्य सदैव सज्जनों की संगति में रहते हैं। मनोरंजन तंत्र में लिखा है कि पूर्व काल में यथार्थ संचित पशुओं को राक्षस लोग उठा ले जाते थे तब उनकी रक्षा का संभार

ब्राह्म लोगों में सुरा मांसादि का प्रचार विशेष है किंतु इसमें केशव का कोई दोष नहीं। केशव अपने अटल विश्वास पर खड़ा रहा। यद्यपि कूचविहार के संबंध करने से और यह कहने से कि ईसामसीह आदि उससे मिलते हैं, अंतावस्था के कुछ पूर्व उन के चित्त की दुर्बलता प्रकट हुई थी, किंतु वह एक प्रकार का उन्माद होगा वा जैसे बहुतेरे धर्म प्रचारकों ने बहुत बड़ी बातें ईश्वर की आज्ञा बतला दीं वैसे ही यदि इन बेचारे ने एक दो बात कही तो क्या पाप किया। पूर्वोक्त कारणों ही से केशव का मरने पर जैसा सारे संसार में आदर हुआ वैसा दयानंद का नहीं हुआ। इस के अतिरिक्त इन लोगों के हृदय के भीतर छिपा कोई पुन्य पाप रहा हो तो उस को हम लोग नहीं जानते इस का जानने वाला केवल तूही है।"

इस रिपोर्ट पर विदेशी मेंबरों ने कुछ क्रुद्ध होकर हस्ताक्षर नहीं किया।

रिपोर्ट परमेश्वर के पास भेजी गयी। इस को देख कर इस पर क्या आज्ञा हुई और वे लोग कहाँ भेजे गए यह जब हम भी वहाँ जायँगे और फिर लौट कर आसकेंगे तो पाठक लोगों को बतलावेंगे। या आप लोग कुछ दिन पीछे आपही जानोगे।*

* मित्रविलास खंड ८ सं० ४० (१६ जून सन् १८

कलऊ—अच्छा महरजा हम छत्री हई तोहरे सब के पायन परत हइ।

विपिनराम—अच्छा चिरंजू चिरंजू सुखी रहा। अच्छा कलऊ तुम दोऊ प्रानी एक विरहा गाइ के सुनाइ दो तो हम सब विदा होहिं।

कलऊ—बहुत अच्छा महरज्जा (अपनी स्त्री से) आउरे पवरी धीहर।

(दोनों स्त्री पुरुष मिलकर नाचते गाते हैं)

आउ मोरि जानी सकल रसखानी। धरि कँध बहियाँ नाचु मनमानी।
मैं भैलों छत्ररि तु धन छतरानी। अब सब छुटि गैरे कुल के रे कानी।
धन धन बम्हना लै पोथिया पुरानी। जिन दियो छतरी बनाइ जगजानी॥

(सब का प्रस्थान भया)*

—:※:—

संडभंडयोः संवादः

—:※:—

संडः—कः कोत्र भोः ?

भंडः—अहमस्मि भंडाचार्यः।

सं०—कुतो भवान् ?

भं०—अहं अनादियवनसमाधित उत्थितः।

सं०—विशेषः।

भं०—कः अभिप्रायः।

सं०—तर्हि तु भवान् वसंत एव।

भं०—अत्र कः संदेहः केवलं वसंतो, वसंतनन्दनः।

सं०—मधुनन्दनोवा माधवनंदनो वा ?

भं०—आः! किमामाक्षिपसि! नाहं मधोः कैटभाग्रजस्य नंदनः। अहं तु हिंदू पदवाच्य अतएव माधवनन्दनः।

सं०—तर्हितु सुस्वागतं ते। आगच्छ। माधवनंदन।

भं०—हंत, प्रणामं करोमि।

---

* यह लेख कविवचनसुधा जि० ८ सं० १६, ११ दिसंबर सन् १८७६ में प्रकाशित हुआ था।

स्तोत्र पंचरत्न के नाम से श्रीवेश्यास्तवराज, स्रीसेवापद्धति,
मदिरास्तवराज, कंकरस्तोत्र और अँगरेज स्तोत्र बाँकीपुर
खड्गविलास प्रेस से छपा था जिस की भूमिका
भारतेंदुजी ने सन् १८८२ ई० में लिखी
थी। द्वितीय वार सन् १८८६ ई०।
अंत में 'ईश्वर बड़ा विलक्षण
है' सम्मिलित है।

सं०—अधुना, भारते तादृक् कीर्तिकर्तारो न संति, धवलधूलिः कुत आगमिष्यति ?

भं०—न ज्ञातं भवता ? चुंगीरचित राज मार्गतः।

सं०—भवतु राजमार्गतो, देवमार्गतो वा, किन्तु धवलधूलिः कुतस्तत्र निरंतरसेककर्मप्राचुर्यात् ?

भं०—आः ! यथार्थनामन्। नास्ति धूल्यभावः ? भारतेतु प्रायः सर्वेषामेव नेत्रेधूर्तप्रक्षेपिता धूलिर्मिलिष्यति।

सं०—तर्हि रक्तपौडरंकुतः मेडिकलहालात् ?

भं०—न बुद्धं भो भवता, रक्तपौडरं नाम अबीरः, रक्तंच तत् पौडरंचेति समासः।

सं०—रक्तं, पौडरं चेति किं वस्तुद्वयं ?

भं०—हा ! कीदृशो भवानल्पज्ञः ! नहि नहि, भो अन्यवर्णावच्छेदक रक्त वर्णावच्छिन्नः पौडर, नाम विशिष्टजातिबोधकः स्वाभाविकधर्मवान् तत्त्वरूपश्चूर्णविशेषः।

सं०—हंहो बुद्धं भवान् वैयाकरणी नैय्यायिकश्च।

भं०—सत्यमेव, यत्र शाब्दिकास्तत्र तार्किका इति हि प्रसिद्धिः।

सं०—भवतु रक्तपौडरं कुत आनेष्यसि, आर्याणां शिरसि तदभावात् ?

भं०—हहहह, रक्त रजसोपि दारिद्र्यं मम नारीभंडस्य ! विशेषतः कुसुमाकरे ऋतौ ?

सं०—ज्ञातं—परंतु श्यामपंकं किं जयचंद्रादारभ्य आर्यकुलानर्थविग्रहमूलजनकानांमुखात्, भारत ललनाया अश्रुपूर्णान्नेत्राद्वा ?

भं०—नहि, गंधविक्रेतुर्हट्टपण्यात्।

सं०—अगरुजंकुत, आर्याणां मुख कांति समूहात् ?

भं०—पाचलात्काश्मीरात्। अस्माकं तु सर्वत्रैव गतिः, यतः कुतश्चिद् गृहीत्वा क्रीडिष्यामि।

सं०—क्रीड निश्चितो भवान्, कुत्रास्माकं देशचिंतातुराणां क्रीडाभिरुचिः ?

भं०—भवंतस्तु व्यर्थे देशचिंतातुराः भवचिंतया किं भविष्यति ? सुखं क्रीड, रमस्व, खेल, कूदखेलम् याति, पुनः क युवतयः, रोद-

दारों की भाँति उदार लोगों की बढ़ती से उन बेचारों को विविध सर्वोपरि बलि और भाग न मिलने का डर था।

कई स्थानों पर प्रकाश सभा हुई। दोनों दल के लोगों ने बड़े आतंक से वक्तृता दी। 'कंसरवेटिव' लोगों का पक्ष समर्थन करने को देवता लोग भी आ बैठे और अपने अपने लोकों में भी उस सभा की शाखा स्थापन करने लगे। इधर 'लिबरल' लोगों की सूचना प्रचलित होने पर मुसलमानी-स्वर्ग और जैन स्वर्ग तथा क्रिस्तानी-स्वर्ग से पैगंबर, सिद्ध, मसीह प्रभृति हिंदू-स्वर्ग में उपस्थित हुए और 'लिबरल' सभा में योग देने लगे। बैकुंठ में चारो ओर इसी की धूम फैल गई। 'कंसरवेटिव' लोग कहते, "छिः! दयानंद कभी स्वर्ग में आने के योग्य नहीं; इसने १ पुराणों का खंडन किया, २ मूर्ति पूजा की निंदा किया, ३ वेदों का अर्थ उलटा पुलटा कर डाला, ४ दश नियोग करने की विधि निकाली, ५ देवताओं का अस्तित्व मिटाना चाहा, ६ और अंत में संन्यासी होकर अपने को जलवा दिया। नारायण! नारायण! ऐसे मनुष्य की आत्मा को कभी स्वर्ग में स्थान मिल सकता है, जिस ने ऐसा धर्म विप्लव कर दिया और आर्यावर्त को धर्म वहिर्मुख किया।"

एक सभा में काशी के विश्वनाथ जी ने उदयपुर के एकलिंग जी से पूछा "भाई! तुम्हारी क्या मत मारी गई जो तुम ने ऐसे पतित को अपने मुँह लगाया और अब उसके दल के सभापति बने हो, ऐसाही करना है तो जाओ लिबरल लोगों से योग दो।" एकलिंग जी ने कहा "भाई, हमारा मतलब तुम लोग नहीं समझे। हम उसकी बुरी बातों को न मानते न उसका प्रचार करते, केवल अपने यहाँ के जंगल की सफाई का कुछ दिन उसको ठेका दिया, बीच में वह मर गया अब उसका माल मता ठिकाने रखवा दिया तो क्या बुरा किया।"

कोई कहता "केशवचंद्रसेन! छि छि! इसने सारे भारतवर्ष का सत्यानाश कर डाला। १ वेद पुराण सब को मिटाया, २ क्रिस्तान मुसलमान सब को हिंदू बनाया। ३ खाने पीने का विचार कुछ न बाकी रक्खा। ४ मद्य की तो नदी बहा दी। हाय हाय ऐसी आत्मा क्या कभी बैकुंठ में आसकती है।"

ऐसे ही दोनों के जीवन की समालोचना चारों ओर होने लगी।

अथ स्तोत्र प्रारम्भ ।

नौमि नौमि नौमि देवि रण्डिके ।
लोक वेद सिद्ध पंथ खण्डिके ॥
कोटि यक्षराज कोष नासिनी ।
स्वार्थ सिद्धि हेतही विलासिनी ॥
दृष्टि मात्र मन्द मन्द हासिनी ।
कामि वृन्द काम दुःख नासिनी ॥
जातरूप जात रूप शालिनी ।
द्रव्यमान वीर्य कोष कालिनी ॥
नव्य यून वृन्द मुण्ड मालिनी ।
क्षेत्रपाल वाहनादि पालिनी ॥
काशिका प्रवास मोक्ष दायिनी ।
पोर्ट ब्रांडिकादि मद्य पायिनी ॥
केश पाश स्वच्छ गुच्छ शोभिनी ।
द्रव्य दर्श भव्य भाव लोभिनी ॥
काम अग्नि ज्वाल माल कुण्डिनी ।
कामि चित्त पक्षिका भुसुण्डिनी ॥
पुन्य तीर्थ यात्रि वृन्द पावनी ।
दैन युक्त काम सैन्य छावनी ॥
मद्यप प्रमोद पुष्ट पीढ़िका ।
एनलाइटेंड पंथ सीढ़िका ॥
पेशवाज अङ्ग शोभिताननना ।
गिल्टभूषणा प्रमोद कानना ॥
मातृ पितृ बन्धु शील भक्षिका ।
लोक लाज नाश हेतु तक्षिका ॥
गुप्त द्रव्य पुञ्ज गेह रक्षिका ।
यौवनासवार्थ पुष्प मक्षिका ॥
धर्म कर्म शर्म चर्म हारिणी ।
गर्म चर्म नम मर्म कारिणी ॥
प्रेजुडीस लेश मात्र भञ्जिका ।

अक्षर भी स्वप्न में भी न देखा हो पर लोग धर्म विषय पर वाद करने लगते हैं। हम तो केवल अदालत या व्यवहार या स्त्रियों के शपथ खाने को ही मिलाए जाते हैं। किसी को हमारी डर है? कोई भी हमारा सच्चा 'लायक' है? भूतप्रेत ताजिया के इतना भी तो हमारा दरजा नहीं बचा। हम को क्या काम चाहे वैकुंठ में कोई आवे। हम जानते हैं चारों लड़कों (सनक आदि) ने पहले ही से चाल बिगाड़ दी है। क्या हम अपने बिचारे जयविजय को फिर राक्षस बनवावें कि किसी का रोकटोक करें। चाहे सगुन मानो चाहे निर्गुन, चांहे द्वैत मानों चाहे अद्वैत, हम अब न बोलेंगे। तुम जानों स्वर्ग जाने।"

डेप्यूटेशन वाले परमेश्वर की ऐसी कुछ खिजलाई हुई बात सुनकर कुछ डर गए। बड़ा निवेदन सिवेदन किया। कोई प्रकार से परमेश्वर का रोष शांत हुआ। अंत में परमेश्वर ने इस विषय के विचार के हेतु एक 'सिलेक्टकमेटी' स्थापन की। इसमें राजा राम मोहन राय, व्यासदेव, टोडरमल, कबीर प्रभृति भिन्न भिन्न मत के लोग चुने गए। मुसलमानी-स्वर्ग से एक 'इमाम', क्रिस्तानी से 'लूथर', जैनी से पारसनाथ, बौद्धों से नागार्जुन और अफरीका से सिटोवायो के बाप को इस कमेटी का 'एक्स अफीशियो मेंबर' किया। रोम के पुराने 'हरकुलिस' प्रभृति देवता जो अब गृह सन्यास लेकर स्वर्गही में रहते हैं और पृथिवी से अपना संबंध मात्र छोड़ बैठे हैं, तथा पारसियों के 'जरदुश्तजी' को 'कारेस्पांडिंग आननेरी मेंबर' नियत किया और आज्ञा दिया कि तुम लोग इस सब कागज पत्र देख कर हम को रिपोर्ट करो। उनकी ऐसी भी गुप्त आज्ञा थी कि एडिटरों की आत्मागण को तुम्हारी किसी 'काररवाई' का समाचार तब तक न मिले जब तक कि रिपोर्ट हम न पढ़ लें नहीं ये व्यर्थ चाहे कोई सुनै चाहे न सुनै अपनी टाँय टाँय मचा ही देंगे।

सिलेक्ट कमेटी का कई अधिवेशन हुआ। सब कागज पत्र देखे गए। दयानन्दी और केशवी ग्रंथ तथा उनके उनके प्रत्युत्तर और बहुत से समाचार पत्रों का मुलाहिज़ा हुआ। बालशास्त्री प्रभृति कई कंसरवेटिव और द्वारकानाथ प्रभृति लिबरल नव्य आत्मागणों की

सौंदर्य तृष्णा रूपी खूंटा है, उपासक का प्राण पुंज छाग उसमें बँध रहा है, देवी के सुहाग का खप्पर और प्रीति की तरवार है, प्रत्येक शनिवार की रात्रि इसमें महाष्टमी है, और पुरोहित यौवन है।

पद्यादि उपचार करके होम के समय यौवन पुरोहित उपासक के प्राण समिधों में मोहाग्नि लगाकर सर्वनाश तंत्र से मंत्रों से आहुति दे "मानखण्ड के लिए निद्रा स्वाहा" "बात मानने के लिए माँ बाप का बंधन स्वाहा" "वस्त्रालंकारादि के लिए यथा सर्वस्व स्वाहा" "मन प्रसन्न करने के लिए यह लोक परलोक स्वाहा" इत्यादि, होम के अनन्तर हाथ जोड़कर स्तुति करें।

हे स्त्री देवी! संसार रूपी आकाश में गुब्बारा (बेलून) हो, क्योंकि बात बात में आकाश में चढ़ा देती हो, पर जब धक्का दे देती हो तब समुद्र में डूबना पड़ता है अथवा पर्वत के शिखरों पर हाड़ चूर्ण हो जाते हैं, जीवन के मार्ग में तुम रेलगाड़ी हो, जिस समय रसना रूपी एञ्जिन तेज करती हो एक घड़ी भर में चौदहो भुवन दिखला देती हो, कार्यक्षेत्र में तुम इलेकट्रिक टेलीग्राफ हो, बात पड़ने पर एक निमेष में उसे देशदेशांतर में पहुँचा देती हो तुम भवसागर में जहाज हो, बस अधम को पार करो।

तुम इंद्र हो श्वसुर कुल के दोष देखने के लिए तुम्हारे सहस्र नेत्र हैं स्वामी के शासन करने में तुम वज्रपाणि हो। रहने का स्थान अमरावती है क्योंकि जहाँ तुम हो वहीं स्वर्ग है।

तुम चन्द्रमा हो तुम्हारा हास्य कौमुदी है उससे मन का अंधकार दूर होता है तुम्हारा प्रेम अमृत है जिसकी प्रारब्ध में होता है वह इसी शरीर से स्वर्ग सुख अनुभव करता है और लोक में जो तुम व्यर्थ पराधीन कहलाती हो यही तुम्हारा कलंक है।

तुम बरुण हो क्योंकि इच्छा करते ही अश्रु जल से पृथ्वी आर्द्र कर सकती हो तुम्हारे नेत्र जल की देखा देखी हम भी गल जाते हैं।

तुम सूर्य हो तुम्हारे ऊपर आलोक का आवरण है पर भीतर अंधकार का बास है, हमें तुम्हारे एक घड़ी भर भी आँखों के आगे

मद्यपान के चसके से, बाद में हार कर राजकीय विद्या का अभ्यास करके मुसल्मान या क्रिस्तान हो जायँ, आमदनी एक मनुष्य की भी बाहर से न हो केवल नित्य व्यय हो, अंत में आर्यों का धर्म और जाति कथाशेष रह जाय, किंतु जो बिगड़ा सो बिगड़ा फिर जाति में कैसे आवेगा, कोई भी दुष्कर्म किया तो छिपके क्यों नहीं किया, इसी अपराध पर हजारों मनुष्य आर्य पंक्ति से हर साल छूटते थे, उसको इन्होंने रोका। सब से बढ़ कर इन्होंने यह कार्य किया, सारा आर्यावर्त जो प्रभु से विमुख हो रहा था, देवता बिचारे तो दूर रहे, भूत प्रेत पिशाच मुरदे, साँप के काटे, बाघ के मारे, आत्म हत्या करके मरे, जल, दब या डूब कर मरे लोग, यही नहीं मुसलमानी पीर पैगंबर औलिया शहीद वीर ताजिया गाजीमियाँ, जिन्होंने बड़ी मूर्ति तोड़ कर और तीर्थ पाट कर आर्य धर्म विध्वंस किया, उन को मानने और पूजने लग गए थे, विश्वास तो मानों छिनाल का अंग हो रहा था, देखते सुनते लज्जा आती थी कि हाय ये कैसे आर्य हैं, किससे उत्पन्न हैं, इस दुराचार की ओर से लोगों का अपनी वक्तृताओं के थपेड़े के बल से मुँह फेर कर सारे आर्यावर्त को शुद्ध 'लायल' कर दिया।

'भीतरी चरित्र में इन दोनों के जो अंतर हैं वह भी निवेदन कर देना उचित है। दयानंद की दृष्टि हम लोगों की बुद्धि में अपनी प्रसिद्धि पर विशेष रही। रंग रूप भी इन्होंने कई बदले। पहले केवल भागवत का खंडन किया। फिर सब पुराणों का। फिर कई ग्रंथ माने कई छोड़े। अपने काम के प्रकरण माने अपने विरुद्ध को क्षेपक कहा। पहले दिगंबर मिट्टी पोते महात्यागी थे। फिर संग्रह करते करते सभी वस्त्र धारण किये। भाष्य में भी रेल तार आदि कई अर्थ जबरदस्ती किए। इसी से संस्कृत विद्या को भली भाँति न जानने वाले ही प्रायः इनके अनुयायी हुए। जाल को छुरी से न काट कर दूसरे जाल ही से जिस को काटना चाहा इसी से दोनों आपस में उलझ गए और इसका परिणाम गृह विच्छेद उत्पन्न हुआ।

"केशव ने इनके विरुद्ध जाल काट कर परिष्कृत पथ प्रकट किया। परमेश्वर से मिलने मिलाने की आड़ या बहाना नहीं रखा। अपनी भक्ति की उच्छलित लहरों में लोगों का चित्त आर्द्र कर दिया। यद्यपि

स्तोत्र-पंचरत्न

सं० १६३१-५ ?

हे गौड़ि ! पुराणों में तो तुम्हारी सुधासारिणि कथा चारों ओर अति वाहित है, निषेध के बहाने भी तुम्हारी विधि ही विधि है, इससे हे पुराण प्रतिपादिते ! तुम्हें प्रणाम है ।

हे सोम सन्तते ! चंद्रमा में तुम्हारा निवास, समुद्र तुम्हारी उत्पत्ति का स्थान और सकल देव, मनुष्य, असुर तुम्हारे पति हैं, अतएव हे त्रिलोकगामिनि ! तुम्हें प्रणाम है ।

हे बोतल वासिनि ! देवी ने तुम्हारे बल से शुंभादि को मारा । यादव लोग तुम्हें पी के कट मरे । बलदेव जी ने तुम्हारे प्रताप से सूत का सिर काटा, अतएव हे शक्ति ! तुम्हें प्रणाम है ।

हे सकल मादक सामग्री शिरो रत्ने ! तंत्र केवल तुम्हारे प्रचार ही को बनाए हैं, और इनका कोई प्रयोजन नहीं था केवल तुम मय जगत् करने को इनका अवतार है, अतएव हे स्वतंत्रे ! तुम्हें प्रणाम है ।

हे ब्रांडि ! बौद्ध और जैन धर्म की तुम सारभूत हो । मुसल्मानों में मुफ्त के मिस हलाल हो ! किस्तानों में भी साक्षात् प्रभु की रुधिर रूप हो और ब्राह्मोधर्म की तुम एक मात्र आड़ हो, अतएव हे सर्व धर्म मर्म स्वरूपे ! तुम्हें प्रणाम है ।

हे शाम्पिन ! आगे के लोग सब तुम्हारे सेवक थे, यह श्लोकों के प्रमाण सहित बाबू राजेन्द्रलाल के लेकचर से सिद्ध है तो अब तुम्हारा कैसे त्याग हो सकता है, अतएव हे सिद्धे ! तुम्हें प्रणाम है ।

हे ओल्डटाम ! तुम्हें भारतवर्षियों ने उत्पन्न किया, रूम, चीन इत्यादि देश के लोगों ने कुछ परिष्कृत किया, अब अँग्रेजों और फरासीसियों ने तुम्हें फिर से नए भूषण पहिराए, अतएव हे सर्वविलायत भूषिते ! तुम्हें प्रणाम है ।

हे कुलमर्यादासंहारकारिणि ! तुमसे बढ़कर न किसी का बल है, न आग्रह, न मान, तुम्हारे हेतु तुम्हारे प्रेमी कुल, धन, नाम, मान, बल, मेल, रूप वरञ्च प्राण का भी परित्याग करते हैं, अतएव हे प्रणयैक पात्रे ! तुम्हें प्रणाम है ।

भूमिका

प्रिय पाठकगण ! यद्यपि ये स्तोत्र हास्यजनक हैं तथापि विज्ञ लोग इनसे अनेकहों उपदेश निकाल सकते हैं। शोच का विषय है कि इन दिनों हम आर्य लोगों का दीन भारतवर्ष मांस मदिरा वेश्यादि दोषों से ग्रस्त हो रहा है। यदि इसके बचाव का कोई उपाय शीघ्र न किया जायगा तो हम लोगों को बड़ी भारी क्षति सहनी पड़ेगी अतएव शीघ्र ही इन आपत्तियों से भारतवासियों को बचना उचित है।

बकरी विलाप * को इसमें सम्मिलित करने में केवल यही प्रयोजन है कि इस दीन दुखिया के विलाप को सुनकर मांसलोलुप महाशय बकरों पर दया करें और वृथा ही अपनी जिह्वा के स्वादार्थ इन सहायहीन बिचारों के प्राण न लें। संसार में सहस्रों ही एक से एक उत्तम स्वादिष्ट खाद्य-वस्तु ईश्वर ने उत्पन्न की है कुछ मांस के सिर में सुरखाब का पर लगा हो नहीं है अतएव आशा है कि पाठकगण इस घृणित और जघन्य कार्य से अपना अपना हाथ खींच लेंगे।

हरिश्चंद्र

---

* बकरी विलाप भारतेंदु ग्रंथावली भाग २ में पृ० ६९०–२ पर प्रकाशित हो चुका है।

आप पृथ्वी के अंतरगर्भ से उत्पन्न हौ। संसार के गृह निर्माण मात्र के कारण भूत हौ। जल कर भी सफेद होते हौ। दुष्टों के तिलक हौ। ऐसे अनेक कारण हैं जिनसे आप नमस्करणीय हौ।

हे प्रवल वेग अवरोधक! गरुड़ की गति भी आप रोक सकते हौ और की कौन कहै इससे आप को प्रणाम है।

हे सुंदरी सिंगार! आप वड़ी के वड़े हौ क्योंकि चूना पान की लोली का कारण है और पान रमणी गण मुख शोभा का हेतु है इससे आप को प्रणाम है।

हे चुंगी नंदन! ऐन सावन में आप को हरियाली सूझी है क्योंकि दुर्गा जी पर इसी महीने में भीड़ विशेष होती है तो हे हठ मूर्ते! तुम को दंडवत है।

हे प्रवुद्ध! आप शुद्ध हिंदू हौ क्योंकि शरह विरुद्ध हौ आव आया और आप न वर्खास्त हुए इससे आप को सलाम है।

हे स्वेच्छाचारिन! इधर उधर जहाँ आप ने चाहा अपने को फैलाया है। कहीं पटरी के पास हो कहीं वीच में अड़े हौ अतएव हे स्वतंत्र आप को नमस्कार है।

हे ऊभड़ खाभड़ शब्द सार्थ कर्त्ता! आप कोणमिति के नाशकारी हौ क्योंकि आप अनेक विचित्र कोण सम्वलित हौ अतएव हे ज्योतिषारि आप को नमस्कार है।

हे शस्त्र समष्टि! आप गोली गोला के चचा, छर्रों के परदादा, तीर के फल तलवार की धार और गदा के गोला हौ इससे आप को प्रणाम है।

आहा! जव पानी वरसता है तव सड़क रूपी नदी में आप द्वीप से दर्शन देते हौ इससे आप के नमस्कार में सव भूमि को नमस्कार हो जाता है।

आप अनेकों के वृद्धतर प्रपितामह हो क्योंकि ब्रह्मा का नाम पितामह है उनका पिता पंकज है उसका पिता पंक है और आप उसके भी जनक हौ इससे आप पूजनीयों में एल एल डी हौ।

हे जोगा जिवलाल रामलालादि मिश्री समूह जीविका दायक! आप कामिनी-भंजक धुरीश विनाशक वारनिस चूर्णक हौ। 'केवल गाड़ी

स्तोत्र पंचरत्न

श्री वेश्यास्तवराज

(महा संस्कृत)

ओं अस्य श्री वेश्यास्तवराज महामाला मंत्रस्य भण्डाचार्य्यः श्री हरिश्चन्द्रो ऋषिः द्रव्योबीजं मुख कीलकं वारवधू महादेवता सर्वस्वाहार्थं जपे विनियोगः। अथ अंगन्यासः। द्रव्य हारिण्यै हृदयाय नमः जेरपायी धारिण्यै शिरसे स्वाहा चोटी काटिन्यै शिखायै वषट् प्रत्यङ्गालिङ्गिन्यै कवचाय हुंकामान्ध कारिण्यै नेत्राभ्यां वौषट् विषयार्थिन्यै अस्त्रत्रयाय फट्।

अथ करन्यासः

सर्व शून्य कर्त्र्यै अंगुष्ठाभ्यान्नमः लोकवेदनिषेधिन्यै तर्जनीभ्यान्नमः मध्यम विधायिन्यै मध्यमाभ्यान्नमः दुर्नामदायिन्यै अनामिकाभ्यान्नमः कनिष्ठकारिण्यै कनिष्ठिकाभ्यान्नमः आसमुद्रान्त कर ग्राहिण्यै करतल कर पृष्ठाभ्यान्नमः॥

अथ ध्यानम्

पद्माकारामुखीं कपोल ललितां माधुर्य पूर्णाधरां। अत्युच्चस्तनमण्डलां विपजलैः पूर्णां घटकांचनीं। मिथ्याप्रेम मयीं तनुं विदधतीं सर्वस्व संहारणीं। ध्यायेद्वार वधूं सदैव हृदये धर्मार्थ विच्छित्तये॥

अँगरेज स्तोत्र

अस्य श्री अँगरेजस्तोत्र माला मंत्रस्य श्री भगवान मिथ्या प्रशंसक ऋषि: जगतीतलं छन्द: कलियुग देवता सर्व वर्ण शक्तय: शुश्रुषा वीजं वाक्स्तम्भ कीलकम् अँगरेज प्रसन्नार्थे पठे विनियोग: ।

अथ ऋष्यादि न्यास: मिथ्या प्रशंसक ऋषयेनम: शिरसि जगती-तलं छदसे नम: मुखे । कलियुगो देवतायै नम: हृदि । सर्व वर्ण शक्तय: भ्योनम: पादयो: । शुश्रुषा वीजायनम: गुह्ये । वाक्स्तम्भ कीलकाय नम: सर्वांके । अथ मंत्र । ओं नम: श्री अँगरेजेभ्य: मिथ्याप्रशंसक नाथेभ्य: सर्वशक्तिमद्भ्य: स्वाहा । अथ करन्यास: । ओं अंगुष्टाभ्यांनम: नमस्तर्जनीभ्यांनम: । श्री अँगरेजेभ्य: मध्यमाभ्यांनम: । मिथ्याप्रशंसक नाथेभ्य: । सर्वशक्तिमद्भ्य: कनिष्टकाभ्यांनम: । स्वाहा करतल कर पृष्टा-भ्यांनम: । अथ ध्यानम् । यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतस्तुन्वन्ति दिव्यै: स्तवैर्वेदै: सांगपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगा: । ध्यानावस्थित तद्गतेन-मनसापश्यन्ति यं योगिनो यस्यांतं न विदु: सुरा सुरगणा देवायतस्मै नम: । इति ध्यानम् ।

हे अँगरेज ! हम तुमको प्रणाम करते हैं ।

तुम नानागुण विभूषित, सुंदरकांति विशिष्ट, बहुत संपद युक्त हो, अतएव हे अँगरेज ! हम तुमको प्रणाम करते हैं ।

तुमहर्ता—शत्रुदल के, तुम कर्त्ता—आईनादि के, तुम विधाता—नौकरियों के अतएव हे, अँगरेज हम तुमको प्रणाम करते हैं ।

तुम समर में दिव्यास्त्रधारी—शिकार में वल्लमधारी, विचारागार में अर्ध इंचि परिमित व्यासविशिष्ट वेत्रधारी, अहार के समय कांटा चिमचाधारी, अतएव हे अंगरेज हम तुमको प्रणाम करते हैं ।

तुम एक रूप से पुरी के ईश होकर राज्य करते हो, एक रूप से पण्यवीथिका में व्यापार करते हो, और एक रूप से खेत में हल चलाते हो, अतएव हे त्रिमूर्ते ! हम तुमको प्रणाम करते हैं ।

आप के सत्वगुण आप के ग्रंथों से प्रगट, आपके रजोगुण आपके युद्धों से प्रकाशित, एवं आपके तमोगुण भवत्प्रणीत भारतवर्षीय संवाद पत्रादिकों से विकसित, अतएव हे त्रिगुणात्मक ! हम तुमको प्रणाम करते हैं ।

मद्यपान घोर रंग रञ्जिका ॥
दायिनी क्षणैक मात्र सङ्ग की ।
आतशक सुजाक और फिरङ्ग की ॥
पितृ नाम हीन मातृ नामिका ।
सर्व जाति पांति मध्य गामिका ॥
मिष्ट जिह्वा कपाल मूंड़नी ।
मित्र वर्ग युक्त नर्क बूड़नी ॥
लोक वेद लाज पत्र फाड़नी ।
जीवितैव कब्र मध्य गाड़नी ॥
द्रव्य लाभ धावमान सांड़नी ।
सद्गृहस्थ गेह की उजाड़नी ॥
सम्प्रदायि वृन्द जीविका प्रदा ।
टाल हेतु माल पूरनी सदा ॥
नायकावलम्बिनी सुखास्पदा ।
त्वांनमामि रण्डि देवते सदा ॥
इदं वार वधू स्तोत्रं दिव्यादिव्यतरंमहत् ।
गुप्तं गुप्तवती तंत्रे देवैरपि सुदुर्लभम् ॥
यः पठेत्प्रातरुत्थाय सायंवासुसमाहितः ।
मुक्तो भवतिसदैव देवगेहादि बन्धनात् ॥
जप्त्वा जप्त्वा पुनर्जप्त्वा पतित्वा चमहीतले ।
उत्थाप्यचपुनर्जप्त्वा नरोमुक्तिमवाप्नुयात् ॥

इति

—:ॐ:—

स्त्री सेवा पद्धति

इस पूजा में अश्रु जल ही पाद्य है, दीर्घश्वास ही अर्घ्य है, आश्वासन ही आचमन है, मधुर भाषण ही मधुपर्क है, सुवर्णालंकार ही पुष्प हैं, धैर्य ही धूप है, दीनता ही दीपक है, चुप रहना ही चंदन है और बनारसी साड़ी ही बिल्वपत्र हैं, आयु रूपी आँगन में

हे मानद ! हमको टाइटल दो, खिताब दो, खिलअत दो, हमको अपना प्रसाद दो हम तुमको प्रणाम करते हैं।

हे भक्तवत्सल ! हम तुम्हारा पात्रावशेष भोजन करने की इच्छा करते हैं तुम्हारे कर स्पर्श से लोक मण्डल में महामानास्पद होने की इच्छा करते हैं, तुम्हारे स्वहस्तलिखित दो एक पत्र बक्स में रखने की स्पर्द्धा करते हैं, हे अंग्रेज ! तुम हम पर प्रसन्न हो हम तुम को नमस्कार करते हैं।

हे अंतरयामिन् ! हम जो कुछ करते हैं केवल तुम को धोखा देने को, तुम दाता कहो इस हेतु हम दान करते हैं, तुम परोपकारी कहो इस हेतु हम परोपकार करते हैं तुम विद्यमान कहो इस हेतु हम विद्या पढ़ते हैं, अतएव हे अंग्रेज ! तुम हम पर प्रसन्न हो हम तुमको नमस्कार करते हैं।

हम तुम्हारी इच्छानुसार डिस्पेंसरी करेंगे, तुम्हारे प्रीत्यर्थ स्कूल करेंगे तुम्हारी आज्ञा प्रमाण चंदा देंगे, तुम हम पर प्रसन्न हो, हम तुम को नमस्कार करते हैं।

हे सौम्य ! हम वही करेंगे जो तुम को अभिमत है, हम बूट पतलून पहिरेंगे, नाक पर चश्मा देंगे, कांटा और चिमिटे से टिबिल पर खायेंगे, तुम हम पर प्रसन्न हो हम तुम को प्रणाम करते हैं।

हे मिष्टभाषिण ! हम मातृभाषा त्याग करके तुम्हारी भाषा बोलेंगे, पैतृक धर्म छोड़ के ब्राह्म धर्मावलंब करेंगे, बाबू नाम छोड़ कर मिष्टर नाम लिखवावेंगे, तुम हम पर प्रसन्न हो हम तुम को प्रणाम करते हैं।

हे सुभोजक ! हम चावल छोड़ के पावरोटी खायंगे, निषिद्धमांस बिना हमारा भोजन ही नहीं बनता, कुक्कर हमारा जलपान है, अतएव हे अंग्रेज ! तुम हम को चरण में रक्खो हम तुम को प्रणाम करते हैं।

हम विधवा विवाह करेंगे, कुलीनों की ज्ञाति मारेंगे, जाति भेद उठा देंगे—क्योंकि ऐसा करने से तुम हमारी सुख्याति करोगे, अतएव हे अंग्रेज ! तुम हम पर प्रसन्न हो हम तुम को नमस्कार करते हैं।

न रहने से दसों दिशा अंधकारमय मालूम होता है पर जब माथे पर चढ़ जाती हो तब तो हम लोग उत्ताप के मारे मर जाते हैं किम्बहुना देश छोड़कर भाग जाने की इच्छा होती है।

तुम वायु हो क्योंकि जगत की प्राण हो तुम्हें छोड़कर कितनी देर जी सकते हैं? एक घड़ी भर तुम्हें बिना देखे प्राण तड़फड़ाने लगते हैं, जल में डूब जाने की इच्छा होती है पर जब तुम प्रखर बहती हो किस के बाप की सामर्थ्य है कि तुम्हारे सामने खड़ा रहै।

तुम यम हो यदि रात्रि को बाहर से आने में विलम्ब हो, तो तुम्हारी वक्तृता नरक है। वह यातना जिसे न सहनी पड़े वही पुण्यवान है उसी की अनंत तपस्या है।

तुम अग्नि हो क्योंकि दिन रात्रि हमारी हड्डी हड्डी जलाया करती हो।

तुम विष्णु हो तुम्हारी नथ तुम्हारा सुदर्शन चक्र है उसके भय से पुरुष असुर माथा मुड़ाकर तटस्थ हो जाते हैं एक मन से तुम्हारी सेवा करै तो सशरीर वैकुण्ठ को प्राप्त कर सकता है।

तुम ब्रह्मा हो तुम्हारे मुख से जो कुछ बाहर निकलता है वही हम लोगों का वेद है और किसी वेद को हम नहीं मानते तुमको चार मुख है क्योंकि तुम बहुत बोलती हो सृष्टिकर्त्ता प्रत्यक्ष ही हो पुरुष के मनहंस पर चढ़ती हो चारो वेद तुम्हारे हाथ में है इससे तुमको प्रणाम है।

तुम शिव हो सारे घर का कल्याण तुम्हारे आधीन है। भुजंग वेनी धारिणी है (३) त्रिशूल तुम्हारे हाथ में है क्रोध में और कंठ में विष है तौ भी आशुतोष हो।

इस दिव्य स्तोत्र पाठ से तुम हम पर प्रसन्न हो। समय पर भोजनादि दो। बालकों की रक्षा करो। भृकुटी धनु के सन्धान से हमारा वध मत करो। और हमारे जीवन को अपने कोप से कंटकमय मत बनाओ।

—:※:—

तुम मूर्तिमान् हो! राज्यप्रबंध तुम्हारा अंग है, न्याय तुम्हारा शिर है, दूरदर्शिता तुम्हारा नेत्र है और कानून तुम्हारे केश हैं अतएव हे अंग्रेज! हम तुमको नमस्कार करते हैं।

कौंसिल तुम्हारा मुख है, मान तुम्हारी नाक है, देश पक्षपात तुम्हारी मोछ है और टैक्स तुम्हारे कराल दंष्ट्रा हैं अतएव हे अंगरेज! हम तुमको प्रणाम करते हैं हमारी रक्षा करो।

चुंगी और पुलिस तुम्हारी दोनों भुजा हैं, अमले तुम्हारे नख हैं, अन्धेर तुम्हारा पृष्ट है और आमदनी तुम्हारा हृदय है अतएव हे अंग्रेज! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

खजाना तुम्हारा पेट है, लालच तुम्हारी क्षुधा है, सेना तुम्हारा चरण है, खिताब तुम्हारा प्रसाद है, अतएव हे विराटरूप अंग्रेज! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानयागादिकाः क्रिया।
अंग्रेज स्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥ १॥
विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम्।
स्टारार्थी लभते स्टारम् मोक्षार्थी लभते गतिं॥ २॥
एक कालं द्विकालं च त्रिकालं नित्यमुत्पठेत्।
भव पाश विनिर्मुक्तः अंग्रेज लोकं संगच्छति॥ ३॥

—:※:—

ईश्वर बड़ा विलक्षण है

भला इस संसार बनाने का क्या काम था? व्यर्थ इतने उल्लू एक संग पिजड़े में बन्द कर दिए किसी को दुःखी बनाया किसी को सुखी, किसी को राजा बनाया किसी को फकीर, इसी से मैं कहता हूँ कि ईश्वर बड़ा विलक्षण है।

सब उसमें लय रहता, किसी को कुछ दुःख सुख का अनुभव न होता, वह केवल परम आनंदमय अपने में रहता इसी से—

कोई इसको हाँ कहता है कोई नहीं, कोई मिला कोई अलग, कोई एक कोई अनेक तो उसको अपने माहात्म्य की दुर्दशा क्यों करानी थी इसी से—

वाइन्मगैलिसाइवाइन् मरु वरमूऐक्वावाइटा ॥
दुधिया दुधुवा दुद्धी दारू मद दुलारिया ।
कलवार-प्रिया काली कलवरियानिवासिनी ।
होटलीलोटलीलोट नाशिनी चोटलीचला ।
धनमानादि संहर्त्री ग्रैण्डटोटल कारिणी ॥
पंचापंच परित्यक्ता पंच पंचप्रपंचिता ।
इमानिश्रीमहामद्य नामानिवदनेसदा ।
तिष्ठन्तु सेविनांसंख्या क्रमात्सार्द्ध शतानिच ॥
यः पठेत्प्रातरुत्थाय नामसार्द्ध शतम्मुदा ।
धनमानं परित्यज्य ज्ञातिपंक्त्याच्युतोभवेत् ॥
निन्दितो बहुभिर्लोकैर्मुखश्वासपराङ्मुखैः ।
बलहीनोक्रियाहीनो मूत्रकृत्लुण्ठतेक्षितौ ॥
पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावल्लुठतिभूतले ।
उत्थाय च पुनः पीत्वा नरोमुक्तिमवाप्नुयात् ॥

इति श्री पञ्चमहातंत्रे प्रपंचपटले पञ्चमकारवर्णनेमदिरास्तवाराजे सार्द्ध शतनाम संपूर्णम् ।

—:※:—

अथ स्तवराज—

हे मदिरे तुम साक्षात् भगवती का स्वरूप हो, जगत तुमसे व्याप्त है, तुम्हारी स्तुति करने को कौन समर्थ है अतएव तुम्हें प्रणाम ही करना योग्य है । हे मद्य तुम्हें सौत्रामणि यज्ञ में तो वेद ने प्रत्यक्ष आदर दिया है परंतु तुम अपने सोमरूप प्रच्छन्न अमृत प्रवाह से संपूर्ण वैदिक यज्ञ वितान को प्लावित करती हो अतएव हे श्रुतिश्रुते तुम्हें प्रणाम है ।

हे वारुणि ! स्मृतिकारों ने भी तुम्हारी प्रवृत्ति नित्य मानी है, निवृत्ति केवल अपने पद्धतिपने के रक्षण के हेतु लिखी है अतएव हे स्मृतिस्मृते ! तुम्हें प्रणाम है ।

है, जड़ हैं, जीव हैं मोहित हैं, उल्लू के पट्ठे हैं, सब परंतु उसके समझ में और उसके लोगों के समझ में भेद है इसी से—

उसके नाते परस्पर सब केवल सगे भाई बहन हैं पर लोग जाति कुजाति वर्ण आश्रम नीच ऊँच राजा प्रजा स्त्री पुत्र इत्यादि अनेक भेद समझते हैं इसी से—

यह उसी को विलक्षणपना है कि हिंदुओं को सब के पहिले उसने लक्ष्मी और सरस्वती दी और चिर काल तक उनको इस देश में स्थित किया परंतु अब वह हिंदू दास धर्म शिक्षित हो रहे हैं इसी से—

यह उसी का विलक्षणपन है जिस भूमि में उदयन, शूद्रक, विक्रम, भोज ऐसे राजा कालीदास, बाण से पंडित दे उसी भूमि में हमारे तुम्हारे से लोग हैं, यह उसी का विलक्षणपन है कि मुसलमानों ने हिंदुस्तान के बहुत दिन तक भोगा अब अंग्रेज भोगते हैं, मुसलमानों को अपने पक्षपात हैं अंग्रेजों को अपनी का, हिंदू दोनों की समझ में मूर्ख हैं इसी से—

यह उसी का विलक्षणपन है कि हिंदू निर्लज्ज हो गए हैं, ऐसे समय में जब कि सब आगे बढ़ा चाहते हैं ये चूकते हैं और पीछे ही रहे जाते हैं, विशेष करके सब संसार का आलस्य पश्चिमोत्तर देश वासियों में घुसा है और अपने को भूल रहे हैं क्षुद्रपना नहीं छूटता इसी से—

यह उसी का विलक्षणपना है कि हम लोग समाचार पत्र लिखते हैं और यह अभिमान करते हैं कि हमारे इन लेखों से हमारे भाइयों का कुछ उपकार हो, भला नक्कारखाने में तूती की आवाज कौन सुनता है, सब अपने रंग में उसकी माया से मस्त हैं उनको क्यों नहीं छोड़ते हैं क्यों नहीं विराग करते, संसार मिटै हमको क्या हम कौन जो कहैं, पर यह नहीं समझते, हम अपने ही अभिमान में चूर हैं यह भी सब उसी की माया है इसी से हम कहते हैं ईश्वर बड़ा विलक्षण है।

—:※:—

हे प्रेजुडिस-विध्वंसिनी। तुम्हारे प्रताप से लोग अनेक प्रकार की शंका परित्याग करके स्वच्छंद विहार करते हैं, जिनके बाप-दादे हुक्का-भाँग-सुरती से भी परहेज करते थे वे अब सभ्यों की मजलिस में तुम्हारा सेवन करके जाना ऐब नहीं समझते, अतएव हे बोलड्लेस जननि! तुम्हें प्रणाम है।

हे सर्वानंद सार भूते! तुम्हारे बिना किसी बात में मजा ही नहीं मिलता, रामलीला तुम्हारे बिना निरी सुपनखा की नाक मालूम पड़ती है, नाच निरे फूटे काँच और नाटक निरे उच्चाटक बेव-कूफी के फाटक दिखाई पड़ते हैं, अतएव हे मजे की मोटरी, तुम्हें प्रणाम है।

हे मुख-कज्जलावलेपके! होटल नाच जाति पाँति घाट बाट मेला तमाशा दरबार घोड़ दौड़ इत्यादि स्थान में तुम्हें लेकर जाने से लोग देखो कैसी स्तुति करते हैं। अतएव हे पूर्व पुरुष संचित विद्या धन राज संपर्कादि जन्य कठिन प्राप्य प्रतिष्ठा समूह सत्यानाशनि! तुम्हें बारंबार प्रणाम करना योग्य है।

कङ्कर स्तोत्र

कंकड़ देव को प्रणाम है। देव नहीं महादेव क्योंकि काशी के कंकड़ शिव शंकर समान हैं।

हे कंकड़ समूह! आज कल आप नई सड़क से दुर्गा जी तक बरा-बर छाये हो इससे काशी खण्ड "तिलेतिले" सच हो गया अतएव तुम्हें प्रणाम है।

हे लीला कारिन्! आप केशी शकट वृषभ खरादि के नाशक हौ इससे मानो पूर्वार्द्ध की कथा हौ अतएव व्यासों की जीविका हौ।

आप सिर समूह भंजन हौ क्योंकि कीचड़ में लोग आप पर मुँह के बल गिरते हैं।

आप पिष्ट पशु की व्यवस्था हौ क्योंकि लोग आप की कढ़ी बना कर आप को चूसते हैं।

इसके बाद लाला साहब ने रें रें कर के एक होली भी गाही दी ॥

कैसी होरी खिलाई । आग तन मन में लगाई ॥
पानी की बूँदी से पिंड प्रगट कियो सुंदर रूप बनाई ।
पेट अधम के कारन मोहन घर घर नाच नचाई ॥
तबौ नहिं हबस बुझाई ।
भूँजी भाँग नहीं घर भीतर का पहिनी का खाई ।
टिकस पिया मोरी लाज का रखल्यो ऐसे बनो न कसाई ॥
तुम्हैं क़सर की दोहाई ।
कर जोरत हौं बिनती करत हौं छाँड़ो टिकस कन्हाई ।
आग लगो ऐसो फाग के ऊपर भूखन जान गँवाई ।
तुम्हैं कुछ लाज न आई ।'

लाला साहब के गाने के बाद ही ललाइन साहब से भी न रहा गया । कुछ जो मेम साहब की तालीम ने तुन्दी किया सो चट से कूद परदे के बाहर बेतकल्लुफ़[1] तशरीफ लाईं और मटक मटक कर कहने लगीं ।

"लिखाय नाहीं देत्यो पढ़ाय नाहीं देत्यो ।
सैयाँ फिरंगिन बनाय नाहीं देत्यो ॥
लहँगा दुपट्टा नीक न लागे ।
मेमन का गौन मँगाय नाहीं देत्यो ॥
वै गोरिन हम रंग सँवलिया ।
रंग में रंग मिलाय नाहीं देत्यो ॥
हम ना सोइबे कोठा अटरिया ।
नदिया प बँगला छवाय नाहीं देत्यो ॥
सरसों का उबटन हम ना लगैबै ।
साबुन से देहियाँ मलाय नाहीं देत्यो ॥
डोली मियाना प कब लग डोलों ।
घोड़वा प काठी कसाय नाहीं देत्यो ॥

१. निस्संकोच

ही नहीं घोड़े की नाल सुम बैल के खुर और कंटक चूर्ण को भी आप चूर्ण करनेवाले हौ इससे आप को नमस्कार है।

आप में सब जातियों और आश्रमों का निवास है। आप बाणप्रस्थ हौ क्योंकि जंगलों में लुड़कते हौ। ब्रह्मचारी हौ क्योंकि बटु हौ। गृहस्थ हौ चूना रूप से, सन्यासी हौ क्योंकि घुट्टमघुट्ट हौ। ब्राह्मण हौ क्योंकि प्रथम वर्ण हो करभी गली गली मारे मारे फिरते हौ। क्षत्री हौ क्योंकि खत्रियों की एक जाति हौ। वैश्य हौ क्योंकि कांट बांट दोनों तुम में है। शूद्र हौ क्योंकि चरणसेवा करते हौ। कायस्थ हौ क्योंकि एक तो ककार का मेल दूसरे कचहरी पथावरोधक तीसरे क्षत्रियत्व हम आप का सिद्ध कर ही चुके हैं। इससे हे सर्ववर्ण स्वरूप तुमको नमस्कार है।

आप ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, अग्नि, जम, काल, दक्ष और वायु के कर्त्ता हौ, मन्मथ की ध्वजा हौ, राजा पद दायक हौ, तन मन धन के कारण हौ, प्रकाश के मूल शब्द की जड़ और जल के जनक हौ वरञ्च भोजन के भी स्वादु कारण हौ, क्योंकि आदि व्यंजन के भी बाबा जान हो इसी से हे कंकड़ तुमको प्रणाम है।

आप अँगरेजी राज्य में श्रीमती महराणी विक्टोरिया और पार्लामेण्ट महासभा के आछत, प्रबल प्रताप श्रीयुत गवर्नर जनरल और लेफ्टेण्ट गवर्नर के वर्तमान होते, साहिब कमिश्नर साहिब मजिस्ट्रेट और साहिब सुपरिनटेंडेंट के इसी नगर में रहते और साढ़े तीन तीन हाथ के पुलिस इंसपेक्टरों और कांसिटेबुलों के जीते भी गणेश चतुर्थी की रात को स्वच्छंद रूप से नगर में भड़ाभड़ लोगों के सिर पांव पड़कर रुधिर धारा से नियम और शांति का अस्तित्व बहा देते हौ अतएव हे अँगरेजी राज्य में नवाबी स्थापक, तुम को नमस्कार है।

यह लंबा चौड़ा स्तोत्र पढ़कर हम बिनती करते हैं कि अब आप सद्दे सिकंदरी बाना छोड़ो या हटो या पिटो।

पगड़ी जामा गया अब कोट औ पतलून रही।
जब चुरुट है तो इलइची का है खाना कैसा॥
सब के ऊप्पर लगा टिकस कि उड़ा होस मेरा।
रोवै के चहिए हँसी ठीठी ठठाना कैसा॥

साहो जी की बनारसी सुनते ही लखनऊ के एक शोहदे साहब जो चार अंगुल की टोपी दिए एक कोने में अंकड़े हुए डटे थे बहुत ही परीशान हुए क्योंकि उनके समझ में यह कुछ भी न आया तो चिटख कर बोले "बनिए क्या जो है सो नाहक की बक बक लगाई है एक कनगुज्भा[1] इंधे[2] और एक नागझिन्नी[3] ऊंधे[4] और चपतगाह[5] प एक गुद्की जमाऊँगा जो है सो कि बताना निकल पड़ेगा" और कहने लगे।

क्यों बे सुनता नहीं सोहदे की बी तकरीर को औं।
कहीं नकभिन्नी की आऊं न तेरे पीर को आँ॥

लोगों ने बढ़ावा दिया कि हाँ साहब यह भी तो बड़े शायर हैं कुछ फर्माएँ। इतना इशारा पाना था कि लगे शोहदे जी गाने।

सान सौकत तेरे आसिक की मेरी जान जे है।
होंगे सुलफा[6] इसी दरवाजे प अरमान जे है॥
कहीं सुहदे भी पिचकते हैं भला झाँपो के[7]।
आ तो डट जा अभी खम ठोंक के मैदान जे है॥
गैर के कहने पे हजरत को न मुतलक हो खेयाल।
बच्चो एक एक को बहकाता है सैतान जे है॥
आके हम लोगों से मांगें न टिकस मोटे मल।
रख दूँ धुन के उन्हें बनियों प फकत सान जे है॥
आज मामूर है आलम के नमूदारों[8] में।
लुत्फ अल्लाह का सर पर तेरे खाकान[9] जे है॥

---

१. चपेटा, थप्पड़, २. इस ओर ३. नाक भला देनेवाला थप्पड़ ४. उस ओर ५. चपत मारने का स्थान ६. जला देना ७. एक गाली ८. प्रकट लोगों ९. राजा।

तुम हो अतएव सत् हो, तुम्हारे सत्रु युद्ध में चित्, और उम्मेदवारों को आनन्द, अतएव हे सच्चिदानंद ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तुम ब्रह्मा हो क्योंकि प्रजापति हो, तुम विष्णु हो, क्योंकि लक्ष्मी के कृपापात्र हो, तुम महेश्वर हो क्योंकि तुम्हारी स्त्री गौरी, अतएव हे त्रिमूर्ते ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तुम इंद्र हो—तुम्हारी सेना वज्र है, तुम चंद्र हो—इनकमटैक्स तुम्हारा कलंक है, तुम वायु हो—रेल तुम्हारी गति है, तुम वरुण हो—जल में तुम्हारा राज्य है, अतएव हे अँगरेज ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तुम दिवाकर हो—तुम्हारे प्रकाश से हमारा अज्ञानांधकार दूर होता है, तुम अग्नि हो—क्योंकि सब खाते हो, तुम यम हो—विशेष करके अमला वर्ग के, अतएव हे अँगरेज ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तुम वेद हो—और रिग्यजुस्साम को नहीं मानते, तुम स्मृति हो—मन्वादि भूल गए, तुम दर्शन हो—क्योंकि न्याय मीमांसा तुम्हारे हाथ हैं, अतएव हे अँगरेज ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

हे श्वेतकांत—तुम्हारा अमल धवल द्विरद रद शुभ्र महाश्मश्रुशोभित मुख मंडल देख करके हमें वासना हुई कि हम तुम्हारी स्तुति करें अतएव हे अँगरेज हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तुम्हारी हरित कपिश पिङ्गल लोहित कृष्ण शुभ्रादि नानावर्ण शोभित अतिशयरंजित भल्लुकमेदमार्जितकुंतलावलि देखकरके हमको वासना हुई कि हम तुम्हारा स्तव करें, अतएव हे अंगरेज ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

हे वरद ! हमको वर दो, हम सिर पर शमला बाँध के तुम्हारे पीछे पीछे दौड़ेंगे, तुम हमको चाकरी दो हम तुम को प्रणाम करते हैं।

हे शुभंकर ! हमारा शुभ करो, हम तुम्हारी खुशामद करेंगे, और तुम्हारे जी की बात कहेंगे, हमको बड़ा बनाओ हम तुमको प्रणाम करते हैं।

सौ सौ तरे कै मूड़े प जोखिम उठाईला।
पै राजा तोहें एक बेरी देख जाईला॥
पुतरी मतिन रखब तोहें पलकन के आड़ में।
तोहरे बदे हम आँखी में बैठक बनाईला॥
कहली कि काहे आँखी में सुरमा लगावलः।
हँस के कहै लै छूरी के पत्थर चटाईला॥
हम भारै वाला बाड़ी हजारन में रामधै।
पै राजा तोंसे बेंत मतिन थरथराईला॥
राजा बाबू तोरे चेहरा प लुभायल बाड़ें।
सैकड़न सरवा तोरे आँखी क घायल बाड़ें॥
रात भर कँहरीला खटिया प परल हम संगी।
केहू राजा से कहै काहे कोंहायल बाड़ें॥
बाघ की नाईं महल्ला में त डौंडत होइहैं।
सब केहू कहला टहलू त परायल बाड़ें॥
आँख की पुतरी मतिन सामने नाचत होइहैं।
नींद जब आवैलै तब देखीला आयल बाड़ें॥
पाँचो पकवान नहीं नीक लागत वा रमधे।
तिल के चेहरा क तोरे 'तेग' भुखायल बाड़ें॥

बनारस के गुंडों की बोली सुनते ही बैसवारे के तिलंगा भाई को भी फुरफुरी आई और ढोलक बजाकर गाने ही लगे कि—

फुरै कहत हौं महिते जो जइहौं रिसाय के।
भरुका म बिख भरा है मैं मर जैहौं खाय के॥
सारन क आज सार म भँवरी बताय के।
लैहौं करेजा दूध बकेना पियाय के॥
खरिहान माँ जे रात के रइहौ तुम आय के।
दैहौं उकाँव गोहुँ क तुम कँ उठाय के॥
सूरज के कुछ न लीन न तुम हन गुनहगार।
काहे क हम कँ मारथौ घामे डहाय के॥
बौरान रोज फिर्त हौं बारी बगैचा में।

हे सर्वद ! हम को धन दो, मान दो, यश दो, हमारी सब वासना सिद्ध करो, हम को चाकरी दो, राजा करो, रायबहादुर करो, कौंसिल का मिंबर करो हम तुम को प्रणाम करते हैं।

यदि यह न हो तो हम को डिनर होम में निमंत्रण करो, बड़ी बड़ी कमेटियों का मिम्बर करो, सीनट का मिम्बर करो, जसटिस करो, आनरेरी मजिस्ट्रेट करो, हम तुम को प्रणाम करते हैं।

हमारी स्पीच सुनो, हमारा एसे पढ़ो हम को वाह वाही दो, इतना ही होने से हम हिंदू समाज का अनेक निन्दा पर भी ध्यान न करेंगे, अतएव हम तुम्हीं को नमस्कार करते हैं।

हे भगवन्—हम अकिञ्चन हैं और तुम्हारे द्वार पर खड़े रहेंगे, तुम हमको अपने चित्त में रक्खो हम तुम को डाली भेजेंगे, तुम अपने मन में थोड़ा सा स्थान मेरी ओर से भी दो, हे अंग्रेज! हम तुमको कोटि कोटि साष्टांग प्रणाम करते हैं।

तुम दशावतार धारी हो, तुम मत्स हो क्योंकि समुद्रचारी हो और पुस्तक छाप छाप के वेद का उद्धार करते हो, तुम कच्छ हो—क्योंकि मदिरा, हलाहल, वारांगना, धन्वन्तर और लक्ष्मी इत्यादि रत्न तुमने निकाले हैं पर वहां भी विष्णुत्व नहीं त्याग किया है अर्थात् लक्ष्मी उन रत्नों में से तुमने आप लिया है, तुम श्वेत वाराह हो क्योंकि गौर हो और पृथ्वी के पति हो, अतएव हे अवतारिन्! हम तुम को नमस्कार करते हैं।

तुम नृसिंह हो क्योंकि मनुष्य और सिंह दोनों पन तुम में है टैक्स तुम्हारा क्रोध है और परम विचित्र हो, तुम वामन हो क्योंकि तुम वामन कर्म्म में चतुर हो, तुम परशुराम हो क्योंकि पृथ्वी निक्षत्री करदी है, अतएव हे लीलाकारिन्! हम तुमको नमस्कार करते हैं।

तुम राम हो क्योंकि अनेक सेतु बाँधे हैं, तुम बलराम हो क्योंकि मद्यप्रिय और हलधारी हो, तुम बुद्ध हो क्योंकि वेद के विरुद्ध हो, और तुम कल्कि हो क्योंकि शत्रु संहारकारी हो, अतएव हे दश विधि रूप धारिन्! हम तुमको नमस्कार करते हैं।
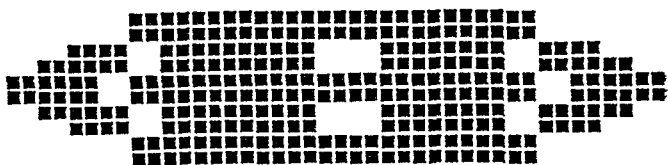
पाँचवें (चूसा) पैग़म्बर

लोगो दौड़ो, मैं पाँचवाँ पैग़म्बर हूँ, दाऊद, ईसा, मूसा, मुहम्मद ये चार हो चुके। मेरा नाम चूसा पैग़म्बर है, मैं विधवा के गर्भ से जनमा हूँ और ईश्वर अर्थात् खुदा की ओर से तुम्हारे पास आया हूँ इससे मुझ पर ईमान लाओ नहीं तो ईश्वर के कोप में पड़ोगे।

मुझ को पृथ्वी पर आए बहुत दिन हुए पर अब तक भगवान का हुक्म नहीं था इससे मैं कुछ नहीं बोला, बोलना क्या बल्कि जानवर बना घात लगाए फिरता था और मेरा नाम लोगों ने हूश, बंदर, लंका की सैना और मुच्छ रक्खा था पर अब मैं उन्हीं लोगों का गुरु हूँ क्योंकि ईश्वर की आज्ञा ऐसी है इससे लोगो ईमान लाओ।

जैसे मुहम्मदादि के अनेक नाम थे वैसे ही मेरे भी तीन नाम हैं, मुख्य चूसा पैग़म्बर, दूसरा डबल[1] और तीसरा सुफैद और पूरा नाम मेरा श्रीमान् आनरेबल हज़रत डबल सफैद चूसा अलैहुस्सलाम[2] पैग़म्बर आखिर कुन जमाँ[3] है।

मुझ को कोहचूर पर खुदा ने जल्वा दिखलाया और हुकुम दिया कि मैंने पैग़म्बर किया तुझ को तू लोगों को ईमान में ला, दाऊद ने बेला बजा के मुझे पाया तू हारमोनियम बजावैगा, मूसा ने मेरी खुदाई रौशनी से कोहतूर जलाया तू आप अपनी रौशनी से ज़माने

---

१. दूना २. प्रणाम है जिसको ३. संसार का अंत करनेवाला ४. जन साधारण के स्थानों

सब्व सामर्थ्य मान उसका सुन कर भी लोग सर्वदा उसको नहीं मानते पर हाँ जब कुछ दुःख पड़ता है तब स्मरण करते हैं। जब लोगों का कुछ बनता है तो उसको धन्यवाद तो थोड़े लोग देते हैं पर जो कुछ काम बिगड़ता है तो गाली सभी देते हैं, पानी न बरसै तो, घर का कोई मर जाय तो, रोग फैले तो, हार जाय तो सब प्रकार से वह गाली सुनता है इसी से—

अनेक प्रकार के जीव, विचित्र स्वभाव, अलग अलग धर्म और रुचि, विचित्र-विचित्र रंग काम क्रोध, मद, ईर्षा, अभिमान दम्भ, पैशुन्य, आनृत्य इत्यादि अनेक प्रकार के स्वभाव बनाकर लंबा चौड़ा गोरख धंधा का जाल फैला कर इस घनचक्कर में सब को घुमा दिया है इसी से—

एक विचारा सुख से अपना काल क्षेप करता है कुछ उसके काम में विघ्न डालकर व्यर्थ बिना बात बैठे बिठाये उसको रुला दिया, कोई दुःख में है उसको एक सग सुख दे दिया इसी से—

एक को घटाया एक को बढ़ाया, एक को बनाया एक को बिगाड़ा, राई को पर्वत् किया पर्व्वत को राई, राजा को रंक किया रंक को राजा, भरी ढलकाया खाली भरा इसी से—

उदार और पंडित दरिद्र मूर्ख धनवान, और सुंदर रसिक को कुरूपा कूढ स्त्री, कुरसिक को सुंदर वा रसिक स्त्री, सुस्वामी को कुसेवक कुसेवक को कुस्वामी इत्यादि संसार में कई बातें बे जोड़ हैं इसी से—

प्रत्यक्षलोग देखते हैं कि हमारे बाप दादा इत्यादि मर गए और नित्य लोग मरते जाते हैं तब भी जो लोग जीते हैं जानते हैं कि संसार का पटा मैंने लिखवा लिया है पहिले तो मैं मरूहींगा नहीं और मरा भी तो सब मेरे साथ जायगा इसी से—

सच है मनुष्य यह कैसे सोचै, जो हम बैठे हैं, खाते पीते हैं, चैन करते हैं कभी सोचते नहीं कि हमारी दशांतर भी होगी वही हम कैसे मरैंगे कदापि नहीं आता इसी से—

मजा है तमाशा है खेल है धूम है, दिल्लगी है मसखरापन है, लुच्चापन है, हँसी है, मूर्खता है, खिलौने हैं, बालक हैं, पट्ठे हैं, नासमझ

मेरे प्यारे अंगरेजो ! तुम खौफ़ मत करो मैं तुम को सब गुनाहों से बरी कराऊँगा क्योंकि नाशिनैलिटी बड़ी चीज़ है। पैग़म्बरिन और तुम्हारा रंग एक है इससे मैं तुम्हारे पापों को छिपा दूँगा।

प्यारे मुसल्मानो ! मैं कुछ तुमसे डरता हूँ क्योंकि तुम को मार डालने में देर नहीं लगती इससे मैं तुम्हारी बेहतरीके वास्ते अपनी धर्मपुस्तक में लिख जाऊँगा कि हमारे सक्सेसर[1] लोग तुम्हारी खातिर करें तुम्हारे न पढ़ने पर अफ़सोस करें और तुम्हारे वास्ते स्कूल और कालिज बनावें।

मगर मेरे मेमने हिंदुओ ! तुम को मैं सब प्रकार नीच समझूँगा क्योंकि यह वह देश है जो ईश्वर के क्रोध रूपी अग्नि से जल रहा है और जलैगा और ईश्वर के कोप से तुम्हारा नाम जीते हुए, हाफसिवि-लाइज्ड,[2] रूड,[3] काफिर, बुतपरस्त, अँधेरे में पड़े हुए, बारबरस,[4] वाजिबुल् क़त्ल[5] होगा।

देखो हम भविष्य बानी कहते हैं तुम रोते और सिर टकराते भागते भागते फिरोगे, बुद्धि सीखते ही नहीं, बल नाश हो चुका है एक केवल धन बचा है सो भी सब निकल जायगा, यहाँ महँगी पड़ैगी, पानी न बरसैगा, हैज़ा डैंगू वगैरह नए नए रोग फैलैंगे, परस्पर का द्वेष और निन्दा करना तुम्हारा स्वभाव हो जायगा, आलस छा जायगी, तब तुम उस के कोप अग्नि से जल के खाक के सिवा कुछ न बचोगे।

पर प्यारो ! जो मुझ सच्चे पैग़म्बर पर ईमान लावेगा वह छुड़ाया जायगा क्योंकि मैं खुशामद पसंद और घूस लेने वाला ज़ाहिरा[6] नहीं हूँ मैं ईश्वर का सच्चा पैग़म्बर और दुनिया का सच्चा बादशाह हूँ क्योंकि सूरज को खुदा ने रोशनी मेरे लिए इनायत की, चाँद में ठंढक सिर्फ़ मेरे लिए बखशी गई और जमीन आसमान मेरे लिए पैदा किया बल्कि फ़रिश्ते भी मेरे ही लिए बनाए गए।

---

१. उत्तराधिकारी २. अर्द्ध सभ्य ३. उदंड ४. जंगली
५. मार डालने के योग्य ६. प्रकट में

मुशायरा[1]
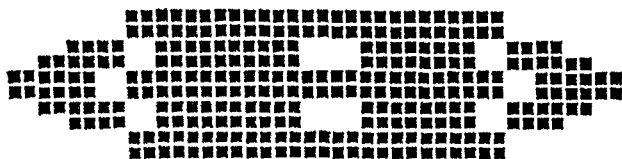
चिड़ीमार का टोला । भाँत भाँत का जानवर बोला ॥

लखनऊ दिल्ली बनारस पूरब और दखिन के कई मुफ्तखोरे शायर एक जगह जमा हुए और लगे रंग बिरंगी बोलियाँ बोलने । मैंने भी वहीं मैक्राफ़ून[2] की कल लगा दी । जो कुछ उसमें आवाज़ बन्द हो गई आप लोग भी सुन लीजिए ।

सबके पहिले लाला साहब उठे और बन्दगी करके यों चोंच खोली ।

"गल्ला कटै लगा है कि भैया जो है सो है ।
बनियन कौं ग़म भवा है कि भैया जो है सो है ॥
लाला की भैंसी शीर निचोवत माँ शाशी जब ।
दूध ओहमाँ मिल गवा है कि भैया जो है सो है ॥
इक तो कहत[3] माँ मर मिटी खिलकत[4] जो हैगा सब ।
तेहपर टिकस बँधा है कि भैया जो है सो है ॥
अँगरेज से अफ़गान से वह जंग होत है ।
अखबार माँ लिखा है कि भैया जो है सो है ॥
कुप्पा भए हैं फूल के बनियाँ व फ़र्त्ते माल[5] ।
पेट उनका दमकला है कि भैया जो है सो है ॥
अखबार नाहीं पंच से बढ़ कर भवा कोऊ ।
सिक्का य जम गवा है कि भैया जो है सो है ॥"

---

१. कवि सम्मेलन २. एक यंत्र ३. अकाल ४. प्रजा ५. धन कमाकर ।

देखो मेरा नाम चूसा है क्योंकि मैं सब का पाप रूपी पैसा चूस लेता हूँ क्योंकि खुदा ने फरमाया है कि मेरे बन्दे पैसों के बहकाने से गुनाह करते हैं अगर उन के पास पैसा न रहे तो खुद गुनाह न करें इस से तू सब से पहिले इन का पैसा चूस ले।

मेरा दूसरा नाम डबल है क्योंकि डबल हिंदी में पैसे को कहते हैं और अंगरेजी में दूने को और पच्छिम में उस बरतन को जिस्से घी वा अनाज निकाला जाता है और मेरा तीसरा नाम सुफेद है क्योंकि मैं रौशनी बखशने वाला हूँ और दिल मेरा साफ चिट्टा चमकीला चीनी की जात है और चमड़ा मेरा गोरा है और भी मैं सफेद करूँगा लोगों को अपने दीन की चांदनी से इनलाइटेंड[1] करके।

मेरे पहाड़ का नाम कोहचूर है क्योंकि मैं सब के पापी दिलों को और पापों को तथा प्रैजुडिसों[2] को लोगों के बल और धन को चूर करूँगा, और मेरी पहली आरामगाह कुर्सी है क्योंकि अब वहाँ की आबहवा साफ़ होकर बेवकूफ़ी की शिकायत रफ़ा हो गई और दूसरी कुरसी है जहाँ जलती आग पर मेरे से पैग़म्बर के सिवा दूसरा नहीं बैठ सकता और तीसरी दग़ली है उस में चारो ओर दग़ल[3] भरा है और बीच में मेरा सिंहासन है।

जहाँ पर खुदा ने हलाल किया है शराब, बीफ, मटन, बग्गी, दगल, फसल, नैशानालिटी,[4] लालटैन, कोट, बूट, छड़ी, जेबीघड़ी, रेल, धूँआकश, बिधवा, कुमारी, परकीया, चाबुक, चुरुट, सड़ी मछली, सड़ी पनीर, सड़े अँचार, मुँहकी बू, अधो भाग के केश, बिना पानी के मल धोना, रुमाल, मौसी, मामी, बूआ, चाची मै अपनी बेटी पोतियों के, कज़िन फ्रेंड,[5] लेपालट की बहू, खानसामा खानसामिन, हुक्का, थुक्का, लुक्का, बुक्का और आजादी को और हराम किया बुतपरस्ती, बेईमानी, सच बोलना, इनसाफ करना, धोती पहरना, तिलक लगाना, कंठी पहरना, नहाना, दतुअन करना, स्वच्छन्द होना, उदार होना, निर्भय होना, कथा, पुरान, जातिभेद, बाल्यविवाह, भाई वा

१. प्रकाशित २. अंधविश्वासों ३. कपट ४. जातीयता
५. चचेरे भाई बहन मित्र

कब लग बैठीं काढ़े घुँघटवा ।
मेला तमासा जाये नहीं देत्यो ॥
लीक पुरानी कब लग पीटों ।
नई रीत रसम चलाय नाहीं देत्यो ॥
गोबर से ना लीपब पोतब ।
चूना से भितिया पोताय नाहीं देत्यो ॥
खुसलिया छदम्मी ननकू इन कों ।
विलायत का काहें पठाय नाहीं देत्यो ॥
धन दौलत के कारन बलमा ।
समुंदर में बजरा छोड़ाय नाहीं देत्यो ॥
बहुत दीनाँ लग खटिया तोड़िन ।
हिंदुन का काहें जगाय नाहीं देत्यो ॥
दरस बिना जिय तरसत हमरा ।
कैसर का काहें देखाय नाहीं देत्यो ॥
हिजपिया तोरे पय्याँ पड़त हैं ।
पंचा माँ एहकाँ छपाय नाहीं देत्यौ ॥

ललाइन साहब की आजादी देखते ही साहो जी साहब मुतहैय्यर[1] हो घबड़ा कर यों रुके ।

का भवा आवा है ए राम जमाना कैसा ।
कैसी मेहरारू है ई हाय जनाना कैसा ॥
लोग किरिस्तान भए जाथैं बनथैं साहेब ।
कैसा अब पुन्न धरम गंगा नहाना कैसा ॥
हाल रोजगार गवा धूल में बेवहार मिला ।
का सराफी रही हुंडी का चलाना कैसा ॥
धोय के लाज सरम पी गए सब लरकन लोग ।
काहे के बाप मतारी रहे नाना कैसा ॥
आँखी के आगे लगे पीये सभै मिल के शराब ॥
हाय अब जात कहाँ पंच में जाना कैसा ।

---

१. चकित

शुहदे की बातचीत सुन कर हमारे बनारस के भैया लोगों से, कब रहा जाता है यह भी अपनी चर्री चूकने ही लगे।

चाँई चकार चोर श्रौर नटखट तोरे बदे।
होय गैलें सारे रामधै चोपट तोरे बदे॥
घर से नगर से जात कुटुम संगी भाई से।
केसे भयल बिगार न खटपट तोरे बदे॥
रोश्रल करीला पाटी प माथा पटक पटक।
लेईला जब कि रात के करवट तोरे बदे॥
राजा नवाब बाबू के ताड़ीला ए रजा।
होय जाई राजा रामधै कोरट तोरे बदे॥
देके सारन के बहाली तू घरे चल श्रावः।
श्राज न श्राय सकः कौनो वखत कल श्रावः॥
श्राज खरचा भी दुकनदार से पौले बाड़ी।
चल के बैठक में बचा चाभ के मगदल श्रावः॥
नरकू चिरकिट श्रौ पनारू से कहः घुरपतरी।
नल के बगले में तो होएँ सभे बैठल श्रावः॥
उहै चल जाला सरवा देखः बतोले भाँई।
देख के कैसनै हमन के हो खड़कल श्रावः॥
चाभ के पान महाबीरी क टीका देके।
मल के देही में अतर साँभी बेरा चल श्रावः॥
सारे चल श्रावै लै सब खोज में हमरे तोहरे।
मोड़ वा गल्ली के श्रागे तनी भड़कल श्रावः॥
कौनो सरवा नहीं समझाय के कहतैं राजा।
तेग[1] से कौने बदे बाड़ः तुँ खड़कल श्रावः॥
भौं चूम लेइला केहू सुन्दर जे पाईला।
हम ऊ हई की होंठे प तरुवार खाईला॥
इन के के श्रपने रोज तो रहिला चबाइला।
राजा के श्रपने खुरमा श्रौ बुँदिया चभाइला॥

१. तेग़ अली, जिसकी यह रचना है।

टोला म हमरें आएव न एक दिन भुलाय के ॥
घरहू प आय तेग क दरसन नहीं ही धात।
औरन तें तो मिलत हो रजा धाय धाय के।

इन सब की रें रें के पीछे एक नये ढग के शायर कब्रिस्तान के फ़कीर मरघट के बाम्हन एक नई अनोखी चाल की शायरी ले उठे। यह ढंगही सबसे निराला। रेख़्ती फेख़्ती सबसे अलग मरसिये का भी चचा। माशूक़ ही को कोसना।

फिर उन्हें हैजा हुआ फिर सब बदन नीला हुआ।
फिर न आने का मेरे घर में नया हीला हुआ ॥
क़हरे हक़[1] नाज़िल[2] हुआ पत्थर पड़े वह मर गए।
अब्र का टुकड़ा उन्हें तबरम् अबाबीला हुआ ॥
फिर उन्हें आया पसीना सब बदन ठंढा हुआ।
मुफ़लिसी में फ़िलमसल आँटा अजी गीला हुआ ॥
नाम सुनते ही टिकस का आह करके मर गए।
जानली क़ानून ने बस मौत का हीला हुआ ॥
आप शेख़ी पर चढ़े थे मिसले अफ़ग़ाने बद।
ख़ूब शुद गदकों के मारे सब बदन ढीला हुआ ॥
क़ैसरे हिन्दोस्ताँ अब जान इनकी बख़श दो।
देख लो रंजिश से सब इनका बदन पीला हुआ ॥

अफ़सोस कि अ० फालेन[3] इस मौके पर नहीं थे नहीं तो कई नए मोहावरे उनके हाथ लगते।

१—ख़ुदा का कोप २—उतरा ३—एस. डबल्यू. फ़ैलों

दूसरा बाब

बयान असर[1] अल्फ़ाज़[2]

दफ़: (२) किसी औरत के तहत हुकूमत[3] में कोई शै[4] जो कि ज़ाहिरा[5] मनकूल:[6] मगर बग़ैर हुक्म औरत के ग़ैरमनकूल:[7] है उस से मुराद[8] शौहर है।

तमसीलात[9]

अलिफ़—सन्दूक़ वग़ैरह को शौहर नहीं कह सक्ते क्योंकि वह जायदाद[10] मनकूल: से हैं मगर अपने को खुद बखुद नहीं चला सक्ते हैं।

बे—गाय, बैल, कुत्ता, गदहा वग़ैरह अगरचे खुद बखुद चल सक्ते हैं मगर वह अपने औरतों की हुकूमत से जायदाद ग़ैरमनकूल: नहीं हो जाते, इस वास्ते लफ़्ज़ शौहर उन पर असर पज़ीर[11] न होगा।

जीम—चूँकि ऐसी जायदाद जो कि ज़ाहिरा मनकूल: हो मगर औरत के हुक्म से फ़ौरन ग़ैर मनकूल: हो जावे सिर्फ़ शादीकरद:[12] मर्द हैं, लेहाज़ा लफ़्ज़ शौहर से मुराद उन्हीं लोगों से होगी।

दफ़: (३) शौहर जोरू की जायदाद है, इस वास्ते उस पर उस को हर किस्म[13] का अख़तियार हासिल[14] है।

तमसील

अपनी जायदाद को लोग जिस तरह बना बिगाड़ सक्ते हैं, उसी तरह जोरुओं को अपने शौहर पर ज़द व कोब[15] करना वा खाना न देना वग़ैरह वग़ैरह का अखतियार हासिल है।

—:o:—

तीसरा बाब

सज़ा

दफ़: (४) इस क़ानून में मुजरिमों[16] को हस्बज़ैल सज़ा दी जायगी।

---

१. परिभाषा २. शब्दों ३. शासन के अधीन ४. वस्तु ५. प्रकट में ६. चल ७. अचल ८. तात्पर्य ९. उदाहरण १०. संपत्ति ११. प्रभावान्वित १२. विवाहित १३. प्रकार १४. प्राप्त १५. मार-पीट १६. दोषियों

को जला कर काला करेगा, ईसा मर के जिया था तू मरा हुआ जीता रहेगा, मुहम्मद ने चाँद को बीच में से काटा तू चाँद का कलंक मिटा अपना टीका बनावेगा।

(खुदा कहता है) देख मूर्त्तिपूजन अर्थात् बुतपरस्ती को ज़माने से उठा देना क्योंकि मैंने हाफ़ सिविलाइज़्ड किया दुनिया को पूरा तुझको; जो शराब सब पैग़म्बरों पर हराम थी मैंने हलाल किया तेरे पर, बल्कि तेरे मज़हब की निशानी है जो तेरे आसमान पर आने के बाद रूए ज़मीन पर क़ायम रहेगी क्योंकि "यद्यपि तेरा राज्य सर्वदा न रहेगा पर यह मत यहाँ सर्वदा दृढ़ रहेगा"।

(खुदा कहता है) मैंने हलाल किया तुझपर गऊ, सूअर, मेंढक, कुत्ता वग़ैरह सब जानवर जो कि हराम हैं; मैंने हलाल किया तुझपर, अपने मज़हब के वास्ते झूठ बोलना और हुकुम दिया तुझ को औरतों की इज्ज़त करने और उन को अपने बराबर हिस्सा देने की बल्कि यारोंके संग जाने की; और सिवाय पब्लिक प्लेसों के कोहेतूर पर जहाँ मैंने जलवा दिखाया तुझ को तीन आरामगाह[1] फ़रिश्तों से बनवाकर तुझे बख्शीं और तुझपर हलाल कीं जिन तीनों का नाम कुर्सी, झुर्सी, और दगली है।

(खुदा कहता है) देख, खबरदार, मुँह वग़ैरह किसी बदन को साफ़ न रखना नहीं तो तुझे शैतान बहका देंगे, लिबास सियाह हमेशः पहिरना और मेरी याद में सिर खुला रखना।

मैं खुदा के इन हुक्मों को मानकर तुम्हारे पास आया हूँ, मेरा कहा मानो और ईमान लाओ मैं खुदा का प्यारा पुत्र, माशूक, जोरू, नायब नहीं हूँ बल्कि खुदा का दूसरा हूँ? यह इज्ज़त किसी पैग़म्बर को नहीं मिली थी।

लोगो! मेरा कहा मानो खुदा मुझ से डरता है क्योंकि मैं प्रच्छन्न नास्तिक हूँ पर पैग़म्बरिन के डर से आस्तिक हो गया हूँ इससे खुदा को हमेशः हमारी दलीलों से अपने उड़ जाने का डर रहता है तो जब-खुदा मुझ से डरता है तब उस के बन्दो तुम मुझ से बहुत ही डरो।

---

१. सुखस्थान

चौथा बाब

मुस्तसनियात[1]

दफ़: (८) हर बशर[2] जो खुदा के यहाँ से जामय[3] औरत पहिना के उतारा गया है वह इस क़ानून से मुस्तसना है।

दफ़: (९) कोई जुर्म मन्दर्जे क़ानून हाजा अगर बहुक्म औरत किया जाय तो इस कानून से मुस्तसना है।

दफ़: (१०) कोई शख्स जो कि दरहक़ीक़त फ़कीरी अखतियार करे और दुनिया छोड़ दे वह बाद उस लमह:[4] के जिसमें कि दुनिया छोड़ी है इस क़ानून से मुस्तसना है।

दफ़: (११) कोई शख्स जो अपने जोरू को तिलाक दे, वह बाद उस लमह: के जब कि उस ने अपनी औरत को तिलाक़ दिया है उस लहज:[5] के पेश्तर तक जब कि वह दूसरी औरत से सरोकार क़ायम करे इस कानून से मुस्तसना है।

—:※:—

पाँचवाँ बाब

इमदाद[6] जुर्म

दफ़: (१२) कोई शौहर जो कि दूसरे शौहर को किसी औरत के बरखिलाफ बरगलाएगा[7] तो यह समझा जायगा कि उस ने जुर्म करने में इमदाद की।

दफ़: (१३) जिस वक्त कोई शौहर किसी दूसरे शौहर के जुर्म करने के वक्त मौजूद रहे और उस को उस जुर्म से न बाज रक्खे[8] तो वह भी जुर्म की इमदाद करनेवाला समझा जायगा।

मुस्तसनियात

अलिफ—कोई औरत व मर्द जिन की शादी नहीं हुई है इमदाद करने के जुर्म से मुस्तसना हैं।

---

१. मुक्तगण २. मनुष्य ३. वस्त्र ४. क्षण ५. समय ६. सहायता ७. बहकावेगा ८. रोके

ईमान लाओ मुझ पर, डाली चढ़ाओ मुझ को, जूता उतार के आओ मेरी मजार पाक[1] पर, पगड़ी पहन कर आओ मेरे मकबरे में, इनाम दो इन को और धक्का खाओ उन का जो मेरे मुजाविर[2] हैं क्योंकि वे मूजिब होंगे तुम्हारी नजात के, और जो कुछ मैं कहूँ उसे सुन कर हजूर, साहब बहुत ठीक फरमाते हैं, बजा इरशाद, बेशक, ठीक है, सत्त बचन, जा आज्ञा जो आज्ञा जे आज्ञा, इस में क्या शक, ऐसा ही है, मेरे मालिक, मेरे बाबाजान, सब सच फरमाते हो—कहो क्योंकि जो मैं कहता हूँ वह ईश्वर कहता है; और मेरे अनादरों को सहो अगर मेरी दरगाह में तुम्हें गरदनियाँ दी जाय तो उस की कुछ लाज मत करो फिर घुसो क्योंकि मेरी दरगाह से निकलना दुनिया से निकल जाना है।

देखो शराब पियो, विधवा विवाह करो, बालापाठशाला करो, आगे से लेने जाओ, बाल्यविवाह उठाओ, जाति भेद मिटाओ, कुलीन का कुल सत्यानाश में मिलाओ, होटल में खाओ, लव[3] करना सीखो, स्पीच दो, क्रिकेट खेलो, शादी में खर्च कम करो, मेम्बर बनो, मेम्बर बनो, दरबारदारी करो, पूजा पत्री करो, चुस्त चालाक बनो, हम नहीं जानते को हम नहीं जानता कहो, चक्करदार टोपी पहिनो वा सिर खुला रक्खो पर पौशाक सब तंग रक्खो, नाच, बाल,[4] थियेटर अंटा गुड़गुड़ बंक प्रिवी सिवी घरों में जाओ क्योंकि ये काम मूजिब होंगे खुदा और मेरी खुशी के।

शराब पियो, कुछ शंका मत करो, देखो मैं पीता हूँ क्योंकि यह खुदा का खून है जो उस ने मुझे पिलाया और मैंने दुनिया को और यह उस के दोनों बादशाहत की निशानी है जो बाद मेरे बहुत दिनों तक कायम रहैगी क्योंकि उसने हुक्म दिया है कि औरों की तरह तू मकान बहुत पक्का न बनवा क्योंकि दुनिया खुद नापायदार[5] है मगर मेरे खून के बोतलों के टुकड़े जो कि (खुदा कहता है) मेरी हड्डियाँ हैं बहुत दिनों तक न गलैंगी और मेरे सच्चे राज की निशानी क़ायम रहेगी।

---

१. पवित्र क़ब्र २. पंडा ३. प्रेम ४. नाचघर ५. आधारहीन

दफ़: (१५) जुर्म के इमदाद करनेवालों की सजा व नजर तम्बीह[1] सिर्फ़ सरसरी तौर से काफ़ी होगी।

—:※:—

छठा बाब

जुर्म खिलाफ अदब अदालत

दफः (१६) लफ्ज़ अदालत से मुराद यहाँ सिर्फ़ शादी की हुई जोरू समझना चाहिए।

दफ़: (१७) जो शौहर अपनी जोरू से लड़ना चाहे या लड़े या ग़ैर शख्स जो उससे लड़ता हो उस की इमदाद करे तो उस को किसी किस्म की क़ैद की सज़ा दी जायगी लेकिन अगर अदालत की राय में यह जुर्म संगीन[2] मालूम हो तो हब्सदवाम बअबूर दरयायशोर की सज़ा देने का भी अदालत को अख़तियार है।

दफ़: (१८) जो शख्स अपने किसी बुज़ुर्ग या रिश्तःदार या दोस्त या लड़कों को अपने तरफ़ करके जोरू पर हावी[3] होने का इरादः करे उस की क़ैद की सज़ा या अलग सोने की सज़ा या सिर्फ गाली वग़ैरह दी जायगी।

दफ़: (१९) जो शख्स सिवा अपनी औरत के और किसी औरत पर इश्क़[4] ज़ाहिर करेगा, तो वह अदालत का दुश्मन समझा जायगा।

खुलासः

अपनी जोरू के सिवा किसी औरत पर मेहरबानी की नज़र करना ही जुर्म है, चाहे वह किसी सबब से क्यों न हो।

तमसीलात

सुग़रा ज़ैद की जोरू है और कुबरा ज़ैद की परोसिन है मगर कुबरा ग़रीब है इस वास्ते ज़ैद कभी २ कुबरा की कुछ मदद करता है पस ज़ैद मुजरिम जुर्म मुन्दरज दफ़: हाज़ा[5] का हुआ।

अलिफ़—अदालत को अख़तियार हासिल है कि बग़ैर क़सूर किए

---

१. शासन की दृष्टि से २. भारी

३. प्रभाव डालने ४. आसक्ति ५. पूर्वोक्त

मां वा पिता के साथ रहना, मूर्त्तिपूजन तथा आर्थोडाक्स[1] की सुहबत, सच्ची प्रीत, परस्पर उपकार, आपस का मेल बुरी बातें घातें लातें फातें छातें और प्रेजुडिस को।

लोगो! दौड़ो दौड़ो ईमान लाओ मुझ पर, देखो पीछे पछताओगे और हाथ मलते रह जाओगे मैं ईश्वर का प्यारा दूसरा और पाँचवाँ पैगम्बर केवल तुम्हारे उद्धार के वास्ते पृथ्वी पर आया हूँ ईमान लाओ मुझ पर हुकुम मानो मेरा, दहिना हाथ जो तुमलोगों के सामने उठा है खुदा का हाथ है इस को सिजदा करो, झुको, अदब करो, ईमान लाओ और इस शराब को खुदा का खून समझ कर पिओ पिओ पिओ।

१. कट्टर

आठवाँ बाब
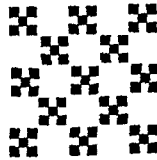
जुर्म बरखिलाफ़ अमन[1] शहर

दफ़ः (२४) जो शख्स अपने दोस्तों या रिश्तःदारों को जो जोरू की राय के बरखिलाफ हैं अकसर अपने मकान में जमा करैगा या ज्यादःतर उन की दावत करैगा वह इस बात का मुजरिम समझा जायगा कि उस ने शहर के अमन में फरक़[2] डाला।

दफ़ः (२५) जो शख्स किसी रिश्तःदार या बुजुर्ग को घर में अपने जोरू के समझाने के वास्ते बुलावेगा वह भी शहर के अमन में फ़रक़ डालने का मुजरिम क़रार दिया जायगा।

दफ़ः (२६) दफ़ः २४ वो २५ के मुजरिमों की सजा गाली वग़ैरः या जुर्म संगीन हो तो हब्सदवाम बअबूर दरियायशोर हो सकती है।

—:⁂:—

नवाँ बाब

अदूलहुक्मी[3]

दफ़ः (२७) जो अपनी जोरू का हुक्म न मानेगा वह अदूल-हुक्मी का मुजरिम क़रार दिया जायगा।

तमसीलात

अलिफ़—जोरू ने हुक्म दिया कि कल शाम तक फलाना जेवर या कपड़ा बन कर आवै मगर शौहर तंगदस्ती[4] के सबब से नहीं ला सकता इसवास्ते मुजरिम हुआ।

बे—जोरू से एक दूसरी औरत से लड़ाई है और वह लड़ाई भी महज़[5] बे बुनियाद[6] है। दोनों के शौहर आपस में करीबी[7] रिश्तःदार हैं, एक शौहर के यहाँ कोई शादी या ग़मी[8] का जरूरी काम पेश आया और दूसरे शौहर को लड़ाई के सबब से उस की जोरू ने

१. शांति २. भंग करना ३. आज्ञा की अवहेलना ४. धनाभाव ५. केवल ६. बेजड़ ७. पास की ८. शोक

क़ानून ताज़ीरात शौहर

जीम—शौहर किसी ऐसी मज़हबी जमायत[1] में शरीक[2] हुआ जिस में बहुत सी औरतें मौजूद थीं अगर्चे[3] मज़हब के पाबंद हो कर उस का उस जमायत में शरीक होना फ़र्ज़[4] था मगर उस से दिलशिकनी हुई।

दाल—अगर शौहर किसी ऐसी राह से गुज़रा कि जिस में किसी सबब से कुछ औरतें जमा थीं तो वह मुर्तकिब जुर्म दिलशिकनी हुआ।

हे—किसी रिश्तःदार के सबब से या किसी मुआमिलः के सबब से किसी शौहर ने दूसरे औरत से ज़रूरी गुफ्तगू[5] की तो मुजरिम दिलशिकनी हुआ।

वाव—लड़कों को पढ़ने की ज्यादः ताकीद करना भी जुर्म दिलशिकनी है।

ज़े—रँगरेज़ पर कपड़ा जल्द न रंग लाने की, दरज़ी पर कुरती जल्द न सीने की ताकीद नहीं करना या इन कामों का जल्द अंजाम पाना[6] उस के अख़तियार के बाहर है, तो वह शख़्स मुजरिम दिलशिकनी का हुआ।

हे—मेले या तमाशे वग़ैरः के ऐसे मौक़ों मे जिस में इज्ज़त जाने का ख़ौफ़ है, जोरू को बमिन्नत बाज़ रखना भी जुर्म दिलशिकनी है।

दफ़ः (३०) मुजरिम दिलशिकनी को ससेरी की कुल सजायें दी जा सकती हैं।

१. सभा २. सम्मिलित ३. यद्यपि ४. कर्तव्य ५. वार्तालाप ६. पूरा होना।

क़ानून ताज़ीरात शौहर[1]

पहिला बाब[2]

तमहीद[3]

चूँकि मुनासिब मालूम हुआ कि एक कानून ऐसा इजरा किया जावै जिस से बाद शादी के ज़ौजः[4] अपने शौहरों पर बखूबी हकूमत कर सकें और इस सबब से उन दोनों में निफ़ाक़[5] न पैदा हो लेहाज़ा कानून हस्बज़ैल[6] मुरौविज[7] किया गया।

दफ़ा[8] (१) इस क़ानून का नाम ताज़ीरात शौहर होगा, हिंदुस्तान में कोई औरत या मर्द जो शादी कर लेगा वह क़ानूनन इस का पाबन्द[9] समझा जायगा।

मुस्तसना[10]

जो अह्ल[11] यूरप हिंदुस्तान में आकर शादी करेंगे वह इस क़ानून से मुस्तसना समझे जायँगे।

—:ॐ:—

१. पति दंड विधान २. प्रकरण ३. भूमिका ४. पत्नी ५. झगड़ा ६. निम्न के अनुसार ७. प्रचलित ८. धारा ९. आबद्ध १०. मुक्त ११. निवासी

अलिफ़—क़ैद यानी शौहर को मकान की चार दीवारी से बाहर न जाने देना, यह क़ैद दोनों तरह की होगी, बा[1] मेहनत व बिला[2] मेहनत—लफ़्ज़ मेहनत से यह मुराद है कि शौहर क़ैद भी रहे और गालियों की बौछार भी बरदाश्त करता रहे—लफ़्ज़ बिना मेहनत से मुराद है कि सिर्फ़ बाहर न जाने पाये।

बे—अलग बिस्तर या दूसरे मकान में सोलाना।

जीम—हमेशा के वास्ते गुलामी[3] करानी।

दाल—जुर्मानः यानी किसी क़िस्म का नक्द या जेवर लेकर क़सूर मुआफ़ करना।

दफ़ः (५) इस क़ानून में भी सज़ाय मौत सब से बड़ी सज़ा है मगर आदमी के जान को उस की बदन से अलग कर देना यहाँ सज़ाय मौत नहीं, यहाँ लफ़्ज़ सज़ाय मौत से यह मुराद है कि औरत रूठ कर अपने बाप या भाई के घर चली जाय और फिर न आये।

दफ़ः (६) सज़ाय हब्सदवाम[4] बअबूर[5] दरियाशोर[6] से इस क़ानून में यह मुराद है कि औरत चंद अरसः के वास्ते शौहर को अपने घर में न आने दे या चंद अरसः के वास्ते ख़फ़ा हो कर अपने बाप के घर में चली जावे॥

दफ़ः (७) मुक़द्दमात सर्सरी[7] के वास्ते हस्बज़ैल छोटी छोटी सज़ायें मुक़र्रर हैं—

अलिफ़—न बोलना। बे—भौं चढ़ाना। जीम—रोना। दाल—बकना।

—:※:—
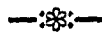
१. सहित २. बिना ३. दासता ४. सदा का कारावास ५. पार कर ६. समुद्र ७. साधारण

बे—कोई शख्स जो बज़ोर बदमाशी या दौलत या और किसी सबब से जुर्म करद: शौहर को औरत के अख़तियार के बाहर है वह इस कानून से मुस्तसना है।

जीम—मगर बगैर शादी किए हुए भी वह लोग जो किसी औरत के तहत हकूमत में हैं मुस्तसना न समझे जायँगे।

तमसीलात

अलिफ़—ज़ैद का बकर नाम का एक भतीजा है जिस की शादी नहीं हुई है, जैद बकर के बहकाने से किसी मेल: में गया और वहाँ रात को देर तक रहा पस जैद मुजरिम हुआ, मगर बकर जो कि दूसरे घर में रहता है और औरत की हकूमत से बाहर है इमदाद जुर्मकी तुहमत उस पर नहीं हो सकती।

बे—ख़ालिद एक नव्वाब है जिस के सबब से अमरू की गुजर औक़ात[1] होती है, ख़ालिद ने किसी शब मुहफ़िल में अमरू को अपने साथ रहने पर मजबूर किया मगर चूँकि वह दौलतमन्द है इस वास्ते इमदाद जुर्म के इत्तिहाम[2] से मुस्तसना है।

जीम—ज़ैद बकर का छोटा भाई है और अपने भावज की पकाई हुई रोटी खाता है। अगर ज़ैद व बकर दोनों किसी शब को देर तक बाहर रहे तो ज़ैद इमदाद जुर्म करने से सजायाब[3] हो सक्ता है।

दफ़: (१४) इमदाद जुर्म करनेवाले मुजरिमों की सज़ा उन की अदालत में होगी अगर वे असल मुजरिम की अदालत के हद अख़्तियार[4] के बाहर हैं।

तमसील

अलिफ़—जैद असल मुजरिम है और बकर उस का मददगार है मगर दोनों की शादी हो चुकी है तो ज़ैद की सज़ा उस की जोरू करैगी और बकर की सज़ा ज़ैद की जोरू के बहकाने से बकर की जोरू करैगी।

---

१. कालयापन २. दोष
३. दंडित ४. अधिकार की सीमा

सूचक वाक्य द्वारा बाबू साहेब का सभा मे परिचय कराया। यद्यपि इसकी कुछ ऐसी आवश्यकता न थी क्योंकि कौन ऐसा देश और नगर है जहाँ भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र जी का नाम नहीं प्रसिद्ध है? यहाँ एक पृथक् सभा "आर्यदेशोपकारिणी सभा" के नाम से स्थापित है। उसके सेक्रेटरी पं० इंदिरादत्त उपाध्याय जी बी० ए० ने एक छोटा ऐड्रेस बाबू साहेब की प्रशंसा में पढ़ा। तदुपरांत बाबू हरिश्चंद्र जी ने एक बड़ा ललित, गंभीर और समयोपयोगी व्याख्यान इस विषय पर दिया कि "भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?" सभासद्गण बाबू साहेब का लेकचर सुनकर गद्गद् हो गये। व्याख्यान समाप्त होने पर श्रीमान् सभापति साहेब ने बाबू साहेब को धन्यवाद दिया और गुणानुवाद किया और सभा विसर्जित हुई। लेकचर तथा ऐड्रेस पाठकों के अवलोकनार्थ नीचे प्रकाशित होता है।

रविदत्त शुक्ल

हुये भी शौहर को इस जुर्म का मुजरिम क़रार दे, मुजरिम का यह सबूत देना कि वह मुर्तकिब[1] इस जुर्म का नहीं हुआ क़ाबिल समाअत[2] न होगा।

बे—अदालत के ख़ौफ़ से झूठ मूठ भी एक मर्तबः जुर्म का इक़रार कर लेना किसी शौहर को मुजरिम बनाने के वास्ते काफ़ी होगा।

जीम—बग़ैर जुर्म के इस क़सूर में मुजरिम बनानेवाली अदालत यानी औरत सिन्‌रसीदः[3] या बदसूरत होनी चाहिये या जिसका शौहर सिनरसीदः या मकरूहसूरत[4] हो उस औरत को भी इस क़िस्म का जुर्म क़ायम[5] करने का अखतियार हासिल है।

दाल—अगर नौजवान या ख़ूबसूरत औरत अखतियारात मुन्दर्जे बाला हासिल करना चाहे तो उस को अपनी बदमिज़ाजी[6] क़बूल करनी पड़ैगी।

दफ़ः (२०) इस क़ानून में जितनी क़िस्म की सज़ायें लिखी हैं वह सब या उन में से चंद दफ़ः १६ के मुजरिम को दी जा सकती हैं।

—:※:—

सातवाँ बाब

जुर्म ख़िलाफ़ फ़ौज सर्कारी

दफ़ः (२१) घर के लड़के बर्री[7] फ़ौज और मजदूरनियाँ बहरी[8] फ़ौज समझी जायँगी।

दफ़ः (२२) जो शख़्स अपने किसी लड़की या अपने किसी लड़के को उन के माँ के बरख़िलाफ़[9] बोलने या मजदूरनियों को बग़ैर हुक्म बीबी के काम करने को कहैगा तो वह फ़ौज के बरख़िलाफ़ बलवः करने का मुजरिम क़रार दिया जायगा।

दफ़ः (२३) जो मुजरिम जुर्म मुन्दर्जे दफ़ः २२ का होगा उस को गाली बकने या झिड़की देने या रोने की सजा दी जायगी।

१. करनेवाला २. सुनने के योग्य।

३. प्रौढ़ा या वृद्धा ४. घृणित रूपवाली ५. स्थापित ६. कर्कशापन ७. स्थल की ८. समुद्री ९. विरुद्ध।

पहिले के यहाँ जाने से बाज़ रखना चाहा मगर शौहर शर्त आदमियत से बाज़ न रहा इस वास्ते वह मुजरिम जुर्म दफ़ः हाज़ा का हुआ।

जीम—जोरू को शैतानपरस्ती[1] पर एतक़ाद[2] है मगर शौहर एक पढ़ा लिखा आदमी है। लड़कों की खैरियत के वास्ते जोरू ने शौहर को किसी पीर की नेयाज़[3] करने को कहा मगर शौहर ने ईमान की पाबन्दी से उसको नहीं माना लेहाज़ा वह मुजरिम दफ़ः हाज़ा का हुआ।

दफ़ः (२८) मुजरिम जुर्म अदूलहुक्मी को जुर्मानः या क़ैद या दोनों क़िस्म की सज़ायें दी जायेंगी।

दसवाँ बाब

जुर्म दिलशिकनी[4]

दफ़ः (२९) जो शौहर अपनी जोरू की दिलशिकनी करेगा वह दिलशिकनी के जुर्म का मुजरिम समझा जायगा।

तमसीलात

अलिफ़—शौहर ने हीलतन[5] या सरीहतन[6] कोई हरकत[7] ऐसी नहीं की कि उस की जोरू की दिलशिकनी हो मगर जोरू ने किसी हरकत से अपनी दिलशिकनी मान ली तो वह भी दिलशिकनी होगी औरहैउस में शौहर को कोई उज्र[8] न होगा।

बे—शौहर किसी मोहफ़िल में गया और वहाँ ब मजबूरी उस को रंडियों का तमाशा देखना पड़ा तो यह भी दिलशिकनी हुई।

---

१. भूत पूजना २. विश्वास ३. मिन्नत या चढ़ावा ४. हृदय पर चोट ५. कपट से ६. प्रकट में ७. कार्य ८. आपत्ति।

भोजन झूठी गप से छुट्टी नहीं। हाकिमों को कुछ तो सर्कारी काम घेरे रहता है, कुछ बॉल, घुड़दौड़, थिएटर, अखबार में समय गया। कुछ बचा भी तो उनको क्या गरज है कि हम गरीब गंदे काले आदमियों से मिलकर अपना अनमोल समय खोवैं। बस वही मसल हुई—'तुम्हें गैरों से कब फुरसत हम अपने गम से कब खाली। चलो बस हो चुका मिलना न हम खाली न तुम खाली।' तीन मेंढक एक के ऊपर एक बैठे थे। ऊपरवाले ने कहा 'जौक शौक', बीचवाला बोला 'गुम सुम', सब के नीचेवाला पुकारा 'गए हम'। सो हिंदुस्तान की साधारण प्रजा की दशा यही है, गए हम।

पहले भी जब आर्य लोग हिंदुस्तान में आकर बसे थे, राजा और ब्राह्मणों ही के जिम्मे यह काम था कि देश में नाना प्रकार की विद्या और नीति फैलावैं और अब भी ये लोग चाहैं तो हिंदुस्तान प्रतिदिन कौन कहै प्रतिछिन बढ़ै। पर इन्हीं लोगों को सारे संसार के निकम्मेपन ने घेर रखा है। "बोद्धारो मत्सरग्रस्ता प्रभवः स्मरदूषिताः।" हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यों नहीं आती कि उस समय में जब इनके पुरुषों के पास कोई भी सामान नहीं था तब उन लोगों ने जंगल में पत्ते और मिट्टी की कुटियों में बैठ करके बाँस की नलियों से जो तारा ग्रह आदि वेध करके उनकी गति लिखी है वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपए के लागत की विलायत में जो दूरबीनें बनी हैं उनसे उन ग्रहों को वेध करने में भी वही गति ठीक आती है, और जब आज इस काल में हम लोगों को अंगरेजी विद्या की और जगत् की उन्नति की कृपा से लाखों पुस्तकें और हजारों यंत्र तैयार हैं तब हम लोग निरी चुंगी की कतवार फेंकने की गाड़ी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि उन्नति की मानो घुड़दौड़ हो रही है। अमेरिकन, अंगरेज, फरासीस आदि तुरकी ताजी सब सरपट्ट दौड़े जाते हैं। सबके जी में यही है कि पाला हमीं पहले छू लें। उस समय हिंदू काठियावाड़ी खाली खड़े खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं। इनको, औरों को जाने दीजिए, जापानी टट्टुओं को हाँफते हुए दौड़ते देखकर भी लाज नहीं आती। यह समय ऐसा है कि जो पीछे रह जायगा फिर कोटि उपाय किए भी आगे न बढ़ सकैगा। इस लूट में, इस बरसात में भी जिसके सिर पर कम-

ग्यारहवाँ बाब

हंगामः[1]

दफ़ः (३१) जोरू की किसी बात का जवाब देना जुर्म हंगामः है।

दफ़ः (३२) हंगामः करनेवाले मुजरिम को रोने या बकने की सज़ा दी जायगी।

क़ितः[2] तारीख़ तसनीफ़[3] दर सन् १८८३ ई०।

चोगरदीद ईं ज़ेराफ़तनामः तसनीफ़।
के बाशद हर्फ़ हरफ़श दुर ओ गौहर॥
ज़ रूये आबरू शुद ईसवी साल।
निको क़ानून ताज़ीरात शौहर॥

१. विद्रोह २. एक छंद ३. रचना ४. जब यह बुद्धिमानी की रचना प्रणीत हुई, जिसके हर एक अक्षर मोती से हैं। तब प्रतिष्ठा के रूप में ईसवी साल हुआ 'निको कानून ताजीरात शौहर'। (१८८३)

गद्दी के नीचे से अखबार निकाला। यहाँ उतनी देर कोचवान हुक्का पीएगा या गप्प करेगा। सो गप्प भी निकम्मी। वहाँ के लोग गप्प ही में देश के प्रबंध छाँटते हैं। सिद्धांत यह कि वहाँ के लोगों का यह सिद्धांत है कि एक छिन भी व्यर्थ न जाय। उसके बदले यहाँ के लोगों को जितना निकम्मापन हो उतना ही बड़ा अमीर समझा जाता है। आलस यहाँ इतनी बढ़ गई कि मलूकदास ने दोहा ही बना डाला "अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम। दास मलूका कहि गए, सबके दाता राम।" चारो ओर आँख उठाकर देखिए तो बिना काम करनेवालों की ही चारों ओर बढ़ती है। रोजगार कहीं कुछ भी नहीं है। अमीरों की मुसाहबी, दल्लाली या अमीरों के नौजवान लड़कों को खराब करना या किसी की जमा मार लेना, इनके सिवा बतलाइए और कौन रोजगार है जिससे कुछ रुपया मिलै। चारो ओर द्ररिद्रता की आग लगी हुई है। किसी ने बहुत ठीक कहा है कि दरिद्र कुटुंब इसी तरह अपनी इज्जत को बचाता फिरता है जैसे लाजवती कुल की बहू फटे कपड़ों में अपने अंग को छिपाए जाती है। वही दशा हिंदुस्तान की है।

मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट देखने से स्पष्ट होता है कि मनुष्य दिन दिन यहाँ बढ़ते जाते हैं और रुपया दिन दिन कमती होता जाता है। तो अब बिना ऐसा उपाय किए काम नहीं चलैगा कि रुपया भी बढ़ै, और वह रुपया बिना बुद्धि बढ़े न बढ़ेगा। भाइयो, राजा महाराजों का मुँह मत देखो, मत यह आशा रक्खो कि पंडितजी कथा में कोई ऐसा उपाय भी बतलावेंगे कि देश का रुपया और बुद्धि बढ़े। तुम आप ही कमर कसो, आलस छोड़ो। कबतक अपने को जंगली हूस मूर्ख बोदे डरपोकने पुकरवाओगे। दौड़ो इस घोड़दौड़ में जो पीछे पड़े तो फिर कहीं ठिकाना नहीं है। "फिर कब राम जनकपुर ऐहैं"। अबकी जो पीछे पड़े तो फिर रसातल ही पहुँचोगे। जब पृथ्वीराज को कैद करके गोर ले गए तो शहाबुद्दीन के भाई गियासुद्दीन से किसी ने कहा कि वह शब्दभेदी बाण बहुत अच्छा मारता है। एक दिन सभा नियत हुई और सात लोहे के तावे बाण से फोड़ने को रखे गए। पृथ्वीराज को

[बलिया में व्याख्यान]

भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?

सं० १९३४

बाहर न निकाले जायँगे, दरिद्र न हो जायँगे, कैद न होंगे वरंच जान से न मारे जायँगे तब तक कोई देश भी न सुधरैगा।

अब यह प्रश्न होगा कि भाई हम तो जानते ही नहीं कि उन्नति और सुधारना किस चिड़िया का नाम है। किसको अच्छा समझैं? क्या लें, क्या छोड़ैं? तो कुछ बातें जो इस शीघ्रता में मेरे ध्यान में आती हैं उनको मैं कहता हूँ, सुनो—

सब उन्नतियों का मूल धर्म है। इससे सबके पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो, अँगरेजों की धर्मनीति और राजनीति परस्पर मिली हैं, इससे उनकी दिन दिन कैसी उन्नति है। उनको जाने दो, अपने ही यहाँ देखो! तुम्हारे यहाँ धर्म की आड़ में नाना प्रकार की नीति, समाज-गठन, वैद्यक आदि भरे हुए हैं। दो एक मिसाल सुनो। यही तुम्हारा बलिया का मेला और यहाँ स्नान क्यों बनाया गया है? जिसमें जो लोग कभी आपस में नहीं मिलते, दस दस पाँच पाँच कोस से वे लोग साल में एक जगह एकत्र होकर आपस में मिलें। एक दूसरे का दुःख सुख जानैं। गृहस्थी के काम की वह चीजें जो गाँव में नहीं मिलती, यहाँ से ले जायँ। एकादशी का व्रत क्यों रखा है? जिसमे महीने में दो एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाय। गंगा जी नहाने जाते हो तो पहिले पानी सिर पर चढ़ा कर तब पैर डालने का विधान क्यों है? जिसमें तलुए से गरमी सिर में चढ़कर विकार न उत्पन्न करे। दीवाली इसी हेतु है कि इसी बहाने साल भर में एक बेर तो सफाई हो जाय। यही तिहवार ही तुम्हारी मानो म्युनिसिपालिटी हैं। ऐसे ही सब पर्व सब तीर्थ व्रत आदि में कोई हिकमत है। उन लोगों ने धर्मनीति और समाजनीति को दूध पानी की भाँति मिला दिया है। खराबी जो बीच में भई है वह यह है कि उन लोगों ने ये धर्म क्यों मानने लिखे थे, इसका लोगों ने मतलब नहीं समझा और इन बातों को वास्तविक धर्म मान लिया। भाइयो, वास्तविक धर्म तो केवल परमेश्वर के चरणकमल का भजन है। ये सब तो समाजधर्म हैं जो देशकाल के अनुसार शोधे और बदले जा सकते हैं। दूसरी खराबी यह हुई कि उन्हीं महात्मा बुद्धिमान ऋषियों के वंश के लोगों ने अपने बाप दादों का मतलब न समझकर बहुत से नए नए धर्म बनाकर शास्त्र

बलिया में भारतेंदु जी

—:※:—

इस साल बलिया में ददरी का मेला बड़ी धूम-धाम से हुआ। श्री मुंशी बिहारीलाल, मुंशी गणपति राय, मुंशी चतुर्भुज सहाय सरीखे उद्योगी और उत्साही अफसरों के प्रबंध से इस वर्ष मेले में कई नई बातें ऐसी हुईं, जिनसे मेले की बड़ी शोभा हो गई। एक तो पहलवानों का दंगल हुआ, जिसमें देश देश के पहलवान आए थे और कुश्ती का करतब दिखलाकर पारितोषिक पाया। दूसरे मेले के थोड़े दिन पूर्व ही से एक नाट्य समाज नियत हुआ था, जिसने मेले में कई उत्तम नाटकों का अभिनय किया। श्री भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र जी नाट्य समाज के प्रबंध-कर्ताओं के आग्रह और अनुराग से यहाँ विराजमान थे। उक्त बाबू साहब कृत प्रसिद्ध नाटक "सत्यहरिश्चंद्र" और "नीलदेवी" बड़ी सुघराई से खेले गए। संपूर्ण दर्शक-मंडली मोहित हो गई और इन नाटकों के कवि बाबू हरिश्चंद्र जी की, जो संयोग से नाट्यशाला में इस समय विद्यमान थे बार बार सराहना करने लगी। बाबू साहब का नाम सुनकर इस जिले के मैजिस्ट्रेट आदिक अनेक साहिबान और मेम लोग भी थियेटर में उपस्थित थे और "सत्य हरिश्चंद्र" "नीलदेवी" का अभिनय देखकर बड़ी प्रसन्नता प्रगट की। वरंच रॉबर्ट्स साहब मैजिस्ट्रेट ने कहा कि इनके नाटक कवि शिरोमणि शेक्सपियर से भी उत्तम हैं। बलिया की सज्जन-मंडली ने बाबू हरिश्चद्र जी का योग्य आदर संमान किया। श्री बाबू जी साहेब के स्वागत संमानार्थ यहाँ "बलिया इंस्टिट्यूट" की एक सभा की गई जिसमें इस नगर के सब प्रतिष्ठित अफसर और रईस एकत्र थे। इस जिले के मान्यवर, सर्व प्रिय कलेक्टर मि० डी० टी०, रॉबर्ट्स साहेब बहादुर सभाध्यक्ष के उच्चासन में इस अवसर पर सुशोभित थे। श्री मुंशी बिहारीलाल जी सेक्रेटरी बलिया इंस्टिट्यूट ने संक्षिप्त आदर

दिल्ली लखनऊ की बादशाहत कायम है। यारो ! वे दिन गए। अब आलस हठधर्मी यह सब छोड़ो। चलो, हिंदुओं के साथ तुम भी दौड़ो, एकएक दो होंगे। पुरानी बातें दूर करो। मीरहसन की मसनवी और इंदरसभा पढ़ाकर छोटेपन ही से लड़कों का सत्यानाश मत करो। होश सम्हाला नहीं कि पट्टी पार ली, चुस्त कपड़ा पहना और गजल गुनगुनाए। "शौक तिफ्ली से मुझे गुल की जो दीदार का था। न किया हमने गुलिस्ताँ का सवक याद कभी"। भला सोचो कि इस हालत में बड़े होने पर वे लड़के क्यों न बिगड़ेंगे। अपने लड़कों को ऐसी किताबें छूने भी मत दो। अच्छी से अच्छी उनको तालीम दो। पिनशिन और वजीफा या नौकरी का भरोसा छोड़ो। लड़कों को रोजगार सिखलाओ। विलायत भेजो। छोटेपन से मिहनत करने की आदत दिलाओ। सौ सौ महलों के लाड़ प्यार दुनिया से बेखबर रहने की राह मत दिखलाओ।

भाई हिंदुओ ! तुम भी मतमांतर का आग्रह छोड़ो। आपस में प्रेम बढ़ाओ। इस महामंत्र का जप करो। जो हिंदुस्तान में रहे, चाहे किसी रंग किसी जाति का क्यों न हो, वह हिंदू। हिंदू की सहायता करो। बंगाली, मरट्ठा, पंजाबी, मदरासी, वैदिक, जैन, ब्राह्मो, मुसलमान सब एक का हाथ एक पकड़ो। कारीगरी जिसमें तुम्हारे यहाँ बढ़े, तुम्हारा रुपया तुम्हारे ही देश में रहै वह करो। देखो, जैसे हजार धारा होकर गंगा समुद्र में मिली हैं, वैसे ही तुम्हारी लक्ष्मी हजार तरह से इंगलैंड, फरासीस, जर्मनी, अमेरिका को जाती हैं। दीआसलाई ऐसी तुच्छ वस्तु भी वहीं से आती है। जरा अपने ही को देखो। तुम जिस मारकीन की धोती पहने हो वह अमेरिका की बिनी है। जिस लंकिलाट का तुम्हारा अंगा है वह इंगलैंड का है। फरासीस की बनी कंघी से तुम सिर झारते हो और वह जर्मनी की बनी चरबी की बत्ती तुम्हारे सामने बल रही है। यह तो वही मसल हुई कि एक बेफिकरे मँगनी का कपड़ा पहिनकर किसी महफिल में गए। कपड़े को पहिचान कर एक ने कहा, 'अजी यह अंगा फलाने का है'। दूसरा बोला, 'अजी टोपी भी फलाने की है।' तो उन्होंने हँसकर जवाब दिया कि, 'घर की तो मूछैं ही मूछैं हैं।' हाय अफसोस, तुम ऐसे हो गए कि अपने निज

ऐड्रेस

सभासद महाशय,

आज का दिन धन्य है कि हम लोग इस बलिया में भारतभूषण भारतेंदु श्री हरिश्चंद्र जी के स्वागत के निमित्त एकत्र हुए हैं। बलिया ऐसे सामान्य स्थान में एक ऐसे बड़े विद्वान और देश-शुभचिंतक का आगमन एक बड़े सौभाग्य और धन्यवाद का विषय है। ऐसे अवसर का उपस्थित होना बड़ा ही दुर्लभ है। मैं आर्य देशोपकारिणी सभा के ओर से, जो यहाँ बलिया इंस्टिट्यूट से एक पृथक् ही सभा है, श्रीमान् बाबू साहब को अनेकानेक धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने बलिया में इस अवसर पर बिराजमान होकर हम लोग का मनोर्थ सिद्ध किया और अपने मुख-चंद्र से अमृत की वर्षा करके हम बलिया-निवासी अनुरागियों का उत्साह बढ़ाया। श्रीकृपासागर जगदीश्वर से हम सब भारतवासियों की यही प्रार्थना है कि श्री बाबू साहेब सरीखे उत्साही गुणग्राही स्वदेशानुरागी उदार चरित सर्व प्रिय पुरुष को दीर्घायु करें और सदा इस दीन भारतवर्ष के हितसाधन में तत्पर रखे। आज हम श्रीमान् डी० टी० रॉबर्ट्स साहेब बहादुर को भी कोटि कोटि धन्यवाद देते हैं कि श्रीमान् ने इस कृपानुरागपूर्वक सभा में सुशोभित होकर हम लोगों को आदर दिया।
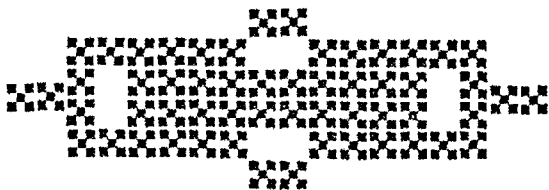
भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?

आज बड़े ही आनंद का दिन है कि इस छोटे से नगर बलिया में हम इतने मनुष्यों को बड़े उत्साह से एक स्थान पर देखते हैं। इस अभागे आलसी देश में जो कुछ हो जाय वही बहुत कुछ है। बनारस ऐसे ऐसे बड़े नगरों में जब कुछ नहीं होता तो यह हम क्यों न कहेंगे कि बलिया में जो कुछ हमने देखा वह बहुत ही प्रशंसा के योग्य है। इस उत्साह का मूल कारण जो हमने खोजा तो प्रगट हो गया कि इस देश के भाग्य से आजकल यहाँ सारा समाज ही ऐसा एकत्र है। जहाँ राबर्ट्स साहब बहादुर ऐसे कलेक्टर हों वहाँ क्यों न ऐसा समाज हो। जिस देश और काल में ईश्वर ने अकबर को उत्पन्न किया था उसी में अबुलफजल, बीरबल, टोडरमल को भी उत्पन्न किया। यहाँ राबर्ट्स साहब अकबर हैं तो मुंशी चतुर्भुजसहाय, मुंशी बिहारीलाल साहब आदि अबुलफजल और टोडरमल हैं। हमारे हिंदुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेंड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजिन ये सब नहीं चल सकतीं, वैसेही हिंदुस्तानी लोगों को कोई चलानेवाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए "का चुप साधि रहा बलवाना", फिर देखिए हनुमानजी को अपना बल कैसा याद आ जाता है। सो बल कौन दिलावै। या हिंदुस्तानी राजे-महराजे नवाब रईस या हाकिम। राजे-महाराजों को अपनी पूजा

गीत तीन प्रकार के हैं परंतु यह भेद प्रबंध हीके होते हैं। शुद्ध के एलादिक बीस भेद हैं, यथा एला, सोध्वभवा, पाट करण, पंच, तालेश्वर, कैरात, स्मर, चक्रपाल, विजया, गद्य, त्रिभंगी, ढेंकी, वर्णपुट, सर्गपुट, द्विपदिका, मुक्तावली, मातृका, लंब, दंडक और वर्त्तनी। इन गीतों के छ अंग हैं यथा पद, तान, विरुद, ताल, पाट और स्वर। ध्रुवक, मंडक प्रतिमंडक, निःसारक, वासक, प्रतिलाभ, एकतालिका, यति और झूमरी ये शालग के भेद हैं। चैत्र, मंगलक, नगनिका, चर्चा, अतिनाट, उन्नत्री, दोहा, बहुला, गुरुवला, गीता, गोवि, हेम्ना, कोपी, कारिका, त्रिपदिका और अधा ये संकीर्ण के भेद हैं। गीत प्रबंध में अक्षरों के मात्राशुद्धि पुनरुक्ति इत्यादि दोष नहीं होते। गाना बजाना सब दो प्रकार का होता है, एक ध्वन्यात्मक दूसरा रागात्मक। रागात्मक चार प्रकार के होते हैं, यथा स्वर प्रधान अर्थात् स्वर के आग्रह से जिसमें ताल की मुख्यता न रहै, दूसरा उभय प्रधान जिसमें ताल बराबर रहै और स्वर भी सुंदर हों, तीसरा शुद्धता प्रधान जिस में राग के शुद्ध रूप रहने का आग्रह हो चाहै माधुर्य हो चाहै न हो, चौथा माधुर्य प्रधान जिस में राग का शुद्ध रूप कुछ बिगड़ै तो बिगड़ै पर माधुर्य रहै।

स्वर—षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद ये सात हैं। मयूर, गऊ, बकरी, क्रौंच, कोकिल, अश्व और हाथी इनके शब्द में क्रम से पूर्वोक्त स्वर निकलते हैं। नासा, कंठ, उर, तालु, जिह्वा और दंत छ स्थान से जो उत्पन्न हो वह षड्ज, (ऋषीशगतौ) स्वर की गति नाभि से सिर तक पहुँचै इससे ऋषभ, गंधवाही वायु की नलिकाओं में वह स्वर पूर्ण हो इस से गांधार, फिर वह स्वर मध्य अर्थात् नाभि तक प्राप्त हो इस से मध्यम, (धयतिस्वरान् इति धैवत) मध्यम के आगे भी जो स्वरों को खींचै वह धैवत, पूर्वोक्त पाँचों सुरों को पूर्ण करै वा पंचम स्थान मूर्द्धा तक पहुँचे वह पंचम और (निषीदन्तिस्वरा अस्मिन् इति निषादः) स्वरों का जिस में विराम हो अर्थात् जिस से ऊँचा और कोई स्वर न हो वह निषाद। इन्हीं सातों सुरों के प्रथमाक्षर * से स रि ग म प ध नि ये सात स्वर वर्ण नियत हुए।

* 'ष' 'ऋ' के उच्चारण की सुगमता के हेतु 'स' 'रि' माना है।

वस्ती का छाता और आँखों में मूर्खता की पट्टी बँधी रहे उनपर ईश्वर का कोप ही कहना चाहिए।

मुझको मेरे मित्रों ने कहा था कि तुम इस विषय पर आज कुछ कहो कि हिंदुस्तान की कैसे उन्नति हो सकती है। भला इस विषय पर मैं और क्या कहूँ। भागवत में एक श्लोक है "नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरु कर्णधारं। मयाऽनुकूलेन नभः स्वतेरितुं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा।" भगवान कहते हैं कि पहले तो मनुष्य जनम ही बड़ा दुर्लभ है, सो मिला और उसपर गुरु की कृपा और मेरी अनुकूलता। इतना सामान पाकर भी जो मनुष्य इस संसार-सागर के पार न जाय उसको आत्म हत्यारा कहना चाहिए। वही दशा इस समय हिंदुस्तान की है। अंगरेजों के राज्य में सब प्रकार का सामान पाकर अवसर पाकर भी हम लोग जो इस समय पर उन्नति न करें तो हमारा केवल अभाग्य और परमेश्वर का कोप ही है। सास के अनुमोदन से एकांत रात में सूने रंगमहल में जाकर भी बहुत दिन से जिस प्रान से प्यारे परदेसी पति से मिलकर छाती ठंढी करने की इच्छा थी, उसका लाज से मुँह भी न देखे और बोले भी न, तो उसका अभाग्य ही है। वह तो कल फिर परदेश चला जायगा। वैसे ही अंगरेजों के राज्य में भी जो हम कूँए के मेंढ़क, काठ के उल्लू, पिंजड़े के गंगाराम ही रहें तो हमारी कमबख्त कमबख्ती फिर कमबख्ती है।

बहुत लोग यह कहेंगे कि हमको पेट के धंधे के मारे छुट्टी ही नहीं रहती बाबा, हम क्या उन्नति करें ? तुम्हारा पेट भरा है तुमको दून की सूझती है। यह कहना उनका बहुत भूल है। इंगलैंड का पेट भी कभी यों ही खाली था। उसने एक हाथ से अपना पेट भरा, दूसरे हाथ से उन्नति की राह के काँटों को साफ किया। क्या इंगलैंड में किसान, खेतवाले, गाड़ीवान, मजदूरे, कोचवान आदि नहीं हैं ? किसी देश में भी सभी पेट भरे हुए नहीं होते। किंतु वे लोग जहाँ खेत जोतते बोते हैं वहीं उसके साथ यह भी सोचते हैं कि ऐसी और कौन नई कल या मसाला बनावें जिसमें इस खेती में आगे से दूना अन्न उपजे। विलायत में गाड़ी के कोचवान भी अखबार पढ़ते हैं। जब मालिक उतरकर किसी दोस्त के यहाँ गया उसी समय कोचवान ने

बड़ारी और गड़ा यह वीर में, शेष शृंगाररस में गाना। वैसेही मालव, श्री, हिंडोल और मल्लार शृंगार में और वसंत और कर्णाट वीररस में गाना। यह पूर्वोक्त अन्य मत दक्षिण में प्रचलित है इधर नहीं। कहते हैं कि शिव, शारद, नारद और गंधर्व यह चार मत पृथक् हैं। इधर हनुमत् और भरत मत मिल के प्रचलित हैं। हनुमत् मत से प्रथम राग भैरव, उसका ध्यान महादेवजी की भाँति, उत्पत्ति शिवजी के मुख से, जाति उड़व अर्थात् धनिसगम, यह पंचस्वर, गृहधैवत, गाने का समय शरत्ऋतु में प्रातः काल, भैरवी, बंगाली, बगारी, मधुमाधवी और सिंधवी यह पाँच रागनी, हर्ष, तिलक, सूहा, पूरिया, माधव, बलनेह, मधु और पंचम ये आठ पुत्र। कलानाथ-मत से यह चतुर्थराग, इसकी भैरवी, गुर्जरी, भासा, विलावली, कर्णाटी और बड़हंसा यह छ रागिनी, देवशाख, ललित, मालकोस, विलावल, हर्ष, माधव, बलनेह, और मधु ये आठ पुत्र। सोमेश्वर-मत से भैरवी, गुनकली, देवा, गूजड़ि, बंगाली और बहुली ये छ रागिनी और गाने का समय ग्रीष्म। भरत-मत से ललिता, मधुमाधवी, वरारी, बाहाकली और भैरवी यह पाँच रागिनी, देवशाख, ललित, विलावल, हर्ष, माधव, बंगाल, विभास और पचम ये आठ पुत्र, सूहा, विलावली, सोरठी, कुंभारी, अंदाही, बहुलगूजरी, पटमंजरी, मिरवी यह आठ पुत्र-भार्या, मतांतर से भैरवी, बंगाली, वैरारी मध्यमा, मधुमाधवी और सिंधवी यह छ रागिनी, कोशक, अजयपाल, श्याम, खरताप, शुद्ध, और टोल यह छ पुत्र, अष्टी, रेवा, बहुला, सोहिनी, रामेली और सूहा यह छ पुत्रवधू। सब मतों से रागों का परस्पर भेद दिखाकर अब केवल प्रसिद्ध हनुमत् और भरत मत सब रागों का वर्णन करते हैं। मालकोस भरत मत से दूसरा राग है, विष्णु के कंठ से निकला है, संपूर्ण जाति, स्वर सातो सरिगमपधनि, गृह षड्ज स्वर, शरदृऋतु में पिछली रात को गाने का समय, ध्यान युवा गौर पुरुष, इसकी रागिनी हनुमत् मत से यथा—टोड़ी, गुनकली, गौरी, खंभावती और ककुभ, आठ पुत्र यथा मारू, मेवाड़, बड़हंस, प्रबल, चंद्रक, नंद, भ्रमर और खुखर। भरत मत से गौरी, दृशावती देवदाली, खंभावती और ककुभ रागिनी, और गांधार, शुद्ध, मकर, विछन, महाना, शक्रवल्लभ, माली

लोगों ने पहले ही से अंधा कर दिया था। संकेत यह हुआ कि जब गियासुद्दीन हूँ करे तब वह तावों पर बाण मारे। चंद कवि भी उसके साथ कैदी था। यह सामान देखकर उसने यह दोहा पढ़ा। "अबकी चढ़ी कमान, को जाने फिर कब चढ़ै। जिनि चुक्कै चौहान, इक्कै मारय इक्क सर ॥" उसका संकेत समझकर जब गियासुद्दीन ने हूँ किया तो पृथ्वीराज ने उसी को बाण मार दिया। वही बात अब है। अबकी चढ़ी, इस समय में सर्कार का राज्य पाकर और उन्नति का इतना सामान पाकर भी तुम लोग अपने को न सुधारो तो तुम्हीं रहो। और वह सुधारना भी ऐसा होना चाहिए कि सब बात में उन्नति हो। धर्म में, घर के काम में, बाहर के काम में, रोजगार में, शिष्टाचार में, चाल चलन में, शरीर के बल में, मन के बल में, समाज में, बालक में, युवा में, वृद्ध में, स्त्री में, पुरुष में, अमीर में, गरीब में, भारतवर्ष की सब अवस्था, सब जाति सब देश में उन्नति करो। सब ऐसी बातों को छोड़ो जो तुम्हारे इस पथ के कंटक हों, चाहे तुम्हें लोग निकम्मा कहें या नंगा कहें, कृस्तान कहें या भ्रष्ट कहें। तुम केवल अपने देश की दीनदशा को देखो और उनकी बात मत सुनो।

अपमानं पुरस्कृत्य मानं कृत्वा तु पृष्ठतः।
स्वकार्य्यं साधयेत् धीमान् कार्य्यध्वंसो हि मूर्खता ॥

जो लोग अपने को देशहितैषी लगाते हों वह अपने सुख को होम करके, अपने धन और मान का बलिदान करके कमर कस के उठो। देखादेखी थोड़े दिन में सब हो जायगा। अपनी खराबियों के मूल कारणों को खोजो। कोई धर्म की आड़ में, कोई देश की चाल की आड़ में, कोई सुख की आड़ में छिपे हैं। उन चोरों को वहाँ वहाँ से पकड़ पकड़ कर लाओ। उनको बाँध बाँध कर कैद करो। हम इससे बढ़कर क्या कहें कि जैसे तुम्हारे घर में कोई पुरुष व्यभिचार करने आवै तो जिस क्रोध से उसको पकड़कर मारोगे और जहाँ तक तुम्हारे में शक्ति होगी उसका सत्यानाश करोगे। उसी तरह इस समय जो जो बातें तुम्हारे उन्नति पथ में काँटा हों उनकी जड़ खोदकर फेंक दो। कुछ मत डरो। जब तक सौ दो सौ मनुष्य बदनाम न होंगे, जात से

तिलक, कान्हरा, स्तंभ, शंकराभरण, पुत्र-वधू यथा कर्नाटी, कादंबी, ककल्लनाट, पहाड़ी, माँझ, परज, नटभंजी, शुद्ध नट। यह छ रागों का वर्णन हुआ। अब और बातों का भी वर्णन करते हैं।

मूर्च्छना वह वस्तु है जो खरज से ऋषभ तक पहुँचने में जहाँ स्वर बदलैगा वहाँ लगै। यह तो हनुमत् मत से है। भरत मत से स्वरों के गान में गले का कँपाना मूर्च्छना है। और मतों से ग्राम का सातवें भाग का नाम मूर्च्छना है। षड्ज ग्राम की मूर्च्छना, यथा ललिता, मध्यमा, चित्रा, रोहिनी, मतंगजा, सौवीरा। मध्यम ग्राम की मूर्च्छना, यथा पञ्चमी, मत्सरी, मधु, मध्या, शुद्धा, अन्ता, कलावती और तीव्रा। गांधार ग्राम की मूर्च्छना ७ यथा रौद्री, ब्राह्मी, वैष्णवी, खेदरी, सुरा, नादावती और विशाला। इन्हीं मूर्च्छनाओं का जहाँ शेष में विस्तार होता है उन को तान कहते हैं। वे ४६ हैं। इन्हीं में स्वरों के मेल से कूटतान होती हैं। इन मूर्च्छनाओं के जनक तीन ग्राम हैं—षड्ज, मध्यम, गंधार। इन तीन ग्रामों में पूर्व दो पृथ्वी पर और अंत का स्वर्ग में गाया जाता है।

श्रुति वह वस्तु हैं जो स्वरों का आरंभ करती हैं और सूक्ष्मरूप से स्वरों में व्याप्त रहती हैं। ये ४ षड्ज में, ३ ऋषभ में, २ गांधार में, ४ मध्यम में, ४ पंचम में, ३ धैवत में, २ निषाद में, यही २२ श्रुति हैं। कोमल, अति कोमल, समान, तीव्र, तीव्रतर से रीति रागों में यथा रीति सुर बरते जाते हैं और जहाँ सूक्ष्म और स्फुट स्वर लगते हैं वहाँ काकली कहलाती हैं। लोगों का चित्त रंजन करते हैं इससे इन की राग संज्ञा है और जहाँ राग रागिनियों के ध्यान रूप किया आदि लिखे हैं, उनका आशय यह है कि वैसे अवसर पर वे राग योग्य होते हैं। जैसे भैरवी का ध्यान है कि स्वेत वस्त्रा सवेरे शिव पूजन करती है, तो जानो कि ऐसे ही सवेरे शिव-पूजन के अवसर में इसका गाना उत्तम है।

हमारे प्रबंध के पढ़नेवालों को एक ही रागिनी का नाम बारंबार कई रागों में देखकर आश्चर्य्य होगा। इसमें हमारा दोष नहीं, यह संगीत शास्त्र के प्रचार की न्यूनता से ग्रंथों में गड़बड़ हो गई है। कोई अन्वेषण करने वाला हुआ नहीं, जो ग्रंथकारों को मिला वा

में धर दिए। बस सभी तिथि व्रत और सभी स्थान तीर्थ हो गए। सो इन बातों को अब एक बेर आँख खोलकर देख और समझ लीजिए कि फलानी बात उन बुद्धिमान ऋषियों ने क्यों बनाई और उनमें देश और काल के जो अनुकूल और उपकारी हों उनको ग्रहण कीजिए। बहुत सी बातें जो समाज-विरुद्ध मानी हैं किंतु धर्मशास्त्रों में जिनका विधान है उनको चलाइए। जैसे जहाज का सफर, विधवा विवाह आदि। लड़कों को छोटेपन ही में ब्याह करके उनका बल, वीर्य, आयुष्य सब मत घटाइए। आप उनके माँ बाप हैं या उनके शत्रु हैं। वीर्य उनके शरीर में पुष्ट होने दीजिए, विद्या कुछ पढ़ लेने दीजिए, नोन, तेल, लकड़ी की फिक्र करने की बुद्धि सीख लेने दीजिए तब उनका पैर काठ में डालिए। कुलीन प्रथा, बहुविवाह को दूर कीजिए। लड़कियों को भी पढ़ाइए, किंतु उस चाल से नहीं जैसे आजकल पढ़ाई जाती हैं जिससे उपकार के बदले बुराई होती है। ऐसी चाल से उनको शिक्षा दीजिए कि वह अपना देश और कुलधर्म सीखें, पति की भक्ति करें और लड़कों को सहज में शिक्षा दें। वैष्णव शाक्त इत्यादि नाना प्रकार के मत के लोग आपस का वैर छोड़ दें। यह समय इन झगड़ों का नहीं। हिंदू, जैन, मुसलमान सब आपस में मिलिए। जाति में कोई चाहे ऊँचा हो चाहे नीचा हो सबका आदर कीजिए, जो जिस योग्य हो उसको वैसा मानिए। छोटी जाति के लोगों को तिरस्कार करके उनका जी मत तोड़िए। सब लोग आपस में मिलिए।

मुसलमान भाइयों को भी उचित है कि इस हिंदुस्तान में बसकर वे लोग हिंदुओं को नीचा समझना छोड़ दें। ठीक भाइयों की भाँति हिंदुओं से बरताव करें। ऐसी बात, जो हिंदुओं का जी दुखानेवाली हो, न करें। घर में आग लगै तब जिठानी-द्यौरानी को आपस का डाह छोड़कर एक साथ वह आग बुझानी चाहिए। जो बात हिंदुओं को नहीं मयस्सर हैं वह धर्म के प्रभाव से मुसलमानों को सहज प्राप्त हैं। उनमें जाति नहीं, खाने पीने में चौका चूल्हा नहीं, विलायत जाने में रोक टोक नहीं। फिर भी बड़े ही सोच की बात है, मुसलमानों ने अभी तक अपनी दशा कुछ नहीं सुधारी। अभी तक बहुतों को यही ज्ञान है कि

पुट में है, ऐसे ही सब तालों का प्रकार है। जहाँ मात्रा के काल अनुसार तान की समाप्ति होती है उस को सम कहते हैं। इन चौंसठ तालों के अतिरिक्त आठ अष्टताल, ग्यारह रुद्रताल, चार महाताल और चौदह इंद्रताल हैं। रुद्रताल का प्रथम भेद चौरविक्रम यथा एक मात्रा एक शून्य ऐसी तीन आवृत्ति फिर दो ताल यह चौरविक्रम हुआ। ऐसे ही सब ताल यथा मात्रानुसार जानो। आज कल प्रसिद्धताल चौताला, तिताला, एकताला, आड़ा, रूपक, झपताल इत्यादि हैं।

संगीत के पूर्वोक्त तीन भेद अर्थात् स्वर, राग और ताल गले के अतिरिक्त वाद्यों से भी संपादित होते हैं, अतएव अब वाद्यों का वर्णन करते हैं। वाजों के चार भेद हैं, यथा तत, सुशिर, आनद्ध और घन। नए मत से अर्थात् कालानुसार दो भेद और कर सकते हैं, यथा समष्टि और स्वयंवह। तार से जो बजैं वह तत यथा वीणादिक। फूंकने से बजैं वह सुशिर यथा वंशी इत्यादिक। चमड़े से मढ़े हों वह आनद्ध यथा मृदंगादिक। कांसादिक से जो ताल सूचक हों वह घन यथा झांझ आदिक। ये चारों वा तीन वा दो जिस में मिले हों वह समष्टि यथा हारमोनियम आदि और जो ताली इत्यादि से बजैं वह स्वयवह यथा अरगन आदि। ये सब वाद्य तीन भेद में विभक्त हैं यथा स्वर वाही, ताल वाही और उभय वाही। तम्बूरादिक स्वर वाही, झाँझ इत्यादि ताल वाही, वीणादिक उभय वाही। इन चारों में तत में वीणा, सुशिर में वंशी, आनद्ध में मृदंग और घन में ताल (झांझ) मुख्य हैं। तत यथा अलावुनी, ब्रह्मवीना, किन्नरी, लघुकिन्नरी, विपंची, वल्लकी, ज्येष्ठा, चित्रा, ज्योतिष्मती, जया, हस्तिका, कुब्जिका, कूर्मी, शारंगी, परिवादिनी, त्रिशरी, शतचंद्री, नकुलोष्ठी, टंसरी, उडम्बरी, पिनाकी, निबंध, तानपुर, स्वरोद, स्वरमंडल, स्वरसमुद्र, शुष्कल, रुद्र, गदावरण, हस्तक, विलास्य, मधुस्पन्दी और घोण इत्यादि। वीणा के तीन भेद हैं यथा वल्लकी, पंचतंत्री (विपंची) और परिवादिनी। ध्वनिमाला, रंगमल्ली, घोषवती, कंठकूजिका और विद्युत् ये वीणा ही के नामांतर हैं। वीणा के सात भेद और हैं यथा नारद की महती, शिव की लम्बी, सरस्वती की कच्छपी, तुंबरु की कलावती, विश्वावसु की बृहती और चांडालों की कंडील वीना अथवा चांडाली (इसका प्रयोजन शव क्रिया

के काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयो, अब तो नींद से चौंको, अपने देश की सब प्रकार उन्नति करो। जिसमें तुम्हारी भलाई हो वैसी ही किताब पढ़ो, वैसे ही खेल खेलो, वैसी ही बातचीत करो। परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो। अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।

अर्द्ध मर्दल, मर्दल खंड, ढलक, मुरज, ढक्का, पटह, विवक, दर्पवाद्य, पवन, घन, रुद्र, कलास, विकलास, टाकली, अर्द्धटाकली, जिलाट, कलिका, गो, मुद्री, अलावुज, लावज, त्रिवल्य, कट कमठ, भेरी, हुडुक्क, कुडुक, भनस, मुरल, भल्ली, टुकुली, दौंडिशान, डमरू, डुंडुर, टमुकिडुडु, कुंडली, स्तंक, अभिघट, रज, दुंदुभी, टूटुकी, दर्दुर, उपांग, खंजरीट और करचंग ये सब हैं। इन में मर्दल (मृदंग) श्रेष्ठ है। मर्दल खैर के काठ का अच्छा होता है। चमड़े की डोरी से मेरु संयुक्त कर के दोनों मुँह मढ़ा कर कसना। मढ़ने के पीछे छ महीने तक न वजाना। काठ का दल आध अंगुल मोटा हो और वाईं पूरी दस वा वारह अंगुल चौड़ी हो तथा दहिनी उस से एक वा आधी अंगुल छोटी हो। वाईं ओर तो पिसान की पूरी चिपकाना और दहिनी ओर खरली (खली) की पूरी लगा के सुखा देना। वह खग्ली—राख, गेरू, भात और कैंदुक (गालव, शायद भाषा में केंदुआ कहते हैं) की हो वा चिपीटक (चूड़ा ?) में जीवनीसत्व (?) मिला कर लगाना। मट्टी का हो तो मृदंग कहलाता है। इस में पाट, विधि पाट, कूटपाट और खंड पाट ये चार प्रकार के वर्ण हैं और यति, उड्व, अवच्छेद, गजर, रूपक, ध्रुव, गलप, सारिगोंनी, नाद, कथित, प्रहरन और वृंदन ये वारह प्रबंध हैं। घन में करताल, कांस्यताल, कम्बिका, जयघंटा, शुक्तिका, पटवाद्य, पट्टातोघ, घर्घर, दंदा, झंझा, मञ्जीर, कर्तरी, उंकुर, काष्ठताल, प्रस्तरताल, दंतताल, जलतरंग, तालतरंग, पात्रतरंग, त्रिकोण-घंटा, ढोलक इत्यादि हैं। घन के दो भेद हैं। अनुरक्त वह जिन में गीतों का अनुगमन हो और विरक्त वह जो केवल ताल दें। लड़ाई में वीरों का गर्जन और ये चार वाद्य वजते हैं, इससे लड़ाई की पंच-वाद्य संज्ञा है। यह वाद्यों का साधारण वर्णन हुआ। ऐसे ही अनगिनती वाद्य हैं, जो अब नाम मात्रावशेष हैं। उनके रंग रूप की किसी को खबर नहीं।

संगीत का चौथा अंग नृत्य है। ताल, मान, रस, भाव, हास, विलास, वाद्यादि संयुक्त अंग विक्षेप का नाम नृत्य, इस के दो भेद तालाश्रित नृत्य और भावाश्रित नृत्त। नृत्य मधुर हो तो लास्य और
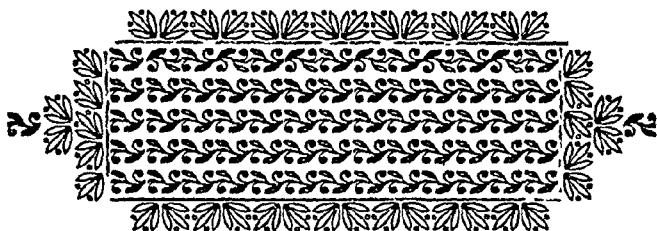
संगीत सार*

भारतवर्ष की सब विद्याओं के साथ यथाक्रम संगीत का भी लोप हो गया। यह गानशास्त्र हमारे यहाँ इतना आदरणीय है कि सामवेद के मंत्र मात्र गाए जाते हैं। हमारे यहाँ वरंच यह कहावत प्रसिद्ध है 'प्रथम नाद तब वेद'। अब भारतवर्ष का संपूर्ण संगीत केवल कजली ठुमरी पर आ रहा है। तथापि प्राचीन काल में यह शास्त्र कितना गंभीर था यह हम इस लेख में दिखलावेंगे।

गाना, बजाना, बताना और नाचना इस के समुच्चय को संगीत कहते हैं। प्राचीन काल में भरत, हनुमत्, कलनाथ और सोमेश्वर यह चार मत संगीत के थे। कोई कोई शारदा, शिव, हनुमत् और भरत यह चार मत कहते हैं। सात अध्याओं में यह शास्त्र बँटा है जैसे स्वर, राग, ताल, नृत्य, भाव, कोक और हस्त। सम्यक् प्रकार से जो गाया जाय उसे संगीत कहते हैं, धातु और मातु संयुक्त सब गीत होते हैं। नादात्मक धातु और अक्षरात्मक मातु कहलाते हैं। वह गीत यंत्र और गात्र विभाग से दो तरह के हैं। वीना वेनु इत्यादि से जो गाया जाय वह यंत्र और कंठ से जो गाया जाय वह गात्र गीत है। गीत निबद्ध और अनिबद्ध दो प्रकार के होते हैं, अक्षरों के नियम और गमक के नियम बिना अनिबद्ध और ताल मान गमक अक्षर रसादि के नियम सहित निबद्ध। शुद्ध, शालग और संकीर्ण के भेद से यह

* हरिश्चंद्र चंद्रिका सं० २ सं० ८-११ सन् १८७५ ई०।

वा दो वा तीन वा चारों साथ ही किए जाते हैं। भाव रसज्ञता जितनी विशेष होगी उतने ही अच्छे होंगे क्योंकि अनुभवगम्य हैं।

संगीत का छठा भेद कोक अर्थात् नायिका, नायक, रस, रसाभास, आलंबन, उद्दीपन, अलंकार, समय, समाज इत्यादि का ज्ञान कोक है। यह साहित्य ग्रंथों में सविस्तर वर्णित है इस से यहाँ नहीं लिखते। इसका जानना संगीत वाले को अवश्य क्योंकि भाव और नृत्य में इस के बिना काम नहीं चलता।

सातवाँ भेद हस्त है। नाचने गाने वा बताने में हाथ चलाना हस्त है। इसके दो भेद हैं, एक लयाश्रित दूसरा भावाश्रित। प्रायः यह नृत्य और भाव के अंतर्गत ही सा है, इस से कोई विशेषता नहीं।

पूर्वोक्त सातों अंग की समष्टि का नाम आदि संगीत-दामोदर, संगीत-कल्पतरु, संगीतसार इत्यादि ग्रंथों से चुनकर और अपनी जानकारी के अनुसार भी ये बातें यहाँ लिखी गई हैं। इसको लिखकर प्रकाश करने में हमारा कुछ प्रयोजन है। शास्त्र दो प्रकार के होते हैं-एक अदृष्टवाद दूसरे दृष्टवाद। अदृष्टवाद परलोक इत्यादि के मत में मनुष्य को तर्क छोड़ कर केवल शास्त्र अवलंबन करना चाहिए। दृष्टवाद में शास्त्रों के और बुद्धि के तथा अपने और दूसरों के अनुभव के अविरुद्ध जो बात हो वह माननी चाहिये। संगीत शास्त्र के और अपने मत के अविरुद्ध मनुष्य को बरतना उचित है। अब देखिए कि संगीत की क्या दशा हो रही है। कितनी रागिनियों का गाना कौन कहै किसी ने नाम भी नहीं सुना है। कितनी मत भेद से दो दो चार चार रागों की रागिनी हैं, यह क्या? केवल अंध परंपरा। हम यह पूछते हैं कि प्रथम गाने में चार मत होने ही का क्या प्रयोजन है? एक भैरव राग सारा संसार एक स्वर-क्रम और रीति से गावै, यदि कहीं मतों के भेद से चारों भैरव में भेद है तो उस में एक को भैरव सिद्ध रक्खो बाकी या तो किसी दूसरे राग में आप ही मिले निकलैंगे, यदि न मिले निकलैं, उन का दूसरा नाम रक्खो। ऐसे ही हजारों बातें हैं, कोई बँधा हुआ नियम नहीं। जितने इस विद्या के जानने वाले हैं, अपने अभिमान में मरा हैं। कोई ऐसा नियम नहीं कि जिस के अनुसार सब चलें। यही कारण है कि रागों के पत्थर पिघलने इत्यादि

षड्ज, पंचम और मध्यम में चार, ऋषभ-धैवत में तीन और गांधार-निषाद में दो श्रुति हैं। संपूर्ण स्वर सरिगमपधनि। खाड्व निषाद बिना अर्थात् सरिगमपध और उड़व ऋषभ और पंचम बिना अर्थात् सगमधनि। नाटवसंतादि संपूर्ण राग सातों सुर से, खाड्व राग छः सुर से और उड़व पाँच सुर से गाए जाते हैं। नाम के क्रम से रखने से इनका प्रस्तार होता है और नष्ट, उद्दिष्ट, मेरु, मर्कटी, पताका, सूची, सप्तसागर इत्यादि में इसका विस्तार होता है।

राग—जैसे रास में वंशी के सात रंध्रों से सात सुरों की उत्पत्ति मानते हैं वैसेही रास में १६०८ गोपियों के गाने से सोलह सौ आठ तरह के राग हैं, जो एक एक मुख्य से दो सौ अट्ठाईस तरह के होकर बने हैं। भरत और हनुमत् मत से छ राग भैरव, कौशिक (मालकोस), हिंदोल, दीपक, श्री और सोमेश्वर, और कलानाथ के मत से छ राग श्री, बसंत, पचम, भैरव, मेघ और नटनारायण। पूर्वमत में प्रत्येक राग को पाँच रागिनी, पर मत में छ रागिनी आठ पुत्र और एक एक पुत्र-भार्या। अन्य मत से मालव, मल्लार, श्री, वसंत, हिल्लाल और कर्णाट ये छ राग हैं। मालव की रागिनी धानसी, मालसी, रामकीरी, सिंधुड़ा, भैरवी और आसावरी। मल्लार की वेलावली, पूर्वी, कानड़ा, माधवी, कोंड़ा और केदारिका। श्री की गांधारी, शुभगा, गौरी, कौमारिका, वेलवारी, और वैरागी। वसंत की टोड़ी, पंचमी, ललिता, पटमञ्जरी, गुज्जरी और विभाषा। हिल्लोल की मायूरी, दीपिका, देशकारी, पाहिड़ा, वराडी और मोरहारी। कर्णाट की नाटिका, भूपाली, रामकली, गडा, कामोदा और कल्यानी। इन में बराड़ी, मायूरी, कोड़ा, वैरागी, धानुषी, वेलावली और मोरहारी मध्यान्ह को, गांधारी, दीपिका, कल्यानी, पूरबी, कान्हड़ा, शाखी, गौरी, केदारा, पाहड़ी, मालसी, नाटी, मायूरी, भूपाली और सिंधुड़ा साँझ को और बाकी सबेरे गाना। राग छओ तीसरे पहर से आधीरात तक। वर्षा में मल्लार और वसंतपंचमी से रामनवमी तक बसंत और वामन द्वादशी से विजय-दशमी तक मालसी यह समय नियत है। वेलावली, गांधारी, ललिता, पटमंजरी, वैरागी, मोरहाटी और पाहिड़ी (पहाड़ी) यह करुणा में, पूरबी, कान्हड़ा, गौरी, रामकीरी, दीपिका, आसावरी, विभाषा,

और कामोद पुत्र, धनाश्री, मालश्री, जयश्री, सुधवारी, दुर्गा, गांधारी, भीमपलासी और कामोद, आठ पुत्र भार्या। हिंदोल भरत मत से द्वितीय और हनुमत से तृतीय राग है, उत्पत्ति ब्रह्मा के शरीर से, जाति उड़व, स्वर सगमपध पाँच, गृह षड्ज, गान समय वसंत ऋतु दिन का प्रथम भाग, ध्यान स्वर्ण वर्ण हिंडोले पर झूलता हुआ। हनुमत् मत से रागिनी रामकली, देशाखी, ललिता, विलावली और पटमंजरी, पुत्र चंद्रबिंब, मंडल, शुभ, आनंद, विनोद, गौर प्रधान और विभास। भरत मत से रागिनी रामकली, मालावती, आशावरी, देवारी और गुनकली, पुत्र वसंत, मालव, मारू, कुशल, लंकादहन, वस्रार बंध, नागधुन और धवल, पुत्रवधू लीलावती, कैरवी, चैती, पारावती, पूरवी, तिरवरी, देवगिरि और सुरमती। दीपक हनुमत मत से दूसरा और भरत मत से चतुर्थराग, सूर्य के नेत्र से उत्पत्ति, जाति संपूर्ण, स्वर सरिगमपधनि सात, गृह षड्ज, गाने का समय ग्रीष्म का मध्यान्ह, हाथी पर सवार वीरवेष। हनुमत मत से रागिनी इसकी देसी, कामोद, केदार, कान्हरा और कर्नाटी, पुत्र कुंतल, कमल, कलिंग, चंपक, कुसुंभ; राम, लहिल और हिम्माल। श्री राग दोनों मतों से पाँचवाँ राग, जाति संपूर्ण, सात स्वर सरिगमपधनि, गृह षड्ज, समय हेमंत की संध्या, ध्यान सुंदर सिंहासनारूढ़ पुरुष। हनुमत् मत से रागिनी मालश्री, मारवा, धनाश्री, वसंत और आशावरी, पुत्र सिंधु, मालव, गौड़, गुनसागर, कुंभ, गंभीर, संकर और विहाग, भरत मत से रागिनी सिंधवी, काफी, देसी, विचित्रा और सोरठी, पुत्र श्री रमण, कोलाहल, सामंत, संकर, राकेश्वर, खट, बड़हंस और देसकार [मतांतर से हम्मीर और कल्याण भी], पुत्र-भार्या कुंभा, सोहनी, शारदा, छाया, शशिरेखा, सरस्वती, क्षमा और धैया। मेघ दोनों मत से छठा राग, ध्यान श्यामरंग, शोणित-खड्ग-हस्त, जाति उड़व, पंचस्वर यथा ध नि स रि ग, गृह धैवत, गान-समय वर्षा की रात्रि, रागिनी टंक, मदपारी, गूजरी, भूपाली और देशी, पुत्र जालंधर, सार, नटनारायन, शंकराभरण, कल्याण, गजधर, गांधार और सहान, भरत मत से पाँच रागिनी मलारी, मुलतानी, देसी, रतिवल्लभा और कावेरी, पुत्र यथा कलायर, वागेश्वरी, सहाना, पूरिया,

इसी से उस की याद में लुत्फ़ हासिल होता है। उपनिषद में एक जगह सब की ख़ुशी को मुकाबिला किया है। वह लिखते हैं कि ख़ुशी जिन्दगी का एक जुज़्व आज़म है और दुनिया में जितने मख़लूक़ात हैं सब ख़ुशी ही के वास्ते मख़लूक़ हैं। इसी सब खिलक़त में जानदारों की बनावट और लियाक़त के मुताबिक़ ख़ुशी बँटी हुई है; कीड़ा सिर्फ इस बात में ख़ुश होता है कि एक पत्ते पर से दूसरे पत्ते पर जाय, चिड़ियों की ख़ुशी का दर्जा इस से कुछ बढ़ा है याने इधर उधर परवाज़ करना बोलना वग़ैरः। इसी तरह अख़ीर में आदमी की ख़ुशी बनिस्बत और जानवरों के बहुत बढ़ी चढ़ी है। आदमियों में भी बनिस्बत बेवकूफों के समझदारों की ख़ुशी का दर्जः ऊँचा है। आदमियों की ख़ुशी से देवताओं की ख़ुशी बहुत ज्यादः है। इस लंबी चौड़ी तकरीर का खुलासा उन्होंने यह निकाला है कि सबसे ज्यादः और लतीफ़ परमेश्वर है। उस में कितना लुत्फ़ और ख़ुशी है जो हम लोग नहीं जान सकते। इसी से अगर हम लोगों को ख़ुशी और लुत्फ़ की तलाश है तो हम लोगों को उसी का भजन करना चाहिए।

इस के पहिले दुनियवी ख़ुशी का बयान किया जाय उस ख़ुशी का बयान आप लोग सुन लीजिए जो अब हम हिंदुओं को खास कर साकिनाने बनारस को मयस्सर हैं। सब से बड़ी ख़ुशी बेफ़िकरी है।

"अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम।
दास मलूका यों कहैं, कि सबके दाता राम" ॥

ऐसे ही खूब भाँग पीना, झन्नाटे इक्के पर सवार होकर बहरी ओर जाना, कभी २ कुछ गाना सुन लेना, बरसात के दिनों में अगर फोलनी दाना मयस्सर हो तो क्या बात है। अगर इस ख़ुशी का दर्जा बहुत बढ़ गया तो एक आध सैल हो गई कुछ खाना कुछ पीना कुछ नाच कुछ तमाशा हो गया और अगर यही ख़ुशी 'सिविलाइजड' की गई तो उसकी छोटी छोटी कुमेटियों या बर्फ की दावत से बदल दिया।

इस से मेरा यह मतलब नहीं है कि इन बातों में बिल्कुल ख़ुशी नहीं है। बेशक तफ़रीह में ख़ुशी है मगर उन्हीं लोगों को जो हमेशः बड़ी ख़ुशी की तलाश में रहते हैं और जो दुनियवी ख़ुशी के बयान में हम दिखावेंगे।

उन्होंने सुना लिख दिया। यह तो जब अपने गले वा हाथ से करता हो और ग्रंथों को भी जानता हो वह एक बेर निर्णय कर के लिखे तब यह सब ठीक हो जाय।

ताल। समय का सूक्ष्म से सूक्ष्म और बड़ा से बड़ा समान विभाग ताल है। विचार करके देखो तो छंदों की प्रवृत्ति भी ताल ही से होगी। एक गिरह की लकीर खींचो तो इस बिंदु से लकीर के उस बिंदु तक उंगली ले जाने में जो काल लगेगा वह ताल ठहरा और उसी गिरह भर के बाल बराबर मोटे जितने सूक्ष्म भाग हैं उनके प्रति भाग पर जो काल लगा वह भी ताल है। पर ऐसे सूक्ष्म और ऐसे गुरु जिन के बरताव में काल का स्मरण न रहै वह कुछ काम नहीं आते। सिद्धांत यह कि गाने के अनुकूल समय का विभाग ही ताल है। नृत्य, गान वा वाद्य को नियमित काल से उठाना, नियमित काल पर समाप्त करना। उसी नियमित काल को अनेक समान भागों पर बाँट देने की जो क्रिया है वह ताल है। महादेव जी के नृत्य तांडव और पार्वती जी के नृत्य लास्य का प्रथमाक्षर लेकर ताल शब्द बना है, वा तल नाम हाथ की हथेली वा पद-तल इस का भाव ताल है; क्योंकि प्रायः ताल विन्यास हाथ वा पैर ही से होता है। तालों के बनाने को चार मात्रा की कल्पना है, एक नियमित काल की मात्रा होती है। अर्द्ध मात्रा की द्रुत, एक मात्रा की लघु, दो मात्रा की गुरु और तीन मात्रा की प्लुत संज्ञा है। चंचत्पुट, चारुपुट इत्यादि साठ ताल के मुख्य और एकसौ एक गौण भेद संगीतदामोदर वाले शुभंकर ने किये हैं। इन चार मात्राओं पर अंगुल्यादि से संकेत करके ये ताल बनते हैं और इन्हीं मात्राओं को जहाँ बीच बीच में छोड़ देते हैं और काल के समाप्त का चिन्ह बीच में नहीं करते फिर दूसरे तीसरे इत्यादि पर चिन्ह करते हैं तो उस बीच में छूटे हुए काल में जहाँ नियमित मात्रा समाप्त होती है पर प्रगट नहीं की जाती उसे ख वा खाली कहते हैं। एक नियम काल कल्पित मात्रा के ताल समाप्त होने पर फिर से वही ताल आरंभ करने को इन दोनों की मित्रतासूचक जो बीच का एक नियमित समान काल है वह भी ख अर्थात् खाली कहलाता है। चचत्पुट ताल में दो गुरु एक लघु और एक प्लुत हैं, एक एक गुरु लघु और प्लुत चारु-

खुशी ख़ाह न ख़ाह ज़ायः हो जायगी। हाँ बिल्कुल तकलीफ़ के दूर हो जाने को हम बेशक खुशी कह सकते हैं और इसी सबब से खुशी हासिल करने का गोया यह वसूल है कि पहिले की तकलीफ को कोशिश की तकलीफ से बदलना और कामियाबी की खुशी से उसी कोशिश की तकलीफ को कामयाबी की खुशी से जायः कर देना। इसी से अगर खुशी की बतौर सरसरी के तहक़ीक़ात की जाय तो यह बात साबित होगी कि खुशी उस हालत का नाम है जिस में रंज का हिस्सा राहत से दब गया है। कैंट साहब का क़ौल है कि खुशी हमेशः तकलीफ़ का नतीजा है और इस की मिसाल मकान बनाने से साफ़ जाहिर है। यह बात हम लोगों की आदत में दाखिल है कि अपनी मौजूदः हालत को कभी नहीं पसंद करते और हमेशः अपनी हालत असली से बढ़ने की कोशिश करते हैं तकलीफ मौजूदः को दबा कर खुशी के हिस्से को बढ़ाया चाहते हैं। अगर हमारी खुशी हमेशः क़याम पजीर होती तो हम हालत मौजूदः से कहीं घटे हुए होते क्योंकि हमलोग किसी क़िस्म की कोशिश न करते और जिस का नतीजा यह होता कि कोई नई बात न जाहिर होती इसी से गोया उसी कारसाज़ हक़ीक़ी ने दुनिया की तरक्की के वास्ते यह क़ायदा मुकर्रर किया है कि आदमी पहिले जैसी तकलीफ़ उठावे पीछे से आराम हो और इसी बुनयाद पर आदमी को ख़ासियत भी ऐसी ही बनाई है। हाँ यह बात बेशक है कि किसी को कम तकलीफ है और किसी को ज्यादः और कोई उसे थोड़ी कोशिश में हासिल करता है और किसी को अपनी उम्र का एक बड़ा हिस्सा उस के हासिल करने में सर्फ़ करना होता है। इसी को तफरीह हम लोग कहते हैं कि यह आदमी खुश है और यह ज्यादः खुश है। इसी सबूतों से कहा जाता है कि खुशी खुद कोई चीज़ नहीं है बल्कि तकलीफ़ के उलटे अक्स का नाम खुशी और यही सबब है कि रंज और राहत लाजिम मल्जूम हैं। बल्कि इसी से हमेशः यह एक मुअइअन कायदा है कि कोई काम बग़ैर तकलीफ के शुरूअ नहीं होता।

सर विलियम हमिल्टन खुशी की तारीफ में फरमाते हैं कि खुशी खुद कोई चीज़ नहीं है बल्कि आदमी की खासियत या आदत

के समय पड़ता था)। वीणा के अंग को कोलंबिक, बंधन को उपनाह, दंड को प्रवाल, बगल के काठ को ककुभ और प्रसेवक और वंशशाला, काकलिका, कूनिका, मेरु इत्यादि और वस्तुओं को कहते हैं। सुशिर यथा वंशी, मुरली, वेणु (तीनों वंशी के भेद), पारी, मधुरी, तित्तरी, शंख, काहला, तोंमड़ी, निपंग, बुक्का, शृंगिका, मुखचंग, स्वरनाभि, आवर्त्ती, शृंग, कापालिका, चर्म्मवंश, स्वरनादी (सैनाई), वक्रगला, चर्म्मदेहा और गलस्वरा इत्यादि। वेणु रक्तचंदन, खैर, चंदन, स्वर्ण, चाँदी, तामा, लोहा और कठिन पाषाण का होता है परंतु बाँस का सब से उत्तम है। मतंग मुनि के मत से बाँसही का वेणु होता है। दस अंगुल का वेणु महानंद, इस के ब्रह्मा देवता, ग्यारह अंगुल का नंद इसके रुद्र देवता, बारह अंगुल का विजय इसके सूर्य्य देवता और चौदह अंगुल का जय इसके विष्णु देवता। वंशी की फूँक में निबिड़ता, प्रौढ़ता, सुस्वरता, शीघ्रता और मधुरता ये पाँच गुण हैं और सीत्कार-बाहुल्य, स्तब्ध, विस्वर, खंडित, लघु और अमधुर ये छ दोष हैं। तेरह और सत्रह अंगुल की वंशी नहीं बनाना इसमें आचार्य्यों ने दोष माना है। कानी उँगली जा सके इतना बीच का छेद (पोलापन) रहै, यह छेद आरपार रहै पर सिर की ओर किसी वस्तु से अवरुद्ध वा बंधनांतर संयुक्त रहै, सिरे से एक अंगुल वा दो अंगुल छोड़ कर स्वर का छेद करना, फिर पांच अंगुल छोड़ कर सात सुर के सात छेद आधे आधे अंगुल पर बेर के बीज के बराबर करै, दोनों ओर तार वा चर्म्मतार से वंशी को बाँधे और बीच में सिक्क [छींके] स्वर की मधुर और श्रुति उत्पन्न करने को लगावै। अयुक्ति बद्धयुक्ति और युक्ति [अर्थात् छिद्रों को बंद करना खोलना और उससे श्रुति लय तान इत्यादि किंचित् बंद करके निकालना] ये तीन अंगुलिक्रिया हैं और अकम्पत्व और सुस्वरत्व ये दो अंगुली के गुण हैं। गानेवालों को सहायता देना, स्थान देना, उन के दोष छिपाना और जिन स्वरों पर गला न पहुँचे वे स्वर निकालने ये चार इस में लाभ हैं। भगवान को तीन वंशी हैं यथा घर में बजाने की १२ अंगुल की मुरली संज्ञक, श्री गोपीजन को बुलाने की १८ अंगुल की वंशी संज्ञक और गउ बुलाने की एक हाथ की वेणु संज्ञक। इससे ज्ञात होता है, वेणु का प्रमाण एक हाथ तक है। आनद्ध में मर्दल,

जाय: होने वाली खुशी के तलबगारों को आख़ीर में इसी खुशी से उकता कर के गोशः नशीनी की तलाश होती है।

यही हम कह सकते हैं कि हर शख्स को अपने २ हौसल: और हिम्मत के मुआफ़िक़ ज्याद: ज्याद: खुशी मिलती है इस बयान से मेरा यह मतलब नहीं है कि बड़े मर्तबः के लोगों को ग़रीबों से ज्याद: खुशी होती है वल्कि उन ग़रीबों को जो कि अपनी हालत मे तो ग़रीब हैं मगर उन के हौसले बहुत बड़े हैं बनिसबत अमीरों के हमेश: ज्याद: खुशी हासिल होती है।

तवारीख से यह बात बखूबी साबित होती है कि बड़े बड़े फ़तह करने वाले पादशाह या शाहज़ादे बनिस्बत अवाम के हमेशः ज्याद: तर मुसीबतें झेलते रहे हैं और खुशी से यहाँ तक महरूम रहे हैं कि उन में से अक्सरों ने खुदकुशी की है और बहुतेरे घर बार छोड़ कर फ़क़ीर हो गये हैं। फ़ीजमानन शहंशाह रूस पर इस की मिसाल बहुत ठीक घटती है। बेशक दुनिया में वह सब से बड़ा और सब से ज्याद: खुशी से महरूम है। गरीब की एक जान हज़ार दुश्मन। वल्कि हमारे हाज़िरीन में से ज्याद: लोग ऐसे होंगे जो दर हक़ीक़त इस वक्त हमारे जनाब मुअल्ला अल्काब गर्दूं रकाब शहन्शाहे रूस दाम सल्तनतहू से बहुत ज्याद: खुशी होंगे।

इसी से हम कहते हैं कि खुशी से मर्त्तबः से कुछ वास्ता नहीं खुशी एक नेअ्मते उज़्मा है जिसे हर शख्स नहीं पाता। फारसी किताबों में मशहूर किस्सा है कि एक खुदापरस्त हमेशः परमेश्वर से अपने रंजों की शिकायत किया करता था। अल्लाह तअलाने उस की यह शिकायत रफ़अ करने को एक आईनः दिया और फरमाया कि इस आईनः में तू सब का दिल देख और जो इनसान तुझ को तेरी हालत से ज्याद: खुश मालूम हो उसका नाम बतला कि तेरी हालत वैसी ही कर दी जावे। इस शख्स ने एक एक के दिल का इम्तिहान किया और ज्यों ज्यों ज्याद: रुतबे के आदमियों का दिल देखा गया त्यों त्यों ज्याद:तर तक़लीफों से घेरा हुआ पाया। यहाँतक कि जब बादशाह के दिल के देखने की नौबत आई तब उस आईनः में सिवाय काले दागों के कुछ न बचा और उसने घबरा कर आईने को दरिया में फेंक दिया और अपनी असली

उत्कट हो तो तांडव कहलाता है। तांडव के पेरली और बहुरूप ये दो भेद हैं। जिसमें अंग बहुत चलें पर अभिनय थोड़ा हो वह पेरली, इसी की देशी भी संज्ञा है। जहाँ अभिनय बहुत हो और रूपांतर-धारण इत्यादि किया हो वह बहुरूप। लास्य के छुरित और यौवत दो भेद हैं। जहाँ नायिका-नायक रसपूर्वक भाव परस्पर दिखाते, चुंबन इत्यादि करते नृत्य करैं वह छुरित और जहाँ नटी वा नटी-वेषधारी सुंदर पुरुष नाचैं वह यौवत। हाथ-पैर-सिर-नेत्र का चलाना, मुड़ना, फिरना, भाव, कमर लचकाना, घुँघरू बजाना, गाना, वस्त्र उठाना और घूमना इन सब नृत्य के अंगों में जिसको अभ्यास न हो और जो सुंदर न हो वह न नाचे। अलागलाग, उरपतिरप, लगडाँट, लहाछेह, घट-बढ़ और संकोचन-प्रसारन ये नृत्य के काम हैं और शिव-नृत्य, मयूरनृत्य, रास नृत्य, कुक्कुटनृत्य, मण्डूकनृत्य, पलाकानृत्य, हंसनृत्य, कर्त्तकनृत्य, मण्डल-नृत्य, युगल-नृत्य, एकहाङ्ग-नृत्य, आलातचक्र, कलानृत्य इत्यादि नृत्य के और अनेक भेद हैं।

संगीत का पाँचवा अंग भाव है। निर्विकार चित्त में प्रीतम वा प्रिया के संयोग वा वियोग के सुख वा दुःख के अनुभाव से जो प्रथम विकार हो वह भाव है। उसी का अनुकरण नृत्य में करना भाव-क्रिया है। हँसना, रोना, उदास होना, प्रसन्न होना, व्याकुल होना, छकना, मत्त होना, बुलाना, प्रणाम करना इत्यादि क्रिया को गीत अर्थ के अनुसार प्रत्यक्ष दिखाना भाव है। भाव के चार भेद हैं, यथा स्वर, नेत्र, मुखाकृत और अंग। स्वर से दुःख, सुख इत्यादि का बोध कराना स्वर भाव है। यह बहुत कठिन है क्योंकि गाने के स्वरों का व्यत्यय न होकर भाव प्रगट हों यह कठिन बात है। नेत्र ही से सब बातों का बोध हो और अंग न चलैं, वह नेत्र भाव है। यह भी कठिन है पर तादृश नहीं परंतु इस में नेत्र ही से हँसी प्रगट करना वा अनायास आँसू बहाना कठिन काम हैं। मुख की चेष्टा ही से भाव प्रगट करना मुखाकृत भाव है, अर्थात् कोई अंग न हिलै, भौं-नेत्र इत्यादि यथा स्थान स्थित रहैं और भाव चेष्टा से प्रगट हो, यह भी बहुत कठिन है। अंग अर्थात् नेत्र हाथ इत्यादि अंगों से भाव बताना अंग भाव है। यह औरों की अपेक्षा सहज है। नृत्य वा गीत में इन में से एक

.खुशी नहीं कही जा सकती क्योंकि बहुत सी हाजतें ऐसी होती हैं जो महज गलत वसूलों पर कायम होती हैं। अकसर उलमा का कौल है कि .खुशी मुहब्बत में है। दुनिया में .खुदा ने मुहब्बत के सजावार भाई, जोरू, लड़के, रिश्तःदार और दोस्त वग़ैरः बहुतेरे बनाए हैं। अक्सर इन लोगों की अदममौजूदगी में .खुशी न हासिल होने से लोग फ़कीर हो जाते हैं या दुनिया में रहते हैं तो परेशान रहते हैं। चंद लोग दूसरों की हाजत रफ़अ करने को .खुशी कहते हैं क्योंकि दूसरे लोग .खुशी हासिल करने को जो कोशिश करते हैं उन को अपनी कोशिश में कामयाब बनाकर .खुश कर देना गोया उन की .खुशी में शरीक होना है।

बाज उलमा .खुशी हासिल करने की कोशिश ही को .खुशी कहते हैं मगर इस में मुश्किल यह है कि पहिले से उस कोशिश के अख़ीर नतीजे की कामयाबी को बखूबी जाँच कर लेना चाहिए। दूसरे जब तक कि उस काम का अंजाम बखूबी न हो जाय बराबर मुसतअ़दी की भी जुरूरत है। पेली का कौल है कि .खुशी जितनी अपने इरादों की मजबूती में है उतनी सिर्फ खयालात और कोशिश में नहीं। इस कौल की तसदीक़ बहुत साफ़ है। जो अपने इरादों पर मजबूत है वह हमेशः अपनी कामयाबी को अपनी आँखों के सामने देखता है और अगर ऐसा शख्स अपना काम पूरा किये हुए भी मर जाय तो उस को वही खुशी हासिल रहेगी जो कि कामयाबी पर हो सकती थी। वही मज़बूत की .खुशी हासिल करने के वास्ते काम के पीछे लगे रहना निहायत जुरूर है ख्वाह वह अपने फ़ायदे के वास्ते हों या आम फ़ायदे के वास्ते हों। अक़्लमंद लोग इसी काम में लगे रहने को दिल्लगी कहते हैं और यह वह दिल्लगी है जो आदमियों को अपने इरादों पर कामयाब करके .खुशी ही नहीं बख्शती है बल्कि रूहानी व जिस्मानी सिहत को भी कायम रखती हैं।

इन में .खुशी के चंद वसीले ऐसे हैं जिन का असर आदमी अपनी मौत के बाद भी छोड़ जा सकता है मसलन् मुल्की...की जमाअतों का क़ायम करना, स्कूल और शफ़ाखानों की बुनियाद डालना वग़ैरः वग़ैरः।

प्रभाव लोप हो गए। हा ! किसी काल में इस शास्त्र का ऐसा कठिन नियम था कि पुराणों में बराबर लिखा है कि ब्रह्मा ने अमुक गंधर्व को ताल से वा स्वर से चूकने से यह शाप दिया, शिवजी ने यह शाप दिया, इंद्र ने यह शाप दिया, वही संगीत शास्त्र अब है कि कोई नियम नहीं। शास्त्र अखिल सब डूब गए। कुछ जैनों ने नाश किये, कुछ मुसल्मानों ने। मुसलमानों में अकबर और मुहम्मदशाह को इसका ध्यान भी हुआ तो बड़े बड़े गवैये मुसलमान बनाए गए, जिस से हिंदुओं का जी और भी रहा सहा टूट गया। चलिये सब विद्या मिट्टी में मिली। इसमें मुख्य कारण यही हुआ कि केवल गुरुमुख-श्रुति पर यह विद्या रही। किसी ने कभी इस को ऐसी सुगम रीति पर न लिखा कि उसे देखकर वही काम दूसरे कर सकें। धन्य ! राजा यतींद्रमोहन ठाकुर और शौरींद्रमोहन ठाकुर, जिन्हों ने इस काल में इस विद्या की बड़ी ही वृद्धि की। श्रीक्षेत्रमोहन गोस्वामी ने इस विषय में नियम भी बनाए हैं और बाबू कृष्णधन बानुर्जी ने एक सितार-शिक्षा भी छपवाई है। उधर के लोगों ने इस विषय में बहुत कुछ किया है पर इधर अभी कुछ नहीं हुआ। हमारे काशी के बाबू महेशचंद्र देव ने सितार, बीन और तानपूरा बनाने में जैसे परिश्रम करके खूँटी, तूमा, इत्यादि में नई उपयोगी बात निकाली हैं वैसेही और सब जानकार लोग मिलकर एक बेर इस लुप्त हुए शास्त्र का भली भाँति मंथन करके इसकी एक सनियम उज्ज्वल परिपाटी बना डालें। नहीं तो यह शास्त्र कुछ दिन में लोप हो जायगा। और हमारे हिंदुस्तानी अमीरों को चाहिए कि वारवधू के मुखचंद्र के सुंदरताही पर इस विद्या की इति श्री न करें, कुछ आगे भी बढ़ें। हमने इसमें जो बातें लिखी हैं उनको सबके खंडन मंडन पूर्वक निर्णय करने के वास्ते यहाँ प्रकाश करते हैं। जो लोग जानकार हैं वे आनंद से जो इसमें अयोग्य हो उसका खंडन करें, जो बात हमारे समझ में न आई हो उसे समझावें और जो योग्य हो उसका अनुमोदन करें। इस विषय में जो कोई पत्र भेजैगा उसे हम बड़े आनंदपूर्वक प्रकाश करेंगे। आशा है कि हमारा परिश्रम व्यर्थ न जायगा और इस विद्या के रसिक लोग हमारी बिनती के अनुसार इसके उद्धार का उपाय शीघ्र ही करेंगे।

उस क़िस्म की बेफ़िक्री से न पैदा हो जिस से कि तमाम कोशिश और हौसले पस्त हो जांय जैसा कि हमारे हज़रात बनारस की .खुशी है।

हम पहिले कह चुके हैं कि सच्ची .खुशी के लिये लियाक़त की ज़ुरूरत है मगर इस लियाक़त के साथ दुनियवी तहज़ीब और दीनी ईमानदारी की भी निहायत ज़ुरूरत है। अक्सर लोगों को बहुत सी ऐसी बातों में .खुशी हासिल होती है जो दर हक़ीक़त ईमान, तहज़ीब, आक़बत, आबरू, बल्कि जान, माल और जिस्मी आराम को भी गारत करनेवाले होते हैं। तो क्या हम ऐसी .खुशी को भी अस्ली .खुशी कहेंगे? मसलन् मूज़ी को ईज़ारसानी में, बदकार को बदी में, क़िमारबाज़ को जुए में और ऐसे ही बहुत सी बातों में ख़ुशी मान ली जाती है जो हिकमतन्, शरहन् और यक़ीनन, हर सूरत से सिवाय ज़रर के फ़ायदा नहीं पहुँचाती। इस सूरत में तो बल्कि यह सोचना लाज़िम आता है कि ऐसी खुशियों के नज़दीक भी न जाय क्योंकि जब कोई शय तुम्हारी अक़्ल पर ग़ालिब आ जाय तो तुम नशे के आलम की तरह, अपने हवास पर काबू न रख कर झूठी ख़ुशी की तलाश में ज़ाहिरी लज़्ज़त के धोखे से ज़हर का प्याला पी जाओगे। हक़ीक़ी खुशी वही है जिसका अंजाम व आग़ाज़ दोनों खुश है। अस्ली खुशी मुफ़रह दिल से रंज का नाम यक़क़लम हटा देती है और तमाम जिस्म को, हवा से ख़मूसः को और जान को ऐसी राहत देती है कि उस हालत महवीयत में उसी सामाने खुशी की निस्बत हर लहज़ः में दिल नई नई उलफ़तें और नए नए शौक़ पैदा करता है। इस कैफ़ियत का ठीक ठीक जाहिर करना ज़बान की क़ूव्वत से बाहर है इस से तज्रिबःकार लोगों के क़यास ही पर छोड़ दिया जाता है।

पेली ने लिखा है कि खुशी तहज़ीब वाक़ियः जमाअतों की मुतफ़र्रिक़ लोगों में क़रीब क़रीब बराबर हिस्सों में बँटी है और इसी से बुराई करने वाला हमेशः बमुक़ाबलः ईमानदार दुनियवी खुशी से भी महरूम रहता है, खुशी से ग़म को अलाहिदः करने के लिये एक ख़ास क़िस्म की लियाक़त की ज़ुरूरत होती है जो हर शख़्स में नहीं पाई जाती इसी से ख़ालिस खुशी का लुत्फ़ हर शख़्स को नसीब नहीं होता। दुनिया में तकलीफ़ भी जब अपनी हद को पहुँचती है ख़ुशी का मज़ा चखाती

खुशी

हम दिलख्वाह आसूदगी को खुशी कह सकते हैं यानी जो हमारे दिल की ख्वाहिश हो वह कोशिश करने से या इत्तिफ़ाक़िया बग़ैर कोशिश किये बर आवे तो हम को खुशी हासिल होती है। खुशी ज़िन्दगी के फल को कहते हैं, अगर खुशी नहीं है तो ज़िन्दगी हराम है क्योंकि जहाँ तक ख्याल किया जाता है मालूम होता है कि इस दुनिया में भी तमाम ज़िन्दगी का नतीजा खुशी है।

इसी खुशी के हम तीन दर्जे क़ायम कर सकते हैं यानी आराम, खुशी और लुत्फ़—आराम वह हालत है जिस में तकलीफ़ का एक हिस्सा या बिल्कुल तकलीफ़ रफ़ा हो जावे। खुशी वह हालत है जिस में आराम का हिस्सा तकलीफ़ के मेक़दार से ज्यादः हो जाय। और लुत्फ़ वह हालत है जिसमें तकलीफ़ का नाम भी न बाक़ी रहे।

खुशी तीन किस्मों में बंटी है यानी दीनी खुशी, दुनियावी खुशी और ग़लत खुशी।

दीनी खुशी अपने अपने मज़हब के अक़ीदे के मुताबिक़ कुछ कुछ अलग है मगर नतीजा सबका एक ही है यानी इलात दुनियवी से छुट कर हमेशः के वास्ते परमेश्वर की कुर्बत मयस्सर होनी ही असली खुशी है। हम लोगों में परमेश्वर का नाम सत् चित आनंद है और हम लोगों के नेक अक़ीदे के मुताबिक़ परमेश्वर का नाम रूप सब बिल्कुल लतीफ़ है

फ़ाजिलों का इहकाम शरञ्ज़ी में दखल दर माक़ूलात करना है जिन के कलाम पर आपने अपनी नातजूर्बःकारी से पूरा अमल कर लिया है। इन फ़ुजला ने अपनी कम हिम्मती की वजह से ऐसे क़ायदे जारी किये जिन से आखिरकार हम लोगों की यह तर्स के लायक़ हालत पहुँची कि हम लोग उस खुशी को जो फ़ी जमाना गैर कौमों को हासिल है कभी ख्वाबोखयाल में भी नहीं ला सकते। इन फ़िलासफ़रों के फ़िलासफ़ी का इत्र निकाल कर जिन बातों को हमारे आराम के लिये ज़रूरी बल्कि हमारी नजात का मूजिब ठहराया है वे अगर इस नजर से देखे जावें जिस से हम खुशी को अब असली हालत पर गैर कौमों में बतलाते हैं तो साफ जाहिर होगा कि इन्हीं की तअलीम का यह फल है कि परमेश्वर ने इन बेचारे हिंदुओं को इस सच्ची खुशी से महरूम रख कर इन के हिस्से से अपनी एक दूसरी प्यारी खिलकत की गोद भरदी है जहाँ कि हर एक की उम्र का जाम खुशी से लबालब नजर आता है, इन क़दीम जमाने के फ़िलासफ़रों के उसूल की बहस बहुत तूल है और इसी तरह उसको सिलसिलेवार दलीलों से रद करने के लिये भी बड़ी गुंजाइश चाहिये इस लिये यहाँ सिर्फ उन पुराने खयालों का खुलासा दिखलाया जाता है कि किस तरीके पर उन्हों ने अपनी उस अनोखी खुशी की बुनियाद क़ायम की है और वह इस तरक़्क़ीयाफ्तः जमाने के आक़िलों के क़ौलो फेअ्ल के नज़दीक कितनी हेच है।

इन उलमा की खुशी का पहिला तरीक़ा सन्तोष यानी कनाअत है। उन्हों ने अपनी पेचीदः इबारत के बेमानी मजमून में जिस का हर फ़िक़रा अब हदीस गिना जाता है आखीर को यह साबित किया है कि खुशी व रंज दोनों गलत और वहम हैं यानी रंज और राहत से अलहदः वह हालत जिस में अक़्ल, खयाल, हवास और हरकत (शायद सकते की बीमारी की हालत) सब सलफ़ हो जावें वही परमानंद है और वही खुशी का असलुल्‌वसूल और लुब्बे लबाब है। आदमी को इस हालत तक पहुँचने के लिये उन लोगों ने चंद क़ायदे भी ईजाद फ़रमाये हैं जिन में अव्वल उन के कलाम पर बिला हुज्जत यक़ीन लाना हर्गिज हर्गिज दलील और अक़्ल को दखल न देना। दूसरे उसी ग़ारतगर सन्तोष को इख्त्यार करना और ख्वाहिश व हाजतों को दिल में

जिन की तबीयत तहक़ीक़ात की तरफ रुजू.अ है और जो लोग हर शय और हर फेल का सबब और नतीजा दरयाफ्त करने की ख्वाहिश रखते हैं और यह भी जानना चाहते हैं कि इस दुनिया में जिन्दगी की हालत में इंसान को किस चीज़ की ज्याद: ज़ुरूरत है उन पर यह बात बखूबी रौशन होगी कि इस किस्म के खयालों को तहज़ीब के कायदों के पैरौ रह कर दलीलों से सुलझाने में और बसबूत कामिल इस अम्र का तस्फिय: करने में कैसे वक्त दरपेश होते हैं। चुनांचे जब हम खयाल करते हैं कि दुनिया में हम को किस खास चीज़ की जरूरत और वह जरूरत लाबुदी क्यों है तो दिल में मुखतलिफ वजूहात के साथ कई क़िस्म के खयाल पैदा होते हैं और मुखतलिफ हाजतों के रफ.अ करने की मुखतलिफ सूरतें दरपेश आती हैं मगर इस मौक़ा.अ पर हम रूह की उस खास हाजत का जिक्र करेंगे जिसे जिन्दगी का वसूल और अक्ल का नतीजा कहना चाहिये याने खुशी। यह वह चीज़ है जिसके हासिल करने की कोशिश हम पर उतनी ही लाजिम है जितना उस के तहसील के तरीक़ों के मालूम करने की भी ज़ुरूरत है। इसी से इस लाज़िम मल्जूम जरूरत की कैफ़ियत को हम खुशी के नाम से पुकारते हैं। अब यह सवाल पैदा हुआ कि हमारी जिन्दगी के वसूल का यह लतीफ हिस्सा याने खुशी क्या चीज़ है और क्यों कर हासिल हो सकती है। इस सवाल का जवाब अकसर बड़े बड़े आलिमों ने अपने अपने तौर पर दिया है जिन सभों को इख्तिसार से पहिले बयान कर के तब जो कुछ होगा हम अपनी राय जाहिर करेंगे। मशहूर फिलासफर पेली का क़ौल है कि खुशी दिल की वह हालत है कि जिस में तअ़दाद राहत की रंज से ज्यादा बढ़ जाय। खुशी की शुरूअ हालत ख्वाहिश के मुताबिक काम शुरूअ करना, बाद अज़आं और कामियाब होता है वह काम चाहे किसी किस्म का क्यों न हो मसलन् इल्म व हुनर सीखना, मुल्क फ़तह करना, बाग लगाना, गाना, खाना वगैर: वगैर: इसी खुशी के हासिल करने के वास्ते पहिले हम लोगों को चन्द दर चंद तकलीफें इन कामों में कामयाब होने को उठानी पड़ती हैं। मुमकिन है कि बगैर खुशी हासिल होने तकलीफ रफ़अ हो जाय मगर जब तकलीफ होगी तब

या उसके बढ़ाने में खुशी नहीं दिखलाती उस वक्त भी अगर इस कंबख्त संतोप का गुजर न हुआ होय तो दूसरों को खुशी पहुँचाने से इंसान खुशी हासिल कर सकता है। क्योंकि हिकमत से यह साबित है कि खुशी का बदला खुशी और रंज का बदला रंज मिलता है। यह बात ज़ाहिर है कि तरक्की और क़नाअत से ज़िद है और जब तरक्की मौक़ूफ़ हुई तो ज़माना ज़ुरूर तनज्ज़ुली पहुँचाएगा।

जब हम देखते हैं कि हमारे हर चहार तरफ़ हर कौम के लोग बाजी लगा लगा कर और जान लड़ा कर दौड़ रहे हैं और अपनी २ मुस्तअदी और कूवत के जोर से तरक्की के बुकचे लूट कर मालामाल हुए जाते हैं तब किस तरह दिल क़ुबूल कर सकता है कि हम कनाअत के टुकड़े तोड़ कर पेट भरें और मुहताजी के जहन्नुम को खुशी से क़ुबूल करें। अलबत्तः लाचारी की हालत में सब्र उस वक्त तक काम दे सकता है कि जब तक हम अपनी हालत बदलने की दूसरी सूरत न पैदा कर सकें। तीसरे कायदे की निसबत यह कहना है कि सख्ती के बरदाश्त करने की आदत उसी कनाअत से दिल बुझे जाने और पित्ता मर जाने के बाद खुद बखुद पैदा होती है, उस वक्त ग़ैरत जो इंसान को हैवान से अलहदः करनेवाली चीज है गुम हो जाती है और जब यह इंसान का उमदः जेवर खो गया तो खुशी का सिर्फ़ नाम याद रह सकता है। बरदाश्त सिर्फ दुश्मन की ताकत घटा कर हिकमतें अमली से उस पर ग़ालिब आने का मौक़अ पाने के लिये है न कि हमेशः के लिए गुलामी इख्तियार करने के। चौथे कायदे की तअलीम में खुशी और रंज का फ़र्क ही न बाकी रक्खा कि एक के हासिल करने और दूसरे के रफ़अ करने की ज़ुरूरत होती। उस अनूठे कारीगर ने अपने कारीगरी की बारीकी जानने के लिये जो कुछ हमें तमीज़ बख्शा है उस से हम दम पर दम नए तिलस्मात का भेद जानते जाते हैं जिस से हमारे दिल का अँधेरा खुद बखुद दूर होता है और हमारी आँखों के सामने वह बातें दिखलाई पड़ती हैं जिस के बग़ैर हम किसी चीज़ की पूरी पूरी कद्र नहीं कर सकते। ज़ाहिर है कि जब हम कद्र ही नहीं कर सकते तो हमें न उस के हासिल होने की ख्वाहिश होगी न हासिल होने पर खुशी होगी। हर शख्स इसकी वजह खुद दरयाफ्त कर सकता है कि

को जब कोई रुकावट नहीं होती तो यही हालत ख़ुशी की कहलाती है।

इन आलिमों की राय पर बहस न कर के अब हम ख़ुशी के लफ्ज़ को भी कुछ बयान किया चाहते हैं। ख़ुशी एक नाम है जो आराम को याने ख्वाहिशों के पूरे होने की और तकलीफों की हालत को कहते हैं और इस ऊपर के लफ्ज़ी बयान से भी साबित हुआ कि ख़ुशी एक ऐसा लफ्ज़ है जो हमेशा तकलीफ़ के मुक़ाबले में मुस्तअमल होता है।

बहुत लोगों का ख्याल है कि ख़ुशी से इल्म से कुछ इलाक़ा नहीं है बल्कि यह एक ख़सलत जबली है जो इनसान और हैवान दोनों में बराबर होती है। मगर यह बात नहीं है क्योंकि इस क़िस्म की हैवानी ख़ुशी मे आलिम लोगों की ख़ुशी से क्या फ़र्क़ है यह जिनको कुछ भी शऊर है बख़ूबी जान सकते हैं और इसीसे कहा जा सकता है कि मिस्ल हैवानों के जो ख़ुशी है वह झूठी ख़ुशी है और जो ख़ुशी के दर्जः से बढ़ी हुई है वह बड़ी ख़ुशी है बल्कि ख़ुदापरस्त लोग इसी वास्ते इन दोनों ख़ुशियों से बढ़ कर के एक ख़ुशी ऐसी मानते हैं जिसकी कोशिश में दुनियवी ख़ुशियों को भी तर्क कर देना होता है।

यह हर शख्स जानता है कि बार बार इस्तअमाल करने से कैसी भी ख़ुशी क्यों न हो ज़ायः हो जायगी बल्कि ऐसी हालत में उसी ख़ुशी का नाम बदल कर आदत है। यही सबब है कि अय्याश लोग अकसर ग़मगीन देखे गये हैं क्योंकि पहिले जिस ख़ुशी को उन्होंने बड़ी कोशिश से हासिल किया था अब वह उनका रोज़मर्रः हो गया और हवस कम न हुई पस जब वह रोज़ अपनी औक़ात, ताक़त इज्ज़त और रुपया सर्फ़ करते हैं मगर हज़ नहीं हासिल होता तो ग़मगीन होते हैं। इसी क़िस्म से खाना, पीना, नाच, रंग वग़ैरह की ख़ुशी भी जल्द ज़ायः हो जाती है मगर हाँ शिकार वग़ैरः की ख़ुशी का दर्जः कुछ इस से बड़ा है और इसी तरह वह ख़ुशी जो सनअत सीखने से हासिल होती है मसलन रंगराजी, इल्म मुसीक़ी, कारीगरी वग़ैरः ऊपर बयान की हुई ख़ुशियों से ज्यादः देरपा है क्योंकि गुंजाइश के सबब से यह ख़ुशी जल्दी ज़ायः नहीं होती और इसी से जल्द

फ़नून की चाह, बे गरज दोस्ती और उस की शर्तों की पाबन्दी, तहज़ीब की कैद, सफाई, कद्रदानी, खुदा का खौफ और मजहब का रस्म और दूरंदेशी के सिवाय खुशी की बुनयाद, औरतों की लियाकत और इरादे, ऐसी ही बहुत सी बातें हैं जो उन कौमों को खुदा ने बख्शी और हम उन से महरूम हैं। खुशी तो इन सिफ़तों की गुलाम है मुम्किन है कि जहाँ यह सिफतें मौजूद हों खुशी खुद बखुद वक्तः न हाज़िर हो। मगर बरखिलाफ इस के हमारे पास जो सामान हैं रंज के हैं यानी बे इखतियारी, दीनी और दुनियवी कायदों का एक होना, ना तजरिबः कार बुजुर्गों की बात पर अमल करना, मजहब के उन फ़ुजूल उकायद की पाबन्दी जिन से दर हकीकत मजहब से कोई इलाका नहीं है, अपने हसब व नसब का भूल जाना, हमदर्दी का दिल से गुम होने, तरीकः तालीम के वसूलों का पस्त होना, अपनी पाबन्दियों से मुल्क की आबो-हवा को बिगाड़ कर तंदरुस्ती में फर्क डालना, तकलीफ ही को सवाब और आराम का मूजिब समझना, दौलत का हमेशः बाहर जाना और कार के उम्दः वसीलों का जायः होना, मुख्तलिफ़ मजाहिब की पाबंदी से दिलों का न होना। एक और सबसे बड़ी बात उस परमेश्वर का हम लोगों से नाराज रहना। ऐसी ही बहुत सी बातें हैं जिन से हम हिंदुओं को अब ख्वाब में भी खुशी नसीब नहीं है कि जिन में से एक एक तहकीकात और बयान के वास्ते अलग अलग किताबें लिखी जायँ तो भी काफी न हो।

—:※:—

हालत पर खुदा का शुक्र किया। इस कहने से मेरा यह मतलब नहीं है कि आदमी अपने हौसलों को पस्त करदे और कहे पादशाह होना न चाहिए बल्कि हमेशः अपने हौसले को बढ़ा कर कामयाब होता रहे मगर बाद कामयाबी के अपनी हालत ऐसी न परेशान रक्खे जिस से अपनी कोशिशों का सुख भोगने के बदले उसे रात दिन दुख उठाना पड़े हमेशः हुकुमा जब अमीरों से उन के तरद्दुदात की शिकायत करते हैं तो उन को रहम की नजर से देखते हैं मगर वे उमरा अपने से छोटे दर्जे वालों को कभी रहम की नज़र से नहीं देखते बल्कि हिक़ारत की। इस का यही सबब है कि उलमा अपनी कोशिश से कामयाब होकर खुशी के दर्जे को पहुँच गये हैं और किसी क़िस्म के तरद्दुद बाकी न रहने से वह दूसरों की मदद में अपने औक़ात सर्फ कर सकते हैं। बरख़िलाफ़ इस के उमरा अपनी कोशिशों की नाकामयाबी से दूसरों पर हमेशः हसद किया करते हैं। मतबे का खासफ़ायदा ऊँचा हौसला और बड़ी बड़ी खुशियों में शामिल रहने का ख़याल है और यह वह खुशियाँ है जो हर हालत में एक सूं रहती हैं। और इन ख़ुशियों का नतीजा यह होता है कि आसूदः लोग अपने कौम वतन और दुनिया की तरक्क़ी की तदाबीर के हौसले का मौक़अ़ पाते हैं। बरखिलाफ़ इस के हैवानी खुशी के जोयाँ उमरा आपस में दुश्मनी बढ़ाये, हसद फैलाये बग़ैर हज़ जिंदगी उठाये अपनी जिंदगी मुफ्त बरबाद करते हैं।

मेरे ऊपर के बयान से आप लोगों पर जाहिर हो गया होगा कि ख़ुशी इमारत पर मुनहसिर नहीं बल्कि एक खुदादाद चीज़ है। अब मैं बयान करता हूँ कि ख़ुशी किस चीज़ में है। अब इस के हासिल करने की और बादहू उस के कायम रखने की तदबीर सोचनी ज़ुरूर हुई। ख़ुशी हासिल करने का तरीका जानने के लिये सब के पहिले लियाक़त की ज़ुरूरत है। बहुत सी ऐसी हालतें हैं जिन में ख़ुशी हासिल करने की कोशिश की जाती है मगर उस का नतीजा उलटा होता है और अकसर रंज के मौक़ों में यकायक ख़ुशी हासिल हो जाती है इसी से ख़ुशी हासिल करने की खास तदबीरों का बयान करना मुश्किल है। सिर्फ अपनी हाजतों को पूरा करना

करूँगा और सब लोग अपनी मंडली में गानेवालों को यह पुस्तक दें। जो लोग धनिक हैं वह नियम करें कि जो गुणी इन गीतों को गावेगा उसी का वे लोग गाना सुनेंगे। स्त्रियों को भी ऐसे ही गीतों पर रुचि बढ़ाई जाय और उनको ऐसे गीतों के गाने का अभिनंदन किया जाय। ऐसी पुस्तकें या बिना मूल्य वितरण की जायँ या इनका मूल्य अति स्वल्प रक्खा जाय। जिन लोगों को ग्रामीणों से संबंध है वे गाँव में ऐसी पुस्तकें भेज दें। जहाँ कहीं ऐसे गीत सुनें उसका अभिनंदन करें। इस हेतु ऐसे गीत बहुत छोटे छोटे छंदों में और साधारण भाषा में बनें, वरंच गवाँरी भाषाओं में और स्त्रियों की भाषा में विशेष हों। कजली, ठुमरी, खेमटा, कँहरवा, अद्धा, चैती, होली, साँझी, लंबे, लावनी, जाँते के गीत, बिरहा, चनैनी, गजल इत्यादि ग्रामगीतों में इनका प्रचार हो और सब देश की भाषाओं में इसी अनुसार हो, अर्थात् पंजाब में पंजाबी, बुंदेलखंड में बुंदेलखंडी, बिहार में बिहारी, ऐसे जिन देशों में जिन भाषा का साधारण प्रचार हो उसी भाषा में ये गीत बनें। उत्साही लोग इसमें जो बनाने की शक्ति रखते हैं वे बनावें, जो छापने की शक्ति रखते हैं वे छपवा दें और जो प्रचार की शक्ति रखते हैं वे प्रचार करें। मुझसे जहाँ तक हो सकेगा मैं भी करूँगा। जो गीत मेरे पास आवेंगे उनको मैं यथाशक्ति प्रचार करूँगा। इससे सब लोगों से निवेदन है कि गीतादिक भेजकर मेरी इस विषय में सहायता करें और यह विषय प्रचार के योग्य है कि नहीं और इसका प्रचार सुलभ रीति से कैसे हो सकता है इस विषय में प्रकाश करके अनुगृहीत करेंगे। मैंने ऐसी पुस्तकों के हेतु नीचे लिखे हुए विषय चुने हैं। इनमें और भी जिन विषयों की आवश्यकता हो लिखें। ऐसे गीतों में रोचक बातें जो स्त्रियों और गँवारों को अच्छी लगै होना चाहिए और शृंगार, हास्य आदि रस इसमें मिले रहें जिसमें इनका प्रचार सहज में हो जाय।

बाल्य विवाह—इसमें स्त्री का बालक पति होने का दुःख, फिर परस्पर मन न मिलने का वर्णन, उससे अनेक भावी अमंगल और अप्रीतिजनक परिणाम।

जन्मपत्री की विधि—इससे बिना मन मिले स्त्री-पुरुष का विवाह और इसकी अशास्त्रता।

ज़ाती फ़ायदों की .ख़ुशी भी वाज़ हालत में आदमी के मरने के बाद भी क़ायम रह सकती है मसलन् अपने ख़ान्दान के ख़ुर्द व नोश की सूरत बेखलिश क़ायम कर जाना। किसी काम की तरफ़ मज़बूती से दिल लगाने में एक फ़ायदा यह भी है कि बीच में छोटी छोटी तकलीफ़ें जो इत्तिफ़ाक़ से सरज़द होती हैं उन को आदमी अपनी होनहार .ख़ुशी की धुन में बिल्कुल ख़याल में नहीं लाता।

.ख़ुशी की एक उमदः हालत यह भी है कि अपनी बुरी आदत को बदल देना। वह आदमी कैसा ख़ुश होगा जब वह अपने को बुरी आदत से छूटा हुआ देखेगा।

बहुत से लोग ग़ैर मामूली ख़्वाहिशों के पूरे होने को .ख़ुशी कहते हैं जैसा कि जो शख़्स हमेशः तनहाई में रहता है उसे अगर दोस्तों की सुहबत नसीब होती है तो उस को ग़नीमत जानता है। मगर कोशिश कुनिन्दः को ऐसे मौक़अ में बनिस्बत सुस्त लोगों के ऐसे हालत में भी ज़्यादः .ख़ुशी हासिल होती है। मसलन् जो फ़िलासफ़ी की बड़ी बड़ी किताबों के पढ़ने में हमेशः अपना वक़्त सर्फ़ करता है उसे अगर छोटी मोटी कोई क़िस्से की किताब मिल जाय तो वह बड़ी .ख़ुशी से पढ़ेगा बरख़िलाफ़ इस के जो हमेशः क़िस्से कहानियों से जी बहलाता है उस को अगर फ़िलासफ़ी की किताब दे दी जाय तो उस का जी उलझेगा और वह उसे फेंक देगा।

ग़ैर मामूली .ख़ुशी अमीरों पर भी असर करती है। मसलन् किसी अमीर की सालाना आमदनी हज़ार रुपया है मगर किसी साल इत्ति-फ़ाक़ से दस या बारह आ जावें तो, उस को .ख़ुशी हासिल होगी। यही मिसाल इस बात की दलील है कि अगरचे दौलतमंदी .ख़ुशी की मूजिब है मगर उस में भी तरक़्क़ी ज़्यादः .ख़ुशी देती है।

.ख़ुशी का एक बड़ा भारी सबब तंदुरुस्ती भी है और यह तंदुरुस्ती सबही दुरुस्त रह सकती है जब आदमी रूहानी या जिस्मानी तकलीफ़ से बच सकता है। .ख़ुशी है वह जिस का बदन बलग़म या रीह या चरबी से नहीं तैयार है। बल्कि किसी क़िस्म की तकलीफ़ न होने की आसूदगी से तैयार है। मगर यह ख़याल ज़रूर है कि यह तंदुरुस्ती

ऐसे ही और और विषय जिनमें देश की उन्नति की संभावना हो लिए जाय। यद्यपि यह एक एक विषय एक एक नाटक, उपन्यास वा काव्य आदि के ग्रंथ बनाने के योग्य हैं और इनपर अलग ग्रंथ बनें तो बड़ी ही उत्तम बात है, पर यहाँ तो इन विषयों के छोटे छोटे सरल देशभाषा में गीत और छंदों की आवश्यकता है जो पृथक पुस्तकाकार मुद्रित होकर साधारण जनों में फैलाए जायँगे। मैं आशा करता हूँ कि इस विषय की समालोचना करके और पत्रों के संपादक महोदयगण मेरी अवश्य सहायता करेंगे और उत्साही जन ऐसी पुस्तकों का प्रचार करेंगे।

—:ॐ:—

लेवी प्राण लेवी

श्री युत लार्ड म्यो साहिब बहादुर गवर्नर जेनरल हिंद ने काशी में १ नवम्बर को एक "लेवी" का दर्बार किया था। यद्यपि 'दर्बार' और 'लेवी' में बहुत भेद है पर यह 'लेवी' और "दर्बार" दोनों के बीच की अपूर्व वस्तु थी। श्री मन्महाराजाधिराज काशिराज का कोठी में इस 'लेवी' के हेतु एक डेरा दल बादल खड़ा किया गया था जो सूर्य नारायण और श्रीयुत लार्ड साहिब के तेज और प्रताप परम सुशीतल खसखाने की भाँति हो गया था और गरमी भी मारे गरमी के इसी खसखाने में आ छिपी थी, डेरे के बीच में चँदवा के नीचे एक सोने की कुरसी धरी थी। नाम लिखने वाले मुंशी बद्रीनाथ फूले फाले अबा पहिने पगड़ी सजे पुराने दादुर की भाँति इधर उधर उछलते और शब्द करते फिरते थे और बाबू भी वैसे ही छोटे तेंदुए बनें गरज रहे थे। पहिले लोगों ने यह प्रगट किया कि जूता पहिन कर जाने की आज्ञा नहीं है। फिर कोलाहल हुआ कि चाहो जैसे आओ तिस पर भी शाहजादों के अतिरिक्त केवल चार रईस जूता पहिरे हुए थे। इतने में बंगाली बाबू सबका नंबर लगाने लगे और पंडितों को दक्षिणा बटने

है। जब आदमी पर हद से ज्यादः ज़ुल्म होता है या हालत सक़रात पहुँचती है तब नई ख़ुशी से बदल जाता है और यही सबब है कि आदमी जितना छोटी छोटी तकलीफ़ों से तंग आता है उतना बड़ी तकलीफ़ से नहीं घबराता। सच्चे आशिक़ों की हिज्रत की तकलीफ जब हद से ज्यादः बढ़ जाती है तब फ़िराक़ में वस्ल से ज्यादः मजा मिलता है। सुई गड़ने में जो तकलीफ़ होती है वह वल्कि नहीं बरदाश्त होती मगर जंग में मुतवातिर चोटों को आदमी बेतकलीफ़ बरदाश्त कर सकता है। अफ़रीक़ः के मशहूर सैयाह डाक्टर ल्यूंगशटन (लिविंगस्टोन) ने लिखा है जब वह चेर के जंगल में फँस गए थे तो उनको मायूसी के साथ एक क़िस्म की ख़ुशी हुई थी। इसी तरह अक्सर मौत शदीद के वक़्त लोग ख़ुश पाये गये हैं। इसका सबब यह है कि जब आदमी की हालत बिल्कुल ना उमैदी को पहुँचाती है तो उस तकलीफ का ख़ौफ़ का बाक़ी नहीं रहता मसलन् जब तक आदमी को जीस्त की उमैद है, उस को मौत का ख़ौफ़ रहेगा मगर जिस वक़्त कि जीस्त की उम्मैद बिल्कुल मुनक़तअ् हो गई फिर उस को किस बात का ख़ौफ़ रहा। यही सबब है कि हिंदू शास्त्रकारों ने ख़ौफ़ और रंज की अस्ली हालत को भी एक रस माना है और ज़ाहिर है कि ट्राजिडी यानी ऐसे तमाशे जिन का आख़िर हिस्सा बिल्कुल रंज से भरा हो देखने में एक अजीब क़िस्म का लुत्फ़ देती है बल्कि ट्राजिडी में जैसी उम्दा किताबें लिखी गई हैं वैसी कामेडी में नहीं। जिसतरह रंज की आख़री हालत ख़ुशी से बदल जाती है उसी तरह ख़ुशी की भी आख़री हालत रंज से बदल जाती है और इसी से ज्यादः ख़ुशी के वक़्त लोग शिद्दत से रोते हुए पाये गये हैं। ख़ुलासा कलाम यह कि इस क़िस्म की बहुत सी ख़ुशियाँ दुनिया में हैं जिन को हम ख़ालिस ख़ुशी नहीं कह सकते।

अब हम इस बात पर ग़ौर किया चाहते हैं कि वह अस्ली ख़ुशी हिंदुओं को क्यों नहीं हासिल होती क्योंकि जब हम इसी ख़ुशी को अपनी पूरी बलंदी की हद पर हर सूरत से कामिल देखना चाहते हैं तो हमेशः ग़ैर क़ौमों में पाते हैं। इस की ज़ाहिर वजूहात जो मालूम होती हैं उन में सब से पहिला सबब हिंदुओं के दीनी व दुनियवी तरीकों का आपस में मिल जाना और तनज्ज़ुली के ज़माने के कम वेश

सलाम होती गई। श्री महाराज विजयानगर भी बाईं ओर खड़े हो गए थे। जब सब लोगों की हाजिरी हो चुकी श्रीयुत लार्ड साहिब कोठी पधारे और सब लोग इस बंदीगृह से छूट छूटकर अपने अपने घर आए। रईसों के नंबर की यही दशा थी कि आगे के पीछे और पीछे के आगे अँधेरनगरी हो रही थी। बनारस वालों को न इस बात का ध्यान कभी रहा है और न रहेगा। ये बिचारे तो मोम की नाक हैं चाहे जिधर फेर दो, हाय—पश्चिमोत्तर देश वासी कब कायरपन छोड़ेंगे और कब इनकी उन्नति होगी और कब इनको परमेश्वर वह सभ्यता देगा जो हिंदुस्तान के और खंड वासियों ने पाई है।*

—:ꕥ:—

हरिद्वार

(कवि वचन सुधा ३० अप्रैल १८७१ Vol. III No. 1 P. 10)

श्रीमान् क० व० सु० संपादक महोदयेषु !

श्री हरिद्वार को रुड़की के मार्ग से जाना होता है। रुड़की शहर अंगरेजों का बसाया हुआ है। इसमें दो तीन वस्तु देखने योग्य हैं एक तो (कारीगरी) शिल्प विद्या का बड़ा कारखाना है जिसमें जल चक्की पवन चक्की और भी कई बड़े बड़े चक्र अनवर्त खचक्र में सूर्य, चंद्र, पृथ्वी मंगल आदि ग्रहों की भाँति फिरा करते हैं और बड़ी बड़ी धरन ऐसी सहज में चिर जाती हैं कि देखकर आश्चर्य होता है। बड़े बड़े लोहे के खंभे एक क्षण में ढल जाते हैं और सैकड़ों मन आटा घड़ी भर में पिस जाता है। जो बात है आश्चर्य की है। इस कारखाने के सिवा यहाँ सबसे आश्चर्य श्री गंगाजी की नहर है, पुल के ऊपर से तो नहर बहती

* कविवचनसुधा खं० २ सं० ५ कार्तिक शुक्ल १५ सं० १९२७।

पैदा न होने देना। तीसरे सब कुछ बरदाश्त कर लेना और रंज और राहत को एक अम्रे तकदीरी समझ कर दमबखुद रहना। चौथे नेक और बद में तमीज न करना और भला बुरा सब को यकसाँ समझना। पाँचवें (मुआज अल्लाह) खालिक और मखलूक न समझना।

जाहिर है कि पहिले कायदे पर अमल करने ही से अक्ल पर ज़वाल आया और फ़ायदः व नुकसान का खयाल जाता रहा। उन्हीं आँखोंको अपने हाथसे फोड़कर बहकते बहकते उस अंधे कुंएं में जा पड़े जिस में परमेश्वर ही हाथ पकड़ कर निकाले तो निकलना मुमकिन है। दूसरे क़ायदे को इख्तियार करते ही नामर्दी छा गई काहिली बढ़ने से हिम्मत बहादुरी और हौसले का नाम ही न बाक़ी रहा फ़ौरन बेबस हो कर ज़माने के हेरफेर के मुताबिक़ हमेशः के वास्ते अपने मुल्क को ग़ैर क़ौम की नज़् कर आप परमानन्द की मूरत बन बैठे। ग़ौर का मुकाम है कि जब ख्वाहिश और हाजत न होगी तब आदमी को किसी शय से तअल्लुक बाकी न रहेगा जिस के हासिल होने या क़ायम रहने को हम खुशीका मूजिब कहें। आसूदगीको एक मौक़अ तक कौन न पसंद करेगा क्योंकि बक़द्र ख्वाहिश उस के हासिल होने पर जब तक हम ऐसी नई ख्वाहिश न पैदा करें जिस के पूरे करने का ज़रियः पहिले से सोच लिया हो यह ज़ुरूर है कि हम पहिली ख्वाहिश पर कामयाब होने का मजा हासिल करने के लिये आसूदगी इख्तियार करें। सिवाय इसके आसूदगी से यह मुराद नहीं है कि हमारी भूख जाती रहे और हमको हर रोज़ ताज़ा खाना खाने की जरूरत न बाकी रहे। जब हम खाना खा चुकते हैं बेशक आसूदगी हासिल करते हैं मगर फिर मेहनत वगैरः से भूख बढ़ा कर खाने का नया शौक़ पैदा करते हैं। उसी तरह जितना हमारा इल्म बढ़ता जाता है और खुशी के नये नये सामान नज़र आते हैं उतना ही हमारी आदमीयत पर फ़र्ज होता है कि अगर हम अपनी हालत का बेहतर होना न पसन्द करें तौ भी अपनी जमाअत की हाजत रफ़अ करने के खयाल से उस सामान के मुहैया करने की तदबीर से बाज़ न आवें। बल्कि जिस हालत में किसी ऐसी आफ़त नागहानी से हम पर कोई सदमा ऐसा सख्त हायल होता है कि जिस से दिल पस्त और बे हौसलः हो जाता है और हरगिज़ किसी ख्वाहिश के पैदा करने

नदी मिली उनकी यही दशा थी। उनके करारे गिरते थे तो बड़ा भयंकर शब्द होता था और वृक्षों को जड़ समेत उखाड़ उखाड़ के बहाये लाती थी। वेग ऐसा कि हाथी न सम्हल सके पर आश्चर्य यह कि जहाँ अभी डुबाव था वहाँ थोड़ी देर पीछे सूखी रेत पड़ी है और आगे एक स्थान पर नदी और नहर को एक में मिला के निकाला है। यह भी देखने योग्य है। सीधी रेखा की चाल से नहर आई है औ खेंड़ी रेखा की चाल से नदी गई है। जिस स्थान पर दोनों का संगम है वहाँ नहर के दोनों ओर पुल बने हैं और नदी जिधर गिरती है उधर कई द्वार बनाकर उसमें काठ के तखते लगाये हैं जिससे जितना पानी नदी में जाने देना चाहें उतना नदी में और जितना नहर में छोड़ना चाहें उतना नहर में छोड़ें।

जहाँ से नहर श्री गंगाजी में से निकाला है वहाँ भी ऐसा ही प्रबंध है और गंगाजी नहर में पानी निकल जाने से दुबली और छिछली हो गई हैं परंतु जहाँ नील धारा आ मिली है वहाँ फिर ज्यों की त्यों हो गई हैं।

हरिद्वार के मार्ग में अनेक प्रकार के वृक्ष और पक्षी देखने में आए। एक पीले रंग का पक्षी छोटा बहुत मनोहर देखा गया। बया एक छोटी चिड़िया है उसके घोंसले बहुत मिले। ये घोंसले सूखे बबूल काँटे के वृक्ष में हैं और एक एक डाल में लड़ी की भाँति बीस बीस तीस तीस लटकते हैं। इन पक्षियों की शिल्पविद्या तो प्रसिद्ध ही है लिखने का कुछ काम नहीं है इसी से इनका सब चातुर्य प्रगट है कि सब वृक्ष छोड़ के कांटे के वृक्ष में घर बनाया है। इसके आगे ज्वालापुर और कनखल और हरिद्वार है जिसका वृत्तांत अगले नंबरों में लिखूँगा।

पुरुषोत्तम शुक्ल १० }

आपका मित्र
यात्री

तमीज के साथ खुशी की तअदाद बढ़ती है बल्कि मुख्तलिफ़ हुकमा इस बात पर बहस करते हैं और खुशी जानकारी है या अनजानपन। एक का कौल है कि इल्म ही खुशी का मूजिब है क्योंकि अपनी ख्वाहिश और उस के पूरे होने की कद्र आदमी इल्म से करता है बरखिलाफ इस के दूसरा आलिम कहता है कि जानकारी ही से ख्वाहिश बढ़ती है और आदमी अपनी हशमत मौजूदः को कम समझता है। खैर इस बहस का जवाब और मौक़अ पर मौजूद है। इस वक्त इस कहने से मतलब यही है कि हर हालत में बे तमीज को खुशी की कद्र नहीं मालूम हो सकती क्योंकि वह अपनी गलती नहीं पहचान सकता और इसी से वाकिफ़कारी के फ़ायदों को नहीं उठाता जिसपर कि खुशी का घटना बढ़ना मौजूद है।

पाँचवें कायदे की निसबत हम इतना ही कह सकते हैं कि इस शैतानी खयाल से सख्त मुसीबत, इंतिहा की आजिजी और मायूसी की हालत में जब कि किसी सूरत मे तस्कीन नहीं होती और खुशी का नाम भी जबान से नहीं निकल सकता उस वक्त बंदों के वास्ते एक आखरी दरवाजा फर्याद का जो खुला था वह भी बन्द कर दिया गया। तमाम उम्र देखा कि ये कि कभी दो मुख्तलिफ़ जुज एक नहीं हुए मगर इन दिल्लगीबाजों ने यकीन करा ही दिया कि कोंहार और खिलौना एकही चीज है पर और के तजरिबः और आदमी की बनावट की खासियत को बखूबी मालूम करने से मालूम होता है कि हमारी जिन्दगी का कडुआ प्याला उस की याद के आवहयात के दो चार कतरे शामिल किए बगैर किसी खालिस खुशी से शीरीं किया नहीं जा सकता मगर जब याद और यादकुनिंदा ही बाकी न रहा तो फ़क़त इस जिन्दगी के नतीजे ही रह गए। खैर इस तूल कलामी से कुछ हासिल नहीं अब सिर्फ़ इतना दिखलाना और बाकी है कि उन क़ौमों में जिनको परमेश्वर ने असली खुशी हासिल करने का शऊर और मनसब बखशा है हिंदुओं के बरखिलाफ़ जाहिरा क्या फर्क है। कौमियत का पास, अपने तरक्की की कोशिश, बेतकल्लुफी आजादी, इल्म और हुनर सीखने का खान्दानी रिवाज, बे हुनरी और काहिली और एहसान उठाने की शर्म, मुस्तअदी, दिलेरी, सिपहगिरी का शौक,

है। यहाँ हरि की पैरी नामक एक पक्का घाट है और यहीं स्नान भी होता है। विशेष आश्चर्य का विषय यह है कि यहाँ केवल गंगा जी ही देवता हैं दूसरा देवता नहीं यों तो वैरागियों ने मठ मंदिर कई बनालिये हैं। श्री गंगा जी का पाट भी बहुत छोटा है पर वेग बड़ा है, तट पर राजाओं की धर्मशाला यात्रियों के उतरनेके हेतु बनी हैं और दुकाने भी बनी हैं पर रातको बंद रहती हैं। यह ऐसा निर्मल तीर्थ है कि काम क्रोधकी खानि जो मनुष्य हैं सो वहाँ रहते ही नहीं। पंडे दूकानदार इत्यादि कनखल वा ज्वालापुर से आते हैं। पंडे भी यहाँ बड़े विलक्षण संतोषी हैं। ब्राह्मण होकर लोभ नहीं यह बात इन्हीं में देखने में आई। एक पैसे को लाख करके मान लेते हैं। इस क्षेत्र में पाँच तीर्थ मुख्य हैं हरिद्वार, कुशावर्त्त, नीलधारा, बिल्वपर्वत और कनखल। हरिद्वार तो हरि की पैंड़ो पर नहाते हैं, कुशावर्त्त भी उसी के पास है, नीलधारा वही दूसरी धारा, बिल्व पर्वत भी पास ही एक सुहाना पर्वत है जिसपर बिल्वेश्वर महादेव की मूर्ति है और कनखल तीर्थ इधर ही है, यह कनखल तीर्थ बड़ा उत्तम है। किसी काल में दक्ष ने यहीं यज्ञ किया था और यहीं सती ने शिव जी का अपमान न सहकर अपना शरीर भस्म कर दिया, यहाँ कुछ छोटे छोटे घर भी बने हैं। और भारामल जैकृष्णदास खत्री यहाँ के प्रसिद्ध धनिक हैं। हरिद्वार में यह बखेड़ा कुछ नहीं है और शुद्ध निर्मल साधुओं के सेवन योग्य तीर्थ है। मेरा तो चित्त वहाँ जाते ही ऐसा प्रसन्न और निर्मल हुआ कि वर्णन के बाहर है। मैं दीवान कृपा राम के घर के ऊपर के बंगले पर टिका था। यह स्थान भी उस क्षेत्र में टिकने योग्य ही है चारो ओर से शीतल पवन आती थी। यहाँ रात्रि को ग्रहण हुआ और हम लोगों ने ग्रहण में बड़े आनंद पूर्वक स्नान किया और दिन में श्री भागवत का पारायण भी किया। वैसे ही मेरे संग कल्लू जी मित्र भी परमानंदी थे। निदान इस उत्तम क्षेत्र में जितना समय बीता बड़े आनंद से बीता। एक दिन मैंने श्री गंगा जी के तट पर रसोई करके पत्थर ही पर जल के अत्यंत निकट परोस कर भोजन किया। जल के छलके पास ही ठंढे ठंढे आते थे। उस समय के पत्थर पर का भोजन का सुख सोने की थाल के भोजन से कहीं बढ़ के था। चित्त में बारंबार ज्ञान,
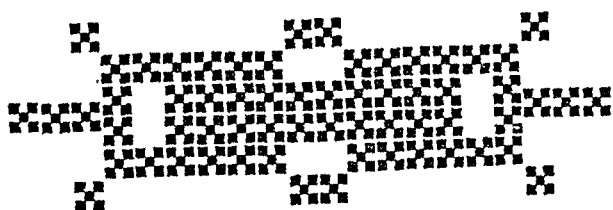
जातीय-संगीत

—:❀:—

भारतवर्ष की उन्नति के जो अनेक उपाय महात्मागण आजकल सोच रहे हैं उनमें एक और उपाय भी होने की आवश्यकता है। इस विषय के बड़े बड़े लेख और काव्य प्रकाश होते हैं, किंतु वे जनसाधारण के दृष्टिगोचर नहीं होते। इसके हेतु मैंने यह सोचा है कि जातीय संगीत की छोटी छोटी पुस्तकें बनें और वे सारे देश, गाँव गाँव, में साधारण लोगों में प्रचार की जायँ। यह सब लोग जानते हैं कि जो बात साधारण लोगों में फैलेगी उसी का प्रचार सार्वदेशिक होगा और यह भी विदित है कि जितना ग्रामगीत शीघ्र फैलते हैं और जितना काव्य को संगीत द्वारा सुनकर चित्त पर प्रभाव होता है उतना साधारण शिक्षा से नहीं होता। इससे साधारण लोगों के चित्त पर भी इन बातों का अंकुर जमाने को इस प्रकार से जो संगीत फैलाया जाय तो बहुत कुछ संस्कार बदल जाने की आशा है। इसी हेतु मेरी इच्छा है कि मैं ऐसे ऐसे गीतों को संग्रह करूँ और उनको छोटी छोटी पुस्तकों में मुद्रित करूँ। इस विषय में मैं, जिनको जिनको कुछ भी रचनाशक्ति है, उनसे सहायता चाहता हूँ कि वे लोग भी इस विषय पर गीत वा छंद बनाकर स्वतंत्र प्रकाश करें या मेरे पास भेज दें, मैं उनको प्रकाश

प्रवेश करते ही एक बड़ी विपत आ पड़ती है। वह यह है कि चुंगी के राक्षसों का मुख देखना होता है। हम लोग ज्यों ही नगर में प्रवेश करने लगे जमदूतों ने रोका। सब गठरियों को खोल खोल के देखा जब कोई वस्तु न निकसी तब अँगूठियों पर (जो हम लोगों के पास थीं) आ झुके बोले इसका महसूल दे जाओ। हम लोग उतर के चौकी पर गए। वहाँ एक ठिंगना सा काला रूखा मनुष्य बैठा था। नटखटपन उसके मुखरे से बरसता था। मैंने पूछा क्यों साहब बिना बिकरी की वस्तुओं पर भी महसूल लगता है। बोले हाँ, कागज देख लीजिए छपा हुआ है। मैंने कागज देखा उसमें भी यही छपा था। मुझे पढ़ के यहाँ की गवर्नमेंट के इस अन्याय पर बड़ा दुःख हुआ। मैंने उनसे पूछा कि कहिये कितना महसूल दूँ। आप नाक गाल फुला के बोले कि मैं कुछ जवहिरी नहीं हूँ कि इन अँगूठियों का दाम जानूं मोहर करके गोदामको भेजूँगा वहाँ सुपरेंटेंडेंट साहब साँझ को आकर दाम लगावेंगे। मैंने कहा कि साँझ तक भूखों कौन मरेगा। बोले इससे मुझे क्या? कहाँ तक लिखूं इस दुष्ट ने हम लोगों को बहुत छकाया। अंत में मुझे क्रोध आया तब मैंने उसको नृसिंह रूप दिखाया और कहा कि मैं तेरी रिपोर्ट करूँगा। पहिले तो आप भी बिगड़े, पीछे ढीले हुए, बोले अच्छा जो आपके धरम में आवे दे दीजिए। तीन रुपये देकर प्राण बचे तब उनके सिपाहियों ने इनाम माँगा। मैंने पूछा क्या इसी घंटों दुख देने का इनाम चाहिये। किसी प्रकार इस विपत से छूटकर नगर में आए। नगर पुराना तो नष्ट हो गया है जो बचा है वह नई सड़क से इतना नीचा है कि पाताल लोक का नमूना सा जान पड़ता है। मसजिद बहुत सी हैं, गलियाँ सकरी और कीचड़ से भरी हुई बुरी गंदी दुर्गंधमय। सड़क के घर सुथरे बने हुए हैं। नई सड़क बहुत चौड़ी और अच्छी है। जहाँ पहिले जौहरी बाजार और मीनाबाजार था वहाँ गदहे चरते हैं और सब इमामबाड़ों में किसी में डाकघर कहीं अस्पताल कहीं छापा खाना हो रहा है। रूमी दर्वाजा नवाब आसिफुद्दौला की मसजिद और मच्छीभवन का सर्कारी किला बना है। वेदमुश्क के हौजों में गोरे मूतते हैं। केवल दो स्थान देखने योग्य बचे हैं। पहिला हुसैनाबाद और दूसरा कैसर बाग़। हुसैनाबाद के फाटक के बाहर एक षट्कोण तालाब सुंदर बना है और एक

बालकों की शिक्षा—इसकी आवश्यकता, प्रणाली, शिष्टाचारशिक्षा, व्यवहार-शिक्षा आदि।

बालकों से बर्ताव—इसमें बालकों के योग्य रीति पर बर्ताव न करने में उनका नाश होना।

अँगरेजी फैशन—इससे बिगड़कर बालकों का मद्यादि सेवन और स्वधर्म विस्मरण।

स्वधर्मचिंता—इसकी आवश्यकता।

भ्रूणहत्या और शिशुहत्या—इसके प्रचार के कारण, उसके मिटाने के उपाय।

फूट और बैर—इसके दुर्गुण, इसके कारण भारत की क्या-क्या हानि हुई इसका वर्णन।

मैत्री और ऐक्य—इसके बढ़ने के उपाय, इसके शुभ फल।

बहुजातित्व और बहुभक्तित्व—के दोष, इससे परस्पर चित्त का न मिलना, इसी से एक का दूसरे के सहाय में असमर्थ होना।

योग्यता—अर्थात् केवल वाणी का विस्तार न करके सब कामों के करने की योग्यता पहुँचाना और उदाहरण दिखलाने का विषय।

पूर्व्वज आर्य्यों की स्तुति—इसमें उनके शौर्य्य, औदार्य्य, सत्य, चातुर्य्य, विद्यादि गुणों का वर्णन।

जन्मभूमि—इससे स्नेह और इसके सुधारने की आवश्यकता का वर्णन।

आलस्य और संतोष—इनकी संसार के विषय में निंदा और इससे हानि।

व्यापार की उन्नति—इसकी आवश्यकता और उपाय।

नशा—इसकी निंदा इत्यादि।

अदालत—इसमें रुपया व्यय करके नाश होना और आपस में न समझने का परिणाम।

हिंदुस्तान की वस्तु हिंदुस्तानियों को व्यवहार करना—इसकी आवश्यकता, इसके गुण, इसके न होने से हानि का वर्णन।

भारतवर्ष के दुर्भाग्य का वर्णन—करुणा रस संवलित।

जब्बलपुर

(कविवचन सुधा २० जुलाई सन् १८७२ ई०)
श्रीयुत कवि वचन सुधा संपादक मर्मीपेषु

महाशय

मेरी इच्छा है कि मैं अपनी मध्य देशीय और बंबई की यात्रा का सविस्तर समाचार लिखकर आपके पत्र द्वारा अपने देशवालों पर विदित करूँ जिसमें वे लोग इसे पढ़कर सन्न हो जायँ और आशा रखता हूँ कि आप को स्थान देने में कुछ असमंजस न होगा।

मैंने आप की पवित्र नगरी से दूसरी तारीख को संध्या समय दस बजे प्रस्थान किया और जिस समय राजघाट पहुँचा गाड़ी छूटने को केवल पाँच मिनट का विलंब था। झट टिकट लेकर आरोहण किया और थोड़े समय में मोगलसराय में पहुँचा। वहाँ पर एक दूसरे गाड़ी में चढ़ा और निरंतर चला तो सूर्योदय होते होते नैनी के स्टेशन पर पहुँचा और वहाँ उतर पड़ा क्योंकि वह गाड़ी इलाहाबाद जाती थी और मुझे आना था जबलपुर। वहाँ हम लोगों ने (क्योंकि एक मित्र भी मेरे साथ थे) नित्य शौच किया और चाहा कि कुछ खाँय पर वहाँ काहे को कुछ मिलता है। दूध के लिए एक मनुष्य को पैसा दिया तो वह मुंह बनाये हुए आया और बोला कि अभी दूध नहीं आया। फिर हम लोगों ने पूछा कि भला यहाँ जिलेबी मिलेगी उसने कहा हाँ। पैसा देकर भेजा तो वह तेल की जिलेबी उठा लाया परंतु वैसी तेल की न समझिए जैसी बनारस में बनती है और टके की पाव भर बिकती है। यह उससे तो बढ़कर थी। हम लोगों ने अपना अपना माथा ठोंका और इस द्रव्य को उसी मनुष्य के अर्पण किया। इतने में नौ बजा और गाड़ी आई। फिर हम लोग चढ़े और जसरा, शिव-राजपुर, बरगढ़, डबोरा, माणिक्यपुर, मरकुण्डी, मझगाँवा, जेतवार, सतना, उचारा, मैहरी, अधरा, जोखई, कतनी, स्लीमानाबाद रोड, सिहोरा रोड, देवरी नाम स्टेशनों को पार करते हुए सवा आठ बजे रात को जबलपुर पहुँचे। मार्ग में जो क्लेश हुआ वह अथकनीय है। एक तो मार्तण्ड की प्रचण्ड किरण से गाड़ी ऐसी उत्तप्त हो रही थी।

वाली सभा की भाँति एक एक का नाम लेकर पुकार के वलमटेर की पल्टन की चाल से सबको खड़ा कर दिया। बनारस के रईस भी कठ-पुतली बने हुए उसी गत नाचते रहे। जब खड़े खड़े बड़ी देर हुई और पैर टूटने लगे और इस तपस्या पर भी श्रीयुत लार्ड साहिब के दर्शन न हुए तब राय नारायण दास आनरेरी मजिस्ट्रेट हौलदार की भाँति बोल उठे "सिट डौन" (बैठ जाओ)। सब लोग खड़े खड़े थक तो गए ही थे मुँह के बल बैठ गये परंतु राय साहब को यह 'कवायद' कराना तभी अच्छा लगता जब उनके हाथ में एक लकड़ी भी होती। लार्ड साहब की 'लेवी' समझ कर कपड़े भी सब लोग अच्छे अच्छे पहिन कर आए थे पर वे सब उस गरमी में बड़े दुखदाई हो गए। जामे वाले गरमी के मारे जामे के बाहर हुए जाते थे, पगड़ीवालों को पगड़ी सिर का बोझ सी हो रही थी और दुशाले और कमखाब की चपकन वालों को गरमी ने अच्छी भाँति जीत रक्खा था। सबके अंगों से पसीने की नदी बहती थी मानों श्रीयुत को सब लोग आदर से "अर्घ्य पाद्यं" देते थे। कोई खड़ा हो जाता था तो कोई बैठा हो रह जाता था कोई घबड़ा कर डेरे के बाहर घूमने चला जाता था कि इतने में कोलाहल हुआ "लाट साहब आते हैं"। रायनारायण दास साहिब ने फिर अपने मुख को खोला 'स्टैंड अप' (खड़े हो जाव)। सब के सब एक साथ खड़े हो गए। राय साहिब का 'सिट डौन कहना' तो सबको अच्छा लगा पर "स्टैंड-अप" कहना तो सबको बुरा लगा मानों भले बुरे का फल देने वाले राय साहिब ही थे। इतने में फिर कुछ आने में देर हुई और फिर सब लोग बैठ गये। वाह वाह दर्बार क्या था "कठपुतली का तमाशा" था या वलमटेरों की 'कवायद' थी या बंदरों का नाच था या किसी पाप का फल भुगतना था या "फौजदारी की सजा थी"। बैठते देर न हुई थी कि श्रीयुत लार्ड साहिब आये फिर सबके सब उठ खड़े हुए। श्रीमान् के संग श्री काशीराज और उनके चिरंजीव राजकुमार और बहुत से साहिब लोग थे। श्रीयुत लार्ड साहिब बीच में खड़े हो गये। उनकी दाहिनी ओर श्री काशीराज और उनके राजकुमार शोभित हुए। पहिले तैमूर के वंशवालों की मुलाकात हुई फिर महाराज विजयानगरम् और उनके कुँअर की। इसी भाँति सब लोगों का नाम बोलते गए और

यह कि सड़क बहुत परिष्कृत और प्रशस्त हैं। फिरती वार ईश्वर चाहेगा तो नगर को भली भाँति देखकर आप के पास लिखूँगा। रात भर तो उन महराज जी (उक्त महाशय के शाले) के यहाँ रहे दूसरे दिन उन्होंने बड़े आतिथ्य से भोजन कराया और आदरपूर्वक विदा किया। जबलपुर से फिर हम लोगों ने ३≡)॥ दे दे कर इटारसी का टिकट लिया और ग्रेट इंडियन पेनिन्सुला रेलवे कंपनी की गाड़ी पर सवार हुए। यह गाड़ी एक विचित्र प्रकार की होती है। ईस्ट इंडियन रेलवे की गाड़ी में कई विभाग रहते हैं परंतु यहाँ सरासर एकी रहती है और उसमें छः बेंच लगे रहते हैं—तीन द्वार के एक ओर और तीन दूसरी ओर। इन गाड़ियों के एक कोने में एक शौच गृह (पायखाना) भी बना रहता है और गाड़ी की सूरत भी बहुत भद्दी होती है। यह तो तीसरी क्लास की गाड़ी है। यहाँ एक लोकल गाड़ी होती है जिसमें कुली आदि नीच लोग भेंड़ की भांति भर दिए जाते हैं। उसमें बैठने के लिए कुछ भी स्थान नहीं बने रहते। किराया उसमें एक पैसे कोस है। यह तो गाड़ी की प्रशंसा है। स्टेशन का प्रबंध ऐसा है कि खाने की वस्तु का तो नाम न लेना, लोग पानी पानी पुकारा करते हैं कोई सुनता नहीं। एक बेर दो तीन मनुष्य मेरी गाड़ी में बहुत चिल्ला रहे थे कि एक गार्ड आया तो एक पारसी ने कहा Sir they (are) Complaining very much for water" (साहेब लोग पानी पानी बहुत चिल्लाते हैं) तो गार्ड ने उत्तर दिया Can't help (मैं कुछ नहीं कर सक्ता) अब कहिये ज्येष्ठ की दुपहरी में यदि कोई पानी बिना मर जाय तो क्या कंपनी पकड़ी न जायगी? इस उत्तर से तो यही प्रगट होता है। जब्बल पुर और इटारसी के बीच में ७ स्टेशन (चिदवारा, नृसिंहपुर, गदावरा, बाकेड़ी, सोहागपुर, बाग्रा और इटारसी) पड़ते हैं। परंतु रेल पथ के दोनों ओर जंगल और पहाड़ोंके कुछ दृष्टि नहीं पड़ता। कोसों पर्यन्त कोई गाँव नहीं दिखाई देता। इससे आप समझ लीजिये कि यह कैसा देश है। इटारसी और बाग्रा के बीच यहां भी एक सुरंग है जिसके भीतर से गाड़ी जाती है परंतु यह सुरंग जमालपुर के सुरंग से बड़ा है क्योंकि इसमें जिस समय गाड़ी जाती है तो किंचित अंधकार हो जाता है पर उसमें इधर से उधर तक बराबर प्रकाश रहता है।

है और नीचे से नदी बहती है। यह एक बड़े आश्चर्य का स्थान है। इसके देखने से शिल्प-विद्या का बल और अंगरेजों का चातुर्य और द्रव्य का व्यय प्रगट होता है। न जानैं वह पुल कितना दृढ़ बना है कि उस पर से अनवर्त कई लाख मन बरन करोड़ मन जल बहा करता है और वह तनिक नहीं हिलता। स्थल में जल कर रक्खा है। और स्थानों में पुल के नीचे से नाव चलती है यहाँ पुल के ऊपर नाव चलती है और उसके दोनों ओर गाड़ी जाने का मार्ग है और उसके परले सिरे पर चूने के सिंह बहुत ही बड़े बड़े बने हैं। हरिद्वार का एक मार्ग इसी नहर की पटरी पर से है और मैं इसी मार्ग से गया था।

. विदित हो कि यह श्री गंगाजी की नहर हरिद्वार से आई है और इसके लाने में यह चातुर्य किया है कि इसके जल का वेग रोकने के हेतु इसको सीढ़ी की भाँति लाए हैं। कोस कोस डेढ़ डेढ़ कोस पर बड़े बड़े पुल बनाये हैं वही मानो सीढ़ियाँ हैं और प्रत्येक पुल के ताखों से जल को नीचे उतारा है। जहाँ जहाँ जल को नीचे उतारा है वहाँ बड़े बड़े सीकड़ों में कसे हुए दृढ़ तखते पुल के ताखों के मुँह पर लगा दिये हैं और उनके खींचने के हेतु ऊपर चक्कर रक्खे हैं। उन तखतों से ठोकर खाकर पानी नीचे गिरता है वह शोभा देखने योग्य है। एक तो उसका महान शब्द दूसरे उसमें से फुहारे की भाँति जल का उबलना और छींटों का उड़ना मन को बहुत लुभाता है और जब कभी जल विशेष लेना होता है तो तखतों को उठा लेते हैं फिर तो इस वेग से जल गिरता है जिसका वर्णन नहीं हो सकता और ये मल्लाह दुष्ट वहाँ भी आश्चर्य करते हैं कि उस जल पर से नाव को उतारते हैं या चढ़ाते हैं। जो नाव उतरती है तो यह ज्ञात होता है कि नाव पाताल को गई पर वे बड़ी सावधानी से उसे बचा लेते हैं और क्षण मात्र में बहुत दूर निकल जाती है पर चढ़ाने में बड़ा परिश्रम होता है। यह नाव का उतरना चढ़ना भी एक कौतुक ही समझना चाहिए।

इसके आगे और भी आश्चर्य है कि दो स्थान नीचे तो नहर है और ऊपर से नदी बहती है। वर्षा के कारण वे नदियाँ क्षण में तो बड़े वेग से बढ़ती थीं और क्षण भर में सूख जाती हैं। और भी मार्ग में जो

को अब उस पार जाते हैं। ऊँट गाड़ी यहाँ से पाँच कोस पर मिलती है।

कैम्प हरैया बाजार

अब तक तीन पहर का सफर हो चुका है और सफर भी कई तरह का और तकलीफ देने वाला। पहिले सरा से गाड़ी पर चले। मेला देखते हुए रामघाट की सड़क पर गाड़ी से उतरे। वहाँ से पैदल धूप में गर्म रेती में सरजू किनारे गुदारा घाट पर पहुँचे। वहाँ से मुश्किल से नाव पर सवार होकर सरजू पार हुए। वहाँ से बेलवाँ, जहाँ कि डाँक मिलती है और शायद जिसका शुद्ध नाम बिल्व ग्राम है, दो कोस है। सवारी कोई नहीं न राह में छाया के पेड़, न कूँआ न सड़क। हवा खूब चलती थी इससे पगडंडी भी नहीं नजर पड़ती, बड़ी मुश्किल से चले और बड़ी ही तकलीफ हुई। खैर बेलवाँ तक रो रो कर पहुँचे। वहाँ से बैल की डाँक पर नौ बजे रात को यहाँ पहुँचे। यहाँ पहुँचते ही हरैया बाजार के नाम से यह गीत याद आया 'हरैया लागल झबिआ के रे लैहैं ना'। शायद किसी जमाने में यहाँ हरैया बहुत बिकती होगी। इसके पास ही मनोरमा नदी है। मिठाई हरैया की तारीफ के लायक है। बालूसाही बिलकुल बालू साही, भीतर काठ के टुकड़े भरे हुए। लड्डू 'भूरके'। बरफी अहा हा हा! गुड़ से भी बुरी। खैर, लाचार होकर चने पर गुजर की। गुजर गई गुजरान—क्या झोपड़ी क्या मैदान, बाकी हाल कल के खत में।

बस्ती

परसों पहिली एप्रिल थी इससे सफर करके रेती में बेवकूफ बनने का और तकलीफ में सफर करने का हाल लिख चुके हैं। अब आज आठ बजे सुबह रें रें करके बस्ती पहुँचे। वाह रे बस्ती, झख मारने को बसती है अगर बसती इसीको कहते हैं तो उजाड़ किसको कहेंगे। सारी बस्ती में कोई भी पंडित बस्तीराम जी ऐसा पंडित नहीं। खैर अब तो एक दिन यहीं बसती होगी। राह में मेला खूब था, जगह जगह पर शहावे का शहावा। चूल्हे जल रहे हैं। सैकड़ों अहरे लगे हुए हैं। कोई गाता है, कोई बजाता है, कोई गप हाँकता है। राम-

हरिद्वार

(कवि वचन सुधा १४ अक्टूबर सन् १८७१ ई०)

श्रीमान् कविवचन सुधा संपादक महामहिम मित्रवरेषु !

मुझे हरिद्वार का शेष समाचार लिखने में बड़ा आनंद होता है कि मैं उस पुण्य भूमि का वर्णन करता हूँ जहाँ प्रवेश करने ही से मन शुद्ध हो जाता है। यह भूमि तीन ओर सुंदर हरे हरे पर्वतों से घिरी है जिन पर्वतों पर अनेक प्रकार की वल्ली हरी भरी सज्जनों के शुभ मनोरथों की भाँति फैल कर लहलहा रही है और बड़े बड़े वृक्ष भी ऐसे खड़े हैं मानों एक पैर से खड़े तपस्या करते हैं और साधुओं की भाँति घाम ओस और वर्षा अपने ऊपर सहते हैं। अहा ! इनके जन्म भी धन्य हैं जिन से अर्थी विमुख जाते ही नहीं। फल, फूल, गंध, छाया, पत्ते, छाल, बीज, लकड़ी और जड़ यहाँ तक कि जले पर भी कोयले और राख से लोगों का मनोर्थ पूर्ण करते हैं। सज्जन ऐसे कि पत्थर मारने से फल देते हैं। इन वृक्षों पर अनेक रंग के पक्षी चहचहाते हैं और नगर के दुष्ट बधिकों से निडर होकर कल्लोल करते हैं। वर्षा के कारण सब ओर हरियाली ही दृष्टि पड़ती थी मानो हरे गलीचा की जात्रियों के विश्राम के हेतु बिछायत बिछी थी। एक ओर त्रिभुवन पावनी श्री गंगा जी की पवित्र धारा बहती है जो राजा भगीरथ के उज्वल कीर्ति की लता सी दिखाई देती है। जल यहाँ का अत्यंत शीतल है और मिष्ट भी वैसा ही है मानो चीनी के पने को बरफ में जमाया है, रंग जल का स्वच्छ और श्वेत है और अनेक प्रकार के जल जंतु कल्लोल करते हुए। यहाँ श्री गंगा जी अपना नाम नदी सत्य करती हैं अर्थात् जल के वेग का शब्द बहुत होता है और शीतल वायु नदी के उन पवित्र छोटे छोटे कनौंको लेकर स्पर्श हीसे पावन करता हुआ संचार करता है। यहाँ पर श्री गंगा जी दो धारा हो गई हैं एक का नाम नील धारा दूसरी श्री गंगा जी ही के नाम से, इन दोनों धारों के बीच में एक सुंदर नीचा पर्वत है और नील धारा के तट पर एक छोटा सा सुंदर चुटीला पर्वत है और उसके शिषर पर चण्डिका देवी की मूर्ति

इन्हीं का इसमें कष्ट है। शायद इसी से अब हिंदुस्तान में रोग बहुत हैं। कभी सराय की खाट के खटमल और भटियारियों का लड़ना याद आया। यही सब याद करते कुछ सोते जागते हिलते हिलते आज बस्ती पहुँच गए। बाकी फिर। यहाँ एक नदी है उसका नाम कुआनय। डेढ़ रुपया पुल का गाड़ी का महसूल लगा।

बस्ती के जिले की उत्तर सीमा नैपाल, पश्चिमोत्तर की गोंडा, पश्चिम-दक्षिण अयोध्या और पूरब गोरखपुर है। नदियाँ बड़ी इनमें सरयू और इरावती। सरयू के इस पार बस्ती उस पार फैजाबाद। छोटी नदियों में कूनेय, मनोरमा, कठनेय, आमी, बानगंगा और जमवर है। बरकरा ताल और जिरजिरवा दो बड़ी झील भी हैं। बाँसी, बस्ती और मकहर तीन राजा भी हैं। बस्ती सिर्फ चार पाँच हजार की बस्ती है पर जिला बड़ा है क्योंकि जिले की आमदनी चौदह लाख है। साहब लोग यहाँ कुल दस बारह हैं, उतनेही बंगाली हैं। अगरवाला मैंने खोजा एक भी न मिला, सिर्फ एक हैं वह भी गोरखपुरी। पुरानी बस्ती खाँई के बीच में बसी है। राजा के महल बनारस के अर्दली बजार के किसी मकान से उमदा नहीं। महल के सामने मैदान, पिछवाड़े जंगल और चारो ओर खाँई है। पाँच सौ खटिकों के घर महल के पास हैं जो आगे किसी जमाने में राजा के लूटमार के मुख्य सहायक थे। अब राजा के स्टेट के मैनेजर कूक साहब हैं।

यहाँ के बाजार का हम बनारस के किसी भी बाजार से मुकाबिला नहीं कर सकते। महज नेहेसियत। महाजन एक यहाँ हैं वह टूटे खपड़े में बैठे थे। तारीफ यह सुना कि साल भर में दो बेर कैद होते हैं क्योंकि महाजन पर जाल करना फर्ज है और उसको भी छिपाने का शऊर नहीं। यहाँ का मुख्य ठाकुरद्वारा दो तीन हाथ चौड़ा और उतना ही लंबा और उतनाही ऊँचा बस। पत्थर का कहीं दर्शन भी नहीं। यह हाल बस्ती का है। कल डाँक ही नहीं मिली कि जायँ। मेंहदावल की कच्ची सड़क है इससे कोई सवारी नहीं मिलती आज कँहार ठीक हुए हैं। भगवान ने चाहा तो शाम को रवाना होंगे। कल तो कुछ तबीअत भी गबड़ा गई थी इसमे आज खिचड़ी खाई। पानी यहाँ का बड़ा बातुल है। अकसर लोगों का गला फूल जाता है, आदमी ही को नहीं

वैराग्य और भक्ति का उदय होता था। झगड़े लड़ाई का कहीं नाम भी नहीं सुनाता था। यहाँ और भी कई वस्तु अच्छी बनती हैं, जनेऊ यहाँ का अच्छा महीन और उज्वल बनता है। यहाँ की कुशा सबसे विलक्षण होती है जिसमें से दालचीनी जावित्री इत्यादि की अच्छी सुगंध आती है। मानो यह प्रत्यक्ष प्रगट होता है कि यह ऐसी पुण्यभूमि है कि यहाँ की घास भी ऐसी सुगंधमय है। निदान यहाँ जो कुछ है अपूर्व है और यह भूमि साक्षात् विरागमय साधुओं और विरक्तों के सेवन योग्य है। और संपादक महाशय मैं चित्त से तो अब तक वहीं निवास करता हूँ और अपने वर्णन द्वारा आपके पाठकों को इस पुण्यभूमि का वृत्तांत विदित करके मौनावलंबन करता हूँ। निश्चय है कि आप इस पत्र को स्थानदान दीजिएगा।

आपका मित्र
यात्री

—:※:—

लखनऊ

(कविवचन सुधा Vol. 2 No. 22 श्रावण कृष्ण ३० सं० १९२८ P. 173)

श्रीमान् क० व० सुधा संपादक महोदयेषु !

मेरे लखनऊ गमन का वृत्तांत निश्चय आपके पाठकगणों को मनोरंजक होगा।

कानपुर से लखनऊ आने के हेतु एक कंपनी अलग है। इसका नाम अ० रु० रे० कंपनी है। इसका काम अभी नया है और इसके गार्ड इत्यादिक सब काम चलानेवाले हिंदुस्तानी हैं। स्टेशन कान्हपुर का तो दरिद्र सा है पर लखनऊ का अच्छा है। लखनऊ के पास पहुँचते ही मसजिदों के ऊँचे ऊँचे कंगूरे दूर ही से दिखाते हैं, परंतु नगर में

मालूम हुआ कि इसी मत से यह मत निकला है क्योंकि एक बात वह और बोले कि हमारा मत श्री वल्लभाचारज की टीका में लिखा है। इन लोगों के उपास्य श्री कृष्ण हैं और एकादशी, शालग्राम, मूर्तिपूजा, तीर्थ किसी को नहीं मानते। इनके पहिले आचार्य्य देवचन्द जी थे, जो जात के कायथ थे और दूसरे प्राणनाथ जी, जो कच्छ के क्षत्री (भाटिया) थे। हमारे ही मत की शाखा सही पर विचित्र Reformed मत है। वैष्णव होकर मूर्तिपूजा का खंडन करने वाले यही लोग सुने।

यहाँ बूढ़े को ख़बीस, व्रत को बेनी राम, भोजन को बुलनी, जात को दूध, ऐसे ही अनेक विचित्र-विचित्र बोली हैं।

गाँव गन्दा बड़ा है और लोग परले सिरे के बेवकूफ। यहाँ से चार मील पर एक मोती झील वा बखरा ताल नामक झील है। दर हकीकत देखने के लायक है। कई कोस लम्बी झील है और जानवर तरह तरह के देखने में आते हैं। पहाड़ से चिड़ियाँ हजारों ही तरह की आती हैं और मछली भी इफ़रात। पेड़ों पर बन्दर भी। मेंहदावल में कोई चीज भी देखने लायक नहीं। जहाँ देखो वहाँ गन्दगी। लोग वज्र मूर्ख, क्षत्री ब्राह्मण जियादा। एक यहाँ प्रान नाथ का मजहब है और दस बीस लोग उसके मानने वाले हैं। ये लोग एकादशी तीर्थ वगैरह को नहीं मानते और सुने सुनाए दो तीन श्लोक जो याद कर लिये हैं बस उसी पर चूर हैं। 'मदीनास्थां शरदां शतं' और 'गोविन्दं गोकुलानन्द मक्केश्वरं' यह श्लोक पढ़ के कहते हैं कि वेद में मक्का मदीने का वर्णन है। ऐसे ही बहुत वाहियात बात कहते हैं और कोई कितना भी कहै कुछ सुनते नहीं। कहते हैं कि गोलोक का नाश है और गोलोक ऊपर एक 'अखंड मण्डलाकारं' लोक है, उसमें मेरे कृष्ण हैं। इनका मजहब एक प्राणनाथ नामक एक क्षत्री ने पन्ना में करीब तीन सौ बरस हुए चलाया था। यहाँ चैत सुदी भर रात को औरतें जमा होकर माता का गीत गाती हैं और बड़ा शोर करती हैं। असभ्य बकती हैं। व्यभिचार यहाँ बेतकल्लुफ है। सरयू पार के ब्राह्मण बड़े विचित्र हैं। मांस मछली सब खाते हैं। कूँए के जगत पर एक आदमी जो पानी भरता हो दूसरा आदमी चला आवै तो अपना घड़ा फोड़

बारहदरी भी उसके ऊपर है और हुसैनाबाद के फाटक के भीतर एक नहर बनी है और बाईं ओर ताजगज का सा एक कमरा बना हुआ है। वह मकान जिसमें बादशाह गड़े हैं देखने योग्य है। बड़े बड़े कई सुंदर झाड़ रक्खे हुए हैं और इस हुसैनाबाद के दीवारों में लोहे के गिलास लगाने के इतने अँकुड़े लगे हैं कि दीवार काली हो रही है। कैसरबाग भी देखने योग्य है। सुनहरे शिखर धूप में चमकते हैं। बीच में एक बारादरी रमणीय बनी है और चारों ओर अनेक सुंदर सुंदर बंगले बने हैं। जिसका नाम लंका है उसमें कचहरी होती है। और औध के तअल्लुकेदारों को मिले हैं। जहाँ मोती लुटते थे वहाँ धूल उड़ती है। यहाँ एक पीपल का पेड़ श्वेत रंग का देखने योग्य है।

यहाँ के हिंदू रईस धनिक लोग असभ्य हैं और पुरानी बातें उनके सिर में भरी हैं। मुझसे जो मिला उसने मेरी आमदनी गाँव रुपया पहिले पूछा और नाम पीछे। वरन् बहुत से आदमी संग में न लाने की निंदा सबने किया पर जो लोग शिक्षित हैं वे सभ्य हैं। परंतु रंडियाँ प्रायः सब के पास नौकर हैं। और मुसलमान सब वाह्य सभ्य हैं, बोलने में बड़े चतुर हैं। यदि कोई भीख माँगता है या फल बेंचता है तो वह भी एक अच्छी चाल से। थोड़ी अवस्था के पुरुषों में भी स्त्रीपन झलकता है। बातें यहाँ की बड़ी लंबी चौड़ी बाहर से स्वच्छ पर भीतर से मलीन। स्त्रियाँ सुंदर तो ऐसी नहीं पर आँख लड़ाने में बड़ी चतुर। यहाँ भंगेड़िने रंडियों के भी कान काटती हैं। हुक्के की भंग की दूकानों पर सज सज के बैठती हैं और नीचे चाहनेवालों की भीड़ खड़ी रहती है पर सुंदर कोई नहीं।

और भी यहाँ अमीनाबाद, हजरतगंज, सौदागरों की दूकानें, चौक, मुनशी नवलकिशोर का छापाखाना और नवाब मशकूरुद्दौला की चित्र की दूकान इत्यादि स्थान देखने योग्य हैं।

जैसा कुछ है फिर भी अच्छा है।

ईश्वर यहाँ के लोगों को विद्या का प्रकाश दें और पुरानी बातें ध्यान से निकालें।

आपका चिरानुगत
यात्री

"करम कमंडल कर गहे तुलसी जहँ जहँ जाय।
सरिता सागर कूप जल बूँद न अधिक समाय ॥ ५ ॥"
तऊ सोच नहिं कछु करिय मम प्रभु मंगल धाम।
करिहैं सब कल्यान ही यामें कछु न कलाम ॥ ६ ॥
रजिस्टरी को पत्र इक गयो होइहै तत्र।
ताहि जतन करि राखियो फिरि नहिं आवै अत्र ॥ ७ ॥
जेहि छन सो खल आइहै ताही छन दिखराइ।
ताहि तुरंतहिं लौटिहैं तितहि पहुँचिहैं आइ ॥ ८ ॥
तित प्रबन्ध सब राखिहौ रहिहौ ह्वै हुसियार।
कीजौ रच्छा अंग की करि उपाय हर वार ॥ ६ ॥
आवत हैं हम वेग ही यामैं संसय नाहिं।
अति व्याकुलता तित विना मेरेहू जिय माहिं ॥ १० ॥
प्रति पद माधव की प्रथम रस शिव दृग ग्रह चन्द।
संवत मंगल के दिवस लिख्यो पत्र हरिचन्द ॥ ११ ॥*

वैद्यनाथ की यात्रा

—:ꕥ:—

श्री मन्महाराज काशीनरेश के साथ वैद्यनाथ की यात्रा को चले। दो बजे दिन के पैसेंजर ट्रेन में सवार हुए। चारों ओर हरी हरी घास का फर्श, ऊपर रंग रंग के बादल, गड़हों में पानी भरा हुआ, सब कुछ सुंदर। मार्ग में श्री महाराज के मुख से अनेक प्रकार के अमृतमय उपदेश सुनते हुए चले जाते थे। साँझ को बक्सर पहुँचे। बक्सर के आगे बड़ा भारी मैदान, पर सब्ज काशानी मखमल से मढ़ा हुआ।

* हरिश्चंद्र चंद्रिका खं० ६ सं० ८ फरवरी सन् १८७६ ई०।

यदि शरीर स्पर्श हो जाय तो यह भ्रम होता था कि फफोला तो नहीं पड़ गया, किसी प्रकार से चैन नहीं मिलता था। यदि एकाद बार खिड़की खुल जाती तो मुँह मानो प्रज्वलित अग्नि की ज्वाल से झौंस जाता। प्यास के मारे कंठ सूखा जाता था और मुख से आखर नहीं निकलते थे। जो कहीं पानी मिले भी तो अदहन के सदृस। उधर क्षुधा अलग सता रही थी। आते आते जब सतना में पहुँचे तो थोड़ी सी जिलेबी लेकर खाया तब कुछ आँखें खुली फिर मैहर में पक्का आम विक्रय होता था वह लिया। इसी भाँति ज्यों त्यों कर करके जबलपुर में आकर उतरे। अब यहाँ कहीं टिकने का ठिकाना न मिले। थोड़ी दूर पर सुना कि एक सराय है। वहाँ गए तो देखा कि एक बड़ा भारी मैदान है और उसके किनारे किनारे छावनी सी बनी है पर वह क्या था मालूम नहीं क्योंकि यात्री सब उसी मैदान में बिस्तरा लगाए पड़े थे। चौधरी के पास गए। (यहाँ भठियारे नहीं हैं) तो वह मारे मिजाज के किसी की कुछ सुनता ही न था। खैर बड़ी देर के अनंतर जब हम लोगों ने पूछा कि यहाँ चारपाई इत्यादि मिलेगी कि नहीं, उसने कहा जाकर बनिए से पूछो और बनिए की वहाँ कहीं सूरत भी नहीं दिखाती थी। अंत को असक्त होकर वहाँ एक हलवाई था उससे कुछ लेकर हम लोगों ने क्षुधा शांत किया और एक एक्केवाले को बुलाकर पुल पर पंडित गोपालराव, एक्सट्रा असिस्टेंट नरसिंहपुर के घर पर गए। परंतु इसके पूर्व यह प्रकाश करना उचित कि यहाँ पैसा साढ़े पंद्रह आने तो बिकतई है दो अन्नी और चरअन्नी भुजाने में भी एक एक पैसा भुजाना लगता है। ऐसा अँधेर हमने और किसी स्थान में नहीं देखा था। एक्केवाले को चरअन्नी दिया तो वह कहता है कि यह तो पंद्रही पैसे हुए एक पैसा और चहिए। एक और लड़के को सात पैसे के पलटे दो अन्नी दिया। हम नहीं जानते कि सरकार इन बातों को जानती है वा नहीं जानकर कान में तेल डाले बैठी है। अभी तक जबलपुर मैंने भली भाँति देखा नहीं पर दो तीन बात यहाँ नई देखने में आई। एक प्रत्येक चौराहे पर यहाँ लालटेन एक एक झाड़ टगे हैं। जै सड़क उस स्थान पर मिलती हैं उतनी ही लालटेन एक खंभे में लगी हैं। दूसरे

क्यों नहीं, ऐसी गाड़ियों को आग लगाकर जला देती या कलकत्ते में नीलाम कर देती। अगर मारे मोह के न छोड़ी जाय तो उससे तीसरे दर्जे का काम ले। नाहक अपने गाहकों को बेवकूफ बनाने से क्या हासिल। लेडीज कंपार्टमेंट खाली था, मैंने गार्ड से कितना कहा कि इसमें सोने दो, न माना। और दानापुर से दो चार नीम अंगरेज (लेडी नहीं सिर्फ लैड) मिले उनको बेतकल्लुफ उसमें बैठा दिया। फर्स्ट क्लास की सिर्फ दो गाड़ी—एक में महाराज, दूसरी में आधी लेडीज, आधी में अंगरेज। अब कहा सोवें कि नींद आवै। सचमुच अब तो तपस्या करके गोरी गोरी कोख से जन्म लें तब संसार में सुख मिले। मैं तो ज्यों ही फर्स्ट क्लास में अंगरेज कम हुए कि सोने की लालच से उसमें घुसा। हाथ फैलाना था कि गाड़ी टूटनेवाला विघ्न हुआ। महाराज के इस गाड़ी में आने से मैं फिर वहीं का वहीं। खैर, इसी सात पाँच में रात कट गई। बादल के परदों को फाड़ फाड़-कर ऊषा देवी ने ताकझांक आरंभ कर दी। परलोकगत सज्जनों की कीर्ति की भाँति सूर्य नारायण का प्रकाश पिशुन मेघों के वागाडंबर से घिरा हुआ दिखलाइ पड़ने लगा। प्रकृति का नाम काली से सरस्वती हुआ, ठंढा-ठंढी हवा मन की कली खिलाती हुई बहने लगी। दूर से धानी और काही रंग के पर्वतों पर सुनहरापन आ चला। कहीं आधे पर्वत बादलों से घिरे हुए, कहीं एक साथ वाष्प निकलने से उनकी चोटियाँ छिपी हुई, और कहीं चारों ओर से उनपर जलधारा-पात से बुक्के की होली खेलते हुए बड़े ही सुहाने मालूम पड़ते थे। पास से देखने से भी पहाड़ बहुत ही भले दिखलाई पड़ते थे। काले पत्थरों पर हरी हरी घास और जहाँ तहाँ छोटे बड़े पेड़, बीच बीच में मोटे पतले झरने; नदियों की लकीरें, कहीं चारों ओर से सघन हरियाली, कहीं चट्टानों पर ऊँचे नीचे अनगढ़ ढोंके, और कहीं जलपूर्ण हरित तराई विचित्र शोभा देती थी। अच्छी तरह प्रकाश होते होते तो वैद्यनाथ के स्टेशन पर पहुँच गए। स्टेशन से वैद्यनाथ जी कोई तीन कोस हैं। बीच में एक नदी उतरनी पड़ती है जो आजकल बरसात में कभी घटती और कभी बढ़ती है। रास्ता पहाड़ के ऊपर ही ऊपर बरसात से बहुत सुहावना हो रहा है। पालकी पर हिलते हिलते चले।

परंतु अनेक लोग कहते हैं कि वही बड़ा है। इटारसी के स्टेशन से जो बाहर आकर मैंने एक बेर दृष्टि फेरी तो स्पष्ट ज्ञात हुआ कि कैसे देश में आया हूँ क्योंकि चतुर्दिक जंगल और मैदान दीखने लगा। इसके आगे मार्ग ऐसा है कि केवल सगड़ और घोड़े के कुछ नहीं जा सकती। हम लोगों ने भी एक गाड़ी पाँच रुपये पर भाड़े की और चढ़ कर चले। आगे का समाचार दूसरे पत्र में लिखूँगा।

एक मध्यदेश
यात्री।

—:※:—

सरयू पार की यात्रा

अयोध्या

कल साँझ को चिराग जले रेल पर सवार हुए, यह गए, वह गए। राह में स्टेशनों पर बड़ी भीड़ न जाने क्यों ? और मजा यह कि पानी कहीं नहीं मिलता था। यह कंपनी यजीद के खानदान की मालूम होती है कि ईमानदारों को पानी तक नहीं देती। या सिप्रस का टापू सरकार के हाथ आने से और शाम में सरकार का बंदोबस्त होने से यह भी शामत का मारा शामी तरीका अख्तियार किया गया है कि शाम तक किसी को पानी न मिले। स्टेशन के नौकरों से फर्याद करो तो कहते हैं कि डाँक पहुँचावें, रोशनी दिखलावें कि पानी दें। खैर, ज्यों त्यों कर अयोध्या पहुँचे। इतना ही धन्य माना कि श्री राम-नवमी की रात अयोध्या में कटी। भीड़ बहुत ही है, मेला दरिद्र और मैले लोगों का। यहाँ के लोग बड़े ही कङ्गल टिर्रे हैं। इस वक्त दोपहर

वैद्यनाथ की कथा यह है कि एक बेर पार्वती जी ने मान किया था, और रावण के शोर करने से वह मान छूट गया, इसपर महादेव जी ने प्रसन्न होकर वर दिया कि हम लंका चलेंगे और लिंग रूप से उसके साथ चले। राह में जब वैजनाथ जी पहुँचे तब ब्राह्मण-रूपी विष्णु के हाथ में वह लिंग देकर पेशाब करने लगा। कई घड़ी तक माया-मोहित होकर वह मूतता ही रह गया और घबड़ाकर विष्णु ने उस लिंग को वहीं रख दिया। रावण से महादेव जी से यह करार था कि जहाँ रख दोगे वहाँ से आगे न चलेंगे इससे महादेव जी वहीं रह गए, वरंच इसी पर खफा होकर रावण ने उनको मूका भी मार दिया।

वैद्यनाथ जी का मंदिर राजा पूरणमल्ल का बनाया हुआ है। लोग कहते हैं कि रघुनाथ ओझा नामक एक तपस्वी इसी वन में रहते थे। उनको स्वप्न हुआ कि हमारी एक छोटी सी मढ़ी झाड़ियों में छिपी है तुम उसका एक बड़ा मंदिर बनाओ। उसी स्वप्न के अनुसार किसी वृक्ष के नीचे उनको तीन लाख रुपया मिला। उन्होंने राजा पूरणमल्ल को वह रुपया दिया कि वे अपने प्रबंध में मंदिर बनवा दें। वे बादशाह के काम से कहीं चले गए और कई बरस तक न लौटे, तब रघुनाथ ओझा ने दुखित होकर अपने व्यय से मंदिर बनवाया। जब पूरणमल्ल लौटकर आए और मंदिर बना देखा तो सभामंडप बनवाकर मंदिर के द्वार पर अपनी प्रशस्ति लिखकर चले गए। यह देखकर रघुनाथ ओझा ने दुखित होकर कि रुपया भी गया कीर्ति भी गई, एक नई प्रशस्ति बनाई और बाहर के दरवाजे पर खुदवा कर लगा दी। वैद्यनाथ माहात्म्य भी मालूम होता है कि इन्हीं महात्मा का बनाया हुआ है क्योंकि उसमें छिपाकर रघुनाथ ओझा को श्रीरामचंद्र जी का अवतार लिखा है। प्रशस्ति का काव्य भी उत्तम नहीं है, जिससे बोध होता है कि ओझा जी श्रद्धालु थे किंतु उद्धत पंडित नहीं थे। गिद्धौर के महाराज सर जयमंगलसिंह के० सी० एस० आई० कहते हैं कि पूरणमल्ल उनके पुरखा थे। एक विचित्र बात यहाँ और भी लिखने के योग्य है। गोवर्धन पर श्रीनाथ जी का मंदिर सं० १५५६ में एक राजा पूरणमल्ल ने बनाया और यहाँ संवत् १६५२ सन् १५९५ ई०

लीला के मेले में अवध प्रांत के लोगों का स्वभाव रेल, अयोध्या और इधर राह में मिलने से खूब मालूम हुआ। बैसवारे के पुरुष अभिमानी, रूखे और रसिकमन्य होते हैं, रासकमन्य ही नहीं वीरमन्य भी। पुरुष सब परुप और सभी भीम, सभी अर्जुन, सभी सूत पौराणिक और सभी वाजिदअली शाह। मोटी मोटी बातों को बड़े आग्रह से कहते सुनते हैं। नई सभ्यता अब तक इधर नहीं आई है। रूप कुछ ऐसा नहीं पर स्त्रियाँ नेत्र नचाने में बड़ी चतुर। यहाँ के पुरुषों की रसिकता मोटी चाल सुरती और खड़ी मोंछ में छिपी है और स्त्रियों की रसिकता मैले वस्त्र और सूप ऐसी नथ में। अयोध्या में प्रायः सभी ग्रामीण स्त्रियों के गोल आते हुए मिले। उनका गाना भी मोटी रसिकता का। मुझे तो उनकी सब गीतों में "बोलो प्यारी सखियाँ सीताराम राम राम" यही अच्छा मालूम हुआ। राह में मेला जहाँ पड़ा मिलता था वहा बारात का आनंद दिखलाई पड़ता था। खैर मैं डाँक पर बैठा बैठा सोचता था कि काशी में रहते तो बहुत दिन हुए परंतु शिव आज ही हुए क्योंकि वृषभवाहन हुए। फिर अयोध्या याद आई कि हा! यह वही अयोध्या है जो भारतवर्ष में सबसे पहले राजधानी बनाई गई। इसीमें महात्मा इक्ष्वाकु, मांधाता, हरिश्चंद्र, दिलीप, अज, रघु, श्री रामचंद्र हुए हैं और इसी के राजवंश के चरित्र में बड़े बड़े कवियों ने अपनी बुद्धिशक्ति की परिचालना की है। संसार मे इसी अयोध्या का प्रताप किसी दिन व्याप्त था और सारे संसार के राजा लोग इसी अयोध्या की कृपाण से किसी दिन दबते थे वही अयाध्या अब देखी नहीं जाती। जहाँ देखिए मुसलमानों की कब्रें दिखाई पड़ती हैं। और कभी डाँक पर बैठे रेल का दुःख याद आ जाता कि रेलवे कंपनी ने क्यों ऐसा प्रबंध किया है कि पानी तक न मिले। एक स्टेशन पर एक औरत पानी का डोल लिए आई भी तो गुपला गुपला पुकारती रह गई, जब हमलोगों ने पानी माँगा तो लगी कहने कि 'रहः हो पानियैं पानी पड़ल हौ' फिर कुछ जियादा जिद में लोगों ने माँगा तो बोली 'अब हम गारी देब'। वाह! क्या इंतजाम था। मालूम होता था रेलवे कंपनी स्वभाव (Nature) की बड़ी शत्रु है क्योंकि जितनी बातें स्वभाव से संबंध रखती हैं अर्थात् खाना, पीना, सोना, मलमूत्र त्याग करना

दोर्भिजग्राह शैलेंद्रं सिंहनादं चकार सः।
तेन संत्रासिता देवी मानं तत्याज भामिनी ॥१०॥
तस्मिन्नुपरते शब्दे जहास परमेश्वरः।
व्रीड़ामवाप महतीं दशग्रीवं चुकोप सा ॥११॥
शश्वत् प्रीतिमना भूत्वा दैत्यराजाय वै पुरा।
एवं वरं ददौ शंभुर्लङ्कागमनकारणम् ॥१२॥
तिस्रः कोट्योर्द्ध कोटिश्च देवाः संत्रासमाययुः।
स्मरन्ति देवीं संस्तूय कालरात्रिस्वरूपिणीम् ॥१३॥
कामरूपं परित्यज्य सा संध्या तमुपागता।
हरिद्रापीठमासाद्य वासंश्चक्रे दशाननः ॥१४॥
एतस्मिन्नंतरे राजन् द्विजरूपधरो हरिः।
हस्ते कृत्वा तु तल्लिंगं क्षणमात्रं स्थितस्तदा ॥१५॥
प्रस्तावं कर्तुमारेभे यावद्दंडं दशाननः।
तावत्स विप्रस्त्वरितो लिंगं तत्याज भूतले ॥१६॥

करततिमिरकर्पंचै कवारं द्विवारं तृतयमपि गृहीत्वा कुंठिता तत्र शक्तिः।
करकलित शिरोग्रं जीवतांते तुरीयं दशवदन भुजानां जातु मन्युर्बभूव ॥१७॥
मुषित इव तटस्थः सोर्थसिद्धेर्निरस्तः स्मरजिशनिखंडं सप्तपातालविद्धः।
त्रिदिश-युवतिभाले दत्तमंदारमालो दशवदनविदारीप्रादुरासीदयोध्याम् ॥१८॥

गते किमपि काले तु रावणं भक्षितुं नृप।
निमित्तं राममासाद्य जहास परमेश्वरी ॥१९॥
नातः परतरं स्थानं गुह्यमुक्तं तु शंभुना।
चतुरस्रं क्रोशमिदं चतुः किष्कुसमु च्छ्रितन् ॥२०॥
यदा यदा भवेद् ग्लानिः स्थानेस्मिन् मनुजाधिप।
तदा तदावतरते रामः कमललोचनः ॥२१॥
यस्यैषा मानिनी देवी मातेव हितकारिणी।
स एव रामो विज्ञेयो मठं कारयिता यतो ॥२२॥

श्रीवैद्यनाथ चरणाब्ज मधुव्रतेन विप्रावतं स रघुनाथ गुणार्णवेन।
प्राप्य प्रसादमजसीसमिदं विधायि प्रासाद सेतु वनवारि मठादि सर्वम् ॥२३॥

मंदिर के चारों ओर और देवताओं के मंदिर हैं। कहीं प्राचीन जैन मूर्तियाँ हिंदू मूर्ति बनकर पुजती हैं। एक पद्मावती देवी की मूर्ति

कुत्ते और मुर्गे का भी। शायद गला फूल कबूतर यहीं से निकले हैं। बस अब कल मिहदावल से खत लिखेंगे।

मेंहदावल

आज सुबह सात बजे मेंहदावल पहुँचे। सड़क कच्ची है, राह में एक नदी उतरनी पड़ती है उसका नाम आमी है। छः आना पुराना महसूल लगा। रात को ग्यारह बजे पालकी पर सवार हुए। बदन खूब हिला। अन्न भी नहीं पचा। इस वक्त यहाँ पड़े हैं। यहाँ मक्खी बहुत हैं और आबादी बहुत है। दो लड़कों के स्कूल हैं और एक लड़कियों का स्कूल है और एक डाक्तरखाना है। बस्ती शहर है मगर उससे यह मेंहदावल गाँव बहुत आबाद है। फैजाबाद में ५।।) बस्ती तक डांक का लगा और बस्ती से मेंहदावल तक ३।।।) पालकी का। अभी एक गँवार भाट आया था बेतरह धक्का। फूहर औरतों की तारीफ में एक बड़ा भारी पचड़ा पढ़ा। यहाँ गरमी बहुत है और मक्खियाँ लखनऊ से भी जियादा। दिन को बड़ी बेचैनी है।

यहाँ की औरतों का नाम श्यामतोला, रामतोला, मनतोरा इत्यादि विचित्र विचित्र होता है और नारंगी को भी यही श्यामतोला कहते हैं जो संगतरा का अपभ्रंश मालूम होता है क्योंकि यहीं के गँवार संतोला कहते हैं। यहाँ एक नाऊ बड़े पंडित थे। उनसे किसी पंडित ने प्रश्न किया 'कि दूधं' (तुम कौन जात हो) तब नाई ने जवाब दिया 'चटपटाक चटपटाक' (नाई)। तब ब्राह्मण ने कहा 'तं दूरं' (तुम दूर जाओ), तब नाई ने जवाब दिया 'किं छौरं' (तब मूड़ कौन मूड़ेगा)। एक का बाप डूबकर मर गया उसके बाप का पिंडा इस मंत्र से कराया गया 'आर गंगा पार गंगा बीच में पड़ गई रेत। तहाँ मर गए नायका चले बुज बुजा देत, धर दे पिंडवा।'

कुछ फुटकर हाल भी यहाँ का सुन लीजिये। कल मजहब का हाल हमने नीचे लिखा था। उसका अच्छी तरह से हाल दर्यापत किया तो मालूम हुआ कि हमारे ही मजहब की शाखा है। इनके ग्रंथों में हमने एक श्लोक श्री महाप्रभु जी की सुबोधिनी की कारिका का देखा, इसी से हमको संदेह हुआ। फिर हमने बहुत खोद खाद कर पूछा तो यह साफ

अलग बननी चाहिए क्योंकि न कमोड का इनको अभ्यास न स्वतंत्र जलादिक विना इनको सुभीता। मगर गोर सभ्य बाजे तो बड़े सभ्य और दिल्लगीबाज मिलते हैं। अब की बरसात में सेकेंड क्लास में एक साहब सोये थे मैं भी उसी में था। पानी की कुछ बौछार भीतर आई। साहब ने जागकर पूछा Have you made water ? मैंने कहा Not I but God इस पर बहुत ही प्रसन्न हुआ। वैसे ही अब की भी एक दिल्लगीबाज थे। मेरे पास एक हिन्दोस्तानी रईस थे। इनको उन्होंने पूछा यह कौन हैं ? मैंने उत्तर दिया He is a rich man. His fore-fathers were very rich bankers of my city. इस पर उसने हँसकर कहा all of those fours ? इस फिकरे पर मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ। मेरे बालों पर विग विग की और दो और सोए हुए थे उन पर स्त्री पर की फबती भी अच्छी हुई। तो बाजे तो भाग्य से ऐसे मिल जाते हैं मगर बाजे बड़े ही कष्टदायक मिलते हैं और हिंदोस्तानियों से ऐसी घृणा करते हैं कि जी दुःखी हो जाता है। रें रें करके रात को बारह बजे बाढ़ पहुँचे। चार बजे तक सरदी में वहीं टपे। पाँच बजे रेल फिर चली। घाट पर पहुँचे। वहाँ एक स्टीमर था। दरिद्र स्टीमर। जिसके सेकेण्ड क्लास में सिवा इस नाम के गुण कोई नहीं। बल्कि वहाँ बैठना भले आदमी के वास्ते एक शर्म की बात है। खैर वहीं बैठ कर पार लगे। वहाँ से तिरहुत की रेल० वाह रे रेल। एक गाड़ी बालू में गड़ी थी उसी में तार घर और टिकट आफिस। तार दो दो कैंचीदार बाँसों पर। सड़क आधे आधे औंधे गोलों पर बालू में राम भरोसे। गाड़ी ऊँचे नीचे पर छकड़ों की तरह लुड़कती पुड़कती चलती थी। छोटी इतनी कि जी चाहा कि सरस्वती की गुड़िया को दे दूँ। सेकेण्ड क्लास महज वाहियात। भद्दा रंग भद्दे काठ भद्दे लोहे। जगह सोने को कौन कहै बैठने को नहीं। रेल की तारीफ करूं कि तार की कि स्टेशनों की कि मास्टर की। झण्डी मालूम होती थी कि कोई खेत वाला स्त्री की मैली फटी साड़ीका पल्ला फाड़कर लकड़ी में लगाकर कौआ हाँकता है। खैर दरभंगे पहुँचे। कल जनकपुर जाँयगे। बाकी कल के खतमें।

—:❀:—

डाले और उससे घड़े का दाम ले। घड़ा कोई कहै तो घड़ा छू जाय क्योंकि घड़ा मुसलमानी लफ्ज है, दाल कहै तो छू जाय क्योंकि दाल मुसलमानी है। सूरज वंशी छत्री राजा बाबू को छाता नहीं लगता है क्योंकि वे तो सूरज वंशी हैं, सूरज से क्या छाता लगावें। नेम बड़ा धरम बिलकुल नहीं। एक ब्राह्मण ने कोंहार से नई सनहकी मोल लेकर उसमें पूरी बनाकर खाया, इससे वह जात से निकाल दिया गया क्योंकि जैसे बर्तन में मुसलमान खाना बनावें उस आकार के बरतन में इसने हिंदू होकर खाना बनाया। ह हा हा! और मजा यह कि ताजिये को सब मानते हैं। मेंहदावल में एक थाना है। थानेदार यहाँ के बादशाह हैं। एक डाकर खाना भी है। यह बड़ा सर्कार का पुन्य है। बस हमको तो सर्कार के पुन्य में कसर यही मालूम होती है कि पुलों पर महसूल लिया जाता है क्योंकि भला नाव या ऐसे पुल पर महसूल लगै तो ठीक है, जिसकी हर साल मरम्मत हो, पक्के पर भी महसूल। बस्ती में अगरवाला नहीं, एक हैं सो जूता उतार कर लायची खाते हैं। मेंहदावल में एक अगरवाले हैं। मुसलमान फर्श पर यहाँ नहीं बैठते। पिण्डारे जिनको इस जिले में जमीन मिली हैं अब नवाब हो गए हैं और उनकी मुत्सेदी आराम से बदल गई है। यहाँ कहीं कहीं थारू लोगों का रक्खा सोना खोदने से अब तक मिलता है। यहाँ के बाबू ऐसे हठी कि बंगला गिर पड़ा पर जूता उलटा था, खिदमतगार को पुकारा वह न आया, इससे आप वहाँ से न चले और दबकर मर गए।

गोरखपुर

अहो बरनि नहिं जात है आज लह्यो जो खेद।
आतप उष्मा वायु सों चल्यो नखन सों स्वेद ॥ १ ॥
प्रिय दुरगा परसाद गृह ठहरे हैं इत आय।
बाट बिलोकत दुष्ट की रहे उतहि बिलगाय ॥ २ ॥
आवत हैहे दुष्ट सो लीने नग निज साथ।
पै निकस्यो जो खोद तो रहिहैं हम धुनि माथ ॥ ३ ॥
करम लिखी सो होय है यामें कछु न सँदेह।
वृथा लोभ बस लोग सब छाँड़त सुख मैं गेह ॥ ४ ॥

(४)

प्रणति पूर्विका विज्ञप्तिः

श्री अद्वैत महाप्रभु का उत्सव बंगला पत्रों में उत्सवों की तालिका में वैसा ही है जैसा उत्सवावली में लिखा है, क्या वह दिन नहीं है जो भारतेंदु में ७ लिखी है? इसको जरा निश्चय कर लीजिए, मैंने बंगला कई पत्र देखे सब में ५ ही मिली।

दासानुदास
हरिश्चन्द्र

(५)

मित्रेषु,

दूसरी आवृत्ति में उत्सवावली में उत्सव का दिन शुद्ध कर दिया जायगा।

तुम्हारा
हरिश्चन्द्र

(६)

अनेक कोटि साष्टाङ्ग प्रणाम

आप का कृपा पत्र मिला चंद्रिका सेवा में भेजी है स्वीकृत हो। आप अनेक ग्रंथों का अनुवाद करते हैं तो चैतन्य चंद्रोदय का अनुवाद क्यों नहीं करते? बड़ा ही प्रेममय नाटक है, इसके छंद मात्र मैं दत्तचित्त होकर बना दूँगा, उत्साह कीजिए। जातीय गीत भी कुछ बनें और छपें, मैं बहुत उद्योग करता हूँ किन्तु किसी ने न बनाकर भेजे।

गुरु आपका
हरिश्चन्द्र

(७)

अनेक कोटि साष्टांग दण्डवत् ३-५-८२

प्रणामानंतरं निवेदयति

लघु र० क० मिली. धन्यवाद. नाटकादि जाते हैं, भारतेंदु बहुत अच्छी चाल से चला है किंतु तनिक कड़ाई विशेष है। लेख परिपाटी उत्तम है, क्या यह वही लाहौर वाला है? मैं अब तक नहीं अच्छा

साँझ होने से बादल छोटे छोटे लाल पीले नीले बड़े ही सुहाने मालूम पड़ते थे। बनारस कालिज की रंगीन शीशे की खिड़कियों का सा सामान था। क्रम से अंधकार होने लगा, ठंढी ठंढी हवा से निद्रा देवी अलग नेत्रों से लिपटी जाती थी। मैं महाराज के पास से उठकर सोने के वास्ते दूसरी गाड़ी में चला गया। झपकी का आना था कि बौछारों ने छेड़छाड़ करनी शुरू की, पटने पहुँचते पहुँचते तो घेर घारकर चारों ओर से पानी बरसने ही लगा। बस पृथ्वी आकाश सब नीरब्रह्ममय हो गया। इस धूमधाम में भी रेल कृष्णाभिसारिका सी अपनी धुन में चली ही जाती थी। सच है सावन की नदी और दृढ़प्रतिज्ञ उद्योगी और जिनके मन पीतम के पास हैं वे कहीं रुकते हैं? राह में बाज पेड़ों में इतने जुगुनू लिपटे हुए थे कि पेड़ सचमुच 'सर्वे चिरागां' बन रहे थे। जहाँ रेल ठहरती थी, स्टेशन मास्टर और सिपाही बिचारे टुटरू टूँ छाता, लालटेन लिए गोर्जा जगाते भीगते हुए इधर उधर फिरते दिखलाई पड़ते थे। गार्ड अलग 'मेकिंटाश का कवच पहिने' अप्रतिहत गति से घूमते थे। आगे चलकर एक बड़ा भारी विघ्न हुआ, खास जिस गाड़ी पर श्री महाराज सवार थे, उसके धुरे घिसने से गर्म होकर शिथिल हो गए। वह गाड़ी छोड़ देनी पड़ी। जैसे धूमधाम की अंधेरी, वैसे ही जोर शोर का पानी। इधर तो यह आफत, उधर फरऊन क्या फरऊन के भी बाबाजान रेलवालों की जल्दी, गाड़ी कभी आगे हटै कभी पीछे। खैर, किसी तरह सब ठीक हुआ। इसपर भी बहुत सा असबाब और कुछ लोग पीछे छूट गए। अब आगे बढ़ते बढ़ते तो सबेरा ही होने लगा। निद्रा वधू का संयोग भाग्य में न लिखा था, न हुआ। एक तो सेकेंड क्लास की एक ही गाड़ी, उसमें भी लेडीज कम्पार्टमेंट निकल गया, बाकी जो कुछ बचा उसमें बारह आदमी। गाड़ी भी ऐसी टूटी फूटी, जैसी हिंदुओं की किस्मत और हिम्मत। इस कम्बख्त गाड़ी से और तीसरे दर्जे की गाड़ी से कोई फर्क नहीं, सिर्फ एक एक धोके की टट्टी का शीशा खिड़कियों में लगा था। न चौड़े बेंच न गद्दा, न बाथरूम। जो लोग मामूली से तिगुना रुपया दें उनको ऐसी मनहूस गाड़ी पर बिठलाना, जिसमें कोई बात भी आराम की न हो, रेलवे कंपनी की सिर्फ बेईमानी ही नहीं वरन् धोखा देना है।

भारतेंदु टाइप में छपै तो बड़ी उत्तम बात है। २४ पेज में टाइ-टेल पेज के २५० कापी छपाई कागज़ समेत २५) में उत्तम छप सकता है, यहां छपे तो मैं प्रूफ आदि भी शीघ्र दिया करूँ।

मैं इन दिनों महात्माओं के चित्रों की फोटोग्राफ में कापी करके संग्रह कर रहा हूँ, नागरीदास श्री महाप्रभु आदि कई चित्र तो हैं, कुछ वहाँ भी मिलेंगे ?

आगरे के उपद्रव का वृत्तान्त मैंने विलायत कई मित्रों को लिखा है उसके प्रमाण के हेतु कई समाचार पत्र भी भेजे हैं। इस मास का भेजूंगा इससे इनको एक कापी और दीजिए।

अबकी इसमें समालोचना छोटी २ बहुत सुंदर हैं। शृंगारलतिका पर नकछेदी जी ने रजिस्टरी भी करा ली। यह मजा देखिए, राजा मानसिंह के मानों आप पोष्यपुत्र हैं। ललिता ना० चन्द्रावली की छाया पर बनी है, अस्तु, विचारे वैष्णव मत का न भेद जानें न आप वैष्णव, वैष्णव पत्रिका के संपादक तो हैं—

नाटकों में गँवारी बैसवारे की मेरी बुद्धि में उत्तम होगी क्योंकि इस प्रदेश में दूर तक बोली जाती है।

प्रतिपदा

दासानुदास
हरिश्चन्द्र।

अनेक कोटि साष्टांग दंडवत प्रणामानंतर निवेदयति—

आप का कृपापत्र पाया, बृहद्गौर गणोद्देश दीपिका वा बृहद्गणो-द्देश दीपिका जो जो जितनी मिलैं भेजिएगा। जो पुस्तकें वहाँ मिलती हैं, यदि आप कृपापूर्वक उनका एक सूचीपत्र भेज दें तो बड़ा उपकार हो। कीर्तन की पुस्तक आप दो भेज दें एक नित्य पद की दूसरी उत्सव की पद। मुक्तावली लोग क्यों नहीं देते ? कदम्ब की लकड़ी श्री...... जी के वेणु निर्म्माण के हेतु चाहिए मयूरपिच्छ चन्द्रिका मात्र ही भेजिएगा हम आपसे किसी बात से बाहर नहीं जिस प्रकार आप

श्रीमहाराज के सोचने के अनुसार कहारों की गतिध्वनि में भी परमेश्वर ही की चर्चा है। पहले 'कोहं कोहं' की ध्वनि सुनाई पड़ती है फिर 'सोहं सोहं' 'हंसस्सोहं' की एकाकार पुकार मार्ग में भी उससे तन्मय किए देती थी।

मुसाफिरों को अनुभव होगा कि रेल पर सोने से नाक थर्राती है और वही दशा कभी कभी और सवारियों पर होती है इसी से मुझे पालकी पर भी नींद नहीं आई और जैसे तैसे वैजनाथ जी पहुँच ही गए।

वैजनाथ जी एक गाँव है, जो अच्छी तरह आबाद है। मजिस्ट्रेट, मुनसिफ वगैरह हाकिम और जरूरी सब आफिस हैं। नीचा और तर होने से देश बातुल गंदा और 'गंधद्वारा' है। लोग काले काले और हतोत्साह मूर्ख और गरीब हैं। यहाँ सौंथाल एक जंगली जाति होती है। ये लोग अब तक निरे वहशी हैं। खाने पीने की जरूरी चीजें यहाँ मिल जाती हैं। सर्प विशेष हैं। राम जी की घोड़ी जिनको कुछ लोग ग्वालिन भी कहते हैं एक बालिश्त लंबी और दो दो उंगल मोटी देखने में आईं।

मंदिर वैद्यनाथ जी का टोप की तरह बहुत ऊँचा शिखरदार है। चारों ओर और देवताओं के मंदिर और बीच में फर्श है। मंदिर भीतर से अँधेरा है क्योंकि सिर्फ एक दरवाजा है। बैजनाथ जी की पिंडी जलधरी से तीन चार उंगल ऊँची बीच में से चिपटी है। कहते हैं कि रावण ने मूका मारा है इससे यह गड़हा पड़ गया है। वैद्यनाथ वैजनाथ और रावणेश्वर यह तीन नाम महादेव जी के हैं। यह सिद्धपीठ और ज्योतिर्लिंग स्थान है। हारिद्रा पीठ इसका नाम है और सती का हृदयदेश यहाँ गिरा है। जो पार्वती अरोगा और दुर्गा नाम की सामने एक देवी हैं वही यहाँ की मुख्य शक्ति हैं। इनके मंदिर और महादेव जी के मंदिर से गाँठ जोड़ी रहती है। रात को महादेव जी के ऊपर बेलपत्र का बहुत लंबा चौड़ा एक ढेर करके ऊपर से कमखाब या ताश का खोल चढ़ाकर शृंगार करते हैं या बेलपत्र के ऊपर से बहुत सी माला पहना देते हैं। सिर के गड़हे में भी रात को चंदन भर देते हैं।

(१३)

श्रीकृष्णायनमः।

अनेक कोटि दंडवत् प्रणामानन्तरं निवेदयति—

पूर्व में एक पत्र आपको लिखा था, उसमें चित्रों के विषय में आप को जो लिखा था उसका कुछ आपको पता लगा? व्यास जी, श्री अद्वैत प्रभु, श्री नित्यानन्द प्रभु, श्रीगोपालभट्ट जी या और और किसी महात्मा की तस्वीरें मिलें और दस दिन के वास्ते भी मँगनी मिल सकें तो मैं कापी करा लूँ। कष्ट क्षमा—

दासानुदास

हरिश्चद्र

(१४)

शतशः प्रणति के पश्चात् निवेदन !

क्या चित्रों की याद एकबारगी भुला दी? इतने चित्र हैं, श्री श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु, स्वामी हरिदास जी, हरिवंश जी, नागरीदास जी, आनन्दघन जी और हमारे आचार्य और उनके द्वितीय पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ जी इनके अतिरिक्त और जिन महात्माओं के मिलें दीजिए। कष्ट देने को वारंवार क्षमा कीजिए।

दासानुदास

हरिश्चन्द्र

(१५)

"भक्त्यात्वनन्ययालभ्यो हरिरन्यद्विडम्बनम्"

"Heaven is love, and love is heaven"

अनेक शतकोटि प्रणामानंरं निवेदयति,

कृपा पत्र मिला, बच्चा को पत्र में लिख दिया है कि आप की सेवा में यात्रा से लौटकर आवे, मथुरा एजेंसी वालों को कह दीजिए कि उनके पास जिन २ महात्माओं की कापी बिकाऊ हों उनका एक सूची-पत्र मेरे पास भेज दें।

पुस्तकों का सूचीपत्र छापा तो है।

दासानुदास

हरिश्चंद्र

में एक पूरणमल्ल ने वैद्यनाथ जी का मंदिर बनाया। क्या यह मंदिरों का काम पूरणमल्ल ही को परमेश्वर ने सौंपा है?

निज मंदिर का लेख

अचल शशिशायके लसित भूमि शकाब्दके।
वलति रघुनाथके वहल पूजक श्रद्धया॥
विमल गुण चेतसा नृपति पूरणेनार्चितं।
त्रिपुरहरमंदिरं व्यरचि सर्वकामप्रदम्॥
नृपतिकृत पद्यमिदम्।

सभामंडप का लेख

चंद्र त्रिंब प्रतीकाशं प्रासादं चातिशोभनम्।
हरिद्रा पीठके कर्तुं काम्येस्मिन्नभवन्मुनिः॥ १॥
न चेदं मानुषं कर्म चोलराज महामते।
भविष्यति न संदेहः कदाचिच्च कलौ युगे॥ २॥
मुनेः कल्याणमित्रस्य पार्थस्य च महात्मनः।
संवादं शृणु राजेंद्र चेतिहासं पुरातनम्॥ ३॥
यदा कदाचिच्च कलौ रामांशेन द्विजन्मना।
कारयेत् वै मठवरो रावणेश्वर कानने॥ ४॥
स्वयं दाता समागत्य प्रोद्भिद्य मठकूवरम्।
स करिष्यति यत्नेन प्रच्छन्नो नरविग्रहः॥ ५॥
आर्जवं शतसाहस्रमस्मिन् लिंगे प्रतिष्ठितम्।
वस्वंगुलं हि तल्लिंगं वेदिकोपरिचोत्थितम्॥ ६॥
अधोर्द्ध शिखराकारं योजनार्द्धं च विस्तृतम्।
लक्ष लिंगोद्भवं पुण्यं पूजनात्तस्य जायते॥ ७॥
छद्मना पद्मनाभेन वंचितस्तु दशाननात्।
रक्षणाय च देवानां दैत्यानां वै वधाय च॥ ८॥
कैलाशशिखरे देवी यदा मानवती सती।
तस्मिन् काले दसग्रीवद्वारस्थोनं निवारयन्॥ ९॥

(१८)

शतकोटि दण्डवत् प्रणामानंतरं निवेदयति—

बाबू राजेन्द्रलाल मित्र ने एक प्रबंध में इस बात का खंडन किया है कि महाप्रभु जी मध्वमतावलंबी थे इसमें प्रमाण, उन्होंने यह आज्ञा किया था कि "यत श्रीधरविरुद्धं तन्नामास्माकमादरणीयम्।" वह कहते हैं कि मध्व मत के ग्रंथ मात्र ही श्रीधर के विरुद्ध हैं। इसका क्या उत्तर है ? वैष्णवदीक्षा आपने कब और किससे लिया था ?

दासानुदास
हरिश्चंद्र

मैं इन दिनों महाप्रभु जी के चरित्र का नाटक लिखता हूँ उसी के हेतु इन बातों के जानने की जल्दी है।

हरिश्चंद्र

(१९)

अनेक कोटि साष्टांग दण्डवत् प्रणामानांतरं निवेदयति—

बच्चा और उसकी माँ व्रजयात्रा करने जाती हैं और जो चित्र हों सो बच्चा को दीजिएगा।

दासानुदास
हरिश्चन्द्र

(२०)

शतकोटि दण्डवत् प्रणामानन्तरं निवेदयति—

काशिराज ने आपसे यह प्रश्न किया है कि श्री राधारमण, श्री राधावल्लभ आदि विग्रहों के साथ श्री राधिका जी की मूर्त्ति क्यों नहीं है ? श्री मद्भागवत में उनका वर्णन कहाँ है ?

विशेष कृपा, कष्ट क्षमा।

चिरबाधित
हरिश्चन्द्र*

* मर्यादा सन् १९११ से उद्धृत—लेखक गोस्वामी जी के पुत्र श्री गौरचरण गोस्वामी।

बड़ी सुंदर है जो सूर्यनारायण के नाम से पुजती है। यह मूर्ति पद्म पर बैठी है और दो बड़ी सुंदर कमल की लता दोनों ओर बनी हैं। इस पर अत्यंत प्राचीन पाली अक्षर में कुछ लिखा है जो मैंने श्री बाबू राजेंद्रलाल के पास पढ़ने को भेजा है। दो भैरव की मूर्ति, जिससे एक तो किसी जैन सिद्ध की और एक जैन क्षेत्रपाल की है, बड़ी ही सुंदर हैं। लोग कहते हैं कि भागलपुर जिले में किसी तालाब में से निकली थीं।❀

—:❀:—

जनकपुर की यात्रा

—:❀:—

आज दोपहर को पहुँचे। राह में रेल में कुछ कष्ट हुआ। क्योंकि सेकण्ड क्लास में तीन चार अंग्रेज थे। बस उनमें मैं अकेला "जिमि दसनन महँ जीभ बिचारी" कष्ट हुआ ही चाहै 'नर बानरहि संग कहु कैसे'। इसके वास्ते यह इंतिजाम होना जरूर है कि हर ट्रेन में एक गाड़ी जिसमें फर्स्ट और सेकण्ड दोनों ही हिंदुस्तानियों ही के वास्ते रहै। इस विषय में मैंने रेलवे कंपनी की कनफूरेंस के सेक्रेटरी को लिखा तो है पर 'तूती की आवाज' अगर सुनी जाय। जैसी ही उनको पान सुरती की पचापच से नफरत है वैसी इधर चुरुट के धूम्र से। ऐसी ही अनेक प्रकृति विरुद्ध बातें हैं जो केवल कष्टदायक हैं। एक बात और बहुत जरूरी है। ऐसे स्टेशनों पर जहाँ गाड़ी देर तक ठहरै फर्स्ट और सेकेण्ड क्लास के हिंदुस्तानियों की पाखाना वगैरह की कोठरी

❀ यह यात्राविवरण हरिश्चंद्र चंद्रिका और मोहन चंद्रिका खं० ७ सं० ४ आषाढ़ शुक्ल १ सं० १६३७ में छपा है और इसकी अगली संख्या में इस विवरण की पूर्ति के रूप श्रीकाष्ठजिह्व स्वामी के वैद्यनाथ विंदु के २६ पद उद्धृत किए गए हैं, जो यहाँ नहीं दिए गए हैं।

भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द्र के पत्र

गोस्वामी श्रीराधाचरण जी को

(१)

श्रीकृष्ण

प्रियवरेषु

बहुत दिनों से आप का कोई पत्र नहीं आया, चित्त चिंतित है, सर्वदा कुशल पत्र से चित्त आनन्दित किया कीजिए, यहाँ योग्य कार्य हो वह भी असंकुचित होकर लिखिए।

भवदीय स्नेहाभिलाषी
हरिश्चंद्र

(२)

महोदयेषु

मैं तीन चार दिन में शायद श्रीवन आऊँ, कृपापूर्वक एक स्थान अपने अति निकट रखिए, दो बात, मुख्य आराम देख लीजिएगा एक तो पाखाना स्वच्छ हो और दूसरे दिन को गर्म न हो चाहे अति छोटा हो।

हरिश्चंद्र

(३)

शत कोटि प्रणामानंतरं प्रेम्णा विज्ञापयति—श्री हरिदास, श्री हरि वंश जी, श्री नागरीदास जी, श्री आनन्दघन जी, और श्री कृष्ण चैतन्य महाप्रभु के चित्र हैं अनुग्रह पूर्वक लिखिए कि और किन किन महात्माओं के चित्र आपको मिले हैं—

दासानुदास
हरिश्चंद्र

६ शमी

हुआ, बड़ी ही सुस्ती है, प्राण बचैं तो कुशल हैं, हमारी सर्वस्य निधि जो आप संग्रह कर रहे हैं शीघ्र भेजिए, इस दुख में सर्व प्रकार सहायक होगी।

श्री चरण सेवक
हरिश्चन्द्र।

(८)

श्रीकृष्ण

हम लोगों का बड़ा दिन।

अनेक कोटि साष्टांग दण्डवत् प्रणामांतरं निवेदयति—

महात्माओं ने जो पद बनाए हैं उनमें प्रिया पीतम का जो संवाद है वा अन्य सखियों की उक्ति हैं उन्हीं सबों के यथास्थान नियोजन से एक रूपक बने तो बहुत ही चमत्कार हो अर्थात् नाटक की और जितनी बातें हैं अमुक आया गया इत्यादि अंक दृश्य इत्यादि मात्र तो अपनी सृष्टि रहै किंतु संवाद मात्र उन्हीं प्रवीनों के पदों की योजना से हों। जहाँ कहीं पूरा पद रहै वहाँ पूरा कहीं आधा चौथाई एक टुकड़ा जितना आवश्यक हो उतना मात्र उनमें से ले लिया जाय। यह भी यों ही कि एक बेर पदों में से चुन चुन कर अत्यंत चोखे चोखे जो हों वा जिनमें कोई एक टुकड़ा भी अपूर्व हो वह चिन्हित रहै फिर यथा स्थान उनकी नियोजना हो, ऐसा ही गीत गोविंद से एक संस्कृत में हो, बहुत ही उत्तम ग्रंथ होगा। आप परिश्रम करें तो हो मैं तो ऐसा निर्बल हो गया हूँ कि बरसों में सुधरूँगा।

दासानुदास
हरिश्चन्द्र

(९)

श्री हरिः

अनेक कोटि साष्टांग दण्डवत प्रणामानंतरं निवेदनम्—

आज के भारतेंदु में प्रथम पत्र आर्य समाजियों के विषय में जो है उसमें मेरी बुद्धि में यह बात आती है कि ब्राह्मणों को एक ही बेर छोड़ देने की अपेक्षा उनको सुधारना उत्तम है—

भेजिएगा हमको शिरसाधार्य्य है। रासोत्सव व्यवस्था जो कल के पत्र में छपैगी वह श्रीवन के पंडितों को दिखलाइएगा देखिए लोग क्या कहते हैं और सब कुशल है।

भवदीय

रविवासरे } हरिश्चंद्र

आज सवेरे से यहाँ घनघोर वृष्टि हो रही है।

(११)

अनेक कोटि साष्टांग दंडवत प्रणामानंतरं निवेदयति—

निस्संदेह आप मुझसे व्यर्थ रुष्ट हुए, इस वर्ष के पहिले ही नम्बर में आपका प्रतिवाद छपा हैं, भला इसमें मेरा क्या दोष है, जिसने आपकी निन्दा किया है उसको दो हजार आप गाली दीजिए देखिए छपता है कि नहीं। चांद्रिका के भेजने का प्रबन्ध आदि सब अब पं० गोपीनाथ जी के जिम्मे है। मैं उनसे पूछूँगा कि क्यों नहीं गई और भिजवा दूँगा। संसार में भले बुरे सब प्रकार के लोग हैं कोई किसी की निन्दा, कोई स्तुति करता है। हम तो केवल तटस्थ हैं, हमारे चित्त में कल्मष तो तब आप को प्रतीत करना था जब आप का प्रतिवाद न छपता

श्रीवन से हमें कई पुस्तकें मँगाना है आप कृपापूर्वक उसका प्रबन्ध कर दें तो हम नामादिक लिख भेजें। और सर्व्व कुशल है।

आप का दासानुदास

शनि हरिश्चान्द्र

(१२)

श्रीहरिः।

होली मंगल

प्रिय पूज्य चरणेषु !

क्या आप चित्रों का विषय भूल गए ? क्या अभी तक एक भी नहीं बने ? तनिक ध्यान रहै। मेरे योग्य सेवा हो सो लिखिएगा।

दासानुदास

हरिश्चंद्र

(१६)

पूज्य चरणेषु,

श्री रूपसनातन गोस्वामि की जाति क्या थी ? श्री महाप्रभु का जीवन चरित्र एक बँगला से हिन्दी किया है उसमें यवन लिखा है। मैंने कायस्थ सुना है। हमारे निज संप्रदाय के ग्रंथों में भी कायस्थ लिखा है। इसका उत्तर अति शीघ्र दीजिए।

श्री शचीदेवी और श्री विष्णु प्रिया कब तक जीवित रहीं यह भी लिखिएगा। अपने परम पूज्य पिता जी से मेरा साष्टांग प्रणाम कहिएगा।

द्वितीया

दासानुदास
हरिश्चंद्र

(१७)

अनेक कोटि साष्टांग दण्डवत् प्रणामानंतरं निवेदयति—

आपका कृपा पत्र मिला, आपने ऐसा क्यों लिखा है। अलौकिक और लौकिक दोनों संबंध से हमारे आप पूज्य हैं।

चित्र जो मिलै अति शीघ्र यत्नपूर्वक भेजें। जितने चित्र जितने दिन के हेतु मँगनी आवें उनका वृत्त लिखिएगा कि उतने ही दिन में वे फेर दिए जायँ। जो मूल्य पर मिलें उनका मूल्य लिखिएगा। आप अलौकिक चित्र पुस्तकादि जो मुझको भेजते हैं इसका मैं जन्मजन्म ऋणी रहूँगा।

२४ डिसेम्बर १८८३
काशी

दासानुदास
हरिश्चन्द्र

श्री बद्रीनारायण जी उपाध्याय 'प्रेमघन' को

प्रिय,

एक बड़ी गुप्त बात है, इसमें बड़ी सावधानी से सहायता दीजिएगा, गोवर्धनदास रोड़ा उर्फ खरदूखनदास से इन दिनों माधवी से बिगाड़ हो गया है। वह चित्त का ऐसा कुनही है कि उस बिगाड़ का बदला यों लेना चाहता है कि माधवी की एक किता हुंडी २३००) रु० की जो वास्तव में माधवी के रुपए की है मगर उसके नाम की है उसको हजम किया चाहता है। अभी पूरी हजम नहीं किया इरादा है। इसी इरादे से वह हुंडी हमसे लेकर विंध्याचल चला गया। एक मकान माधवी के वास्ते लिया जाता है। उसका बयाना देने को १००) रुपया हमने उससे माँगा हुंडी उसको दे दिया कि १००) आज दे बाकी रजिस्टरी के दिन दे। आज रजिस्टरी होनेवाली थी। आज रु० भेजते हैं यह कहके भी विंध्याचल चला गया। हम स्टेशन पर गए मुलाकात हुई। एक पुरजा गट्टू मिश्र के नाम लिख दिया और कहा कि हम कह आए हैं गट्टू मिश्र रुपया दे देंगे। गट्टू मिश्र कहते हैं कि हम कुछ नहीं जानते। कैसी हुंडी कैसा रुपया? यहाँ मकान की रजिस्टरी की हर्ज होती है। न जानें उसको क्या मंजूर है। जो हो कानूनन तो उनपर खयानत और जालसाजी का दावा अच्छा खासा होगा। मगर वह हमारे निज का आदमी है वह कभी ऐसी बेईमानी न करैगा खाली माधवी से बुरा मानकर तंग करता है। आप फौरन खत पाते ही उसको बुलाकर या जाकर मिलिए और एक तार हमने आपके नाम दिया है, उसके मुताबिक अनजान बनकर पूछिए कि कौन से हुंडी के रुपए के बिना बाबू साहब का हर्ज है वह भुगतान जल्दी कर दो। या तो अभी तार दो कि उनको रुपया मिल जाय या तुम कल बनारस चले जाओ। इस बखत तार उससे भिजवाइए, और एक तार हमारे नाम भी भिजवाइए। बल्कि तार की खबर का खर्च भी आप दे दीजिएगा। हम आपके हिसाब में पाठक जी को दे देंगे। हमारा खत उसको मत दिखलाइएगा न कुछ हाल कहिएगा कि मैंने उसकी बुराई की है। अपना काम देखिएगा। जिसमें तार के खबर से चिट्ठी से

प्रतीकानुक्रमणिका